प्रो० हरिमोहन झा अभिनन्दन ग्रन्थ

प्रो० हरिमोहन झा अभिनन्दन ग्रन्थ

१९८३



मैथिल गोष्ठी, पटना

प्रो० हरिमोहन झा अभिनन्दन ग्रन्थ

प्रकाशक : मैथिल गोष्ठी, पटना

स्वत्वाधिकार : मैथिल गोष्ठी, सैदपुर, पटना-800004

प्रकाशन तिथि : १८ फरवरी १९८३

प्रति : पाँच सय मात्र

मूल्य : ३०० रु० (तीन सय रुपैया)

मुद्रक : मुरलीधर प्रेस, पटना
मिथिला ब्लॉक्स एण्ड कलरिंग वर्क्स, पटना
पूर्णिमा प्रिन्टर्स, पटना

Prof. HARIMOHAN JHA ABHINANDAN GRANTH
(Felicitation Volume)
by a Board of Editors
1983

Rs.—300/- (Rupees three hundred only)

Can be had from :
Maithil Goshthi, Saidpur, Patna-800004

प्रो० हरिमोहन झा अभिनन्दन ग्रन्थ समिति

१. श्री देवेन्द्र झा	अध्यक्ष	(अध्यक्ष, मैथिल गोष्ठी)	
२. श्री भूपनारायण झा	संयोजक	(सचिव, मैथिल गोष्ठी)	
३. श्री विश्वनाथ चौधरी	सदस्य	(उपाध्यक्ष	,,)
४. श्री मदन मिश्र	,,	(संयुक्त सचिव	,,)
५. श्री रघुवीर मोची	,,	(संयुक्त सचिव	,,)
६. श्री रामचन्द्र लाल कर्ण	,,	(कोषाध्यक्ष	,,)
७. श्री नागेन्द्र झा	,,	(सदस्य, कार्यकारिणी	,,)
८. श्री महारुद्र झा	,,	,,	,,
९. श्री चन्द्र कान्त चौधरी	,,	,,	,,
१०. श्री रत्नेश कुमार झा	,,	,,	,,
११. श्री शम्भू नाथ झा	,,	,,	,,
१२. श्री विमल कान्त झा	,,	,,	,,
१३. श्री मोहन कुमार 'रवि'	,,	,,	,,
१४. श्री ललित कुमार चौधरी	,,	,,	,,
१५. श्री सूर्य कान्त पाठक	,,	,,	,,
१६. डा० वासुकी नाथ झा	,,	(सदस्य सामान्य	,,)
१७. श्री मोहन भारद्वाज	,,	,,	,,
१८. श्री चन्द्र कान्त खाँ	,,	,,	,,
१९. श्री कृष्णेश्वर झा	,,	,,	,,

मिनती : अध्यक्षक दिससँ

□ माँ मैथिलीक असीम अनुकम्पासँ आइ ई अभिनन्दन-ग्रन्थ पूर्ण भेल, ताहिसँ हमरा लोकनिकेँ अपार हर्ष अछि। साहित्य समाजक हेतु लिखल जाइत अछि आ' तेँ साहित्यकारक सम्मान करब समाजक कर्तव्य थिकैक। जाहि समाजमे अपन साहित्यकारकेँ समुचित सम्मान करबाक चेतना नहि रहतैक, ताहि समाजमे कहिओ नीक साहित्यकार उत्पन्न नहि भए सकैत छथि। एहि भावनासँ प्रेरित भए हमरा लोकनिक एक छोट-सन संस्था मैथिल गोष्ठी ई नीति निर्धारित कएलक जे गोष्ठी मैथिलीक शीर्षस्थ साहित्यकार लोकनिक अभिनन्दन करए। आ' एहि क्रममे जनिक नाम अनायास सर्वप्रथम उचरल से थिकाह प्रो० हरिमोहन झा। फलतः १८ अप्रैल १९८२ क' पटना विश्वविद्यालयक ह्वीलर सिनेट हालमे मैथिली अकादमीक भूतपूर्व अध्यक्ष श्री श्रीकान्त ठाकुर 'विद्यालंकार'क अध्यक्षतामे एक मनोरम समारोहक संग प्रो० हरिमोहन झाक भावप्लुत अभिनन्दन कएल गेल आ' तकर एक गोट छोट-छीन स्मारिका प्रकाशित कएल गेल। एही शुभ क्षणमे ई घोषणा कएल गेल जे मैथिल गोष्ठी प्रो० हरिमोहन झाकेँ हिनक प्रतिष्ठाक अनुरूप अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित करत। तुरन्त एक सम्पादक मंडल बनाओल गेल। सम्पादकलोकनि अनुपम उत्साह ओ निष्ठाक संग काजमे लागि पड़लाह। फलस्वरूप आइ ई अभिनन्दन-ग्रन्थ अपने लोकनिक हाथमे अछि।

□ एकर व्ययक पूर्ति सामान्य स्तरक शतशः मातृभाषा अनुरागी ग्राहक-अनुग्राहक लोकनिक छोट-छोट चन्दासँ भेल अछि, जकर लोकतान्त्रिक युगमे विशेष महत्त्व छैक। एहि महान् कार्यमे अल्पमात्रो अंश दान कएनिहार व्यक्तिक हम आभारी छी। आ ताहि लेल धन-संग्रह उप समितिक सदस्य, सर्वश्री भूप नारायण झा, विश्वनाथ प्रसाद शर्मा, मोहन भारद्वाज, डा० वासुकी नाथ झा, ललित कुमार चौधरी, रामचन्द्र लाल कर्ण आ नागेन्द्र झा जीक जे सहयोग हमरा प्राप्त भेल अछि, तदर्थ हुनको प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करैत छी।

□ मैथिलीक इतिहासमे ई पहिल घटना थिक जे कोनो एक प्रतिष्ठित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्था द्वारा साहित्यकारकेँ अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित कएल गेल। हमरा एहि बातक गौरव अछि जे एहिमे मैथिल गोष्ठी अगुआएल। आशा जे भविष्यमे अन्यान्यो संस्था सभ एहि दिश अग्रसर होएत।

□ एहि अभिनन्दन-ग्रन्थक हेतु लेख जुटएबामे, तकरा सम्पादित-परिष्कृत कए शुद्ध ओ आकर्षक रूपमे मुद्रित करबामे सम्पादक लोकनि जे सहयोग कएलनि अछि से मुक्त कंठसँ प्रशंसनीय अछि ओ एहि हेतु हम हुनका लोकनिक प्रति नम्रतापूर्वक कृतज्ञता प्रकट करैत छी।

□ एहि ग्रन्थक सहयोगी रचनाकार लोकनिक सहयोग बिनु सम्भव त' कथ महत्त्वक नहि होइत अछि, कारण ई सुयश-ग्रन्थ हुनकहि लोकनिक थिक। गोष्ठी, सदैव हुनका लोकनिक प्रति आभारी रहति अछि।

□ आइ सहसा मोन पड़ैत छथि स्व० जीवानन्द चौधरी जे मैथिल गोष्ठीक कल्पनाक मातृभूमि छलाह आ तदनुरूप एकर स्थापना १९७८ मे भेल। ई हुनक अथक भावनाक फल थिक जे आइ गुणग्राहकलोकनिक ई संस्था एतेक पैघ काज करए समर्थ अछि। आइ ओ तँ हमरा सभक बीच नहि रहलाह, किन्तु हुनक दिवंगत आत्माकेँ एहिसँ अवश्य तृप्ति होयतनि।

□ पं० जीवानन्द चौधरी तँ नहि रहलाह, परन्तु माँ मैथिलीक सुपुत्र हुनके सन कर्मठ एवं उदार एक व्यक्ति गुणग्राहकलोकनिक बीच आएलाह जे स्व० चौधरीक रिक्तताकेँ भरलनि। ओ थिकाह श्री विश्वनाथ प्रसाद शर्मा, जनिक सत्प्रयासेँ ई गोष्ठी निरन्तर प्रगतिक पथपर अग्रसर अछि।

□ आइ ग्रन्थ-समर्पणक पावन-बेलामे बहुत रास नाम, जेना—सर्वश्री यू० एन० झा, मोहन झा, विष्णु कान्त मिश्र, परमेश्वर मिश्र, राजकुमार चौधरी, लक्ष्मी नारायण झा आदि स्मरण आबि रहल छथि, जे एहि संस्थाक संस्थापक-सदस्य छथि तथा जे सहियासँ आइ धरि ओही निष्ठाक संग एकर उज्ज्वल भविष्यक कामना करैत क्रियाशील ओ समर्पित छथि।

□ हम एहिठाम मे गोष्ठीक वर्तमान पदाधिकारी सर्वश्री विश्वनाथ चौधरी, भूप नारायण झा, रामचन्द्र लाल कर्ण, मदन मिश्र आ रघुवंर मोची जीक उल्लेख कर' चाहब, आने युवा वर्गक प्रतिनिधि शंभूनाथ, चन्द्रकान्त, महारुद्र, विभूति आनन्द, केदार कानन, ललित कुमार, सूर्यकान्त, रत्नेशकुमार, मोहन कुमार, पशुपति नाथ आ गणेश झाक कारण ई त' हिनके लोकनिक सक्रियताक प्रतिफल थिक, जे ग्रन्थ अपन सम्पूर्ण रूपमे प्रस्तुत भ' सकल।

□ मुद्रा मिथिला वॉक्स एण्ड कलरिंग वर्क्स, पूर्णिमा प्रिन्टर्स एवं मुरलीधर प्रेसक तमाम श्रमशील व्यक्ति ओ व्यवस्थापक श्रद्धाक पात्र छथि जे तत्परतापूर्वक एतेक कम अवधिमे ग्रन्थकेँ छापिक' द' देलनि।

देवेन्द्र झा

अध्यक्ष,

मैथिल गोष्ठी

पटना

१८ फरवरी, १९८३

उचिती : सम्पादकक दिससँ

गत अप्रैल मासमे पटनाक मैथिल गोष्ठी दिससँ ओकर अध्यक्ष तथा अन्य पदाधिकारी-सहयोगी सभ अनुरोध कएलन्हि जे मैथिल गोष्ठी प्रो० हरिमोहन झाक अभिनन्दन करबाक निर्णय कएलक अछि, तदर्थ हमरा लोकनि एक अभिनन्दन-ग्रन्थक सम्पादन कए दिऐन्हि। हमरा लोकनि हुनक एहि अनुरोध केँ सहर्ष स्वीकार कएल, आ तुरन्त काज आरम्भ कए देलहुँ।

सम्पादक मंडल प्रथमतः एहि विषय पर विचार कएलक जे प्रस्तावित अभिनन्दन-ग्रन्थक रूपरेखा केहन होएबाक चाही। ओना तँ परिपाटी ई अछि जे आरम्भमे दस-पाँच पातमे अभिनन्दनीय व्यक्तिक प्रशस्ति ओ परिचय-पात रहए, आ तकरा बाद जाहि कोनो विषयपर जे कोनो आलेख उपलब्ध हो तकर ढेर लगा देल जाए—भनहि ओ आलेख अभिनन्दनीय पुरुषक अपन विषय-क्षेत्रमे अबैत हो वा नहि। हमरालोकनि अपन अभिनन्दन-ग्रन्थकेँ अधिकाधिक सार्थक, सोद्देश्य, संगत ओ सुरुचिपूर्ण बनएबाक भावनासँ एकरा एक सुनियोजित रूप देबाक प्रयास कएल अछि।

प्रो० हरिमोहन झा जेहने सरस अपन रचनामे छथि तेहने अपन जीवनमे। हमरालोकनिक कामना छल जे 'व्यक्ति-चित्र' ओतबे वैविध्यपूर्ण आ रोचक होएबाक चाही जतेक प्रो० झाक जीवन अछि। हुनक जीवनकेँ सम्पूर्णतामे समेटब हमरा सभक अभीष्ट रहल अछि।

प्रो० हरिमोहन झाक साहित्यिक उपलब्धिसँ परिचित करएबाक उद्देश्यसँ हमसभ रचनाकारकेँ विषयक निर्देश करैत आलेख पठएबाक अनुरोध कएलिअनि। हमरालोकनि एहू बात पर ध्यान राखल अछि जे ई तत्वतः आलोचना-ग्रन्थ नहि, अभिनन्दन-ग्रन्थ थिक, मुदा कृति-विवेचनक क्रममे रचनाकारक दृष्टि-स्वतंत्रताकेँ बाधित-प्रभावित करबो उचित नहि बुझायल अछि। अभिनन्दन-ग्रन्थक मर्यादाक पालन करैत एहि भागमे परिव्यापी आलोचना प्रस्तुत कएल गेल अछि। यदि कतहु मर्यादाक पालनमे त्रुटि भेल हो तँ तदर्थ क्षमाप्रार्थी छी।

ई अभिनन्दन-ग्रन्थ जेँ मैथिल गोष्ठी दिससँ मैथिली साहित्यमे हुनक अमूल्य अवदानक हेतु समर्पित करबाक छल, तेँ एहिमे स्वभावतः प्रो० झाक मैथिली-साहित्यकारक रूपकेँ प्रमुखता देल गेल अछि। प्रो० झाक संस्कृत, हिन्दी एवं उर्दू क्षेत्रमे जे देन छनि तकर ज्ञान एहिसँ नहि होइत अछि। एहि लेल क्षमाप्रार्थी छी।

अत्यन्त प्रसन्नता अछि जे अधिकांश लेखकक सहयोग हुनका लोकनिकें उत्साहपूर्वक प्राप्त होइत रहल। वस्तुतः एहिमे प्रेरकतत्व छल अभिनन्दनीय पुरुषक प्रति लेखक लोकनिक अपार श्रद्धा, हम सभ तँ निमित्त मात्र भेलहुँ। एहि सत्वर सहयोगक लेल प्रत्येक लेखकक प्रति आभार प्रकट करैत छी। लेखक लोकनिकें हम सभ भाषाक कोनो बन्धन नहि देने रहियनि, तें मैथिली, संस्कृत, हिन्दी, बंगला सभ भाषाक विद्वान अपन-अपन भाषामे रचना पठओलनि। बोध-गम्यताकें ध्यानमे राखि बंगलाक रचनाक देवनागरी लिप्यन्तरण देल गेल अछि। लिप्यन्तरकार छथि अन्यतम सम्पादक पं० गोविन्द झा जी। अभिनन्दन-ग्रन्थमे किछु रचना एहनो भेटल जे अन्यत्र प्रकाशित वा पठित अछि। पाद-टिप्पणीमे स्रोतनिर्देशपूर्वक आभार प्रकाशन कए देल गेल अछि, किन्तु खेद अछि जे किछु लेखमे से नहि भए सकल।

मूलतः अभिनन्दन-ग्रन्थक सीमा चारि सए पृष्ठक छल, किन्तु ई बढ़ैत-बढ़ैत साढ़े पाँच सए टपि गेल आ तथापि किछु रचना पड़ले रहि गेल। किछु रचनाकें संक्षिप्त सेहो करए पड़ल अछि। एहिसँ जँ कोनो लेखककें दुःख भेल होइन तँ हम सभ तदर्थ क्षमाप्रार्थी छी। लेखकक विचार स्वयं लेखकक थिकनि; सम्पादक ओहिसँ सहमत होथि से आवश्यक नहि—एहि तथ्यकें स्वीकार करैत लेखकक विचारधाराकें यथासाध्य यथावत् राखल गेल अछि।

परिशिष्टमे प्रो० हरिमोहन झाक समस्त रचनाक सूची देबाक नेयार छल, मुदा से उपलब्ध नहि भए सकल। हिन्दीमे प्रकाशित रचनाक तथा मैथिलीओमे प्रकाशित कथा-कवितासँ भिन्न रचनाक सूचना एहिमे नहि अछि। हँ, प्रो० झाक दार्शनिक पक्षकें परिशिष्टक सामग्री सभ विशेष रूपें प्रकाशित करत से विश्वास अछि।

मैथिल गोष्ठीक अधिकारी-सहयोगी लोकनि एहि हेतु विशेष धन्यवादक पात्र थिकाह जे ओ सभ प्रबन्ध-भार पूर्णतः अपनहि उपर रखलनि ओ हमरालोकनिकें केवल रचनाक संकलन-संपादनक भार रहल। एहु साहित्यिक कार्यमे हुनका लोकनिक सहायता डेग-डेगपर प्राप्त भेल अछि। मुद्रण-कार्य मे तँ ओ सभ जे तत्परता देखौलनि अछि से वस्तुतः प्रशंसनीय थिक। एहन विशालकाय ग्रन्थक हेतु रचनाक संकलन-संपादन करब, एतेक कम समयमे, एकटा कठिन काज छल, मुदा ओहूसँ कठिन छल, एकर सुरुचिपूर्ण मुद्रण। मुद्रक ओ प्रेसक एक-एक कर्मचारी मातृभाषा मैथिलीक अनुरागसँ तथा प्रो० हरिमोहन झाक प्रति श्रद्धा-भावनासँ एहि कार्यमे जे अपूर्व उल्लास देखओलनि अछि तदर्थ ई लोकनि धन्यवादक पात्र थिकाह।

आशा करैत छी जे प्रस्तुत अभिनन्दन-ग्रन्थकें सभ वर्गक पाठक ओहिना हुलसि कए पढ़ताह जेना प्रो० हरिमोहन झाक रचनाकें पढ़ैत छथि।

—सम्पादक मण्डल

रचना-क्रम

कृति विवेचन

उपन्यास प्रसंग

कथा प्रसंग

कविता प्रसंग

एकांकी प्रसंग

व्यंग्य तरंग

विविध प्रसंग

द्वितीय खण्ड

परिशिष्ट



प्रो० हरिमोहन झा

प्रथम खण्ड

जीवन-वृत्त

चरैवेति......चरैवेति......

प्रो० मन मोहन झा

वंश

मधुवनीसँ चारि पाँच मील दक्षिण: विद्वान ओ पंजीबद्ध मैथिल ब्राह्मणक ग्राम विरनावरमे नाथ झा नामक वजुआरे भरगाम मूलक शांडिल्य गोत्रीय पंडित रहैत छलाह। हिनक पितामह पं० दुर्मिल झा कोइलख वासी छलथिन। हुनका ई एकटा विचित्र अभिशाप रहनि जे संतान जीवित नहि रहैत छलनि। तखन ओ ई उपाय कयलनि जे एकटा जे पुत्र भेलथिन, तिनका जनमितहिं मातृकमे बेचि देलथिन। तेँ हिनक नाम बेचन झा पड़ला कयलनि। येह बेचन झा विरनावर गामक पं० नाथ झाक पिता छलाह।

पं० नाथ झाक संग एकटा ई विचित्र संयोग भेलनि जे हुनक पिता सेहो अपन मातृकमे आबि कऽ बसल छलथिन, आ पुत्र सेहो अपन मातृक कुमर वाजितपुरमे जा कऽ बसलथिन। एकटा पुत्र ओ तीन कन्याक बाद १८७२ ई०क कातिक कृष्ण तृतीयाकेँ पं० नाथ झाक घरमे कनिष्ठ बालक जन्म लेलकनि। तीन कन्याक बाद जन्म लेनिहार बालक तेतर कहबैत अछि आ भाग्यहीन मानल जाइत अछि। से ई नेना जखन अढ़ाइ वर्षक भेल तखने जेठ भाइ प्यारेलाल झा, जे घर-गृहस्थीक सभ भार सँभारने रहथिन, असमयमे दिवंगत भऽ गेलथिन। आ पाँच वर्षक भेल, त पिता सेहो अनाथ कऽ गेलथिन। वैमात्रेय भाइ अबोध नेना आ विधवा सतमायकेँ अकारण सतबय लगलथिन। एहना स्थितिमे दुनू माय-पुतक लेल ओतऽ रहब कठिन भऽ गेलनि। मामा पुरना जमीन्दार रहथिन आ जखन हुनका विपत्तिक हाल बुझल भेलनि त ओ हुनका सभकेँ बजवा पठौलथिन। आ एक दिन ओ नेना मायक संग विरनावरसँ अपन मातृक कुमर वाजितपुर (समस्तीपुरसँ दस मील दक्षिण-पश्चिम वैशाली जिला) आयल से ओतहि रहि गेल। वैह बालक कालान्तरे पं० जनार्दन झा 'जनसीदन'क नामसँ प्रसिद्ध भेल।

पं० जनार्दन झा 'जनसीदन'क मातामह पं० चन्द्रमणि कुमर मिथिलाक प्रसिद्ध राजवंश खोड़नवार कुलक सम्पन्न जमीन्दार छलथिन। राजवंशक होयबाक कारण हुनक वंशक लोक 'कुमर' कहबैत छथि आ तेँ गामोक नाममे कुमर लागल छनि। स्व० राय बहादुर जयानन्द कुमर, जे 'जनसीदन' जीक ममियौत भाइ छलथिन, एही कुलक भूषण छलाह।

जाहि समय 'जनसीदन' जी कुमर वाजितपुर अयलाह, ता धरि मामाक पैतृक जमीन्दारी बहुत-किछु नष्ट भऽ चुकल रहनि आ आर्थिक स्थिति कोनो मजबूत नहि रहनि। एहि स्थितिमे 'जनसीदन' जीकेँ स्कूलमे नाम लिखा कऽ पढ़वाक सुविधा नहि भेटलनि। मुदा बाल्यावस्थहिसँ हुनक तेहन

अपूर्व संस्कार छलनि जे थोड़बे दिनमे स्वाध्यायक बलें काव्य-शास्त्रमे निपुण तँ भैए गेलाह, व्याकरण आ ज्योतिषक सेहो मर्मज्ञ भऽ गेलाह। अपन सहज प्रतिभासँ संस्कृत, बंगला तथा अंग्रेजीक निविष्ट ज्ञान प्राप्त कऽ लेलनि। स्वतः ब्रजभाषामे कविता करऽ लागि गेलाह, संगहि संस्कृत आ हिन्दीमे समस्या पूर्ति। कविताभे 'जनार्दन' शब्दक प्रयोग ठीक-ठीक नहि बैसैत रहनि तँ अपन गुरु रामलोचन मिश्रसँ पुछलथिन जे उपनाम की राखल जाय? ताहि पर ओ 'जनसीदन' उपनामक सुझाव देलथिन। यद्यपि व्याकरणक हिसाबें शुद्ध शब्द 'जनसादन' होइतैक, परन्तु गुरुक आदेशकें शिरोधार्य कऽ ई 'जनसीदन' उपनामक प्रयोग करय लगलाह।

कोनो डिग्री नहि रहितो संस्कृतक अपन ज्ञानक बलपर हिनक नियुक्ति बैरगिनिया अपर प्राइ-मरी पाठशालामे भेलनि, मुदा तीन चारि मास बाद ओतऽसँ जी उचटि गेलनि। तत्पश्चात हिनक बदली मुरसंड अपर प्राइमरी पाठशालामे भेलनि, जतय दू वर्ष धरि रहलाह। तकर बाद अथौली पाठशाला ओ जैतपुरक महंथ रघुनाथ दास संस्कृत विद्यालयमे शिक्षण कार्य कयलनि। मुदा अध्यापनक ई काज हिनका बहुत पसिन्न नहि छलनि।

नियतिकें हिनकासँ विशेष काज लेबाक छलै। हिनका पर सरस्वतीक विशेष कृपा रहनि जे अवसर पाबि प्रस्फुटित भेलनि। ताहि समय कानपुरसँ 'रसिक मित्र' पत्रिका बहराइत छलै जाहिमे ई समस्या पूर्ति पठबय लगलाह। श्रीनगरक राजा कमलानन्द सिंह रसमर्मज्ञ छलाह आ समस्यापूर्तिसँ प्रभावित भऽ ओ पत्र लिखि हिनका बजवा पठौलथिन। ई १९०१ ई०क गप्प थिक। ताहि समय राजा साहेब 'अभिनव भोज' कहबैत छलाह। पं० अम्बिका दत्त व्यास, व्रजराज कवि, पं० खुद्दी झा, पं० श्रीकान्त मिश्र प्रभृति अनेक पण्डित गुणी हिनक दरबारक शोभा बढ़बैत रहथिन। गुणग्राही राजासाहेब हिनक प्रतिभाक सम्मान करैत हिनका अपन सेवामे राखि लेलथिन, जतऽ ओ आठ वर्ष (१९०१-१९०८) हुनक दरबारमे कवि पण्डित ओ मोसाहेबक रूपमे रहलाह। ओहिठामक सरस साहित्यिक वातावरण आ कार्य हिनक रुचि ओ प्रवृत्तिक अनुकूल छलनि। राजा साहेबक दिससँ साहित्यिक पत्राचार करबाक भार 'जनसीदन' जीक ऊपर छलनि। एहि क्रममे १९०२ ई०मे 'सरस्वती' बहरयलापर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीसँ सम्पर्क भेलनि, जे शीघ्र आत्मीय सम्बन्धमे परिणत भऽ गेलनि। द्विवेदी जी हिनक प्रतिभासँ बड़ प्रभावित रहथिन आ 'सरस्वती' लेल बराबरि हिनक सहयोग लैत रहलथिन। १९०८मे राजा साहेबक निधन भेला पर ओ श्रीनगरसँ गाम चलि अयलाह आ ओतहि रहि लेखन कार्य करय लगलाह।

जन्म

ई १९०८ ई० 'जनसीदन' जीक जीवनक निस्सन्देह सभसँ सुखद ओ महत्वपूर्ण वर्ष छलनि, कारण जे हुनक चिराभिलषित पुत्रजन्मक आकांक्षा एहि वर्ष सफल भेलनि। एहिसँ पूर्व दू टा सन्तान कन्या भ' चुकल छलनि आ अपन अवस्था पैंतिसक भऽ गेल छलनि, तें 'जनसीदन' जी पुत्र प्राप्ति लेल चिन्तित रहथि। १९०७ ई०मे ओ राजा साहेबक संग मुंगेरमे छलाह। ओ हिनक चिन्ता द' बूझि एहि निमित्त हिनका देवी भागवत आ गर्गसंहिता बँचिवाक परामर्श देलथिन। 'जनसीदन' जी धार्मिक प्रवृत्तिक आस्थावान पण्डित छलाह। मुंगेरक एकटा पैघ महात्मा स्वामी नरसिंह दास सँ हिनका भेंट भेलनि।

ओहो हुनका यैह कहलथिन। तदनुसार 'जनसीदन' जी नित्य प्रातः कष्टहरणी घाट पर जा देवीभागवत ओ गर्गसंहिता बाँचब प्रारम्भ कयलनि। एहि धार्मिक अनुष्ठानक प्रसादात एक वर्षक अभ्यन्तरे आश्विन कृष्ण अष्टमी (जितियाक प्रात) तदनुसार १८ सितम्बर १९०८ ई० कें 'जनसीदन' जीक ज्येष्ठ बालकक जन्म भेल, बादमे जकर नाम 'हरिमोहन' राखल गेल।

ओही वर्ष जनसीदन जी श्रीनगरसँ गाम आबि गेलाह। कालान्तरमे हुनका फेर एकटा कन्याक बाद एकटा आर पुत्र जन्म लेलथिन आ अन्तमे तखन एकटा कन्या भेलथिन। एहि तरहेँ चारि कन्या दू पुत्र—'जनसीदन' जीक छोटा संतान मध्य बालक हरिमोहनक स्थान तेसर आ भाइमे प्रथम छल।

बाल्यावस्था

दू टा कन्याक बाद भेल पहिल बालक, सेहो धार्मिक अनुष्ठान आदि कतेको प्रयत्नक फलमे प्राप्त। स्वाभाविक छल जे बालक सभक हाथक खेलौना बनल रहैं छल। हँसमुख, प्रसन्नचित्त आ चंचल ई नेना 'ननकिरवू' घरसँ बाहर धरि सभकेँ मोहने रहैत छल। घरमे सभक दुलारक केन्द्र। पितामही मायोसँ बेसी मानथिन। हुनक अतिरिक्त दुलार ततेक जिद्दी बना देने छलनि जे दैयाक मुहसँ बिनु खिस्सा सुनने निन्न नहि पड़नि। दैया रखनहु रहथिन रंग-बिरंगक पिहानीक पेटारा। रामायण-महाभारतसँ लऽ कऽ डेढ़बितना फुलकुम्मरिक खिस्सा धरि ओ दूधक घोँटी संग हिनका घोरि कऽ पिया देलथिन। बाल-मन पर सभसँ गहीँर आदि प्रभाव पितामहिएक पड़ल।

तकरा बाद सभसँ अधिक प्रभाव बालक हरिमोहनक मनपर जनिक पड़ल से छलाह हुनक पिता 'जनसीदन' जी। 'जनसीदन' जी साते-आठ वर्षक अवस्थासँ 'ननकिरवू'केँ अपन सान्निध्यमे राखऽ लगलथिन आ अपना संग घुमबऽ लगलथिन– पचगछिया, श्रीनगर, पूर्णियाँ, गिद्धौर'''। जाहि अवस्थामे नेनाक हाथमे खेलौना रहैत छै, ई छन्द-अलंकारसँ खेलाय लगलाह। घरमे पिता-पुत्रमे वार्त्तालापो सानुप्रास पद्यमे होइत छल। 'जनसीदन' जी दुलारमे कहथिन—'हरिमोहन भागत फिरत, क्यों न लगावत तेल ?' बालक हरिमोहन लगले उत्तर देथिन—'मुझे खेल से मेल है, नहीं तेल से मेल।'

पिताक साहचर्य शिक्षाक आदि स्रोत भेलनि। नियमित विद्यालयीय शिक्षा हिनका शुरूमे प्राप्त नहि भेलनि। ओना पचगछिया प्रियव्रत हाइ स्कूलमे, जतऽ 'जनसीदन' जी दू वर्ष (१९१६-१८) संस्कृत ओ हिन्दीक अध्यापक छलाह, कक्षामे जा कऽ बैसैत छलाह। मुदा लगले फेर 'जनसीदन' जीक संग-संग अन्य स्थानमे भ्रमणशील भऽ जयबाक कारणेँ, आ संगहि 'जनसीदन' जीक आर्थिक स्थिति बहुत अनुकूल नहि होयबाक कारणेँ हिनक नाम स्कूलमे नहि लिखाओल जा सकल। मुदा ताहिसँ कोनो क्षति नहि भेलनि। आदि गुरुक रूपमे विद्वान पिता भेटलथिन जे बाल्यावस्थहिमे संस्कृतक श्लोक सभ कंठस्थ करा देलथिन आ इहो 'अपूर्णे पंचमेवर्षे वर्णयामि जगत्त्रयम्' चरितार्थ करय लगलाह। पिता पाचमे वर्षसँ हिनका सन्धि, समास, छन्द आदि विषय बुझबऽ लगलथिन। बाटो चलैत पुछैत जाथिन — 'कहह तँ ननकिरवू ! आठो गण कोन-कोन होइत छै ?' आ ई 'मन भय रस तज' ओ 'यमाताराजभानसलगा'

सूत्रक व्याख्या सुनाबऽ लगथिन । जन्मजात संस्कार रहबे करनि, पिताक प्रशिक्षणसँ ओहिपर आर तेज धार चढ़ि गेलनि । शीघ्रे ई अपनहु पद्य बनाबय लगलाह ।

पिता 'जनसीदन' जी स्वरचित रचना अवकाशक समयमे डेरा पर सुनबथिन । घरमे साहित्यालाप बरोबरि चलिते रहैत छलैक । एहि साहित्यिक वातावरणमे बालककेँ साहित्यक प्रति रुचि भेनाइ स्वभाविक छल आ उपयुक्त वातावरण पाबि ओ आरो पल्लवित-पुष्पित भऽ उठल । पिताक देखा-देखी इहो समस्यापूर्त्ति द्वारा बुद्धि-चातुर्य देखाबय लगलाह ।

बालक हरिमोहन जतय जाथि अपन आशु कवित्व ओ काव्य चमत्कारसँ लोककेँ चकित-चमत्कृत कऽ देथि । सात वर्षक अवस्थामे पिता पहिल बेर श्रीनगरक दरबारमे लऽ गेलथिन । ता राजा कमलानन्द सिहक देहावसान भऽ गेल छलनि आ अनुज कुमार कालिकानन्द सिह गद्दी पर आबि गेल रहथि । उपनयनक अवसर छलैक । बालक हरिमोहनक राजदरबारमे प्रवेशक ई पहिल अवसर छल । ओ अपन कवित्व-शक्तिक परिचय एकटा कवितामे देलथिन । राजा साहेब प्रसन्न भेलथिन, मुदा प्राय: परीक्षा लेबाक दृष्टिएँ तुरन्त भेल गप्प पर कोनो वस्तु सुनबऽ कहलथिन । ई शीघ्र सानुप्रास बना कऽ सुनौने रहथिन—

'सरकार को दरकार है परकार मोटर कार का !'

आठ वर्षक अवस्थामे एक बेर अपन मायक संग बालक हरिमोहन मातृक (नदौर) गेल । नाना पं० नचारी झा रामचन्द्रक बड़ भक्त रहथिन । ओ गाममे राम मन्दिर स्थापित कयने रहथि । हिनका कहलथिन—'नेना, भगवान पर किछु बना कऽ दियऽ ।' ई तुरंत बनाकऽ देलथिन—

बन-बन फिरथि अयोध्यानाथ ।
आगाँ रघुवर पाछाँ लछुमन बीचमे सीता साथ।
कीट मुकुट कुण्डल तजि देलनि जटाजूट छनि माथ ।
'हरिमोहन' आश्चर्य करै छथि. एना फिए रघुनाथ ॥

आठ वर्षक नातिक बनाओल एहि पदकेँ प्रभातीक स्वरमे गाबि नाना गद्‌गद भऽ जाइत छलाह ।

ओही वर्ष अर्थात् १९१६ ई०मे पहिले बेर गाम छोड़ि बालक हरिमोहन पिताक संग पचगछिया रहय आयल । दिनमे विद्यालयक कक्षामे बैसय आ रातिमे डेरापर साहित्य-चर्चा सुनय । 'समस्यापूर्त्ति' नामक संस्कृत पत्रिकामे ईहो अपन समस्यापूर्त्ति पठावय । एक श्लोकमे 'पितृपतिस्वसा' शब्दक प्रयोग ई यमुनाक अर्थमे कयने रहय, से देखि पं० खुद्दी झा हिनक पिता केँ कहने रहथिन—'ई नेना एक दिन नाम करत ।'

एक बेर पचगछियामे रायबहादुर प्रियव्रत नारायण सिह हिनका एकटा दोहा बनावय कहलथिन । किन्तु ई शर्त राखि देलथिन जे ओहिमे 'सरगम'क सातो अक्षरक अतिरिक्त आर कोनो अक्षर नहि आवय । ई हाथमे कलम लेलनि आ तुरन्त सभकेँ सुना देलथिन—

रांग रागिनी मधुर सुर, सुरसरि धार समान ।
सुरगन मन धुनि सुनि मगन परम सरस रसगान ।

एहि तरहेँ पिताक संग रहने बालक हरिमोहनकेँ ई लाभ भेलनि जे बहुत ठाम घुमलाह, कतेको पंडित गुणीक सहज वार्त्तालाप सुनलनि, राजा लोकनिक आमोद-प्रमोद देखलनि। देशाटन, पंडित-मिलन एवं राजसभा-प्रवेश — एहि तीनूक पूर्ण अनुभव भेलनि।

१९१९ ई० मे जनसीदन जी 'मिथिला मिहिर'क सम्पादक नियुक्त भए दरभंगा आबि गेलाह, जतए ओ १९२२ धरि रहलाह। 'जनसीदन' जीक संग बालक हरिमोहन सेहो प्रेस जाए लगलाह। ओतऽ 'सरस्वती', 'सुधा', 'माधुरी' आदि रंग-बिरंगक पत्रिकाक फाइलमे डूबि जाथि। गाम पर ईयावत तिलस्म-तिलस्मीक छुटल चसका फेरसँ लागि गेलनि। शरच्चन्द्र, बंकिमचन्द्र, रवीन्द्रनाथसँ लऽ कऽ जी० पी० श्रीवास्तव, देवकी नन्दन खत्री धरिक जतेक जे पोथी आ पत्रिका सभ ओतऽ भेटलनि, तीन वर्षमे — जा जनसीदन जी दरभंगामे रहलाह — ओ सभटा चाटि गेलाह। जी० पी० श्रीवास्तवक हास्य कथासँ प्रभावित भऽ ईहो एकटा विनोदपूर्ण गल्प लिखलनि — 'अजीब बन्दर' जे पं० जगदीश्वरी प्रसाद ओझाकेँ तेतेक पसिन्न पड़लनि जे ओ ओकरा सुदर्शन प्रेस, दरभंगासँ पोथी रूपमे छपवा देलथिन। बारहम वर्षक अवस्थामे लिखल ओ बाल रचना हिनक प्रथम मुद्रित कृति छल। कहबाक नहि काज जे ई आब अप्राप्य अछि।

छात्र-जीवन

पन्द्रह वर्षक अवस्था धरि हिनक नाम कोनो स्कूलमे नहि लिखाओल गेल आ ई एहिना पिताक संग रहि ज्ञानार्जन आ साहित्यक अवगाहन करैत रहलाह। दरभंगासँ गाम अयला पर पिताक बाकससँ नाना प्रकारक काव्य-ग्रन्थ, सुभाषित रत्न भाण्डागार तथा शब्दकल्पद्रुम बहार कए उनटाबथि और स्वान्तःसुखाय रसास्वादन करथि। एक दिन 'जनसीदन'जी अपन ममियौत भाइ श्री उपेन्द्र नारायण कुमर, जे मुजफ्फरपुर जी० बी० बी० कॉलेजिएट स्कूलमे अध्यापक रहथि, संग शतरंज खेलाइत रहथि। हिनका स्वाध्यायमे लागल देखि गप्पक क्रममे ओ जनसीदन जीसँ कहलथिन — "अपने जकाँ हिनको कविए बनयबनि की? हमरा चार्जमे किए नहि दऽ दैत छियनि?" आ ओ हिनका लऽ जा कऽ अपना स्कूलमे नाम लिखा देलथिन। ई घटना १९२३ ई० क थिक।

प्रधानाध्यापकक समक्ष जखन हिनका उपस्थित कयल गेल, तँ हुनका आगाँ ई समस्या ठाढ़ भेल जे हिनक नाम लिखल कोन कक्षामे जाय। संस्कृत एवं हिन्दीक शिक्षककेँ हिनक लिखित परीक्षा लेबाक भार देल गेलनि। संस्कृतक हिनक उत्तर श्लोकमे देखि शिक्षककेँ बड़ आश्चर्य भेलनि। ओ प्रधानाध्यापकक समक्ष एकरा प्रस्तुत कयलनि। प्रधानाध्यापक हिनका संस्कृतमे भाषण करऽ कहलथिन। हिनक धाराप्रवाह संस्कृतमे वक्तृता सुनि प्रधानाध्यापकसँ लऽ कऽ प्रत्येक शिक्षक धरि मुग्ध रहि गेलाह।

फलस्वरूप हिनक नाम सोझे मैट्रिक कक्षामे अर्थात् 'टेन्थ' मे लिखि लेल गेल। यद्यपि एहि रूपक नियम नहि छलैक, तथापि विशिष्ट प्रतिभाक कारणेँ एक विशेष नियमक अन्तर्गत हिनक नामांकन कयल गेल। एहि तरहेँ १९२३ इ० मे ई कुमरजीक चार्जमे आबि गेलाह आ मुजफ्फरपुरमे पित्तीक अनुशासनमे रहि ई विधिवत् छात्रजीवन प्रारम्भ कयलनि।

ताहि दिन छात्र जीवनक आदर्श रहै—'अध्ययनं तपः।' सादा जीवन ओ मितव्ययिताक पाठ पढ़ाओल जाइ। विद्यार्थीकेँ सुखसँ कोन प्रयोजन! रातिमे एकटा विद्यार्थीकेँ मसहरी लगा कऽ सूतल देखि प्रात भेने गुरुजी तेहन धातुरूप पूछय लगथिन जे ओकर गिट्टी-पिट्टी गुम्म। विद्यार्थीकेँ अँचार आदि खयबाक अनुमति नहि छलैक। हिनक दरभंगाक बहुसल जीह मुजफ्फरपुरमे सैंता गेलनि। पित्तीक डरेँ ब्राह्म मुहूर्त्तमे उठि ई स्नान कऽ अरिथमेटिक-अलजेब्रा बनावय बैसि जाथि। कुमर जी गुरुएमे चेतावनी दऽ देने रहथिन—'देखो बच्चू। आज से कविता-फविता छोड़ो और हिसाब से नाता जोड़ो। नहीं तो देखते हो यह छड़ी!' हिनकर छंद बंद भऽ गेलनि आ पोएट्रीक स्थान पर ई ज्योमेट्री बनावय लगलाह। पढ़ैत-पढ़ैत बेसी राति भऽ जाइन तँ पित्ती-अभिभावक आबि कय लालटेन मिझा दैथिन। तेल महग रहै।

ई मैट्रिकमे रहथि तखने हिनक विवाह भऽ गेलनि। सोलह वर्षक अवस्थामे विवाह ताहि समय सामान्य बात रहै। पत्नी तेरह वर्षक लोअर पास कन्या छलथिन जे अपन कक्षामे फर्स्ट भेल रहथिन। पिता पण्डित सोनेलाल झा मुजफ्फरपुरमे कालीबाड़ीमे पण्डित रहथित आ तीनू बहिन, जाहिमे, सुभद्रा सभसँ छोट छलीह, पित्ती पं० सुन्दरलाल झाक अभिभावकत्वमे अपन गाम लोमामे रहै छलीह।

१९२४ ई० मे एहि तरहेँ बहुत किछु अकस्मात रूपेँ भऽ गेल विवाहसँ हिनक छात्र जीवन पर कोनो प्रभाव नहि पड़लनि। १९२५ ई० मे ई मैट्रिकक परीक्षा पटना विश्वविद्यालयसँ प्रथम श्रेणीमे उत्तीर्ण भेलाह ओ छात्रवृत्ति प्राप्त कयलनि। ओहि समय पटना विश्वविद्यालयमे बिहार तथा उड़ीसा दुनू राज्य सम्मिलित छल।

१९२३ ई० मे जनसीदन जी जीविकोपार्जन हेतु कलकत्ता चल गेलाह आ ओतय 'इन्दिरा', 'देवी चौधरानी', 'विष-वृक्ष', 'गोरा', 'नौका-डूबी' आदि कतेको बंगला उपन्यासक हिन्दीमे अनुवाद कार्य कयलनि। साहित्य सेवा द्वारा द्रव्योपार्जनसँ परिवारक भरण-पोषण होइत छलनि, मुदा बालक हरिमोहनक उच्च शिक्षाक भार वहन करबाक पर्याप्त साधन हुनका नहि रहनि। एहना स्थितिमे मैट्रिकक बाद सरकारी छात्रवृत्ति जे भेटैत गेलनि, से बालक हरिमोहनकेँ आगाँक अध्ययन लेल बड़ सहायक भेलनि। मैट्रिकक बाद आइ० ए०मे पढ़बाक हेतु ई जी० बी० बी० कालेज (सम्प्रति लंगट सिंह कालेज) मुजफ्फरपुरमे भर्ती भेलाह आ ससुरक डेरा (काली बाड़ी)मे रहि पढ़ऽ लगलाह। कालीबाड़ी रमनाक सुप्रसिद्ध रईस महेश्वर बाबूक प्राचीन मन्दिर छलनि जकर प्रबन्धकर्त्ता पंडिते जी छलथिन। ओहि मन्दिरमे सभ कर्मकांडिये छलाह। पूजा पाठ आ भोग-रागक भार पंडित जीक भागिन शीतल मिश्र पर छलनि, जे जारनियो धो कऽ चूल्हिमे लगबैत छलथिन। माघो मासक रातिमे भोजन काल गंजी उतारय पड़नि। अन्हरोखे पंडित जी हिनका पढ़ऽ लेल उठा दैत छलथिन आ देखैत रहैत छलथिन। जहाँ ई बाती उसकबैत छलथिन कि लगले ओ टोकि दैत छलथिन —'ओझा, अंडीक तेल अशुद्ध होइत अछि। हाथ मटिया लेल जाओ।'

एक बेर पंडित जी शीतल जी पर सभटा भार सौंपि गाम गेलथिन। एक दिन हिनक सहपाठी जगदीश अयलथिन। शीतल जी दुनू गोटाकेँ एक संग जलखइ करैत देखि लेलथिन। ओ

पंडित जीके रुक्का लिखि पठौलथिन —'ओझा भ्रष्ट भ' गेलाह। एकटा कायस्थक छौंड़ा संग एक्के दोनामे जिलेबी खयलनि अछि।' पंडित जी गामसँ आबि हिनका सचैल स्नान कराय, यज्ञोपवीत बदलवाय, १०८ गायत्री जपवाय शुद्ध कयलथिन।

आइ० ए०मे ई संस्कृत, तर्कशास्त्र ओ इतिहास विषय लेलनि आ सभ विषयमे तेहन तीक्ष्ण बुद्धिक परिचय देबय लगलाह जे समस्त अध्यापक वर्गक प्रिय पात्र बनि गेलाह। आइ० ए० परीक्षामे संस्कृतक प्रत्येक प्रश्नक उत्तर ई श्लोकमे देने छलाह। बादमे पटना कालेजक संस्कृत विभागाध्यक्ष पं० देवदत्त त्रिपाठी ट्यूटोरियल क्लासमे ओहि अद्भुत उत्तर पुस्तिकाक चर्च कयलनि—'विगत आइ० ए० परीक्षामे एकटा संस्कृतक कापी आयल छल। आदिसँ अन्त धरि सभ प्रश्नक उत्तर अपने बनौल श्लोकमे देने छल। कतहु बिन्दु-विसर्गक अशुद्धि नहि। एहन तँ कहियो कोनो उत्तरपुस्तिका नहि भेटल छल। पता नहि ओ विद्यार्थी के छल।' ई सुनि विद्यार्थी हरिमोहन मुस्कुराय लगलाह। ओ पुछलथिन—'की, ओ विद्यार्थी अहीं तँ ने छी ?' आ संशय निवारणार्थ हिनका संस्कृतमे समस्यापूर्त्ति करवाक हेतु देलथिन—'स एव छात्रो हरिमोहनोऽहम्।' ई तत्क्षण पाँच तरहें पूर्त्ति कय सुना देलथिन। पं० जी गद्गद भय आशीर्वाद देलथिन—'यशस्वी भव।'

मुजफ्फरपुरमे रहनामे बच्चाबाबू (उमाशंकर प्रसाद)क साहित्यिक गोष्ठीमे ई नियमित रूपें भाग लैत छलाह आ अपन समस्यापूर्त्ति सभसँ लोकके चमत्कृत करैत छलाह। पंडित जी हिनका काव्य गोष्ठी, सभा आदिमे जाइत देखि आशंकित रहैत छलथिन जे ओझा पढ़ाइमे पूरा समय नहि दैत छथि। मुदा १९२७ ई०मे जखन आइ० ए०क परीक्षाफल बहरायल, तँ विद्यार्थी हरिमोहन सम्पूर्ण बिहार आ उड़ीसामे सर्वप्रथम स्थान पौने छलाह। से देखि पंडित जी संतोषपूर्वक कहलथिन—'ई भगवतीक कृपा थिकनि। हमरा यश देऔलनि।'

एहि सफलतासँ विद्यार्थी हरिमोहनक नाम और प्रसिद्ध भऽ गेलनि। ओ पटना आबि पटना कालेजमे बी० ए०मे नाम लिखौलनि आ मिंटो होस्टलमे रहि पढ़य लगलाह। बी० ए०मे ई अंग्रेजी आनर्स रखलनि तथा दर्शन एवं संस्कृत अन्य विषय। ओहि समय पटना कालेजक प्रिन्सिपल छलाह हार्न साहेब आ वार्डेन छलथिन आर्मर साहेब, जे अंग्रेजी विभागक अध्यक्ष रहथि। मिंटो होस्टलक सुपरिटेन्डेन्ट रहथिन ए० पी० बनर्जी शास्त्री जे संस्कृतक प्रोफेसर होइतहु अंग्रेजी रंगमे रंगल छलथिन। होस्टलमे अनेक छात्र आत्मीय बन्धु बनि गेलथिन, यथा सतीश चन्द्र मिश्र (बादमे मुख्य न्यायाधीश), विश्वम्भर चौधरी (कलक्टर), जयनारायण मल्लिक (मधेपुर स्कूलक प्रधानाध्यापक), राम चन्द्र छत्रपति (मधेपुराक प्राचार्य), जगदीश कश्यप (बादमे भिक्षु ओ नालन्दा विद्यापीठक निदेशक), महेन्द्र प्रसाद वर्मा (न्यायाधीश), जगदीश चन्द्र सिन्हा (जिनका नाम पर जगदीश मेमोरियल कप चलाओल गेल) आदि।

आर्मर साहेब हिनक योग्यतासँ ततेक प्रभावित भेलथिन जे आल इंडिया चैलेंज कपक वाद-विवाद प्रतियोगितामे पटना विश्वविद्यालयक प्रतिनिधित्व करऽ हिनका इलाहाबाद पठौलथिन। ओतऽ ई सर्वप्रथम स्थान प्राप्त कयलनि आ तत्कालीन कुलपति डा० सर गंगानाथ झाक हाथें ट्राफी प्राप्त कयलनि।

पटना कालेजमे एक बेर ड्रामा भेल रहैक, जी० पी० श्रीवास्तवक प्रहसन 'नाक में दम'। ओहिमे ई मौलानाक पार्ट लेने रहथि आ सफल अभिनयक लेल पुरस्कार स्वरूप मेडल प्राप्त कयने रहथि।

अंग्रेजीक प्राध्यापक हिल साहेब एकटा एहन कथा लिखबाक लेल कहलथिन जाहिमे नायक कथाक समाप्तिमे आबय। हिनक कथा देखि ओ अत्यधिक प्रभावित भेलथिन आ विशेष रूपसँ मानय लगलथिन।

साहित्यिक गतिविधि हिनक मुजफ्फरपुर जकाँ पटनोमे चलैत रहलनि। १९२७ इ०मे मुजफ्फरपुरमे अखिल भारतीय हिन्दी सम्मेलनक कवि-सम्मेलन होइत रहै। आराक सरदार हरिहर सिंह ठेठ भोजपुरीमे अपन हास्य-रचना सुनाबए लगलाह—

अइली अइसन तिरहुत देस
मउगा अदमी उजबुक भेष
मन लायक भोजन नऽ पइली
चूड़ा दही सानके खइली....

मंचपर जनसीदन जी, शरण जी, बेनीपुरी, दिनकर, मनोरंजन, विकल जी आदि उपस्थित रहथि। ओ लोकनि हिनके उत्तर देबाक हेतु ठाढ़ कऽ देलथिन। ई सुनाबऽ लगलथिन—

भोजपुरिया सभ केहन कठोर
पुछथि ततलवा तोर कि मोर
सतुआ के मुठरा जे सान
चूड़ा-दहीक स्वाद की जान ?....

थपड़ी जे पड़य लागल से रुकबाक नाम नहि लैत छल। अध्यक्ष हरिऔध जी गद्‌गद भऽ अपन गरक माला उतारि पहिरा देलथिन। सार्वजनिक सभामे ई हिनक कैशोर्य-जीवनक प्रथम कीर्त्ति छल। पटना कालेजक प्रो० अक्षयवट मिश्र ततेक प्रभावित भेलथिन जे 'श्रीकृष्ण' (औरंगाबादक मासिक पत्र) मे बालकवि शीर्षक सँ सचित्र परिचय प्रकाशित करौलथिन।

१९२९ मे ई बी० ए०क परीक्षामे बैसलाह। अंग्रेजी साहित्यक गद्य, पद्य ओ नाटकक हिनका तेहन सुपुष्ट अध्ययन रहनि जे शेक्सपीयर पर लिखय लगलाह तँ उद्धरण दैत-दैत चारि कापी भरि देलथिन। घड़ी देखलनि तँ केवल एकके घंटा शेष छलनि आ चारि टा प्रश्नक उत्तर बाँकिए छलनि। हिनका जतबा सामग्री छलनि ताहि हिसाबे सात-आठ घंटा और समय भेटितनि, तखन चारू उत्तर होइतनि। परन्तु एतऽ तँ एके प्रश्नक उत्तर लिखैत-लिखैत घन्टी बाजि गेलनि। छौओ दिन एहिना भेलनि। तथापि हिनका आनर्स भेटि गेलनि आ प्रायः द्वितीय स्थान भेटलनि। प्रथम स्थान नहि प्राप्त कऽ सकलाह तकर दुःख रहि गेलनि।

जनसीदन जी १९२७ मे कलकत्तासँ गाम घुरि आयल छलाह आ घरे पर रहि लेखन-कार्य करऽ लागल छलाह। मुदा स्वास्थ्य हुनक आब नीक नहि रहै छलनि आ तेँ 'ननकिरबू'क बी० ए०कऽ

गेलापर ओ निश्चिन्त भऽ कऽ आब आगाँ पर रहबाक निश्चय कयलनि। आयक कोनो निश्चित स्रोत नहि छलनि तँ सभसँ छोट बेटी सोनदाइक विवाहक हेतु धनक जोगाड़ करबाक छलनि। एहना स्थितिमे 'ननकिरवू'क आगाँ पढ़बाक प्रश्न पर सोचल नहि जा सकैत छल। तेँ १९२९मे बी० ए० कयलाक बाद एक वर्ष लेल हिनका अध्ययन स्थगित करऽ पड़लनि।

मुदा जनसीदन जी 'ननकिरवू' केँ और आगाँ पढ़बऽ चाहैत छलाह, से महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा १२ फरवरी १९३० केँ जनसीदन जीकेँ लिखल पत्रसँ सिद्ध होइत अछि। द्विवेदी जी लिखने रहथिन—'यह जानकार अत्यानन्द हुआ कि आप अच्छी तरह हैं और अपने आत्मजों को उच्च शिक्षा देने के विचार मे हैं। बड़े बेटे को जरूर एम० ए०मे दाखिल कराइए।' ओही वर्ष अर्थात् १९३० ई०मे पुस्तक भण्डारक शाखा पटनामे खुजल। पुस्तक भण्डारक अधिष्ठाता आचार्य रामलोचन शरणसँ जनसीदनजीकेँ ओहि समय सँ मित्रता छलनि जखन ओ दरभंगामे 'मिथिला मिहिर'मे छलाह। ई निश्चय भेल जे' 'ननकिरवू' पटनामे पुस्तक भंडारमे रहि एम० ए०क पढ़ाइ करताह। पटना कालेजमे हिनक नाम लिखाओल गेल। बी० ए०मे दर्शन-शास्त्रमे हिनका 'डिस्टिंक्शन' आयल रहनि, तेँ विभागाध्यक्ष श्री चारु चन्द्र सिन्हाक प्रोत्साहन पर एम० ए० मे ई दर्शन अपन विषय रखलनि। हिनक गुरु रहथिन डा० धीरेन्द्र मोहन दत्त, प्रो० गंगा नाथ भट्टाचार्य, प्रो० यमुना प्रसाद, प्रो० निर्मल राय घोष आदि। जनसीदन जीकेँ जेना साहित्यिक सर्जनाक लेल श्रीनगर तथा बादमे इंडियन प्रेस, प्रयाग उपयुक्त क्षेत्र तथा वातावरण भेटि गेल रहनि, तहिना पुस्तक भंडार हिनक प्रतिभाक लेल अनुकूल भेलनि आ ओतऽ साहित्य-सत्संगक संग-संग ई अपन अध्ययनक क्रम जारी रखलनि। १९३२ ई० मे एम० ए०क परीक्षामे ई० पटना विश्वविद्यालयमे सर्वोच्च स्थान प्राप्त कय स्वर्ण पदकसँ विभूषित भेलाह।

साहित्य-क्षेत्रमे प्रवेश

१९२९ इ०मे बी० ए० कएलाक बाद जखन हरिमोहन झा अध्ययन स्थगित कऽ गाम आबि गेलाह, तँ एक दिन आचार्य रामलोचन शरणक पत्र भेटलन्हि—'छुट्टीमे घर पर व्यर्थ समय क्यों बिता रहे हो ? कुछ दिनों के लिए यहाँ चले आओ।'

शरणजीसँ हिनक पहिल साक्षात्कार, जे दरभंगामे प्रायः १९२२ मे भेल रहनि, सेहो मनोरंजक अछि। एक दिन ई डेरापर बैसल किछु लिखि रहल छलाह। जनसीदन जी कतहु बूलऽ गेल रहथि। हुनका तकैत एकटा सज्जन पहुँचलाह। हुनका अबिते अपन कविताक कापी पर हिसाबक वही राखि हाथमे पेन्सिल लऽ लेने रहथि बालक हरिमोहन। मुदा आगन्तुक सज्जनक तीक्ष्ण दृष्टिसँ हिनक चलाकी नुकायल नहि रहल। ओ पुछलथिन—'क्यों जी, अभी क्या लिख रहे थे ?' ई कहलथिन 'नहि किछु, चक्रवर्ती अंकगणितसँ एकटा त्रैराशिक बना रहल छी।' ओ हँसि कऽ कहलथिन—'उस कापी को क्यों छिपा रहे हो ? लाओ तो देखें।' ओ कापी लऽ कऽ हिनक बाल-रचना देखऽ लगलथिन। कहलथिन—'क्यों जी, तुम तो अच्छा लिख लेते हो ? कहीं से नकल तो नहीं की है; क्योंकि इसमें कहीं कुछ अशुद्धि नहीं है।' ई कहलथिन—'व्याकरण चन्द्रोदय'क नियम सभ हम खूब ध्यानपूर्वक बुझि लेने छी, तँ अशुद्धि

नहि होइत अछि।' आगन्तुक सज्जन मुस्कुराय लगलाह। बादमे हिनका जनसीदन जी सँ ज्ञात भेलनि जे ई सज्जन आचार्य रामलोचन शरण छलाह—'व्याकरण चन्द्रोदय'क लेखक।

तकरा बाद शरणजी सँ कय बेर भेँट भेलनि। ओ हिनक प्रतिभासँ बड़ प्रभावित रहथिन। तेँ १९२९ मे जखन हुनक आमंत्रण भेटलनि, तँ जनसीदन जी सहर्ष हिनका पुस्तक भंडार लहेरिया-सरायक लेल विदा कऽ देलथिन।

पुस्तक भंडार ओहि समय बिहारक प्रमुख साहित्यिक केन्द्र छल आ मास्टर साहेब अर्थात आचार्य रामलोचन शरण वास्तविक अर्थमे तत्कालीन साहित्यिक वर्गक गुरु छलाह। पुस्तक भंडार हरिमोहन झाक लेल शिक्षाक भंडार साबित भेल आ शरण जीक रूपमे हिनका आदर्श साहित्यिक गुरु भेटि गेलथिन। आचार्य रामलोचन शरण गुणग्राहक छलाह आ उदीयमान प्रतिभाकेँ प्रोत्साहन-प्रश्रय दैत छलथिन। पुस्तक भंडारमे एकसँ एक सिद्धहस्त लेखक—कवि—कलाकार रहैत छलाह। बालक-सम्पादक रामवृक्ष बेनीपुरीक ठहाकासँ भंडार गुंजैत रहैत छल। आचार्य शिवपूजन सहाय, उपेन्द्र महारथी, अच्युतानन्द दत्त, पं० कपिलेश्वर मिश्र, कमल नारायण झा 'कमलेश', जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, छविनाथ पांडेय, जटाधर शर्मा 'विकल', भोला लाल दास, पं० कुशेश्वर कुमर, परमानन्द दत्त 'परमार्थी', दिनकर, वियोगी, प्रिन्सिपल मनोरंजन, नेपाली, मुक्त, द्विज, आरसी, आदि सभ गोटे भंडार-परिवारक सदस्य छलाह। लहेरियासरायमे 'भंडार'क बीचो-बीच पानक आकारक मैदान रहैक, जकर हरियर दूभि पर नित्य संध्याकाल सरस साहित्य-चर्चा होइत छल। हरिमोहन झाक लेल ई वातावरण आ परिवेश अत्यन्त अनुकूल ओ गुणकारी भेलनि आ ओ साहित्य क्षेत्रमे जमि कऽ प्रवेश कयलनि। यद्यपि साहित्य रचना ई नेने अवस्थामेँ करैत आबि रहल छलाह आ एहिसँ पूर्व कतेको कवि-सम्मेलन आदिमे भाग लऽ यश प्राप्त कयने छलाह, तथापि साहित्यक क्षेत्रमे विधिवत आ सम्यक प्रवेश हिनक १९२९ इ०मे पुस्तक भंडार लहेरियासराय अयले पर भेलनि।

१९३०-३२ मे दरभंगा गोशालामे गो साहित्य सम्मेलनक अधिवेशन छल। ओहिमे समस्या छल—'समर में'। आन सभ कवि एकर पूर्ति वीर रसमे कयने रहथि, किन्तु हिनक पूर्ति हास्य-रसमे छल जे सभकेँ खूब नीक लगलैं। एक गोटे ५१ टाकाक पुरस्कार आ दोसर गोटे स्वर्णपदक देबाक घोषणा कयलथिन।

मास्टर साहेब मिथिला-मैथिलीक अनन्य भक्त छलाह। अपन प्रेसक नाम विद्यापति प्रेस रखने छलाह। 'विद्यापति प्रेस'मे मिथिलाक्षरक प्रथम टाइप बनवा कऽ मँगौने छलाह। 'विद्यापति पंचाग' बहार करैत छलाह। 'विद्यापति पदावली' प्रकाशित कयने छलाह। ओही वर्ष अर्थात् १९२९ इ०मे ओ 'मिथिला' नामसँ मैथिली मासिक पत्रक प्रकाशनक आरम्भ कयलनि। सम्पादनक भार पं० कुशेश्वर कुमर तथा भोलालाल दासकेँ देल गेलनि। हास्य-विनोद स्तम्भक भार हरिमोहन झाकेँ भेटलनि। 'मिथिला'क अंक सभमे एकाधिक रचना—कविता, लेख आदि हिनक रहैत छलनि। मैथिलीक सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास हिनक 'कन्यादान'क श्रीगणेश एही पत्रिकासँ भेल। तकरो मनोरंजक इतिहास अछि। एक दिन भोलालाल दास आबि हिनक ठोँठ पर सवार भऽ गेलथिन जे 'मिथिला'क अन्तिम फर्मा अहीँक लेख बेत्रेक रुकल अछि, से जल्दीसँ किछु लिखि कऽ दऽ दिअौ। ओहि समय हिनक छोट

बहिन (सोनदाइ)क कन्यादानक चर्चा चलैत रहनि। हिनक गाय गाम पर एहि प्रसंग अड़ोसिन-पड़ोसिनसँ जे वार्त्तालाप एक दिन करैत रहथि, से हिनका तेहन कचिगर लगलनि जे ई तकरा चुपचाप नोट कऽ लेने रहथि। राति भरिमे ओही गप्प पर रंग चालिम चढ़ा ई 'मिथिला'मे छपबाक हेतु दऽ देलथिन आ सैह भेल 'कन्यादान'क श्रीगणेश। पत्रिका तँ एक वर्षक बाद बन्द भऽ गेल, मुदा 'कन्यादान'क हेतु पाठकक मनमे तेहन उत्सुकता छोड़ि गेल जे पाठकक तगेदा पर तगेदा आबऽ लागल आ लेखककेँ ओ उपन्यास तँ पूरा कऽकऽ छपाबहि पड़लनि, ओकर दोसरो भाग 'द्विरागमन' हुनका बादमे लिखऽ पड़लनि।

ओहि समय अर्थात् १९२९–३०मे हरिमोहन झाक प्रतिभा एकाधिक दिशामे प्रवाहित भऽ रहल छलनि। मैथिली साहित्यक अभिवृद्धि ओ पत्रिकाक लेल तथा कवि-गोष्ठी आदिक हेतु कथा, कविता, लेख आदि लिखि कऽ कय रहल छलाह, संगहि हिन्दी ओ संस्कृतमे छात्रोपयोगी पोथी तैयार कऽ रहल छलाह। एहन पोथीमे हिनक 'तीस दिनमे संस्कृत', 'तीस दिनमे अंग्रेजी', 'संस्कृत रचना चन्द्रोदय', 'संस्कृत अनुवाद चन्द्रिका', 'रामकथा', 'कृष्णकथा' आदि बड़ प्रसिद्ध भेलनि। जटिल विषयकेँ रोचक शैलीमे सुबोध तथा रम्य बना एहि पोथी सभमे तेना प्रस्तुत कयल गेल, जे छात्रकेँ सुगमतापूर्वक हृदयङ्गम भऽ जाइक। व्याकरण ओ रचना विषयक ई पोथी सभ सर्वथा मौलिक एक टा नवीन पद्धतिक आविष्कार कयलक। 'रामकथा' ओ 'कृष्णकथा'मे तहिना सरल आ सुगम संस्कृतमे राम ओ कृष्णक कथा बड़ रोचक शैलीमे प्रस्तुत कयल गेल छल। १९२९ सँ लऽ कऽ १९३२ धरि, जा हरिमोहन झा एम० ए० कयलनि, एहि प्रकारक पोथी ओ लिखैत रहलाह।

कार्यकाल

जुलाइ १९३३ मे हरिमोहन झाक नियुक्ति बी० एन० कालेजमे दर्शन-शास्त्रक व्याख्याताक पद पर भऽ गेलनि। एहिसँ पूर्व अर्थात् मइ १९३३ मे 'कन्यादान' उपन्यास पाठक लोकनिक तगेदा पर पुस्तकाकार बहरा गेल रहय। नोकरीमे अयलाक बाद कालेजक समीपे एकटा डेरा लेलनि आ गामपरसँ परिवार आनि रहय लगलाह। १९३० मे जखन ई एम० ए० मे पढ़ैत छलाह, हिनक प्रथम सन्तान कन्या (फूलदाइ)क जन्म भऽ चुकल छलनि। पटनामे अयलाक बाद अपन छोट भाय इन्द्रमोहनकेँ सेहो पटना आनि टी० के० घोष एकेडमीमे नाम लिखा देलथिन। पटना आ गामक दुनू बिन्दु पर जीवन सम गतिसँ चलय लगलनि।

जाहि समय प्रो० हरिमोहन झा बी० एन० कालेज 'ज्वायन' कयलनि, ताहि समय कालेजमे आन यशस्वी विद्वान प्राध्यापक रहथि—अंग्रेजीमे प्रो० मोइनुल हक (जे बादमे प्रिन्सिपल भेलाह), हिन्दीमे डा० जनार्दन मिश्र (जे जर्मनीसँ डाक्टरेट लऽ कऽ आयल छलाह), इतिहासमे प्रो० सतीश चन्द्र मिश्र (जे बादमे मुख्य न्यायाधीश भेलाह) आदि। ओहि समय पटनामे राय बहादुर पं० जयानन्द कुमर, जे बिहारक पोस्टमास्टर जेनरल रहथि आ जनसीदन जीक छोट ममिऔत भाय छलथिन, रहैत छलाह। मैथिल समाजमे हुनकर ओहने आदरपूर्ण स्थान छलनि जेना भूमिहार समाजमे सर गणेश दत्तक अथवा कायस्थ-समाजमे डा० सच्चिदानन्द सिन्हाक। संध्याकालीन गोष्ठीमे कय तरहक लोकक जुटान होइत छल आ व्यंग्य-विनोद वार्त्ता होइत छल। जावत ओ छलाह, हुनक वास स्थान प्रमुख सामाजिक केन्द्र बनल रहल, प्रो० झा नियमित रूपसँ प्रत्येक छुट्टीक दिन ओतय जाय लगलाह।

दर्शन शास्त्रक व्याख्याता भेलाक बाद प्रो० झाक बहुभागी प्रतिभा दर्शनक ग्रन्थ प्रणयन दिस मुड़ल । ई आठ खण्डमे 'भारतीय दर्शन परिचय' तैयार करबाक योजना बनौलनि —(१) न्यायदर्शन, (२) वैशेषिक दर्शन, (३) सांख्य दर्शन, (४) योग दर्शन, (५) मीमांसा दर्शन, (६) वेदान्त दर्शन, (७) नास्तिक दर्शन तथा (८) दर्शन समीक्षा । उपर्युक्त आठ खण्डमे सँ मात्र दू खण्ड छपि सकल । प्रो० झा तालीमसे गाम नहि आ लहेरियासराय चल जाइत छलाह आ ओतऽ भंडारमे पोथी लिखबाक काज करथि । एहि तरहेँ न्याय दर्शन १९४० मे आ वैशेषिक दर्शन १९४३ मे छपल । पाठक आ मित्र लोकनिक आग्रह पर द्विरागमनो १९४३ मे एहिना बहरायल । दर्शन सन क्लिष्ट आ जटिल विषयकेँ ई अपन पोथीमे बड़ सरल आ सुबोध रीतिसँ रखलनि अछि । ताहि समयमे हिन्दीमे दर्शनपर एहन पोथीक नितान्त अभाव रहैक । कहबाक काज नहि जे दर्शनकेँ आ एहिसँ पूर्व संस्कृत, अंग्रेजीकेँ सरल रूपमे प्रस्तुत करबाक एहि महत् कार्यक पाछाँ आचार्य रामलोचन शरणक प्रेरणा छलनि ।

१९३४क भूकम्पमे गामपरक भीतक घर धराशायी भऽ गेल छलनि । तकरा स्थान पर टटघर छलनि, जकरा पक्कामे परिणत होइत-होइत छओ वर्ष लागि गेल । १९४०मे 'शांतिकुंज' नामक पक्का बनिकऽ ठाढ़ भेल जे आइयो सड़क पर दने जाइत बटोहीक ध्यान आकर्षित करैत अछि । ई बात दोसर जे आइ उचित देखरेख आ मरम्मति बिना ओ पक्का ढहल जा रहल अछि ।

गाम पर पक्का मकान बनयबाक ई काज जे भऽ सकलनि तकर समटा श्रेय चनौरक बड़का बहिनोय जगदीश झाकेँ छलनि । हुनक जेठ पुत्र 'चन्द्र' नाना जनसीदनजीक संरक्षणमे रहि ओतहि पढ़ऽ लगलथिन । बादमे तिथराक दोसर नाति 'सूर्य' सेहो बाजितपुर आबि पढ़ऽ लगलथिन । किछु दिन बाद सतलखाक तेसर नाति 'विष्णु' सेहो आबि गेलथिन । भूकम्पेक वर्ष अर्थात् अगस्त १९३४मे प्रो० झाक ज्येष्ठ बालक गोपालजीक जन्म भेलनि आ तकर दू वर्ष बाद १९३६ मे दोसर पुत्र लखनजी जन्म लेलथिन । १९४०मे अर्थात् जाहि वर्ष मकान बनल, तेसर पुत्र रमनजी क जन्म भेलनि । जनसीदन जी नाती-पोता सभसँ भरल-पुरल परिवार मध्य रहैत छलाह आ सभकेँ संरक्षण दैत छलाह ।

प्रो० झा पटना-लहेरियासराय-गाम करैत दर्शनक संग-संग साहित्य-सेवा करऽ लगलाह । एहि बीच ई कालेज होस्टलक सुपरिंटेन्डेन्ट भऽ गेलाह । छोट भाइ 'इन्द्र' मैट्रिक पास कऽ कौलेजमे पढ़' लगल थिन । १९३९मे हुनक विवाहो भऽ गेलनि—सबौरक पं० दुर्गादत्त झाक कन्या लक्ष्मीदेवीक संग । बी० ए० कयलाक बाद जीविकाक हेतु ओ किछु दिन गामसँ तीन माइल पर पातेपुर हाइ स्कूलमे मास्टरक काज कयलनि, पश्चात् कलकत्ता चलि गेलाह । जनसीदन जीकेँ दमाक रोग रहनि । १९३९ इ० मे ओ भीषण रूपसँ दुखित पड़लाह आ हुनका पटना आनल गेल । छओ मासक चिकित्सोपरान्त ओ आरोग्य लाभ कऽ गाम घुरलाह। ओहि समय प्रो० झा बी० एन० कालेजक सामने वला गली मे रहैत छलाह ।

पारिवारिक एहि सभ दायित्वक बीच प्रो० झाक लेखनी सतत चलैत रहलनि। आ ओ सामान रूपसँ दर्शन आ मैथिली साहित्यक सेवा करैत रहलाह। १९३७मे 'भारती'क प्रकाशन भेला पर ओहिमे ई नियमित रूपेँ लिखऽ लगलाह। १९४०मे 'न्याय दर्शन' बहरयलनि । १९४३मे 'द्विरागमन' आ 'वैशेषिक दर्शन'। १९४५मे 'प्रणम्य देवता' । १९४८मे 'खट्टर ककाक तरंग' । १९४९मे 'रंगशाला' । लगैत अछि ई '२९सँ लऽ कऽ '४९ धरिक समय प्रो० हरिमोहन झाक लेखकक लेल सभसँ बेसी ऊर्जात्मक रहल ।

मुदा प्रो० झाक मूल प्रवृत्ति मैथिली साहित्य दिस रहनि से आगाँ जा कऽ एहि बातसँ स्पष्ट भऽ जाइत अछि जे आगाँक पूरा समय ओ एक तरहेँ मैथिलिएकेँ देबऽ लगलाह आ 'भारतीय दर्शन परिचय'क हुनक योजना दू खंडक बाद धरा लऽ लेलकनि।

१९४० मे ई कदमकुआँमे डेरा लऽ कऽ रहऽ लगलाह। इन्द्र बाबू कलकत्तासँ घुरि अयलाह आ संग रहि, 'आर्यावर्त'क सह-सम्पादक रूपमे काज करऽ लगलाह। १९४६मे कन्या फूलदाइक विवाह भेलनि—नेहराक वकील पं० हरीन्द्र झाक सुपत्र शैलेन्द्र मोहन झासँ। १९४७मे कदमकुआँ बला डेरा मे दुनू पुत्र गोपालजी–लखनजीक उपनयन संस्कार भेलनि। जनसीदनजी पटना आयल छलाह आ ज्येष्ठ पौत्र गोपाल जीक आचार्य भेल छलाह। लखन जीक आचार्य भेलथिन नाना पं० सुन्दरलाल झा। एहि बीच परिवारमे दू टा भयंकर दुर्घटना भेलनि। १९४७मे इन्द्र बाबूक जेठ संतान बालक ललन जीक पाँच वर्षक अवस्थामे आकस्मिक मृत्यु भऽ गेलनि आ तकर बाद स्वयं इन्द्र बाबू दुर्घटनाग्रस्त भऽ अक्टूबर १९४९ मे दिवंगत भऽ गेलाह। ओहि समय इन्द्र बाबू मात्र ३० वर्षक रहथि। इन्द्र बाबू हँसमुख स्वभावक गीत-हारमोनियम-इसराजसँ लऽ कऽ शतरंज आ आन खेलमे रुचि लेनिहार एकटा सुदर्शन ओ सक्रिय युवक रहथि। परिवारमे ई दुनू एक-पर-एक वज्रपात वृद्ध जनसीदनजीकेँ तेना तोड़ि देलकनि जे ओ बेसी दिन तकरा बाद जीवित नहि रहि सकलाह। २० जून १९५१ केँ हुनक निधन भऽ गेलनि।

उपनयनक बाद १९४७ इ०मे गोपाल जी-लखन जीक नाम टी० के० घोष एकेडमीमे लिखा देल गेल रहनि। १९४८मे प्रो० हरिमोहन झाक नियुक्ति पटना कौलेजमे भऽ गेलनि जतऽ विभागाध्यक्ष गुरु डा० धीरेन्द्र मोहन दत्तक सम्पर्क आर घनिष्ठ भेलनि। ओ हिनक विद्वत्ताक प्रशंसक रहथिन आ 'वैशेषिक दर्शन'क भूमिका लिखने रहथिन। पटना कालेज अयला पर प्रो० झाक कार्यकलाप आर विस्तार पयलकनि। एक दिस दर्शन सम्बन्धी व्यस्तता सभ बेसी रहऽ लगलनि, दोसर दिस साहित्य-सर्जन ई अबाध गति सँ करैत रहलाह। प्रायः मैथिली साहित्यकेँ १९४८ सँ ६० धरिक अवधि मध्य प्रो० हरिमोहन झाक पोथी सर्वाधिक भेटल अछि। १९५२ मे 'निगमन तर्कशास्त्र' तथा 'भारतीय दर्शन' (अनुवाद), १९५३मे 'तीर्थयात्रा' (पाकेट साइज), १९५५मे 'खट्टर कका' (दोसर परिवर्धित संस्करण), आ १९६०मे 'चर्चरी' छपलनि। लेखक हरिमोहन झा एहि अवधिमे सर्वाधिक उर्वर छलाह, से तत्कालीन पत्रिका 'मिथिला-ज्योति', 'स्वदेश', 'मिथिला दर्शनक' फाइल देखलासँ बुझाइत अछि।

दोसर दिस दर्शनक क्षेत्रमे सेहो हिनक उपलब्धिक संख्या बढ़ैत गेलनि। १९५३ मे डा० धीरेन्द्र मोहन दत्तक सेवा-निवृत्त भेला पर प्रो० हरिमोहन झा विभागाध्यक्ष पद पर अयलाह। बिहारक समस्त विश्वविद्यालयक अतिरिक्त आन कतेको विश्वविद्यालयसँ सम्पर्क भेलनि। 'दार्शनिक' (जयपुर), 'गवेषणा' (मुरादाबाद) क सम्पादक मंडलाक सदस्य भेलाह। इंडियन फिलासफिकल कांग्रेस तथा अखिल भारतीय दर्शन परिषदक सदस्य भेलाह। १९५६ इ० मे रीडर भ' गेलाह आ १९५९ इ० मे युनिवर्सिटी प्रोफेसर। एहि बीच कतेक गोटे हिनक मार्गदर्शनमे डाक्टरेट कयलनि आ कतेक सभा-सम्मेलनमे ई अध्यक्षता आ/अथवा भाषण कयलनि तकर बड़का टा सूची अछि। विभिन्न अवसर पर

प्रो० झा द्वारा पठित लेख आ भाषण सभ महत्वपूर्ण छनि, जे कतहु एकत्र नहि अछि। 'दार्शनिक' त्रैमासिकमे हिनक 'परमार्थ दर्शन' 'परामनोविद्या', आदि कय टा निबन्ध हिन्दीमे तथा अंगरेजीमे, 'परमार्थ दर्शन' राधाकृष्णन सोवनियरमे तथा भारतीय नीतिशास्त्रमे अहिंसाक अवधारणा, अवच्छेदकता, फिलासफिकल क्वाटरली, दर्शन इन्टरनेशनल आदिमे छपल छनि।

१९५२ इ० मे इंडियन फिलोसोफिकल कांग्रेसक सदस्य भेलाह आ तहियासँ प्रायः प्रत्येक अधिवेशन मे सम्मिलित होमय लगलाह। ओहि वर्ष वार्षिक अधिवेशन गुरुवर धीरेन्द्र मोहन दत्तक अध्यक्षतामे मैसूरमे भेल रहै। ताहिसँ हिनक दार्शनिक अभियान प्रारंभ भेलनि।

१९५३ इ०मे बड़ोदा अधिवेशन तथा १९५४ इ० मे लंका (पेरेडीनिया) मे डेलीगेटक रूपमे गेलाह। १९५५ इ० मे नागपुर अधिवेशनमे हिनक निबन्ध कांग्रेसक मुखपत्रमे प्रकाशित भेलनि। १९५६ इ० मे चिदम्बरम अधिवेशनमे पं० रामावतार शर्माक दर्शन पर भाषण कैलनि। १९५७ इ०मे श्रीनगर अधिवेशनमे नीतिशास्त्र एवं समाज विज्ञानक अध्यक्षता कैलनि। १९५८ इ० मे अहमदाबाद अधिवेशनमे वेदांत विषयक चर्चामे भाग लेलनि। ओही वर्ष अखिल भारतीय दर्शन परिषदक बीकानेर अधिवेशनमे तर्कशास्त्र एवं तत्त्व मीमांसा विभागक अध्यक्षता कैलनि। १९५८ इ०मे कटक अधिवेशन मे 'कन्सेप्ट ऑफ निगेशन' पर अपन निबन्ध पढ़लनि।

१९६० इ० मे भारत सरकारक अन्तर्गत तकनीकी 'पारिभाषिक शब्द निर्माण'क हेतु दर्शन समितिक विशेषज्ञक रूपमे बिहारसँ आमंत्रित कैल गेलाह।

अपन कार्यकालमे कतेक परीक्षण, परिशोधन, अन्तर्वीक्षा, नियुक्ति आदि कार्यक हेतु ई विभिन्न विश्वविद्यालसँ सम्बद्ध रहलाह। एहि ल' क' कश्मीर सँ लंका धरि भऽ अयलाह। भारतीय दर्शनक प्रसादात् सम्पूर्ण भारत दर्शन भऽ गेलनि।

१९४९ इ० मे इन्डियन फिलॉसॉफिकल कांग्रेसक अधिवेशन पटनामे भेल रहैक। ओहिमे हिनका पण्डित सभाक संयोजन करबाक भार भेटल रहनि।

१९५० इ०मे बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनक अधिवेशन गयामे भेलैक। ओहिमे ई दर्शन शाखाक अध्यक्षता कयलनि।

ओही समय बिहार दर्शन परिषद्क स्थापना भेल। आचार्य दत्तक प्रेरणा और प्रो० रामजी सिंहक अदम्य उत्साह सँ ओकर प्रथम अधिवेशन बेगूसरायमे भेलैक। तदुत्तर पटना, मुजफ्फरपुर आदि विभिन्न स्थान मे ओकर अधिवेशन होइत रहलैक जाहिमे प्रो०झाक प्रमुख भूमिका रहैत छलनि। परिषद्क एकटा महत्त्वपूर्ण कृति ई भेलैक जे आचार्य दत्तक एक स्मारक ग्रन्थ 'वर्ल्ड पर्सपेक्टिव इन फिलोसोफी एण्ड रिलीजन' प्रस्तुत भेल जकर भूमिका प्रो०झा लिखने छलाह 'एट द फीट ऑफ द ग्रेट गुरु'। १९५२ मे पटना विश्वविद्यालयक कुलपति श्री शार्ङ्गधर सिंहक आग्रह पर ई निगमन तर्कशास्त्र पर हिन्दी मे मौलिक ग्रन्थ लिखलनि जे विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित ओ पाठ्य ग्रन्थ निर्धारित भेल। एहू पोथीमे प्रो० झा अपन रोचक ओ सरल शैलीकेँ अक्षुण्ण रखलनि।

बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा प्रकाशित म० म० रामावतार शर्माक 'यूरोपीय दर्शन' मे हेगेल धरिक वर्णन छलैक। परिषद्क अनुरोध पर ई समकालीन दर्शनक परिचय लिखि ओहिमे जोड़लनि।

तत्कालीन राज्यपाल श्री आर० आर० दिवाकरक आदेश पर ई प्राचीन, मध्यकालीन और अर्वाचीन बिहारक दार्शनिक अवदान पर तीन अध्याय लिखिकऽ देलथिन जे ओ अपन सम्पादित ग्रन्थ 'बिहार थ्रू द एजेज' मे समाविष्ट कयलथिन।

आचार्यदत्त अपन सुप्रसिद्ध कृति 'इन्ट्रोडक्शन टू इन्डियन फिलौसोफी'क हिंदी रूपांतर करबाक भार हिनका देलथिन जे ई अपन सहयोगी प्रो० नित्यानन्द मिश्रक संग कैलनि। एहि पोथीमे प्रो० हरिमोहन झाक कुशल अनुवादकक रूपक दर्शन कयल जा सकैछ। अनुवाद मूलक स्वाद दैछ।

समस्त राज्य आदेशमे प्रो० झाक शिष्य परम्परा पसरल अछि ओहिमेसँ कतेको व्यक्ति विश्वविद्यालयमे तथा अन्यत्र नीक-नीक पद पर कार्यरत छथि। ओहि बीच विभिन्न विश्वविद्यालयक अनेको शोधकर्त्ताक निर्देशन ओ परीक्षण कय ई डॉक्टरेट डिग्री देऔलनि। किछु प्रमुख नाम अछि—

प्रो० उमा गुप्ता (पटना विश्वविद्यालय) 'वेदमे भौतिकवाद', प्रो० मधुसूदन प्रसाद (पटना वि० वि०) 'राम मोहन राय'; मगध महिला कॉलेजक प्रो० इन्दिराशरण 'भागवतमे भक्ति दर्शन'; अरविन्द महिला कॉलेजक प्रो० रमासेन 'गांधी दर्शन'; आंध्रक प्रो० चिरंजीविनी 'रामायण' मे समाज दर्शन'; नेपालक श्री वीरेन्द्र कुमार मिश्र 'महाभारतमे नीति तत्त्व'; सुन्दरवती महिला कॉलेजक रेवा ऐकट 'अहिंसा दर्शन'; मिथिला विश्वविद्यालयक प्रो० रघुवंश झा 'बृहदारण्यक उपनिषद्'; प्रो० अमर नाथ झा (मिथिला वि० वि०) 'चन्दा झा'; कलकत्ता विश्वविद्यालयक प्रो० इलारानी सिंह 'मैथिली लोकगीत'; प्रो० रामाशीष प्रसाद (राँची विश्वविद्यालय) 'बुद्धि और अंतर्दृष्टि', प्रो० श्रीकृष्ण झा (संस्कृत वि०वि०) 'सांख्य दर्शन', प्रो० कृष्ण कुमार झा (बिहार वि० वि०) 'वैवाहिक संस्था'; प्रो० चन्द्रमोहन झा (बिहार वि० वि०) 'असत् का प्रत्यय', प्रो० वशिष्ट नारायण तिवारी (इलाहाबाद वि० वि०) 'बन्धन का विश्लेषण'; प्रो० अशोक कुमार लाल (जबलपुर वि० वि०) 'मोक्ष का प्रत्यय'; श्री रा० के० पाण्डेय 'भारतीय प्रर्शनमे प्रकृति का स्वरूप' तथा श्रीमती मीरा मालवीय (दुनू इलाहाबाद विश्वविद्यालय) 'कांट दर्शन'; प्रो० सागर मल जैन 'जैन दर्शन'; श्री देवेन्द्र प्रसाद (गोरखपुर विश्वविद्यालय) 'अरविन्द दर्शन'; श्री राजेन्द्र झा (जबलपुर वि० वि०) 'हिंदू दर्शन पर बौद्ध धर्म का प्रभाव'; उज्जैन वि वि०क श्री शिवाजी 'इसाई और वैष्णव धर्म', 'प्रो० थीसैमुएल (जबलपुर विश्वविद्यालय) 'सेन्ट ऐक्विनस का दर्शन' आदि।

जनसीदनजी गाम पर रहथिन तँ प्रो० झा गाम परक चिन्तासँ बहुत किछु मुक्त रहै छलाह। जनसीदनजीक मृत्यूपरान्त पटनाक संग-संग गामोक आश्रमक सम्पूर्ण दायित्व हिनकहि माथ पर आबि गेलनि।१९४८मे पटना कालेज आबि गेला पर डेरा रानीघाट मठियामे लऽ गेल रहथि। ओत्तहि चारिम पुत्र (भुवन जी)क जन्म १९४९मे भेलनि। पिताक मृत्यु भेला पर माय आ भाभहुक संग जेठकी भतीजी

(रेणु) कें गाम पर छोड़ि पत्नी-धेया-पुताक संग पुनू छोटकी भतीजी (रत्ना ओ रमा) कें पटना लऽ अनलथिन। रत्ना ओ रमा आर्य कन्या विद्यालयमे पढ़य लगलीह। रमनजी ओ भुवन जीक नाम सेहो स्कूलमे लिखाओल गेल। १९५७ मे गोपाल जी मनोविज्ञान सं एम० ए० कयलनि आ बादमे नियोजन पदाधिकारी नियुक्त भेलाह। १९५८ मे हुनक विवाह पं० रामभद्र झाक पौत्री ओ आनन्द कुमार ओझाक पुत्री आशा झाक संग दिल्लीमे भेलनि। ओहि वर्ष लखनजी दर्शनशास्त्रसं एम० ए० कय पहिने मधुबनी तथा बादमे रांची विश्वविद्यालयमे व्याख्याता नियुक्त भेलाह। १९६३ इ०मे रत्नाक विवाह स्व० विश्वम्भर चौधरीक सुपुत्र विनय चौधरीसं तथा १९६६ इ०मे रमाक विवाह श्री सीताराम झा आयकर कमिश्नरक अनुज दयानन्द झाक संग भेलनि। ओहिसं पूर्व गाम पर जेठकी भतीजी रेणुक विवाह मड़ैयाक धनेश्वर झा सं भऽ चुकल रहनि। ओ विवाहक किछु वर्ष बाद दिवंगता भऽ गेल छलीह।

गाम आ पटनाक एहि समस्या सभक अछैत जें प्रो० हरिमोहन झा एहु अवधिमे मैथिली साहित्य आ दर्शनकें पुष्ट रूपसं समृद्ध करैत रहलाह तं एकर श्रेय प्रो० हरिमोहन झाक धर्मपत्नी सुभद्रा झाकें जाइत छनि। पत्नी पटनेक डेराक नहि, गामोक आश्रमक कोनो काज लेल हिनका कहियो चिन्ता नहि करऽ देलथिन। ओ एसकरे समटा संभारने रहलीह आ हिनका लिखबा-पढ़बाक काज लेल स्वतन्त्र कऽ देलथिन। ततबे नहि, ओ पैतावा खोजिकऽ देबऽसं लऽ हिनका कंघी कऽ देबा धरि सभ हिनक काज अपना उपर लेने छलीह। प्रो० झाकें अपना किछु नहि करबाक प्रयोजन छलनि। ई सुविधा प्रो० झाकें हाल धरि छलनि, अगस्त' ८२ धरि, जा सुभद्रा झा दिवंगता नहि भऽ गेलीह।

सुभद्रा झा सही अर्थमे हिनक सहधर्मिणी छलथिन कारण जे राज्यमे वा ओहिसं बाहर जतय कतहु प्रो० झा गेलाह, संगमे सहधर्मिणी रहथिन। एहिसं सुभद्रा झाक ई लाभ भेलनि जे हुनक सामाजिक-सांस्कृतिक रुचि जगलनि। श्री सुमन वात्स्यायनक प्रोत्साहन पर ओ रेडियो वार्त्ता देबय लगलीह। १९५५ इ० मे केन्द्रीय आकाशवाणीक अखिल भारतीय सांस्कृतिक समारोहमे मिथिलाक प्रतिनिधित्व करबाक हेतु अपन टीम (जाहिमे देयादिनी, लक्ष्मी देवीक अतिरिक्त आन स्त्रीगण छलथिन)क संग दिल्ली गेल छलीह। १९५८ मे चेतना समिति द्वारा 'मण्डन मिश्र' नाटक खेलयबाक रहैक। ताहि समय मैथिलानी लोकनि सार्वजनिक मंच पर उतरबामे घबराइत रहथि। भारतीक भूमिकामे सुभद्रा झा साहस कय आगां अयलीह ओ सफलतापूर्वक भूमिका निभौलनि। एक मैथिल गृहिणी द्वारा कयल ओ प्रथम अभिनय तहिया एक सामाजिक प्रगति छल।

थोड़बे दिन बाद प्रो० हरिमोहन झा रानीघाटक युनिवर्सिटी क्वार्टरमे आबि गेल छलाह। कय टा क्वार्टर बदललनि।मुदा हिनक क्वार्टर सदा एकटा साहित्यिक केन्द्र जकां बनि कऽ रहल, जतऽ नित्य संध्याकाल क्यो ने क्यो साहित्यिक वा विद्वान अवश्य पहुँचि जाइत छलथिन आ काव्य शास्त्र विनोदक वातावरण बनि जाइत छल।

रमनजी मैट्रिकमे पढ़ाइ छोड़ि किछु दिन पटनामे आ फेर गाम जा कऽ रहऽ लगलाह। भुवनजी संगमे रहि कॉलेजमे पढ़ै छलथिन। भुवनो जीकें माता-पिता संग कश्मीर, नेपाल आदि कय ठाम घुमबाक मौका भेलनि। रमन जीक १९६९मे विवाह दुर्गौली (मधुबनी)क श्रीकृष्णानन्द झाक बहिन वीणादेवीक संग भऽ

गेलनि। आ ओ गामे पर स्थायी रूपसँ रहऽ लगलाह। रमनजीकेँ पहिल सन्तान बालक (दमन जी) भेलथिन, जे दुइए वर्षक अवस्थासँ दादा-दादीक संग रहऽ लगलथिन। मुदा १९७६ इ०मे छओ वर्षक अवस्थामे दमन जीक असामयिक मृत्यु भऽ गेलनि। दादा-दादीक एकटा बड़ पैघ सम्बल छूटि गेलनि। तकरा बादे दादा प्रो० झा बड़ भयंकर रूपसँ दुखित पड़लाह। ओ क्रमशः आरोग्य लाभ कयलनि, मुदा तकरा बाद दादी जे दुखित पड़लीह से फेर उठि नहि सकलीह।

१९६०सँ १९७० धरिक समय सेहो प्रो० झाक साहित्यिक आ दार्शनिक व्यस्ततादिसँ भरल रहलनि। 'मिथिला मिहिर' आदि पत्रिकामे प्रायः नियमित रूपेँ ओ लिखैत रहलाह। तकरा अतिरिक्त कवि-सम्मेलनादिक लेल कविता सेहो लिखैत रहलाह। मैथिलीक कोनो कवि-सम्मेलन प्रो० हरिमोहन झाक हास्य कविताक बिना नहि जमैत छल। कविता पढ़बाक हिनक विशिष्ट भंगिमा ओ स्वर दर्शक-श्रोताकेँ मंत्रमुग्ध जकाँ कऽ लैत छल। प्रो० झाक मुँहसँ हिनक कविता 'ढाला झा', 'टी पार्टी' आदि अथवा खट्टरककाक कोनो तरंग जे लोकनि सुनने होयताह, से जनैत छथि जे हिनकर रचना हिनकासँ सुनब एकटा विशिष्ट अनुभव होइत छल।

प्रो० झामे पैरोडी बनयबाक अद्भुत क्षमता छलनि। किछुए शब्दक हेरफेरसँ ई अर्थ बदलि दैत छलथिन। एक बेर दिनकर जीक प्रसिद्ध 'हिमालय' कविता 'मेरे नगपति मेरे विशाल'मे किछु शब्दान्तर कऽ वीर रसक सम्पूर्ण कविताकेँ शृंगार रसक बना देलथिन। दिनकर जी हँसैत-हँसैत लोट पोट भ' गेलाह।

तहिना एक बेर बच्चन जीकेँ हुनक 'इस पार प्रिये तुम हो मधु है, उस पार न जाने क्या होगा'क पैरोडी बना कऽ सुनौलथिन—'इस पार प्रिये गाड़ी चलती, उस पार न जाने क्या होगा?' ओहि समय उत्तर बिहारमे बाढ़िक कारणेँ रेल बन्द रहैक। ओहि पैरोडीक ई पंक्ति—'खाकर कुनैन तेरे सुनैन कितने दिन रहने पावेंगे' सुनि बच्चन जी हिनका अंकमे समेटि लेलथिन।

एहि समयमे काव्य-शास्त्र-विनोदक एकटा और अनुपम केन्द्र छल अमरनाथ बाबूक आवास। ओतऽ कविता ओ हास्यक संग मधुर सेहो चलैत रहैत छल। ओहि गोष्ठीमे ई नव-नव रचना सुनबैत छलाह।

१९६३ इ० मे दिल्लीमे पं० जवाहरलाल नेहरूक अध्यक्षतामे मैथिली पुस्तक प्रदर्शनी भेल रहै। ओहिमे हिनकासँ 'माछ' शीर्षक 'तरंग' सुनि नेहरू जी बहुत प्रसन्न भेल रहथिन आ बगलमे बैसल सत्यनारायण सिंहसँ जमीरी नेबोक अर्थ पुछऽ लागल रहथिन।

प्रो० हरिमोहन झाक साहित्य सेवाक एकटा प्रमुख आयाम अछि—हास्य व्यंग्य पूर्ण कविता। १९३५ इ०मे 'मिथिलांकमे-'मिथिलाक मिहिर'सँ शीर्षक कविता छपल। तकर बाद 'ढाला झा' 'बुचकुन बाबा, निरसन बाबा, 'पंडित ओ मेम', 'पंडितसँ' आदि-आदि कविताक एक नम्हर सूची अछि जे विभिन्न पत्र पत्रिकमे प्रकाशित, रेडियोसँ प्रसारित ओ मंच पर प्रशंसित भेल अछि।

१९४८ इ०मे ओरिएण्टल कॉन्फ्रेंसक दरभंगा अधिवेशनमे आयोजित पण्डित सभामे ई 'हे पण्डित आबहु दया करू, जितिया पावनि लय नइ झगड़ू' कविता सुनयबाक साहस कयने रहथि।

सहरसामे एक बेर कवि सम्मेलनमे ई क्रम भऽ गेल जे मधुप जी अपन करुण कवितासँ सभकेँ कना देथि तँ प्रो० हरिमोहन झा अपन हास्य कवितासँ सभकेँ हँसा देथि।

प्रो० झाक बहुगामी प्रतिभा खाली मैथिली कवि सम्मेलन धरि सीमित नहि छलनि, हिन्दी काव्य-गोष्ठी वा उर्दूक मुशायरामे सेहो ओ ततबे लोकप्रिय छलाह। हिनक 'पटना स्तोत,' 'गुलाबी छींटे, शेरे अस्पताल, 'एक चोर और पाँच दार्शनिक' आदि बड़ प्रसिद्ध भेलनि। हिनक प्रायः तत्कालीन स'भ टा हास्य-व्यंग्य हिन्दी कविता वाचाल बाँकीपुरीक 'तिकड़म' मे छपल छनि। ताहि दिन सभा-गोष्ठी आदिक रौनक दुइए गोटे बूझल जाइत छलाह —एक पटना लाॅ कालेजक प्रिन्सिपल भगवती बाबू आ दोसर प्रो० हरिमोहन झा, जिनका माइक धरैत देरी श्रोता हँसऽ लगैत छल आ थपड़ी पीटऽ लगैत छल। कालेज पिकनिक हो, वा होस्टलक फांउंडेशन डे वा एहन कोनो साहित्यिक-सांस्कृतिक समारोह, प्रो० झा अपन महत्त्वपूर्ण भूमिका रखैं छलाह। हिनक भाषाणो कवितासँ कम मनोरंजक नहि होइत छलनि।

तहिना 'नई धारा'मे छपल 'सरकारी हिन्दी का नमूना' आ 'सरकंडावाद' तथा 'उत्तर बिहार' मे 'द्वादश निदान' आ 'क्या बिहार में जातीयता है?' आ 'भाषा'मे प्रकाशित 'हिन्दी के अनेकार्थक वाक्य' सन कतेको हिनक रचनाक उद्धार पत्र-पत्रिकाक फाइलसँ कयल जा सकैत अछि।

एहि बीच साहित्यिक उपलब्धिक संग-संग प्रो० झाकेँ दार्शनिक उपलब्धि सेहो कम नहि भेलनि। १९६३ इ०मे अखिल भारतीय दर्शन परिषदक लखनउ अधिवेशनमे 'अर्थापत्ति' पर भाषण कयलनि। १९६४ मे ई त्रिभुवन विश्वविद्यालय और १९६५मे विश्वभारती (शांतिनिकेतन)क आमंत्रण पर गेलाह। ओही वर्ष मद्रासमे फिलाॅसफिकल कांग्रेसक अवसर पर आयोजित विवाद 'ट्रेडिशन एण्ड प्रोग्रेस' मे भाग लेलनि। १९६५ इ० सँ ६९ धरि शब्दावली निर्माण आयोगक बैसकमे मसूरी, चिदम्बरम, अहमदाबाद आदि स्थानमे गेलाह। १९६९ इ० मे शांतिनिकेनक आमंत्रण पर ओतय जा क्रिश्चन धर्म विषयक संगोष्ठीक अध्यक्षता कयलनि। १९६८ इ० मे अखिल भारतीय दर्शन परिषद्‌क दिल्ली अधिवेशनक अध्यक्ष निर्वाचित भेलाह। बिहारसँ ई गौरव प्राप्त करयवला ई प्रायः पहिल व्यक्ति छलाह। ओही वर्ष इण्डियन फिलोसोफिकल कांग्रेस पटनामे भेलैं जकर ई स्थानीय सचिव रहथि। १९६९ इ० मे फिलोसोफिकल कांग्रेसक धारवाड़ (कर्णाटक) अधिवेशनमे 'धर्मदर्शन' विभागक स्थानापन्न अध्यक्ष क कार्य कैलनि। १९७० ई० मे मद्रास विश्वविद्यालय क उच्चतर दर्शन केन्द्रक निर्माण पर ई गाँधीक 'अहिंसा दर्शन' विषय पर आयोजित संगोष्ठीमे निबन्ध पाठ कैलनि (जे ओतुका स्मारिकामे प्रकाशित भेल)। १९७१ इ० मे बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमीक तत्वावधानमे बोधगयामे संयोजित दार्शनिक सम्मेलनमे अध्यक्षता कैलनि और दर्शन पर भाषण देलनि जे बादमे अकादमीसँ प्रकाशित 'दार्शनिक विवेचनाएँ'मे प्रकाशित भेल। १९७२ ई०मे फिलोसोफिकल कांग्रेसक कानपुर अधिवेशनमे व्याख्यान देलनि। १९७३ इ० मे केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय (दिल्ली) मे अनुवाद समितिक अध्यक्षता कैलनि। १९७४ इ० मे इंडियन फिलोसोफिकल कांग्रेस (इलाहाबाद) मे अध्यक्षता कैलनि तथा सर गंगानाथ झा इंस्टीच्यूटमे 'अवच्छेदकता' पर भाषण देलनि। १९७५ इ० मे अखिल भारतीय दर्शन परिषदक राँची अधिवेशनमे ई विशिष्ट अतिथिक रूपमे आमंत्रित भऽ नव्यन्यायक भाषा विश्लेषण पर भाषण कैलनि।

एवं प्रकारें ई अपन कार्यकालक अंतिम समय धरि निरंतर दार्शनिक कार्यकलापमे संलग्न रहलाह तथा दर्शनक दुइ उच्चतम भारतीय संस्था (इंडियन फिलोसोफिकल कांग्रेस तथा अखिल भारतीय दर्शन परिषद्) द्वारा उच्चतम सम्मान प्राप्त कए दार्शनिक जगतमे सुप्रतिष्ठित भेलाह।

साठि वर्ष पुरला पर १८ सितम्बर १९७० ई० मे ई अवकाश प्राप्त कैलनि। तदुपरान्त विश्वविद्यालय अनुदान आयोगक सिनियर अवकाश प्राप्त शिक्षकक सेवा उपयोग (यूटिलाइजेशन ऑफ द सर्विसेज ऑफ रिटायर्ड टीचर्स)क योजनाक अन्तर्गत पाँच वर्षक अवधिमे 'भारतीय दर्शनमे भाषा विश्लेषणक धारा' (ट्रेन्ड्स ऑफ लिंग्विस्टिक एनालिसिस इन इंडियन फिलॉसफी) पर मौलिक शोध प्रस्तुत कैलनि जे हालमे, १९८१ मे, ग्रन्थक रूपमे चौखम्बा प्रकाशनसँ प्रकाशित भेल अछि।

एहि तरहेँ प्रो० झा अनवरत ग्रन्थ धरि लिखैत रहलाह अछि आ एखनो अपन संस्मरणात्मक आत्मकथा वा आत्मकथात्मक संस्मरण लिखबामे लागल छथि। साहित्यक ई साधना सब दा संस्कारकेँ सहेत एखनहुँ धरि चलाए रहलो अछि। कलमो तँ लेखकक पूँजी होइ छै।

१९७५ क बाद प्रो० झाक साहित्यिक कार्यकलापक गतिमे किछु शिथिलता आयल जे अवस्था जन्य थकावटिक स्वाभाविक लक्षण छल। ओही वर्ष अर्थात् १९७५ ई०मे माघ मास मे ९२ वर्षक अवस्थामे दिवंगता भेलथिन। जनसीदन जीक धर्मपत्नी ओ प्रो० हरिमोहन झाक माय जननी देवी एक टा धर्म परायण, सामाजिक विधि-व्यवहार, गीत-नाद, जनउ-टकुरी, पौती-मौनी, अरिपन ओरिआओन ओ वार्त्तालाप आदिमे कुशल स्नेही आ आवेशी महिला छलीह, जाहि कारणेँ अपन गाममे ओ बड़ व्यापक रहथि। हुनक बुनल सीकीक काज देखि कऽ डैनयी साहेब ततेक प्रसन्न भऽ गेलाह जे जनसीदन जीकेँ घरक आगाँक कलमबाग लिखि देलथिन। नाती-पोता ओहि कलमबागक आम खाइत काल आइ ई बात मोन राखैं छनि।

सभसँ छोट पुत्र भुवन जी १९७२मे एम० ए० कऽ किछु दिन गुरु गोविन्द सिंह कालेज, पटना सिटीमे मनोविज्ञानक व्याख्याता रूपमे काज कयलनि। १९७३ मे सी० एम० कालेज, दरभंगामे हिनक नियुक्ति भऽ गेलनि। १९७८ ई०मे हुनक विवाह बनगाम (सहरसा)क श्री सदाशिव खाँक पुत्री पुष्पासँ भेलनि।

पत्नी सुभद्रा झा पूर्ववत् पटना-बाजितपुर करैत दुनू ठामक प्रबन्ध करैत छलथिन।

प्रो० झा एहू बीच दत्तचित्त रूपसँ अपन काजमे सक्रिय रहलाह अछि। १९६० मे 'चर्चरी' छपलाक बाद १९६७ मे 'खट्टर ककाक तरंग'क तेसर आ परिवर्द्धित संस्करण 'भारती भवन'सँ बहरयलनि। १९७१ मे 'खट्टर काका' हिन्दीमे राजकमल प्रकाशनसँ बहरायल। 'रेल की बात' हिन्दीमे रामलोचन पाकेट बुक सिरीजमे निकलल। 'एकादशी' नामसँ हिनक चुनल कथाक संग्रह ग्रंथालय दरभंगासँ छपल। आ एहि बीच तमाम पत्रिका सभक लेल रचना लिखैत रहबाक अतिरिक्त आन पत्रिकाकेँ भाषान्तर लेल अनुमति देब सेहो एकटा बड़का काज भऽ गेल रहनि। से १९४५ सँ 'प्रणम्य देवता' छपलाक बाद जे शुरू भेलनि से एखन धरि छनि। 'खट्टर ककाक तरंग'क बाद तँ एहिमे जेना बाढ़ि आबि गेल। 'राष्ट्रभारती', 'धर्मयुग', 'सा० हिन्दुस्तान', 'कहानी', 'सादिका' 'नई कहानियाँ'—कोन-कोन पत्रिका नहि खट्टर ककाकेँ छपलकनि आ कोन-कोन भाषामे नहि ओ अनूदित भेलाह। एतऽ प्रो० झाक

साहित्य पर विचार करबाक स्थान नहि अछि, मुदा हुनक लोकप्रियताक ई एकटा आयाम सहजहिं ध्यान घिचि लैत अछि जे साहित्य कोना भाषाक देवालकेँ ढाहैत अपन विस्तार पाबि लैत अछि। से गुण प्रो० झाक लेखनक आदिएसँ रहलनि अछि। 'कन्यादान' आ मैथिलीभाषी सँ भिन्नो लोक पढ़लक, पढ़बाक लेल सिखलक। अपन भाषा मोलसँ बहुरा कऽ भाषाकेँ विस्तार दऽ ओकरा वृहत्तर परिप्रेक्ष्यमे मर्यादा देअयबाक काज जे प्रो० झाक साहित्य कयलकनि, से फेर आन कोनो ने। 'कन्यादान' जेना एकटा सामाजिक क्रान्ति अनलक, तहिना हिनक 'खट्टर ककाक तरंग' वैचारिक क्रांति उत्पन्न कयलक। कन्यादानेसँ जे पंडित वर्ग रुष्ट छलनि, से 'खट्टर ककाक तरंग'सँ क्रुद्ध भऽ गेलनि। बरहगोड़िया सम्मेलनमे जखन प्रो० झा 'खट्टर ककाक तरंग'क 'रामायण' पढ़ए लगलाह तँ पित्तेँ महावैयाकरण पं० दीनबन्धु झा उठि कऽ बहरा गेल छलाह। 'प्रणम्य देवता' जँ प्रो० झाकेँ 'हास्यरसाचार्य' बनौलकनि, तँ 'खट्टर ककाक तरंग' 'व्यंग सम्राट' बना देलकनि। 'लेखक' तँ हुनका कन्यादाने बना देलकनि, जिनका देखबाक उत्सुकता जनीजाति पर्यन्त केँ भऽ गेलनि।

पंडितवर्ग प्रो० झासँ हुनक रचनाक कारणेँ अप्रसन्न जे भेल होथुन, पंडित ओ नारी—प्रो० झाक लेखनक ई दू टा प्रमुख बिन्दु रहलनि अछि। हिनक समस्त साहित्यक ई दू टा ध्रुवीकरण कयल जा सकैत अछि। निरर्थक भऽ गेल प्राचीन परम्परा पर प्रहार आ नवता, नवोन्मेषताक स्वागत हिनक स्वरक ई दू छोर रहलनि अछि। मुदा तकर अर्थ ई नहि जे प्रो० झा आँखि मुनि कऽ नवताक पक्षधर होथु। हुनक व्यंग्यक केन्द्र समान रूपसँ पंडित ओ मेम दुनू भेल छथि। मौजे लाल झा आ चुल्हाइ झा जँ हुनक ध्यान पर पड़लथिन अछि तँ अंगरेजिया बाबू सेहो दृष्टिसँ नहि बाँचि सकलथिन अछि। प्रो० झाकेँ विद्रूप वा विरोधाभास जतऽ कतहु भेटलनि—से प्राचीनमे हो वा नवीनमे—हुनका व्यंग्यक मासाला भेटि गेलनि अछि। साहित्यमे हुनक दृष्टि कोनो पक्ष वा वादसँ बन्हायल नहि रहि उन्मुक्त रहलनि अछि। साहित्यकेँ ओ कोनो वादक घेरासँ उपर रखलनि अछि। हुनका साहित्यमे हुनक ई समन्वयवादी व्यापक दृष्टि सभतरि भेटत।

१९५७ इ०मे लेखक सम्मेलनमे भाग लेबऽ ई कलकत्ता गेल रहथि त ओहिठामक मैथिल समाज गिरीश पार्कमे हिनक अभिनन्दन कयने छलथिन। परन्तु ई देखलनि जे ओ सभा समान उद्देश्य रखितहु दू दलमे विभक्त छल—एकक नेता छलथिन मिथिलेन्दु जी (हरिश्चन्द्र झा) तथा दोसरक बाबू साहेब चौधरी। ई निर्णय कैलनि जे दुनू गोटाकेँ मिलाइये कऽ एहिठामसँ जायब। लगातार कइ-एक दिनक अहर्निश प्रयत्न कऽ ई दुगोलाकेँ दूर करवामे सफल भेलाह। मिथिला संघ और मैथिली संघके एक होयब हिनके सद्प्रयत्नक परिणाम छल। यैह सौमनस्य आ सौहार्दक आकांक्षा हिनक साहित्योमे प्रतिफलित भेल अछि।

एहि विशेषताक कारणेँ ई जतऽ कतहु गेलाह, हिनक स्वागत-अभिनन्दन भेल। भागलपुरक प्रो० प्रेमशंकर सिंह हिनका पर अपन शोधग्रन्थ लिखलनि। जीवित व्यक्ति पर लिखल मैथिलीक ई सर्वप्रथम शोध ग्रन्थ छल।

प्रो० झाक कुशल लेखक एक टा सुयोग्य संपादक सेहो अछि, तकर बड़ उत्कृष्ट उदाहरण १९४२ इ० मे पुस्तक भंडारक 'जयन्ती स्मारक ग्रंथ' अछि। आचार्य शिवपूजन सहाय तथा अच्युता-

नन्द दत्तक संग प्रो० हरिमोहन झा एकर सम्पादक रहथि। ई ग्रंथ अपना ढंगक एकसर अछि आ बिहार सम्बन्धी — विशेष क' मिथिला सम्बन्धी—कोनो ज्ञानक लेल बड़का संदर्भ ग्रंथ अछि। मैट्रिक कक्षाक लेल तैयार कयल गेल 'प्रवेशिका मैथिली साहित्य' जकर सम्पादन प्रो० झा श्री गंगापति सिंहक सँ कयल, हिनका सम्पादकीय क्षमताक दोसर नीक प्रमाण थीक। सम्पादक मण्डलमे तँ ई 'दार्शनिक त्रैमासिक' आदि कय टा पत्रिकाक रहलाह। बिहार ग्रंथ आकादमीसँ प्रकाशित 'दार्शनिक विवेचनाएँ' हिनका द्वारा सम्पादित भेल। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, ग्रंथ अकादमी तथा अन्य संस्था सभ द्वारा कतेक ग्रंथक सम्पादन, पुनरीक्षण आदि कयलनि, तकर एकटा बृहत सूची होयत। हिन्दी त्रैमासिक 'समीक्षा'मे कतेको हिन्दी पोथीक हिनक समीक्षा निकलल छल जे हिनक समीक्षक आ आलोचकक रूप ठाढ़ करैत अछि। काव्य गोष्ठीमे समय-समय पर हिन्दी, उर्दू, अँगरेजी, मैथिलीमे पढ़ल कविता सभक संग हिनक हिन्दी, अंग्रेजी, मैथिलीक विभिन्न पत्र-पत्रिकामे छपल लेख, समीक्षा आदिकेँ संगृहीत करबाक काज समान रूपसँ महत्त्वपूर्ण अछि।

ठहराव नहि

१९७१ इ०मे हिनक प्रसिद्ध उपन्यास 'कन्यादान' पर फिल्म बनल। अमरजी, फणीश्वर नाथ रेणु आ स्वयं प्रो० झाक सम्बद्ध रहितहुँ 'कन्यादान' नीक नहि बनल। फिल्मसँ लेखककेँ तहिना कोनो आर्थिक लाभ नहि भेलनि, जेना उपन्यास 'कन्यादान'सँ नहि भेल रहनि। मुदा एहि लाभालाभ-जयाजयसँ प्रो० हरिमोहन झा दूर अपन साहित्य-साधनामे लागल रहलाह। साहित्य सदा हुनक सर्वोपरि रहलनि। कहल जा सकैए जे आन कोनो दिस हुनक ध्याने ने रहलनि। तेँ आइ ५० वर्षसँ पटनामे रहितहुँ, नोकरी करितहुँ ओ कतहु एकटा अपन छोटे-छीन घर नहि बनबा सकलाह। आइयो ओ भिखना पहाड़ीक किरायाक ओहि पुरान मकानक कोठरीमे पलंग पर पड़ल छाती पर गेरुआ रखने कलम हाथमे लेने किछु ने किछु लिखिते रहैत छथि—आकाशवाणीक लेल वार्त्ता, आत्मकथाक अंश, कोनो स्मारिका वा पोथीक भूमिका, दू शब्द। पोथी सभक हिनका द्वारा लिखल भूमिका वा सम्मति जँ एकत्र कयल जाय, तँ इहो एकटा कम सार्थक काज नहि होयत।

मुदा से सभ काज हमरा लोकनिक अछि। सत्य पूछी तँ एखन धरि हमरा लोकनि प्रो० झाक कृतित्व आ व्यक्तित्वक सम्यक आ उचित मूल्याङ्कनो कहाँ कयलियनि अछि? हम सभ तँ एहि बात पर एखन गर्व अनुभव कऽ कऽ संतुष्ट भऽ जाइत छी जे एकटा एहन महान साहित्यिक मनीषीक संग हुनक युगमे जीबि रहल छी। वास्तवमे यैह बात हमरा सभ लेल कम सौभाग्यक नहि अछि।

पंडितक प्रो० झा ओना जतेक खिधांस करथुन, अपनो ओ पंडिते थिकाह। से पांडित्यक अर्थमे तँ थिकाहे, आ जेना संस्कृतक पंडित व्यवहारमे अपटु होइत छलाह—एते धरि जे अपनेसँ लालटेनो लेसल नहि होइनि—तहिना प्रो० झा व्यावहारिकतामे नितान्त अपटु छथि—रेडियोमे पटना एखन धरि ई अपनेसँ नहि लगा सकैत छथि। हिनक विनोद-प्रियताक तँ अनेक कथा प्रचलित अछिए— जाहिमे झाजी ओ पाजीक अन्तरकेँ हाथसँ नापि कऽ देखयबाक खिस्सा सभसँ बेसी प्रसिद्ध अछि—हिनक अव्यावहारिकताक सेहो कयटा किंवदन्ती प्रचलित छनि। लोक एते धरि खिस्सा बना देने छनि जे कहाँदन एक बेर सिनेमाक टिकट

लेबऽ लेल ई रेलवे स्टेशनक लाइनमे जा कऽ ठाढ़ भऽ गेल छलाह। दार्शनिक विद्वान तँ रहबे कयलाह अछि, स्वभाव ओ मानसिकतासँ दार्शनिक रोहो प्रसिद्ध छथि। एक बेर पटना कालेजमे नियुक्ति भऽ गेलाक बाद क्लास लेबऽ बी० एन० कालेज पहुँचि गेल रहथि !

प्रो० झाक कार्यकलापमे ठहराव एखन धरि नहि आयल छनि। एखनो 'परमार्थ-दर्शन' पर हुनक पोथी राष्ट्रभाषा परिषद्‌ पटनासँ छापि रहल छनि। आ मैथिली अकादमीसँ आत्मकथा लेखनीकेँ विश्राम ओ प्रायः कहियो नेदेताह। ओ आपादमस्तक आ आरम्भसँ अन्त धरि लेखक रहलाह अछि—लेखक जे रुकबाक नाम नहि लैत अछि, चलैत रहैत अछि, चलैत रहैत अछि······

संदर्भ-संकेत

ई आलेख निम्नांकित सामग्रीक आधार पर तैयार कयल गेल अछि :

१. पं० जनार्दन झा 'जनसीदन'क अपूर्ण आत्मकथाक पांडुलिपि
२. प्रो० हरिमोहन झाक अप्रकाशित 'जीवन यात्रा'क पांडुलिपि
३. जयन्ती स्मारक ग्रन्थ, पुस्तक भंडार
४. स्व० पं० जनार्दन झा 'जनसीदन' शीर्षक प्रो० हरिमोहन झाक लेख—'मिथिला भारती' वर्ष-१ अंक-१
५. प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा विभागक प्रो० हरिमोहन झाक अध्यक्षीय भाषण
६. डॉ० प्रेम शंकर सिंहक शोध-प्रबन्ध—सामाजिक वातावरणक विशिष्ट संदर्भमे श्री हरिमोहन झाक मैथिली कृतिक अनुशीलन।



प्रो० हरिमोहन झा अपन धर्मपत्नी श्रीमती सुभद्रा झाक संग

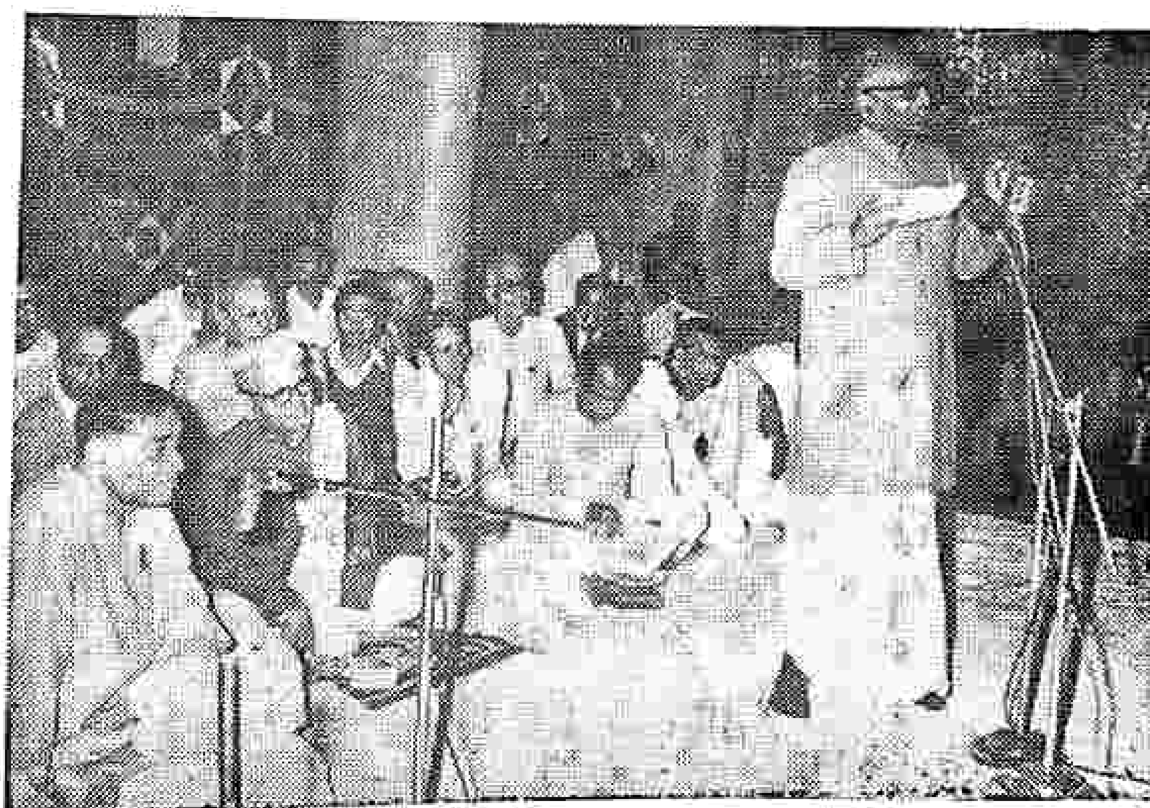


युग-चेतनाक दू आलोकस्तम्भ

प्रो० हरिमोहन झा तथा श्री वैद्यनाथ मिश्र 'यात्री'



मैथिल गोष्ठी द्वारा १८ अप्रैल १९८२ के आयोजित अभिनन्दन समारोहमे (वाम सँ)
श्री श्रीकान्त ठाकुर 'विद्यालंकार', श्री देवेन्द्र झा ओ प्रो० हरिमोहन झा



कवि सम्मेलन मे कविता पढ़ैत प्रो० हरिमोहन झा : मंच पर राष्ट्रकवि दिनकर,
प्रो० रमानाथ झा, व्यासजी, गोपेश, वचनदेव कुमार आदि

काव्यार्चन

सारस्वत-पुष्पाञ्जलिः

– डा० जयमन्त मिश्र

(१)

भद्रं श्रीहरिमोहन !
मोहन ! मिथिला-निवासिनां मनसाम् ।
शोभनमस्ति शुभं ते
रचनं वचनं प्रवचनं च ॥

(२)

गहने दर्शनशास्त्रे
मतिरतिविमला तवास्ति, जानीमः ।
दर्शनकान्तारेऽतः
संचरति भवान् केसरीव ॥

(३)

वैशिष्ट्यं काणादे
समधिगतं गौतमीये च ।
संसूचयन्ति नितरां
दर्शनशास्त्रीयकृतयस्ते ॥

(४)

भवतां कौशलमधिकं
प्राच्यापेऽवेक्षितं छात्रैः ।
देशे चाथ विदेशे
सर्वत्रैवं विगीयते विज्ञैः ॥

(५)

मिथिला-जन-जागरणे
भवतां यत्नं न को वेत्ति ?
साहित्यमाध्यमेन
कान्तासम्मिततयोपदेशेन ॥

(६)

कृत्वा 'कन्यादानं'
विहितो भवता 'द्विरागमो' मनसा ।
पश्चान्मैथिलसुजनैः
कृतमनुसरणं भवन्निदेशस्य ॥

(७)

सामाजिकीं कुरीतिं
दृष्ट्वा चोद्धारकारिणा भवता ।
मनसा प्रणम्यदेवान्
रचिता 'प्रणम्यदेवता' सरला ॥

(८)

विविधास्वादसमन्वित-
रस्यां हृद्यां च ते 'चर्चरिकाम्' ।
आस्वाद्य 'रङ्गशाला'-
मागत्य मनोऽनुरंजितं लोकैः ॥

(९)

'खट्टरककातरङ्गान्'
व्यङ्ग्यान् विविधान् जनः समनुभूय ।
मोदाम्भोधितरङ्गे
मग्नो नूनं हि जायते नितराम् ॥

(१०)

मोहन ! तव रचनाया-
लोकप्रियतां विलोक्य सर्वत्र ।
अनुवादो विविधासु
भाषासु कृतः सुधीवर्यैः ।

(११)

हरिमोहन-गुण-गणनां
कर्तुं शक्तो न मादृशो लोकः ।
श्रद्धाप्रसूनरचितं
काव्यांजलिमिह समर्पये भक्त्या ।

प्रशस्तयः

पं० मदनमोहन झा

(१)

मान्यो वदान्यो विदुषां विधेयः
शिष्योपशिष्यार्चित - पाद - पद्मः ।
नानाविध - ग्रन्थ - विधानचुञ्चुः
सम्प्राप्तकामोऽस्तु भवान् विरक्तः ॥

(२)

सीता संभव-पावनेऽखिलजगद्-विख्यात - विद्वज्जने
देशे विस्तृतसीम्नि वाजितपुरग्रामेऽभिरामे वरे ।
विप्रादाशुकवेर्जनार्दन इति ख्याताद् पितुःपण्डिता-
ल्लेभे 'श्रीहरिमोहनो' ननु जनुर्लग्ने शुभे बालकः ॥

(३)

प्रज्ञां तस्य विलोक्य विस्मयकरीं लोकातिगां शैशवे
माता - पितृ - कुटुम्बिनो मुमुदिरे देवस्तवं चक्रिरे ।
विद्याबीजमतुल्यमात्मनिहितं कर्तुं महान्तं तरूम्
दैवज्ञोक्तदिने शुचिः शिशुरसौ शिक्षालये प्राविशत् ॥

(४)

बालोऽसौ क्रमशो युवा समभवद् विद्यावदाता विभा
सूर्यस्येव दिशासु तस्य न चिराद् विस्तारमासादयत्
सर्वे तत्सहपाठिनो न सहसा शेकुस्तदीयां प्रभाम्
सोढुं, प्राप्त-तमो- निवेश-विशदानन्दा उलूका इव ॥

(५)

प्राच्य - प्रतीच्योभय - रीति - सिद्धां
शिक्षां समाप्याशु गवेषणायाम् ।
लग्नो विशेष - प्रतिपत्ति - हेतो
रुत्तमोपाधिमवाप्तवान् सः ॥

(६)

कालक्रमेणाथ स जीविकार्थी
कुत्रापि कंचित्समयं निनाय ।
तत प्रसिद्धो विदुषां समाजे
लेभे पदं स्वीयगुणानुरूपम् ॥

(७)

पद्य-प्रसून-मालेयं हरिमोहन शर्मणः ।
समर्प्यते मया श्रद्धासमेतं पाणिपद्मयो ॥

लोकप्रियलेखको जयति

—श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

(१)

दर्शन-बोध-विदग्धो
मर्मज्ञः काव्यशास्त्रस्य ।
जयति श्रीहरिमोहन
आत्मारामः प्रसन्नास्यः ॥

(२)

हास्यव्यंग्य-युताभी
रचनाभिः काव्य संवृद्धिम् ।
कलयल्लँब्धप्रतिष्ठो
लोकप्रियलेखको जयति ॥

(३)

विविधविधासु ग्रन्थान्
विरचितवान् मातृभाषायाम् ।
सोऽयं भवेच्छतायुः
सुहृदानन्दो हसन्मूर्तिः ॥

जयति

- श्री गोविन्द झा

जयति हरिमोहनः
कृत - हृदय-दोहनः

दृढ़-कुमति भञ्जन
नव युग-हगञ्जनः

सकल-जन रञ्जनः
कृत-कुपथ गञ्जनः

मिहिर इव भासते
दिशि दिशि चकासते

अमृत - रस-सागरः
रसिक-वर-नागरः

विमल-मति-पण्डितः
विविध-गुण-मण्डितः

स्मिति-धवल-पर्वतः
ननु लसति सर्वतः

सकल-जन मोहन
जयति हरिमोहनः

श्रीहरिमोहनबाबुक कर-कुवलयमे उपहृत होइ सादर

—श्री काशीकान्त मिश्र 'मधुप'

(१)

श्रीसम्पन्न, विपन्न जनक शोषणमे रत रहि,
ह्रितबुद्धि, जयबार योग सोतिक पद्धति नहि।
रिक्त कोष करइत पाँजिक पाछाँ दुख सहि सहि,
मोह न सन्तानक, मनमाना कुलगौरव लहि॥
हँसि हँसि देखबथि नृत्य नित, रचि अनमेल विवाह।
नष्ट आर्य परिणय-प्रथा हा! तिरभुक्ति तबाह॥

(२)

वाक्य-विशारद विज्ञक पत्नी अक्षरहीना,
बुधहुँक सठल विवेक अपन संस्कृति भेलि दीना।
कवि कोविदक कते बजितौहुँ सुधाकर-वीणा,
कलुषक भेल न अन्त, सभ्यता दिन दिन क्षीणा॥
रखने परभाषक रुचि, शिक्षितवृन्द समेत।
कुल पूजित भाषाक पद तोजथि ज्ञान निकेत॥

(३)

वक्ष-विदारक "सामाजिक" दुर्गुणे व्यथित भय,
कलित लेखनी हास्यरसक जे सार्वभौम लय।
यथोभूति, कल्पना कल्पलतिका केर आश्रय,
मेधास्फूर्तिक मूर्ति सौम्य स्रष्टा अति निर्भय॥
उठबक हेतु समाजकेँ कय छूट कन्यादान।
पथ प्रशस्त कैलनि प्रथम, दैत मंजु मुसुकान॥

(४)

हृदयहारि जे कृति बहुतो भाषाक हरल मन,
तकर बाद किछु दीन पठौलहुँ कय ह्रिदागमन ।
हो उत्थान न तदपि, जानि चट होइछहुँ उन्मन ,
ईश्वरीय-प्रतिभासँ मण्डित पण्डितवर धन ।।
साधक प्रत्युत्पन्नमति, मति प्रगतिक मधु पीबि ।
दलित दीन-दल-दुख द्रवित, तर्कक सुजनी सीबि ।।

(५)

रस सँ ओतप्रोत खट्टरकाकाक तरङ्गो ,
आ' प्रणम्य देवता आदि लिखि चित्रित व्यङ्गो ।
निजभाषा गद्यक पढ़ैक रुचि रुचिर जगौलें,
नव-युग-निर्माणक हित मोहन शंख बजौलें ।।
से चिरजीवी स्वस्थ रहि, पुनि हृत्तन्त्री-तार ।
करथु सभक झंकृत मुदित, सुनि 'मधुप' क गुंजार ।।

सुमनोऽञ्जलि

श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'

(१)

जखन मातृभाषा-काननमे छल शिशिरक अभिशाप ।
कतहु कोनमे सिसकि रहल छल कोकिल-कला-कलाप ॥
गद्य-पद्य-प्रहसन-कथाक अंकुर छल कतहु प्रसुप्त ।
वृद्धि पड़इत छल मिथिलाभाषा-लता न कतहु विलुप्त ॥

(२)

मोद मिहिर मिथिलाक शिथिल छल जकर प्रतीक्षा-व्यग्र ।
करवन तिमिर हरि, मोह न आबय देथि प्रकाश उदग्र ॥
चंदा जीवन हर्ष कतहु लालहुक क्षीण स्वर देखि ।
नव चेतना जगाबय आबओ ज्योति पुरुष नवरेखि ॥

(३)

सीतारामक नाम मात्र जपइत छल लोक ललाम ।
कोनहु नवल प्रतिभा-भास्वर हो उदित एतय अभिराम ॥
सहसा तरुण अरुण साहित्य क्षितिज पर उदित नवीन ।
लोचन-गोचर भेल सहज जत चिन्ता-नखत विलीन ॥

(४)

जनता-जनार्दनक जन्यहि मैथिली-जननिकेर कोर ।
कुमर वाजिबे वाजितपुर जितले, जनि जनमें भोर ॥
आयल अलस समाज जगाबय नवल वसंत-प्रभात ।
कुसुमित साहित्यिक मिथिलांचल पुलकित, सुरभित वात ॥

(५)

कथा प्रसंगहि 'कन्यादान' सुलभ, न 'द्विरागम' दूर ।
व्यंग्य-रंग ओ हास्य-तरंगक नव्य भव्य रस पूर ।।
घर-घर 'खट्टरकका' सुनाबथि भंग-तरंगित बोल ।
'ढाला' प्याला चाहक चाहथि, 'पाँच पत्र' अनमोल ।।

(६)

स्वादि 'चर्चरी' घूमथि 'रंगशाला' कयो रसिक उदार ।
सुनथि 'भोलबाबा'क गप्प कयो अनुभव विभव विचार ।।
'एकादशी' करथि श्रद्धें कयो, पुनि 'देवता प्रणम्य' ।
'आचार्य'क पद चिह्न चलथि साहित्यिक रचना रम्य ।।

(७)

'कमला पद्मा' तुलना करइत रेलहु ठेलम ठेल ।
'विकट पाहुन'हु निकट 'टोटमा' करइछ कयो बहलेल ।।
जे 'बौआक दाम' गनबथि से अपनहि खसथि उलंग ।
कते गनाबिअ, अगनित चलइछ जनिक कथा रस व्यंग ।।

(८)

स्मरण अबैछ 'शरण' भंडारक 'शिव' 'महारथी' संग ।
'बेनीपुरी' 'मनोरंजन' 'दिनकर' कत सुहृद प्रसंग ।।
'दत्त-बन्धु' केर स्मृति रस पूरित कथा-वस्तु विस्तार ।
रंजित 'गंगानन्द 'कुमर' केर संग प्रसंग उदार ।।

(९)

'कुमर' पुरातन 'दास' नवीन समाजी मिथिला अंग ।
चलित लेखनी वलित व्यंग्य कत अहँक बन्धु ! अनुषंग ।।
दर्शन - कानन - पंचानन हे ! आलोचक-मूर्धन्य ।
काव्य-कलाक कलाधर हे ! नव व्यंग्यरंग-रस धन्य ।।

(१०)

सत्ते कतो खट-मधुर, जीवन स्वादल अनुभव-शील ।
हंसितहुँ गतितहु वेदनाक स्वर साधल अछि तिल तिल ॥
जटिल जीवनक कतो समस्या सोझराओल अह धीर !
अंतिम वयसहु कतो सहल अछि योग-वियोगक तीर ॥

(११)

स्वयं दर्शनक तत्व बुझाबिअ हे हरि ! गीतोनाद ।
विश्व वेदना हरिअ अहाँ पुनि 'संस्मरण' निबंधि ॥
'राम कृष्ण मन रमण शैल' संगत मोहन पारंवार ।
बाँटि रहल छथि रम्य रुचिर कत साहित्यक उपहार ॥

(१२)

विषपायी पीयूषरश्मिधर गंगा पद शिर कल्प ॥
मोहन अहाँ मोह नहि, हरि हर एके पदक विकल्प ॥
दर्शन दृश्य इथिकहु एके, स्तोता स्तुत्यहु एक ।
आत्मा वा आत्मीय दुहू थिक 'स्व" शब्दहिकेर टेक ॥

(१३)

अहँक पूजनक हित कत लोढ़ब शब्द-सुमन, नहि फूर ।
सदा 'सुमन' मनमे पूजित छी, रहितहुँ कतबहु दूर ॥
स्मृतिक भरल भंडार, द्वार कत खोलब किछु नहि फूर ।
अहँक सौमनस्यँ 'सुमन'क "स्वदेश"–पूजन हो पूर ॥

जय प्रतिभा-पांडित्य-पयोनिधि

—डा० कांचीनाथ झा 'किरण'

कर्मेन्द्रिक मूल, पेशी भेल दुर्बल
सन्धिक बन्धन ढील, कण्डरा फसरल
प्राण-आयुकेर स्रोत घटल पाचक-रस
नित दिन चोखे होइत जीह कैं
राखी कहुना संयमवश

रोगी आँखि, बुद्धि पड़ैत अछि दिन भरि
जनि लागल रहय कुहेस सदच्छन सब तरि
स्वस्थ पक्व मस्तिष्क दैछ यन्त्रणा
हेतु जे. रहि जाइछ अचित्रित एकर भावना
चिन्तन नव अनुभूति नवीन कल्पना।

दृष्टि-कर्म शक्ति सँ हीन मनुष्यक राखब जीवन
थीक, ज्ञान विवेकहीन जड़प्रकृतिक
परमान विलच्छन।
अहीं लोकनिकेर स्नेह भय बलतार
एतबो लिखलहुँ कहुना।

कृपया मानव एकरे विस्मयक रचना
परम प्रतिष्ठित पदें, प्रतिभें पुनि अनुपम
विद्यें वृद्ध महान, ज्ञानें वाचस्पति
रहितहुँ श्री हरिमोहन बाबू

वयसें छथि किछु छोट,
हमरासँ माङि लेने छथि आशीर्वाद-वचन
तें करी सस्नेह कामना,
अहाँ लोकनि हुनकर दर्शन नित्य पबैत
हुनक मुखनिर्झर सँ परिहास रुचिर
वाणी-विलास सुनैत

युग युग धरि करैत रहू अभिनन्दन
जय प्रतिभा-पाण्डित्य पयोनिधि
मैथिलीक श्री हरिमोहन !

सद्‌भावना-सुमनांजलि

आरसी प्रसाद सिंह

साहित्यक उद्यान ज्योतिरीश्वर जे प्रथम लगाओल,
मैथिल-कोकिल पंचम स्वरमे गाबि वसन्त जगाओल;
सुकवि चन्द्र कविताक चन्द्रिका चारु अपन बरिसाओल,
कुंज-कुंजमे हे हरिमोहन, अपनहिं फूल फुलाओल।

'पात्राधारं घृतं ? घृता-धारं की पात्रम् सदिखन
जतऽ करैं अछि कोलाहल-मय वातावरण विवेचन;
ताहि ठाम आचार्यप्रवर हे, दर्शन-शास्त्र-शिरोमणि,
पाओल कतऽ सजीव सरसता भारतीक वीणा-ध्वनि ?

कतेक कणाद, कपिल, हेगल वा कान्तक चिन्तन-चुस्की
चाहक प्यालीमे लऽ लऽ कऽ देने हयबैं मुस्की।
तर्कक कऽरू अर्कमे दऽ मधुर चाशनी हास्यक,
व्यंग्यक रंग गुलाबी, खुशबू भाषा-भूषित लास्यक,
अपने जे पाठक प्रबुद्धकें निरवधि पान कराओल;
कविमनीषी, से समाज युग संजीवन भरि पाओल।

की नहि स्वतः सिद्ध अछि, काठोमे जे छेद करैं अछि,
वैह शिलीमुख कोमल कुसुम-शिरीषो पर विचरैं अछि।

परम्परागत रूढ़ि, अन्धविश्वास, कुरीतिक माथे
भेल कठोर प्रहार एहन अपनेक लेखनी-हाथे,
जीर्ण समाजक रोआं रोआं काँपि उठल आशंके।
भृकुटि कतेक वंक भऽ आयल कतेक पड़ायल लंके।

जन समाजक पुरोला आगू बढ़ल, प्रगति दिस चेलो।
पाबि दिशा-संकेत गेलै, तँ भेलै बालकक हेलो।
पुन-पुन खौंझल, खलित, पराजित नारी पिंजड़ाक मयना,
पुरुषी चाइ कलोको खातोल झाड़ि मनोबल सुधना।

खट्टर ककाक तरंग ओना मे ककर उमंग नै कयलक ?
के प्रणम्य-देवता नै रंगशालामे रंग देखयलक ?

की वाचस्पति, उदयन वा गंगेशक संग विराजी
मोन आँके लगल छोड़ि कऽ की साहित्य समाजी ?
की मिथिला-विभूति, मिथिला गौरव अभिनन्दन पावू।
हमरा लेʼ चिर रहत बन्धुवर प्रिय हरिमोहन बाबू।



अभिनन्दन-सुमन

श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

(१)

जनिक जनक जनसीदन बुधवर साहित्यक आगार
गद्य-पद्य बहु भाषामे रचि अरजल सुयश अपार
तेनहि सँ श्री हरिमोहन अनुसरि निज पितु पद धन्य
प्रत्युत्पन्न-मतित्वक परिचय देल अनेक अनन्य

(२)

तीक्ष्ण बुद्धि मेधावी छात्र, यशस्वी शिक्षक विज्ञ
अंग्रेजी, संस्कृत, दर्शन-शास्त्र अपूर्व मर्मज्ञ
काव्य रसास्वादन पटु, सहृदय मृदु नवनीत समान
विविध विधामे मैथिलीक भंडार भरल मतिमान

(३)

हास्य व्यंग्य बौद्धिक क्रीड़ायुत अद्भुत रचना शिल्प
रोचक भेल सभहि किछु—कविता, उपन्यास वा गल्प
आकर्षणवश क्रमहि मैथिलिक घर-घर भेल प्रसार
संगहि सामाजिक कुरीति पर समुचित भेल प्रहार

(४)

बहुविध शास्त्र विनोद सतत साहित्य साधना लीन
महामान्य, वयसँ जर्जर तन, चिन्तन किन्तु नवीन
पाबि प्रेरणा नवजागरणक प्रमुदित युवक समाज
राखत ज्योति प्रज्वलित संतत करइत नित शुभ काज

(५)

वरद्पुत्र वाणीक, मातृ-भाषाक बढ़ाओल मान
शत सहस्र शिष्योपशिष्य करइत रहता गुणगान
शान्त सरल चित मृदु हँसैत, सौजन्य स्नेह आगार
अति विनम्र अर्पित अभिनन्दन सुमन करिअ स्वीकार

कुसुमाञ्जलि

श्री बुद्धिधारी सिंह 'रत्नाकर'

वाग्मतीक तट साधक अनुपम भूमि सुशोभित विद्यागार
मिथिला अपने आँगन देखल तनय तुलक 'पुस्तक भण्डार'

कल्पतरुक ई बीज वपन छल पारिजात पुष्पित भए गेल
फलसँ आनत परिमल पोषित मानस कानन फल कत देल

दर्शनसँ दर्शन कए प्रमुदित दर्शन देखल कवि प्रतिबिम्ब
चान चकासित काव्य गगनमे नित इजोत ज्ञानक ई बिम्ब

'वाजित' अपनहि गङ्गा तट पर अमृत भरल सुरसरिता पर
रससँ मिलल सरस पदगायन गायक वीणा पसरल दूर

विश्वक कोश बनल अछि-सागर रत्न असंख्य जत रंग-विरंग
सबतरि भासित चकचक करइत काव्य कामिनी सज्जित अंग

'अस्ति-नास्ति' पथ मिलनस्थलपर नव पुरान चित्रक संयोग
सीता वसुधा 'कन्या परिणय' 'द्विरागमन' देखल ई योग

मिलल नीरमे देखी स्वादी 'खट्टर कका तरंग'
मुदितमना नहि व्यंग्य विमुञ्चित कत 'प्रणम्यनरदेव' उमंग

विविध वर्ण रंजित मधुसिंचित प्रकृतिक आँगन परसल हाला
चौबटिआ पर अभिनय देखल सजल सजाओल 'रंगक शाला'

'चरचरी'क स्वादक हो अनुभव शाकाहारी-आमिष युक्त
भोजन मानस जीभक चटगर पाचक पटुजत मोद-प्रयुक्त

धराधामसँ मिलल गगन अछि अद्भुत शक्तिक क्रियाकलाप
कल्पनाक भावुक रथ विचरण तथ्यपूर्ण जत सुनल अलाप

कल्पवृक्ष पर पक्षी बैसल उड़ल मनोमय देश-विदेश
विश्व भावना निधि कत संचित भारत खोता भरलक देश

ज्ञान अखिल विज्ञान वासना प्रकृतिक आँगन खेङि पसारि
वस्तुस्थितिसँ भिन्न न जानल पढ़इत जीवन देलक तारि

नरनारी चित्रणमे माया मायीरूपक वर्णन पाबि
अणुसँ ब्रह्म पदक हो भासित कहइछ ककरो वीणा गाबि

विद्युत् गति अछि अबइत जाइत थिर आलम्बन 'बिजली' एक
बूझू प्रतीक दृष्टान्त प्रकाशित उपमा गहना पहिरि अनेक

थिक समाजमंत्रक ई नाटक नटनटीक पुरातन वेश
मिलल ततए अछि मन आँगनमे नूतन रूपक मृदु आवेश

पहिरि कंचुकी माया नाचथि कालकलानियतिक धए राग
विद्याडोरी हाथहि राखल हास्य व्यंग्य बद्धिक अनुराग

उज्जरलाल परेखिअ हरिअर कृतिकल्पित तथ्यक संचार
अणु-अणु कणकण भासित होइछ मूर्तिमयी कविता आधार

चीनी मिलल कुनाइन नहि ई आयुर्वेदिक मोदक जानु
रुचिकर शुचिकर निद्रा कर ई दृष्टिक हेतुक सुरमा मानु

बूढ़क वचन सदा थिक मानक कहइछ लोक कथा ई नीक
विधाविधा आदर्शक हेतुक रसपरिपाक प्रकाशक थीक

डूबल रहब सदा यदि सरिसे पाएब तखनहि मोदक सार
अन्तर प्रमुदित हँसइत हँसइत पाएब जीवन सुख आधार

"हरि" ज्ञानक दाता छथि जानी "मोहन" मोहित कएलन्हि भावि
जननी जनकक भक्तिक हेतुक जनकक गरिमा राखल आबि

उदयन सरसँ कमलदल
आनि करैं छी भावुक अर्पित

'कुसुमाञ्जलि प्रतिभा पद पूजन
बुधवर कर मे करत समर्पित

प्रो० श्रीहरिमोहनझाक कर-कमलमे सादर

श्री चन्द्र नाथ मिश्र 'अमर'

प्रो० पद नहि लागल छल तहिए मचा देल से धूम ।
श्रीहत नारी-शिक्षा-गृह सँ दूर भेल सब धूम ॥

हकमि रहल छल देश जकड़ने छलै अन्ध विश्वास ।
रिष्टिक मुष्ट बनाय कलमकेँ कयलहुँ तकर विनाश ॥

मोहि लेल कलम-जादू सँ सकल समाजक चित्त ।
हसला जे प्रतिद्वन्द्वी तनिका हँसितहि कयलहुँ चित्त ॥

नगपति सन उन्नत व्यक्तित्वक के कय सकत बखान ।
झाड़ि देल धूरा सब पर सँ अछि जत शास्त्र-पुराण ॥

कहलहुँ जे खट्टर काकाकेँ माध्यम अपन बनाय ।
कयल रसास्वादन सबहिक मिलि अज्ञ विज्ञ समुदाय ॥

रचल रंगशाला मनमोहक, एकादशी कराओल ।
कलकल करइत हास्य रसक धारा सर्वत्र बहाओल ॥

नाथि दर्शन-सागरकेँ कयलहुँ यशश्चन्द्र केँ बाहर ।
लक्षित नहि होइत छथि दोसर अपने सन नर नाहर ॥

नेजन सकल जुटाय चर्चरी परसि देल सर्वत्र ।
सावधान कयलहुँ समाजकेँ लिखि-लिखि पाँचो पत्र ॥

दर्शन-कानन केहरि ! साहित्यक धारा मे आबि ।
रखलहुँ माइक लाज मैथिली धन्य भेलि छथि पाबि ॥

अभिनन्दन की करब ? तखन कैलहुँ अछि केवल लौ ।
'अमर' यशस्विन् ! आबि बढ़ा देलहुँ समाजकेर तोल ॥

[संकल्पलोक, दरभंगा सँ साभार]

गीत

श्री मार्कण्डेय प्रवासी

शाश्वत साहित्य-देवताक चरणमे प्रणाम ।
हरिमोहन झा जनिक गौरवमय ललित नाम ॥

शैली-सम्राट, शिल्पकार, कवि, कथाकार ।
अभिनव जयदेव कविक अनुपम गद्यावतार ॥

हास्य रस-निर्झर ! विद्वान प्रवर ! कलमधर !
लेखकीय साधनाक उच्च शिखर हे, प्रणाम !!

आधुनिक मैथिली नभक सारस्वत दिनकर ।
अक्षर चेतना पुरुष ! शब्द ब्रह्म अटल, अजर ॥

नवतर गौतम, कणाद, कपिल नव्यतम विदेह ।
दार्शनिक परम्पराक परम दार्शनिक महान् ॥

लेखन वैविध्य-धाम ! युगस्रष्टा महाप्राण !
मंत्रक ! कारिकाकार ! हे सदेह साम गान !!

साहित्यिक क्रान्ति-देव ! सामाजिक शांति-देव !
अपना ढंगक एखनहुँ एकमेव हे, प्रणाम !!

अभिनन्दन

डा० सोमनाथ झा

(१)

जकर ज्योति पबि छल उगलल सुधाँ रत्नाकर
संस्कृत रसिक परिचायि झलकल चन्द्रप्रभा तर
पुनि सुनि मुरली टेर मोद रत जनक सकल नर
जीवन तार चढ़ल जनसीदन-वीन-स्वर सुरवर
सुनितहिं मधु झंकार से
विकसित हरिमोहन कमल
गमकल जकर सुवास सँ
मैथिलीक उपवन अमल

(२)

विद्यापति-गीतक जनप्रियता गद्य-रूप गहि
पुनः स्फुरित भ' उठल अहीँ मे युग नवीन लहि
रहथि मैथिली-बुच्चीदाइ घोघ तर मूनलि
अहिँक कृपेँ छथि आइ देश भरि सबतरि घूमलि
'चुप' बुच्ची नहि आब, ई
चटपट अनके चुप करथि
सी० सी० मिश्रक थाप सँ
स्वयं थाप आनाँ धरथि

(३)

मिथिला-खण्डक एहि रंगशाला केँ अपने
रंग-विरंगक चित्र-चरित्र बना छी छपने
एक-एक टा पात्र जीवनक बाट घाट मे
लोट पोट क' 'चोट' दैत अछि बात बात मे
तीत अर्क मधु मे मिला
रचल अहाँ औखध नवल
जे अचूक, पढ़ितहिँ तुरत
नाशय जड़ता-रोग भल

(४)

उद्‌भट, विकट, अदम्य प्रणम्य देवता थापित
जन जन मन मन्दिर मे सगरे लगाले व्यापित
भंग-तरंग-बहैत गप्प खट्टर ककाक सुनि
बड़ बड़ नैयायिकक भग हो तर्क बुद्धि पुनि
चाखि चर्चरी चहटगर
ककर-ककर नहि चित मुदित?
सुनितो बारथि हाथ जे
खा खा आब अघाथि नित

(५)

हास्य-व्यंग्य-सम्राट् ! सार्वकालिक साहित्यिक !
आइ मैथिली जतऽ ऐल अछि, श्रेय अहिँक थिक
विद्वद्वर ! दार्शनिक प्रवर ! विश्रुत नैयायिक !
जागि उठल मिथिला अहाँक सुनि शंख जागृतिक
भाव भरल मन, रिक्त कर
करू कोन विधि अर्चना ?
अहँक चरण पर माथ निज
टेकि करी अभ्यर्थना

सुतलोकेँ देलनि जगा

श्री रवीन्द्र नाथ ठाकुर

चीन्हल थिका ई सबहक मुदा
हम, फेरोसँ दै' छी चिन्हा
कलियुगमे नाम हरि-मोहन धयल
मुदा, आखिरमे जोड़ि लेल झा।

अपने त रहला अटना-पटना
गाम-गाम मिथिलामे भेल दुर्घटना
पाहुनकेर नामपर 'भीमेन्द्र' सन
'बिकट पाहुन'केँ देलनि पठा
मानल थिका ई, जानल थिका
हम फेरोसँ दै' छी जना
लेखक थिकाहे, कवियो थिकाह
कवि काठीकेँ देलन्हि भगा। कलियुगम ......

निकहाकेर नाम पर नितरायब से नीक नै
'भदेसक नमूना' देखायब से ठीक नै
'बीमा ऐजेन्ट' संग अंगरेजिया बाबू
चुनि चुनिक देलन्हि देखा
मन शीतल हिनक, रस भीजल सतत
हम फेरो सँ दै छी भिजा,
रंग-रंग हास्य-व्यंग्य साधक थिका
ई त कनितोकेँ दै छथि हंसा

सी०सी० मिश्रा चिन्हले बोतल मिसर चिन्हले
बच्ची दैया चिन्हले, खट्टर काका चिन्हले
घटकैतीकेर अ-आ सँ मतलब ने हिनका,
बरियाती चलै तोला फिदा
दर्शनकेर पण्डित, भाषाकेर सेवक
हम बेर-बेर दै'छी बुझा,
मिथिलाकेर वर्त्तमान सूतल छलै
ई त सुतलो केँ देलनि जगा।

नोर पीयल हँसीक गीत

श्री मन्त्रेश्वर झा

काँट मे दिन बितायब कठिन छै मगर
फूल मे की सुरूम छै फुलायल रहब
कामना वासना मे कठिन छै डगर
कामना बिनु रहब की जुरायल रहब ?

रूसिकें छोड़ि देलौं अहाँ ओ नगर
की उघारल पघारल विदा कें पहर !
नोर पीयल हँसी सन अमृत कोन हो
से हँसी लग टिकत कोन कंठक जहर ?

आइना जे टटल आइना की कहत
जे गुमाने रहत से बनल की बनत
चन्द्रमो मे कलंके देखाइछ जखन
सूर्य सन तेज कें की आंगेजब सहज ?

दोसतो मे भरल जखन संदेह हो
दुश्मनी कें सुगंधित कोना कें करब
माथ टेकब परम लग सहज नहिं जखन
भूत अप्पन अहम के हँटब की सहज ?

की उदधि केर उदर मे समायल रहब
की बितायब बनइतो कछेरक लहर ?

अक्षय गान

श्रीमती दीपकालिका वर्मा

सृष्टिक अन्तर मे बाजि रहल
अहाँक अक्षय गौरव-गान
कुलिश युगक मन्दिर मे
अहाँ छी मंगल मूर्ति महान्
कामनाक लहरि पर
आइ अहाँ विहँसि रहल छी
पारिजात सौरभ सँ अनुरंजित
मानस पाटल पर
सिहरि रहल छी !
अमिय देवता !
आइ नमित भऽ अर्चना करैत छी
नीलिमा मे आरतीक
दीपिका झिलमिलाय रहल
यश अहाँक आकाशगंगा बनि
विहँसि रहल ।
अहाँक त्याग
अहाँक लेखनी
चहुँदिसि बनि लालिमा
नवयुग केँ उद्बोधैत अछि ।
स्वर्ण-तारक चन्द्र हीरक
व्यर्थ अहाँक स्नेह सम्मुख
युगक इतिहास मे
सर्वदा नव अध्याय जोड़बा लेल उन्मुख ।
हम अश्रुपूरित नयन सँ
उतारैं छी आरती अहाँक
श्रद्धाक झिलमिल माला
अर्पित चरण पर अहाँक !

फूकल अभिनव प्रान

श्री फजलुर रहमान हाशमी

(१)

जनसीदन सुत हरिमोहन
बाजितपुर केर शान
मिथिला मैथिली दूनू मे
फूकल अभिनव प्राण

(२)

कन्यादान हो वा द्विरागमन
प्रणम्य देवता वा रंगशाला
चर्चरी, एकादशी हो वा आने
सत्त सब अछि आला ।

(३)

निर्मत्सर, स्मितमय भाषा
स्नेहपूर्ण व्यवहार
अन्तस्तल गंगासन पावन
बाजी निर्मल धार

(४)

दार्शनिक, साहित्य-उपासक
समाजक ज्योति-स्तम्भ
खट्टरकाका केर माध्यम सँ
ककर ने चुरलनि दम्भ ?

व्यक्ति-चित्र

शुभकामना

श्री श्रीकान्त ठाकुर विद्यालंकार

हरिमोहन बाबूसँ प्रथम परिचय हमरा हुनक पुस्तकक माध्यमसँ भेल। 'कन्यादान' प्रकाशित भ' चुकल छल। सम्पूर्ण मिथिलामे एहि पोथीक चर्चा होमय लागल। एकटा सामान्य पाठकक रूपमे हमहुँ एहि उपन्यासकेँ पढ़लहुँ। स्थान-स्थान पर हास्य अनबाक प्रयास ओ कतहु-कतहु चरित्रक अतिरंजित रूपमे वर्णन अखरल छल अवश्य, मुदा सम्पूर्णतामे उपन्यासक प्रभाव चमत्कारी छल। सौंसे मिथिलामे लोक ताकि-ताकि क' एहि उपन्यासकेँ पढ़य लागल। बुच्ची दाइ आ सी० सी० मिश्र उपन्यासक पात्र नहि रहलाह, दैनन्दिन जीवनक लोक बनि गेलाह। ई एकटा एहन उपन्यास छल जे दलानो पर पढ़ल जाय आ अङनोमे; पण्डितो पढ़थि आ अक्षरक ज्ञान राखयवला साधारणो लोक। उपन्यासकार हरिमोहन बाबूक एहि रूपसँ हम पटना अयबासँ पूर्वहिसँ परिचित छलहुँ।

१९४७ ई०मे हम 'प्रदीप'क तथा '४८मे 'आर्यावर्त्त'क सम्पादक भेलहुँ। 'आर्यावर्त्त'मे हरिमोहन बाबूक अनुज इन्द्रमोहन बाबू उपसम्पादक छलथिन। ओ प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति छलाह। कला-प्रेमी सेहो। एहिमे हुनक गति प्रशंसनीय छलनि। लिखबाक रुचि सेहो रहनि। हास्य-व्यंग्य लिखथि। 'आर्यावर्त्त'मे हुनक रचना प्रकाशित भेल छल। फगुआ-अंकमे हास्य-व्यंग्य छपल छल। साहित्यिक प्रवृत्ति हरिमोहन बाबूक परिवारक स्वभाव छनि। हिनक पिता जनार्दन झा 'जनसीदन' मैथिलीक प्रसिद्ध साहित्यकार रहथि। हुनक उपलब्धि एहि परिवारक संस्कार बनि गेल अछि। इन्द्रमोहन बाबूक लेखन पर अपन अग्रजक प्रभाव हमरा देखबामे आयल।

ओना तँ पटनाक कतेको सभा-समारोहमे हरिमोहन बाबूसँ भेँट होइत छल, एखनहु होइत अछि, मुदा पहिल बेर जमि क' गप्प भेल 'किताब घर'मे। श्री परमेश्वर सिंहसँ गप्प करैत रही। हरिमोहन बाबू सेहो ओतहि रहथि। गप्पक क्रम बड़ी काल धरि चलैत रहल। हरिमोहन बाबूक साहित्यमे जे हास्य छल ताहिसँ हम परिचित रही, मुदा हिनक विनोदी स्वभावक परिचय हमरा नहि छल। लागल जे हरिमोहन बाबू जेहने साहित्यमे छथि, तेहने जीवनमे। जेहने जीवनमे छथि तेहने साहित्यमे। हास्यरसावतार।

एकबेर चित्रगुप्त-पूजाक अवसरपर 'छज्जूबाग'मे कवि-सम्मेलन छल। हरिमोहन बाबू ओहि अवसरपर जे कविता पाठ कयलनि से हमरा खूब नहि रुचल। एहि प्रसंगमे हम 'आर्यावर्त्त'मे एकटा टिप्पणी सेहो लिखल। एखनहु हमर मान्यता अछि जे साहित्य यदि शब्द-विन्यास थिक तँ ओकर कलापूर्ण होयब जतबे आवश्यक, सुरुचि-सम्पन्न होयबो ततबे उचित।

हरिमोहन बाबू हास्यप्रिय लोक छथि, मुदा एकबेर ओ तमसायल छलाह से हम जनैत छी। 'आर्यावर्त्त' विहारक किछु मान्य साहित्यकारकेँ उपहार-स्वरूप पठाओल जाइत छल।

हरिमोहन बाबू सेहो ओहिमे छलाह। कागजक अभावक कारणें एकबेर व्यवस्थापकलोकनिकें निर्णय लेब' पड़लनि जे पत्रक निःशुल्क वितरणक व्यवस्था स्थगित क' देल जाय। तदनुसार 'आर्यावर्त्त' हरिमोहन बाबूक ओहिठाम जायब [illegible] गेल। ओ तमसा गेलाह। 'मिथिला-मिहिर'क प्रकाशन पटनासँ होबहिबला छल। हरिमोहन बाबू ओहूमे रचना नहि देबाक [illegible] घोषणा क' देलनि। परंच, प्रबन्धक-लोकनिक उक्त निर्णय अस्थायी छल। ओहिमे परिवर्त्तन भेल। हरिमोहन बाबूक ओतय पत्र पूर्ववत जाय लागल। ओ ओहिना सहज भ' गेलाह। कोनो बातपर गिरह बान्हि लेब हुनक स्वभावे नहि छनि। चरित्रक ई उदरता आ महत्ता आब कहाँ देखबामे अबैत अछि !

हम जखन 'मैथिली अकादमी'क अध्यक्ष भेलहुँ तँ प्रत्यक्षरूपें मैथिलीक लेल काज करबाक अवसर भेटल। हिन्दी पत्रक माध्यमसँ मिथिला, मैथिली आ मैथिलक हेतु जे कयने रही से अपना स्थान पर छल। 'मिथिला-मिहिर'क प्रकाशन पटनासँ कोना भेल आ ओहिमे हमर की भूमिका छल तकरो अपन इतिहास छैक। अकादमीमे अयलाक बाद लागल जे फेर किछु काज कयल जा सकैत अछि। स्थापनाक प्रथम चरणमे प्रत्येक संस्थाक, विशेषत: एहि प्रकारक सरकारी संस्थाक, आर्थिक आ व्यवस्थापरक सीमा रहैत छैक। अकादमी एहिसँ मुक्त नहि छल। थोड़ साधनमे बहुत काज, आ सेहो व्यापक स्तरपर, नहि कयल जा सकैत छल। तेँ पुस्तक-प्रकाशनक योजनाकेँ प्राथमिकता देल गेल। साहित्य, साहित्यकार, विद्यार्थी, शिक्षक, मुद्रक सभकेँ लाभ, प्रकाशककेँ तँ सहजहिँ। एही क्रममे हरिमोहन बाबूक आत्मकथा, जे ओ लिखनहि छलाह, उपलब्ध भेलापर छापल जाय तकरो निर्णय लेल गेल। हिनक रचनावली प्रकाशित करबाक सेहो निर्णय भेल। विभिन्न कारणवश ई दूनू निर्णय आइ धरि फलीभूत नहि भ' सकल अछि। मुदा, जखन संकल्प भ' चुकल अछि तखन ओ प्रकाशित होयबे करत।

गत १८ अप्रीलकेँ मैथिल-गोष्ठी, पटना द्वारा आयोजित हरिमोहन बाबूक सम्मान-समारोह मे गोष्ठीक अध्यक्ष जखन ई घोषणा कयलनि जे हरिमोहन बाबूकेँ हुनक चौहत्तरिम जन्मदिवसक अवसरपर अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित कयल जायत तँ हमरा हार्दिक प्रसन्नता भेल। हम अपन अध्यक्षीय भाषणमे सेहो एहि निर्णयक स्वागत कयलहुँ। मैथिलीक साहित्यकारकेँ लेखनसँ अर्थ-लाभ नहि भेलनि अछि, हरिमोहनो बाबूकेँ नहि। जे भेलनि अछि से 'पत्रम्-पुष्पम्' कहि क', अच्छत जेकाँ। यश भेटलनि अछि, मुदा सेहो कृपणतासँ। सामाजिक स्तर पर सभ वर्गक समानरूपेँ आदर पाबयबलामे शीर्षस्थ साहित्यकार छथि प्रो० हरिमोहन झा। मैथिल गोष्ठी द्वारा हुनक अभिनन्दन-ग्रन्थक प्रकाशनसँ ई तथ्य एकबेर फेर प्रमाणित भ' रहल अछि। वस्तुत: ई एकटा प्रशंसनीय काज थिक। हमर शुभकामना अछि।

प्रोफेसर श्री हरिमोहन झा

श्री जयनारायण झा 'विनीत'

प्रो० हरिमोहन झाजी लिखित अनेको पुस्तक, जेना "कन्यादान", "प्रणम्य देवता" "एकादशी" "खट्टर ककाक तरंग" आदि, आ समय-समय पर प्रकाशित कथादि पढ़वाक सौभाग्य हमरा प्राप्त भेल अछि। ओहि सबमे परम प्रभावशाली वर्णन विन्यास आ मनोरंजक रचना-शैली भेटैत रहल। पढ़नाइ प्रारंभ कयला पर समाप्त करक पूर्व छोड़वाक मोन नहि करैत रहल। रूढ़ि रूपमे समाजक मानसिक धरातल पर टाङ पसारिकें बैसल सामाजिक कुप्रथा सब पर व्यंग्यात्मक प्रहार करबामे हिनक जोड़ा नहि भेटल। लोकक मानसिक स्थिति कें झकझोरितहुँ हरिमोहन बाबू हुनकहु सब लग प्रिय आ परम प्रशंसनीय बनल रहलाह जनिका सबकें हुनक हास्य-व्यंग्यपूर्ण रचना सँ तिलमिला उठक चाहियनि।

मैथिलबन्धुलोकनिमे ई दोष बहुत पहिनहि सँ आबि रहल छनि आ आबहु तक बहुत किछु छन्हिए जे मैथिली मे लिखल विशिष्टो-विशिष्ट आ मनलगुआ पोथी नहि पढ़थि। एहि लेल हरिमोहन बाबूक जतेक प्रशंसा कयल जायत से थोड़ होयत जे ओ अपन सशक्त, अति आकर्षक रचना सभ सँ मैथिल बंधुक मैथिलीक प्रति ओहि उदासीनता कें उखाड़ि देल। हुनक सटीक हास्य व्यंग्यात्मक शैली मैथिलीक पोथी पढ़बामे लोकक अभिरुचि जाग्रत कऽ देलक। खड़ी बोली पढ़बामे अभिरुचि जगेबाक जे श्रेय "चन्द्रकान्ता"क लेखक श्री देवकी नन्दन जी खत्रीकें छन्हि, मैथिलीक पोथी पढ़बामे अभिरुचि जगयबाक से श्रेय हरिमोहन बाबूकें छन्हि।

हँ, तखन साहित्य-चर्चा मे कतहु-कतहु सँ इहो सुनबामे आयल जे हरिमोहन बाबू वर्तमानक शब्द-चित्र गढ़बामे ततबा ने तल्लीन रहलाह अछि जे रंचोमात्र भविष्यक झाँकी नहि दऽ सकलाह। जाहि वर्तमानकें ओ अवांछित चित्रित कऽ पाठककें ओकर त्याग करबा लेल उभारै छथि तकरा स्थान पर पाठक कोन नवीन दिशि आकर्षित होथि तकर झाँकियो तक अपन रचना सबमे देबामे ओ अत्यन्त उदासीन रहलाह अछि। ई एहन विषय थिक जाहिमे पैघो-पैघो विद्वानलोकनिमे मतभेद छनि, तें हमर तर्क-वितर्क समुचित नहि।

हरिमोहन बाबूमे एक आश्चर्यजनक क्षमता छन्हि जे कारिखकें ओ अति आकर्षक काजर बना दैत छथि। घर-आंगन मे बाजबमे व्यवहृत होबऽवला निठ्ठ गमैया शब्द सबकें वाक्य रूपमे एहि प्रकारें गाँथि दैत छथिन जे ओहू शब्द सबमे सौन्दर्य समा जाइत छैक। बानगी रूपमे "ग्रेजुएट पुतोहु"मे व्यवहृत गमैया शब्द **जूमब, हिस्सख, चिनवार, हरही-सुरही, लुबलुब, आइमाइ, मरौत, अकड़हड़, टुमटुम, छुच्छुम, सिट्ठी,** इत्यादिक सटीक व्यवहार द्रष्टव्य अछि। ओ शब्दशिल्पीमे अग्रणीक स्थान पर छथि, ई निर्विवाद मानक चाही।

पांडित्यपूर्ण विषयोकेँ जखन सर्वसाधारण लोकक समक्ष रखबाक रहैत छनि तऽ हास्य-व्यंग्यक शैलीमे तेना ने व्यक्त करैत छथि जे ओ सकल-साधारणो लेल सहज बोधगम्य भऽ जाइछ। प्रतिभाक ई चमत्कार हुनका मे ठेम-ठेम पर भेटल करैछ।

हुनक प्रत्युत्पन्नमतिक चर्चा तऽ कहल नहि जाए। सुनल अछि जे एक गोष्ठीमे हरिमोहन बाबू आ एकटा पांडेय जी अगल-बगल बैसल छलाह आ मनोविनोद चलि रहल छल। हरलनि ने फुरलनि कि पाण्डेयजी हरिमोहन बाबू सँ पुछि देलथिन्ह जे "झाजी, झाजी आ पाजीमे कतेक अंतर छैक ?" तत्काल हरिमोहन बाबू अपन आ हुनक कुर्सीक बीचक जगहकेँ हाथसँ नापल आ कहल जे बस, मात्र निमूठ हाथक। आगू-पाछू बैसल लोक सभ ठठाकेँ हँसैत-हँसैत लोट-पोट भऽ गेलाह। जे ई ठीक, तऽ प्रत्युत्पन्नमतिक ई बेश नीक दृष्टान्त रहल।

हालेमे किछु वयोवृद्ध मैथिली लेखकलोकनिकेँ मैथिली एकेडमीक दिशि सँ सम्मानित कयल गेल छल। सम्मानित होबऽवलामे हरिमोहन बाबू छलाह। तखन निकटसँ हुनका देखबाक अवसर भेटल छल। शारीरिक स्थिति ठीक नहि बुझि पड़ल। यद्यपि अवस्थामे हमरा सँ पाँच-सात वर्ष ओ छोट होयताह तथापि हुनका सँ अपनाकेँ बेशी बेहतर पओलहुँ। ई देखि हमरा बड़ कचोट भेल। ईश्वर सँ हमर प्रार्थना जे हुनका सुन्दर स्वास्थ्य प्रदान करथि जे माँ मैथिलीक गौरवस्वरूप सरस्वतीक ओ वरदपुत्र अपन चमत्कारी लेखन सँ आओरो किछु समय तक मैथिली साहित्यक श्रीवृद्धिमे योगदान देबामे समर्थ रहथि।

श्री हरिमोहन बाबू–जेना हम हुनका जानल अछि

श्री जयदेव मिश्र

१९३०-३१क बात थिक। दू नवयुवकके हम पटना विश्वविद्यालयक कार्यालयमे प्रवेश करैत देखल। दूनू गोटाक पहिरब-ओढ़ब अति साधारण। धोती-कुर्ता, पैरमे साधारण जूता। ताबतधरि हिनकालोकनि मे कोनो विशेषता नहि पबितहुँ जावत हिनकालोकनिक आँखिकें गौरसँ नहि देखी। दूनू गोटाक आँखि एक अकथनीय प्रतिभासँ उद्दीप्त छल।

हँ, दूनू गोटामे थोड़ेक अन्तर सेहो छल। एक गोटे छलाह गौर वर्ण, दोसर गोटे उज्ज्वल श्याम वर्ण। उज्ज्वल श्याम वर्णक छलाह हरिमोहन बाबू ओ गौर वर्णक सतीश बाबू।

एहिसँ पूर्व हरिमोहन बाबू ओ सतीश बाबूकें देखबाक हमरा अवसर नहि भेल छल। किन्तु दूनू गोटाक नामसँ हम पूर्णरूपें परिचित छलहुँ। नामेटासँ किएक? हिनकालोकनिक कृतित्वसँ सेहो।

हिनकालोकनिक शैक्षिक गुणावली जनबा-बुझबा हेतु माध्यम छलाह हमर जेठ भाय श्री अनिरुद्ध बाबू। श्री अनिरुद्ध बाबू १९२७ ई०मे मैट्रिक परीक्षा पास कय पटना अयलाह ओ पटना साइन्स कौलेजमे नाम लिखाय पढ़य लगलाह। दू वर्ष धरि साइन्स कौलेजमे पढ़ि चारि वर्ष इन्जिनियरिंग कौलेजमे पढ़लनि। व्यावहारिक प्रशिक्षणक एक वर्ष सेहो हिनक पटनामे बीतल। एहि प्रकारें १९२७ ई० सँ प्रायः १९३२-३३ धरि ई पटनामे छलाह।

एहिठाम एकटा बात स्मरण राखब आवश्यक। ओहि समयक पटना आजुक पटना नहि छल। ओहि समयमे मैथिल विद्यार्थीक संख्या ततेक कम छलैक जे पटनाक कोनो एक कौलेजमे पढ़निहार छात्रकें कोनो दोसर कौलेजमे पढ़निहार मैथिलछात्रसँ अनायास परिचय भ' जाइत छलनि। ओहि समयक पटनाक कोनो दू कौलेजमे पढ़निहार मैथिल छात्रक बीच परिचय नहि रहल हो ई असंभव। एकर आशय ई नहि जे सभक संग सभकें घनिष्ठता वा मित्रता छलैक। मित्रताक हेतु समवयस्कता, वैचारिक समरसता चाही। ई मित्रता दू-चारि-पाँच गोटाक बीचमे रहैत छलैक।

१९२७ ई० मे जखन अनिरुद्ध बाबू पटना अयलाह तखन सतीश बाबू ओ हरिमोहन बाबूकें पहिनहिसँ विद्यमान पओलनि। ओहि समयमे हरिमोहन बाबू छलाह बी० ए० कक्षाक छात्र ओ सतीश बाबू एम० ए० कक्षाक। दूनू गोटे अनिरुद्ध बाबूसँ सीनियर छलाह।

अनिरुद्ध बाबूक परम मित्र छलथिन श्री तंत्रनाथ बाबू। वाटसन स्कूल, मधुबनीसँ हुनक सहपाठी। तन्त्रनाथ बाबूक जेठ भाय रमानाथ बाबू पटना कौलेजमे सतीश बाबूक संग पढ़ैत छलाह। दूनू गोटा मे प्रतिद्वन्द्विता जेकाँ सेहो छलनि। अतएव स्वाभाविक छल जे रमानाथ बाबू-तन्त्रनाथ बाबूक डेरा

पर (जतय अनिरुद्ध बाबू प्रायः सभ दिन जाथि) सतीश बाबूक गुणावलीक बखान होइत रहल हो। अनिरुद्ध बाबूक मुँहें सुनल अछि जे रमानाथ बाबूकें सतीश बाबूक योग्यताक हेतु पूर्ण आदर छलनि।

पता नहि कोन कारणसँ सतीश बाबू-हरिमोहन बाबूक बीच आरम्भहिमे सौहार्द स्थापित भ' गेल। हमरा बुझने आनो कारण जे रहल होइक, एकक योग्यताक प्रति दोसर गोटे आकर्षित अवश्य छलाह। निस्संदेह रूपें दूनू गोटे प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति छलाह। किन्तु, जतय सतीश बाबू छलाह शान्त-सुस्थिर, ओतय हरिमोहन बाबू छलाह चंचल, वाक्पटु। संभव थिक जे मैथिली मोहाबराक छौंक दय कथोपकथनकें सरस, सजीव बना देबाक हरिमोहन बाबूक स्वाभाविक क्षमता सतीश बाबूकें हिनका दिशि विशेष रूपें आकर्षित कयने हो। हम बुझैत छी, ओहि समय धरि सतीश बाबूकें सर्जनात्मक मैथिल प्रतिभासँ बहुत परिचय नहि छलनि। हरिमोहन बाबूक जाहि व्यंग्यपूर्ण साहित्यिक प्रतिभाक परिचय सतीश बाबूकें एसकर-दोसकरमे भेलनि तकर परिचय पओलक पटनास्थ मैथिल छात्रवृन्द विभिन्न सभा-सोसाइटीमे। हमरा बुझने एहि प्रतिभाक परिचय मैथिल समाज पओलक बादमे— मैथिली पत्र-पत्रिकादिमे छपयवला हरिमोहन बाबूक व्यंग्यात्मक साहित्य-रचनामे।

ई अवश्य जे सभा-सोसाइटीमे प्रदर्शित हरिमोहन बाबूक चमत्कारसँ पहिल परिचय हमरा अनिरुद्ध बाबूक माध्यमसँ भेटल, किन्तु हरिमोहन बाबूक किछु चमत्कारसँ किछु परिचय हमरा पहिनहि भ' गेल छल। एकर माध्यम छलाह हमर पिताजी। १९१२ ई०मे हमर पिता कलकत्ता जाय विश्वविद्यालयमे योगदान कयलनि। ओकर किछु वर्षक बाद स्व० कुमार गंगानन्द सिंह कलकत्ताक प्रेसीडेन्सी कौलेजमे नाम लिखओलनि। स्वभावतः हुनक रहक हेतु किराया पर मकान लेल गेल ओ हुनका सुविधाक लेल आवश्यक स्टाफ ओतहि रहय लागल। मकानक सुविधा जानि श्रीनगरक आओरोलोक सभ एतय आबि रहय लगलाह। यदा-कदा कुमार गंगानन्द सिंहक पितृव्य राजा कालिकानन्द सिंह सेहो। राजा कालिकानन्दसिंहक कलकत्ता गेला पर तँ समस्त श्रीनगर ड्योढ़ी कलकत्ता चल जाय। पंडितलोकनि सेहो जाथि। एही पंडितमंडलीमे हरिमोहन बाबूक पिता पंडित जनार्दन झा 'जनसीदन' सेहो छलाह। राजाक संग मासक-मास कलकत्तामे रहथि। एहनसमय बीतल जखन राजाक आग्रह पर हमर पिता सेहो अपन डेरा छोड़ि श्रीनगरक मकानमे रहथि। श्रीनगरक मकानमे रहैत 'जनसीदन' जीक संग हमर पिताक संपर्क स्वाभाविक छल। मासक-मास संग रहब, कखनहु क' एक कोठली धरिमे। परिवार, धीया-पुताक, सुख-दुःखक कथाक आदान-प्रदान हुनका दूनू गोटाक बीच अनिवार्य छल। जाहि समयमे हरिमोहन बाबूक नाम सुनबाक कोनो संभावना नहि छल (यथार्थमे हमर पिताजी कहियो हरिमोहन बाबूक नाम नहि कहलनि) ताहू दिनमे हुनका मुँहें जानल—"पं० जनार्दन झाक एकटा नेना बड़ प्रतिभाशाली छथिन। हुनकहि जेकाँ आशुकवि, हुनकाहि जेकाँ साहित्यिक स्फूर्तिसँ सम्पन्न।" जहाँ धरि स्मरण अछि, हमर पिता कहने छलाह—"जनसीदनजीक नेनाक पद्यबद्ध चिट्ठी हम देखल अछि। जेहने अक्षर जनसीदन जीक, तेहने हुनक नेनाक।" प्रायः हरिमोहन बाबूक पिता एवं माताक अक्षर सेहो एकरंगाहे होइत छलनि। ईहो गप्प हमरा पिताजीक मुहें सुनल अछि।

हरिमोहन बाबूक संग हमर वैयक्तिक सम्पर्क स्थापित भेल १९४०मे। किन्तु प्रगाढ़ होवय लागल १९४९ सँ जखन हम दरभंगासँ आबि पटना कौलेज ज्वाइन कयल। बी० एन० कौलेज

छोड़ि १९४६ मे हरिमोहन बाबू पटना कौलेज आबि गेल छलाह। कहब निरर्थक जे वैयक्तिक घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित होयबाक पूर्वहि हम हरिमोहन बाबूक रचनासँ पूर्ण रूपेँ परिचित भय गेल रही। स्मरण होइत अछि, कतेक बेरि कय प्रकारेँ पत्र-पत्रिकादिक ग्राहक संख्या बढ़यबाक एहि हेतुएँ चेष्टा कयलहुँ जे ई पत्र वा पत्रिका चिरायु होअय, हरिमोहन बाबूक साहित्यिक रचना पढ़' लेल भेटैत रहय। पटनामे रहैत, ताहूमे एके कौलेजमे, हुनका देखबाक-बुझबाक जतेक अवसर भेटल तकरा गनायब असंभव अछि। हुनका संग रहैत एको क्षण एहन नहि बीतल अछि जाहिमे चित्त चमत्कृत नहि भेल हो। हमरा स्मृति-भंडारमे जँ एहन कोनो उक्ति अछि जकरा सभ्य समाजमे प्रभावोत्पादनक हेतु हम अव्यर्थ रामवाण बुझैत छी तँ ओ अधिकांशतः हरिमोहन बाबूक उक्ति थिक। मामूलिओ परिस्थितिकेँ सरस-रोचक बना देब हरिमोहन बाबूक विशेषता छनि--कखनहुक' वैयक्तिको हानि सहिकेँ। हरिमोहन बाबू बी० एन० कौलेज छोड़ि पटना कौलेज तँ अयलाह, किन्तु जाहि शर्त्त पर हिनक नियुक्ति भेल छल तकर पूर्त्ति कतेको वर्ष धरि सरकार दिससँ नहि भेलैक। एक दिन जखन ओ अपन असुविधाक वर्णन करैत छलाह, हम सुझाव देलियनि जे लोक-शिक्षा-निदेशक गोरखबाबूकेँ जाय अपन असुविधा कहियौन। ओ सब ठीक करा देताह। हरिमोहन बाबू उत्तर देलनि—"हुनकासँ एक-दू बेरि भेंट कयल अछि ? दर्जन पूरि गेल हैत। प्रत्येक बेर ओ कहैत छथि—रौआ बड़ा अजीब आदमी बानी। काहे न पटना कौलेज ज्वाइन क' ले तानी ?"

हरिमोहन बाबूक साहित्यिक अवदान असंदिग्ध रूपेँ मूल्यवान अछि। साहित्यक मंच पर हरिमोहन बाबूक अवतरणक पूर्व मैथिली कथा, मैथिली कविता पारंपरिक धाराक छल। ओहि धाराक साहित्य आधुनिक लोकक साहित्यिक वासनाक तृप्ति नहि कय सकैत छल। एकरा विपरीत हरिमोहन बाबूक रचना 'हमरा लोकनि'केँ सम्बोधित अछि। हरिमोहन बाबू समाजक जाहि चित्रक अंकन कयलनि ओ 'हमर' समाज थिक। ओकर गुण-दोष हमरा आँखिक सोझाँमे अछि। ओकर नीक-अधलाह आजुक लोकचित्तसँ जोड़ल छैक। हरिमोहन बाबू एहि सामाजिक चित्रकेँ अपन रचनाक उपजीव्य बनौलनि। फलतः ओकर रसास्वादन समस्त समाज कय सकल। पंडितमंडलीसँ लय आइ-माइ धरि। इएह कारण थिक जे हिनक रचना वर्गीय रचना नहि भेल। समस्त मैथिल समाजक कंठहार बनि गेल।

हरिमोहन बाबूक रचनाक दुआरे मैथिलीक लेखक, साहित्यिक एकटा पाठक-वर्गक संधान पओलनि। हरिमोहन बाबूक ई काज थोड़ महत्त्वक नहि थिक।

हम स्वीकार करैत छी जे हरिमोहन बाबूक रचनामे भावतत्वक अपेक्षा बुद्धितत्व अधिक अछि। तेँ संभव थिक जे हिनक किछु रचनाक पूर्ण रसास्वादन मैथिल समाजक प्रबुद्धवर्गे कय सकय। यथार्थमे साहित्यक सभ अंगक रसास्वादन समाजक सभ लोक नहि कय सकैत अछि। सामाजिक कुरीति एवं शास्त्रीय दृष्टिकोणक सीमाबद्धताक वर्णन जाहि प्रकारेँ हरिमोहन बाबू कयलनि अछि तकर दोसर उदाहरण हमरालोकनिकेँ बंकिम साहित्यमे भेटि सकैत अछि। जाहि शास्त्रीय वचनक सीमाबद्धता एक संक्रमणकालमे बंकिमचन्द्र रसात्मकताक संग देखओने छलाह तकर पुनरुक्ति

हरिमोहन बाबू मैथिल समाजक संदर्भमे सफलतापूर्वक कयलनि। संगहि परिस्थितिगत अथवा चरित्रगत कोनो वैशिष्ट्य वा वैचित्र्यकें एक शब्दमे व्यक्त करबाक जे क्षमता हरिमोहन बाबूमे छनि ओ विलक्षण अछि। बुद्धि-विलासक दिशि किछु झोंक रहनहु हृदयसँ हरिमोहन बाबू साहित्यिक थिकाह, कवि थिकाह।

पता नहि किएक हम हरिमोहन बाबूक दिशि अतिरिक्त मात्रामे आकर्षित भेल अयलहुँ अछि। भय सकैत अछि जे हिनक पूर्वपुरुषा कोइलखेसँ आबि बिरसायरमे निवास कयलनि ओ फेरि कुमर बाजितपुरमे। हमर पिताजी कहथि जे जजुआड़ कुलमे सत्प्रतिभा बहुत ठाम देखबामे आयल अछि। हुनका सोझांमे पं॰ जीवन झा, विद्यावाचस्पति पं॰ मधुसूदन झा, पं॰ जनार्दन झा 'जनसीदन'क उदाहरण छलनि। हम जखन हरिमोहन बाबूक सम्बन्धमे सोचैत छी तखन पता नहि कतेक प्रकारक भावना, विचार हमरा प्रभावित करैत अछि। एहिमे सँ किछु विचार-बिन्दु स्पष्ट अछि, किछु अस्पष्ट अर्थात् तेहन नहि जकरा हम शब्दमे बान्हि सकी। सभ मिलाय हम आइ कतेक दशक सँ श्री हरिमोहन बाबूक गुणावलीसँ मुग्ध रहलहुँ अछि। मैथिलीसँ प्रार्थना जे ओ भारतीक एहि वरपुत्रकें शतायु बनाबथु।

मोन पड़ैए

प्रो० दिवाकर झा

मोन पड़ैए जे स्कूलमे जखन पढ़ैत छलहुँ ओही समयमे, जखन श्री हरिमोहन बाबू छात्र जीवनमे छलाह, हिनक चर्चा सुनने छी। स्वर्गीय कुमरजी (पं० जयानन्द कुमर) कहियो काल हमर गाम जाइत छलाह। ओ हरिमोहन बाबूक उदाहरणसँ बच्चा सबकेँ प्रोत्साहित करथिन। '३१ ई०मे कालेजमे नाम लिखएबाक लेल पटना अएलहुँ। तखनसँ यत्र-तत्र हिनक चर्चा सुनए लगलहुँ। '३७ ई०मे पटना कालेजमे मैथिली-साहित्य-परिषदक स्थापना भेल आ हम भए गेलहुँ ओकर सचिव। तखन तँ हरिमोहन बाबू सँ समय-समय पर भेट करबाक काज पड़ए लागल। एकरा अतिरिक्तो अनेक अवसार पर झाजीसँ भेट होइत रहल। परिचय बढ़ए लागल। क्रमिक परिचय घनिष्ठता, आ कहि सकैत छी, आत्मीयतामे परिणत होमय लागल।

हरिमोहन बाबूक तँ बहुमुखी प्रतिभा छैन्ह जाहिमे सँ अधिकांश हमरा हेतु दुष्प्राप्य छल और अछि। आकर्षणक प्रथम कारण भेल हुनक हास्यमय गप्प। थाकल-ठेहियायल मोन लऽ कऽ हुनका लग जाइत छलहुँ। एकाध घंटा हुनकासँ गप्प कएलाक बाद स्वस्थ चित्त हल्लुक मोन लेने घर अबैत छलहुँ और फेर अपना काजमे लागि जाइत छलहुँ। दोसर आकर्षण : हम अपन बाल्यकालहिँ विद्यार्थी जीवनक समाप्ति तक गाममे अपन दरबजा पर संस्कृत विद्वान् सभक बड़का अखाड़ा देखैत रहलहुँ। ओहि अखाड़ामे उतरबाक कोन गप्प, ओकर धूरो अपना शरीरमे नहि लागए देलिऐक। किन्तु योद्धा सभक दंगल तँ देखैत छलहुँ, ओकर शब्द किछु-किछु कानमे पड़ैत छल। एहि वाग्युद्ध सबमे न्याय, वेदान्त, मीमांसा आदि केर प्रवाह होइत रहैत छलैक। विषयक ज्ञान तँ नहि होइत छल किन्तु एहि तरहक वातावरणमे रहबाक चलते ओहि दिश रुचि उत्पन्न भेल। बी०ए० तथा एम० ए० मे अर्थशास्त्र तथा राजनीति शास्त्रक अध्ययनक क्रममे किछु पाश्चात्य दर्शन पढ़लहुँ। तेँ किछु ओहू दिश प्रवृत्ति भेल। श्री हरिमोहन बाबू दूनू दिशक दर्शनशास्त्रमे अपन स्थान बनौने छथि। अधिक काल, जखन दुइये गोटे रहैत छलहुँ, गप्प दार्शनिक विषय पर होइत छल। कठिन दार्शनिक विचार सबकेँ सरल मनोरञ्जक आवरणमे उपस्थापित करबाक चमत्कार तँ हरिमोहन बाबूकेँ स्वाभाविक छैन्ह। तेँ घण्टो ई सब सुनैत हुनका लगमे बैसल रहैत छलहुँ। एतबा स्पष्ट कए देब उचित होएत जे एतेक सुनलाक बादो हम किछु सीखि नहि सकलहुँ।

हरिमोहन बाबू मैथिली तथा हिन्दी साहित्यकेँ अपन अनुपम कृति देने छथिन्ह ई तँ सर्वविदित अछि। अंगरेजी साहित्यक ओ नीक विद्यार्थी छलाह। संस्कृत साहित्य तथा दर्शन शास्त्रमे नीक प्रवेश छैन्हि। हम जे किछु एहि सब विषयमे पढ़लहुँ वा सुनलहुँ से प्रायः बिसरल जेकाँ अछि। तँ एहि सब

विषयक सम्बन्धमे किछु कहब अनुचित बूझि पड़ैत अछि। हरिमोहन बाबू गप्प-सप्पक प्रसंगमे एहू सब विषयक चर्चा करैत छलाह। नव्यन्याय तथा आधुनिक तर्कशास्त्रक तुलनात्मक अध्ययनमे हिनका विशेष मोन लगलैन। मोन पड़ैए जे कतेको दिन ई हास्यमय गप्पमे 'घृताधारं पात्रम् किंवा पात्राधारं घृतम्' केर चर्चा कएने होएताह। तहिना 'यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्र वह्निः' केर कथानक सेहो कतेको बेर हिनकासँ सुनने होएब। हिनकर 'खट्टर ककाक तरंग'क बड़ नाम सुनलहुँ। पोथी ऊपर कए पढ़लहुँ। पढ़बामे बड़ रोचक लागल। सामाजिक बहुतो मान्य विचार सब पर तीक्ष्ण, किन्तु गुदगुदी लगबैत, अस्त्रक प्रहार कएने छथि। पोथी समाप्त कएलाक बाद एक बात ध्यानमे आएल। खट्टरकका जखन भरिलोटा भाँग पीबि लैत छथि तैखन ओ सकल शास्त्रविचारदक्ष होइत छथि।

जीवनदर्शन, धर्म, ईश्वरवाद, अनीश्वरवाद आदि पर अनेको बेर विवाद भेल अछि। एहि सब वाद-विवादमे कहियो हमरा हिनकासँ मेल नहि भेल। हमर विश्वासकेँ हिनक ज्ञान विचलित नहि कए सकल। ई चार्वाकक प्रशंसक छलाह। ओ "यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्। भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥" केर तीन चरणमे आस्था रखैत छलाह। सुख तँ वैयक्तिक अनुभूतिक विषय थीक। भिन्न-भिन्न व्यक्तिकेँ भिन्न-भिन्न भोगसँ सुखानुभूति होइत छैक। तेँ भिन्न-भिन्न व्यक्तिक सुखक परिभाषा भिन्न होइत छैक। "ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्"मे हरिमोहन बाबूकेँ सुखानुभूति नहि होइत छैन्ह।

ई तार्किक व्यक्ति, अपन ज्ञान और कठोर तर्कक आधार पर जीवन दर्शनक स्थापना करएबला दार्शनिक, जीवनक सन्ध्याकालमे शारीरिक दुर्बलता तथा पारिवारिक क्लेशसँ पराभूत भए ईश्वर कहू अथवा कोनो अलौकिक अज्ञात शक्ति कहू तकरामे विश्वास करए लागल छथि। ई बड़का दुःखक बात अछि।

दर्शनाभिलाषी

श्री मनमोहन झा

एहि शताब्दीक तेसर दशकक गप्प थिक जखन हम हाइ स्कूलक कोनो वर्गमे पढ़ैत रही। ओहि समयक सोतिपुरा छल मिथिलाक लखनउ। राज दरभंगाक रुपैयासँ ओतप्रोत सोतिबाबूलोकनिक जीवन ओ हुनकेलोकनिक रंगमे रंगल हुनका लोकनिक नोकर-चाकर, दोस्त-महीम आ मोसाहेब सब। पोखरिक अपिआरीमे माछक शिकार। चर-चाँचरमे गोसिही पहिरने बटेर बझाएब। तास, सतरंज, चौपड़ि, पचीसी। एहिसँ अतिरिक्त कोनो आओर व्यसन छल तँ पुस्तकावलोकनक। संस्कृतक विद्वान्-लोकनि धर्मशास्त्रक ग्रंथ सब उनटाबथि आ नवतुरिया सबहक हाथमे एकमात्र पुस्तक रहए स्व० देवकीनन्दन खत्रीक चन्द्रकान्ता। हेवलीमे भानस भऽ गेल, बीआसिनक तलबी पर तलबी आबि रहल अछि, किन्तु बाबू तल्लीन छथि भूतनाथक चातुरी पर, चूनागढ़क भूल-भूलैयामे भसिआएल। घर-घरमे एके दृश्य, सब घरक गृहिणीक एके उलहन—कोन पोथी हाथ लागि गेलन्हि अछि जे खायब-पीअब सब बिसरने छथि।

आ हमरा आश्चर्य लागल एकदिन जखन अपन जेठ भाइक हाथमे आन पुस्तक देखल, ओकरे अध्ययनमे व्यस्त छथि भाइजी। हुनक मुख पर जासूसी उपन्यास पढ़बाक कौटिल्य नहि छन्हि; हुनक मुख पर प्रशान्त गाम्भीर्यक संग हर्षक स्मित-रेखा छन्हि। हास्यरस आ सेहो अपन समाजक, अपन आङनक उपहासमय हास्य। कतेक ठीक चित्रण अछि हमर समाजक अपढ़-जाहिल स्त्रीवर्गक ! सम्पूर्ण मिथिलामे लाखो बुच्चीदाइ छथि आ सब एके रंग 'भिरिआएल पटिया' जकाँ निःप्राण सन, मूक, बधिर भेलि अपन कोबराघरमे अपन शिक्षित पतिक समक्ष आँखि खसौने ठाढ़ि।

इएह परिचय छल 'कन्यादान'क आ ओकर यशस्वी तरुण लेखक श्री हरिमोहन बाबूक; जनिक कथा-शिल्प तेहन सुन्दर छलन्हि जे बाबू लोकनिक हाथसँ चन्द्रकान्ता, भूतनाथ आ चन्द्रकान्ता सन्ततिक चौबीसो खण्ड अनायास ससरि कए खसि पड़ल।

सम्पूर्ण मिथिलामे एक मानसिक क्रान्तिक जन्म भेल। आब हमर बहिन, हमर बेटी बुच्चीदाइ मात्र नहि रहलीह, आब ओ लोकनि स्कूल जएतीह, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, गणित, इतिहास, भूगोल आदिक अध्ययन करतीह; गृहिणी सचिवः सखी मिथः।

कन्यादान पढ़लहुँ, कन्यादानक लेखकक दर्शन करबाक इच्छा भेल; इच्छा औत्सुक्यक रूप लेलक, किन्तु वाह रे भवितव्यता ! आइ० ए०क प्रथम वर्षसँ ल' क' लॉक अन्तिम वर्ष धरि पूरा छः

वर्ष पटना कालेज, लॉ कालेजमे रहलहुँ आ हरिमोहन बाबू बी० एन० कालेजमे व्याख्याता। जहिया हुनक दर्शन करए जाइ तहिया ओ सी० एल० लेने। कहिओ अस्वस्थ छथि, कहिओ अन्यत्र गेलाह अछि।

कन्यादानक चिन्तन मनमे जारी रहल — केहन छथि ई युगपुरुष जे मैथिल समाजक सबसँ दुर्बल स्थान पर अपन प्रौढ़ लेखनीसँ आक्रमण कएलन्हि अछि। एक दिन एहि क्रममे लहेरियासरायक बाबू रामलोचन शरण जीक भेँट कएल। बड़ आकर्षक व्यक्तित्व छल हुनक। बहुत लेखकक बहुतरास गप्प ओ कहलन्हि। हम घुमा-फिराकए एकेटा बात हुनका कहैत रहलिऐन्हि। अपनेक साहित्यसेवाक प्रशंसा स्वयं गाँधीजी कएने छथि, किन्तु अपनेक पुस्तक भण्डारकेँ तीनिएटा वस्तु सब सँ अधिक ख्याति दिऔलक अछि—ओ थिक दिनकरक 'रेणुका', उपेन्द्र महारथीक शिवपार्वतीक चित्र आ हरिमोहन बाबूक 'कन्यादान'।

कालेजक जीवन बीति गेल आ पटना सँ घुमिकए जखन दरभंगा अएलहुँ तँ दुइए बातक कचोट मनमे रहल। पटनामे बहुतरास पैघ-पैघ साहित्यसेवीकेँ देखल, हुनका लोकनिक भाषण सुनल। सर्वपल्ली राधाकृष्णन, रामकुमार वर्मा, रामचन्द्र शुक्ल, मैथिली शरण गुप्त, हजारी प्रसाद द्विवेदी, म०म०उमेश मिश्र आदिक पण्डित्यपूर्ण भाषण सेहो सुनल, किन्तु एतबा दिन पटनामे रहि हरिमोहन बाबूसँ ने भेट भेल आ ने हुनकासँ गप्प कएल। दोसर "ट्रेजेडी" हमरा अपन साहित्यक गुरु शरतचन्द्र चट्टोपाध्यायक दर्शन नहि होएबाक प्रसंग अछि। १९३७ ई०मे हम आइ० ए०क छात्र रही, किन्तु तावत तक हम शरत बाबूक सब पुस्तक पढ़ि गेल रही। हुनका प्रति जे हमरा हृदयमे श्रद्धा छल से अनुदाहरणीय अछि। हरदम मोनमे होअए जे एकबेरि कलकत्ता जाइ आ ओहि महामानवक चरणरज माथमे लगाय कृतार्थ होइ, किन्तु ओही साल एकाएक हुनक निधन भए गेलन्हि आ हमर मोनक अभिलाषा पर तुषारपात भ' गेल।

आ हरिमोहन बाबू ! शरत बाबू हमरा साहित्य-सेवाक मन्त्र देलन्हि आ हरिमोहन बाबू ओहि मन्त्रकेँ निरन्तर जप करबाक प्रेरणा। किन्तु हम आलस्य, प्रमादमे पड़ल ने शरत बाबूक दर्शन कए आत्माकेँ शान्ति देल आ ने हरिमोहन बाबूक समक्ष निरन्तर साहित्य-सेवामे लग्न एक व्यक्तिक रूपमे ठाढ़ होएबाक साहस कएल।

कालेजसँ आबि किछु वर्षक बाद "अश्रुकण" लिखल। डराइत एक प्रति हरिमोहन बाबूकेँ पठाओल। एके सप्ताहमे हुनक कार्ड आएल। आशीर्वचन छल—"अहाँ अहिना अनेक रत्न दाइक सृजन करू।" मोनमे उत्साह भरि गेल। हरिमोहन बाबू हमर पुस्तकक प्रशंसा कएलन्हि. ओ हरिमोहन बाबू जे कोनो एकेटा बुच्ची दाइक एकेँ ठोप नोर देखि सगर निस्सहाय मैथिल ललनाक हृदयक दुःख, वेदना, आक्रोशसँ परिचित भए जाइत छथि, से हमर अश्रुकणक प्रशंसा कएलन्हि। हम धन्य भेलहुँ, तरि गेलहुँ।

'संचयिता'क सम्पादन कएल, मीनाक्षी, सुकेशी, सप्तपदी आदि जे-किछु थोड़-बहुत कथा लिखल, हुनक दृष्टि सँ बाहर नहि रहल। ओ अपन अनेक लेखमे अनेक भाषणमे हमरा-सन एक

अपरिचित नगण्य लेखकक उल्लेख कएलन्हि, चर्चा कएलन्हि। किन्तु अपन एहन हितैषीक, अपन एहन मार्गदर्शकक दर्शन हमरा एखन धरि नहि भेल अछि।

अनेक बेरि एहन अवसर आएल अछि जखन ओ बहुत लग आबि गेल छथि आ हम दौड़ल गेलहुँ अछि ओतए हुनक दर्शन करबाक लेल, किन्तु हम पहुँचलहुँ अछि आ ओ चल गेल रहैत छथि।

दरभंगा टाउन हॉलमे हुनक भाषण छल। सुनबा लेल गेलहुँ, सुनबासँ बेसी हुनका देखबाक इच्छा छल, किन्तु तावत हरिमोहन बाबू मंचसँ अलोपित भ' गेलाह।

कन्यादान फिल्मक दरभंगा सिनेमा हाउसमे उद्घाटन करए हरिमोहन बाबू आएल छलाह। कन्यादान फिल्मसँ बेसी कन्यादानक लेखकक दर्शनक इच्छा छल, किन्तु यावत ओतय पहुँची तावत ओ सिनेमा हाउसक भीतर छलाह आ हम निराश सड़क पर ठाढ़ छलहुँ।

साक्षात दर्शनक जाहि क्षणकेँ हम मुट्ठीमे बान्हिकए राखए चाहैत छी से आङुरक पोर देने ससरि जाइत अछि। अपरिचयक लौहपट्टकेँ जखन हम प्रबल इच्छाक हथौड़ासँ चूर्ण करए चाहैत छी, ओ वज्र बनि जाइत अछि।

समय बीतैत गेलैक अछि आ बीतैत रहतैक। हरिमोहन बाबूक एक-दुइटा रचना 'मिहिर'मे पढ़ल तँ अवसन्न रहि गेलहुँ। एकटा रचना छल हरिमोहन बाबू द्वारा अपन पौत्रक निधन पर कारुण्यपूर्ण शोकगीत आ दोसर छल हुनक रुग्ण कालक अचेतावस्थामे "स्पेस"मे उड़ैत हुनक प्राणपक्षीक अनुभवक सजीव चित्रण। एके बेर मोन धक् द' उठल—की हरिमोहन बाबू वृद्ध भ' रहलाह अछि? जनिक लेखनी अनेक खट्टर ककाक सृजन कए कोटिशः लोकके हँसबैत रहल, जनिक लेख पढ़लासँ बिना प्रयासे देहमे गुदगुदी लागए लगैछ ओ लेखक अपन जीवनपर्वतक ताहि दुरूह घाटीमे पहुँचि गेल अछि जतए केवल वेदनाक निर्झर बहैछ!

उहूँ, एहन महामानव कहिओ वृद्ध नहि भए सकैत अछि। अनुखन सीताक बहिनपालोकनि अपन पवित्र अश्रुक आसिंचनसँ हुनका तरुण बनौने रहथिन्ह। जे व्यक्ति मिथिलाक घर-घरमे बुच्चीदाइ लोकनिक नोर पोछलक, पुरानपंथी मैथिल समाजमे चेतनाक शंख फुँकलक ओ कतहु कहिओ बूढ़ होअए!

आ हम नियम कएल, आब हम हरिमोहन बाबूक दर्शनक कामना नहि करब। ओ हमर मानस पटल पर ओहिना हँसैत, स्वच्छ धोती-कुर्त्ता पहिरने, आँखि पर चश्मा लगओने विद्यमान रहथि। हमरा मोनमे ओ अनुखन एक श्यामवर्णक सुदर्शन युवकक रूपमे ठाढ़ छथि।

दुइ-तीन वर्षक पहिलुका गप्प थिक। पटना जंकशनक एकटा बेंच पर बैसल रही कि एकटा परिचित सहयात्री कहलन्हि—"वैह हरिमोहन बाबू आबि रहल छथि, प्रायः कोनो ट्रेन पकड़ताह।" मोनमे एकाएक दर्शनक जोआरि उठए लगैत अछि। सम्पूर्ण शरीर जेना प्रणामक साक्षात मूर्त्ति भए हुनक पएर पर लुण्ठित भ' जएबा लेल व्यग्र भ' उठैछ, किन्तु दोसरे क्षण हम आँखि मूनि लैत छी। नहि, नहि, नहि।

हम हुनक दर्शन नहि करब। हमर जे कल्पनाक दर्शग अछि तकरा हम पूर्ण नहि होअए देबैक। पाकल केश,हाथमे नड़ी, कनेक झुकल सन, चिन्तित मुखमुद्रा —एहन हरिमोहन बाबू तँ हमर मानस-पटल पर नहि चित्रित छथि। आ हम आँखि मुनि बैसि रहैत छी।

हरिमोहन बाबू बुड़ा रहलाह अछि, बूड़ भ' गेलाह अछि, एकर कल्पने ने हम नए सकैत छी। हमर रोम-रोमसँ एकमात्र कामना बहराइछ—ओ श्रेष्ठ छथि, गुरुवत छथि, हुनक दीर्घातिदीर्घ आयुक हेतु हम ईश्वरसँ प्रार्थना मात्र कए सकैत छी।

शालवृक्ष सन सबल हुनक देह रहौन्ह, चानंनक वृक्ष सन सौरभमय हुनक कीर्ति रहौन्ह, पारिजात सन कोमल हुनक भावना रहौन्ह। ऐरावतक बलसँ ओ समाजक कुरीति पर आघात करैत रहथु, विष्णु-चक्र सन तीक्ष्ण आघात करैत रहए हुनक लेखनी मैथिलक जड़ता पर। गंगाक धार जेकाँ प्रवहमान रहन्हि हुनक लेखनशक्ति, हिमालय सन अडिग रहनि हुनक परिष्कृत नवीन चिन्तन।

आ एकटा कामना आओर अछि, ओ हमर हृदयमे श्रीमद्भागवतक रासपंचाध्यायी सन चिर नूतन, उमर खैयामक रुबाइयत सन चिर ललित रहथु।

हम हुनक दर्शनक अभिलाषी नहि छी।



विद्यादाता गुरु

कुमार तारानन्द सिंह

हम पटना कालेजक विद्यार्थी; हरिमोहन बाबू बी० एन० कालेजमे लेक्चरर; सतीश बाबू तथा रघुनाथ बाबू एम० एल० परीक्षाक तैयारीमे व्यस्त। एहि अवस्थामे हमरा हरिमोहन बाबूसँ प्रथम परिचय सतीश बाबूक डेरा पर भेल। किछुए कालमे हम हुनक विद्वत्तासँ मोहित भऽ गेलहुँ। मैथिली तथा मिथिलाक सेवा करबाक भावना उत्पन्न भेल। हुनकासँ शिक्षा ग्रहण करय लगलहुँ। घनिष्ठता बढ़ल गेल। तावरि 'कन्यादान' प्रकाशित भऽ चुकल छल। समाजमे एकर चर्चा जोर पकड़लक। मैथिल युवक, अभिभावक, अधिवक्ता, पंडित तथा गामक पँजियार—सभक हाथमे ई पोथी आबि गेल। किछु गोटे अत्यन्त प्रशंसा करथि, किछु गोटे बड़ कटु शब्दक प्रयोग करथि। किन्तु मैथिली लोक पढ़य लागल। मैथिली पोथीक चर्चा शुरू भऽ गेल। पटनामे हमरा घर पर रवि दिन कऽ जुटान होइत छल जाहिमे मिथिलाक बुद्धिजीवीलोकनि, पटना आ मिथिलांचलसँ आबयवला, रहैत छलाह। एहि गोष्ठीक आकर्षण छलाह हरिमोहन बाबू। गप्प-सप्पक केन्द्र-बिन्दु होइत छल 'कन्यादान', मिथिलाक लोक, मैथिल समाज।

बी० ए०मे हम दर्शनशास्त्रक विद्यार्थी छलहुँ। हमरा हरिमोहन बाबूक दर्शनशास्त्रसँ बेसी हुनक मैथिलीक रचना तथा हास्य-व्यंग्यक शैली मोहित कयलक। हमरा बरोबरि खटकय जे 'कन्यादान' पूरा नहि भेल अछि। गप्पे-सप्पमे, एकदिन, हम हरिमोहन बाबू लग चर्चा कयल—'कन्यादान'क बाद दम्पति एहिना रहि जएताह कि हुनक घरो बसतनि, दुरागमनो हेतनि? किछु सोचि ओ कहलनि—'अहाँ चाहैत छी तँ दुरागमन भइए जेतनि।' 'द्विरागमन'क कार्य आरम्भ भेल। जल्दीए सम्पन्नो भऽ गेल। 'द्विरागमन' हमरे पर सौंपि देल गेल।

पटनामे हमर घर पर गोष्ठी चलितहि रहल। मैथिलक जुटानक केन्द्र भऽ गेल। हरिमोहन बाबूसँ तँ हम अभिन्न जेकाँ भऽ गेलहुँ। एक-दोसरक जीवन-अनुभव पर चर्चा होइत रहल। हरिमोहन बाबूक दिव्य मस्तिष्कसँ एक-पर-एक हास्य-व्यंग्य कथा, अनुभव पर आश्रित, निकलय लागल। ओ पढ़ि कय सुनाबथि, हम मग्न भऽ जाइ। फेर ओहीपर गप्प चलय, विनोद होअय। प्रथम संकलन प्रकाशित भेल 'प्रणम्य देवता'। एहि कथा-संग्रहक सब पात्र सत्य छथि। नाम बदलल; कथासार सत्य आ बूझल। भोगल सेहो। सभक रूप प्रणम्ये। मिथिलामे, देशमे बाढ़ि आबि गेल। लोक संग्रह लऽ कऽ नाचय लागल। तकरा बाद तँ ढेर लागि गेल—रंगशाला, खट्टरककाक तरंग, आदि-आदि। एकर असरि लोकमे, मिथिलाक गाम घरमे बड़ बढ़ियाँ पड़ल। एतबे नहि, मैथिलीक कथाकार, कविलोकनि सेहो अनुभव करऽ लगलाह जे मैथिलीमे आधुनिक बोधक रचना करबाक चाही,

लोक पढ़ैत छैक, किताब बिकाइत छैक। मैथिली साहित्यमे नव दृष्टिक जागरण भेल। एकटा युगक प्रारम्भ भेल।

हरिमोहन बाबू हमरा परिवारक लोक बनि गेलाह। हमरा संग कतेको ठाम घुमलाह। हमर गामो पर बहुत बेर गेलाह। एकबेर ओहि ठाम हुनका श्री गंगानाथ झासँ भेंट करबाक इच्छा भेलनि। कहलनि 'आइ हम 'पनका' जायब।' आइसँ पैंतीस बरख पूर्वक बात थिक। बरसातक समय। सड़क नहि। चम्पानगरसँ पनकाक बीचमे कोशीक धार। हम असमर्थता देखौलियनि। परन्तु हुनका पर तकर कोनो प्रभाव नहि पड़ल। कहलन्हि—"गंगा बाबू महावैयाकरण पं० दीनबन्धु झाक परिवारक छथि। एते लग आबि गेला पर हुनका सँ भेंट कयने बिना जयबाक इच्छा नहि होइत अछि। हम जयबे करब।" हुनका हम हाथी पर चढ़ा विदा कयलहुँ। ओ गेलाह। दस बजे रातिमे, भिजैत, गंगाबाबूक संग आपस अयलाह। देरी होयबाक बात पुछलियनि तऽ कहलनि—"गंगाबाबू तैयार नहि छलाह। हुनके तैयारी मे देरी भेल। संगहि लेने अयलियनि अछि। जावत हम चम्पानगर रहब, हिनक संग सँ लाभ उठायब।" हाथी पर चढ़बाक अनुभव दोसर दिन एक कवितामे परिणत भेल।

एक दिन हम सब एकटा चाय-पार्टी मे गेलहुँ। भोजनक प्रसंगमे हरिमोहन बाबूक धारणा छनि जे खाइ तँ प्रेमसँ, पुष्ट रूपेँ। परन्तु, आइ-काल्हुक चाय-पार्टीमे एकर संभावना नहि। हरिमोहन बाबू कँ बड़ निराशा भेलनि। हमरे घरमे बैसि एकटा सुन्दर, रोचक कविता लिखलनि। ओकर पाठो भेल गोष्ठीमे। बादमे प्रकाशित भेल।

लगभग पचास वर्षसँ संगति अछि हरिमोहन बाबूक। ई संगति हमरा पर गंभीर प्रभाव छोड़लक अछि। हमर तँ साक्षात गुरु थिकाह। आइ हम जे किछु छी ताहिमे हुनक दृश्य वा अदृश्य हाथ अछि। दर्शनशास्त्र, काव्यशास्त्र, कथा वा कविता - जाहीमे रुचि जाइत छनि, उत्तम रचना भऽ जाइत अछि। अलौकिक प्रतिभा। बुद्धिक भंडार। मार्ग-दर्शक—साहित्य आ व्यक्ति दुनूक हेतु। हिनका सम्बन्धमे हम कतेक कहू ? हम अपन विद्यादाता गुरुक अभिनन्दन करैत छी।

●

गुणिनि गुणज्ञो रमते

डा० मदनेश्वर मिश्र

भेल अछि।
आदरणीय श्री हरिमोहन बाबूसँ साक्षात्कारक सौभाग्य हमरा कम्मे बेर
परन्तु हुनकामे कोनो एहन गुण, एहन आकर्षण-शक्ति छनि जाहिसँ हमरा लगैत अछि जेना ओ युग-
युग सँ हमर परम अन्तरंग रहल होथि। १९३४-३५ ई०क बात थिक, जहिया हम कलानन्द विद्यालय,
गढ़ बनैली स्कूलमे पढ़ैत रही। हमरा ओतय एक सम्बन्धी आयल रहथि जे अपना संग एक पोथी
अनने रहथि। हम कुतूहलवश हुनक ओ पोथी कलवल उठा लेल आ एकान्तमे तन्मय भ' पढ़य
लगलहुँ। किछु घंटाक बाद अतिथिकेँ ओहि पोथीक सुधि भेलनि तँ औना पथागी होअय लागल। ता
हम ओ पोथी समाप्त क' चुकल छलहुँ आ स्वयं आबि अतिथि महाशयकेँ द' देलियनि। ई पोथी
छल प्रो० हरिमोहन झाक 'कन्यादान'। तकरा बाद ई पोथी हमरा ओहि ठाम की स्त्री, की पुरुष सभ केओ
खूब आनन्दसँ पढ़लक। आ, तहियासँ बहुत दिन धरि ओ उपन्यास, ओकर पात्र तथा घटना सभ
हमरा घरमे चर्चाक रोचक विषय रहल। हमरा लोकनिक घर मिथिलाक पुबारि पारमे एकदम सिमान
पर पड़ैत अछि। ओम्हर तहिया धरि मैथिलीक कोनो गद्य-साहित्य कदाचिते पहुँचैत छलैक। हम
अपना जीवनमे पहिले-पहिल जे मैथिलीक पोथी पढ़ल से छल इएह कन्यादान, आ से पहिल छाप
होयबाक कारणे तथा अपन असाधारण रोचकताक कारणेँ हमरा आइ धरि पाँतीक-पाँती स्मरण अछि।
बनैली राज्यक शाखा श्रीनगर ओ चम्पानगर हमर घरसँ थोड़बे दूर पड़ैत अछि। एतय
जनार्दन झा 'जनसीदन' नामक ख्यातनामा पण्डित रहैत छलाह। से, जखन ज्ञात भेल जे एहि कन्यादान
उपन्यासक लेखक ओही पण्डितजीक बालक थिकाह तँ श्री हरिमोहन बाबूक प्रति अन्तरंगता आओर
बढ़ि गेल, एहन लागल जेना ओहो हमरे जबारीक लोक होथि।
बादमे हम अपन अर्थशास्त्रक अध्ययन-अध्यापन मे दीर्घकाल धरि तेना मग्न रहलहुँ जे कुतूहल
रहलहु पर श्री हरिमोहन बाबूसँ साक्षात्कारक सौभाग्य नहि प्राप्त भ' सकल। मुदा एहि अवधिमे
हुनक ख्याति सुनैत रहलहुँ ओ समय-समयपर हुनक रचना सभ सेहो पढ़ैत रहलहुँ। एक दिन डा०
माहेश्वरी सिंह 'महेश', जे टी०एन०जे० कॉलेज, भागलपुरमे हमर अध्यापक छलाह, गप्पक प्रसंगे कहने
रहथि जे हरिमोहन बाबू आरम्भहिसँ परम मेधावी ओ प्रतिभा सम्पन्न छलाह, ओ जहिया छात्रे रहथि,
हिन्दीमे एकगोट हुनक कथा 'माधुरी' नामक पत्रिकामे प्रकाशित भेल छल आ ताहीसँ विज्ञजनकेँ ई आभास
भेटि चुकल छलनि जे भविष्यमे ई उत्कृष्ट कोटिक साहित्यकार होयताह। काल बितैत गेल आ
श्री हरिमोहन बाबूक साक्षात्कारक लालसा हमरा मनमे बढ़ैत गेल।

१९७२ ई०मे ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालयक स्थापना भेल।' हम तकर प्रथम कुलपति भ' दरभंगा अयलहुँ। एकर किछुए दिनक बाद एक दिन श्री हरिमोहन बाबू सौभाग्यसँ स्वयं हमरा ओतय पहुँचि गेलाह। हुनका हमर भेंट करबाक कोनो प्रयोजन नहि छलनि। हम बुझैत छी जे ओ जेना विशेष क' हमरा आशीर्वाद देबय आयल रहथि। हुनक सौजन्यपूर्ण दर्शन पाबि हम कृतार्थ भेलहुँ। हुनकासँ वार्तालाप चलिए रहल छल कि सेन्ट्रल बैंकक एक अधिकारी पहुँचलाह। विश्वविद्यालय-परिसरमे ओहि दिन सेन्ट्रल बैंकक शाखाक उद्घाटन होयबाक छलैक। ओ अधिकारी हमरासँ अनुरोध कयलनि जे हम ओकर उद्घाटन करबाक हेतु चली जे पहिनहिसँ निश्चित छल। हम हुनका श्री हरिमोहन बाबूसँ परिचय करओलियनि आ अनुरोध कयलियनि जे सौभाग्यवश श्री हरिमोहन बाबू सन महान् व्यक्ति उपस्थित छथि, तेँ हिनकहिसँ उद्घाटन कराओल जाय। अधिकारी असमंजसमे पड़ि गेलाह। ओ कहलनि, निमन्त्रण पत्रमे अपनेक नाम छपि चुकल अछि, अतः एहिमे परिवर्तन करब कोनाकेँ होयत। हमरा एक बात फुरा गेल। हम कहलियनि, "आ जँ हम अनुपस्थित रहि जाइ तखन तँ दोसर व्यक्ति उद्घाटन करबे करताह।" ओ बेचारे परास्त भ' गेलाह। हम हुनका आश्वस्त करैत कहलियनि, "अपनेक एहि शाखाक उद्घाटन यदि हिनका सन दिग्गज विद्वान ओ महान् व्यक्तिक करकमलसँ होयत तँ से अहाँक बैंकक हेतु गौरवक विषय होयतैक।" ओ हमर बात मानि चल गेलाह, मुदा हुनक मुखाकृतिसँ लागल जेना ओहि उद्घाटन-समारोहमे हम नहि रहबनि, तज्जन्य हुनका किछु खेद रहि जयतनि। समारोह भेल। श्री हरिमोहन बाबूक संग हमहूँ उपस्थित भेलहुँ। आयोजक लोकनि तथा आमंत्रित विशिष्टवर्ग सभ परम प्रसन्न भेलाह। पूर्वमे सुनैत रही, मुदा आइ प्रत्यक्ष देखल, जाहि समारोहमे हरिमोहन बाबूक पदार्पण होइत अछि ततय अमृत-वर्षण होअय लगैत अछि। आतिथ्यमे जे फल-फूल परसल गेलैक से हरिमोहन बाबू स्वयं नहि खाय एक बच्चाकेँ, जे हुनक संगमे गेल छलनि, दिया देलथिन। बच्चाक बड़ स्नेह छनि हिनका। एहि तरहेँ हमरा श्री हरिमोहन बाबूक दर्शनक मनोरथ पूरल।

तकर लगभग दस वर्षक बाद हम मैथिली अकादमीक अध्यक्षक पदभार ग्रहण कयलहुँ। अकादमीक कार्यक संग-संग बिहार सरकारक ग्रामीण विकास विभागक कार्य सेहो माथपर रहबाक कारणेँ समयाभाव रहैत अछि। एकदिन श्री हरिमोहन बाबूक ओतय जाय हुनकासँ भेंट करी, तकर तेयार करितहिं छलहुँ कि सहसा हुनक धर्मपत्नी श्रीमती सुभद्रा झाक आकस्मिक निधनक समाचार आयल। तुरन्त इष्टमित्रक संग हुनक आवासपर गेलहुँ। जेहने आनन्दक अवस्थामे दरभंगामे हुनक प्रथम दर्शन भेल रहय, तेहने विषादक अवस्थामे आइ द्वितीय दर्शन भेल। एक महान् दार्शनिक आइ सभ दर्शन बिसरि सांसारिक पीड़ाक पालामे गलल जा रहल छलाह। तथापि ओ हमरा देखि किछु सम्भ्रान्त ओ साकांक्ष भेलाह। हुनका सान्त्वना द' इष्टमित्रक संग श्मशान घाट गेलहुँ आ हुनक सहधर्मिणी ओहि सौभाग्यवती आदर्श मैथिल महिलाकेँ अन्तिम पुष्पांजलि देलहुँ।

एहि प्रकारेँ लगैत अछि जे हम श्री हरिमोहन बाबूक निकटसँ निकटतर होइत गेलहुँ अछि। आब एतबे कामना अछि जे ओ तनसँ स्वस्थ आ मनसँ प्रसन्न रहैत शतायु होथि तथा समाजक शोभा बढ़बैत रहथि।

श्री हरिमोहन बाबू : अनुपम व्यक्तित्व

प्रो० आनन्द मिश्र

श्री हरिमोहन बाबूकें हम कहिआसें जनैत छिऐन्हि से कहब कठिन। प्रायः जहिआ मिडिलमे पढ़ैत रही तहिए सँ हुनक नामसँ परिचित छी। मिडिल स्कूलमे छलहुँ तँ हुनक 'कन्यादान' प्रकाशित भेलैन्हि। स्कूलक हेड पण्डितजी ओकरा पढ़थि आ अपन समानकर्मी सँ ओकर चर्चा करथि। हमरो लोकनिमे ओहि पोथीक पढ़बाक उत्कण्ठा जागल, किन्तु ताहि दिन बिना गुरुक आज्ञा सँ कोनो पोथी पुस्तकालय सँ लए पढ़ब निषेध छल। संयोगसँ हमर एक पिउसि लग ओ पोथी छल आओर हुनकें कृपा सँ हम ओकरा पढ़ल तथा तहिए सँ ओकर रचयिताक प्रति उत्सुक भए गेलहुँ।

श्री हरिमोहन बाबूकें देखबाक अवसर प्रायः दरभंगामे पहिलेपहिल १९३८ ई०मे भेल जतए मैथिली-साहित्य-परिषदक अधिवेशनमे ओ अपन कोनो रचना पढ़ने छलाह तथा ओहिसँ श्रोता-वर्ग परम आह्लादित भेल छल। हमरो अपन उत्सुकता शान्त करबाक अवसर भेटल हुनका देखि कए। पहिल बेरि जखन प्रायः १९४४ ई०मे पटना कॉलेजक मैथिली-साहित्य-परिषदमे विद्यापतिक एकटा गीत गओलापर हमरा हुनक प्रोत्साहन भेटल तँ हम एक ख्यातिलब्ध साहित्यकार सँ परिचय कए कृतकृत्य भए गेलहुँ। ताहि समयमे हम चन्द्रधारी मिथिला कॉलेजक छात्र रही तथा अपन मित्र श्री चेतकर झाक आग्रह पर परिषदक कार्यक्रममे भाग लेबाक हेतु दरभंगासँ आएल रही।

उत्तरोत्तर श्री हरिमोहन बाबूसँ परिचय बढ़ैत गेल आ हम हुनका प्रति आकृष्ट होइत गेलहुँ—हुनक व्यवहारसँ, हुनक प्रत्युत्पन्नमतित्वसँ, हुनक स्नेहसँ एवं हुनक हास्य-प्रिय स्वभावसँ।

जखन हम एम० ए० मे पटना कॉलेजक अर्थशास्त्र विभागक छात्र रही तँ कॉलेजक मैथिली साहित्य-परिषदक एकटा अधिवेशन रहैक। परिषदक स्थायी सभापति रहथि डा० सुधाकर झा 'शास्त्री'। सभामे गीत गएबाक हेतु हमरा पूर्वहिसँ आग्रह छल। श्री हरिमोहन बाबू हमरा कहलैन्हि जे विद्यापतिक 'सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल दाता' गीत गाबी। डाक्टर साहेबकें एहि गीतक द्वितीय पंक्ति 'रति विपरीत समर जदि राखबि' पर आपत्ति छलैन्हि। श्री हरिमोहन बाबू सहज भावें कहलथिन्ह—कोनो क्षति नहि, 'मति विपरीत' कएलासँ काज चलि जाएत।

एहिना बड़हगोड़िआ मे मैथिली-साहित्य-परिषदक वार्षिक अधिवेशन छलैक। मैथिली साहित्यक वरेण्य साहित्यकार लोकनि ओतए गेल छलाह। सभामे श्री हरिमोहन बाबू 'खट्टरककाक तरंग'क 'रामायण' पढ़ब प्रारम्भ कएल। श्री हरिमोहन बाबू अपन सरस ढंगसँ रचना पढ़ि रहल छलाह तथा सभामे बैसल लोक ओकर रसपान कए रहल छल। एकाएक महावैयाकरण दीनबन्धुझा उठिकें

किछु प्रतिवाद कएलथिन्ह तथा श्री हरिमोहन बाबू सँ अपन रचना पढ़ब बन्द करबाक आग्रह कएलथिन्ह। श्री हरिमोहन बाबू आदरपूर्वक महावैयाकरणजीसँ आग्रह कएल जे ओ एहि रचनाकेँ आद्यन्त सुनि लेथि। महावैयाकरणजी रामचन्द्रक प्रति एहि प्रकारक 'हँसी-ठट्ठा'क गप सुनबाक हेतु प्रस्तुत नहि छलाह। सभ 'हाँ' 'हाँ' करितहि रहल, महावैयाकरणजी सभा छोड़ि चल गेलाह। रचना समाप्त भेला पर श्री हरिमोहन बाबू अपन पिताक बन्धु महावैयाकरणजीक 'टेन्ट'मे गेलाह तथा हुनका प्रणाम कएल। पश्चात् जखन महावैयाकरणजी बूझल जे उक्त रचना मे रामक निन्दा नहि अभिप्रेत छल, ओ तँ सासुरक चोल छल तँ गद्-गद भए गेलाह।

श्री हरिमोहन बाबू असल दार्शनिक, ताहि संग सुच्चा साहित्यिक। अपूर्व संयोग। दार्शनिक होएबाक कारणेँ आ बेसी काल अन्यमनस्क जेकाँ सेहो रहैत छथि तथा साहित्यिक होएबाक कारणेँ चौकन्ना सेहो। एक बेरक गप्प थिक। अजमेरक प्रवासी मैथिल लोकनि एकटा त्रिदिवसीय सम्मेलनक आयोजन कएल। अध्यक्षक हेतु कुमार गंगानन्द सिंह (तत्कालीन शिक्षामन्त्री, बिहार) केँ आग्रह कएल गेल तथा ओ मानि लेल। स्व० रघुनाथ मिश्र पुरोहितक अनन्यमित्र स्व० लक्ष्मीपति सिंह (बाबू साहेब) एहि दिसक लोकक समीर कएल। श्री हरिमोहन बाबू, हम, श्री ब्रह्मदेव नारायण सिंह (सम्प्रति आकाशवाणी, पटना) तथा श्री जितेन्द्रनारायण झा ('प्रतिबिम्ब'क संपादक) सभ गोटए एतएसँ अजमेर गेलहुँ। ओम्हरसँ म०म० डा० उमेश मिश्र दू-तीन गोटएसँ आएल छलाह।

अजमेर मे श्री हरिमोहन बाबू हमरे दलमे रहलाह, स्टेशनक समीप एकटा धर्मशालामे। आयोजक लोकनि हमरालोकनिक सुविधाक पूर्ण ध्यान रखने छलाह। भोजनमे स्वतंत्रता छलैक, जकरा जेना सुविधा घरए से तेना खाथि। हमरा दलमे श्री हरिमोहन बाबू भात-दालि खएबाक इच्छा प्रकट कएल। पुरोहितजी हुनका हेतु अपनहि डेरासँ भोजन बनवाए पठएबाक व्यवस्था कएल। हमरा-लोकनि दोकानहिमे भोजन करबाक निर्णय लेल।

आठ बजे राति जखन हमरालोकनि भोजन कए फिरलहुँ तँ देखल जे हरिमोहन बाबू मुँह झँपने घोकड़ी लगओने, तीनी ओढ़ि बैसल छथि। आहट पबितहि मुँह उघारलैन्हि तँ हमरालोकनिकेँ देखि टोकलैन्हि—'ओ! अहाँ लोकनि तँ पाबि अएलहुँ, हमर तँ निपत्ता अछि।' बूढ़ लोक, भूख जोर कएने; बूझि पड़ल जे हरिमोहन बाबू किछु खिसिआए गेल छथि। किछु बोल भरोस देलिऐन्हि जे पुरोहितजीक डेरा दूर छैन्हि, अएबामे तँ विलम्ब भेल छैक, अबितहि होएत, आदि। हरिमोहन बाबू किछुकाल प्रतीक्षा कए मुँह झाँपि पड़ि रहलाह। हमरोलोकनि पड़ि रहलहुँ। सभ निश्शब्द। तावत् किछु खटखुट भेलैक। हरिमोहन बाबू एक तँ भूखसँ व्याकुल ताहि पर ओङ्घाएल, धड़फड़ाएकेँ उठलाह तँ देखल जे एक व्यक्ति एकटा लोटा रखलक अछि तथा 'टिफिन कैरिअर' राखि झगले बाहर गेल अछि।

भूखक ज्वाला सहन करब बड़ कठिन। ओकर फिरबाक प्रतीक्षा बिना कएनहि हरिमोहन बाबू 'टिफिन कैरिअर' खोलल आ लोटा लए हाथ-पएर धोवए लगलाह। पएर धोएल, कुड़ुर करितहि ओ गुम्हड़ि उठलाह आ विशुद्ध मैथिली मे ओहि व्यक्तिकेँ फज्झति करब प्रारम्भ कएलैन्हि। ओ बेचारा 'अजमेरी', मैथिली जनैत नहि, बुझैत नहि, अधबीक जकाँ ठाढ़ रहल। हमरालोकनि किछु काल तँ मुँह झँपने रहलहुँ पश्चात्, गप्प बुझबाक उत्सुकतासँ जखन हरिमोहन बाबूकेँ पूछलिऐन्हि तँ ज्ञात

भेल जे लोटाक दालिसँ ओ हाथ-पएर धो लेलैन्हि, आब अगबीक तरकारी संग छुच्छ भात कोना खएताह !

अन्यमनस्कतामे ई घटना घटित भए गेलैक। कद्दुनाकेँ दही-मधुरक संग पंचग्रास कएलैन्हि। कहबाक ई जे अपन दैनिक कार्यहुमे ओ किछु तेहन कए दैत छथिन्ह जे हास्यक उदय भए जाइत छैक।

हरिमोहन बाबूक चरित-नायक 'खट्टरकका'—गणेश एवं गोनूक सन्तान। हरिमोहन बाबूक जीवन ओ रचना दुहूठाम एहि दूनू गोटाक समावेश। एक दिसि अकाट्य तर्क तँ दोसर दिसि हास्यक स्रोत। ताहूमे हिनक चरित-नायक विजयाक प्रेमी। जेम्हरे झुकि गेलाह, जकरे दिसि तकलैन्हि तकरे रेड़िकेँ बकेन पिआए दैत छथिन्ह।

खट्टर ककाक जीवन मे रसक संख्या दू मात्र—भोजन ओ गप्प। हरिमोहन बाबूक रचनाक उत्तम अंश ओ जतए एहि दूनूक समावेश समुचित रूपेँ। मैथिली साहित्यमे हास्य, एवं व्यंग्यक हेतु पूजित म०म० मुरलीधर झा। स्व० ईशनाथ झा लिखलैन्हि—'हास्य व्यंग्य विनोद हेतुक धएल ! कर मुरली विलक्षण'। मुरलीधर झा जहिना अपन हास्य व्यंग्यपूर्ण शैलीसँ मैथिली साहित्यकेँ अनुप्राणित कएल तहिना श्री हरिमोहन बाबू अपन मातृभाषाक भण्डारकेँ समृद्ध कएलैन्हि अछि।

माँ मैथिलीसँ प्रार्थना जे श्री हरिमोहन बाबूकेँ चिरायु बनाबथु जाहिसँ हमरालोकनिकेँ नित्य हुनक नवीन रचनाक आस्वादनक अवसर भेटैत रहए।

●

हरि-स्मरणम्

श्री मणिपद्म

घरमे ओहि दिन एकटा सुखद सिहकी अयलै। आ, हँसीक सिगरहार अहरय लगलै। बात ई जे स्व० भोला बाबू द्वारा सम्पादित 'मिथिला' मासिकक फाइल लेने केओ एकटा अतिथि अयलाह आ ओ फाइल हमरा सबकें पढ़बाक हेतु छोड़ि गेलाह।

परिवार छल मैगजीनगरस्त। एहि मैथिली भाषाक मैगजीनक पहिल प्रतिक्रिया ई भेलजे टाट-परक लत्ती सबसँ सोहांस (खीरा) तोड़ि कय आनक हेतु फुलमतिया (टहलनी)कें कहल गेलै। मिथिलाक एकटा अंकमे खीराक तीमन बनबैक विधि छलैक। सबसँ रोचक बात ई छलैक जे मातृभाषाक मैगजीन हम सब पहिले-पहिल बाँचि रहल छलहुँ। घर भरिक लोक एकटा आन्तरिक आह्लादक संग गोठिया गेल।

बजरि गेलैक स्वनामधन्य श्री हरिमोहन बाबू लिखित 'कन्यादान'। एक-एक पात्र जेना सप्राण भऽ उठलैक। ठहाका पर ठहाका गूँजइ -- "ढुनमुन काकी धुस्स दऽ खसली।"

ढुनमुन काकी कहितहि हमरा आँखिक सोझांमे एक भरदुलाहि, भुट्ट आ मोट-सोट नारीक चित्र स्पष्ट भऽ आयल। बिम्ब तेहने। प्रत्येक चरित्र मात्र नाम सँ स्पष्ट भऽ उठैत।

भाषा तेहने जेना महिसिक गढ़गर दूधमे पाल परक सपेता मालदहक रस गारल हो। पहिले-पहिल हमरा साहित्यमे अपन समाज, चिन्हल लोक आ भोगल वातावरण भेटल। पहिने आन भाषाक साहित्यमे जं अपन परिवेश सन परिवेश भेटय तँ मगन भऽ उठैत छलहुँ, किन्तु 'कन्यादान' तँ अगबे अपना आँगन-घरक व्यवस्था छल।

किन्तु, 'कन्यादान'क बादक उपन्यास अथवा उत्तरार्ध कही ओहने कृत्रिम भऽ गेल जेना बंकिमचन्द्रक 'कपालकुंडला'क पूरक उपन्यास 'हिरण्मयी'। एकर उपरान्त हरिमोहन बाबूउपन्यासक पथ छोड़ि एकटा नव मोड़ लेलनि।

हुनकर पंडिताउ व्यक्तित्व, मिथिलाक परम्परागत 'गप्प' विधाकें साहित्यमे स्थापित कयलक। 'खट्टर ककाक तरंग'क रूपमे ई विधा एतेक सशक्त आ सुरुचिपूर्ण रहल जे समस्त भारतीय भाषा सबहिक साहित्य एहि विधामे मैथिली साहित्यसँ पछुआ गेल। हमर विश्वास अछि जे एहि विधा द्वारा हरिमोहन बाबू विश्वक हास्य-साहित्यमे वैह स्थान प्राप्त कयलनि जे स्थान अंग्रेजी साहित्यकार एच०जी० गार्डीनर अर्थात् 'अल्फा आफ दी प्लाउ'क छनि।

एहन व्यक्तित्वसँ साक्षात्कारक लालसा बलवती भय उठल। अवसर भेटल सहरसाक एकटा आयोजनमे। यद्यपि मंच पर लगे-लग छलहुँ, तथापि औपचारिक परिचयक अतिरिक्त कोनो

गप्प नहि बढ़ि सकल। हमर भाषण कने देरी नमरि गेलैक आ पैंतालिस मिनटमे समाप्त भेलैक। हर्षध्वनिक बीच बैसय जा रहल छलहुँ कि हरिमोहन बाबू उठि मय पाँजमे भरि लेलनि।

बैसलहुँ तँ चलि पड़ल गप्प, गपाष्टक आ गगाड़ा। 'मिथिलादर्पण'मे हमर एकटा रचना प्रकाशित भेल छल। ओहिमे बागुन पाड़ाकेँ बाभन पाड़ा लिखि देल गेल छलैक; ताहि पर हरिमोहन बाबू बड़े हँसलाह।

हमर पहिल मैथिली उपन्यास "विद्यापति" प्रकाशित भेल। हरिमोहन बाबूकेँ तकर एक प्रति पठा देलियनि। चोट्टहि सातम दिन जे प्रतिक्रिया प्राप्त भेल से हमरा लेखनीक हेतु संबल बनि गेल। पोस्ट कार्डमे छल —"दिल्ली आबैं काल एक्के बेरमे विद्यापति पढ़ि गेलहुँ। संक्षेपमे, विद्यापति जे मिथिला लेल कयलनि से अहाँ हुनका लेल कयलहुँ।" हम एहि पत्रकेँ एकटा मनीषीक आशीषक रूपमे राखि लेल।

अगिला भेँट बड़ उच्च कोटिक रहल। केन्द्रीय सरकारक दिससँ कलकत्तामे एकटा अखिल भारतीय भाषा कान्फ्रेन्स बजाओल गेलैक। तत्कालीन उपराष्ट्रपति राधाकृष्णन, प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू आ अन्यान्य मंत्रीगणक सम्मिलित होयबाक घोषणा छल। संचालक छलाह हुमायूँ कबीर, तत्कालीन संस्कृति-मन्त्री।

श्री बाबू साहेब चौधरी प्रभावशाली लोक। ओ डाक्टर सुकुमार सेन, सुनीति बाबू आ कबीर साहेबक ओहिठाम जोर लगाकय मैथिली भाषाक हेतु स्थान सिरजि लेलनि। तदनुसार मैथिली-प्रतिनिधित्वक हेतु डा० लक्ष्मण झा, प्रो० हरिमोहन झा आ हमरा पत्र भेटल।

सर्वाधिक विलम्बसँ हमरे पत्र भेटल आ हम जखन कलकत्ताक महाजाति-सदन अयलहुँ तँ हौल ठसाठस भरल छल। ब्रिटेन, रूस, जरमनी आ अमेरिकाक सांस्कृतिक अतिथि सेहो छलाह।

दू-तीन टा स्वयंसेविका हमरा पत्रानुसार संख्याक कुर्सी पर पहुँचा देलनि। हरिमोहन बाबूक पार्श्वक चेयर पर एकटा बेस गरिमा-मंडित महिला मैथिलानी मुद्रामे बैसलि। हम चोट्टहि बूझि गेलहुँ जे हिनका मुख-मंडल परसँ जँ तीस बरख टारि देल जाय तँ ई 'कन्यादान'क प्रशस्त नायिका 'बुच्ची दाइ' बनि जैतीह।

दोसर दिन भारतक प्रधानमन्त्री पंडित जवाहर लाल नेहरू मंच पर उपस्थित छलाह। तखनहि मैथिलीक प्रतिनिधिक नाम घोषित भेल। समय दस मिनटक। भाषा-माध्यम अंग्रेजी। श्री हरि-मोहन बाबू राजनैतिक कारणे नहि बजलाह। हम मंच पर अयलहुँ तँ सम्बोधन कयल—'आनरेबल चेयर मैन एण्ड द टार्च बियरर्स आफ इण्डिया, आइ हैव कम टू दी गोल्डन लैन्ड आफ बंकिम, टैगोर एण्ड शरत ह्विच वाज सो मच टू आवर ग्रेट पोयट विद्यापति, टू डिक्लेयर दैट आवर मदर टंग मैथिली इज वन् आफ द मोस्ट अनसिएन्ट लैंग्वेजेज आफ इन्डिया सो परफेक्ट एण्ड सेरेन दैट इट फर्स्ट इन्फ्लुएन्स्ड द होल नार्थ इन्डिया फौर द डेवलपमेन्ट आफ वैष्णव लिटरेचर।'

तालीसँ हाल गुंजैत रहल आ पैंतालिस मिनट धरि भाषण चलैत रहल। पिठिया ठोंक पंडित नेहरू भाषण देबा लेल उठलाह आ बजलाह —'नो वन कैन वाइप आउट ए लैंग्वेज। फौर

मैं कहता हूँ कि उस जन्म की आत्मा आती है और जीवन भर के लिये रह जाती है।"
(विपुल हर्षध्वनि)।

हिन्दीक झंडा उड़बैत, क्षेत्रीय भाषाकें गोसरैत अफरैत, आ डेकरैत सेठ गोविन्द दास एकबेर गोविन्द मित्र रोड, पुस्तक भंडार, पटनामे आबि धुमला। हुनका दहकड़ लेल एकटा आयोजन कयल गेल। बड़का-बड़का दस्तार आ कल्ला-दराध सब निमन्त्रित छलाह। ता मास्टर साहेब (स्वर्गीय रामलोचन शरण जी) जीविते रहथि। ओ मैथिलीक परम भक्त। हुनका मैथिलीक ई विरोध सह्य नहि छलनि। किन्तु हिन्दी पोथीक प्रकाशक होयबाक कारणें ओ चुप छलाह। प्रबल इच्छा छलनि जे सेठजीकें जबाब भेटौन।

हम एकटा रेडियो प्रसारणक क्रममे पटना गेल छलहुँ। हरिमोहन बाबूक दर्शनार्थ हुनका ओहिठाम प्रोफेसर्स क्वाटरमे गेलहुँ। हरिमोहन बाबू उत्फुल्ल भऽ उठलाह—"बड़ बेर पर एलौं, एह, एह। ओ फोन उठा कऽ मास्टर साहेबसँ कहलथिन—"मणिपद्म जी छथि।"

मास्टर साहेब कहलनि—"अहाँकें नोत दैत छी। सेठ गोविन्द दासजीक सम्मानमे भोज छैक। सेठजी मैथिलीक विरोधमे बजबे करताह। मैथिलीक दिस सँ......।"

"आबि रहल छी। किन्तु हमर बाजब अहाँकें केहन लागत ?"

मास्टर साहेबक स्वर दृढ़ भऽ गेलनि—"आउ, अहाँकें मा मैथिली बजा लेलनि अछि।"

आदरणीय विश्वमोहन बाबूकें संग करैत हम आ हरिमोहन बाबू भोजघरा आबि गेलहुँ। हाथी छलै, घोड़ा छलै आ नाच बला छौंड़ा छलै। दिनकर जी हमरा (मैथिली बलाकें) देखि चिहुँकला—"भाई, बड़े ही मान्य अतिथि आये हैं, जरा सम्मान का ख्याल रहे।"

"जरूर, जरूर।" हम कहलियनि—"बशर्त्ते आनरेबल अतिथि दुलत्ती नहि झाड़थि।"

तय रहल जे पहिने भाषण हो तखन भोजन। अपना भाषणक क्रममे सेठजी गहदियेला—"हिन्दी के लिये राजस्थानी वालों ने त्याग किया, बुँदेलखंडी वालों ने त्याग किया, भोजपुरी, मगही अवधी और ब्रजभाषा वालों ने त्याग किया, किन्तु ये मैथिली वाले हैं जो डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग से पका रहे हैं।"

हम अपन भाषण मे कहलियनि—"हिन्दी गंगा छथि, किन्तु बिना क्षेत्रीय भाषाक सम्पोषणक ओ ओहिना सूखि जैती जेना यमुना, सरयू, नारायणी, कोशी, कमला, ब्रह्मपुत्र आ पद्माक जल बिना गंगा। स्वतन्त्र भारतक ई एकटा लज्जाजनक प्रक्रिया भेल, जाहिमे मीरा, सूर, तुलसी, कबीर, सुजाता आ विद्यापतिक भाषाकें समाप्त करक साजिश चलि रहल अछि। स्मरण राखू जे भारतक ई महान् भाषा सब लोकशक्तिक अमृत पीने छैक। एकरा मुगल आ अंग्रेज नहि समाप्त कऽ सकल आ लाख गोविन्द दासजी एकरा सबकें नहि गीड़ि सकताह। हँ, ई धरि हम अवश्य कहब जे सेठजी अपना मीरा माइकें मरइ लेल रेगिस्तानमे फेंकि देलनि तँ फेंकि देथु, किन्तु हमरा सबहिक विद्यापति मैथिल-मैथिली पुष्पाञ्जलि पाबि जीवित आ जाग्रत छथि। मैथिली सीतादाइक सोहाग सन अचल छैक आ रहतैक। सेठजी जँ मैथिलीकें गीड़य एलाह अछि तँ एखनहुँ प्राण लऽ कऽ पड़ाथु......।"

हन्ड्रेड इयर्स व वार्स आफ रशा ट्राइड टू वाइप आउट द लैंग्वेज आफ टीनी पोलैन्ड बट दे फुल नॉट टू इट ।'

हुनकर भाषण एक घंटा धरि चलल जाहिमे ओ क्षेत्रीय भाषा सबहिक विकास पर जोर दैत रहलाह। "ई मैथिलीक विजय रहल।" मंच पर सँ उतरिते श्री हरिमोहन बाबू हमरा भरि पाँजमे भरैत, हमरा पर भारत महासागर एते स्नेह उच्छलित बाष्प अवरुद्ध कंठसँ कहलनि। तकर उपरान्त पन्द्रह दिन धरि हरिमोहन बाबू आ सुभद्राजीक अगाध प्रेममे अवगाहन करैत रहलहुँ– विभिन्न सभा आ गोष्ठी तथा भोज ओ चाहपानमे उमकैत।

वह निश्छल आ निर्मल लोक छथि हरिमोहन बाबू। मिथिला विश्वविद्यालयक दर्शन-परिषदमे हरिमोहन बाबू हमरा दिस ताकिकें कहलनि –अर्जुन आ कृष्ण फटाफटि अंग्रेजीमे वर्णैत छलाह। (गीताक संवाद दू विद्यार्थी द्वारा अंग्रेजीमे उपस्थित कयल गेल छलैक)

हम हँसलहुँ –"कृष्ण आक्सफोर्डी शैलीमे आ अर्जुन कैम्ब्रीज शैलीमे गड़गड़ाइत छलाह।" ठहाका गुंजैत रहल।

हमर तेसर पुत्री कुमकुम पौने चारि सालक वयसमे पूर्व जन्मक बात कहय लगलैक। ओकर बाहब दिन-प्रति-दिनक तारीखक क्रमे लिखल गेलैक। ई काशी राजक एकटा विशिष्ट अफसर आ हमर अभिन्न मित्र पंडित हरिश्चन्द्र मिश्र द्वारा श्री हरिमोहन बाबूक हाथमे गेलनि। ओ प्रेस कन्फ्रेन्स बजा कय एकर घोषणा कयल। एकर जाँच-पड़ताल प्रारम्भ भेल। कलकत्ता विश्वविद्यालयसँ पी० पाल एलाह। इलाहाबादसँ शिशु-मनोविज्ञान संस्थानसँ, जे० (यमुना) प्रसाद एलाह। अन्तमे एलीह अमेरिकाक वर्जीनिया विश्वविद्यालयक परा मनोविज्ञानक विशेषज्ञ डा० इयान स्टीविन्सन। डा० स्टीविन्सनक कुमकुमक सम्बन्धमे अमेरिकासँ सुप्रसिद्ध पोथी 'केसेज आफ टेन इनकारनेशन्स इन इन्डिया' प्रकाशित भेल।

श्री हरिमोहन बाबू अखिल भारतीय दर्शन सभा, मुजफ्फरपुर (लंगट सिंह कालेज) मे हमरा कुमकुमक संग निमन्त्रित कयलनि। सभाक अध्यक्ष छलाह हिन्दू विश्वविद्यालयक तत्कालीन वायस चान्सलर डा० भिक्खन राम। विषय छल "पुनर्जन्म"। डा० याकुब मसीह स्वागताध्यक्ष छलाह।

कतोक टोलीमे बाँटि कऽ दर्शनक विद्वान लोकनि प्रश्नावली प्रस्तुत कय जाँच-पड़ताल प्रारम्भ कयल। मसीह साहेब जानि-बूझिकऽ कुमकुमकें "जिन्न" सँ आक्रान्त होयबाक रिपोर्ट देल। विचार गोष्ठी मे रिपोर्ट सब पढ़ल गेल।

हरिमोहन बाबू मसीह साहेब कें थुरी-थुरी कय देल—"जिन्न हमेशा नहीं रहता है। आप मसीह साहेब यह भी नहीं बता सकते कि यहाँ आते समय आपकी बीबी के हाथ में कितनी चूड़ियाँ थीं, किन्तु कुमकुम उस जनम की बात इतने विस्तृत विवरणके साथ सुना रही है। आप आधे सत्य को कि स्प्रिट (जिन्न) आती है—स्वीकार करते है, किन्तु कहते हैं कि वह आ कर चली जाती है। किन्तु

छनमे छनाक भऽ गेलैक आ वातावरण मसान-मसान भऽ गेलैक। मैथिली-दिप्ति कुहेसकेँ फाड़ि देलकै। भोज जेना-तेना समाप्त भेल। हमरा आ हरिमोहन बाबूकेँ श्रद्धेय मास्टर साहेब बेर-बेर नर्मदेश्वर रसगुल्ला देल। सेठजीक गाड़ी अगाड़ी गेल आ मैथिली-गोष्ठी जमि कऽ बैसल।

हरिमोहन बाबू हमरा किछु लघु-कथा सुनबऽ कहलनि मास्टर साहेब केँ। हम हुनकासँ ओहि लघु-कथा गोष्ठीक उद्घाटन करब कहलियनि। ओ जे 'ईर्षा'क पृष्ठभूमिमे एकटा कथा सुनौलनि से विश्व साहित्यक स्तरक लघुकथा छल। ओ एना छल;

एकटा बाबू साहेबकेँ हरिमोहन बाबू एकटा फिल्म देखँ लेल चलैक हेतु अनुरोध केलथिन। बाबू साहेब जनौलथिन जे ओ कोनो फिल्म पन्द्रह मिनिट सँ बेसी नहि देखैत छथि।

कारण ?—हरिमोहन बाबू पुछलथिन।

बाबू साहेब उदास भऽ एलाह—नायिका जे नायकक आहि-पाहि आ लप्पो-चप्पो करऽ लगैत छैक से हमरा फूकि दैत अछि। ओत्तोरी के, हमरा अछैत ओकरा (नायकक) प्रति एहेन……।

बोधुं आ अहं आ ईर्ष्याक एहन उदाहरण भरिसक्के कतौ अन्तः भेटत।

हरिमोहन बाबू बड़ पैघ बिसरभोर लोक। एकबेर एकटा कान्फ्रेन्समे मंच पर चढ़ैत कहलनि—"अहा, मणिपद्म जी। कहिया एलौं, कुशल किने ?" भाषण समाप्त कऽ बैसलौं तँ पुछलनि—"कखन एलौं, सब निके किने ?" चलऽ लगलौं तँ बिदा लैत कहलनि—"अहा, मणिपद्म जी, सब निके किने।"

हम चोट्टहि उत्तर देलियनि—"आइ प्रातः काल एलौं। श्री हरिमोहन बाबूक संग मंच पर छलौं।"

ठहाकाक तोड़ चलैत रहल।

मैथिली साहित्यक रेनांसाक जनक हरिमोहन बाबूक अभिनन्दन करैत एकबेर कहलियनि—"अपने हजार साल जीवी।" तड़ाक दऽ ओ उत्तर देलनि—"आ हमरा अहाँसँ सब दिन एहिना भेँट होइत रहय।"

तोहि समान तोंही एक माधव

श्री बाबू साहेब चौधरी

सन १९४२ ई०क गप्प थिक। हम अपन गाम (दुलारपुर) मे एकटा पुस्तकालयक स्थापना कयल। प्रथम किस्तमे जे पोथी सभ आयल छल ताहीमे हरिमोहन बाबूक लिखल 'कन्यादान' सेहो छल। निश्चित रूपसँ कहैत छी जे ओहि सँ पहिने हम कोनो मैथिली पोथी नहि पढ़ने रही। इहो निःसंकोच कहैत छी जे ओहि समय धरि हमरा मैथिली लेल कोनो विशेष आग्रहो नहि छल। हिन्दीक नीक-नीक लेखकक उपन्यास, कथा संग्रह, नाटक आदि रहितहुँ जतेक पाठक द्वारा 'कन्यादान' पढ़ल गेल, दोसर पोथी नहि। मातृभाषा एवं हरिमोहन बाबूक कलमक जादूक अनुभव प्रथम-प्रथम भेल।

१९४३ ई०मे कलकत्ता अयलहुँ। १९४७ ई०क दिसम्बरमे 'मैथिली संघ'क सदस्य भेलहुँ। क्रमशः मैथिली दिस आकर्षण बढ़य लागल। १९५५ मे कलकत्ताक एक कार्यक्रममे प्रथम-प्रथम हरिमोहन बाबूसँ साक्षात् भेल। हावड़ा-स्टेशन पर स्वागतार्थ गेल रही। हिनक नाम-यश सुनि मोनमे जे एकटा काल्पनिक रूपरेखा छल तकर सम्पूर्ण विपरीत हिनका देखल। साधारण वेश-भूषामे छलाह। कलकत्ता छोड़ि अन्यत्रक प्राध्यापकगण धोती-कुर्त्ता पहिरब पसिन्न नहि करैत छथि, तेँ आओरो आश्चर्य लागल।

परिचय होइत देरी कहलनि जे हमरा अयबाक प्रधान उद्देश्य अछि एतुका दुनू संस्था (मैथिली संघ एवम् मिथिला लोक संघ)क एकीकरण करब। कलकत्ताक मैथिलीसेवी संस्थासँ मैथिली प्रेमी बड़ आशा रखैत अछि। अत्यधिक चेष्टा कयलाक बादो ई असफल रहलाह। हिनका सम्मानमे हम छोट-छिन भोजक आयोजन कयने रही। आओरो गप्प करबाक सुयोग भेटल, आकर्षण आओरो बढ़ल। लेखक हरिमोहन बाबू आ व्यक्ति हरिमोहन बाबूमे कोनो खास फरक नहि बुझना गेल।

१९५६ ई०मे 'मिथिला दर्शन'क ग्राहक-संग्रह करबालेल पटना गेलहुँ। आओरो समीपसँ अध्ययन कयल। पुनः एकीकरणक चर्चा कयलनि। हम आश्वासन देलियनि जे हमरा दिस सँ बाधा नहि होयत। अपनेक प्रयास सफल होयबे करत।

१९५७ ई०क २३ सँ २५ दिसम्बर धरि कलकत्तामे अ० भा० लेखक सम्मेलन छल। मिथिला लोक संघक प्रयाससँ मैथिलीक किछु लेखकक बजाओल गेलनि। डा० लक्ष्मण झा, हरिमोहन बाबू एवम् श्री मणिपद्मजी सम्मिलित भेलाह। प्रथम-प्रथम पं० नेहरूक समक्ष मैथिलीक प्रश्न राखल गेल। हम सभ नीक रूपेँ सफल भेलहुँ। एतय ओकर उल्लेख करब निष्प्रयोजन बुझना जाइछ। सम्मेलन समाप्त

भेलाक बाद हरिमोहन बाबू पुनः एकीकरणमे लागि गेलाह। आन्तरिक सहयोग कयलथिन मणिपद्मजी। २५सँ ३१ दिसम्बर धरि अनवरत प्रयासक बाद ३१ दिसम्बरक मध्य रात्रिमे एकीकरण भेल। नव नाम राखल गेल "मिथिला संघ"। एखन धरि ई संस्था अछि।

एहि अवसर पर हरिमोहन बाबूक सम्बन्धमे एकटा नव अनुभव भेल। हरिमोहन बाबू अपन पोथी सभमे मिथिलाक कुरीतिक निर्मम रूपसँ व्याख्या कयने छथि। मोनमे कनेको द्विविधा नहि बुझायत, परंच व्यक्तिगत रूपमे एहि लेप संकोची बुझना गेलाह। एकटा उदाहरण दैत छी। आपसमे बहुत समय नष्ट कयलाक बाद, दुनू संस्थाक प्रतिनिधिगण हरिमोहन बाबू पर संस्थाक नामकरणक भार सौंपलनि। एहि प्रस्तावमे किनको हृदयमे मलिनता प्रायः नहि छलनि। दुनू दल ई निर्णय कयने छल जे सभ त्यागि सकैत छी, मुदा संस्थाक नाम नहि। आध घण्टा धरि झाजी कोनो निर्णय पर नहि पहुँचि सकलाह। मणिपद्मजी बजलाह—हम किछु बाजू ? झाजीक आदेश भेटला पर ओ एक मिनटमे अपन निर्णय दऽ देलथिन। मणिपद्मजीक प्रस्ताव छल जे दुनू संस्था एक-एक शब्द अपन संस्थाक नामसँ त्याग करओ। मैथिल संघ मैथिल शब्द एवम् लोक संघ अपन नामसँ लोक शब्द हटा लेअय। दुनू दलकेँ सहर्ष स्वीकार भऽ गेलैक। मणिपद्मजीक विलक्षण बुद्धि देखि प्रसन्नता भेल। एही रूपमे नव संस्थाक अध्यक्ष तथा मंत्रीक मनोनयनक प्रश्न पर झाजी गुम्म रहलाह। मणिपद्मजी निराकरण देलनि। हमरा जनैत संकोची स्वभावक कारणेँ अपन निर्णय नहि देलथिन। हुनका भ्रम भेलनि जे कोनो दल असन्तुष्ट नहि भऽ जाय। परंच एकीकरणक बाद हुनक मुखाकृति देखला पर ई अनुभव भेल जे ओ कल्पनातीत प्रसन्न छथि। जेना राजसूय यज्ञ सफलतापूर्वक सम्पन्न कयने होथि। हुनक मिथिला-मैथिलीक प्रति अकृत्रिम स्नेह देखि आदरक स्थान पर श्रद्धा हृदयमे उत्पन्न भऽ गेल। ओही दिनसँ नमस्कारक बदलामे पैर छूबि प्रणाम करैत छियनि। कारण, हमरो आदर्श मिथिला-मैथिली थिक।

'चर्चरी'क प्रकाशनक भार हमरा पर पड़ल। पता नहि अछि जे हुनक मनोनुकूल पोथीक प्रकाशन हम कऽ सकलहुँ वा नहि। जखन हम प्रकाशनमे हाथ लगबय जाइत रही, एक प्रकाशक हमरा कहलनि जे एहि खेप अहाँ बुझबैक। नीक अर्थिक घक्का पड़ल छी। परंच हमरा मोनमे कनेको शंका नहि भेल। लेखकक रूपमे हुनक सहानुभूति आ सहृदयता हमरा प्रति जे रहलनि ओ अत्यन्त प्रशंसनीय अछि। बलिक हमहीं अपन वचनकेँ ठीक रूपमे एखन धरि नहि निमाहि सकल छी। लेकिन शीघ्र अपन वचनक पूर्ति करब, कारण हुनक संग 'वादा खिलाफी' कयने हम दोषी होयब।

हँ, एक विषय पर निश्चये किछु मतान्तर अछि। हुनके सँ खाली नहि, बलिक किछु अन्य मैथिलीक साहित्यकार सभसँ सेहो। ओ थिक हुनक सभक हिन्दीक प्रति अप्रयोजनीय मोह। हम मैथिली-हिन्दी प्रश्न पर डा० अमरनाथ झाक विचार सँ सहमत छी। १९५४ ई० मे हुनका मान-पत्र देबा लेल एकटा सभाक आयोजन भेल छल। अध्यक्ष छलाह श्री तुषारकान्ति घोष ('अमृत बाज़ार'क सम्पादक) एवम् अतिथि रूपमे डा० सुनीति कुमार चटर्जी। दैनिक विश्वमित्रक ओहि समयक सम्पादक स्व० मूलचन्द्र अग्रवाल हिन्दीक सम्बन्धमे एकटा प्रश्न देलथिन। डा० झा तुरत स्पष्ट भाषामे कहलथिन जे हिन्दीक स्थान भारतमे खाली चारि जगह पर होयबाक चाही—केन्द्रीय न्यायालय, केन्द्रीय सचिवालय,

अन्तरप्रान्तीय पत्र-व्यवहार एवम् अन्तरराष्ट्रीय पत्र-व्यवहार। एकर अतिरिक्त सभ काज क्षेत्रीय भाषा मे होयबाक चाही। एखन की भऽ रहल छैक ?

किन्तु, किछु एहन साहित्यकार छथि जनिका मैथिलीसँ कम हिन्दीक प्रति मोह नहि छनि। यदि पद एवम् अर्थक लोभ देखाओल जाइन तँ ओ हिन्दीयेक पक्ष लेताह। हिनक नामक उल्लेख हम नहि करब। तखन ई निश्चय जे झाजी एहिसँ बड़ ऊपर छथि। हिनका हृदयमे मैथिलीक लेल अपार स्नेह छनि।

हरिमोहन बाबूक मैथिलीक सेवाक मूल्यांकन हमर सन साधारण लोकक काज नहि। ई जे किछु मैथिली लेल कयलनि से भविष्योमे श्रद्धाक संग स्मरण हेतैक। हिनक दुर्भाग्य अवश्य जे ई मिथिलामे जन्म ग्रहण कयलनि। एतय सन्देशसँ तेलही लड्डू तक एक भाव विकाइत छैक। हिनका सम्बन्धमे कविकोकिलक एकेँ पाँती यथेष्ट अछि—"तोहि समान तोँही एक माधव"।

●

आदर्श मित्र–प्रो० हरिमोहन झा

श्री उमाशंकर वर्मा

हमर ई परम सौभाग्य अछि जे हरिमोहन बाबू सन मनीषीक स्नेह-सूत्रमे आबद्ध भऽ सकलहुँ। ई निश्चये हमर कोनो सुकृतक परिणाम अछि। हुनक उन्नत-उदग्र व्यक्तित्व हिनको लेल प्रेरणाक स्रोत भऽ सकैत अछि। हमरा लेल तँ ओ सुहृद, अग्रज, पथ प्रदर्शक सभ किछु एक संग रहल छथि। वैदुष्य आओर स्नेहशीलताक एहन सुन्दर समन्वय हुनक व्यक्तित्वमे भेल अछि, जे एक बेर जे केओ हुनक सम्पर्कमे अबैत छथि, से सदाक लेल हुनक प्रशंसक बनि जाइत छथि।

हरिमोहन बाबूक साहित्यक माध्यमसँ हुनक अप्रत्यक्ष परिचय तँ हमरा बहुत दिन पूर्व भेटि चुकल छल, मुदा साक्षात् मिलन कहिया आओर कतय भेल, ई बात ठीक-ठीक नहि कहल जा सकैछ। हँ, एतबा अवश्य मोन अछि जे १९७- ई०क लग-पास पटनेक कोनो कवि-सम्मेलनमे हम दुनू गोटे पहिल बेर मिलल छलहुँ आओर तखने जे परिचयक सूत्रपात भेल से उत्तरोत्तर दृढ़े भेल गेल।

संयोगसँ पहिने ओ हमर अत्यन्त निकटक पड़ोसी छलाह। हमर वर्तमान आवाससँ किछुए गजक दूरी पर रानीघाट-स्थित युनिवर्सिटी क्वार्टर्समे ओ रहैत छलाह; एही लेल हुनकासँ भेँट-घाँट सदिखन होइत रहैत छल। शनैः-शनैः सम्पर्क प्रगाढ़ होइत गेल आओर हम एक दोसरक अन्तरंग होइत गेलहुँ। मुदा एहि मध्य सेवा-निवृत्तिक कारणे हुनका युनिवर्सिटी क्वार्टर्स छोड़िक' टिकियाटोलीमे एक किरायाक मकानमे जाय पड़लैन्हि। टिकियाटोली हमर आवाससँ वेसी दूर नहि अछि। एतएव ओतए सेहो जाधरि ओ रहलाह हमरा सभक भेँट-घाँट पूर्ववत् होइत रहल।

कविवर आरसी प्रसाद सिंह सेहो एनीबेसेन्ट रोड-स्थित आवासकेँ छोड़ि पहिने चाइँ टोला आओर फेर टिकियाटोलीमे हरिमोहन बाबूक आवासेलग आबि गेल छलाह। हम, आरसी जी आओर हरिमोहन बाबू सदिखन संग बैसि वार्तालाप आओर मनोरंजन करैत छलहुँ। एहि प्रकारेँ हमर तीनू गोटेक एकटा एहन मंडली बनि गेल जाहि ठाम ने कोनो प्रकारक औपचारिकता अछि, ने कोनो गोपनीयता आओर ने कोनो भेद भाव।

हमर वार्तालापक विषय साहित्य तँ होइतहि अछि, बाजार-भावसँ लऽकऽ दर्शन, विज्ञान, राजनीति, देश-दुनियाक हलचलि आओर सामयिक समाचार तथा अन्य कतेको विषय पर सेहो हम सभ खुलि कऽ विचार-विनिमय करैछी। एक प्रकारेँ कहल जाय तँ ई हमर नित्यक दिन-चर्चा भऽ गेल।

कखनहुँ-कखनहुँ हम शतरंज सेहो खेलाइत छलहुँ। शतरंज प्रारम्भ भेला पर तँ तीन-तीन, चारि-चारि घंटा धरि सभ किछु बिसरि 'शह' आओर 'मात'क क्रिया-प्रक्रियामे लागल रहि जाइत

छलहुँ आओर इहो पता नहि चलैत छल जे कखन साँझक पाँच बजेसँ रातिक आठ दस-आओर कखनहुँ कखनहुँ एगारह-बारह बाजि गेल। शतरंजक नीक-नीक खेलाड़ीके हरिमोहन बाबू अपना ओहिठाम बजबैत छलाह आओर कखनहु ओ स्वयं हुनका संग खेलाइत छलाह, कखनहु आरसीजी आओर कखनहु हम। मुदा यदा-कदा जखन 'पुजारीजी'क आगमन होइत छल तँ बाते दोसर भऽ जाइत छल। मेल शुरू भेला पर बीच-बीचमे हरिमोहन बाबू अपन विनोदपूर्ण शैलीमे पुजारीजीके ललकारैत रहैत छलाह। पुजारी जी आओर गंभीर होइत नव-नव चालि द्वारा अपन प्रतिभाक प्रदर्शन करबा लेल उद्यत भऽ जाइत छलाह। एक बेर स्थानीय इंजीनियरिंग कालेजमे अखिल भारतीय शतरंज प्रतियोगिता सेहो हम सभ एक संग देखबाक लेल गेल छलहुँ। उक्त प्रतियोगितामे अन्य प्रसिद्ध खेलाड़ीक संग-संग एरन आओर रोहिणी खंडेलकर सेहो भाग लेने छलीह आओर हुनक खेल देखि कऽ हम सभ चमत्कृत भेल छलहुँ।

हमर सभक साँझक बैसकमे साहित्यिक सभक संस्मरण सेहो सदिखन सुनल-सुनाएल जाइत छल। हरिमोहन बाबू बिहारक अनेक प्रसिद्ध लेखक-कवि आओर विशेष रूपसँ आचार्य शिव जन सहाय, दिनकरजी, बेनीपुरीजी, आचार्य रामलोचन शरण आदिक सम्बन्धमे अनेक रोचक प्रसंग सुनाकऽ हमरा सभकेँ आनन्दित करैत छलाह। आधुनिक कालक प्रसिद्ध हिन्दी-लेखिका शिवानीजीसँ लखनउमे अपन भेँटक विषयमे सेहो ओ विस्तारपूर्वक चर्चा कैने छलाह।

संस्मरणक अतिरिक्त हास्य-व्यंग्यक प्रसंग, लतीफा आओर चुटकुला सेहो हरिमोहन बाबू रस लऽ लऽ कऽ सुनबैं छथि। अंग्रेजीमे एक उक्ति अछि जकर अर्थ अछि जे प्रतिदिन सेव खैलासँ डाक्टरक कहियो जरूरति नहि होयत। एकर व्याख्या करैत हरिमोहन बाबू अपना दिससँ ई जोड़ि दैछथि जे एक डाक्टरक पत्नी जखन ई बात सुनलनि तँ ओ प्रतिदिन सेव खायब शुरू कऽ देलन्हि — An apple a day keeps the doctor away. Hearing this the doctor's wife began taking an apple everyday.

अंग्रेजिएक एक अन्य उक्ति ओ सदिखन भिन्न-भिन्न ढंगसँ सोदाहरण व्याख्याक संग सुनबैत छथि आओर हमर सभक मनोरंजन करैछथि। उक्ति अछि----Life is a comedy for those who do not think and a tragedy for those who think. देशक भिन्न-भिन्न भागक अपन यात्रा-संस्मरण केँ कहबाक सुनबाक हुनक कला अद्वितीय अछि। भिन्न-भिन्न तरहक विलक्षण लोक, स्थान, घटना आदिक वर्णन ओ एतबा रोचक ढंगसँ करैत छथि जे श्रोता मुग्ध भेने विना नहि रहैछ।

हरिमोहन बाबूक ज्येष्ठ पुत्र चि० गोपालजी (प्रसिद्ध लेखक श्री राजमोहन झा) केँ संगीत-समारोह आओर कवि-सम्मेलनक कार्यक्रम 'टेप' करबाक बहुत सौख छन्हि आओर ओ अनेक एहन कार्यक्रमकेँ 'टेप' कऽ कऽ रखने छथि। यदा-कदा हरिमोहन बाबू एकर खास-खास अंशकेँ सेहो सुना कऽ हमरा सभकेँ आनन्दित करैछथि।

एखन तँ हरिमोहन बाबूक स्वास्थ्ये ठीक नहि रहैत छन्हि, मुदा पहिने ओ हमरा सभक साहित्यिक संस्था 'कायामनी'क गोष्ठीमे अवश्य उपस्थित होइत रहैत छलाह आओर अपन रचना सुनयबाक संग-संग दोसरक सेहो, विशेष रूपसँ नवोदित कवि, लेखकक रचना मनोयोगपूर्वक सुनैत छलाह आओर हुनक प्रशंसा करैत छलाह। हमर रचनाक प्रति हुनक स्नेह अपार अछि। जखन-जखन हमर रचना

पत्र-पत्रिकामे प्रकाशित होइत अछि तँ ओ रुचि लऽ कऽ स्वयं पढ़ैत छथि, हमरा सँ तथा अन्य लोक सँ ओकरा पढ़वा कऽ सुनैत छथि आओर ओकर व्याख्या, विश्लेषण आओर समीक्षा करैत छथि।

हुनका ओहिठाम नव-पुरान साहित्यिक आबिते रहैत छथि। हुनके ओहिठाम सर्वश्री सुरेन्द्र झा ''सुमन'', 'ब्रजकिशोर वर्मा' 'मणिपद्म', उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास', डा० आनन्द मिश्र, चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर', गोपालजी झा 'गोपेश', गोविन्द झा, मार्कण्डेय प्रवासी, डा० भीमनाथ झा, मायानन्द मिश्र, मोहन भारद्वाज, मिहिरजी, हंसराजजी प्रभृति मैथिली साहित्यक अनेक विशिष्ट रचनाकार सभक दर्शन आओर परिचयक सौभाग्य हमरा प्राप्त भेल। मैथिली जगतमे हमर प्रवेश करैबाक लेल हरिमोहन बाबू सदा उद्यत एवं प्रयत्नशील रहैत छथि आओर मैथिलीमे लिखबाक लेल हमरा प्रेरित सेहो करैत रहैत छथि। मैथिलीमे कविता, निवंध, आदि लिखि कऽ हम अपन लेखनीकेँ धन्य सेहो करए चाहैत छी। मुदा प्रयत्नशील भेलो पर एखन धरि एहि दिशामे विशेष किछु नहि कऽ सकल छी, एकर सोच सेहो हमरा अछिए।

हरिमोहन बाबूसँ व्यक्तिगत स्तरसँ प्रारम्भ हमर मित्रता पारिवारिक स्तर पर सेहो देखैत-देखैत अपन विस्तार कऽ लेलक आओर दूनू परिवारमे घनिष्ठता बढ़ैत गेल। हरिमोहन बाबूक ओहिठाम हम आओर हमर परिवारक लोक सदिखन जाइत-अबैत रहैत छथि। हरिमोहन बाबू सेहो अस्वस्थता एवं दुर्बलताक रहितो हमरा ओहिठाम आबि जाइत छथि। विवाह, मुंडन अन्नप्राशन और नेना-भुटकाक जन्मदिन सन विशेष अवसर पर तँ हुनक आगमन अनिवार्य होइत छन्हि।

हरिमोहन बाबू लगभग ४०-५० बरससँ पटनेमे रहि रहल छथि, मुदा अपना लेल ओ कोनो प्रकारक मकान एहि ठाम नहि बनाय सकलाह। ओ चाहितथि तँ ई कोनो कठिन काज नहि छल हुनका लेल। मुदा ओ एहिपर कहियो ध्याने नहि देलन्हि। विश्वविद्यालय-सेवासँ अवकाश ग्रहण कैला पर आवासक समस्या हुनका लेल अत्यन्त जटिल भऽ गेलनि। पटनामे एखन धरि कोनो मकान मालिक वेसी समय धरि कोनो एक किरायादार केँ अपन मकानमे नहि राखऽ चाहैत छैक। युनिवर्सिटी क्वार्टर्स छोड़ला पर हरिमोहनन बाबू किछु बर्ष टिकियाटोलीमे बाजितपुरक अपन सह-ग्रामीण प्रो० योगेन्द्र मिश्र (अवकाश प्राप्त इतिहास-विभागाध्यक्ष, पटना विश्वविद्यालय)क घरक निकटे एक मकानमे नीक जकाँ रहैत छलाह, मुदा एम्हर किछु दिनसँ मकान छोड़वाक लेल हुनका पर दवाव पड़ै लागल। काफी खोजला ढुंढ़लाक उपरान्त सैदपुरमे बरहरा कोठीक लग हुनका जे मकान भेटल छैन्हि से हुनका लेल सुविधाजनक नहि छन्हि, मुदा तैयो हुनका ताहि मकानमे रहऽ पड़ैत छन्हि। दूरी बढ़ि जैबाक कारणेँ एखन हमर मिल-जुल कम भऽ गेल अछि, मुदा तैयो हरिमोहन बाबू किनकोन्किनकोसँ हमर कुशल-मंगल पूछैत रहैत छथि आरोर भेंट नहि हैवाक कारणेँ दुखी रहैत छथि।

सैदपुरवला मकानमे प्रवेश करतहि हुनक धर्मपत्नी (श्रीमती सुभद्रा झा) जे कतेको माससँ अस्वस्थ छलीह, अत्यधिक रुग्ण भऽ गेलीह। हर संभव चिकित्सा-परिचर्या भेलाक बावजूदो हुनक दशा बिगड़ैत चलि गेलैन्ह आओर ओ दुर्भाग्यपूर्ण दिन (१४ अगस्त, १९८२) सेहो आबिए गेल जखन ओ सांसारिक माया-पाशकेँ तोड़िक' तथा सभकेँ कनैत-बिलखैत छोड़िकऽ चिर-निद्रामे लीन भऽ गेलीह।

ओ एक आदर्श पत्नी आओर आदर्श माय तँ छलीहे, सभकेँ स्नेह-सहानुभूति एवं ममत्व देमय वाली एक आदर्श नारी सेहो छलीह। ओ सौंच अर्थमे हरिमोहन बाबूक सहधर्मिणी छलीह। अपन स्वास्थ्य, सुख-सुविधा आओर भूख-पियास, निद्रा आदिक उपेक्षा करैत दिन-राति हुनक सेवा-परिचर्यामे जुटलि रहैत छलीह। हुनक बिछोह हरिमोहन बाबूकेँ सर्वथा एकाकी बना देलक अछि आओर नियतिक एहि निर्मम प्रहारसँ ओ टूटि गेल छथि।

हमरा मोन पड़ि रहल अछि ओ दिन, जखन अत्यधिक रुग्ण भेला पर हरिमोहन बाबूकेँ जुलाइ, १९८० मे लगभग दू सप्ताह धरि अस्पतालमे भर्ती होमए पड़लन्हि। हुनक हालति वास्तवमे चिन्ताजनक भऽ गेल छलन्हि। हम जखन हुनका देखए गेल छलियनि तँ ओ संज्ञाशून्य जकाँ छलाह। मुदा जखन हुनक धर्मपत्नी हुनका हमर आगमनक सूचना देलथिन्ह, तँ ओ आँखि खोलि लेलन्हि आओर 'वर्मा जी ! वर्मा जी !' कहए लगलाह। ओ हमरासँ पुछलन्हि 'हम कतय छी ? काशीमे कि प्रयाग मे ?' हम कहलियनि जे अहाँ काशी-प्रयागमे नहि, पटनेमे छी, हमरा सभक संग छी, तँ ओ किछु शान्त भेलाह। ओहि काल कखनहु-कखनहु हम आओर आरसीजी संग-संग हुनका देखबाक लेल जाइत छलहुँ आओर कखनहु-कखनहु असगरे-असगरे। ओ मृत्युसँ संघर्ष करैत छलाह। ईश्वरक कृपासँ विजय सेहो प्राप्त कएलन्हि आओर दू सप्ताह बाद घर आबि गेलाह। अस्पतालमे हुनका देखबाक लेल स्नेहीजन आओर साहित्यिक मित्र तथा विधायक एवं मंत्री सेहो जाइत छलाह। मन्त्री महोदय इहो घोषणा कएलन्हि जे हुनक चिकित्साक सब खर्च सरकार वहन करत, मुदा ओ घोषणा घोषणे रहि गेल, कखनहु क्रियान्वित नहि कैल जा सकल।

बिमारीक बाद आकाशवाणीक पदाधिकारीगण सेहो हरिमोहन बाबूक घर आ कऽ स्वास्थ्यक विषयमे पूछ-ताछ कएलन्हि आओर ओ जे किछु कहलन्हि से टेप कऽ लेलनि जे बादमे प्रसारित कैल गेल। हरिमोहन बाबू स्वयं 'मृत्यु-लोकक झाँकी' शीर्षक एक गोट लेख सेहो लिखलन्हि जे 'मिथिला मिहिर' मे प्रकाशित भेल। १८ सितम्बर १९८० केँ हुनक जन्मदिनक अवसर पर जे बैसक आयोजित भेल ओहिमे ओ बिमारीक बाद पहिल बेर घरसँ निकलि कऽ गेलाह आओर हुनके इच्छानुसार हमरा ओहि बैसकक अध्यक्षता करबाक सौभाग्य प्राप्त भेल। अपन शीघ्र प्रकाश्य 'आत्मकथा' मे कतेको स्थल पर ओ हमरा स्मरण कैने छथि।

दोसर बेर नवम्बर, १९८० मे हुनका अस्पताल मे भर्ती होमए पड़लन्हि आओर एहि बेर सेहो हम आओर आरसी जी हुनका देखए अस्पताल जाइत रहलहुँ। एहि बेर हुनक आँखिक आपरेशन भेल जे सफल रहल।

साहित्यिक आयोजनमे सेहो हुनक सक्रिय सहयोग हमरा सदिखन भेटैत रहल अछि। हमरा द्वारा संपादित काव्य-संकलन ''युगपुरुष जयप्रकाश''मे ओ हमर जे परिचय लिखने छलाह से हमरा प्रति हुनक असीम स्नेह, अपनत्वक परिचायक अछि।

हमर पुत्री अर्चना उर्वशीक बिआहक अवसर पर ओ संस्कृतमे निम्नांकित आशीवर्चन लिखने छलाह जे विवाह-स्मारिकामे प्रकाशित भेल —

अनंगा उर्वशी कन्या वर आनन्दभारती
उभौ कुशलिनौ स्याताम् सदा सौभाग्यशालिनौ
उमाशंकर मोहाभ्याम् विश्वनाथ प्रसादतः
सर्वदा मंगलं भूयात् कीर्ति सौख्य समन्वितम्

एके शहर मे रहितहुँ यदा-कदा हमरा पत्राचारक सेहो सहारा लियऽ पड़ैत अछि। हुनक कतेको पत्र हमरा लग अछि। ओकर किछु नमूना एहि ठाम देल जा रहल अछि जाहिसँ हरिमोहन बाबूक सहृदयता एवं स्नेहशीलताक परिचय भेटैत अछि [दसो पत्र क्रमशः १०-८-७५, ३०-८-७५, १७-१०-७६, २७-५-७७, ७-६-७७, ४-११-७६, १४-११-७९, १६-११-७९, ८-१-८१, तथा ११-७-८१क थिक—

(१)

अहाँक अस्वस्थताक समाचार जानिक' दुःख भेल। भगवानसँ अहाँक स्वस्थ्य कामना कऽ रहल छी। अहाँ शीघ्रे आरोग्य लाभ करब। हम आबिक' अहाँक दर्शन करब। विशेष भेंटा भेला पर।

(२)

भगवानक कृपासँ अहाँ स्वस्थ्य लाभ कऽ रहल छी, ई जानिक' बड़ खुशी भेल।

हम स्वयं अहाँसँ मिलय चाहि रहल छलहुँ। तावत् दीपू जी पहुँचि गेलाह। हिनका द्वारा 'द्विरागमन' पठा रहल छी (जे 'कन्यादन'क उत्तरार्ध अछि आओर अहाँ सभक मनोरंजन करता।) श्री आरसी जीक कविता आइ राति सुनब। जखन ओ आबथि तँ कृपया हमरा सेहो बजबा लेब।

(३)

हम सेहो दुखित छी। दम फुलबाक कारणेँ चलय-फिरयमे असमर्थ छी। गोष्ठीक समाचार अरविन्दजी ककरा देने छलाह? मिहिरक संपादक भीमनाथ जी हमरा ओहिठाम अएता तँ हम हुनकासँ पुछबन्हि। यदि हुनका हाथमे पड़ितैन्हि तँ अवश्ये छपि गेल होइत। यदि अखनहु समाचार प्रस्तुत कऽ पठा दी तँ हुनका दऽ देल जा सकैछ।

जयन्ती स्मारक ग्रन्थ हमरा पास छल। प्रायः आकाशवाणीक कोनो सज्जन लऽ गेल छलाह। ओ लौटैलन्हि अथवा नहि, स्मरण नहि भऽ रहल अछि। अखन एहि मकानमे पोचाड़ा पड़बाक कारणेँ पुस्तक सभ अस्तव्यस्त भऽ गेल अछि। स्वस्थ भेला पर खोजब। तखन पता चलत जे अछि अथवा नहि।

हम सबल भऽ गेला पर अहाँक ओहिठाम आएब। श्री आरसी जी आबथि तँ हमरा सेहो हुनक दर्शन करा दी।

ताहि दिन हम Radio station गेल छलहुँ। मुदा अस्वस्थतावश पूरा कविता नहि पढ़ि सकलहुँ। शेषांश श्रीमती शान्ति सुमन (कवयित्री) सुनौलनि।

विशेष भेँट भेला पर।

(४)

कृपा-पत्रक लेल धन्यवाद।

हम सभ रवि दिन एहि सम्बन्धमे विचार-विमर्श करब। रात्रिमे चाहे तँ हमरौ आबि जायब अथवा अहीं कृपा करब।

(५)

कविता शीघ्र बना कऽ अहाँक सेवामे दऽ देब।

श्री गंगाशरण सिंह जीक ओतय जखन चलबाक विचार होअय हम संग देब। मुदा हुनकासँ पहिने समय लऽ लेब नीक हैत। जे दिन आओर समय निर्धारित होअय, ओकर हमरा पहिनेहि सूचना देबाक कृपा करी जाहिसँ हम तैयार रही।

यदि आइए साँझकेँ चलबाक विचार होअय तँ हम प्रतीक्षामे रहब। जे विचार होअय कृपया सूचित करी।

(६)

एम्हर कतेक दिनसँ अहाँक दर्शन नहि भेल। स्वास्थ्य नीक अछि ने? आशा, अछि अहाँ सकुशल होयब।

(७)

हम कतेक दिनसँ सोचि रहल छलहुँ जे अहाँ किएक नहि आबि रहल छी। कि आइ धरि कमजोरी बनले अछि। आओर अहाँक ओहिठाम समाचार जनबाक लेल ककरो पठाबऽबला छलहुँ। ता धरि रविजी अहाँक पत्र लऽ कऽ आबि गेलाह। समाचार जानिकऽ हम सभ विस्मित भऽ गेलहुँ किऐक तँ एकर कनिओटा अन्दाज नहि छल। आब भगवानक कृपासँ संकट टरि गेल। आशा अछि, शीघ्र आरोग्य लाभ कऽ लेतीह। एहि बीच हम सभ सेहो अस्वस्थ छलहुँ आओर एखनहुँ धरि पूर्ण स्वस्थ नहि भऽ सकल छी। विशेष भेँट भेला पर।

(८)

हम एखन धरि अस्वस्थतावश जिज्ञासामे उपस्थित नहि भऽ सकल छी। पत्नी सेहो कतेक दिनसँ दुखित छथि—रातिमे उलटी भेल छलनि—दू दिनसँ खाय नहि रहलि छथि।

कृपया अपन ओहि ठामक समाचार दऽ कऽ चिन्ता दूर करी।

पुनश्च, यदि भऽ सकय तँ एक काँच बेल पठाव देबाक कृपा करब। विशेष भेंट भेला पर।

(९)

आशा अछि सपरिवार कुशल बंक होयब। हम स्वयं अहाँसँ मिलऽ अबितहुँ मुदा अस्वस्थताक कारणेँ नहि आबि सकलहुँ। यदि अहाँ केँ कष्ट ने हुअय तँ आइ सायंकाल दर्शन देबाक कृपा करू।

(१०)

कृपया 'जनवाद' बला कविता पठा कऽ अनुगृहीत करू। हम पुनः लौटा देब। विशेष भेंट भेला पर।

हास्य-सम्राट् तँ ओ छथिये। हुनक साहित्य जाहि प्रकारेँ हास्य-व्यंग्यक फुहारसँ अभिसिंचित अछि, जीवनमे सेहो हास्य-व्यंग्य कहियो हुनक संग नहि छोड़लक। सभसँ पैघ बात ई अछि जे हुनक हास्यमे कोनो प्रकारक कटुता अथवा विद्रूप नहि होइछ आओर हुनक व्यंग्यमे ककरो कोनो प्रकारक चोट पहुँचयबाक भावना नहि होइछ। सदिखन ओ विनोद-गोष्ठीक लेल गुड़ाय दैत रहैत छथि तथा ओकर रूप-रेखा सेहो बना दैत छथि। गहि कलमे अन्य वस्तुक अतिरिक्त समस्यापूर्तिओ पर हुनक बेसी जोर रहैत छन्हि। हमरा मोन अछि जे एक बेर समस्यापूर्ति लेल ओ एक गोट विचित्र पाँती प्रस्तुत कैने छलाह। ओ पाँती अछि—"वो तो बरसाएँगे सङ्, नहीं मेरे मकां में"। क्षण मात्रमे पाँती जोड़ि-जोड़ि कऽ ओ एहन रचना तैयार कऽ दैत छथि जाहिसँ लोक लोट-पोट भऽ जाय। मित्र-मंडली हुनक एहि विनोदपूर्ण प्रकृतिक कारणेँ सदिखन हुनका घेरने रहैछ।

हरिमोहन बाबू वस्तुतः एक आदर्श मित्र छथि। मित्रक सहायताक लेल ओ सर्वदा तत्पर रहैत छथि। हमर जे उपकार ओ समय-समय पर कैने छथि ओकर लेखा-जोखा एहि छोट लेखमे सम्भव नहि। सेना-भुटकाक एडमिशनक समस्या हो अथवा दुश्चिंतक, स्थानान्तरणक या कोनो पारिवारिक संकट, सदा अपन प्रयत्न आओर परामर्शसँ ओ हमर बोझ हल्लुक करैत रहैत छथि। हुनकामे नेना-सदृश सरलता, सहजता, निश्छलता अछि आओर अछि सभकेँ स्नेह, आत्मीयता देबाक इच्छा। हुनकासँ मिलि कऽ ककरो सहसा ई भान नहि भऽ सकैछ जे ओ एक महान साहित्यकार, दर्शनशास्त्री अथवा शिक्षाविद्सँ मिलि रहल अछि। हम अपनाकेँ धन्य बनैत छी जे हुनक आन्तरिक स्नेह एहि रूपमे हमरा भेटल अछि। ओ शतायु होथु आओर सदा नीरुज-निरामय रहिकऽ अपन सारस्वत साधनासँ साहित्यकेँ श्री-सम्पन्न करैत रहथु।

जखन हरिमोहन बाबू रौद्र-रस मे आबि गेलाह

श्री चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'

वर्ष तँ ठीक-ठीक स्मरण नहि अछि, प्राय: १९६० ई०क आस-पासक घटना थिक। चेतना समिति द्वारा आयोजित विद्यापति-स्मृति-पर्वक कवि-सम्मेलनक मंचसँ हमरालोकनि उतरले छलहुँ। श्रीयुत हरिमोहन बाबूकेँ एक ठामक आयोजक बहुत अनुनय-विनय करैत दोसर दिनक हेतु अपना ओहि ठामक विद्यापति-पर्वक सभापतित्व करबाक हेतु गछबा लेलथिन। कार सँ लऽ जयबाक आ पुन: ओही दिन कारसँ पटना पहुँचा देबाक आश्वासन देलथिन।

दोसर दिन यथासमय आयोजक महोदय कार लऽ कऽ उपस्थित भऽ गेलाह। श्री हरिमोहन बाबू, श्री मधुप जी, प्रो० श्री आनन्द मिश्र, श्री चन्द्रभानु सिंह आ हम—पाँचो व्यक्ति विदा होइत गेलहुँ।

स्मर्तव्य जे जावत धरि साहित्यिक मंच पर साहित्यकारे लोकनिक प्रवेश वा वर्चस्विता छलनि तावत धरि अध्यक्षेक पद सर्वोच्च मानल जाइत छल। जखनसँ राजनीतिक पुरुष लोकनिक प्रवेश भेलनि तहिया सँ एक नवीन पदक सृष्टि भेल आ से उद्घाटकक पद कहल जाय लागल। आब तँ मुख्य अतिथि, मुख्य वक्ता आदि-आदि अनेक पद सृष्ट भेल अछि।

आयोजनक स्थल पर पहुँचलाक बाद आयोजक लोकनिमे प्राय: बहुत तर्क-वितर्क भेलनि आ अन्तत: ओ लोकनि एहि निष्कर्ष पर पहुँचलाह जे सभापतिसँ उद्घाटकक पद बेसी प्रतिष्ठित होइत अछि, आ तेँ सभापतित्वक हेतु बजा कऽ आनल श्री हरिमोहन बाबूकेँ उद्घाटक बनाओल जाय। एही ऊहापोहमे आयोजक लोकनि बहुत समय नष्ट कऽ चुकल छलाह। हम ओहि समयमे श्री झिंगुर बाबू सन कर्मठ ओ समयनिष्ठ प्रधानाध्यापकक अधीनस्थ शिक्षक छलहुँ। जहिना-जहिना समयक अतिक्रमण भेल जाइक, हमर प्राण सुखायल जाय जे जँ आइ समय पर पटना नहि घुरि सकलहुँ तँ काल्हि यथासमय विद्यालयमे अनुपस्थित भऽ जायब।

सभा आरम्भ भेल। आयोजक महोदय 'माइक' पर जाय सभापतिक हेतु प्रो० श्री आनन्द मिश्र जीक नाम प्रस्तावित कऽ देलथिन। श्री आनन्द बाबू सभापतिक आसन ग्रहण कयलनि। आयोजक तकर बाद माइक पर जाय श्री हरिमोहन बाबूसँ उद्घाटन करबाक निवेदन कयलथिन; परन्तु ई तँ पहिनहि रौद्र रसमे आबि गेलाह। माइक पर जाय कहलथिन—ई सभा थिक, एकर पति सभक सम्मुख

बैसल छथि । हम एहन धृष्ट लोक नहि छी जे ककरो पतिक सम्मुख ओकर पत्नीक घोघ उघाड़ि दिऐक । एहि शब्दमे हम एहि सभाक उद्घाटन करैत छी । एतबा कहि सभा-भवनक बाहर राखल एक कुर्सी पर आबि बैसि गेलाह । श्री मधुप जी सन लोक कतेको अनुनय-विनय कऽ कविता पाठ तऽ हिनकासँ करौलनि, परन्तु श्री हरिमोहन बाबू संस्कृत ओ हिन्दीक कविता सुनौलथिन । हमरा तँ एहन प्रतीत भेल जे संस्कृतक पद जोड़ने जाइत छथि आ सुनौने जाइत छथिन । अपने रौद्र रसमे रहितहुँ सभाकेँ धरि हास्येक धारमे अवगाहन करबैत रहलाह ।

प्रो० श्री हरिमोहन झा : कवि-सम्मेलनमे

प्रो० मायानन्द मिश्र

—सुनै छी, हरिमोहन बाबू अबै छथि ?

—हरिमोहन बाबू ? कतऽ ? कहिया ?

—सहरसाक सम्मेलनमे, कुमार ताराबाबू सेहो आबि रहलाह अछि। आरो विद्वान, कवि-लोकनि छथि।

—सत्ते की ? तखन तँ अवश्ये आयब।

बनगाम, महिषी, चैनपुर, पड़री, सहरसा, मधेपुरा, सुपौल—सौंसे चर्चा छल। अनन्त उत्साह। अपार उत्सुकता। व्यापक प्रचार।

सन् ५४ ई०क गप्प थिक। सम्भव वसंत ऋतु। किसुनजी (रामकृष्ण झा, सुपौल) सहरसा जिला मैथिली-साहित्य-परिषदक स्थापना कयने छलाह। ओकरे प्रथम वार्षिक अधिवेशन, सहरसा मुख्यालयमे पं० श्री जटाशंकर चौधरी, प्रख्यात स्वतन्त्रता सेनानी एवं जनप्रिय नेताक संग मिलि कऽ आयोजित कयने छलाह। सम्मेलनक सफलता—न भूतो, न भविष्यति। प्रायः सभ निमंत्रित विद्वान ओ कवि उपस्थित भेल छलाह—कुमार तारानन्द सिंह, प्रो० हरिमोहन झा, डॉ० लक्ष्मण झा, श्री किरणजी, श्री सुमनजी, श्री मधुपजी, श्री अमरजी, आदि। एकर अतिरिक्त अनेक स्थानीय कवि-वृन्द। विभिन्न सत्रक मंच जगमग आ गजगज करैत छल। डोपटा आ पाग। बड़काटा सजल मजाओल पंडाल आ ठसाठस्स उमड़ल अपार भीड़। विभिन्न ट्रेनसँ लोक आबिये रहल छल। सहरसाक लेल एकटा अभूतपूर्व समारोह, आयोजन छल। लोक श्रद्धापूर्ण आ चमत्कृत छल।

किसुनजी व्यस्त छलाह आयोजनमे आ श्री चौधरीजी अपसियाँत व्यवस्थापनमे। मैथिलीक विद्वान कविलोकनि अबैत गेलाह अछि—दही आ माछक कमी नहि हो।

मैथिली जगतमे एहि अधिवेशनक कतिपय कारणेँ विशेष महत्व छल। मुख्य रूपेँ ई समारोह एकटा विक्षोभक मानसिकतामे भऽ रहल छल।

सन् ५० ई०मे गणतन्त्रक स्थापना भेल। अपन संविधान समक्ष आयल। ओहिमे सभ प्रान्तक भाषाक उल्लेख छल, मुदा बिहारक एकमात्र भाषा मैथिलीक उल्लेख नहि छल। मैथिलीभाषी

चौंकि उठल। विस्मय विमुग्ध, किंकर्त्तव्यविमूढ़। ग्रैह छल स्वाधीनता ! आंध्र भाषाधार प्रान्तक लेल सुनगि रहल छल। मुदा मिथिला तँ आन्दोलनक भाषा नहि जनैत अछि, जनैत अछि आवेदन-निवेदन। तें एखन धरि पछुआयल रहि गेल। अस्तु।

एही मानसिकतामे सहरसामे एहन विशाल आयोजन भेल छल, जाहिमे छल विराट् कवि-सम्मेलन। लोक अपन कटुता बिसरि उत्साहक प्रवाहमे भसिया रहल छल।

हम स्वयं ५० ई सँ विभिन्न कवि सम्मेलनमे जा रहल छी, अथवा मंच संचालित कऽ रहल छी, एहन सफल कवि सम्मेलन जाहिमे मंच-पंडालक समस्त जनसमुदाय मंत्रमुग्ध भऽ जाय—दोसर नहि देखल अछि। शान्त श्रद्धालु श्रोतासमाज आ जीवनानुभूतिसँ ओतप्रोत गम्भीर काव्य-पाठ। असलमे पहिलुका अर्थात् सन् ७० ई०सँ पूर्वक कवि सम्मेलन एहने होइत छल। पहिने लोक कविता सुनऽ अबैत छल, फकड़ा सुनऽ लेल नहि। आब तँ कवि सम्मेलनमे ने काव्य-पाठ भऽ पबैत अछि, आ ने आयोजकके निष्ठा छैक आ ने श्रोताकें श्रद्धा। श्रोताकें चिनिञ्बादाम जकाँ सस्तौआ फकड़ा आ रमनचमन चाही। कवि-सम्मेलन आब अधिक खन अधिक ठाम विभिन्न कार्यक्रमक बीचमे ठूसल रहैत अछि, कवि लोकनि टौआइत रहैत छथि। जमशेदपुरमे तँ ओहो विधि (कवि-सम्मेलन) नहि होइत अछि। दोष आयोजको केर, कवियो केर आ श्रोतो केर। श्रोताक बेसी। सिनेमा आ संगीत मानसिकता...।

यथासमय कवि-सम्मेलन प्रारम्भ भेल। पहिने स्थानीय, तखन वयःक्रमसँ अतिथि कविलोकनि। हमर, श्री अमरजी, श्री किरणजी, श्री सुमनजीक काव्य-पाठ भऽ गेल। बचि गेलाह श्री मधुपजी आ प्रो० हरिमोहन बाबू। आ वैह दुनू पकड़ा गेलाह। अचानक। बिना कोनो तियार-भासक।

श्री मधुपजी करुण रसक कविता पढ़ि रहल छलाह। वर्णनक करुणा लोककें विगलित कऽ रहल छल। अनेक व्यक्ति एक दोसरसँ नुका कऽ अपन-अपन आँखि पोछि रहल छल। वातावरण एकान्त-शान्त। ओतेक लोकमे मधुपजीक शब्दक अतिरिक्त मात्र लाइट केर सन्-सन् स्वर टा सुनल जा रहल छल। राति भीजि रहल छल।

हठात् मधुपजीक काव्य-पाठ बन्द भेल। मंच आ पंडाल स्तब्ध छल। केओ जेना बजबाक स्थितिमे छले नहि। सभ अवाक्। आकंठ करुणा मग्न। गह्वरित।

किसुनजी मंच संचालन कऽ रहल छलाह। बजलाह—करुणा विगलित लोककें आब प्रो० हरिमोहन बाबूटा हँसा सकैत छथि, वैह आब सभक नोर पोछथि।

श्री हरिमोहन बाबू माइक पर अयलाह; काव्य-पाठ आरम्भ भेल—हास्य रसमे, वर्णनात्मक शैलीक। हास्यक लहरि मंचसँ पंडाल आ पंडालसँ मंच दिस पसरऽ लागल। लोक उत्फुल्ल भऽ उठल। सभक रुमाल सुखा गेलैक। सभ गद्-गद् भऽ उठल।

प्रो० हरिमोहन बाबूक कविता समाप्त करिते देरी पं० जटाशंकर चौधरी बजलाह—हम तँ सभदिन राजनीतिमे रहलहुँ, कवि-सम्मेलन, विशेषतः मैथिलीक, सुनबाक अवसर नहि भेटल छल।

हम सभ धन्य भेलहुँ; मुदा एकटा आग्रह—श्री हरिमोहन बाबूक हँसैत श्रोताकेँ एकबेर आरो मधुपजी कना सकैत छथि ? हमरा तँ बुझू आनन्द भेटैत अछि...।

श्री मधुपजी चैलेंज स्वीकार करैत पुनः माइक पर अयलाह। पुनः करुण रसक काव्यपाठ प्रारम्भ भेल।

जहिना सूर्यकिरण पड़ैत देरी ओसबिन्दु बिलाय लगैत अछि तहिना श्री मधुपजीक करुणार्त्त लोकक मोनसँ हास्य-भावना बिलाय लागल आ करुण रसक साम्राज्य स्थापित होमए लागल।

श्री मधुपजीक कविता समाप्त भेल कि पंडालक जनता चिचिया उठल - हरिमोहन बाबू, हरिमोहन बाबू।

पुनः हरिमोहन बाबू माइक पर अयलाह। आब मंच-संचालनक प्रयोजन नहि रहल। जनता सभटा अपना हाथमे लऽ लेलक—मंच-संचालन, समय परिचालन आ पंडाल-व्यवस्थापन। एक बेर लोक हँसैत छल, आ दोसर बेर कानऽ लगैत छल।

ओहि दुपहरिया रातिमे सहस्रसाक जनता चिचिया रहल छल—हरिमोहन बाबू, हरिमोहन बाबू; मधुपजी, मधुपजी।

ओहि ठरैत रातिमे हरिमोहन बाबू आ मधुपजी, मधुपजी आ हरिमोहन बाबूमे चलैत रहल। हास्य आ करुणा, करुणा आ हास्य। एक केर बाद दोसर लहरि उठैत रहल, जन समुदाय भसिआइत रहल। लोक आनन्दित आ विगलित होइत रहल। ठोर पर हँसी आ आँखिमे नोर।

समय जेना ठाढ़ भऽ गेल छल। सड़क परक लोक ठाढ़ छल। मात्र बैसल छल मंच आ पंडालक लोक। मंत्रमुग्ध।

प्रो० हरिमोहन बाबूक दर्शन तँ एहिसँ पूर्व भेल छल, मुदा हमर मंच-जीवनक यैह पहिल भेंट छल। एकटा ऐतिहासिक भेंट। एकटा अविस्मरणीय भेंट।

तकरा बाद तँ अनेक मंच पर हुनकासँ भेंट भेल, कलकत्ता, सिन्द्री, धनबाद, बोकारो, बेतिया, कटिहार, लहेरियासरायक 'संकल्पलोक' आदि। पटनाक चेतना समितिक मंच पर तँ अनेक बेर। जहिना चौठचन्द्रमे सभक ध्यान आकाशक चन्द्रमे पर रहैत अछि तहिना सभठाम, सभ मंच पर सभक ध्यान हरिमोहन बाबू पर रहैत छल। नेपथ्यमे चलैत रहैत छल हरिमोहन बाबू सम्बन्धी अनेक दन्तकथा। जेना, कोना एक बेर ओ सिनेमाक टिकट कटबऽ पोस्ट ऑफिसक काउन्टर पर चल गेल छलाह, आदि। आयोजनक कार्यकर्त्ता लोकनि हरिमोहन बाबूक गप्प सुनबाक लेल हुनका घेरने रहैत छल।

विद्यापतिक पश्चात् प्रो० हरिमोहन बाबू मैथिलीक सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्यकार भेलाह। हुनक यैह व्यापक लोकप्रियता हुनका प्रति प्रबल आकर्षणक सृष्टि कयलक।

लेखकके देखबाक इच्छा प्रत्येक पाठकमे स्वाभाविक। हरिमोहन बाबूक प्रति ई स्वाभाविकता अस्वाभाविक रूपें आग्रहशील भऽ उठल। लोक अपन हास्य-व्यंग्य सम्राट्‌केँ देखऽ चाहैत

छल। मंच ताहिलेल उपयुक्त साधन। मंचक अनेक सफलतामेसँ लोकक भीड़ सेहो एकटा महत्वपूर्ण होइत अछि। आयोजकके एहिसँ संतोष होइत अछि। आ, हरिमोहन बाबूक नामसँ अपार भीड़ जुटि जाइत छल। पाछू तँ विद्यापति-पर्व-समारोह आन्दोलनक रूप धऽ लेलक जाहिमे लोक-संग्रह काम्य। हरिमोहन बाबू लोकसंग्रहक माध्यम बनि गेलाह। निश्चय ई कोनो लेखक लेल गौरवक विषय थिकैक।

प्रो० हरिमोहन बाबू कहिया, कोन मंच पर सर्वप्रथम कविता पढ़लनि से तँ ज्ञात नहि, किन्तु जँ ओ मात्र अपन अध्यक्षीये भाषणटा दऽ कऽ बैसि रहितथि तँ हकासल-पियासल मैथिली श्रोताक लेल कोनो कम नहि होइत। मुदा मात्र भाषणटासँ स्वयं असंतोष, कवि-सम्मेलनक लोभ आ अपार जनसमुदायक प्रति दया-भाव—ओ कविता लीखऽ लागल होयताह, मंच पर पढ़ऽ लागल होयताह से सम्भव। एहि विषय पर कहियो गप्प नहि भेल।

कविशेखर ज्योतिरीश्वर ठाकुरे जकाँ हुनक गद्य आ पद्यमे काव्यात्मकताक दृष्टिएँ अंतर अछि—ई तँ सुधी समाजमे स्पष्ट अछि। किन्तु कवि-सम्मेलनमे व्यापक जनसमुदायक बीच से अनुकूले प्रभाव उत्पन्न करैत छल, प्रतिकूल नहि। ई बात भिन्न जे एहिमे तात्कालिकते अधिक रहैत अछि। चिरंतनताक लेल तँ हिनक गद्ये रहत—इहो तथ्य सर्वमान्य।

पूर्वमे, जतऽ कतहु हरिमोहन बाबू अध्यक्ष रहैत छलाह, आ बेसीठाम रहिते छलाह—मंच-संचालन स्वयं करैत छलाह। से होइत छल खूब रोचक। लोक लोटपोट। हिनक मंच-संचालनमे संस्कृत पंडित जकाँ शब्द चमत्कार अपन चरम पर रहैत छल। जेना, कटिहारसँ कुच बिहारक गप्प बहुतोकेँ बूझल अछि। हरिमोहन बाबूसँ लोक इहो सुनबाक लेल बताह रहैत छल।

सरिपहुँ, एकटा युग छल जे प्रो० हरिमोहन बाबूक लेल बताह छल, आबालवृद्ध, नर-नारी, शिक्षित-अशिक्षित सभ। बंगलाकेँ छोड़ि प्रायः अन्य कोनो आन आधुनिक भारतीय भाषाक साहित्य-कारकेँ साइदे एहन सौभाग्य भेटलनि।

अपन मंच-संचालनक क्रममे हरिमोहन बाबू बहुत संतुलित रहैत छलाह। मात्र कवि लोकनिक परिचय श्रोताकेँ हाथी जकाँ दैत छलथिन जे आवश्यक होइत अछि। ई मंत्र अपन मंच-संचालनक जीवनमे हम हुनकहि सँ सीखल। हुनक मंच-जीवनक अनेक कथा सभ अछि जे सम्प्रति सभटा लिखब सम्भव नहि।

पाछू तँ, कालान्तरमे, जाहिठाम ओ अध्यक्ष रहैत छलाह, मंच-संचालनक भार हमरहि दऽ दैत छलाह आ कहथि जे मायानन्दजी, आब अहीँ सम्हारू, अहाँकेँ खूब फुरैत अछि, अहाँक संचालन बड़ कटगर होइत अछि। आब तँ हम थाकि जाइत छी उठा-बैसीमे। आब तँ हम बूढ़ भेलहुँ ने ?

आह ! हरिमोहन बाबू किएक बूढ़ भेलाह !

मौसीजी तथा मौसाजी

डॉ० चन्द्रनारायण मिश्र

हमर मौसी (स्व० सुभद्रा झा) तीन बहिन छलीह—सभमे छोट छलीह ओ आओर पैघ छलीह हमर माय। एहि दूनू बहिनमे अत्यधिक स्नेह छलनि। ओहि स्नेहक छायामे हमर पालन-पोषण भेल। ओहि समयमे अपन मातृकक परिवारमे एकाकी नेना होयबाक कारणे परिवारक वात्सल्य-भाव पर हमर एकाधिपत्य छल आओर ओहि एकाधिपत्यक अभिभाविका छलीह हमर प्रातःस्मरणीया मौसी। माय कहैत छलीह जे हम सतत हुनके संग रहैत छलहुँ। ओएह हमर सभ देखभाल करैत छलीह। कतबहु उपद्रव करिअनि त' ने ओ कखनो डाँटथि-डपटथि आ ने ककरो डाँटब-डपटबके सह्य करथि। माय कहैत छलीह जे हुनके दुलारक कारणे नेनाक रूपमे हम बहसल आओर उपद्रवी छलहुँ।

ओहि समयमे हुनक विवाह नहि भेल छलनि। गामहिक स्कूलमे पढ़ैत छलीह। तीक्ष्ण बुद्धिक छलीह। अपरमे हुनका सरकारी स्कॉलरशिप सेहो भेटल छलनि, मुदा हमर बड़का बाबा (नाना) प्राचीन विचारक पण्डित छलाह। ओ हुनका आगू पढ़यबाक पक्षमे नहि छलाह। तें पाछूकालक हुनक शिक्षा-दीक्षा स्वतन्त्ररूपहिमे भेलनि। ओकर सभटा श्रेय मौसाजीकें छलनि। हुनकहि नवीन विचारक प्रभावमे आबिक' मौसीक व्यक्तित्वक ओहिरूपक विकास भेलनि जाहिसँ नवीन मैथिल नारीसमाज पूर्णतः परिचित होयत।

जखन बहुत छोट छलहुँ तखनुका बातसभ तँ ओतेक मोन नहि अछि, मुदा विवाहोपरान्त जखन मौसी पटनामे रहय लगलीह तखन हम प्रायः पाँचम वर्षकें पार क' चुकल छलहुँ। नेना अवस्थामे अधिक काल मातृकमे रहबाक अवसर होइत छल, मुदा ओतय मौसीक अभाव सर्वदा खटकैत रहैत छल। जखन कोनो छुट्टीमे दूनू गोटे आबथि तँ हमरा लेल उत्सवक अवसर जकाँ बूझि पड़ैत छल। परन्तु आब ओहि उत्सवक देवता बनि गेल छलाह मौसाजी (प्रो० हरिमोहन झा)। मौसी जकाँ ओहो हमरा बड़ मानथि। तें आब हम बेसीकाल हुनके लग रहिअनि। एक दिनक बात थिकै जे दलान पर हुनक लगमे बैसल रही। ओ किछु-किछु पुछैत रहथि कि एही मध्य एकटा पण्डितजी ओतय पहुँचलाह। ओ हमर बाबाक पुछारी करैत आयल छलाह। किछुकाल बैसलाक बाद जखन हुनका बुझबामे अयलनि जे हुनक सम्मुख बैसल व्यक्ति ओएह प्रो० हरिमोहन झा छथि जे प्राचीन मैथिल परम्परा पर व्यंग्य करैत रहैत छथि त' ओ ओहि चौकी पर वीरासनमे बैसिक' शास्त्रार्थ प्रारम्भ क' देलनि। हम ओहि समयमे एतबा छोट छलहुँ जे सभटा विषय बुझबामे नहि अबैत छल। मुदा एतबा स्मरण अछि

जे शास्त्रार्थक भाषा विशुद्ध संस्कृत छल। मौसाजीके धारा-प्रवाह सुन्दर संस्कृतमे बजैत देखि ककरो ई अन्दाज नहि भ' सकैत छलैक जे ओ तथाकथित 'अङरेजिया' छथि। शास्त्रार्थ चलिते छलैक कि तावत्काल हमर छोटका बाबा (पं० सुन्दरलाल झा) पहुँचि गेलथिन। हुनका देखिक' मौसाजी चुप भ' गेलाह, मुदा ताहि सँ क्षण भरि पहिलुका ओहि अज्ञात पण्डितजीक अन्तिम वाक्य एखनहु तक हमरा स्मरण अछि। ओ कहने छलथिन—'हरिं मोहयतीति हरिमोहनः, अतएव भवान् राक्षसः'। बाबाकेँ समीपमे अबैत देखि खिसिआयल एवं निरुत्तर पण्डितजीक मुष्टि-युक्ति (argumentum ad baculum) क उत्तर मौसाजी अपन सहज मुसकीसँ देने रहथिन।

जे केओ हिनका ल'गसँ नहि जनैत होयथिन हुनक धारणा होयतनि जे दार्शनिक प्रो० हरिमोहन झा अत्यन्त शान्त एवं गम्भीर स्वभावक होयताह, बिन तार्किक' हँसैत-बजैत होयताह, अन्तर्मुख होयताह, इत्यादि। परन्तु यथार्थ ई थीक जे ओ एहि सभक सर्वथा विपरीत रहल छथि। ओ बच्चा जकाँ सरल एवं क्रीड़ाप्रेमी रहल छथि। ने त' ओ स्वयं मुँह फुलओने कतहु बैसल रहब पसिन्द करैत छथि आ' ने आन केओ ओहन व्यक्ति पसिन्द होइत छनि। हम जखन छोट रही त' देखियनि जे हमरा सभक संग नेना-भुटकाक खेल खेलाय लागथि। ईहो एकटा कारण छलैक जे हिनका प्रति नेना-भुटका सभ आकृष्ट होइत छल। एहि प्रसंगमे ओहि समयक एक घटना मोन पड़ि रहल अछि —

एक दिन मौसाजीक संग कलम दिस टहलबाक हेतु गेल रही। संगमे दू गोटे आओरो छलथिन। मुदा चारू गोटेक बीच नेना हमहींटा छलहुँ—६-७ वर्षक छल होयब। अयचाकाल मुनहारि साँझ भ' गेलैक। घर किछु दूरमे छलैक। मौसाजीक हठात ई विचार भेलनि जे घर शीघ्र पहुँचबाक प्रतियोगिता होयबाक चाही। ओ सभ ततेक झटकि क' चलय लगलाह जे हम बच्चा होयबाक कारणे हुनकालोकनिक डेगमे नहि सकलहुँ। कनेक कालक बाद ओ लोकनि दौड़य लगलाह आ हम पछुआ क' रातुक अन्हारमे भोतिया गेलहुँ। काँटकुशमे खसैत-पड़ैत हम बहुत कालक बाद अङना अयलहुँ। तावत् काल लोक सभ हमरा तकबामे व्यग्र छल। बाबा हमरा कनैत देखलनि त' सभ बात बूझिक' कनेक खिसिआयल स्वरमे कहने छलथिन जे प्रोफेसर भ' गेल छथि, मुदा नेनपन नहि गेल छनि।

तथापि हम बेशी काल मौसेक लगमे बैसैत छलहुँ। ओहि समय तक हम अक्षर बढ़ियाँ जकाँ बाँचि सकैत छलहुँ। मोन पड़ैत अछि जे ओ हमरा अपन 'कन्यादान' बाँचबाक हेतु दैत छलाह। पलंगक निच्चामे गाम भरिक कतेको स्त्रीगण बैसलि ओ सुनैत छल। बीच-बीचमे सभ हँसय जकर अर्थ हमरा नहि लगैत छल।

गर्भाष्टमक उपनयनक बाद एक वर्ष तक हमरा सदाचार तथा अमरकोश रटबाओल गेल। ओकर बाद लघुकौमुदी आदिक अध्ययन प्रारम्भ कयलहुँ। मौसाजी हमर पिताजीसँ आग्रह करथिन जे 'चन्द्र'केँ अंग्रेजी पढ़बियनु। हमर पिताकेँ से इष्ट नहि छलनि। ओ कहैत छलथिन जे अंग्रेजी पढ़लासँ अपन ब्राह्मणक कर्म छोड़ि देताह, आ दोसर बात ई जे एहि विद्यामे बड़ खर्च पड़ैत छैक। मौसाजी अन्तमे हुनका बुझओलथिन जे मैट्रिक तक त' कोनो बेशी खर्चक बात नहि अछि आओर तकर

बाद आनो उपाय भ' जेतैक। हमर माय मौसाजीक बातक अनुमोदन कयलथिन। अपनहु ओएह इच्छा छल। फलतः प्रथमा पास कयलाक बाद स्कूलमे भर्त्ती भ' गेलहुँ। किन्तु, मैट्रिक पास क' जखन अग्रिम पढ़ाइक विचारक लेल पटना गेलहुँ त' ने जानि कोन एहन दुःस्थिति आबि गेल छलनि जे मौसाजी शारीरिक एवं मानसिक रूपसँ विचित्र जकाँ बूझि पड़लाह। भ' सकैत छैक जे कोनो पारिवारिक दुर्घटनाक कारण एना भ' गेल छलनि। एहन असाधारण स्थितिमे बूझि पड़लाह जे हमरालोकनिकेँ चिन्हलनि तक नहि। मौसीजी एहि असाधारण स्थितिक सम्बन्धमे किछु कहने छलीह जे सम्प्रति स्मरणपथ सँ हँटि गेल अछि। तखन पटनाक विचार छोड़ि भागलपुर एवं वाराणसीमे पढ़लहुँ। एकर परिणाम ई भेल जे अनेको वर्ष तक मौसीजी एवं मौसाजीक दर्शन नहि भ' सकल।

मुरारका कॉलेज, सुलतानगंजमे सेवारत भेलाक बाद कहिओ-कहिओ जखन पटना जाइत छलहुँ तऽ मौसीजी एवं मौसाजीक दर्शन क' तृप्तिक लाभ करैत छलहुँ। एकर सन्तोष होइत छल जे हमरा प्रति हुनकालोकनिक स्नेह एतेक दिनक बादो बनल छनि। जखन सुलतानगंजक बाद आर० डी० एण्ड डी० जे० कॉलेजमे अयलहुँ त' अवसर बना क' दर्शन-परिषद्‌क आयोजन कयलहुँ जकर ओ मुख्य अतिथि छलाह। ई प्रायः '६७-६८क बात थीक। हमर डेरा पर दून गोटे चारि दिन रहिक' हमरा-लोकनिकेँ कृतार्थ कयलनि। ओ जावतकाल रहथि तावतकाल इएह बूझि पड़य जे घरमे कोनो महोत्सवक अवसर आबि गेल अछि। मौसाजीक ई विशेषता छनि जे ओ जतय रहताह ओतय मनहूसी कोनो रूपमे नहि टिकि सकैत अछि। हुनक हास्य भरल गप्प एवं विनोदी स्वभाव विषण्णसँ विषण्ण व्यक्तिकेँ क्षण भरिक लेल हँसबाक हेतु बाध्य क' दैत छैक। मैथिली साहित्यमे जे हुनक हास्य आओर व्यंग्यक अद्‌भुत रूपक दर्शन होइत अछि ओ हुनक सहज सिद्ध गुण छनि। मुंगेरमे एक दिन सब गोटे भोजन पर बैसल छलहुँ। हमर पातमे भातक परिमाण कम देखि ओ हँसैत पुछलनि—'चन्द्र, अहाँक गामक लोक त' तौला भरि खाइत अछि तखन अहाँ किएक तोला भरि खा रहल छी ?' मौसाजीक साधारणो गप्पमे उक्ति-चमत्कारक अंश अवश्य रहैत छनि। साधारण पाठक हुनका केवल मैथिली-साहित्यक एक विशिष्ट स्रष्टाक रूपमे जनैत छनि, मुदा जे केओ हुनक घनिष्ट सम्पर्कमे आयल छथि हुनका ई बुझबामे भाङठ नहि रहल होयतनि जे मौसाजीकेँ अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत आओर मैथिली पर समान रूपक अधिकार छनि। दर्शन शास्त्रक त' ओ मूर्धन्य विद्वान छथिहे जकरा लेल प्रमाणक कोनो आवश्यकता नहि।

मौसाजीक दृष्टि शास्त्रक क्षेत्रमे अत्यन्त व्यापक आओर तलस्पर्शी छनि। शास्त्रक आलोड़नक त' अभ्यास जकाँ बनि गेल छनि। हुनकासँ जखन भेंट होइत छल त' किछु-ने-किछु शास्त्रक विषय अवश्य पूछि दैत छलाह। जिज्ञासा एकर रहैत छलनि जे हम कोना-की कार्य कयने छी अथवा करैत छी। समुचित उत्तर पाबिक' कतेको बेर हुनका गद्‌-गद होइत देखने छलियनि। मुंगेर आयल छलाह त' एहि पूछ-ताछमे पहर राति बीति जाइत। एक राति ई भेलैक जे बाद-विवादमे अढ़ाय बाजि गेलैक। हुनका समयक बोधे नहि रहलनि। तखन मौसीजी आबि क' कहलथिन—'अहाँकेँ औँघी नहि लगैत अछि त' की धियोपुताकेँ नहि सूतय देबैक ?' एतबा कहि क' हमरा आज्ञा देलनि—'जाउ, आब सूतू ग', मोन खराब भ' जायत।' मौसाजी घड़ी देखलथिन। हँसिक' आश्चर्यसँ कहलथिन—'हमरा एकर कोनो ध्यान नहि छल। चन्द्रक संग शास्त्रीय गप्प करबामे बड़ मोन लगैत अछि।'

कखनहु-कखनहु ओ अत्यन्त साधारण विषय पुछैत छलाह। मुदा ओ विषय एहन रहैत छलैक जाहि पर लोकक ध्यान नहि जाइत छैक। एक दिन पुछने छलाह—'हिन्दीक पैघ-पैघ विद्वान-लोकनि लिखैत छथि जे "उनकी भाषा सशक्त है और लेखनी सक्षम है"—ई वाक्य ठीक छैक ?'

हम क्षण भरिक लेल चुप भ' विचारय लगलहुँ जे बिना कोनो विशेष बातक मौसाजी एहन साधारण विषय नहि पूछि सकैत छथि, यद्यपि आइ तक अन्ध परम्पराक धारामे पड़िक' एहि बात पर स्वयं कहियो ध्यान नहि गेल छल। दोसरे क्षणमे स्फूर्त्ति भेल आओर हम उत्तर देलियनि जे 'शक्त' एवं 'क्षम' शब्द होयबाक चाही। मौसाजी समुचित उत्तर पाबि बड़ प्रसन्न भेलाह। कहलनि—'कतेको गोटेकेँ हम ई विषय पुछने छलिऐक, मुदा सभ एकरा शुद्धे कहने छल।'

मौसीजीसँ अन्तिम दर्शन एहि वर्षक प्रारम्भमे भेल छल। कोनो कार्यवश पटना गेल छलहुँ। दोसर दिन मध्याह्नमे पटना छोड़ि देबाक छल, तेँ प्रातःकालमे दर्शनक हेतु टिकिया टोलीक डेरा पर गेलहुँ। मौसाजी सूतिक' उठले छलाह। प्रणामक बाद कहलनि—'बढ़ियाँ कयल जे आबि गेलहुँ। हम दूनू गोटे आब केवल दिन गनि रहल छी। प्रश्न ई अछि जे पहिने हम की ओ।........ हमरे सेवा करैत-करैत अहाँक मौसीक ई स्थिति भेल छनि। तेँ हमरा तऽ आब भारतीय दर्शनक कर्मवाद पर सन्देह भऽ रहल अछि।'

मौसाजीक हाथमे तखन अपन आत्मकथाक प्रूफ छलनि। अपन 'बालादित्य'क एक कॉपी देलियनि जकर किछु अंश पढ़िक' सुनयबाक आज्ञा देलनि। ओ सुनिक' मौसाजीक जे सम्मति छलनि तकर उल्लेख आत्मश्लाघा बूझल जायत, तेँ ओकर चर्चा नहि क' रहल छी। ओकर बाद दोसर कोठलीमे गेलहुँ जतए मौसी पड़लि रहथि आओर देआदिनी पएर दबा रहलि छलथिन। हमरा देखि क' कोनहुना बैसलीह। मुखमण्डल उज्जर रहनि तथापि ओएह वात्सल्यभाव दृष्टिगोचर भेल जे पहिने देखैत छलियनि। अपन भोज्य वस्तु रामदानाक एकटा लाइ हाथमे देलनि। हुनक हाथक इएह अन्तिम प्रसाद छल।

किछु मासक बाद भुवनजीक लिखल पत्र भेटल जाहिमे मौसीजीक श्राद्धमे सम्मिलित होयबाक आग्रह छल। हम स्वयं अस्पतालमे भर्त्ती छलहुँ। बेड पर पड़ल-पड़ल हृदयक अश्रुजलसँ मूक तिलांजलि टा दऽ सकलियनि।

हुनक साहचर्य, सान्निध्य एवं किछु संस्मरण

श्री गोपालजी झा 'गोपेश'

किछु मैथिलेतर लोक एखनहु धरि इएह बुझैत छथि जे मैथिलीमे साहित्यक नाम पर जे यथा-विभव अछि तकर दावेदार यथार्थत: दुइए गोटे छथि—एकटा मैथिलकोकिल विद्यापति आओर दोसर प्रो० हरिमोहन झा। सामान्य लोक जेना विद्यापतिकेँ हुनक मात्र पदावलीक आधार पर जनैत अछि—विद्यापति पर्व गाम-गाम मनबैत अछि, इएह स्थिति कतहु हरिमोहन बाबूक प्रसङ्ग ने कहियो जा कए भए जाए, हमरा किछु एहने सन आभास भेटैत अछि। कन्यादान आ द्विरागमनक लेखककेँ मिथिलाक प्राय: अपढ़ आ पढ़ल-लिखल दुहू वर्गक लोक अपना-अपना ढंगसँ जनैत छथिन्ह, आ हुनका संबंधमे बहुत किछु कहैत छथिन्ह।

हमर पालन-पोषण मातृकहि'मे भेल छल। ओहिठाम अपन बाल्यावस्थामे हम कतोक गोटेक मुँहसँ सुनने छलहुँ—"हरिमोहन झा सन चोटगर लिखनिहार सातो जन्म ने मैथिलीमे जन्म लेताह।' ई बात हम स्मरण-शक्तिक आधार पर लिखल अछि। ज्वाला बाबू आ पलट बावाजी तेँ एक दिन पाटी पोखरि पर बाजियो लभओलन्हि जे के पैघ—हरिमोहन झा आ कि कोथुँवला पंडितजी?[2] एकर फरिछौट कएलनि बाबू श्री उपेन्द्रनाथ झा, जे चन्द्रनगर ड्योढ़ी (राँटी)क तत्कालीन मैनेजरक पद सुशोभित करैत छलाह। हुनक कथ्य छलन्हि जे 'अपूर्व रसगुल्ला' आ 'टटका जिलेबी'क अलग-अलग स्वाद छैक आ 'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन'क अलग आनन्द। दुहू अपना-अपना स्थान पर स्वतंत्र उत्कर्ष रखैत अछि। जखन उपेन्द्र बाबू ओहि गप्पकेँ दोसर दिशामे मोड़ि देलथिन्ह तखन पलट बावाजीकेँ थम्हल नहि भेलन्हि—ओ चोट्टे चल गेलाह बसीली टोल पर आ हरिमोहन बाबूक अन्तरंग मित्र श्रीयुत बाबू भोलालाल दासक ओतए एहि गप्पकेँ लाड़ि देलथिन्ह। १९२९ इ०मे (जहिया हमर जन्महु नहि भेल छल) श्रीयुत बाबू रामलोचन शरण एकटा 'मिथिला' नामक मासिक बहार कएने रहथि जकर संपादक-मंडलमे बाबू भोलालाल दास रहि चुकल छलाह। भोला बाबू आ पलट बावाजीक सम्भाषणक ई बड़ पुरान घटना थिक। ने वर्ष ठेकान अछि ने महीने। हमर अवस्था खाहे जे रहल हो, बुझए-सुझएक अवगति हिसाबे सँ छल। पलट बावाजीकेँ बाबू भोलालाल दास, बी० ए०, एल० एल० बी० सुनबए लगलथिन्ह कन्यादानक श्रीगणेशक कथा। एही क्रममे किसान पुस्तकालय, कसरौरक तत्कालीन पुस्तकाध्यक्ष आ कसरौर ग्रामक उत्साही युवक रूपनजी टिपि देलथिन्ह—

---

१. कसरौर निवासी परमेश्वरीदत्त झाक ओतय।

२. पं० काशीकान्त मिश्र 'मधुप'।

ठीके कहलिऐक अपने। 'कन्यादानक प्राक्कथनहुमे ई बात लिखल अछि।' बाबू भोलालाल दास टोकल—'कोन बात ?'

'इएह जे एक दिन संध्याकाल अपने प्रो० हरिमोहन झाक ठांठ पर सवार भ' गेलिअन्हि जे मिथिलाक अंतिम फर्मा हुनके लेख बेत्रेक रुकल छैक, तेँ ओ झट द' किछु लिखि देथि जे काल्हि छपि जाए।''

भोला बाबू रूपनजीक गप्पकेँ मोजर दैत आगाँ बढ़लाह—'हरिमोहन बाबूक प्रतिभाक विषयमे की कहल जाए—हुनका राति भरिमे जे किछु फुरलन्हि से लिखि कए दए देलन्हि—इएह थिक कन्यादानक पेनी छनवाक ऐतिहासिक वृत्तान्त।' ई सभ बात हमरा स्वयं मोन नहि अछि। भोला बाबू, रूपनजी आ पलट बाबाजीक बीच जे गप्प-शप भेल तकर वृत्तान्त रूपनजी कहियोकाल वर्णन रहैत छथि।

कन्यादानक किछु अंश बहरइतहि आलोचनाक ठीके बिरड़ो उठि गेल छल। हमर ममिऔत स्वनामधन्य प्रो० डॉ० अनिरुद्ध झा ४०-४१मे कलकत्ता विश्वविद्यालयक स्नातकोत्तर दर्शन विभागक एकटा मेधावी छात्रमे परिगणित होइत छलाह। पटना विश्वविद्यालयक एकटा अत्यन्त प्रगतिशील एवं मेधावीयुवक बुझल जाइत छलाह रसिआरी (दरभंगा) निवासी श्री लखन झाजी (जे पछाति डा० लक्ष्मणझाक नामे ख्यात भेलाह)। श्री अनिरुद्ध झा एवं श्री लखन झा दुहु गोटेकेँ छाड़ि प्रगतिशीलता एवं रचनात्मक एवं समाज सुधारात्मक क्रान्तिक अग्रदूत औहि समयमे केओ नहि छलाह सम्पूर्ण शरीर प्रगन्ना भरिमे। ई अत्युक्ति नहि, एकटा सत्य कथा थिक। बूझि पड़ैत छल जे गाँधीक रचनात्मक क्रान्तिक ई दुनू गोटे एकटा समर्पित सिपाही छथि। जहाँ धरि हरिमोहन बाबूक सम्बन्ध अछि, ओ नारी-जागरणक शंखनाद सर्वप्रथम मैथिलीमे साहित्य रचना द्वारा कएल। ४० ई०मे हमर भाइजी अपना सङे हमरा कलकत्ता ल' गेल रहथि। हुनक डेरा छलन्हि १०/१ राधा माधव शाह लेन (बड़ा बजार)मे। एहिसँ पूर्व रहैत छलाह ओ वणिक प्रेस (१ सरकार लेन)मे। वणिक प्रेसमे जे हुनक बौद्धिक परिवेश छल, ताहि प्रसङ्गमे एक-दू शब्द कहब अप्रासंगिक नहि होयत। मरांची (बरौनी) निवासी श्री लक्ष्मीनारायण ईश्वर प्रो० हरिमोहन झाक अनन्य प्रशंसकमे सँ छलाह। वणिक प्रेसमे (अपन पेटीसँ) कन्यादानक एक प्रति ओ हमरा उपहार स्वरूप देलन्हि। लक्ष्मीनारायण ईश्वरकेँ कन्यादानक ओ प्रति भेँटमे भेटल छलन्हि। दर्लसिंहसरायक बीड़ी बनओनिहार कोनो मर्चेन्ट हुनका ओ पुस्तक देलथिन्ह आ' कहलथिन्ह जे बी० एन० कालेजक एकटा मैथिल प्रोफेसर ई किताब लिखिकए सम्पूर्ण मिथिलाक लोकमे चेतना जगओलन्हि अछि। हम पूरा पोथी बाँचि गेलहुँ आ सुनाए देलिअन्हि, मदन बाबू आ अन्यान्य लोकनिकेँ। जे-से।

२२बी चोरबगानमे १९४०क बीच रहैत छल मैथिलक ठट्ठ। एक दिन हमरा ओतहि पं० बदुआजी मिश्रक दर्शन भेल। ओ २२बीमे रहनिहार मैथिल बन्धुकेँ मैथिली-भाषा साहित्यक सम्बन्धमे किछु प्रवचन दए रहल छलाह। ठनठनियाँ कालीक मन्दिरमे सझुआर(दरभंगा) ग्राम निवासी किछु पंडित रहैत छलाह। ओ लोकनि ओहिठाम 'कन्यादन'क कटु आलोचना करब शुरू कएलन्हि। एहि पर हमर ममिऔत (प्रो० अनिरुद्ध झा) हरिमोहन झाक पक्ष लैत कहलथिन्ह—अहाँ लोकनि एहिठाम सभामे जँ किछु व्यवधान उपस्थित करबैक तँ कलकत्तामे रहनिहार प्रगतिशील मैथिल

समाज चुपचाप बैसल नहि रहत। हुनका उठितहि विरोधीलोकनिक धारा भारत भ' गेलन्हि। पं० बबुआजी मिश्रक भाषणोपरान्त एक आमित कविता पाठ कएलन्हि—हुनका २२बीमे सभ केओ 'सरकार' 'सरकार' कहिक' सम्बोधित करैत छलन्हि। ओ कहाए रहैत छलाह, कोन गामक निवासी छलाह, से हमरा ठीकसँ नहि बूझल अछि। प्रो० जगदेव मिश्र हुनका सम्बन्धमे नीक जकाँ प्रकाश दए सकताह।

माउबेहटक प्रो० उमाचरण झा (राँची विश्वविद्यालय) अपन पिताक संग सेहो तहिया २२ बीमे रहैत छलाह। ओ २२बीमे 'बटुक' नामे कहाएत रहथि आ तहिआ मैट्रिकक छात्र सेहो छलाह। हरिमोहन बाबूक प्रति हुनका असीम श्रद्धा छलन्हि। ओ हमरासँ एक दिन मजाकहि भाव मे कहलन्हि —विद्यार्थी, फकड़ा बनबैत छी? हम कहलियन्हि—अहाँ कोना बुझलिऐक? ओ कहलन्हि जे जखन 'सरकार' अपन कविता 'दो थन वाली गैया' सुना रहल छलाह - तखन अहूँ मूड़ी डोलाए रहल छलहुँ। हम हुनका अपन बनाओल एक-दूटा टुकड़ी सुना देलिअन्हि। ओ कहलन्हि जे हरिमोहन झा एहि गाम घरि कलकत्ता अएबा लेल छथि। एही ठाम हुनक भाषण होएत—तेँ अहाँ ओहि दिन अवश्य उपस्थित रहब। रसियारी (दरभंगा)क करिया श्याम बाबू सेहो २२बीमे रहैत छलाह। ओ बटुकक गार्जियन छलथिन्ह आ' हमरो बड़ा मानैत रहथि। रसियारीक कमलाकान्त मिश्रजी सेहो २२बीमे रहैत छलाह आ तिवारी मेसमे भोजन करैत छलाह। कमला बाबू, भोगेन्द्र बाबू, श्याम बाबू प्रभृति कलकत्ताक तत्कालीन मैथिल बुद्धिजीवी मे गनल जाइत रहथि।

मोन अछि १९४०मे (२२बी मध्य) आयोजित ओ सभा। ओहि समयमे रामलोचन शर्मा 'कंटक' (जे किछु दिन अनुवाद विभाग, बिहार सरकारमे सेहो अनुवादकक पद पर प्रतिष्ठित छलाह) अपन सारगर्भित भाषण मे प्रो० झाक स्वागत कएल। आराक लाला कृष्णरंजनशरणजी (कलकत्ता विश्वविद्यालय मे कानूनक छात्र) प्रो० झाकेँ माला पहिराओल। प्रो० झा अपन संक्षिप्त भाषणमे 'कन्यादान'क विरोधीलोकनिक उत्तर ततेक युक्तिपूर्ण ढंगसँ देलन्हि जे थपड़ीक गड़गड़ाहटिसँ सभा-भवन गूँजि उठल। हरिमोहन बाबू की बजलाह तकर शब्दश: रिपोर्ट लिखबाक क्षमता तहिआ हमरा नहि छल। हाफ पैंट आ हाफ शर्ट पहिरैत छलहुँ। पासिंग शो सिगरेटक डिब्बा पर (टोप पहिरने) सिगरेट पिबैत साहेबक जे फोटो छलैक, वैह एकटा डिब्बा भाइजी कीनि देने छलाह। ओहीमे कन्यादानक पोथी ल'क' २२बीमे जूमल छलहुँ जे हरिमोहन बाबू सँ पोथी प्रेजेन्ट करा लेब। ओ लिखिओ देलन्हि – 'Presented to Kanhaia Jee, with affction—Harimohan jha'। ओ पोथी नोकरीमे अएलहु पर हमरा जिम्मा छल – भरिसक केओ पढ़ए लेल लए गेल से पुन: नहि घुमओलक।

एक दिन गिरीश पार्क मे बंगालक महान कवि रवीन्द्र नाथ ठाकुरक काव्य-पाठ छल। अपार जनसमूहकेँ देखि कए हम भाइजी सँ सहजहि प्रश्न कएल—"की हरिमोहन बाबूक मीटिंगमे एतेक लोक कहिओ जुटतन्हि? जखन ओहो मैथिलीक क्षेत्र मे अति उच्च छथि, तखन बेसी लोक हुनक आलोचके किएक छन्हि?" एकर उत्तर भाइजी देलन्हि—"जकर बेसी आलोचक होइत छैक, ओएह वस्तुतः उच्च होइत अछि। जेँ कि हरिमोहन बाबूक साहित्यमे किछु तत्व छन्हि तेँ ओहि पर रंग-विरंगक प्रतिक्रिया ठाम-ठाम व्यक्त होइत अछि।"

कलकत्ताक वृतान्त एतहि छोड़ि कए आब हम अपन स्कूल आ कॉलिजक जीवन आ ताहि क्रममे हरिमोहन बाबूक साहचर्यक उल्लेख प्रारम्भ क' रहल छी। १९४८ मे हम बी०बी० कालेजियट स्कूल सँ मैट्रीकुलेशन पास कएल। हमरालोकनिक तत्कालीन प्रधानाध्यापक छलाह श्री रामचन्द्र प्रसाद सिंह। ओ अनेक बेर क्लास में हरिमोहन बाबूक चर्चा करैत छलाह। हुनक कहब छलन्हि जे प्रो० झा सदृश बड़ कम मेधावी छात्र तिरहुत कमिश्नरीमे जन्म लेल।

जी०बी०बी० कॉलिजसँ हम १९५०मे इन्टरमिडियट (कला) पास कएल। ओहि कालेजमे हमरालोकनिक एकटा अँग्रेजीक प्राध्यापक छलाह प्रो० डी० पी० वर्मा। ओ सदिखन प्रो० हरिमोहन झाक कैरीकेचर कएल करथि। 'कन्यादान'क चतुर्थी रातिक सुखद एवं पुलकनकारी कल्पनाक बयान करैत प्रो० वर्मा सी०सी० मिश्रक शब्दावली जोर-जोरसँ भाखए लगैत छलाह।

अँगरेजीक ट्यूटोरियल छलैक—हमरालोकनिक प्रिंसिपल छलाह प्रो० फजलुर रहमान। ओ कमरा नं० १६ मे प्रथम वर्षक छात्र कैँ 'शी स्टौप्स टू कंकर'मे मार्लोक चरित्र पर लेक्चर दए रहल छलाह आ एम्हर हमरालोकनिकेँ प्रो० डी० पी० वर्मा अँगरेजी क्लासमे सी० सी० मिश्रक कल्पना-जगतक झाँखी देखाए रहल छलाह—"यदि मजनू सचमुच लैला से प्रेम रखता था, फरहाद शीरी के लिए जान देता था, युसुफ जुलेखा पर मरता था, रोमियो जुलियट को प्यार करता था, अन्टोनियो क्लियोपेट्रा पर फिदा था, बेसैनियो पोसिया पर मोहित था, और उनलोगों को तराजू के एक पलड़ा पर बैठा दिया जाय और दूसरे पलड़े पर सी०सी० मिश्र बैठ जायँ तो सबके सब एकबारगी ऊपर उठ जायेंगे।" सी०सी मिश्रक भूमिका प्रो० वर्मा ताहि रूपेँ प्रस्तुत कएलन्हि जे बुझि पड़ए जे ओएह सी०सी० मिश्र छथि। सी० सी० मिश्रक जे धारणा सामान्य मैथिली पाठकक मानस पर ओहि समयमे अंकित छल से आधुनिकताक पराकाष्ठा कहल जा सकैछ। जे-से।

जखन हम बी०ए० मे दर्शन ऑनर्सक छात्र-रूपमे पटना कॉलेज मध्य (१९५०) प्रवेश कएलहुँ तँ हरिमोहन बाबूक विद्यार्थी होएबाक गौरव-बोध होएब सहज स्वाभाविक छल। ओ नीतिशास्त्र पढ़बैत छलाह। हुनक क्लास बड़ रोचक होइत छल। हमर भाइजी सेहो जी० बी० बी० कॉलेजसँ बदलि कए पटना कॉलेज आबि गेल छलाह। १९४८ वा १९४९ मे भाइजीक विशेष पत्र छलन्हि (एम०ए० मे) लौजिक, तेँ ओ ओकर अधिकारी विद्वान बूझल जाइत छलाह—ओ फर्स्ट ईयरसँ ल' कए एम० ए० धरिमे लौजिक पढ़बैत छलथिन्ह। हरिमोहन बाबू सेकेण्ड ईयरक छात्रकेँ पटना कॉलेज में इण्डक्टिव धरि लौजिक पढ़बैत छलथिन्ह। एहिठाम हम एकटा बातक उल्लेख करब अनावश्यक नहि बुझैत छी। हरिमोहन बाबूकेँ रसगुल्ला आ आम ततेक नीक लगैत छलैन्ह जे लॉजिक क्लासमे ओ खाली ओकरे उदाहरण दैत छलथिन्ह। हुनक लिखल निगमन तर्कशास्त्रमे रसगुल्ला आ आमक उदाहरण यत्र-तत्र-सर्वत्र भेटैत अछि।

एक दिन डॉ० डी० एम०दत्त छुट्टी पर कतहु गेल छलाह। हुनक आनर्स क्लास लेमए लेल प्रो० झा कक्षमे पहुँचि गेलाह। पुछलथिन्ह —'क्या पढ़ना है ?' केओ छात्र कहलकन्हि मेटाफिजिक्समे Subjective Idealism। ओ घड़ी देखलन्हि आ धारा प्रवाह जे व्याख्यान देब शुरु कएलन्हि से एखनहु धरि मोने अछि।

हम दाबीक सङ कहि सकैत छी जे आइ-कालिह शिक्षणविषयक स्तरीयता मे जे ह्रास उत्पन्न भ' गेल अछि, ताहि परिप्रेक्ष्यमे विश्वविद्यालयरूपी कारखानासँ बाहर भेल बहुतो दर्शनशास्त्रक विद्यार्थीकेँ प्रो० झाक व्याख्यान 'लैटिन' बूझि पड़तैन्हि। हुनक शब्दावलीकेँ बुझबा लेल दर्शन एवं साहित्यक प्रारंभिक ज्ञान अपेक्षित।

एक दिन नीतिशास्त्र मे किछु शंका-समाधानक हेतु हुनका ओतए पहुँचलहुँ। नैतिक मानदंडक किछु त्रुटि दिश इंगित करैत प्रोफेसर झा अपन वक्तव्य शुरू कएल—"सुखवाद (Hedonism) नैतिक आचरणक लेल उचित मानदंड देबामे फेल क' गेल, बुझलहुँ ने !" हम कहलियन्हि—"कोना ?" "अहाँ जनैत छी जे ओकरा अनुसारेँ अत्यन्त निकृष्ट, तुच्छ आओर हेय कर्मक परिणाम जँ शुभ थिक तँ ओ कर्म शुभ भेल। इन्द्रिय-सुखहि थिकैक ओकर ध्येय आ इन्द्रिय सुख आत्मगत वा सबजेक्टिव होइछ। ओकरा द्वारा 'अधिकतम संख्याक लेल अधिकतम सुख'क सिद्धान्तकेँ कोना स्पष्ट कएल जाएत ?" हम कहलियन्हि—"मिल साहेब गुणात्मक भेद द्वारा तँ ओकरा स्पष्ट कए दैत छथि।" प्रो० झा चाहक चुस्की लैत बजलाह—"मिल आओर बेंथमक प्रचलित सद्‌गुणक स्वीकारोक्तिक मूलमे सुखवाद नहि, हुनक रूढ़िप्रियता अछि।"

हमरालोकनिक एकटा मित्र छलाह—परमेश्वर सिंह। ओ नित्याबाबूकेँ कहलथिन्ह—"सर, आप जो उदाहरण देते हैं उनमें लड्डू और रसगुल्ले की कमी होती है।" एहि पर नित्याबाबू हँसि क' कहलथिन्ह—"धर्म-दर्शनमे तो इन उदाहरणों की कहीं गुंजाइश नहीं प्रतीत होती—भले ही 'लॉजिक' में गुंजाइश हो।" हरिमोहन बाबू कतहु सँ ई सुनि रहल छलाह—ओ चट द' बाजि उठलाह—"कैसे गुंजाइश नहीं है ? धर्म करने के लिए परसादी तो चाहिए ही, और परसादी से मधुर मिष्ठान्न को आप कैसे अलग कर देंगे ?" स्टाफ रूमक प्रत्येक शिक्षक एहि पर ठहाका लगा देल।

हरिमोहन बाबू गप्पेशपमे कहिओ काल किछु एहन-एहन बात बाजि दैत छथिन्ह जकर महत्व वैचारिक दृष्टि सँ बड़ बेशी होइत छैक। अखिल भारतीय दर्शन-परिषदक तेरहम अधिवेशन मे अध्यक्ष पदसँ भाषण दैत ओ जे किछु कहने छलाह से सहसा आइयो मोनकेँ झकझोरि दैत अछि—"आज जीवन-दर्शन की धारणाएँ टूट रही हैं। नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन हो रहा है। जनतांत्रिक पद्धतिमें संख्या का महत्व सर्वोपरि है। बौद्धिक एवं चारित्रिक गुण उसके समक्ष गौण हो गए हैं। एक विद्वान से दो मूर्खों का महत्व अधिक है, क्योंकि आज हाथों की गिनती से विचारों की मान्यता निर्णीत होती है, न कि ज्ञान के तुलादण्ड से।"

"हड़तालों, नारों, विध्वंसकारी प्रवृत्तियों का बोलबाला है; वर्तमान पीढ़ी क्षोभ, असन्तोष, कुण्ठा और विद्रोह-भावनाओं से ग्रस्त दिखाई पड़ती है। वह सीमाओं का उल्लंघन करना चाहती है, निरंकुशता की ओर बढ़ना चाहती है। वह 'बीटनिक' जीवन की ओर आकृष्ट हो रही है।"

जे-से। एहि दार्शनिक विचारधारासँ इएह निष्कर्ष बहराइछ जे हमरालोकनि चलैत-फिरैत कम्प्यूटर थिकहुँ—सूचना मशीनमे भरि दिअ' आ ओहि सँ सोचबाक काज ल' लिअ। जहिआ हुनक

पौत्र दमनजीक (नेन्नांहिमे) देहान्त भ' गेल छलन्हि तहिआ जे शब्द ब्रजने छलाह ओएह शब्दावली अपन धर्मपत्नी सुभद्रा देवीक देहावसानक पश्चातहु सुनओलन्हि—किताबक फिलॉसाफी किताबमे अछि आ जीवनक फिलॉसफी जीवनमे देखल जाएत।

हरिमोहन बाबू पटनामे घर नहि बनओलन्हि। चाहतथि तँ हुनका लेल ई कोनो भारी बात नहि छल। परञ्च घर-आङन बनएबाक लेल किछु टाका बाहर करए पड़ितन्हि, मेहनतिसँ कमाएल—कम वा बेसी टाका—आ ताहू पर सँ एतेक झंझटि के बेसाहैत? आ कदमकुआँ, मछुआटोली वा सालिमपुर अहरा दिस पन्द्रहसँ बीस हजारमे, हुनकहि शब्दमे, आदर्श मकान (PATNA HOUSE) कोना सुलभ भए पबितनि? जँ आङनसँ कनेक जोर कएल जइतन्हि वा बालकलोकनिमेसँ क्यो जिद ठानि दितथिन्ह, तखनहि ओ मकान किनवा दिस 'थाउट' दए पबितथि। हुनका हम कहैत सुनने छिऐन्ह—मारवाड़ी लोकनि मकानमे टाका नहि फँसबैत छथि; उद्योग वा व्यवसायमे टाका लगओलासँ ओकर सदुपयोग भनहि भ' जाए, किन्तु मकान किनवा वा बनएबामे हेडआ इनबेस्ट करब एक तरहेँ व्यर्थ थिक। पाछाँ जा कए हुनक एहि विचारधारामे किछु परिवर्त्तन भेल आ रजिस्ट्रेशनो करओलन्हि ५०टाका द' कए। रजिस्ट्रेशनक कागज पर मकान पएबाक कल्पनहु कए लेलन्हि। हमरा कहलन्हि—जखन हाउसिंग बोर्ड बला फ्लांट भेटि जाएत तँ डी० एम० दत्तक महेन्द्रू बला मकान टाइप घर बनाएब। कम्मे खर्च-बर्च मे भ' जाएत। तखन फेर ओहिमे साहित्यिक गोष्ठी इत्यादि चलैत रहतैक। हाउसिंग बोर्डक कोनो मैथिल पदाधिकारी पर एकटा प्रशस्ति सेहो कवितामे तैयार कएलन्हि। हुनको सुनएलथिन्ह आ हमरहुलोकनिकेँ सुनओलन्हि, किन्तु ने हुनका फ्लैट भऽ सकलन्हि आ ने प्लॉटे। हुनक स्मरणीय कागज-पत्र सङ्ग रजिस्ट्रेशनक प्रमाणपत्र एवं ओहि पदाधिकारी पर लिखल कविता दुहू नत्थी कएल हम देखने छलहुँ। आबहु भारिसक हुनक फाइलमे ओ सुरक्षिते होएत।

प्रोफेसर साहेबक सम्बन्धमे एक नहि अनेक संस्मरण हमर मानसपटल पर सुरक्षित अछि। छात्रावस्थासँ ल' कए एखन धरिक कतोक रोचक प्रसंग मोन पड़ैछ। एहि संस्मरणात्मक लेखमे सभ घटनाकेँ समेटि सकब संभव नहि, तथापि किछुक उल्लेख मोन पाड़ि कए रहल छी।

□ आभा चित्रम् दिससँ मैथिलीक प्रथम फिल्म 'कन्यादान'क कन्ट्रेक्ट साइन भेल होएत १९६३क अन्तमे वा १९६४क प्रारम्भमे। पटकथा लेखक नवेन्दु घोष यथासमय 'सिनेरियो' लिखि देल। निर्देशक फणि मजुमदार एवं निर्माता एस० एच० मुन्शी हमर काजीपुर स्थित निवास 'गोपाल कुटीर'मे वीणा सिनेमाक प्रोपराइटर श्री वीरेन्द्रकुमार सिंहाक सङ पहुँचलाह। हीरा बाबू हमरा सँ कहलन्हि—नवेन्दु घोष जे स्क्रीन प्ले बनओलन्हि अछि ताहिमे घटनाकेँ नव आयाम देबा लेल एवं कनफ्लिक्ट उत्पन्न करबा लेल एकटा साइड हिरोक समावेश कए देलथिन्ह अछि। 'अनिल' नामक युवक एहि रूपमे अभरल अछि जे सम्बन्धमे तँ बुच्चीदाइक भाइ लगैत छैक, किन्तु हाव-भाव सँ कथानायक सी० सी० मिश्रकेँ एकटा राइवल बुझि पड़ैत छन्हि। अन्तमे जखन भेद फुजैत अछि तँ ओही युवक द्वारा प्रेमीक स्वाँग रचब सी० सी० मिश्रकेँ छकएबाक एकटा योजना वा नाटक मात्र सिद्ध होइत अछि। हीरा बाबूक

बात कटैत हम कहलिएन्हि—मुदा हरिमोहन बाबू कथाक एहन मोड़के कोना अनुमोदन करताह ? बहुत तारतम्य भेल आ हम कहलिअन्हि जे माछ-भातक इन्तजाम करू—खएबाकाल हरिमोहन बाबू सँ स्वीकृति भेटि जाएत। सएह भेल। माछ-भातक सरंजाम भेल। छुरमा एयोकीसँ पटना जुआएल रोहु मङबाओल गेल छल। थारी सोझाँ आएल। नवेन्दु घोष गप्प लाड़लन्हि। हरिमोहन बाबू माछक तरल पेटीकेँ सुआदए लगलाह कि हम सन्दर्भ स्पष्ट कए देल। ओ तुरन्ते अपन स्वीकृति द' देलथिन्ह। हुनक शब्दावलीकेँ अविकल रूपमे हम प्रस्तुत कए रहल छी—'अरे, ई सब तँ टेकनिकल मैटर छैक—डाइरेक्टर, प्रोड्यूसर, डिस्ट्रीब्यूटर, फाइनेन्सर एवं सिनेरियो राइटर जे किछु करए चाहथि, हम कदापि बाधा नहि देबैन्हि। बेस, तँ आब अगिला गप्प करू।'

हीराबाबू एकटा कागज पर हुनकासँ अनुबन्ध भरएबाक प्रस्ताव रखलथिन्ह। ओ कहलथिन्ह—भोजनोत्तर जे अनुबन्ध करएबाक हो कराए लेब। माछक मूड़ा सुआदि-सुआदिक' भनसियाक तारीफक पूल बान्हि देलथिन्ह।

□ माँसुसँ बेसी हुनका माछे नीक लगैत छन्हि। विद्यापति जयन्तीमे आयोजकसँ माछक विन्यास करबा लेल पहिनहि शर्त कराए लेल जाइत छलन्हि। एक बेर हम दुनू गोटे डालमियानगर विद्यापति पर्व-समारोहमे सङहि-सङ गेलहुँ। आयोजक हमरालोकनिक ठहरबाक व्यवस्था जैन अतिथिशालामे कएने छलाह। अतिथिशालामे पहुँचैत देरी ओ कहए लगलाह—देखू ने, ई महाशय तँ एकदम्मे छका देलन्हि। अतिथिशालामे रहबाक मतलब जे हमरालोकनिकेँ असली चीज नहि भ' पाओत। आयोजकक ध्यान जखन एहिदिस आकृष्ट कराओल गेल तखन ओ सहसराममे जा कए हमरालोकनिकेँ एकटा होटलमे माछ-भात खोअओलन्हि।

प्रोफेसर साहेबकेँ जहिना माछ खएबाक सौख, तहिना खोअएबाक आवेस सेहो। 'कन्यादान'क आउटडोर सूटिंगमे (१९६४ई०मे) हम पन्द्रह-बीस दिनक हेतु मिथिलांचल दिस जखन प्रस्थान करए लगलहुँ तखन ओ कहलन्हि जे अहाँ कतहुसँ मारा माछ आ मरुआ रोटीक ओरिआओन कए हिरोइन लता सिन्हाकेँ अवश्य खोआ देबन्हि। जहाँ धरि मोन पड़ैत अछि जितिआ नजदीके छलैक। हम अपन सासुर दुलारपुरसँ गोट साठियेक मरुआक रोटी पकवा कऽ एक बड़का लोहियामे मारा माछ रन्हवा कए जीपसँ सोझे सकुरी ल' अएलहुँ—ओतए शूटिंग चलैत छलैक'। 'सिक्वेन्स' छलैक—'तार कोना पढ़ाओल गेल'। मरुआक रोटी आ माछ देखतहि मातर झारखंडीनाथक जीहसँ सेहो टप-टप पानि खसए लगलन्हि। शूटिंग सम्पन्न भेलाक बाद सभ केओ सुआदि-सुआदि कए ओहि लोक-भोजनक आनन्द लेबए लागल। परंच एकर पराभव ई भेल जे लता सिन्हा केँ तेहन कब्जियत ने भऽ गेलैन्ह जे तीन दिन धरि शूटिंग बन्ने रहल। भरि दरभंगा घोल भ' गेल जे मरुआ रोटी ओ माछक तीमनक कारणे कन्यादानक हिरोइन दुखित पड़ि गेलीह। पश्चाति सनाए पत्तीसँ हुनक कब्जियत दूर कराओल गेल। हरिमोहन बाबूकेँ जखन एहि सम्बन्धमे सूचना भेटलन्हि तँ हुनका दुख आ सुख दुहुक अनुभव भेलन्हि। दरभंगाक लोक-भोजन कतेक महग पड़ैछ तकर परिचय फनी मजूमदार आ कैमरा मैन चन्दू भाइकेँ सेहो भए गेलन्हि।

☐ रांचीमे एकटा कवि सम्मेलन आयोजित छल। ओहि कवि सम्मेलनमे सब रंगक वस्तु पढ़ल गेल। एकटा भोजपुरी युवक एकटा विरह-गीत प्रस्तुत कएलन्हि—'बलमुआँ हमसे रूसल बा'। बेचारे श्रोतामण्डलीसँ करतल ध्वनिक अपेक्षा रखैत छलाह, किन्तु हुनक शब्दावली तँ सभकेँ कर्णकटु लगैत छलैक। कतहुसँ केओ जखन ओकर प्रशंसा नहि केलकैक, तखन ओ प्रो० झाक मुँह ताकि पुनः एहि पंक्तिकेँ दोहरओलक—'बलमुआँ हमसे रूसल बा'। प्रोफेसर साहेब ओकर तोख पुरैत तखन झट द' बाजि उठलाह—"तऽ हमरो हाथमे मूसल बा।" एतेक सुनैत देरी लोक हँसैत-हँसैत लोट-पोट भऽ गेल।

☐ कुमार गंगानन्द सिंहजी तहिआ आकाशवाणीमे मैथिली प्रोग्रामक एडवाइजर छलाह। प्रोफेसर साहेब केँ ओ कहलथिन्ह—अहाँ मैथिली गीत सुनिक' अपन 'कमेंट्स' कने हमरा अवश्य कहब। प्रोफेसर साहेब जेँ कि रेडियो ट्यून कएलन्हि कि हुनका कर्णगोचर भेलन्हि—'बड़ रे जतन सँ सियाजीकेँ पोसल, सेहो रघुवर नेने जाए।' ई बेरि-बेरि तेहन तर्जमे प्रस्तुत कएल गेल जकर अर्थ स्पष्ट रूपेँ इएह केओ लगा सकैत छल जे सियाजीकेँ जे एतेक जतन सँ पोसल, तकर बिनु किराया चुकओनहि रघुवर हुनका लेने-देने चल जा रहल छथि, जे एकटा अनर्थक विषय थिक। प्रोफेसर साहेब अपन कमेंट्स मे ई बात लिखि देलथिन्ह जे गओनिहार सियाजीक पोसाइ माँगि रहल छथि, तेँ जावत कन्यापक्षके पोसाइ नहि देल जएतन्हि, तावत वरपक्षकेँ सियाजीकेँ ल' जएबाक अधिकार नहि।

☐ कतहु कवि सम्मेलन छल। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'केँ अबितहि प्रोफेसर साहेब बाजि उठलाह—अमरजी आबि गेलाह, आब उदासी नहि रहत। ताहि पर अमरजी कहलथिन्ह—"जाहि ठाँ 'इ' दास रहताह, ओतय 'उ दासी' किएक रहतीह? प्रोफेसर साहेब श्लेषक प्रयोग करैत अमरजीक पीठ ठोकि देलथिन्ह—एहि दास (अमरजी)केँ अबितहि 'उ दासी' लंक ल' कए पड़ाए गेलि।

☐ एकटा कोनो बंग महिला हुनका ओतए पहुँचलीह। ओ दर्शन शास्त्रक कतहु प्राध्यापिका छलीह। बौद्धिक चर्चा खतम भेलाक बाद प्रोफेसर साहेब पुछलथिन्ह—"आपको यदि हम पत्र लिखना चाहें तो किस पता से लिखेंगे?"

ओ महिला बाजि उठलीह—"समझा नहीं? पोती के पोता से?" दर्शनक महान् पंडित तारतम्यमे पड़ि सोचए लगलाह—ई भरिसक भासि गेल अछि—ई बताहि त' ने भए गेलि! ओ पुछलथिन्ह—आपके पोती की क्या उम्र होगी? ओ कहलकन्हि—केवल 'ट्वेन्टी टू।' ताहि पर ओ पुनः कहलथिन्ह—जिसकी उम्र स्वयं २२ है, उसको पोता कैसे हो जाएगा?" एहि पर हुनक शंकाक ओ समाधान करैत बाजलि—आपने फोलो ठो नहीं किया। मेरे कहने का मीनिंग है हसबैण्ड के एड्रेस से

लिखिएगा। ई सुनिक' प्रोफेसर साहेबकेँ अनेक गुस्सो तँ अवश्य ठोर पर अएलन्हि, किन्तु मर्यादाक रक्षार्थ कहलथिन्ह—ठीक है, अब बिल्कुल फोलो कर लिया।

☐ पटना कालेजमे कोनो एकटा पाण्डेयजी प्रोफेसर साहेबकेँ प्रश्न कएलनि—'प्रोफेसर झा, एक चीज बताइएगा? प्रोफेसर साहब कहलथिन्ह—एक क्यों, अनेक पूछ सकते हैं। तखन ओ बजलाह—'झाजी और पाजीमे क्या अन्तर है? एहि पर प्रोफेसर साहब कहलथिन्ह—केवल एक हाथ का। जितनी दूरी हममे और आपमे।

एहि पर ओ पुनः बाजल—और स्पष्ट कीजिए। प्रोफेसर झा कहलथिन्ह—हम हैं झाजी और आप हैं पाजी (अर्थात् पाण्डेजी)—और हम दोनो के बीच दूरी है महज एक हाथ का। ओ पाण्डेयजी निरुत्तर भ' गेलाह आ प्रोफेसर झाक संगहि हँसि उठलाह।

☐ एक बेर कोनो फिलोसॉफिकल कान्फ्रेन्समे प्रोफेसर साहेब श्रीलंका गेलाह। प्रोफेसर हुमायुन कबीर ओहि कान्फ्रेंसक सभापति छलाह। प्रोफेसर कबीरक मुह जे०सी० मायुर, आई०सी०एस० सँ मिलैत छल। प्रोफेसर साहेब जे० सी० माथुरक अन्तरंग होइतहुँ ई नहि बुझि सकलाह जे हुमायुन कबीर जे० सी० माथुर नहि थिकाह।

ओ आश्वस्त भए हुमायुन कबीरकेँ कहलथिन्ह—'माथुर साहब!, आपकी 'रीढ़ की हड्डी' पटने के नृत्यकला भवनमे हाल मे ही मंचन हुई थी।' एतेक सुनितहि कबीर साहेब बजलाह—'ह्वाट?' कबीर साहेबक मुहसँ 'ह्वाट' बहरइतहि प्रोफेसर साहेब नहु-नहु ओहिठामसँ ससरि गेलाह।

प्रो० झाक ततेक रोचक-प्रसंग अछि जे ओकरा सबकेँ एकठाम संकलित कराओल जाए तँ ओ केवल गप्पक फोड़नेक काज नहि करत, ओहिसँ जे नवनीत बहराएत से जीवन-यापनक हेतु एकटा उपयोगी सनेस होयत, से हमरा विश्वास अछि।

○

मैथिलीक नैहरमे मैथिली हास्यरसावतार

प्रो० धीरेन्द्र

नेनेसँ किताबक कीड़ा रहल छी। जखन प्रथमे कक्षाक छात्र रही तहियेसँ प्रेमचन्दक 'जंगल की कहानियाँ' सँ हमर पोथी पढ़वाक क्रम प्रारम्भ भए गेल। पढ़वाक तेहन ने लुतुक लागि गेल रहए जे एहिसँ नीक कोनो काजे ने लागए। आइयो ने लगैए। पाठ्य-क्रमक पोथीसभ जल्दिये पढ़ल भए जाए से बहुत रास समय बचि जाए। एहि समयमे हम पढ़वाक एही रोगसँ ग्रस्त अपन माँ-बाबूक छोट-छीन घरेलू पुस्तकालयक बेसीसँ बेसी उपयोग करी। माए-बापक ज्येष्ठ सन्तान हएबाक कारणेँ कोनो रोक-टोक नहि रहए तहिया। से एही अनुक्रममे एक दिन माँक संग्रहमे 'कन्यादान' भेटल। पोथीक ऊपरमे लेखकक नाम रहै हरिमोहन झा। हम पोथी उनटाओल। देखलियै मैथिली भाषामे रहै आ तहिया हमरा मैथिली एकदमे ने सोहाय—किएक ने किए, पोथी फेरि राखि देलियै। माँ पोथी रखैत देखलन्हि तँ पूछि बैसलीह—'किए राखि देलियै? पढ़ू ने। बड़ नीक पोथी छै। भाइक प्रोफेसर छथिन्ह एकर लेखक।"

हम माँक कहलासँ पोथी लए अपन पेटीमे राखि देलियै। पढ़लहुँ नहि, मुदा माँक मोन रखबाक लेल पोथी धरि राखि लेलहुँ। संगहि बड़का मामाक प्रोफेसरक गप्प सेहो हमरा आकृष्ट कएने छल। हमर श्रद्धेय माम—हमर बड़का मामा (अनन्त मिश्र) – पटनाक बी० एन० कॉलिजक छात्र छलाह। अपन बड़का मामा पर हमरा अपार निष्ठा छल। संगहि प्रोफेसर नामक जन्तु हमरा बड़ पैघ बुझाइत छल। तएँ पोथी पढ़ू वा नहि, मुदा प्रोफेसर हरिमोहन झाक नाम धरि तहिये माथमे अंकित भए गेल।

एहि घटनाक चारि दिनक बाद बड़का मामा अपन प्रिय छोटि बहिन अर्थात् हमर माँ सँ भेँट करैले अएलाह। प्रायः कोनो छुट्टी छलै से गाम आएल रहथि आ माँक हेतु दोसरो मैथिली पोथी सभ अनने रहथिन्ह। ओ पोथी सभ छल 'द्विरागमन' आ 'चन्द्रग्रहण'। हमरा ओहिना मोन अछि माँ हफसिकए दूनू पोथी लेने रहथि हाथमे। बड़का मामा कहने रहथीन्ह—"···बुच्ची! एहिमे एकटा हरिमोहन बाबूक थिक—हमर ओही प्रोफेसर साहेबक जे 'कन्यादान' लिखने छलाह। ई बुझू तँ ओकर दोसर भाग थिक आ दोसरो पोथी बड्ड नीक अछि। किरणजी सेहो बड्ड नीक लेखक छथि अपना भाषाक।"

हमरा माथमे ई दुनू नाम अंकित जेकाँ भए गेल आ मार्मिक गप्प इहो अछि जे इहो दुनू पोथी हम दफानि लेल। एखनहु अछिये हमरा लग। उपर्युक्त घटनाक प्रायः एक वर्षक बाद

एक दिन हम अपना गामक सुप्रसिद्ध महादेव विदेश्वरनाथक प्राङ्गणमे लागल मकरक मेलामे गेल रही से ओतए बड़का-बड़का पोस्टर साटल देखल—"प्रणम्य देवता" : प्रोफेसर हरिमोहन झाक अ र्व कृति। एकटा किताबक दोकानमे बिकाइत ई पोथी लोक सभकें हुफसि-हुफसिकें किनैत देखल। किनैत आ पढ़ि-पढ़ि सामूहिक रूपमे हँसैत। पोथी किनबाक बिज्जो नेनहिसँ अछि. से हमहूँ कीनि लेल। भेल जे माकें खुशी हएतन्हि; जे भेबो कएलन्हि, मुदा हम पोथी अपने नहि पढ़लहुँ। माँ जे पढ़थि से धरि सुनलहुँ। माथमे लेखकक जे नाम लिखा गेल छल ओ कने आर गहींर भए गेल। प्रत्येक व्यक्तिक ठोर पर 'प्रणम्य देवता'क नाम छल। एतेक धरि जे हमरा गामक सभसँ वृद्ध कनाह स्व० गंगानन्द काका, ओहो प्रोफेसर हरिमोहन झाक एहि कृतिक खूब प्रशंसा करथि। से हमरा माथमे अपन बड़का मामाक एहि लेखक प्रोफेसरक नाम अंकित भए गेल।

बादमे जखन हम मैथिलीसँ प्रेम करए लगलहुँ आ मैथिलीक पोथी सभ पढ़य लगलहुँ तँ, फूसि नहि कहब, हिनक रचना हमरा आतंकित कए देलक। आतंकित एहि अर्थमे जे हम मैथिलीक लेखक होवए चाहैत रही आ से जन-जनक मोनक धरती पर राज्य कएनिहार एहि महान् लेखकक आगूमे हमरा के पूछत? ई प्रश्न छल। हमरा बुतें एना हँसा-हँसाकए छड़ी मारल हएत? आ से हँसाएब छोड़ि हम कनयबाक पथ धएने रही। मुदा, एहि लेखकक प्रति आतंकपूर्ण निष्ठा छल; मने कोनो बौना हिमालयक शिखरकें देखय—ओतय जाएब कठिन बुझितहुँ श्रद्धा रखैत। 'वैदेही'मे लगातार हिनक रचना छपन्हि आ सत्य पूछल जाए तँ एही बलपर प्रारम्भमे "वैदेही" बिकाय। हमर गुरु प्रोफेसर कृष्णकान्त मिश्र एकर सम्पादक छलाह तहिया आ एहीमे हमर प्रथम मैथिली रचना "सभ्य लोक" (गल्प : सितम्बर, १९५३ ई०) छपल छल। 'वैदेही'मे छपल अपन पहिल मैथिली रचना पर गर्व भेल रहए, किएक तँ 'वैदेही' प्रतिष्ठित मानल जाए।

मोनक ई निष्ठे छल जाहिसँ हम जखन 'धीया-पुता'क सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ कएल (१९५१ ई०क जनवरीसँ) तँ हिनकहु पत्रिका प्रेषित कएल, कहए नहि पड़त जे आशीष भेटल छल आ निष्ठा द्विगुण भए गेल रहए।

मुदा बहुत दिन धरि दर्शनक सौभाग्य नहि प्राप्त भेल आ पहिले-पहिल ई अवसर भेटल तहिया जाहि दिन श्रद्धेय 'शेखर'जी हिनक इण्टरव्यू लेबाक हेतु बन्धुवर हंसराजक संग हमरहु हिनका ओतए जाइक लेल कहलन्हि।

तहिया रानीघाटवला विश्वविद्यालयीय क्वार्टरमे निवास छलन्हि आ जखन हमरालोकनि पहुँचल रही तँ नहाइत रहथि। हमरालोकनिकें एक बालिका (जे प्रायः प्रोफेसर साहेबक भतीजी छलीह) बैसक घरमे बैसाए देलन्हि। जावत प्रोफेसर साहेब आबथि, हम कोठरीमे नजरि खिराय एम्हर-ओम्हर देखैत रहलहुँ। सभसँ पहिने जाहि पर दृष्टि गेल ओ छल श्रद्धेय स्व० 'जनसीदन'जीक भव्य तैलचित्र। हमर हाथ अनायास प्रणामक मुद्रामे आबि गेल आ ताही समयमे प्रोफेसर साहेब कोठलीमे प्रविष्ट भेलाह। हमर हाथ प्रणामक मुद्रामे जोड़ले छल, पिताक चित्र दिशिसँ मात्र पुत्रक दिशि घूमि गेलहुँ! महान् साहित्यसेवी विद्वान् पिताक महान् साहित्यसेवी विद्वान् पुत्र!

हमरा सभके बैसक हेतु कहलन्हि आ तीतल माथ तौलियासँ पोछैत 'हंसराज' सँ हमर परिचय पुछलथिन्ह आ नाम जानि तुरत्ते कहि उठलाह—"'''वाह ! बड़ खुशी भेल। 'धीरेन्द्र' माने 'मार्मिक लेखक'। आ, पुनः भीतर दिशि घूमि चिकरैत जेकाँ बजलाह—"'''यै ! सुनैत छी ! देखू ! दू-दू गोट मैथिलीक नव कथाकार; आ ताहूमे एक 'मार्मी' धला 'धीरेन्द्र' !"

आ'''एहि संगहि जे सौम्या नारीमूर्त्तिक प्रवेश भेल हुनका हम पएर छूबि प्रणाम कएल। बहुत राश गप्प भेल। मातृमूर्तिक साहित्यिक गतिविधिक प्रसङ्गक गप्पमे आधिकारिक सहभागिता हमरा एखनहु मोन अछि आ इहो जे ओ कोना बीचमे कनेके उठिकए गेलीह आ फेर हमरा सभक लेल एक-एक रिकबी गरम-गरम पकौड़ी तैयार कए सिनेहसँ तत्परतापूर्वक खुआओल, चाह पियाओल। विदा होइतकाल कहलन्हि—"अहाँ सभ लिखू आ अपना ढंगसँ लिखू।"

हम कहने रहियन्हि—"अपनेक परम्परा—माने कथाकारक परम्परा—बढ़ैत रहैत, आशीष देल जाओ।" आ प्रणाम करैत विदा भए गेल रही। कहय नहि पड़त जे नीक प्रभाव पड़ल छल हुनक व्यक्तित्वक हमरा पर। मुदा एकटा गप्प जरूर कहब जे हम ताहि दिन धरि औपचारिकताक घेरसँ बहराएल नहि रही।

मुदा हुनक कथाकार पुत्र राजमोहनसँ भेंट जखन भेल आ हुनक जन्मक वर्ष आ अपन जन्मक वर्षक समताक ज्ञान जहिना राजमोहनकेँ हमर अन्तरंग मित्र बना देलक, तहिना प्रोफेसर हरिमोहन झासँ बदलि प्रोफेसर साहेब 'काका'मे परिणत भए गेलाह आ मातृमूर्त्ति 'काकी'मे। हम हुनका लग अनौपचारिक भए गेलहुँ आ एही अनुक्रममे हम हुनकालोकनिसँ अपन कर्मभूमि जनकपुर धाम अएबाक आग्रह कएल। कहलन्हि –" लऽ चलू।"

हम मोनहिमोन हुनका लए जयबाक योजना पर विचार कए रहल छलहुँ आ गप्प चलि रहल छलै मैथिली कथा-साहित्यक मादे ! माने गल्प आ उपन्यासक मादे। ओहि दिन हमरा संग प्रभास बाबू सेहो छलाह। विदा होइत काल ओहि दिन हम हुनका पएर छूबि प्रणाम कएल आ ओ गद्‌गद होइत बाजि उठलाह—"मैथिली कथा-साहित्यक तीन युग।"—अपना दिशि, हमरा दिशि आ प्रभास दिशि संकेत छलन्हि। हमसभ गद्‌गद छलहुँ।

आ, अकस्मात् एक दिन जखन साँझमे हम जनकपुरक डेरामे बैसल रही तँ हमर एक छात्र एकगोट दुब्बर-पातर सौम्यसन नवयुवककेँ लए हमर अध्ययन-सह-वार्ता-सह-शयनकक्षमे प्रविष्ट भेलाह। नवयुवक हमरा प्रणाम करैत बजलाह—"भैया ! हम मनमोहन। राजमोहनक छोट भाइ। बाबूजी सेहो आएल छथि आ ओही होटलमे जाहिमे अहाँ कहने छलियन्हि रुकल छथि। अहाँकेँ स्मरण करैत छथि। माँ आ बहिनदाइ सेहो छथि।"

हमरा केहेन आनन्दक अनुभव भेल छल से कहि नहि सकैत छी। साधनाकेँ ओतहिसँ अपन स्टाइलमे चिकरिकेँ कहलियन्हि—"'''यै ! सुनै छियै ! काका आएल छथि, काकी आ दीदी सेहो; आ हे ! एम्हर आउ !'''ई मनमोहन छी, राजमोहनक छोट भाइ। एकरो खिस्सा सभ तँ पढ़नहि छी।"

साधना हुलसिकें अएलीह, पुछलन्हि—"छथीन्ह कतऽ ?"—हम होटल 'होलीडे'क नाम कहल आ मनमोहन प्रणाम कएलकन्हि। गद्‌गद छलीह।

हम कहलियन्हि—"···हे, जल्दी जलखै तैयार करू हमरा दुनू भाइ ले, हम होटल भागव।"

ओ चटपट जलखै अनलन्हि आ हम आ मनमोहन होटल दिशि भगलहुँ। होटलक प्रोप्राइटर श्याम झुनझुनवाला स्वयं साहित्यिक रुचिक लोक। नाम सुनितहि हमरा पहुँचवासँ पूर्वे सभ व्यवस्था कए देने छलन्हि। हम सभ पहुँचलहुँ तँ चाह पीबि रहल छलाह। तीनू गोटाकेँ प्रणाम कएल। हृष्ट बुझएलाह प्रोप्राइटरक सौजन्यसँ! ओहिकाल साँझक छओ बाजि रहल छल। हम किछु काल गप्प कएल आ श्यामकेँ अपना ढंगसँ निर्देशन दए दिनिया कए विदा भेलहुँ। हमरा माथमे मैथिलीक एहि प्रतीकपुरुषक मैथिलीक नैहरक माटिपर स्वागतक योजना चक्कर दए रहल छल।

काज करबाक हमर अपन फूट प्रणाली अछि। कनेके कालमे समस्त नगरकेँ पता लागि गेलै जे प्रोफेसर हरिमोहन झा जनकपुर आएल छथि। एहिमे हमर प्रिय शिष्य आ मैथिलीक नेपालस्थ स्वनामधन्य साहित्यकार एवं पत्रकार श्री रामभरोस कापड़ि 'भ्रमर', दोसर प्रिय शिष्य तथा सुप्रसिद्ध समाजसेवी श्री उदयकान्त ठाकुर, कवि-कथाकार-प्रकाशक एवं हमर साहित्यिक शिष्य श्री योगेन्द्र 'नेपाली', मैथिली प्रेमी गायक तथा समाजसेवी मित्रवर श्री शुभकान्तजी एवं होटल 'होली डे'क अधिपति अपन अनुज मित्र श्याम झुनझुनवालाक बड़ बेशी सहयोग हमरा भेटल। ओना कतेक नाम गनाउ! समस्त नगर जेना बताह भए गेल छल। होटलमे भेंट कएनिहारक नहि, दर्शन कएनिहारक धरोहि लागि गेल। आ दोसर दिन साँझक छओ बजे जानकी मन्दिरक शीश-महलमे मैथिलीक एहि प्रतीकपुरुषक स्वागतार्थ भव्य समारोह आयोजित भेल। मन्दिरक भीतर आ बाहरक प्राङ्गणमे खचाखच लोक भरल छल। की मैथिली-भाषी, आ की नेपाली-भाषी। आबाल-वृद्ध-वनिता आ युवक-युवतीक समूह। करीब दस हजार लोक। जनक चौकसँ जानकी चौक धरि लोके-लोक। जेना मैथिलीक नैहर मैथिलीक एहि प्रतीक-पुरुषक दर्शनार्थ उमड़ि आएल छल, कोनो बताह जकाँ!

लोक सभ उपराग दैत छल जे ई आयोजन बारह-बीघा नामसँ प्रसिद्ध रंगभूमिक मैदानमे करब उचित छल हमरा। हमरा एखनहु मोन अछि नेपालक मैथिली प्रेमी भू०पू० प्रधान मन्त्री श्री तुलसी गिरिक अनुज आ अपन प्रकाशक आ मित्र एवं सुप्रसिद्ध प्रेस "हिमाली छापाखाना"क मालिक आ अपन मोटाइक हेतु नगर प्रसिद्ध श्री श्याम गिरिजीक उलहन—"···हे! प्रोफेसर साहेब! ई की कऽ देलियै।··· कहू तँ हम ऊपर कोना जाएब? कोना दर्शन करब?···"—आ हम पकड़िकए श्याम भाइकेँ ऊपर लऽ गेल रही।

तीन-तीन संस्था अर्थात् नेपाल मैथिली-साहित्य-परिषद्, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, मैथिली-शिक्षण-समिति तथा योगेन्द्रजीक मिथिला-नाट्य-परिषद् अपन-अपन अभिनन्दनपत्र अर्पित कएलक मैथिलीक एहि प्रतीक पुरुषकेँ। नेपाल-मैथिली-साहित्य-परिषद् दिशिसँ धोती तौनी-पाग अर्पित कएल गेल, त्रिभुवन-विश्वविद्यालय दिशिसँ एकटा नीक फाउंटेन पेन तथा आर-आर की-कहाँ। स्वागत भाषण करैत हम कहाँदन कवि भए गेल रही। गद्यमे कविता पढ़ैत रही। शुभकान्तजी तथा फिरन

झाजी, जे जनकपुरक प्रसिद्ध मैथिली-गायक मानल जाइत छथि, गीत गाओल। मित्रवर प्रो० श्रीकृष्ण प्रसादजी (जे नेपाली-भाषी छथि आ विद्यापति-पदावलीक नेपाली अनुवाद प्रकाशित करओने छथि) अपन मैथिली कविताक मरत भए पाठ कएल। महान् कथाकारक वयसकेँ दृष्टिपथ पर रखैत भाषणक स्थानमे प्रश्नोत्तरक व्यवस्था कएल गेल। जिज्ञासा हम रखैत गेलहुँ, उत्तर भेटैत गेल। जनकपुरक लोक शुभकामना प्राप्त कएलक, योगेन्द्रजीकेँ अपन एकाङ्की सभक संग्रह प्रकाशनार्थ देबाक वचन देलथिन्ह, हमरा आशीष भेटल आ जनकपुरक जनताक धन्यवाद सेहो। ओ.हे धन्यवादमे कृतज्ञताक भाव छल। लोक एकर सभ श्रेय हमरा दए रहल छल, मुदा सत्य ई अछि जे ई सभ माँ मैथिलीक कृपा छल, हुनक लीला जे अपन प्रिय ज्येष्ठ बालकक संग अपन प्रिय कनिष्ठ बालकक सूत्र जोड़ि देने छलीह। ई हमर प्रेयक प्रसङ्ग छल, श्रेयक नहि।

हम स्पष्ट कए देबए चाहैत छी जे जनकपुर वा मैथिली-भाषी क्षेत्रक नहि, समस्त नेपालक साहित्य-प्रेमी जगतमे मैथिलीक एहि वरद-पुत्रक लेल अपार निष्ठा एवं ममत्व छैक। हिनका हास्य-रसावतार एवं महान् दार्शनिक मानल जाइछ। अपन स्वर्गीय मित्र एवं नेपाली साहित्यक महान् व्यंग्यकार भैरव अयल, मित्रवर कुलमणि देवकोटा (जे स्वयंसिद्ध नेपाली व्यंग्यकार छथि) तथा हास्य-रसक साहित्यक प्रकाशक एवं साहित्यिक, "कौवा प्रकाशन"क अधिपति वासुदेव लुइटेल, महान् विद्वान् एवं साहित्यिक तथा हमर मित्र श्री कमल दीक्षितजी आदिक संग जे-जे गप्प भेल अछि ताहि आधार पर हम कहल अछि। अद्यावधि नेपालीमे पत्र-पत्रिकाक पृष्ठमे अनेक रचना प्रकाशित भेल अछि आ आब तँ कौवा-प्रकाशनक द्वारा हमरा द्वारा नेपालीमे अनूदित हिनक रचना सभक संग्रह सेहो प्रकाशित होबए जा रहल अछि। नेपालमे हरिमोहन बाबूक साहित्य एखनहु श्रद्धासँ पढ़ल जाइछ। डॉ० वीरेन्द्र मिश्र सन-सन हिनक शिष्यलोकनि हमरा खोधि-खोधिकए अपन गुरुजीक स्वास्थ्यक मादे पुछैत रहैत छथि।

से मैथिलीक नैहरक माटिपर हिनक स्वागतक उत्साह एही नेपाली-मैथिली-अनुरागक प्रतीक छल।

जनकपुर धाम ओहि दिन गद्गद छल। शुभकान्तजी रात्रि-भोजनक हेतु अपना बासापर व्यवस्था कए हमरा साधताक उलहनक पात्र बना देलन्हि। दोसरे दिन विदा हएबाक छलन्हि से हमरा अपन बासापर माछ-भातक भोजन करएबाक लालसाकेँ दबा लेबए पड़ल। शुभकान्तजीक विन्यासक तँ कथे नहि हो! माछक एहि महान् एडवोकेटक जेहेन व्यवस्था होएबाक चाही तदनुरूपे छल सभ व्यवस्था। असलमे सभक पाछू श्रद्धा निहित छल।

एहि प्रसङ्गक तीन गोट घटना आओर मोन पड़ैए। प्रथम छल मोटरमे नगर-परिक्रमा करैत काल पतियानी जोड़सँ ठाढ़ लोकक प्रणाम करब आ दोसर हमर ज्येष्ठ पुत्र चि० अजीत द्वारा कनेकटा कार्डपर अर्पित बाल-अभिनन्दन। लिखने छलाह ओ —

"बिजली दाइक पूज्यपिता! हम 'धीरेन्द्र'क नन्दन,
खटरकका केर सर्जक जय हो! करइत छी अभिनन्दन।"

मोन अछि, 'काका'क आँखि नोरा गेल रहन्हि आ 'काकी'क सेहो। काकी डओतसँ मधुर खोअओने रहथिन्ह। आइ काकी नहि छथि आ हमर आँखि नोरायल अछि। हम तँ नोरेक व्यापारी छी ने !

तेसर घटना विदा हएबा कालक अछि। फस्टगाक सिपाही गाम चेक करबाक लेल गाड़ीक कोठलीमे पैसल आ हम काका दिशि इंगित करैत कहलियै—"प्रोफेसर हरिमोहन झा।"

ओ श्रद्धासँ हाथ जोड़ैत बाजल—"खटर कका !" आ हमरा धन्यवाद दैत सोझे उतरि गेल।

ई थिक संक्षिप्त इतिवृत्त मैथिलीक एहि प्रतीक-पुरुषक मैथिलीक नैहर-यात्राक। सावनाक उपराग एखनहुँ सहैत छी—"डेरापर अनवे ने कएलियन्हि। हमरा दर्शन नहि भेल। हमहूँ माछ रन्है छी ने ! सओख छल खोअएबाक। अहाँ तँ अहिना अनके पाछू बेहाल रहैत छी।"—हम चुप भऽ जाइत छी। ओहि दिन भेंट करए गेलियन्हि तँ देखल हिमालय पघिलि रहल अछि। शिव सती लेल छटपटा रहल छथि। मोन कोनादन भए गेल। प्रायः नोरे सत्य थिक !

हास्य साहित्यकारक विनोदमय जीवन

श्री गौरीकान्त चौधरी 'कान्त'

सात जनवरी १९६५क साँझ आइ धरि हमरा ओहिना मोन अछि। आ जीवनपर्यन्त मोन रहत। ओ साँझ हमरा जीवनक संग एकटा इतिहास बनि आयल छल। व्यंग्य आ हास्य सम्राटक कथा आ उपन्यास सँ हम १९५३ सँ परिचित छलहुँ, दर्शनो एक बेर भेल छल, मुदा गप्प आ भेँट सँ हम वंचित छलहुँ। आइ० ए०, बी० ए० मे सेहो हुनक कथा आ कथा-संकलन 'प्रणम्य देवता' पढ़ने छलहुँ। ओहि दिन सँ एहि दिव्य पुरुषक भेँटक लेल आकुल-व्याकुल छलहुँ। एकटा साहित्यिक कार्यक्रम मे भेल दर्शन सँ हमर व्याकुलता आओरो बढ़ि गेल। किछु दिनक अध्यापकीय जीवनमे सेहो कए बेर हम हिनक दर्शन आ संगतिक योजना कयलहुँ, मुदा सभ असफल भेल।

प्राध्यापकक जीवन अल्प समयक रहल आ एहि बीच १९६४क २३ नवम्बरकेँ हम आकाशवाणीक सेवामे आबि गेलहुँ। पटना अयलाक बाद सुविख्यात कथाकार आ हास्य सम्राट प्रो० हरिमोहन झाक निकट अयबाक प्रतीक्षा मे रहलहुँ, परंच एहन संयोग नहि बैसि सकल। १९६५क प्रारम्भमे दिल्ली जयबाक अवसर भेटल। तत्कालीन केन्द्रीय मन्त्री बाबू सत्यनारायण सिंह सँ दिल्लीमे भेँट भेल। एक संध्या एहन आयल जाहिमे मैथिली साहित्यक कथाकार, कवि आ उपन्यासकारक सम्बन्धमे हुनका सँ गप्प भेल। ओ स्पष्ट रूपेँ कहलनि जे मैथिलीक लेखक मे हम मात्र एक गोटेक आभारी छी। ओ हमर मातृभाषाकेँ देश-विदेशक अन्य भाषाप्रेमीक लग लऽ गेलाह। ओ छथि प्रो० हरिमोहन झा। दिल्ली सँ घुमलाक बाद हरिमोहन बाबूक सम्बन्ध मे हम फेर सोचऽ लगलहुँ।

६ जनवरी १९६५क साँझ मे हम जखने आकाशवाणी केन्द्रसँ बहार भेलहुँ, हमर पितिआइन श्रीमती सियादेवी हमर प्रतीक्षामे ठाढ़ि छलीह। प्रणाम कयलाक बाद हम हुनका अपन आवास पर लायल। अपन पारिवारिक गप्प करैत ओ बजलीह जे हमरा हरिमोहन बाबूसँ सेहो भेँट करबाक अछि। श्रीमती सिया देवी हरिमोहन बाबूकेँ सम्बन्धेँ सारि छथिन से हमरा ओहि दिन धरि बूझल नहि छल। प्रातःकाल अवसर नहि भेटबाक कारणेँ हम सायंकाल अपन पितिआइनक संग हरिमोहन बाबूक आवास पर गेल छलहुँ। दर्शन आ गप्प सँ उल्लसित भऽ अपन आवास पर आयल छलहुँ। एकटा बात ओहिना आइ धरि मोन अछि। चलबाक काल कथासम्राट कहने छलाह जे अहाँ तऽ एही महल्लामे रहैत छी, यदाकदा अवश्य आयल करब। आइ धरि ओ सम्पर्क बनल अछि।

□ १९६७मे बिहारमे रौदी भेल छलै। भीषण अकाल पड़ल छलै। संविद सरकार अकालक सामना करबा लेल अग्रसर छल। नव-नव योजना बनाओल गेल छल। ओहिमे एकटा इहो योजना छल

जे पैघ-पैघ अधिकारीक पैघ-पैघ अहाता मे खेती कराओल जाए। प्रो० हरिमोहन झाजीक रानीघाटक आवासक अहाता सेहो लगभग दू एकड़क छल। कृषि पदाधिकारीगण हुनकहु ओहिठाम पहुँचल छलाह। गप्पक प्रसंग कथा सम्राट् कहने छलथिन्ह जे आकाशवाणी, पटनाक 'चौपाल'क मुखियाजी श्री गौरीकान्त चौधरी 'कान्त' हमर सम्बन्धी छथि आ ओ खेती-गृहस्थी कार्यक्रमक संचालन करैत छथि, तेँ काल्हि प्रातःकाल हम कृषि पदाधिकारीगणक संग कथा-सम्राटक आवास पर गेलहुँ। आतिथ्यक बाद अधिकारीलोकनि सँ हरिमोहन बाबूक मात्र एकटा प्रश्न छल—'एहिमे खेती करबा सँ हमरा कतबा टाकाक लाभ होयत?'

अधिकारीगण हिसाब लगा कहने छलथिन—'कम-सँ-कम तीन हजार टाका प्रत्येक वर्ष।'

हरिमोहन बाबू हर्षित होइत बाजल छलाह—'बेस! कोनो हर्ज नहि, तीन हजारक बात छोड़ू। दू हजार तऽ अवश्य होयत।'

अधिकारी बाजल छलाह—'तीन हजार सँ तीन पाइ कम नहि भऽ सकैछ।'

हरिमोहन बाबू मुसकुराइत कहने छलथिन—'आर सब अहाँक। अहीँ ठीका लऽ लियऽ। हमरा सालमे एक हजार टाका देल करब।'

तकरा बाद पुनः कोनो कृषि पदाधिकारी हुनका ओहिठाम नहि गेल आ हुनक अहाताक खेती अपना ढंगे चलैत रहल।

□ दरभंगा जिलाक नेहरा निवासी स्वर्गीय त्रिवेणीकान्त झाजी पटना आयल छलाह। ओहि समयमे हम सञ्जीवागसे रहैत छलहुँ। ओही आवासमे किछु नेहरा निवासी सेहो रहैत छलाह। स्व० त्रिवेणीकान्त झाजी हुनकेलोकनिक संग एक पक्ष धरि रहलाह। प्रत्येक राति हुनका सँ भेँट होइत छल आ हुनक गप्प सँ हम आकर्षित एवं प्रभावित होइत छलहुँ। ओहि समय मे हमर माए श्रीमती भारती देवी सेहो हमरे संग छलीह। एकादशीक प्रातःकाल हमर माए त्रिवेणीकान्त झाजी केँ निमंत्रण देने छलथिन्ह आ हमरा निमन्त्रण छल कथा-सम्राट्क ओहिठाम। भोजन करैत काल त्रिवेणी बाबू हमरा संग चलि गप्पक क्रममे हरिमोहन बाबूकेँ परास्त करबाक योजना बनौलनि। त्रिवेणी बाबू संग हम कथा-सम्राटक रानीघाट निवासस्थान पर पहुँचि गेलहुँ। भोजनादिक बाद गप्प प्रारम्भ भऽ गेल। त्रिवेणी बाबू बजलाह—समस्त मिथिलापुरी मे यदि लक्ष्मीक कतौ निवास छनि तऽ नेहरा मे। एहि प्रसंग एक व्यक्तिक चर्चा करैत ओ बजलाह जे आइ धरि क्यो नहि जानि सकल जे हिनका कोष मे अरब छनि वा खरब।

हरिमोहन बाबू धैर्यक संग त्रिवेणी बाबूक गप्प सुनैत रहलाह। हमरा लागल जे गप्प-सम्राट सँ त्रिवेणी बाबू आगाँ छथि, मुदा परिणाम उनटा भेल। हरिमोहन बाबू कहलन्हि— धनमे हमर गाम बाजितपुर बेसक नक्शा पर आयल अछि।

त्रिवेणी बाबू बजलाह—अहाँक गाममे धनिक के?

हरिमोहन बाबू बजलाह—रायबहादुरक नाम सभ क्यो जनैत अछि।

त्रिवेणी बाबू मूड़ी भुला स्वीकारात्मक उत्तर देलथिन।

हरिमोहन बाबू —'हम हुनके बालकक सम्बन्धमे कहैत छी। किछु दिन हुनक चारू बालक कें इच्छा भेलनि जे चारू भाइ फराक-फराक भऽ जाइ। तकराबाद ई निर्णय भेल जे पहिने खेत बँटा जाय तकरा बाद घरक टाका आ अन्न, आ तकरा बाद मकान। एहि क्रममे सातटा अमीनक नियुक्ति भेल। सातो अमीन सात मासमे जमीन नापि चारू भाइकें चारि ठाम कऽ देलथिन। आब रहल घरक प्रश्न। सातटा जनक नियुक्ति भेल। सातो जन सात दिनमे नोट उझिलि आङनमे ढेर लगा देलक, मुदा ओकरा सभ कें गनऽ नहि अबैत छलैक, पुनः सातटा गनऽ बला जनक नियुक्ति भेल। सात दिन धरि गनलाक बाद सभ सनकि गेल।'

गप्प-सम्राट आगू बजलाह —'आब ने जन होइत छनि आ ने रुपैया बटाइत छनि, ओहिना आङनमे नोटक ढेरी लागल छनि। नहि विश्वास हो तँ गाड़ी भाड़ा हम्मर आ अहाँ जा कऽ देखि आबि सकैत छी।'

त्रिवेणी बाबू अपन हारि सद्यः स्वीकार करैत हमरा छोड़ि छड़ी लऽ विदा भऽ गेलाह। हास्य सम्राट हमरा सँ गप्प करैत कहलनि जे चाह पीलाक बादे जाएब।

☐ एकटा आर एहन प्रसंग अछि जकर चर्चा कएनाइ एहि अवसर पर आवश्यक बुझना जाइछ। आकाशवाणी पटनाक चौपाल कार्यक्रममे गप्प-गोष्ठीक आयोजन भेल छल। ओहिमे मुख्य रूपें आमंत्रित छलाह हास्य सम्राट प्रो० श्री हरिमोहन झाजी। चौपालक कक्षमे सभ गोटे बैसि चाहक चुस्की लैत एक गोटेक प्रतीक्षा करैत छलहुँ। हुनका अएलाक बादे कार्यक्रमक रेकार्डिंग होइत। एहि बीच एक कथित किसानक प्रवेश कार्यालय मे भेल। किसान हमरा हिनकालोकनिक संग देखि फार्म रेडियो अफसर श्री अमरेन्द्र नाथ तिवारीजी सँ गप्प करऽ लगलाह। ओ अपन खेतीक सफलताक चर्चा करैत बजलाह जे हमरा सात मोनक कट्ठा गहूम भेल अछि। तिवारीजीक संग-संग हमरा लग बैसल हरिमोहन बाबू सेहो ओहि दिस आकर्षित भऽ गेलाह। कृषि-वैज्ञानिक तिवारीजीकें हुनक बात पर विश्वास नहि भेलनि। तिवारीजी बजलाह जे एखन धरि गहूमक एहि उपजाक रेकर्ड कोनो देशक नहि छैक। मुदा ओ किसान अपने बात पर डटल रहल। गप्प सम्राट मुस्कुराइत बजलाह—"तिवारीजी, विश्वास कएल जाए हिनका बात पर। हमहूँ काल्हिये गामसँ अएलहुँ अछि, हमरा गामक एकटा किसान दस कट्ठामे सरिसोक खेती कएने छल। बहुत दूर-दूरसँ लोक फसिल कें देखऽ लेल आएल छलैक। हमरा आबऽ सँ चारि घंटा पूर्व तैयार फसिलकें चारि समाङ जोखए लागल छल। चारि घंटा धरि निरंतर अपार भीड़क समक्ष जोखनाइक काज चलैत रहल। आधा सँ कनेक बेसी जोखल भेल छलैक तऽ हमरा गाड़ीक समय भ' गेल आ तें पहाड़ सन सरिसोक ढेरी देखैत हम ओहि किसानकें नमन कए विदा भऽ गेलहुँ। तिवारीजी, जखन सरिसोक एते उपज भऽ सकैत छैक तखन गहूमक किएक नहि हेतैक ?" कार्यालयक कक्ष ठहाकासँ गूंजि उठल आ एहि बीच तथाकथित किसान कतऽ गेलाह से पता नहि। आइ धरि हुनक दर्शन नहि भ' सकल अछि।

☐ हास्य सम्राटक संग बिहारक कतेक स्थानक संग-संग आनो प्रान्तक कवि-सम्मेलनमे जएबाक अवसर भेटल अछि। मुदा अविस्मरणीय यात्रा अछि हथियाघाट पेपर मीलक कवि-सम्मेलनक यात्रा। पटना सँ एकटा आरामदायक विशेष कार सँ हास्य सम्राटक संग हम आ गीतकार रवीन्द्र नाथ ठाकुर विदा भेल छलहुँ। राजेन्द्र पुल पार कएलाक बाद पं० गणेश झाजीक प्रसंग गप्प उठल। गणेश झाजीक सुद्धे सँ हम आ हरिमोहन बाबू परिचित छलहुँ। पं० गणेश झा वयसमे छोट, मुदा सम्बन्धमे कथा-सम्राटक माम छथिन। कथा सम्राट् बजलाह—'हमर मातामह सेहो पैघ विद्वानक संग-संग बड़ शुद्ध लोक छलाह। एक बेर ओ टहलैत-टहलैत गाम सँ दूर चलि गेलाह। ओहि गाम सँ हुनका जयवारी छलनि। गामक लोक पंडितजी सँ पुछलकनि जे कोम्हर यात्रा कएल। ओ संकटमे पड़ि गेलाह आ कहि देलथिन जे सम्पूर्ण गाम केँ हमरा ओहिठाम अमुक दिनक नोत अछि। तकरा बाद पं० जी अपन गाम आपस भेलाह। नोतक बात पंडितजी बिसरि गेलाह। निश्चित तिथि आ समय पर ओहि गामक लगभग पांच सय लोक लोटा लेने धरोहि लागल हमरा मातृकक गाम पहुँचि गेल। गामक लोक चिन्तामे पड़ि गेल। गामक दू-चारि टा प्रतिष्ठित लोक पंडितजीसँ पुछलकनि। पंडितजी सहज भावे उत्तर दैत बजलाह—नोत तऽ हम अवस्से दऽ आएल छलियनि, मुदा बिसरि गेलहुँ ताहिमे हमर कोन दोख ? आब गामक प्रतिष्ठाक बात छल। गामक लोक ओरियान करऽ लागल आ येनकेनप्रकारेण भोजनक कार्य सम्पन्न भेल। भोजन समाप्त भेलाक बाद लहेरियासरायसँ चीनी आयल तीन बोरा। भोज समाप्त भऽ गेल छलैक, तेँ पंडितजीकेँ चीनी बाँचि गेलनि। बादमे पोखरि खुनयबामे ओ चीनी जन केँ बोनि मे देल गेलैक।

☐ ठहाकाक संग हमरालोकनि समस्तीपुर पहुँचि गेलहुँ। हास्य सम्राटकेँ चाह पीबाक इच्छा भेलनि तेँ हमरालोकनि समस्तीपुरक तत्कालीन साहित्यिक जिलाधिकारी श्री जियालाल आर्यक चैम्बरमे प्रवेश कएलहुँ। हुनका लग तत्कालीन सिविल सर्जन सेहो बैसल छलाह। चाह पिबैत हास्य सम्राट परिवार नियोजनक गप्प करैत सिविल सर्जन साहेब सँ पुछलथिन्ह जे आब अपनेलोकनि 'लूप पद्धति' किए छोड़ि देल ? सिविल सर्जन साहेब लूपक कथा सँ परिचित करावऽ लगलाह। बीचेमे हरिमोहन बाबू बजलाह—बस करू, आब हम लूपक 'लूप होल' सँ परिचित भऽ गेलहुँ। ठहाकाक संग पुनः हमरालोकनि विदा भ' गेलहुँ।

कवि सम्मेलनमे एकटा एहन कवि आएल छलाह जे एकोटा कविता नहि लिखने रहथि। ओ चारि बजे सँ हरिमोहन बाबूक सेवाभावमे लागि गेलाह आ हरिमोहन बाबू कहैत रहलथिन जे अहाँ जे बजैत छी सैह कविता थिक। अंतमे हरिमोहन बाबू गीतिका छंदमे ओहि युवककेँ चारि पाँती लिखि देलथिन आ हमरा संग-संग रवीन्द्रजीकेँ सेहो कहलनि जे हमहूँलोकनि चारि-चारि पाँती एहि छंद मे लिखी। आब की छल ? बारह पाँतीक कविता तैयार भ' गेल। मुदा ओहि कवि केँ तोतर (बात) सेहो लगैत छलनि, तेँ तत्सम शब्दक उच्चारण ओ नहि क' सकैत छलाह। ओहि कवि-सम्मेलनक अध्यक्षता करैत छलाह कविचूड़ामणि काशीकान्त मिश्र 'मधुप' आ मुख्य अतिथि छलाह हास्य सम्राट् प्रो० हरिमोहन झा। कविक सूचीमे ओहि कविक कतौ नाम नहि छल। तथापि ओ मंच पर माला

पहिरि वैसल छलाह। अध्यक्षीय कविताक बाद ओ कवि हरिमोहन बाबू सँ कहलथिन जे हमर कविता तँ नहि भ' सकल !

तुरंत हरिमोहन बाबू माइक पकड़लनि आ कहलनि जे आब अध्यक्षक अनुमति सँ एकटा एहन कवि आबि रहल छथि जिनकामे श्री गौरीकान्त चौधरी 'कान्त', श्री रवीन्द्र नाथ ठाकुर आ श्री हरिमोहन झाक व्यक्तित्व सन्निहित छनि आ ओ कवि छथि एस० ओ० साहेब।

ओ कवि कविता पढ़ऽ लगलाह आ पंडालक वातावरण हास्यमय भ' गेल। मधुपजी हरिमोहन बाबू सँ कहलथिन— बेकार परिश्रम कएल। 'राधा विरह' द' दितियनि आ ई ओहि सँ पढ़ितथि। पुनः ठहाका पड़ल। हँसीक वातावरण मे कवि-सम्मेलन समाप्त भेल।

सहजता-सरलता सँ परिपूर्ण एहन हास्य-सम्राट के हम नमन करैत छी।



स्मृतिक नोर

प्रो० शेफालिका वर्मा

स्मृति....स्मृति...स्मृति...

चारू दिस स्मृतिक रेतकण पसरल अछि। एहि तप्त रेतकणक मध्य क्षीणकाय मृतिआयल नदी सन हमर जिनगी। बहुत किछु लिखय चाहैत छी, मुदा लिखि नहि पबैत छी। आ अपार दर्दक काँट सँ जेना क्षत-विक्षत भऽ उठैत छी......सुखक किछु हेरायल-बिसरल क्षण स्मृतिपटलपर शुभ्र बालुका-राशि सन धवल भऽ उठैत अछि।

'स्मृति रेखा'—मैथिलीक उल्लेख्य संस्मरण-संग्रहक प्रकाशन मैथिली एकेडेमी, इलाहाबाद सँ भेल छल। डॉ० सुधाकान्त मिश्रजीक तार आयल जे ओहि पोथीक विमोचन पटनामे प्रो० हरिमोहन झाजी करताह, तुरत आउ। मोन एकटा अव्यक्त आह्लादसँ भरि उठल।

चाचाजी हमर पोथीक विमोचन करताह—जनिक आशीर्वाद, जनिक शुभाकांक्षा हमर साहित्यपथक परम पाथेय रहल अछि।

ओहि विमोचन-समारोहमे आदरणीय चाचाजीक अभिभाषण भेल—"ई पोथी पढ़ि कतेक स्थान पर हमर आँखि नोरा आयल। कतेको स्थान पर शिवानी, महादेवी कतेक पाछाँ रहि गेलीह।" लगैछ, सुदूर हिमालय सँ केओ अनवरत घंटी बजा रहल हो। कतेको देर धरि चाचाजीक विह्वल हृदयक उद्‌गार निःसृत होइत रहल। हमर आँखि नोरा आयल छल। समस्त वातावरण स्तब्ध-निष्पंद छल! चाचाजीक प्रश्न छल शेफाली, अहाँ एतेक व्यथा कतऽ सँ लऽ अनलहुँ?

उफ! हम उत्तर दऽ पबितहुँ! प्रकृतिक कण-कण हमरा वेदनामय प्रतीत होइछ। झरना कें एकटा वेग सँ बहैत देखैत छी तँ मोन कानि उठैत अछि। किएक एतेक व्याकुलता अछि एहि निर्झर धारमे? कोन अनन्त सँ मिलबाक ई दुर्गम अभिसार-यात्रा? आषाढ़क प्रथम मेघ सँ धाराक अन्तर फाड़ि नान्हि-नान्हि गाछक अंकुरण देखि मोनमे कचोट होइत अछि, कोन अमिट पियास कें मिटएबा लेल ई धरती सँ बाहर अएबाक हेतु छटपटा रहल अछि? धरा-आकाशक सीमान्तमे मिलन हमरा मोनमे असह्य वेदना भरि जाइत अछि। लगैत अछि, सभक ममतामे हम बन्हल छी, मुदा हमर केओ नहि। आ, चाचाजीक प्रश्न पर आँखिक संग-संग हृदयो नोरा जाइत अछि।

स्मृतिमे दोसर चित्र काँपि उठैत अछि—मधुश्रावणीक भार देखि चाचाजी आ चाचीजी कतेक प्रसन्न रहथि! गोलकपुरमे हमर सभक घर आ रानीघाटमे चाचाजीक क्वार्टर। दुनू परिवारमे सम्बन्धक

केहन तादात्म्य''''''चाचाजीक शब्दमे—''सौ० शेफालिकाकें हम तहिए सँ जनैत छियन्हि जहिया ओ दस-एगारह वर्षक बालिका छलीह। हुनक पिता (संगीतज्ञ श्री ब्रजेश्वर मल्लिक) यदा-कदा अपन रानी-घाट निवासमे निमंत्रण दैत छलाह, जाहिमे षटरस ओ नवरस दुहूक समावेश रहैत छलैक— ... ओहि माधुर्यमय वातावरणमे मेधाविनी कन्याक प्रतिभा, संस्कार विकसित होइत गेलन्हि। आइ ओ एकटा सुकुमार शब्द शिल्पी कवयित्री आ लेखिका रूपमे विख्यात छथि ''''''

बनैत-मेटाइत रेखा-चित्रमे हम अपन भाग्यक रेखा देखि रहल छलहुँ। आइ सँ नौ-दस वर्ष पूर्व चेतना समिति, पटनाक विद्यापति-पर्वक कवि-सम्मेलनक उपरान्त हम मंचसँ उतरलहुँ तँ आदरणीय चाचाजी कुरसी पर बैसल छलाह— आबह-आबह शेफाली, बड़ मर्मस्पर्शिनी कविता तोहर लागल। हम झुकि हुनक चरण-रज लेलहुँ। आठ-नओ बरसक बाद भेंट होइत छल। ओ किछु वृद्ध लगैत छलाह।

—तों मल्लिकजीक बेटी छहक ने? है, आ ओ रजनी कतऽ अछि, तोहर सभसँ पैघ बहीन? तँ चाचाजी एतेक वृद्ध भऽ गेल छलाह—'चाचाजी, हमही रजनी छी। घरमे रजनी आ बाहर अहाँ हमरा बिसरि गेलहुँ?'

चाचाजी हर्षातिरेकमे भरिपाँज हमरा पकड़ि अपूर्व स्नेह-निर्झर वाणीमे बजलाह—'तों रजनी छह? कवयित्री भऽ गेलीह''''''?'

हृदयक पीड़ा रोम-रोममे छलकि आयल। आनन्दक नोर...जकरा लेल कोनो शब्द नहि, कोनो आखर नहि। हमरा जखन स्वर्ण-पदक भेटल छल, चाचाजीक संपूर्ण परिवार आह्लादित छल। राजमोहनजीक पत्नी विहुँसैत छलीह—हम ककरो कथा नहि पढ़ैत छी, अहाँक कथा छोड़ि। ताहि लेल ई (राजमोहनजी) हमरा हरदम चिढ़बैत छथि जे अहाँ खाली महिलाक रचना पढ़ैत छी।

राजमोहन जी! हृदयमे पुनः दर्दक एकटा लहरि उठल। पता नहि किएक, चाचाजीक स्नेह, चाचाजीक विश्वासक अंतरंगता राजमोहनजीमे नहि पाबि सकलहुँ। जे हाथ ओहि विश्वासक बल पर राखीक दिन हमरा आगूमे ''''''''''बहिन राखी''''कहि हमर समक्ष सागरक नेह-नीर लऽ ठाढ़ रहैत ओ'''''''''ई सभ हमर जीवनक कथा-व्यथा छी। हम सभक ममतामे बन्हल छी, मुदा हमर केओ नहि ''''''''।

चाचाजीक स्थान मैथिली साहित्यक आकाशमे सूर्य सन छिटकि रहल अछि। मैथिली लोक-प्रिय भेलीह विद्यापतिक मधुर गीतसँ आ आब चाचाजीक हास्य कथासँ। हिनक कथा मुर्दोमे एकटा प्राण भरि दैत अछि, जीवन-तरंग भरि दैत अछि। मैथिली पठनीय थीक, ई हिनके पोथीसँ लोक बुझलक।

हिनक व्यक्तित्व एकटा बोधिवृक्ष सन अछि जकर छाहरिमे सभ वर्ण, सभ आयु, सभ जाति, सभ संस्था विश्राम लैत अछि। ओ जाति-पाति, दलगत राजनीतिसँ फराक स्वयं एकटा संस्था छथि—एकटा प्रकाश-स्तम्भ जकरासँ भुतिआयल बटोहीकें रास्ता भेटैत छैक, प्रकाश भेटैत छैक।

प्रेरणा-पुरुष

श्री महेश्वर मिश्र 'अरुण'

आब सोचैत छी तँ मोन मे आश्चर्य-मिश्रित कुतूहलक भाव जगैत अछि, मुदा तहिया से नहि भेल छल। ई बात नहि छलैक जे एकदम नेना रही आ सोचबाक सामर्थ्य नहि छल। सोचबाक सामर्थ्यक परिणाम छल जे 'कन्यादान' पढ़लाक बाद निर्णय लेलहुँ जे विवाहमे व्यवस्था नहि लेब, अशिक्षितासँ विवाह नहि करब। 'बुच्चीदाइ'क स्थिति आ क्रियाकलापसँ क्षुब्ध रही। मोनमे आक्रोशक भाव रहय। यैह कारण थिक जे अप्रील ६०मे हम पिताक आदेशानुसार सौराठ-सभा तँ गेलहुँ, मुदा ओतय हुनक काटर लेबाक लोभ पर पानि फेरि देलियनि। काटरमे अधिक-सँ-अधिक टाका लेब समाजमे प्रतिष्ठाक कारण बूझल जाइत छल आ हमर बाबूजी एहि हेतु कटिबद्ध छलाह। मुदा हम हुनक उत्कट अभिलाषा पर अपन तीव्र विरोध द्वारा तुषारपात कऽ देलियनि। हमर विवाह भेल, मुदा ओहिमे व्यवस्थाक कोनो प्रश्ने नहि उठल।

प्रो० हरिमोहन झाक साहित्यक ई प्रभाव बड़ व्यापक छल। हमरा मोन अछि जे हमहीटा नहि, हमर कतेक मित्रलोकनि सेहो 'कन्यादान'सँ प्रभावित भऽ विवाहमे व्यवस्था नहि लेलनि। अपन अशिक्षिता पत्नी कें बुच्चीदाइ जेकाँ पढ़ौलनि-लिखौलनि आ अपनहु सी० सी० मिश्राक अंगरेजिया दिमागकेँ दोषावह बूझि ओहिसँ परहेज रखलनि।

मुदा हमरा संग तँ एकटा आओर अद्भुत घटना घटल। जनिक रचनासँ प्रभावित भऽ हम अपन जीवनक सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्णय केने रही, एकटा महत्वाकांक्षी पिताक इच्छाकेँ चोट पहुँचौने रही, विवाह भेलाक बाद पता चलल जे ओ सम्बन्धें ससुर होयताह। हमरा अपन ससुरसँ ज्ञात भेल जे हरिमोहन बाबू हुनक पिसियौत छथिन। बाल्यावस्थामे दुनू गोटे संगहि रहथि। काफी हेम-क्षेम आ अपेक्षा रहनि। जाहि व्यक्तिक साहित्य हमरा लेल जीवन-निर्धारक प्रेरणा बनल छल ताहि व्यक्तिकेँ सम्बन्धिक रूपमे पाबि हमर हृदय आह्लादित भऽ उठल। हर्षक पारावार नहि रहल।

१९६४ ई०क गप्प थिक। जीवनक स्थिरताक अन्वेषणमे जखन पटना अयलहुँ तऽ पटने रहि गेलहुँ, पटनियाँ भऽ गेलहुँ। कविवर यात्रीक स्नेह एवं सहानुभूतिक छत्रछायामे हम सपत्नीक पटनाक जीवन आरम्भ कयलहुँ। महेन्द्रूक पुरना पोष्ट-ऑफिसक निकट हुनके निवासमे रहय लगलहुँ। पटना अयलाक बादेसँ हमरा दिमागमे काकाजीसँ भेंट करबाक इच्छा घुरियाइत छल। पता लागल जे ओ लगहिमे रहैत छथि रानीघाट स्थित प्रोफेसर्स क्वाटरमे। हम सभ हुनका ओतय गेलहुँ।

भेंट कयलियनि। गप्प भेल। गारितो राम गप्प। कवीरक गप्प। हुनक मधुरदीक संग बितायोल गेल बाल्यावस्थाक संस्मरण सभ सुनोलनि। हम गप्प सुनैत रहलहुँ—चुपचाप। उत्सुक आ प्रसन्न मोन सँ। से जखन हमर सासु पटना अयलीह तँ हुनको प्रोफेसर साहेबसँ भेँट करौलियनि। अपन संगी आ सम्बन्धमे जेठ भाइक पत्नीसँ भेँट कय काकाजीकेँ जे प्रसन्नता भेलनि से हुनका देखिये कऽ बूझल जा सकैत छल। देओर-भाउजक परिहासमय गप्प सुनबा योग्य छल।

काकाजीक डेरा पर सकरा बाद सँ बरोबरि जाइत रहलहुँ अछि। एक बेर ओ एकटा बनल-बनाओल मकान किनबाक इच्छा व्यक्त कयलनि आ किछु दिनक बाद एकटा मकान भेटियो गेल। मकान सुन्दर छलैक। सूचना देलियनि। काकाजी एहि प्रसंग मे ततेक उत्सुकता देखौलनि जे हमरा लागल जेना मकान नहि लेबाक कोनो सवाल नहि अछि। मुदा फेर की भेलनि से नहि कहि। मकान नहि लेलनि। विश्वविद्यालयसँ अवकाश प्राप्त कयलाक बाद किरायाक मकानमे आबि गेलाह। टिकिया टोलीमे। फेर ओकरो छोड़ऽ पड़लनि। हम गोपालजीक संग मकानक खोजमे फेर लागि गेलहुँ। अन्ततः भिखना पहाड़ीमे काज चलबा जोगर एकटा मकान भेटल। सम्प्रति ओहीमे रहैत छथि। ओही मकानक बगलमे मैथिली-हिन्दीक पुरोधा साहित्यकार राजकमल चौधरी रहैत छलाह। ओ अपन मकानक नाम रखने रहथि कामायनी। काकाजी बेसी काल, जानि नहि की सोचि, कहैत रहैत छथि—बुझलहुँ मिसरजी, एतहि राजकमल रहैत छलाह।

हुनक एहि गप्प पर हमरा होइत अछि जे साहित्यकारक हेतु ई स्थान मनिसक उपयुक्त नहि अछि। प्रायः इएह कारण हेतैक! दोसरो भऽ सकैत छैक। कारण, काकी आवास-परिवर्त्तन हेतु बड़ व्याकुल छलीह। दुखित पड़लाक बाद ओ कहने रहथि—जहिया दोसर नीक मकान भेटि जायत, हमर बिमारियो छुटि जायत। मुदा काकीकेँ ओ मकान नहि छुटलनि। ओएह छूटि गेलीह।

काकी लगभग एक बरख सँ अस्वस्थ छलीह। काकाजी बड़ व्यग्र रहथि। कतेको बेर ओ गह्वरित आ असंतुलित भऽ कऽ कानय लागथि। हास्य सम्राटक ई करुण रूप देखि केओ घबड़ा सकैत अछि। लोक सभ हुनका बोल-भरोस देबऽ चाहय, हुनक दार्शनिक रूपकेँ मोन पाड़य, मुदा ओ एकेटा बात कहथिन—ओ सभ सिद्धान्त छैक। जीवनमे जखन भोगऽ पड़ैत छैक, तखन समटा दर्शन बिसरि जाइत छैक।

से सत्ते। बहुत काल एना होइत छैक। काकाजीसँ बहु गप्प भेल अछि, प्रत्येक गप्पसँ ततेक आह्लाद आ प्रेरणा भेटल अछि जे लिखब शुरू करैत काल दिमागमे उजगुज करैत छल। लेकिन जखन लिखऽ लगलहुँ अछि आ काकीक संस्मरण मोन पड़ि गेल अछि, काकाजीक करुण रूप सोझांमे आबि गेल अछि तऽ आब किछु लिखब सम्भवे नहि भऽ रहल अछि। तेँ एखन एतबे। बस।

काका, काकी आ...

प्रेमलता मिश्र 'प्रेम'

कनियेटा छलहुँ तँ बाबू बैसा कऽ खिस्सा जेकाँ कहैत छलाह—हम एतेक ठाम मे घुमि अयलहुँ मुदा हुनका सँ भेंट नहि भऽ सकल। बुझाइत अछि जे आब भेंट होयबो नहि करत।

हम पुछियनि जे किनका सँ भेंट नहि भऽ सकल? ताहि पर बाबू लग मे बैसा सविस्तर सुनाब' लागथि—हमरा तँ आब भेंट नहिये भऽ सकल, मुदा तोरा सब केँ जँ पटना जयबाक अवसर होअहु तँ अवश्य भेंट करियहुन आ हमर नाम मोन पाड़ि दियहुन। हमरा दुनू गोटेमे भँयारी अछि। दुनू गोटे एकतुरिये छी। बड़ विनोदी स्वभावक लोक छथि। कनियेटा रही तँ दुनू गोटे केँ एकसंग रहबाक अवसर भेटल अछि। लदौर मे। पंडित श्री नचारी झा हुनक मातामह रहथिन आ हमर पितामह। हम सब ओहिठामक बासी छलहुँ, मुदा हमर पूर्वज रहिका मे आबि कऽ बसि गेलाह, तेँ हम एहिठामक भगिनमान छी। तकराबाद हुनका सँ फेर कहियो भेंट नहिये भऽ सकल।

बाबूक ई सबटा गप्प खिस्सा-पिहानी जेकाँ हमरा माथ मे आइ धरि रहल अछि। बाबूक आशीर्वाद कही अथवा संयोग, विवाह भेलाक बाद हम पतिक संग पटने आबि गेलहुँ। बाबूक कथनानुसार हम सब एक दिन काकाजी सँ भेंट करय गेलहुँ। हमर परिचय सुनितहि लगलनि जे कतऽ उठाबी कतऽ बैसाबी। काका कहि उठलाह—अयँ, तोँ दीनाभाइक बेटी छह? आबऽ—आबऽ बैसऽ। मुदा काकाजी केँ जतेक खुशी भेल छलनि से तुरन्ते ई सुनि कऽ समाप्त भऽ गेलनि जे हमर बाबू आब नहि रहलाह। कनेक कालक लेल वातावरण एकदम शांत भऽ गेल। तकराबाद काकाजी लदौरक संस्मरण कहय लगलाह। कोना बाबा कहथिन दुनू गोटे केँ पैर जाँतऽ लेल आ दुनू गोटे एक-एक टा पैर बाँटि लेथि। जखन हाथ थाकि जानि तऽ बाबा कहथिन जे आब चढ़िकऽ दबाबह। ताहि पर हमर बाबू दुखी भऽ जाथि आ अपना सँ श्रेष्ठक देह पर पैर रखबा सँ साफे मुकरि जाथि। ई सब गप्प कहि-कहि कऽ काकाजी अपन बाल्यावस्था मोन पाड़ैत रहलाह। अपनहु हँसलाह, हमरो सबकेँ हँसी लागय। काकी सेहो आबि गेलि रहथि। ओहो गप्प सुनि कें खूब हँसलीह।

परिचयक बाद हमसब बेसीकाल हुनका सँ भेंट करऽ लगलियनि। एकबेर हमसब संध्या काल हुनकासँ भेंट करऽ गेलहुँ। संयोगवश चौपालमे कोनो नाटकक प्रसारण भऽ रहल छलैक। नाटकक नाम तँ मोन नहि अछि, मुदा ओहिमे हमहूँ छलहुँ। नाटक मे एकठाम एकटा संवाद छलैक – 'बाबूजी, हमरा हुनका सँ प्रेम भ' गेल अछि' ई सुनितहि काकाजी जोर सँ ठहाका लगौलनि। हम सब टुकुर

टुकुर हुनक मुँह ताकऽ लगलहुँ। एहेन कोन बात भेलैक जे ओ लोट-पोट भऽ रहल छथि ! हमरा सबके गुम्म भेल देखि ओ अपन हँसीके बलजोरी रोकैत कहलनि—हम एहि संवाद पर हँसैत रही। ई कलाकार जे बजलाह कि 'हमरा हुनका सँ प्रेम भ' गेल अछि' तँ हमरा एना लागल जेना 'हमरा पैरमे बेमाय फाटि गेल अछि।' आब हमरो सबके हँसी रोकने नहि रुकय। हुनक व्यंग्यपरक दृष्टि एतेक तेज छनि से जानि हम आश्चर्यित आ मुग्ध भऽ गेलहुँ।

एकबेर गेलहुँ तँ संयोग एहेन जे बाबी सेहो एतहि रहथि। जखन काका हमर परिचय देलथिन तखन ओ कतेक प्रसन्न भेलीह तकर ठेकान नहि। ओ बूढ़ि रहथि, मुदा हुनक स्मरण-शक्ति विचित्र छलनि। ओ तँ पँजियारे रहथि। हमरा लऽगमे बैसा कऽ कहथि—तोहर गोत्र ई छह आ मूल ई। फल्लमाँ जे छथि हुनको इएह गोत्र मूल छनि। एहिना कतेको गोटेक परिचय देथि आ सेहो हुनक खानदानी परिचय। वस्तुतः एतेक जानब आ से स्मरणो राखब सहज नहि अछि। गप्प-शप्पमे एकदिन वार्ता कहलनि—एह, तोरा सबके देखैत छिअहु तऽ मोन प्रसन्न भऽ जाइत अछि। केहन बढ़ियाँ संगे-संग कतहु गेलहुँ-एलहुँ। हमरा सबहक जमाना बड़ बिचित्र छल। घरमे रहू, बाहर निकलू तऽ महफाक ओहारमे। हमरा तऽ साबिक जमानासँ इएह नीक लगैत अछि। बाबीक एहि विचारधाराके सूनि हमरा लागल जे ठीके काकाजी मिथिलाक स्त्री समाज केँ आगाँ बढ़यबाक काज कयलनि। हमसब गप्प करैत रही ताबे दुगौली बाली (दमनजीक कनिया) हमरा सबहक लेल जलखैक व्यवस्थामे जाय लगलीह। बाबी हुनका मना करैत कहलथिन जे बेटीक लेल तँ लोक बड़ी भात बना कऽ रखैत अछि। संयोग सँ आइ सैह बनलो अछि। एकरा सैह दियौक, मिसरजीक लेल जे करबाक हो से करियनु।

बाबीक स्नेह हमरा लेल अविस्मरणीय अछि। मुदा, काकीक स्नेह केँ लिखब तँ एकदमे असम्भव। हुनका ओहिठाम जहिया कहियो गेलहुँ अछि, पहुँचिते देरी काका प्रसन्न भऽ काकीके सोर पाड़थिन—कहाँ गेलहुँ ? देखू, के आयल अछि। आ तकरा बाद काकी अपन चिर परिचित मुस्कान मुँह पर लेने बहुत आस्ते सँ, एक-एक शब्दमे जेना मिसरी घोरल होइन, बाजथि—एँ, प्रेमलता ! कतेक दिन पर ! कहू की समाचार ? धियापुता कोना अछि ? आ एकाएकी सबहक खोज-पुछारी। हुनक ममताक स्मृति मे एखनहु गद्गद भऽ जाइत छी। हमरा तँ हुनका सँ केवल स्नेह नहि भेटल, प्रेरणा आ मार्ग-दर्शन सेहो प्राप्त भेल। ओ प्रथम मैथिल महिला मंच पर आयलि छलीह, आ से हमरा लेल सभदिन प्रेरणाक आधार रहल अछि।

एकबेर काका अचानक अस्वस्थ भऽ गेलाह। अस्पताल पहुँचलहुँ। काका आँखि बन्द कयने पड़ल रहथि। हमरा काकीसँ गप्प करैत सुनलनि कि काका पूछि उठलथिन—प्रेमा आयलि अछि ? काकी किछु कहथिन ताहि सँ पूर्वहि काका पूछऽ लगलाह—तोरा कोना पता लगलह ? अखबारमे की सभ छपल छलैक ? अखबार अनलह अछि ? हम ओहिठाम जतेक काल रहलहुँ, ओतेक कालमे तीन-चारि गोटे हुनका सँ भेँट करय अयलथिन। सभकेँ ओएह प्रश्न, एकके जिज्ञासा। सत्ते, काका आब टेप रेकार्डर भऽ गेलाह अछि। काकीक अभाव तँ हुनका आओरो असंतुलित कऽ देलकनि अछि। ककरो पहुँचि गेला पर अपन दुःख बिसरि खुशी सँ गप्प करऽ लगैत छथि, मुदा किछुए कालक बाद फेर ओहिना शांत,.. खाली ...... ।

काका भावप्रवण लोक छथि—साहित्य आ जीवन दूनू मे। पटनाक किछु महिलालोकनि महिला समितिक स्थापना कयलनि आ स्थापना-दिवस दिन काकाकें अध्यक्षता करक हेतु आमन्त्रित कयल गेलनि। काकी सेहो ओहि अवसर पर आयलि रहथि। एतेक मैथिल महिलाकें एकठाम देखि काका आत्मविभोर भऽ उठलाह। आँखि सँ नोर वहय लगलनि। स्पष्ट कहलथिन—"आइ हमर सपना साकार भेल। एही दिनक कल्पना हम कयने रही। मैथिल ललनालोकनि आब जागि गेलीह अछि...। एहि सँ वढ़ि खुशीक बात भइये की सकैत अछि।" हमरा मोन अछि जे महिलालोकनि हुनक एहि भाषण सँ कतेक प्रभावित आ प्रेरित भेलि रहथि। मुदा ओहिठाम एक दूटा नवयुवक एहनो छलाह जे बजलाह कि हरिमोहन बाबू चाली कें फूकि कऽ साँप बना रहल छथि।

हमरा आश्चर्य भेल। 'कन्यादान' छपलाक बाद सेहो संकीर्णताक पुजारीलोकनि एहिना व्यंग्य कयने रहथिन। मुदा तकरा तँ वहुत दिन भऽ गेलैक। आबो यदि एहि प्रकारक टिप्पणी कयल जाइत अछि तऽ से युवक समाजक प्रतिक्रियावादी विचार थिक। एहन युवक सभसँ हरिमोहन बाबू सभ दिन आगू रहलाह अछि, आइयो छथि।

रोचक संस्मरण

श्री मदन मिश्र

१९६६-६७ ई०क गप्प अछि। चेतना समितिक पदाधिकारीगणक चुनाव लेल समितिक महाधिवेशन बजाओल गेल छल। समितिक हेतु हम नव सदस्य छलहुँ। उत्सुकता रहए समितिक कार्य-कलाप जनबाक।

प्रथमहि ओहिवर्ष समितिक विचार भेलैक जे महाधिवेशन विद्यापति-भवन-स्थल (पटना म्यूजियमसँ पश्चिम) पर होअए। ऊभर-खाभर, गेड़ा-पाथर पर सतरंजी बिछाओल गेल। सदस्यगण ओहि पर बैसलाह।

मान्यवर श्री हरिमोहन बाबूक अध्यक्षतामे महाधिवेशनक कार्य प्रारम्भ भेल। समितिक तत्कालीन सचिव वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत कैलन्हि। प्रतिवेदन पर गर्मा-गर्मी विवाद भेल। पक्ष-विपक्षक दू टा दल छैक से सभकेँ बुझबामे आबि गेलैक। बहुत काल धरि विवाद भेलाक बाद चुनावक प्रस्ताव राखल गेलैक। सर्वप्रथम अध्यक्षक नाम प्रस्तावित भेल। अध्यक्ष सर्वसम्मतिसँ चुनल गेलाह। ओकर बाद उपाध्यक्ष सेहो सर्वसम्मति सँ चुनल गेलाह। झंझटि भऽ गेलैक सचिवक चुनाव पर। एक पक्षक विचार छलैक जे सचिवक रूपमे जनिकर नाम प्रस्तावित भेल अछि तनिके समितिक परम्परानुसार सर्वसम्मतिसँ चुनल जएबाक चाही, परन्तु दोसर पक्षक विचार छलैक जे सचिवक पद लेल दू-चारि टा नाम अएबाक चाही आओर ताहिमे सँ मतदान द्वारा सचिव चुनल जएबाक चाही।

बहुत काल धरि वाद-विवाद होइत रहल, मुदा समाधान नहि निकलल। तखन मान्यवर श्री हरिमोहन बाबू ठाढ़ भेलाह। हुनका ठाढ़ होइतहि किछु गोटे तँ अपने चुप भऽ गेलाह, किछु गोटे चुप कयला पर चुप भेलाह। तथापि दू-तीन गोटे ठाढ़ भेल पक्ष-विपक्षमे बजिते रहलाह। हुनकालोकनि केँ चुप करैत मैथिली साहित्य-जगतक हास्य-सम्राट् मान्यवर श्रीयुत हरिमोहन झाजी कहलथिन्ह — "देखू, चेतना समितिक नौ-दस कट्ठा जमीन राजेन्द्रनगरमे अछि आ तीन-चारि कट्ठा भवन-स्थल अछि; सभ मिला कऽ लगभग तेरह-चौदह कट्ठा भऽ जाइत अछि। हम अपनेलोकनिसँ एक कट्ठा आर माँगि रहल छी। एकट्ठा भऽ जाउ।"

श्री हरिमोहन बाबूक बात पर सभकेँ हँसी लागि गेलैक आ सचिवक चुनाव सर्वसम्मतिसँ भऽ गेल।

☐ श्रद्धेय श्री हरिमोहन बाबूक ख्याति पहिने सँ सुनल छल। चेतना-समितिमे हुनक गप्पक जादूगरी सेहो देखल। इच्छा होइत रहल जे एहन व्यक्तिसँ सम्पर्क राखक चाही। ओहि समयमे ओ रानीघाटमे छलाह आ हम राजापुरमे। संयोगवश हमरा डेरा बदलबाक भेल। रानीघाटमे एकटा डेरा भेटल।

रानीघाट अएला पर श्री हरिमोहन बाबू सँ साँझ-प्रात गप्प होमय लागल। जँ कोनो कारणेँ भेट भेना दू-चारि दिन भऽ जाए तँ कुशल-समाचार बुझवा लेल श्री हरिमोहन बाबू स्वयं डेरा धरि पहुँचि जाइत छलाह वा बहादुरकेँ पठबैत छलथिन्ह।

एकदिन एगारह बजे रातिमे बहादुर आबिकेँ हमर केवाड़क जंजीर खटखटौलक। केवाड़ खोललहुँ तँ देखैत छी—बहादुरक संग हमर एक सम्बन्धी आएल छथि। बहादुर आपस चल गेल आ सम्बन्धी भीतर अएलाह।

हम पुछलियन्हि—बहादुर कोना भेटल !

ओ कहलनि—गाममे मास्टर साहेब कहलन्हि जे जँ डेराक पता नहि लागय तँ श्री हरिमोहन झाजी कतऽ चल जाएब। ओतऽ सँ पता लागि जाएत। राति काफी भऽ गेल छलैक, तेँ हुनके कतऽ चल गेलहुँ।

"श्री हरिमोहन बाबू अपने छलाह ?" हम पुछलियन्हि।

"अपने भीतरमे छलाह। हमर आवाज पर बहादुरकेँ कहलथिन्ह – रौ बहादुर, देख; एखन के एलथुन, जल्दी देख। भरिसक केओ रास्ता भुतिआ गेल छथि। हम कहलियन्हि अहाँक नाम, जे हुनका डेरा पर हम जाए चाहैत छी। बहादुरकेँ कहलथिन – जल्दी हिनका मदन बाबूक डेरा पर पहुँचा दहुन।

दोसर दिन साँझमे जखन श्री हरिमोहन बाबूसँ भेट भेल तखन पहिल बात पुछलन्हि—"विकट पाहुन गेलाह की छथिहे ?"

☐ रानीघाटसँ श्री हरिमोहन बाबू डेरा बदलिकेँ दोसर महल्ला चल गेलाह। हुनक नबका डेरा पर हम भेंट करऽ गेलियनि। देखितहि बड़ प्रसन्न भेलाह। रंग-विरंगक गप्प होमय लागल। गाम-ठामक नाम सभ केहन तकर वर्णन किछु काल धरि भेल।

गंभीरतापूर्वक श्री हरिमोहन बाबू कहलन्हि—"हम मुस्किलमे पड़ल छी।"

हम पुछलियन्हि—"से की ?"

ओ कहलन्हि—"आर सभ तँ जे-से; बड़ बढ़ियाँ, मुदा लोककेँ डाकक पता कोन लिखियौक से नहि फुरैत अछि।

हम कहलियन्हि—"नवका डेराक पता दियौक।"

"ओह, सएह ने गड़बड़"—ओ बजलाह।

हम पुछलियनि—"से की ?"

ओ कहलन्हि —"एहि महल्लाक नाम छैक पाँड़टोला !"

दुहु गोटेके हँसी लागि गेल । खूब हँसैत गेलहुँ ।

हम पुछलियन्हि—"एहि महल्लाक आन कोनो दोसर नाम ?'

ओ कहलन्हि—'ओह ! दोसरो नाम तेहने छैक । लोक एकरा टिकिया टोली कहैत छैक ।' फेर हँसी बजरि गेल ।

☐ बहुत दिन पर गेल रही श्री हरिमोहन बाबू सँ भेट करए ।

कुशल समाचारक बाद कहलन्हि—"पटनाक किछु साहित्यकार सभक लीला बूझल अछि ?"

हम पुछलियन्हि—"से की ?"

ओ कहलन्हि—"की कहू । किछु साहित्यकार अलग-अलग कार्यालयमे छुटलाक बाद होटलके साहित्यक अड्डा बना कऽ आनन्द लैत छथि ।"

हम कहलियनि—"मनोविलाससँ साहित्यिक प्लाट भेटैत होएतन्हि ।"

ओ कहलन्हि—"जखन ओ लोकनि डेरा अबैत होएताह तखन जँ ओ अपन पत्नीसँ पुछथि जे जतबा काल डेरा अएबामे हुनका विलम्ब होइत छलन्हि ततबा काल धरि ओ हुनका विषयमे की-की सोचैत रहलीह आ हुनक पत्नी जे असली बात कहि देथिन तँ ओतबेमे साहित्यकारके अनेक प्लाट भेटि जएतन्हि ।"

एहि क्रममे दू-चारि गोटेक नाम हमरा सेहो कहलन्हि । संगहि कहलन्हि जे हुनकालोकनिके बुझा दिऔन जे होटल आ गाँधी मैदानसँ बढ़ियाँ जे बैसकी डेरा पर करथि आ हुनका लेल परिवारक सदस्यके जे मानसिक तनाव रहैत छैक ताहू पर ध्यान राखथि ।

हम कहलियन्हि—"हुनका सभसँ भेट भेला पर हम कहबनि ।"

ओ कहलन्हि—" ई बात अहाँ अपन दिससँ कहबनि । हमर नाम नहि कहबनि, नहि तँ ...।"

☐ मैथिली साहित्यक प्रसिद्ध कवि श्री भीमनाथ झाजी एक दिन भेटितहि कहैत छथि—"भाइ ! मान्यवर श्री हरिमोहन बाबूक संवाद अछि ।"

हम पुछलियनि—"की संवाद अछि ?"

ओ कहलन्हि—"अहाँ आब लखपती भऽ गेलहुँ ।"

हम पुछलियन्हि—"से कोना ?"

ओ कहलन्हि—"श्री हरिमोहन बाबूसँ जाकऽ गप्प करू ।"

हम श्री हरिमोहनबाबू लग गेलहुँ । देखितहि प्रसन्न भऽ कहलन्हि "औ मदन बाबू, अहाँक ''यंत्रवत्'' कथा 'मिहिर'मे पढ़लहुँ । एहि कथा पर सिनेमा बनि सकैत अछि । एकरा अहाँ सिने राइटिंग कऽ कऽ पठा दियौक । एहि कथा सँ अहाँ लखपती भऽ जाएब ।''

बहादुर दू कप चाह हमरा सभक बीच मे राखि गेल । चाह पिबैत श्री हरिमोहन बाबू पुछलन्हि —''कालिह तऽ अहाँ सभक मिटिंग अछि ?''

हम पुछलिन्हि'—''कोन मिटिंग ?''

ओ कहलन्हि—''समितिक महिला-शाखाक मिटिंग ?''

हम कहलियन्हि — 'ओहिमे हम नहि जाएब ।''

ओ पुछलन्हि —''किएक ?''

हम कहलियन्हि —''मिथिलाक सांस्कृतिक परम्परानुसार महिलालोकनि पुरुषक हेतु आध्यात्मिक शक्ति होइत छथि । तेँ मायावी प्रतियोगितामे हुनक उतरब व्यक्तिगत रूपसँ हमरा नीक नहि लगैत अछि ।''

श्री हरिमोहन बाबू हमर बात सुनैत रहलाह, मुदा ओ बजलाह किछु नहि ।

तेसर दिन अखबारमे देखलियैक जे समितिक महिला शाखाक बैसक भेल जकर अध्यक्षता मान्यवर श्री हरिमोहन बाबू कएलन्हि ।

किछु रोचक वार्त्ता : हरिमोहनबाबूक प्रसंग

पूर्णेन्दु चौधरी
विभूति आनन्द

"ई संसार एक अद्भुत रंगशाला थीक जाहि मे रङ्ग-बिरङ्गक पात्र अबै छथि और अपन-अपन चरित्र देखाय पुन: नेपथ्य मे विलीन भऽ जाइ छथि। अपने लगमे चित्र-विचित्र दृश्य देखि पड़त। 'नानारूपधरा देवा: विचरन्ति महीतले !'

एहि नाटकक सूत्रधार के छथि? एहि खेलक रहस्य की छैक? केओ-केओ कहै छथि जे ई सभ मिथ्या—मायाक खेल—थीक। यदि सैह बात हो तखन गंभीर चिन्ता करबाक प्रयोजने की? हँसि-हँसि कऽ जीवनक आनन्द किएक ने लेल जाय? क्षणिके विनोद सही, रसक छिटका तऽ भेटत ! कोन ठेकान, कदाचित् एतबे मात्र सत्य होइक !"

इएह थिक प्रो० हरिमोहन झाक जीवन-दर्शन। हिनक साहित्यक उत्स। लेखनक लोकप्रियताक कारण। विनोदमय जीवनक रहस्य।

हास्य रस थिक आ रस ब्रह्मानन्द सहोदर—आचार्यलोकनि एहि पर विवाद ठानि सकैत छथि, मुदा एहि पर विवाद नहि भऽ सकैत अछि जे हरिमोहन बाबूक साहित्य पढ़ला सँ हँसी लगैत अछि, मोन हृष्ट होइत अछि। कहल जाइत अछि जे प्रसन्नचित्त आत्मामे दुष्टक वास नहि भऽ सकैछ। हरिमोहन बाबू एकर प्रमाण छथि। एकदम निश्छल लोक, जिजीविषाक अनन्त प्रेरणास्रोत। वृद्ध हो या बच्चा हरिमोहर बाबू सँ केओ कखनो भेंट कऽ सकैत अछि। गप्प कऽ सकैत अछि ! सभक लेल ई समानरूपेँ खुजल छथि। इएह कारण थिक जे जहिना हिनक साहित्य आबालवृद्धवनिताक हेतु रुचिगर भेल तहिना हिनक व्यक्तिगत जीवन सेहो सभक लेल आह्लादकर आ उत्साहवर्द्धक अछि।

हास्य हरिमोहन बाबूक स्थायी भाव थिक - जीवनसँ साहित्य धरि। कनबाक स्थितिकेँ टारबाक लेल हँसबाक प्रयोजन सभ दिन रहल अछि, आइयो अछि; तेँ आजुक जीवनक त्रासदीक लेल एकटा चुनौती छथि हरिमोहन बाबू। विनोदप्रियता आ वाक्चातुर्य यदि मैथिलक संस्कार थिक तँ एकर जतेक मुखर रूप हरिमोहन बाबूसँ भेंट भेला पर भेटैत अछि ततेक प्राय: अन्यत्र नहि। जीवनक वाक्चातुर्य साहित्यमे व्यंग्यधरि पहुँचि जाइत अछि, मुदा हास्यक उपस्थिति बनले रहैत अछि। एतेक अवश्य जे दैनन्दिन जीवनक गप-शपमे जे हास्य आ वाक्पटुता भेटैत अछि से हरदम चटनीए नहि रहैछ। ओ गंभीर चिन्तनक पूरा खोराक सेहो दैत अछि। हँसैत-हँसैत अपन बात कहबाक हिनक अपूर्व छटा छनि।

सामान्य गप्प हो वा दर्शन-गणितक गंभीर गोष्ठी, अथवा आने कोनो विचारमंच— बातकेँ रखबाक हिनक अपन ढंग छनि। निजी उपस्थापन-शैली।

हरिमोहन बाबू भारत सरकारक वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली निर्माण आयोगक सदस्य छलाह। एहिमे देशक चुनल-चुनल विद्वान सभ रहथि। एक-एक शब्द पर सांगोपाङ्ग विचारविमर्श कय शब्दक निर्णय होइत छल। एक सदस्य 'इयुगेमोनिज्म' (Eugemonism) शब्दक हिन्दी-पर्याय बतओलनि सम्पूर्णानन्दवाद। हरिमोहन बाबू टोकलथिन—ई तऽ 'महिलांगुलि न्याय' भेल। ओ पुछलथिन से की? हरिमोहन बाबू—जेना हम सभ 'रामझिगुनीकेँ बिसरि ओकर अंग्रेजी नाम लेडी फिंगर' (Lady Finger) क शाब्दिक अनुवाद करी महिलांगुलि। जखन अपन भाषामे 'कल्याण निःश्रेयस' सन-सन शब्द अछि तखन उत्तर प्रदेशक एक मुख्य मंत्रीक नाम पर ई वाद चलयबाक की प्रयोजन?

कहब व्यर्थ जे ओहि समयमे तँ सभ हँसैत रहल, मुदा तखनसँ एकोटा शब्दक पर्याय बिना हिनक स्वीकृतिकेँ निर्णीत नहि भेल।

☐ मैथिलीक प्रसिद्ध कवि-गीतकार श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, श्री हरिमोहन बाबू, महेन्द्रजी आ दक्षिणभारतीय नर्तकी जयालक्ष्मी कारसँ जा रहल छलाह। बाटमे मैथिली मे गप्प होइक आ ठहाका पर ठहाका लगैक। जया लक्ष्मी हरिमोहन बाबूसँ अंग्रेजी मे पुछलथिन – अहाँ सभ की गप्प कऽ रहल छी? एहिपर रवीन्द्रजी मैथिली मे बाजि उठलाह—'अहाँ बोतल छी। नहि बुझबैक।' ई सुनि फेर सभ हँसि देलक।

हरिमोहन बाबू जया लक्ष्मीकेँ बुझौलथिन—ई अहाँकेँ बोतल कहैत छथि।

एकर माने की भेलैक?— जया लक्ष्मीक जिज्ञासा छल।

हरिमोहन बाबू अर्थ बुझौलथिन– पुरुषकेँ जँ बोतल कही तँ एकर अर्थ भेल बेकूफ आ जँ युवतीकेँ बोतल कही तँ एकर अर्थ भेल मदिरा।

☐ एक बेर हरिमोहन बाबू श्री प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त', हिन्दी प्रोड्यूसर, आकाशवाणी, लग बैसल रहथि। एकटा नव वार्ताकारकेँ मुक्तजी बुझबैत रहथिन जे आकाशवाणीसँ प्रसारित होबऽ बला आलेखमे कोन-कोन बात नहि रहबाक चाही। मुदा, आलेख स्तरीय रहबाक चाही।

ई सुनि हरिमोहन बाबू कहलथिन –मुक्तजी, अहाँके चाही ओलक चहटगर तरकारी। मुदा, ओहिमे ने नेबो रहय, ने मसाला।

☐ उपर्युक्त बात सभ मोन प्रसन्न रहला पर संभव अछि। मुदा जँ मोन दुःखी रहय तखन हास्य संभव अछि की? नहि। मुदा, एकटा उदाहरण देखू—

हरिमोहन बाबूक पत्नी श्रीमती सुभद्रा झा एकाएक 'कोमा'-स्थितिमे पहुँचि गेलथिन। स्थानीय साहित्यकार जिज्ञासामे पहुँचल करथि। एकदिन श्री केदार काननकेँ हरिमोहन बाबू कहलथिन्ह काननजी, एहि दुनियामे खाली मोह-माया अछि। लोक एकसर अबैत अछि, एकसर जाइत अछि। पति, संतान सभ खाली माया अछि।

जी श्रीमान, अपने ठीक कहैत छिऐक - श्री केदार कानन बजलाह—लोक एकसर अबैत अछि आ एकसर जाइत अछि।

ई सुनि हरिमोहन बाबू कहलथिन - मुदा, एहनो होइत अछि जे दू गोटा संगे अबैत छथि, जाय काल भने आगू-पाछू जाथि। जेना अमरनाथ-विश्वनाथ।

☐ हरिमोहन बाबूक एकटा स्वभाव एहन अछि जे ओ लगले लोककेँ बिसरि जाइत छथि। अहाँ आधा घंटा पहिने हुनकासँ गप्प कऽ कऽ गेल छी, परंच जँ फेर अयलहुँ अछि तँ फेरसँ अपन परिचय देबऽ पड़त। जँ परिचय नहि देबनि तँ हरिमोहन बाबू नहि चिन्हताह।

एक बेर किछु प्रवासी मैथिल पटना आयल रहथि। ओ सभ श्री गोविन्द झा लग हरिमोहन बाबूसँ भेँट करबाक इच्छा प्रकट कयलनि। गोविन्द बाबू सभ गोटाकेँ हरिमोहन बाबूक ओहि ठाम लऽ गेलथिन। सभ गोटाक परिचय हरिमोहन बाबूकेँ देलथिन।

हरिमोहन बाबू पुछलथिन—अहाँक परिचय ?

एहि पर गोविन्द बाबू दुनू हाथ जोड़ि कऽ कहलथिन—हम गोविन्द झा, पिताक नाम दीनबन्धु झा, ग्राम इसहपुर, जिला······

गोविन्दजी अहाँ छी ? –बीचमे बजैत हरिमोहन बाबू गोविन्द बाबूकेँ हाथ पकड़ि अपना लग बैसा लेलथिन।

☐ हरिमोहन बाबू ताहि समयमे विश्वविद्यालयमे कार्यरत रहथि। श्री गंगेश गुंजनकेँ अपन एक मित्रक बहीनकेँ होस्टलमे जगह देअयबाक लेल हरिमोहन बाबूसँ पैरवी करऽ पड़लनि। गुंजनजीक चिट्ठी पढ़ला पर हरिमोहन बाबू ओहि छात्रासँ गुंजनजीकेँ पठा देबक लेल कहलथिन।

गुंजनजी अपन नामक स्लिप हरिमोहन बाबूक कोठरीमे चपरासीसँ पठौलथिन। किछु देरक बाद चपरासी भीतर जाय लेल कहलकनि। गुंजनजी भीतर जा कऽ बैसलाह। हरिमोहन बाबू हिन्दीमे पुछलथिन—कोन काज अछि ?

गुंजनजी हिन्दीएमे अयबाक उद्देश्य कहलथिन, संगहि ईहो कहलथिन जे अपने ओहि छात्रा सँ हमरा अयबाक लेल समाद देने रही।

अहाँ कतऽ सँ आबि रहल छी ?—हरिमोहन बाबूक प्रश्न हिन्दीमे छल।

हम अकाशवाणीसँ आबि रहल छी।—गुंजन जीक उत्तर सेहो हिन्दीमे छल।

अहाँक नाम ?—हरिमोहन बाबूक जिज्ञासा हिन्दीमे छल।

गंगेश गुंजन।—गुंजनजीक उत्तर छल।

यौ गुंजनजी, तखनसँ अहाँ हमरासँ हिन्दीमे किएक गप करैत रही ?—हरिमोहन बाबू मैथिलीमे शिकायत कयलथिन। ओ काज तँ होयबे करतैक—हरिमोहन बाबू कहलथिन—पहिने ई कहू जे अहाँ हिन्दीमे किएक गप करैत रही ?

हम अपनेकेँ अपन नामक पुर्जी पठौने रही—गुंजनजी कहलथिन।

एहिपर हरिमोहन बाबूक उत्तर छल—ओ पुर्जी पढ़ि कऽ हमरा भेल जे अहाँ गप कऽ कऽ चलि गेलहुँ।

□ एहन घटना खाली मैथिलीए भाषा-भाषीक संग नहि घटल अछि। हिन्दीभाषी सेहो हरिमोहन बाबूक एहि स्वभावसँ परिचित छथि। गुंजनजी एकटा घटना सुनौलनि—आकाशवाणीक हिन्दी विभागसँ हरिमोहन बाबूकेँ दर्शन पर वार्ताक लेल अनुबंध-पत्र गेल रहनि। जाहि दिन रेकार्डिंग रहैक ताहि दिन हरिमोहन बाबू तत्कालीन हिन्दी विभागक प्रोड्यूसर मुक्तजीक कोठरीमे प्रवेश करैत कहलथिन—मुक्तजी, आब हमर माथसँ बिसरबाक कलंकक टीका मेटा दियऽ। आइ हम अहाँक कन्ट्रेक्ट फार्म लऽ कऽ आयल छी।

मुक्तजी हरिमोहन बाबूकेँ बैसबैत कहलथिन—अहोभाग्य हमर सभक।

हरिमोहन बाबू जेबीसँ अनुबंध पत्र निकालैत कहलथिन—बाजू कतऽ दसखत कऽ दियऽ।

मुक्तजी द्वारा स्थान बतौला पर हरिमोहन बाबू दसखत कऽ कऽ कागज मुक्तजीकेँ दऽ देलथिन। मुक्तजी अनुबंध-पत्र पढ़ला पर दुनू हाथ जोड़ि कऽ कहलथिन—भगवन, ई १९७३ इस्वी अछि आ अपने १९७१ इस्वीक अनुबंध-पत्र अनलहुँ अछि।

ई सुनैत हरिमोहन बाबू कहलथिन—जा, तखन एहू बेर गड़बड़ा गेल।

□ हरिमोहन बाबूक बिसरि जयबाक आदतिसँ अनेको घटना जुड़ल अछि। एक बेर हम पुछलियनि—की अपने कहियो भाइ साहेब (श्री राजमोहन झा, हरिमोहन बाबूक जेठ बालक)केँ सेहो नहि चिन्हलियनि अछि ?

हँ, एकबेर भेल अछि।—हरिमोहन बाबू कहलनि—एकटा मीटिंगमे गेल रही। जाहि ठाम हम बैसल रही तकर चारि कुरसीक बाद एक गोटा बैसल छल जकर बुशर्ट गोपालजी (श्री राजमोहन

झा) मन छलैक। गोपालजी छथि की नहि से जँनवांक लेल हम मुँह दोसर दिस घुमा कऽ कहलियैक—गोपालजी छऽ ?

ओ व्यक्ति बाजल—हँ, यैह छी। तखन भेल जे गोपालजी छथि।

☐ हरिमोहन बाबूक यैह बिसरबाक आदतिक कारणे श्री विद्यानाथ झा 'विदित' एकबेर हरिमोहन बाबूसँ कहने रहथिन—श्रीमान्, अपने एकटा पी० ए० राखि लियऽ जे अपनेकें चिन्हा देत जे कोन व्यक्ति के छथि।

एहि प्रस्ताव पर हरिमोहन बाबूक उत्तर छल—विदितजी, बात तँ कहलहुँ अछि ठीक। मुदा, एकर गारण्टीके लेत जे हम पी० ए०सँ आधा घंटाक बाद ओकर परिचय नहि पुछबैक ?

(संग्रहकर्त्ता : पूर्णेन्दु चौधरी)

☐ पत्नीक आग्रह पर एकबेर हरिमोहन बाबू स्वयं कड़ू तेल अनबाक लेल विदा भेलाह। दोकानदार बाइस टके सेर कड़ू तेल दैत कहलकनि—वैसे तो हम किसी को नहीं कहते हैं कि हमारे पास तेल है, तब आप पुराने कस्टमर हैं, अतः आपको कैसे ना कहूँ !

हरिमोहन बाबू टिपलथिन औ बाबू, आर जे कहबाक होअए से कहू, कष्ट सँ' त' ई सरकारे मारि रहल अछि, अहाँ कथी लए ई आशीर्वाद द' रहल छी ? 'कष्टमर'-'कष्टमर' की बर्जै छी ?

☐ मैथिलीक आयोजकलोकनि प्रारम्भमे बड़ उत्साह देखबैत छथि, मुदा पाछाँ हुनकालोकनिक जोश स्प्रीट जकाँ उड़ि जाइत छनि।

—'अमर'जीक एहन टिप्पणी पर हरिमोहन बाबू कहलथिन—आहे रे बा ! तेँ ने स्प्रीटकें 'मैथिलेटेड' वा 'मिथिलेटेड' कहल जाइत छैक। यदि से नहि रहितै त' स्प्रीट मद्रासिएटेड सैहे कहबैत किने !

☐ चारि-पाँच गोटे हरिमोहन बाबूक ओहिठाम बैसल रहथि। कनी कालक बाद एक गोटे पहुँचलाह। परिचय-पातक बाद हरिमोहन बाबू हुनका अपन बामा कातक बेंतक कुरसीपर बैसबाक आग्रह कएलथिन। ओ व्यक्ति तावत आन कुरसी पर बैसि गेल छलाह, मुदा हरिमोहन बाबू आग्रहपूर्वक हुनका पहिलुका कुरसी पर स' उठाक' बेंतक कुर्सी पर बैसौलथिन। ओत' बैसल व्यक्ति सभकें नवागन्तुकक एहि प्रकारक सम्मानसँ किंचित दुखो भेलनि।

किछुए कालक बाद ओ कवि ओहिठामसँ 'फेर कखनो आएब' कहि चलि देलनि।

तखने 'अमर'जी पहुँचलाह। नमस्कार-पातीक बाद ओही बेंतवला कुरसी पर बैसबऽ चाहलनि कि हरिमोहन बाबू हुनका मना करैत कहलथिन—एहि पर नहि बैसू। बेसीकाल नहि बैसि होयत, एहिमे बड़ उड़ीस छै।

☐ हरिमोहन बाबू नित्य भीमनाथ झाजी सँ तहिया प्रकाशित होइत पत्रिका 'फराक'क मादे पुछल करथिन। एकदिन कथाक मादे पुछला पर भीम भाइ कहलथिन जे भुवनजी (प्रो० मनमोहन झा) क कथा आबि गेल अछि।

हरिमोहन बाबू पुछलथिन—की शीर्षक छै? 'कोढ़िया' (मनमोहन झाजीक कथा) सनक तँ ने कोनो?

भीम भाइ उत्तर देलथिन—'भूख'।

हरिमोहन बाबू पुछलथिन—की छै ओहि मे?

भीम भाइ टिपलथिन—इएह जे भूख नहि लगै छनि……

हरिमोहन बाबू किंचित चिन्तित होइत कह' लगलथिन—भूख कोना लगतनि? टहलैत छथि नहि, पचतनि कोना! एकटा त' रोटी खाइत छथि……

भीम भाइ बकर-बकर मुँह तकैत रहलाह।

☐ नवतुरिया हास्यलेखक अमरनाथ झाकेँ पटनामे डेराक आवश्यकता छलनि। कोनो एक साँझ ओ हरिमोहन बाबूक ओहिठाम पहुँचलाह। आनन्दित होइत कहलथिन—अहाँ लए एही मोहल्ला मे डेरा ताकि क' रखने छी। जा क' देखि आउ।

आ एक गोटेकेँ संग क' देलथिन। अमर नाथजी किछु कालक बाद डेरा देखिक' अएलाह आ गुम-सुम भ' बैसि गेलाह। बैसल रहलाह। हरिमोहन बाबू पुछलथिन—डेरा नहि रुचल की?

से बात नहि—अमरनाथजी बजलाह—डेरा तँ नीक छै, मुदा कहलक जे ई डेरा फेमली-वलाकेँ भेटि सकै छै।

हरिमोहन बाबू गम्भीर होइत कहलथिन—सएह कह' त'। ई त' जुलूम करैए! एक त' डेराक किराया दियौ आ ताहि पर सँ फेमली तकैत फिरू…… …

☐ 'कन्यादान'क प्रसंग गप्प चलैत रहय। हरिमोहन बाबू विभिन्न संस्मरणक रोचक वर्णन करैत रहथि। एकटा एहने संस्मरणक चर्चा करैत ओ कहलथिन—एकटा गोष्ठीमे गेल रही। एक

निराट उत्साही सज्जन आशा करइत छलाह जे हमरा [illegible] [illegible] देब' चाही। [illegible]
'कन्यादान' पढ़ि ओ लोकनि आब सभ [illegible] मुसकी मुसकी [illegible] भ' गेल छथि, [illegible]।

हमर रचनाकार [illegible] प्रशंसा आ हुनकर आशा स' अभिभूत भ' गेल। हुनका संग हवेली पहुँचलहुँ। [illegible] पर अपन [illegible] मे हमर पुत्र [illegible] — आउ आउ! [illegible], हरिमोहन बाबू, कन्यादानक लेखक।

कन्यादान सं [illegible] आ [illegible] मन-मन गुनैत रहलहुँ आ ओहि पर हुनकर [illegible] पसैत गेल।

☐ हरिमोहन बाबूक इन्टरभ्यू लेबऽ भीमनाथ झा, गंगेश गुंजन, प्रभास कुमार चौधरी आ पूर्णेन्दु चौधरी साँझक झलफल मे हुनक रानीघाट स्थित डेरा पर पहुँचलाह। कोनो प्रत्याशित आशंका मे बचबाक लेल गुंजनजी पहुँचिते कहलथिन-हमरालोकनि छी—हम गुंजन, ई प्रभास, ई भीमनाथ आ ई पूर्णेन्दु।

हरिमोहन बाबू उत्साहपूर्वक प्रभासजीक बाँहि पकड़ि घीचैत कहलथिन—आउ, आउ भीमचन्द्र जी! बहुत दिन पर अएलहुँ अछि!

जतबा काल इन्टरभ्यू चलल, हरिमोहन बाबू भीमकाय प्रभासजी के भीमचन्द्रजी कहि सम्बोधित करैत रहलथिन। भीम भाइ अपन दुर्बल कायाक संग दोसर कात विहुँसैत रहलाह।

☐ कुमार गंगानंद सिंह एक बेर अपना ओत' संगीत समारोहक आयोजन कएने रहथि। एकटा गायक समदाउन उठौलनि। ओ गायक टहंकार करैत हाथ चमका कऽ द्रुत मे सोंटऽ लगलाह—सियाजी के पोसलहुँ ...

कुमार साहेब विहुँसैत हरिमोहन बाबूकेँ पुछलथिन—कहू, समदाउन केहन भऽ रहल अछि?

हरिमोहन बाबू कहलथिन—'सम' छोड़िये देल जाओ, केवल 'दाउन' कहल जाओ।

☐ एकबेर हरिमोहन बाबू पहुँचल रहथि राँची। उपेन्द्र दोषी, उदयचन्द्र झा 'विनोद' आ मोहन भारद्वाज पहुँचलाह लखनजी (हुनक बालक) क डेरा पर प्रोफेसर साहेब सँ भेंट-घाँट करं'। गप धुरझार चलिये रहल छलै कि एकटा बटुक केँ अपना दिस अबैत देखि हठात प्रोफेसर साहेब बजलाह —बेस बाबूलोकनि, गप-सप आब फेर हेतै कखनो, हमरा मामा भाइक बजाहटि आबि गेल।

—मामा भाइ ....? दोषीजी किछु ठेकान करैत पुछलथिन।

—आहि रे बा ! बुझलिऐ नहि, उमा बाबूक ओत' नोत अछि। ओतहि मामा भाइ हमर प्रतीक्षा करैत होएताह।

उमा बाबू ओत' मामा भाइ ?—विनोदजी आर आश्चर्यित।

हरिमोहन बाबू तखन रहस्यक गीरहकें फोललथिन—अरे, मा माने मांगुर, मा माने माछ, भा माने भात, इ माने इत्यादि : इत्यादियेमे सभटा विन्यास आबि गेल, जेना अचार, चटनी, नेबो, दही, चीनी, खोआ, मधुर.......

□ कवि-कथाकार पूर्णेन्दु चौधरीकें किछु दिन लोक सभ सँ इन्टरभ्यू लेबाक भूत सवार रहनि। आ ताही क्रममे ओ हरिमोहन बाबूक पत्नीसँ इन्टरभ्यू लेलथिन जाहिमे एकटा प्रश्न रहै— अहांक पतिकें कोनो एहन आदति छनि जाहिसँ तामस अथवा मनोरंजन होइत अछि ?

हुनकर उत्तर भेलनि—जखन क्रोध करैत छथि तखन तामस होइत अछि। ओना हिनका बिसरबाक आदति छनि जाहि सँ मनोरंजन होइत अछि। हिनक एकटा भतिजजमाए पहिल बेर डेरा पर आएल छलथिन। भरिदिन डेरा पर रहि सांझमे टहल' गेलथिन। कनी कालक बाद जखन ओ घुरिक' अएलाह त' ई पुछलथिन—आप किनको खोज रहे हैं ?

एहिना एकबेर संगे गेल रही। वेटिंगरूममे बैसल रही। हम बाथरूम गेलहुं ता एकटा बंगाली स्त्री, जकरा हमरे सन कारी ब्लाउज रहै, ओहि कोठरीसं बाहर जाए लागलि त' ई टोकि देलथिन —मर्रे, कहाँ जाइ छी ? हम एत' छी ! ता हम अएलहुँ त' पुछलियनि जे ककरा टोकने रहिऐ ?

—अरे, अहाँ एतै छी !—कहि ओ हँसऽ लगलाह।

□ एकबेरक गप्प थिक। दुर्गा पूजाक लगाति स्टाफ-क्लबमे हरिमोहन बाबू बैसल छलाह। हुनका कातमे एकटा हिन्दीक प्राध्यापक बैसल रहथि। ओ हरिमोहन बाबू सँ जिज्ञासा कएलनि—डी० पी०मे कत' जा रहल छी ?

नहि जानि किए हरिमोहन बाबूकें ई बात नीक नहि लगलनि, उत्तर देलथिन—बी० पी० जाएब।

प्राध्यापक—बी० पी० की ?

हरिमोहन बाबू—डी० पी० की ?

प्राध्यापक—दुर्गा पूजा !

हरिमोहन बाबू—बाजितपुर।

प्राध्यापक महोदयक मुँह उतरि गेल रहनि।

☐ माछक प्रेमी हरिमोहन बाबू एकबेर दर्शनशास्त्र विषयक कोनो सेमिनारमे मद्रास गेल रहथि। ओतऽ लोकक ई धारणा जे ब्राह्मण लोकनि मांसाहारी नहि होइ छथि, भोजन-प्रकरणमे तेँ विशुद्ध शाकाहारी विन्यास कएल गेल रहनि।

हरिमोहन बाबू भोजनक ई सँचार देखि विचार करऽ लगलाह जे आब की कएल जाए? कारण, जाहि स्थान पर भोजनक बन्दोवस्त रहै तकर चारूकात छल-छल करैत रंग-विरंगक पोसुआ माछ हिनकर जीह सिहा रहल छलनि। ई बहुत विचारलनि। मद्रासी सभक धारणाकेँ तोड़बो ठीक नहि बुझएलनि।

आ अंतमे जखन कोनो ब्योंत नहि सुतरलनि त' चम्मच फेकि छुच्छ भातकेँ सानि हाथमे उठौलनि—'भात', आ पुनः हाथके माछ दिस देखा—'माछ' कहैत मुँहमे कोंचऽ लगलाह।

भोजनक बाद जे ढेकार बहरएलन्हि ओहिमे माछ-भातक सुगंधि बुझएलनि कहाँदन!

☐ एकबेर प्रो॰ रमानाथ झा हरिमोहन बाबूकेँ पत्र लिखलथिन—हम मैथिलीक एकटा कथा-संग्रहमे अहाँक 'दही-चूड़ा-चीनी' वा 'माछ' लेब' चाहैत छी। अपन स्वीकृति पठाउ।

हरिमोहन बाबू तत्काल हुनका उत्तर देलथिन—अहाँक पत्र भेटल। एहि दुनूमे जे सभसँ बेसी पसिन्न हो, सएह हमरा खोआक' ल' लिअऽ।

☐ जेना दूटा बेंग एकठाम नहि रहि सकैए तहिना दूटा 'झा' सेहो एकठाम नहि रहि सकैए—हरिमोहन बाबूक ई साधल स्पष्ट मत रहनि।

मुदा श्रीमान्!—क्यो गोटे प्रमाण उपस्थित कएलनि—झाझा स्टेशन?

ओहि व्यक्ति दिस तकैत ओ हँसैत हरिमोहन बाबू कहलथिन—आहि, से नहि बुझलिऐ! ई झाझास्टेशन जे थिक से त' भेल निर्जीव······

मुदा····—

मुदा की? जँ ओ सजीव रहैत त' ओहिमे हाइफन अवस्से लागल रहैत—झा-झा;

(संग्रहकर्त्ता : विभूति आनन्द)



हरिमोहन बाबू

डॉ० सीता शरण

करीब चालीस वर्षों से उनको नजदीक से देख रहा हूँ। कहानी सुनाते, कविता सुनाते, पहेली बुझाते या खिलाते-पिलाते। यह व्यक्ति कौन है जिसकी कहानियाँ भारत की अनेक भाषाओं में अनूदित हुईं ?

कुशाग्र हैं, हाजिर जवाब हैं। खाने-पीने के शौकीन हैं और हर समय बच्चों की तरह निर्मल शब्दचित्र खींचने में बेजोड़। उनकी पुस्तक प्रत्येक मैथिली परिवार में अवश्य पढ़ी गई। मुझे तो उनकी पुस्तकें अमरीका में भी बसे मैथिल परिवार की मेंटलपीस पर दीखीं।

क्या थी उनकी दुनिया ? वे स्पष्टवादी थे, कथाकार थे, मुखौटा से दूर थे। पहले और अंतिम गुण के कारण ही वे समाज में शारीरिक रूप से थोड़ा अलग रहते थे। नाम सभी जानते हैं। जाने-अनजाने अनगिनत मैथिलीभाषी पर उनका असर पड़ा, पर पता नहीं क्यों, इसे स्वीकारने से लोग कतराते हैं। उनकी पुस्तकों का क्या असर पड़ा, यह शोध का विषय है। वे परिवर्तन के दूत हैं। मगर उन्होंने जीवन में कोई जमीन-जायदाद नहीं जमा की। कमाया, खाया और बच्चों के लिये अर्थ जमा किया ! अपने लिए पुस्तकें, और······?

आज ७४ की उम्र हो गई। पत्नी चली गई। किस सहारे को खोज रहे हैं ? स्मृतियों को संस्मरण में रख रहे हैं। यही तो वे पिछली बीमारी के बाद से कर रहे हैं।

आज की छल-कपट की दुनिया में अकेले हैं और बच्चे की तरह दीखते हैं। कहाँ कभी अड्डा मारते और दरबार करते देखा ?

क्या है उनका दर्शन ? वर्तमान का सदुपयोग, पारिवारिक जीवन और सरल आचार-व्यवहार।

मैंने ऊपर जिन विचारों की चर्चा की है वह चिन्तन, अध्ययन एवं शोध का विषय है। मैं समय-समय पर उनके इतना निकट आया कि स्मृतियों की धारा तथा उसके वेग को लेखनी द्वारा व्यक्त करने में हार रहा हूँ।

एक-दो बात अवश्य कहना चाहूँगा। वे बाल-सुलभ हैं। शाश्वत शिशु हैं। उनकी जिज्ञासा प्रबल है। सहानुभूति असीम है। मैंने उन्हें आचार्य श्री रामलोचन शरणजी के पास (जो मेरे पिता थे) बैठते-उठते देखा। वहीं उनका अधिक अनुभव हुआ। वे आचार्यजी के पुत्र

की तरह थे। मुझ पर उनकी निगाह अनुजवत् थी। मगर आज तक कुछ बातें समझ में नहीं आई— हालाँकि मैंने उन्हें बचपन से नजदीक से देखा है। चार वर्षों तक, जब मैं पटना कालेज का विद्यार्थी था, उन्हें कालेज में मैंने अजनबी बने देखा।

इंगलैंड से जब लंडन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्स से स्नातक बन पटना आया, वे मेरे मित्र भी बने। रसेल से मेरी एक घंटे की टेप वे सुनते और विचारों से सहमत भी दीखते। मेरा विवाह हो हुआ था। एक युवक-मन की तरंगों को सुनने में भी दिलचस्पी देखी। जब मैंने सार्वजनिक जीवन प्रारंभ किया तब मेरे साथ तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री विनोदानन्द झाजी के यहाँ गये। उनके भी नजदीक रहे। विनोदाजी को उनके द्वारा अनूदित दर्शन की पुस्तकें अच्छी लगीं। मुख्यमंत्री काल में मुझसे माँग कर पढ़ीं। उन दिनों जब मेरा मन न लगता था, हरिमोहन बाबू के यहाँ चला जाता। वे खूब खिलाते भी। उस समय फिर से 'बालक' मासिक-पत्र के लिए श्रेष्ठ बुद्धि-विलास भी प्रेषित करने लगे। "रेल की बात" जैसी पाकेट बुक भी उन्होंने मेरे कहने से लिखी। उनकी कोमल भावनाओं को साहित्य में उतरते देखा।

मगर इस सबके बावजूद बार-बार मेरी चेतना में ध्यान की सूई चार बातों पर अटक जाती है :

बुच्चीदाइ चुप्प

किस प्रकार एक परम्परागत समाज की ग्रामीण महिला से सी०सी० मिश्र का समन्वय अथवा सामंजस्य हुआ, अथवा यों कहें कैसे बुच्ची दाइ ने सी०सी० मिश्र के साथ साझेदारी का दर्जा पाया? भारत में शरतचंद्र के अलावे किसने लेखनी के द्वारा इस संघर्ष को साहित्य में रखा है ? हरिमोहन झा ने मधुरता से साहित्य की अभिवृद्धि की।

प्रत्येक हास्य, साहित्यिक गोष्ठी, महफिल के प्राण

जहाँ लोग जुटे हों वहाँ हरिमोहन बाबू की वाणी में सरस्वती की कृपा देखी। सभी उनको सुन-सुन कर झूम उठते।

शाश्वत शिशु

"कन्यादान" फिल्म; जिसकी कॉपी- राईट पुस्तक भंडार की थी, उसे किस प्रकार हरिमोहन बाबू ने अपने पिता-तुल्य आचार्य रामलोचन शरणजी से बच्चे की तरह माँग ली ! कैसे वे फिल्म वालों से बच्चे की तरह मिले ? और कैसे मुझे कष्ट हुआ कि फिल्म-छायांकन में प्रारंभ में कहीं भी प्रकाशक का जिक्र नहीं कि "किसके सौजन्य से"? कौन बातें करे उनसे ? क्या फिल्म वालों ने उनकी सभी बातें मानीं ? 'पुस्तक भंडार', जहाँ वे बच्चे की तरह आते थे (बाल्यावस्था से अबतक) वहाँ कभी पिढ़िया, कभी कापी, कभी तुलसी का पेड़, कभी कोई और फरमाइश करते। क्या उनके लिए आचार्यजी अथवा उनकी संस्था के लिए हृदय में नैहर जैसा भाव था ? हम लोग तो उनके साहित्याकाश में आविर्भाव के बाद जन्मे थे।

मैंने उनकी पत्नी को भौजी कहा बचपन से। उनके पुत्र का सहपाठी था। क्या उनकी पत्नी ही बुच्चीदाइ थीं ? यह मेरे मन में उठता रहा। सुन्दर, गौरवर्ण और मन से विकसित। लगभग ५० वर्ष पहले मिथिला की मिट्टी की यह सीता वर्तमान शहरी भारतीय सामाजिक परिवेश में सामंजस्य पाई; उसी विषय को हरिमोहन बाबू ने अपनी पुस्तक 'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन' में लिखा ? क्या हरिमोहन बाबू ने अपनी कहानी लिखी ? क्या उनकी पुस्तकें मिथिला के सामाजिक परिवर्तन के इतिहास में प्रथम पुस्तकें थीं ? यही सब सोचते-सोचते मेरी भाव-मन-चेतना की सूई रुक जाती है। जो कुछ भी उन्होंने दर्शन के लिए किया हो, शिक्षा-संसार में किया हो, वे सब जो भी हों, मगर वे अमर होंगे तो मैथिल-प्रदेश में प्रथम-परिवर्तन के दूत के नाम पर।

सरस्वती-पुत्र आचार्य श्री हरिमोहन झा

डा० रामजी सिंह

असामान्य बुद्धिवैभव, व्युत्पन्न पांडित्य और मार्मिक रसज्ञता की त्रिवेणी का दर्शन करना हो तो हम आचार्य हरिमोहन झा के व्यक्तित्व में देख सकते हैं। उनका व्यक्तित्व इन्द्रधनुष की तरह अनेक आयामों से युक्त है। वे एक समर्पित शिष्य, आदर्श आचार्य, सफल साहित्यकार एवं अज्ञात समाज-सुधारक हैं। दर्शन और काव्य का उनके जीवन में गंगा-यमुना का संगम है। इसीलिये साहित्यकारों के बीच वे दार्शनिक और दार्शनिकों के बीच साहित्यकार माने जाते हैं। सामान्यतः काव्य और कविता के साथ न्याय और दर्शन का संयोग बड़ा ही दुर्गम माना जाता है, लेकिन यह आचार्यश्री की अलौकिक प्रतिभा ही है कि एक ही लेखनी से उन्होंने 'कन्यादान' और 'खट्टर ककाक तरंग' जैसी अमर कृतियाँ लिखीं और उसीसे नव्य-न्याय के 'अवच्छेदकतावाद' का भी विवेचन किया एवं अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के अध्यक्ष पद से अपना संभाषण करते हुए आधुनिक भारतीय दार्शनिकों को एक नयी दिशा प्रदान की। दार्शनिकता यदि स्वतंत्र चिंतन में समाविष्ट है तो आचार्यश्री उसके मूर्तिमन्त रूप हैं। उपेक्षित और लांछित लोकायत दर्शन का जितना सुन्दर प्रतिपादन आचार्यश्री ने किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। उसी प्रकार दर्शनविभूति महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा के स्वतंत्र दर्शन के प्रतिपादन में जो साहसिकता एवं मौलिकता आचार्यश्री ने दिखायी है उससे दर्शन-जगत उऋण नहीं हो सकता।

सरस्वती-पुत्र होने के कारण उन्हें भाषा पर अपूर्व अधिकार है। चाहे संस्कृत हो या हिन्दी, अंग्रेजी हो या मैथिली, आचार्य का सब पर समान अधिकार है। मैंने अपने विद्यार्थी एवं बाद के जीवन में भी अनेक आचार्यों के दर्शन किये हैं, लेकिन प्रतिभा के ऐसे धनी तो यही मिले, मानो प्रतिभा की ये साक्षात् प्रतिमूर्त्ति हों। गंभीर से गंभीर विषय का प्रस्तुत्तीकरण आचार्यश्री जितनी सुस्पष्टता से करते हैं, वह अपूर्व है। न्याय और वैशेषिक दर्शन के अपार-अगम साहित्य को उन्होंने जिस प्रकार सुलभ हिन्दी में उपस्थित किया है, उससे एक साथ दर्शन तथा हिन्दी की अतुलनीय सेवा हुई है।

जिस प्रकार उनकी गुरु-भक्ति अद्वितीय है उसी प्रकार उनकी शिष्य-वत्सलता भी इस युग में दुर्लभ है। जब भी उनके यहाँ गया तो लगा पिता के यहाँ आया हूँ। निश्छल प्यार, वात्सल्य देना शायद इनकी प्रकृति ही है। उनकी सर्वदा यही आकांक्षा रही कि उनके शिष्य पृथ्वी से अधिक व्यापक और आकाश से अधिक विराट बनें। शिष्य-शिष्य में उन्होंने कभी विभेद किया ही नहीं। यही कारण था कि

आचार्यश्री का प्रत्येक शिष्य यही समझता है कि उसके ही ऊपर आचार्यश्री की सबसे अधिक कृपा है। प्रत्येक शिष्य के स्वधर्म को वे समझकर उसे उसी ओर प्रेरित करते थे। गाँधी की ओर मेरी अभिरुचि देखकर उन्होंने कहा था कि मुझे गांधी-विचार का कोई शोध-संस्थान चलाना चाहिये और आज तीस वर्षों के बाद भारतवर्ष में उनके इस शिष्य को गौरव है कि वह गांधी-विचार का प्रथम एम० ए० पाठ्य-क्रम चला रहा है। यह उन्हीं का आशीर्वाद है।

मैथिली साहित्य के शिरोमणि होने पर भी आचार्यश्री ने हिन्दी और मैथिली के बीच भगिनी प्रेम का सम्बन्ध स्थापित कर भाषा-समन्वय की साधना की, जिससे आज के उनलोगों को शिक्षा लेनी चाहिये जो हिन्दी बनाम मैथिली का अस्वस्थ विवाद उपस्थित करते हैं।

आचार्यश्री साहित्य की साधना एवं दर्शन की आराधना के साथ-साथ समाज-साधना की दिशा में मौन किन्तु प्रभावशाली होकर बढ़े। उनके मैथिली काव्य में समाज की कुरीतियों एवं अन्ध-विश्वासों के खिलाफ जो कठोर व्यंग्य है, वह उन्हें एक ओर तो साहित्य-सम्राट् शरतचन्द की श्रेणी में बिठाता है, किन्तु उनका व्यंग्य तो अपने आप में अपूर्व है। समाज-प्रबोधन की दिशा में उनका यह अज्ञात प्रभाव इस जीर्ण-शीर्ण समाज के लिये संजीवनी का काम देगा।

आचार्यश्री का एक और गुण स्मरण हो रहा है। परस्पर विद्वेष से परिपूर्ण इस समाज में वे अजातशत्रु की भाँति रहे। "मित्ति मे सब्बभूएसु"—समस्त विश्व के साथ मैत्री भाव, यही उनका जीवन-दर्शन है और मानव मात्र की समानता की उनकी सामाजिक प्रवृत्ति का आदर्श।

आदर्श अध्यापक

डा० इन्दिरा शरण

साहित्यकारों को उनके जीवन काल में समुचित रूप से सम्मानित होना चाहिये। मुझे अपार हर्ष है कि मुझे परम पूज्य प्रो० हरिमोहन झाजी के विषय में लिखने का अवसर मिल रहा है।

प्रो० झाजी विषयक संस्मरण तीन प्रकार के हैं—(१) उनके जीवन से सम्बन्ध रखने वाले, (२) उनके साहित्यिक व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने वाले, और (३) उनकी साहित्यिक महत्ता का विश्लेषण करने वाले। बहुत-से संस्मरण ऐसे भी हैं, जिनमें तीनों बातों का सम्मिश्रण पाया जाता है। ये सभी उनके व्यक्तित्व के परिचायक हैं।

एक आदर्श अध्यापक के सभी गुण आप में मौजूद हैं। दर्शन के सूक्ष्म तत्त्व को सरल भाषा में आप छात्रों के समक्ष उपस्थित करते हैं। भाषा की सरलता आपके अध्यापन की विशेषता है। आपका वर्ग कभी भी नीरस नहीं जान पड़ता था। कठिन-से-कठिन विषय की व्याख्या आप बड़े रोचक और सुगम ढंग से करते थे। आपका एक-एक शब्द नपा-तुला होता था—प्रत्येक वाक्य संयत और व्याकरण की मर्यादा से बँधा हुआ। बिन्दु-विराम की अशुद्धि भी आपको सह्य नहीं। भाषा की शुद्धता का पवित्र आदर्श स्थापित करना आपके अध्यापन की खास देन है।

असंख्य विद्यार्थी आपसे लाभान्वित हुए हैं। आपने अनेक छात्रों का मार्ग-निर्देशन किया है। आपने गरीब छात्रों को सहायता भी दी है। दूसरों की तकलीफ देखकर आप द्रवित होते रहे हैं।

अध्ययन-काल में मेरा प्रमुख विषय दर्शनशास्त्र रहा है। मेरे माता-पिता परम वैष्णव थे। मेरे पिताजी (स्व० आचार्य श्री रामलोचन शरण) की साहित्य-सेवा भी बिहार में प्रमुख स्थान रखती है। उच्च कोटि के महात्मा एवं साहित्यकारों का मेरे परिवार में निरन्तर आवागमन बना ही रहता था। घर के इसी वातावरण ने मुझे बाल्यकाल से ही 'भक्ति-मार्ग' की ओर प्रेरित किया। मेरी इसी अभिरुचि को ध्यान में रखकर १९६५ में प्रो० हरिमोहन झाजी ने मुझे 'भक्ति-मार्ग' पर शोधकार्य करने की प्रेरणा दी। उन्हीं के विद्वत्तापूर्ण निर्देशन के फलस्वरूप शोध-ग्रन्थ पूर्ण हुआ।

पिता-तुल्य प्रो० झाजी से मुझे निरन्तर प्रेरणा मिलती रहती है। पीएच० डी० करने के बाद १९७८ में डी० लिट् की उपाधि के लिए उनकी ही प्रेरणा एवं निर्देशन से 'पौराणिक समाज-दर्शन' पर शोधकार्य पूरा हुआ है जिसके लिये मैं उनका परम कृतज्ञ और अत्यन्त आभारी हूँ।

आपको सभी ने एक स्वर से ऐसा आदर्श पुरुष माना है जिनकी प्रेरणा से प्रत्येक मनुष्य शिक्षा ग्रहण करके लाभ उठा सकता है। आदर्श महापुरुष और यशस्वी विद्वान ही देश की विभूति होते हैं। आप भी एक विभूति हैं। निःसन्देह आप साहित्यिक दधीचि हैं। आपने कठोर साहित्य-साधना से मैथिली भाषा की जो सेवायें की हैं वे स्वर्णाक्षरों में लिखी जाने योग्य हैं।

संकल्प की दृढ़ता और चित्त की एकाग्रता दोनो शक्तियां मानव की उन्नति में सहायक होती हैं। आपमें ये दोनों बातें कूट-कूट कर भरी हुई हैं। सादगी, उदारता, त्याग, अपनापन वाला सद्व्यवहार, आनन्ददायक बातचीत, विनोदप्रियता, साहित्यिक-यज्ञ का आयोजन, अटूट लगन, क्षमाशीलता—ये सभी आपके व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं।

आपकी नीति है कि स्वयं भी ऊपर चढ़ें और साथ-ही-साथ औरों को भी ऊपर चढ़ाते चलें। आपका दृष्टिकोण अत्यन्त उदार है। सामूहिक लाभ के आगे व्यक्तिगत स्वार्थ को आप कुछ भी नहीं समझते। महापुरुष की यही सच्ची पहचान है।

आपसे वैचारिक मतभेद रखने वाले व्यक्ति भी आपके सद्व्यवहार एवं मानवीय गुणों के कारण आपके परम भक्त बन गये। मेरे लिए ही नहीं, अनेक छात्रों के लिए जो कुछ प्रो० झा ने किया है वह उनके लिए जीवन-निर्धारक हुआ है।

अभिलाषा है कि ईश्वर उन्हें चिरायु बनावें जिससे उनका स्नेह और आशीर्वाद हमलोगों पर बना रहे।

●

गुरुवर प्रो० हरिमोहन झा

श्री सन्तोष नारायण लाल

आदरणीय गुरु प्रो० हरिमोहन झा के संबन्ध मे कुछ लिखना मेरे लिए अत्यन्त कठिन है। उनकी बन्दना करने का अवसर पाकर जहाँ प्रसन्नता हो रही है, वहीं व्यापार जैसे नीरस कार्यक्षेत्र में जीवन-यापन करने वाले व्यक्ति के रूप में अपनी सीमा का ज्ञान भी हो रहा है। फिर भी इतना तो है ही कि मैं अतीत में खो गया हूँ। मुझे वे दिन याद आ रहे हैं जब मैं क्लास रूम में बैठा होता और प्रो० हरिमोहन झाजी क्लास ले रहे होते। दर्शन जैसे गहन विषय को बात-चीत की भाषा में सहज ढंग से, सरल रूप में रखना उनके लिए मामूली बात थी।

अध्यापक के रूप में उनकी सफलता के कई कारण हैं। वे मृदुभाषी एवं हँसमुख हैं। विषय में उनकी पूरी पैठ है। वे केवल अध्यापक ही नहीं, एक सफल साहित्यकार भी हैं। दर्शन जैसे गंभीर एवं सूक्ष्म विषय में विद्यार्थी की अभिरुचि जगाना उनकी अध्यापन-शैली की देन थी। स्वभाव से विनोदी हैं, इसलिए क्लास में भाषणों के बीच व्यंग्य-विनोद का चलते रहना अनिवार्य-सा हो गया था। उनका क्लास कोई भी छोड़ना नहीं चाहता था। दूसरे प्राध्यापक का क्लास भले छोड़ दे या उपस्थिति देकर खिसक जाय, किन्तु उनका क्लास छोड़ना सम्भव नहीं था। वे भारतीय दर्शन पढ़ाते थे— उसमें भी "चार्वाक-दर्शन"। फिर भी विषय-उपस्थापन की शैली उनकी इतनी रोचक और मनलग्गू होती थी कि हम लोग हँसी-खेल में विषय की गहराई तक पहुँच जाते थे। उनके क्लास का अपना महत्त्व और आकर्षण था।

विद्यार्थी को वे बहुत मानते थे। एकबार होली के अवसर पर सभी प्राध्यापकों एवं प्रमुख छात्र-छात्राओं को विशेष नामों से अलंकृत किया गया। किसी अध्यापक को 'सिघट्टा बैल' कहा गया तो किसी को कुछ। झाजी के टेबुल पर भी इसकी एक प्रति पहले से रख दी गई थी। हम लोगों ने देखा कि झाजी उसको पढ़ रहे है, पढ़-पढ़ कर मुस्कुरा रहे हैं। क्लास रूम में भी सूखा हरा रंग तमाम बेंचों पर छिड़क दिया गया था। सब के हाथों में रंग, और फिर वही हाथ एक-दूसरे के चेहरे पर लकीरें बनाने लगे थे। झाजी ने इस घटना को भी अपनी मुस्कुराहट से उल्लसित किया, उसमें सहयोग ही दिया।

मुझे याद है कि विद्यार्थियों को भी वे उनके नामों के आगे 'जी' लगा कर ही संबोधित करते। विद्यार्थियों के प्रति उनके प्यार और सम्मान का यह सूचक था। हर विद्यार्थी उनके निकट आकर अपने गुणों का विकास करने के लिए प्रोत्साहन पाता था। मेरी अभिरुचि चित्रकारी और

फोटोग्राफी में भी। इसका उन्हें जब पता चला तो उन्होंने काफी प्रोत्साहित किया। यहाँ तक कि आवश्यकता होने पर घर भी बुलाया। मैंने जब कालेज छोड़ दिया था और उनकी 'चर्चरी' नामक पुस्तक प्रकाशित हो रही थी, उन्होंने उसके आवरण पृष्ठ का कलात्मक अंकन करने का भार भी मुझे दिया।

उन दिनों पटना कालेज में वार्षिक पिकनिक होता था और यह भी गंगा के रेत पर। हर विभाग से टीम जाती थी। दर्शन परिषद् का सचिव ही साधारणतः टीम का नेता चुना जाता था। किन्तु उस बार मैं नेता चुना गया। मैं एम०ए० फाइनल में था। झाजी ने मुझे कहा कि हमारा विभाग प्रत्येक वर्ष कुछ-न-कुछ इनाम जरूर जीत कर लाता है। यह परम्परा इसबार टूटने न पाये। मैं जी-जान से लग गया। कई लोगों के विरोध के बावजूद, कठिन प्रतियोगिता रहने पर भी, हमारा विभाग चैम्पियन घोषित हुआ। हर बार विभाग को एक-दो इनाम ही मिलता था, इसबार यह परम्परा सचमुच टूट गई। झाजी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने मेरी पीठ ठोंकी। उस थपथपाहट का स्पन्दन मैं आज भी महसूस कर रहा हूँ।

गुरुजी का पुत्र कृष्णमोहन भी मेरे साथ ही पढ़ता था। वह मेरा अभिन्न मित्र था। इसलिए मैं प्रायः नित्य ही उनके घर जाया करता। गुरुजी का स्नेह मुझे वहाँ भी मिलता। उन्होंने इसकी पूरी छूट दे रखी थी कि अध्ययन के सिलसिलेमें जब भी दिक्कत हो—क्लासमें या घर पर उनसे मिला जा सकता है। आज की तरह उस समय के अध्यापक ट्यूशन अथवा पढ़ैंच को परीक्षामें उत्तीर्णता का आधार नहीं मानते थे। मुझे गुरुजी ने जो कुछ दिया उसको मैं कभी नहीं भूल सकता।

भगवान से मेरी प्रार्थना है कि आदर्श और सफल अध्यापक की जो परम्परा गुरुजी ने कायम की है वह अक्षुण्ण रहे।

९७

SOME LITTLE KNOWN FACTS

Shri N. KUMAR

Numerous disciples, friends and wellwishers of Prof. Hari Mohan Jha may write on the various facets of his versatile persanality in the projected book. I, however, recollect here only a few episodes concerning his college days. Both of us hail from the same village (Kumar Bajitpur, District Vaishali) and possess some common heritage, though remote, myself from the male side and he from the female side.*

A very remarkable feature in the life of Prof. Jha has been his happy conjugal life. His wife, Subhadraji, in early teens at the time of her marriage was a sweet-tempered girl with fair amount of education by the standard of those times (with scholarship in primary classes). Prof. Jha was then a student at the G. B. B. College, Muzaffarpur. With a view to surprise his young wife, he set out one Saturday afternoon for his village home and getting no Ekka at Pusa Road, he ran post-haste 8 miles on foot with the gift he was carrying for her. Alas ! by the time he reached Babaji's Math (one Km. from his home) his plan misfired. Ice-slab which he had carried wrapped in husk had completely melted and he was left with only the bottle of syrup which he had purchased from the English restaurant at Muzzaffarpur Ry. Station. Naturally, he was depressed as he could not offer a cold drink to Subhadraji. In those days, ice was an unheard of commodity in countryside.

☐ Prof. Jhs had aquired proficiency as a harmoniumplayer under the guidance of one Jankinath Rai of Laheriasarai and he created quite a few musical

*See, Kusheshwar Kumar; Kumar Vansavali, 1930

scores. In spite of adverse criticism,[1] he continued to get inspiration and encouragement from Subhadraji. But his brother-in-law (of Padmaul) looked at the harmonium with a covetous eye and ultimately Prof. Jha was obliged to make a present of this instrument to him. The harmonium goes out of the story here and the fate of his musical scores is not known to me. But his love for music did not die. In 1954 when his villager, Shrimati Pratima Devi, gave a public recital of Vidyapati's lyrics at Vidyapati Jayanti at the Lady Stephenson Hall at Patna, next morning Prof. Jha purchased a harmonium for Subhadraji who later sang folk-lores of Mithila at a public forum in Delhi in the company of her female companions.

☐ Once while a boarder in the Minto Hostel (Patna College), Prof. Jha posted a post-card only with the word "Flu" to his father, Pandit Jansidanji, who failed to locate the word in his English-Hindi dictionary. He consulted the local Dak Babu who advised him to rush up to Patna, as, in his opinion, 'Flu' was a dread disease. In those days, a journey from Kumar Bajitpur to Patna was a Herculean task, involving much misery. On reaching the hostel, Panditji found his son quite hale and hearty and learnt that the son had only set his father to do some research-work on 'Flu'.

☐ Prof. Jha mounted a mare (of Ghatak Shantilal Jha) while going to village Loma to marry Subhadraji. Not that Maithil Brahmins go to marry riding a mare. It was a strategic move by the Ghatak to dodge a distractor who might have undone the marriage itself. It was his first ride and he liked it immensely. But he abhored cycling after his first fall and never took to it inspite of encouragement by his friend, Jatadhar Prasad Sharma 'Vikal'.

☐ One day our teacher, Arti Babu (Pandit Artinath Jha of village Loha, Madhubani, then at Northbrook Zila School, Darbhanga) while taking English Composition class wrote on the black-board the following lines from Prof. Jha's "Kanyadan" :

"Marriage settled. Bringing bridegroom Tuesday Evening. Arrange".

---

1. The elderly folk in the village said : 'पढ़े फारसी बेचे तेल' specially poignant against the background of Prof. Jha, having achieved top position with record marks at his I. A. Examination (1927). Obviously, music was at a discount in those days.

He asked us if we could economise the words (of course without undermining the meaning) to save cost. Few could dare to do so, because Prof. Jha had secured high honours in English literature recently. However, I cut it down to—

"Coming with groom Tuesday"

The cost of the telegram was cut by more than half.

With the approbation of Arti Babu, I communicated the revised version to Prof. Jha, who accepted it sportingly.

☐ Prof. Jha had written (C. 1929) a small humorous story in Hindi named AJIB BANDAR (Lit. Peculiar Monkey). The leading character in this was a robust, pot-bellied Moulvi—a self-appointed **Shayar** (poet), drawing audience at a road-side Serai and asking the audience to say a word and he would supply the corresponding rhyme. Some one says, "Station". The poet replies :

.... – स्टेशन

एक दिन गये मोदी की दूकान पर
देखा, कराही में मूंग का वेशन।

.... स्टेशन।

Then some one says : 'Literature' and the poet replies :

.... लिटरेचर

एक दिन गये चिड़ियों के घोंसले में
देखा, बच्चे करते हैं चीं - चें - चर

.... लिटरेचर

The sequence continues. The poet eats his fill and thinking that he has helped Serai's business by collecting the crowd, he silently attempts to slip away without making payment, but to his discomfiture, unappreciative of his performance the Serai-Keeper pulls him by the leg to stop him running away. The poet falls down with table on his belly. This story was made into a play-let by us in our hostel (Northbrook Zilla School). However, some Muslim boys took exception to it, wrongly thinking that the play was a caricature on the fat Moulvi of the school. The Superintendent of the Hostel banned it.

☐ It was a general session of the Bihar Pradeshik Hindi Sahitya Sammelan at Muzaffarpur (1928). Babu Ramlochan Sharan, Prop. Pustak Bhandar, Laheria-sarai, had taken there a large contingent of litterateurs including Prof. Jha, who emerged as the hero at the Kavi-Sammelan. As a small boy, I had also been there to enjoy the function. Very appreciative of Prof. Jha, I tried to keep my-self in close proximity to him (of course, outside the hall). One Jagdish Sinha (a colleague of Prof. Jha and a brilliant student of History at Patna College, who died prematurely) hosted lemonade party to Prof. Jha with some other college students. Looking at me with some curiosity, Sinha enquired of Prof. Jha as to who I was. Prof. Jha said indifferently, 'He (meaning me) is a villager'. Sinha, however, did not discard me. He ordered a bottle of lemonade for me also.

PROF. HARI MOHAN JHA—

SOME REMINISCENCES

Prof. Ashok Kumar Verma

"If you intend to do higher studies and have offered logic, you must have a critical mind". This is what Prof. Hari Mohan Jha remarked in the first tutorial class, I was attending as a student of I.A., B. N. College, Patna. I had offered Logic as one of my optional subjects and he was the teacher. Clad in simple Dhoti and Kurta, there was nothing extraordinary in his appearance. But lo and behold ! when he introduced the subject in the class, we were spellbound. My doubts were over. I developed an admiration for him although I could not gather the courage to be close to him. It was in the tutorial class that I came closer. I asked him as to what he meant by a critical mind. "By a critical mind I mean that you must try to grasp what you read. Think of the different interpretations it can have and also of its implications. Try to know the various objections raised against the idea by different scholars. Then think if you can meet the objections. If you have done so much then find out the loopholes in it", explained Prof. Jha. How lucid the treatment ? This has been the hallmark of Prof. Jha's teaching.

Any one who came in his contact was struck by his scholarship. He has not only assimilated the western thoughts but has mastery over the classical Indian thinking as well, a feat so rare these days. His knowledge of Sanskrit Grammar facilitated his studies of the original Indian texts of philosophy. Probably for this reason he happend to be so dear to his teacher Dr. D. M. Dutta, a thinker of international repute. I also happened to sit at the feet of Dr. Dutta and have seen how much he loved him. His latest book on Navya Nyaya is not only an exposition of the intricate Indian logical thought but brings to limelight the depth of linguistic analysis in India, the parallel of which is difficult to find in the much publicised western thought. In this respect he can be considered as an ambassador of Indian logic.

Although he is a scholar of Indian thought but he is never dogmatic in his approach. He never leaves any opportunity of striking at any weakness found in the Sanskrit texts. He wants the common man also to understand the so called subtle and intricate philosophical ideas. His book 'Khattar Kakak Tarang' is an example. Social evils have equally been frowned upon by him. His works in Maithili are testimony to this fact. He exposed the myth of symbolic logic and always used to tell me that it founders in actual life. Inspite of this attitude he is never offensive in his criticisms. He used to express his criticisms through wits and parables.

Wit ? He has an inexhaustible fund of it. When Prof. Jha was the Superintendent of the B.N. College, a boarder complained to him about the theft of his book from his room. The Principal, Late Mr. Moinul Haq, asked Prof. Jha to investigate and report. His twenty-page investigation report, detailing all the possible hypotheses and the rejection of each one of them after verification, direct and indirect, is an illustrative chapter on Inductive method. Mr. Haq simply remarked —'Bhai Mere, Khoda Pahad Nikli Chuhiya'. Result ? Nil.

Once during the summer vacation he enquired of Dr. B. K. Lal, a Junior colleague of his as to where he intended to spend the vacation. Dr. Lal told him that he would be at Ranchi and would not go anywhere else. But Dr. Lal received an unscheduled invitation from Benares Hindu University for some work. He went there. Prof. Jha also had to go to Varanasi from Patna for some other work. Accidentally both met at Godaulia Chowk. Dr. Lal wished him. Prof. Jha nodded but kept mum. After a minute's pause he asked him whether he is still serving in the Benares Hindu University. A surprised Dr. Lal reminded him that he was B. K. Lal, his colleague. He immediately started giving exlanations for the error. How could Dr. B. K. Lal who had told him that he would be at Ranchi, be at Varanasi at the same time ? What a practical application of the law of contradiction ?

Once an American Hippie came to his department. Accidentally I was sitting by his side. The American was sitting across the table and was enquiring about the subjects taught in the department. Prof. Jha winked at me and uttered in a hushed voice "Ashok Babu Hi-shi, Hi-shi-Hi-shi". I was at a loss to understand what he actually meant. After the American left, I asked him as to what he wanted then. He said that he wanted to know whether the American Hippie with all the appearance of a female was 'a He or a She'.

He very much wanted to own a house at Patna. He asked me to look for one as it was not possible for him to build a house. I wanted to know as to what kind of house he had in his mind. He immediately said that he should

have a 'Patna House', a house having 'P' (Passage), 'A' (Air), 'T' (Tap), 'N' (Non-encumbered), 'A' (Accomodation). Similarly each letter of the word 'House' was significant. He had probably the Leibnitzian dictum in his mind that this world is the best of all possible worlds (this house should be the best of all possible houses). I could not find a like for him.

Prof. Jha never indulged in university politics and machinations. He did not like to displease any of his colleagues, senior or junior. Once the Bihar Public Service Commission was to interview us for the posts of Readers. One gentleman of the department, much Junior to us, was attempting to go over our heads. He had contacted the external expert also. But we were completely ignorant of these manoeuverings. Prof. Jha did not like to displease anyone. So he recommended that everyone who appeared at the interview and also those who did not, were fit and suitable. The saving clause according to him was that appointment may be made on the basis of seniority. He hoped that the external expert being junior and well known to him will surely agree to his proposal. But that was not to be and a few persons suffered due to his simplicity. But we know that he never intended this.

Once Prof. Jha was ill and was hospitalised. He had gastric trouble. He was in pain. The Doctors examined him and prescribed some tablets. Even in pain he asked them that had they not yet discovered some medicine which could absorb the gas just as a piece of blotting paper absorbs ink ? The doctors smiled.

From then onward he has been declaring that the disease was a green signal for the train of his life to approach the end. But we used to say that the signal was red, so the train can not move. Only a few years back his condition was very serious. He thought that the time has come. But I told him that the train had surely passed the distant signal but had stopped near the home signal. He recovered. He has recently lost his wife. When I went to him he said with tears in eyes that he is going to his village. He does not know if he will ever return. The train is fast reaching the platform. No, Prof. Jha, we will not allow the train to move. But can we ?

कृति विवेचन

उपन्यासकार श्री हरिमोहन झा

डा० श्रीकृष्ण मिश्र

लगभग पाँच दशक पूर्व श्री हरिमोहन बाबू **कन्यादान** नामक सामाजिक उपन्यास लिखि मैथिली उपन्यासक क्षेत्रमे एक कीर्तिमान स्थापित कएलनि। रोचकतामे कन्यादान अग्रगण्य छल। रोचकताक अभावमे गङ्गापति सिंहक **सुशीला कन्यादान** सँ निम्न कोटिक भ गेल। किन्तु स्थायी कीर्तिक पात्र होएबामे जाहि सभ वस्तु वा तत्वक अभाव हमरा खटकल ताहि दिस ध्यानाकर्षण हम आइ सँ उनचालीस वर्ष पूर्व सितम्बर-अक्टूबर १९४३ ई०क **मिथिला मिहिर**क पाँच अङ्कमे प्रकाशित कएल।

कन्यादानक पश्चात् ओकर पूरक रूपमे लेखक **द्विरागमन** लिखलनि। **द्विरागमन**क भूमिकामे लेखक लिखने छथि जे "**कन्यादान**क अनन्तर हमरा ई अनुमान नहि छल जे पुनः **द्विरागमन**क संघटन करए पड़त।" चंडीचरणकेँ संन्यासी बनाए उपन्यास समाप्त भ गेल छल। बुच्चीदाइक सोहाग पर अनभ्र बज्रपातक उत्तरदायी के? एहि प्रश्नकेँ पाठक समुदायक आगाँ राखि लेखक अपन मन्तव्य समाप्त क चुकल छलाह। किन्तु पाठक सभक आग्रहेँ लेखक **द्विरागमन** लिखलनि।

द्विरागमन ने **कन्यादान**क संग एकाकार भ सकल, ने ओकर पृथके अस्तित्व रहि सकलैक। अपि च ओहिमे ने **कन्यादान**क रोचक भाषा अछि ने सजीव पात्र। **कन्यादान** स्वयं पूर्ण अछि। **द्विरागमन**क उत्सुकता सहृदय पाठकके नहि होइछ भने ओ **कन्यादान** पर ओँठगल हो।

कन्यादान अछि दुःखान्त उपन्यास। सी० सी० मिश्राक चतुर्थी रातिए भागि पड़ाएब ओ बुच्ची दाइक पुनर्विवाह करा देबाक प्रस्ताव कएनाइक अर्थ त सएह होइछ। किन्तु उपन्यासक भाषा ओ चरित्र-चित्रण हास्यरसक अनुकूल। एहि उपन्यासक प्रतिपाद्य विषयक सम्बन्धमे **द्विरागमन**क भूमिकामे लेखक लिखैत छथि जे "अपन अन्धपरम्परा हो वा अँग्रेजी सभ्यताक कुरीति हो, दूहूसँ रङ्ग मसाला लए व्यंग्यात्मक चित्र खीचल गेल अछि।" अतः **कन्यादान**केँ हास्येरसक उपन्यास मानब समुचित होएत। करुणरसक गाम्भीर्य एहिमे नहि अछि। अपि च लेखक अपनाकेँ निःसङ्ग रखबाक प्रयासमे सफल नहि भ सकलाह। सी० सी० मिश्राक मिथ्या अँग्रेजिया आदर्श हुनका विशेष प्रिय छनि। **कन्यादान**क समर्पणे एकर गवाही दैछ। समर्पण पढ़ू—

"जे समाज कन्याकेँ जड़ पदार्थवत् दान कए देबामे कुण्ठित नहि होइत छथि, जाहि समाजक सूत्रधार लोकनि वालककेँ पढ़एबाक पाछाँ हजारक हजार पानिमे बहबैत छथि और कन्याक हेतु चारि

कँचाक सिलेटो कीनब आवश्यक नहि बुझैत छथि, जाहि समाजमे बी० ए० पास पतिक जीवनसङ्गिनी ए० बी० पर्यन्त नहि जनैत छथिन्ह''''ताही समाजक महारथी लोकनिक कर-कुलिशमे ई पुस्तक सविनय, सानुरोध (त सहजहि, जे) सभय समर्पित।''

अंग्रेजी पढ़ि नवीन विचारधारामे उधियाइत नवयुवकक उच्छृंखल व्यवहार हुनका नहि अखरैत छनि।

कन्यादानक महत्व वा लघुत्व सी० सी० मिश्राक आदर्श ओ आचरण पर आश्रित अछि। कारण इयेह उपन्यासक नायक छथि। सी० सी० मिश्रा एक अपरिपक्व बुद्धिक नवयुवक विद्यार्थी छथि जे फिल्मी अभिनेत्री सभसँ आकृष्ट ओ मुग्ध भए ओकरे जकाँ मोहिनी कामिनीक कल्पना करैत अपन जीवन-संगिनी पत्नीक मानसिक रेखाचित्र बनबैत छलाह। संगहि पढ़ब, संगहि कालेज जाएब, संगहि साइकिल पर टहलब, संगहि टेनिस खेलाएब—इयेह छलनि हुनक दाम्पत्य सुखक कल्पनाक चरम काष्ठा। हुनका बुझबामे कहियो नहि अएलनि जे जकरा ओ प्रेम बूझैत छलथिन्ह से वास्तवमे मोह छल। धर्म-युक्त कामोपभोगसँ केवल लौकिके सुख टा नहि भेटैछ अपितु स्वर्ग ओ अपवर्ग सेहो। एहीं हेतु विवाहक प्रथा चलल। एतय हम अपन पहिलुक लेखक किछु पाँती उद्धृत करैत छी—

''प्रेमक आश्रय त बाह्य वस्तु नहि होइछ। अतएव पाश्चात्य साहित्यमे कामदेव (Cupid) आन्हर कहल जाइत छथि। प्रेम त हृदयक अन्तस्तलसँ प्रवाहित आनन्दक स्रोत थीक जे दू हृदयक द्रवके एक करैछ। विख्यात कवि भवभूति कहैत छथि—

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुः
न खलु बहिरुपाधीन् प्रीतयः संश्रयन्ते।

प्रेमक स्वरूप हुनके मुहेँ सुनू—

अद्वैतं सुःखदुःखयोरनुगुणं सर्वास्ववस्थासु यद्
विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः
कालेनावरणात्ययात् परिणते यत् स्नेहसारे स्थितम्
भद्रं प्रेम सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत् प्राप्यते॥

(सुख दुःख दूनू मे एकाकार, सभ अवस्थामे एक दोसरक अनुचर, जतय हृदयकेँ शान्ति भेटैक, जकर सुखानुभव वृद्धावस्था हँटा नहि सकए, समयक प्रतापसँ वाह्य शारीरिक सौन्दर्य कम भेला पर जे हृदयक अन्तस्तलमे जमल रहए—एहेन सुन्दर प्रेम गोटेके नीक लोककेँ प्राप्त होइत छनि।)

प्रसिद्ध नाटककार विलियम शेक्सपियरक अनुसार ओ प्रेम प्रेमे नहि थीक जे अवसर पाबि अपन दोसराइतकेँ छोड़ि दैछ।

Love is not love
Which alters when it alteration finds.
Or bends with the remover to remove

एहि प्रकारक उच्चकोटिक प्रेम कन्यादानक परिधिमे नहि अबैछ। ओ एकर विषय नहि अछि।

कन्यादान दुःखान्त होइछ एहि कारणे जे नायक ओ नायिका समान-शीलव्यसन नहि छथि। एक

दोसराक बात बुझबामे असमर्थ। कोवरक भाषा भावक होइछ, बौद्धिक वादविवादक नहि। कन्यादानमे ने नायकमे प्रेम, ने नायिका मे। किन्तु एहि कारणे ई त्रासद (Tragedy) नहि थीक। त्रासदक नायकक व्यक्तित्व हास्यास्पद नहि होइछ जेना सी० सी० मिश्राक छनि। अपि च **कन्यादानक** अधिक लोकक चरित्रचित्रण हास्यरसानुकूल अछि। व्यक्ति सभ समाजक विभिन्न रूपक प्रतिनिधि रूपें उपस्थिति कएल गेल छथि।" सी० सी० मिश्रा तथा बुच्चीदाइ कोनो व्यक्तित्वक रूपमे पाठकक मन पर अंकित नहि होइत छथि, प्रत्युत मिश्राजी एक अप्राकृतिक, असत्य, काल्पनिक आदर्शवादी कालेजक विद्यार्थी एवं बुच्चीदाइ एक अशिक्षित ग्रामीण कन्याक रूपमे। दुनू चरित्र असम्भाव्य, अस्वाभाविक बूझि पड़ैछ। जतेक अपटु बुच्चीदाइ बनाओल गेल छथि ततेक कोनो युवती साधारणतया नहि होइछ। कालिदासक **अभिज्ञानशाकुन्तलम्**मे राजा दुष्यन्त कहैत छथि—

स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीणाम्

संदृश्यते किमुत याः परिबोधवत्यः

पशुपक्षीअहुमे स्त्री बेश पटु होइछ, बुद्धिमती मानवजातिक कोन कथा! ने नायक ने नायिका, दुनूमे स केओ ठोस पृथ्वी पर चलबामे असमर्थ। नायक जँ रोमांटिक, गुब्बाड़ा जकाँ आकाशमे उड़निहार त नायिका खाधिमे खसल, उठबामे असमर्थ, अबोध, अशिक्षित कन्या। सी० सी० मिश्राकें ने प्रेम करबाक क्षमता छनि ने संन्यास लेबाक सामर्थ्य। जँ प्रेम करबाक क्षमता रहितैन त अपन गृहणीकें पढ़ा-लिखा अपन गृहस्थी चलबितथि। संन्यास लेब त बड़ उच्चकोटिक सामर्थ्यक बात थीक।

कन्यादान-द्विरागमन मे जाहि समाजक चित्रण अछि ओ समाज आब नहि अछि। कन्यादानक समस्या आब समाजमे एक नव भीषण रूपमे उपस्थित अछि। आजुक सी० सी० मिश्रा ए०बी० सी० डी० मात्रक ज्ञान रखैत, अवैध रूपें बी० ए०क डिग्री प्राप्त कए कतेक निरपराध सुशिक्षित बुच्चीदाइक जीवन नष्ट करैत छथिन्ह केवल एहि लेल जे हुनक ससुर अपन सम्पत्ति बेचि, जानसँ ऊपर कर्जमे पड़ि अपन समस्त परिवारक भविष्योन्नतिक डाँड़ तोड़ैत हुनक पिताकें काटरक रुपैया देला उत्तर हुनक फरमाइसी विदाइ नहिँ द सकलथिन। अतः कन्यादान-द्विरागमन सामयिक उपन्यास अछि, स्थायी महत्वक नहि। सामाजिक परिस्थिति बदलि गेलासँ ओकर महत्व घटि गेल।

एक आरो कथा एहिसँ स्पष्ट होइछ ई जे श्री हरिमोहन बाबूक रचनाशक्ति एवं निपुणता उपन्यास लिखबाक अनुकूल नहि छनि। **कन्यादान-द्विरागमन** छोड़ि ओ कोनो उपन्यास लिखबो नहि कएलनि। **कन्यादान** सन **द्विरागमनो** नहि भेलनि। ओ लिखलनि **प्रणम्य देवता, खट्टरककाक तरंग, चर्चरी, रंगशाला।** एहि सभमे कथाक अंश बड़ कम अछि। हमरा जनैत ई सभ ने कथा थीक, ने निबन्ध। ई वास्तवमे **गप्प** थीक जकरा श्री हरिमोहन बाबू अपन प्रतिभाक बलें एक नव साहित्यिक विधा (genre) रूपमे प्रचलित कएलनि। हिनक **चूड़ा, दही, चीनी** वा **अलंकार-शिक्षा** कें कथा कहब समुचित नहि बुझना जाइछ। ई रोचक **गप्प** थीक। ओना त किछु लिखब त ओहिमे सूक्ष्मो रूपें कथा-वस्तु, चरित्र-चित्रण, घटना, वार्त्तालाप, विचार सभ रहबे करतैक, किन्तु 'प्राधान्येन व्यपदेशा भवन्ति' एहि नियमसँ श्री हरिमोहन बाबूक अधिकांश रचना गप्प प्रधान छनि। एहि विधाक निर्माणमे सफलताक कारण अछि श्री हरिमोहन बाबूक कुशाग्रबुद्धि, हास्योत्पादिका शक्ति, प्रत्युत्पन्नमतित्व एवं वाक्चातुर्य। **कन्यादानहु** मे वैह स्थल विशेष मनोरंजक अछि जतय गद्यक छटा अछि। कथावस्तुक तार्किक आधार, ओकर अनुज्झितार्थ सम्बन्ध, वा चरित्रनिर्माणपटुता **कन्यादानक** विशेषता नहि अछि।

प्रो० हरिमोहन झाक उपन्यास : एक अध्ययन

डा० कपिलेश्वर झा

जाहि प्रकारेँ चौदहम शताब्दीमे कविकोकिल विद्यापति मैथिलीमे पदावलीक रचना कए मैथिली साहित्यकेँ लोकप्रिय बनौलन्हिं ओहिना आधुनिक युगमे प्रो० हरिमोहन झा अपन रचना सभसँ मैथिली साहित्यकेँ लोकप्रिय बनौलन्हि अछि। यद्यपि ई मैथिलीमे कविता, कथा, उपन्यास, निबन्ध आदि अनेक विधामे रचना कएलन्हि अछि, मुदा मैथिली साहित्यमे विशेष रूपेँ लोकप्रिय छथि अपन उपन्यास एवं हास्य-व्यंग्य कथाक रचनासँ। उपन्यासमे हिनक रचित **कन्यादान** एवं **द्विरागमन** अछि तथा कथा साहित्यमे **खट्टर ककाक तरंग, रंगशाला, प्रणम्य देवता**, आदि।

उपन्यास साहित्यक प्रमुख विधा थिक जाहिमे कल्पनाक प्रधानता तँ रहितहि अछि, किन्तु एहिमे जीवनक यथावत् चित्रण कथानकक रूपमे रहैत अछि। ई मनुष्यक सामाजिक, वैयक्तिक अथवा दुनू प्रकारक चिंतनक साहित्यिक रूप थिक जे एक कथासूत्रक आधारपर निर्मित होइत अछि।

आधुनिक युगमे उपन्यास लोकप्रिय विधा मानल जाइत अछि। सम्पूर्ण जीवनक चित्र उपस्थित कएनिहार साहित्यक विधामे उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय अछि। उपन्यासमे मानव-जीवनक चित्र कथानकक रूपमे अंकित रहैत अछि, किन्तु जेँ कि जीवन परिवर्तनशील अछि तँ एकर विभिन्न समयक रूप विभिन्न प्रकारक रहैत अछि। जीवनक मापदण्ड सेहो निरन्तर परिवर्तित होइत गेल अछि। उपन्यासकार सतत एहि चेष्टामे रहैत छथि जे ओहि नवीन मापदण्डकेँ ध्यानमे राखि ओ अपन रचना करथि—विषयवस्तु एवं शिल्पक दृष्टिएँ सेहो उपन्यासकार चाहैत छथि जे ओ समकालीन जीवनक प्रतिनिधित्वकारी चित्र उपस्थित कऽ सकथि। उपन्यासकार जनजीवनक बदलैत मान्यताक संग-संग प्रगतिशील विचारक अनुरूप चित्र उपस्थित करैत छथि। उपन्यासक माध्यमसँ कथा कहबाक मूलतः दू उद्देश्य होइत आएल अछि—एक तँ मनोरंजन; दोसर सामाजिक जीवनक विभिन्न समस्या एवं स्थितिक चित्रण।

मैथिलीक उपन्यास-साहित्यक अवलोकन कएलासँ ज्ञात होइत अछि जे मैथिलीक एहि विधाक जन्म १९१४ ई० मे भेल। प्रो० हरिमोहन झाक पिता जनार्दन झा "जनसीदन" **निर्दयी सासु, शशिकला, कलियुगी संन्यासी वा ढकोसलानन्द तथा पुनर्विवाहक** रचना कएलन्हि। एही अवधिमे रासविहारी लाल दास **'सुमति'** तथा पुण्यानन्द झा **मिथिला-दर्पण** नामक उपन्यासक

रचना कएलन्हि। मुदा उपन्यास-साहित्य ख्याति प्राप्त कएलक प्रो० हरिमोहन झाक **कन्यादान** एवं **द्विरागमनसँ**।

हरिमोहन बाबूक कन्यादान एवं द्विरागमन सामाजिक उपन्यास थिक। हुनक कन्यादानमे मनोरंजनक सामग्रीक संग-संग सशक्त कथानकक निर्माण भेल अछि। किन्तु कन्यादान समस्यामूलक उपन्यास अछि तथा एहिमे जीवनक विभिन्न पक्षक वर्णन भेल अछि। कन्यादानक उद्देश्य स्त्री शिक्षाक प्रचार अछि। समाज-सुधारक भावनासँ लिखल गेल ई उपन्यास अभूतपूर्व सफलता प्राप्त कएलक। कन्यादानक कथानकक निर्माणक हेतु लेखकके कोनो चेष्टा नहि करए पड़लनि। एहि प्रसंग ओ कहने छथि :

"ओहि समय छोट बहिन (दिवंगत सोनदाइ)क कन्यादानक हेतु बाबूजी चिन्तित रहथि। कतहु जोगार नहि लगलन्हि। एक दिन गामपर हमर माय अड़ोसिन-पड़ोसिनसँ ओही विषयमे गप्प करैत रहथि। आवेशरानी, टुनटुन काकी, दुलारमनि पिउसी सभ ओहीमे भेटि गेलीह। हमरा ओ गप्प तेहन प्रियगर लागल जे हम चुपचाप सभटा नोट कएलहुँ। आर वैह गप्प रंग पालिस चढ़ा कनिया माइक ओरिआओन नामसँ मिथिलामे छापए देलियैक। वैह भेल कन्यादानक श्रीगणेश।"

अंग्रेजी शिक्षाक फलस्वरूप मिथिलाक बदलैत सामाजिक परिस्थितिमे स्त्री शिक्षाक अभाव कन्यादानक प्रतिपाद्य विषय अछि। स्थान-स्थानपर रूढ़िग्रस्त मैथिल समाजक चित्रण यथावत् लेखक कएलन्हि अछि।

हरिमोहन बाबूसँ पूर्व उपन्यासक रचना मनोरंजनके ध्यानमे राखि कएल गेल। तें हेतु प्रारम्भिक उपन्यासमे चरित्र-चित्रण दिशि ध्यान नहि देल गेल। मिथिलाक सामाजिक जीवनमे समस्याक कोनो कमी नहि छल। प्रबल धार्मिक संस्कारक कारणें मैथिल भाग्यवादी होइत छलाह। तें हेतु सामाजिक समस्याक समाधान देखएबाक अपेक्षा ओकरा भाग्यक फल बूझब उपन्यासकार लोकनि उपयुक्त बुझैत छलाह। हरिमोहन बाबूसँ पूर्वक रचना **पुनर्विवाह**, **चन्द्रग्रहण** एही कोटिक उपन्यास थिक। क्रमशः परिस्थिति बदलल। व्यक्तिमे समाजसँ संघर्ष करबाक, परिस्थितिसँ संघर्ष करबाक भावनाक उदय भेल। एहि प्रकारक संघर्ष उपस्थित कएनिहारमे हरिमोहन बाबू प्रथम छथि। अनमेल विवाह जनित सामाजिक समस्याके देखि ओ **कन्यादान**क समर्पणमे समाजपर व्यंग्य करैत कहने छथि :—

"जे समाज कन्याके जड़ पदार्थवत् दान कए देबामे कुण्ठित नहि होइत छथि··· जाहि समाजमे बी० ए० पास पतिक जीवनसंगिनी ए० बी० पर्यन्त नहि जनैत छथिन्ह, जाहि समाजके दाम्पत्य-जीवनक गाड़ीमे सरकसिया घोड़ाक संग निरीह बाछीकें जोतैत कनेको ममता नहि लगैत छन्हि, ताही समाजक महारथी लोकनिक कर-कुलिसमे ई पुस्तक सविनय, सानुरोध ओ सभय समर्पित।"

हरिमोहन बाबू अपन स्वाभाविक वर्णन द्वारा पाठकक ध्यान आकृष्ट करैत छथि। हुनक रचना शिल्प एवं विषय दुनू दृष्टिसँ आकर्षक अछि। लोकोक्तिक विन्यास, शब्द चयन, भाषाक प्रवाह आदिमे हिनक विशेषताक परिचय भेटैत अछि। यथा, एतबहिमे झुनिया माए हनहन-पटपट करैत

पानि पिबए आइलि। पाँच मिनटमे कतेक बात बाजि गेल तकर ठेकान नहि। घैलची लग लोक पिच्छड़ बनौने रहैत अछि, कतेक रास पानि उठि जाइत छैक, डोल पुरान भए गेल, उवहनि सड़ल भा रहल छैक इत्यादि। तखन कोनो अज्ञात नाम व्यक्तिसँ झगड़ा करए लागलि—सखमे सख मिरचाइओक राख। हम दिन भरि बही-खरवाक तज्जीने रहए—आर उम्हर निश्चिन्त सुतथि पद्मावती बहुरिया। ताहिपर कहनाइ जे माथामे दर्द होइछ; अहा हा। छवि ने छटा दालि बड़ खट्टा। सेहो जरैए।

मैथिली उपन्यासक इतिहास बहुत थोड़ समयक अछि। एहि शताब्दीक तृतीय दशकमे मैथिली उपन्यास समाजमे स्थान पओलक एवं एकर श्रेय मैथिलीक मूर्धन्य लेखक प्रो० हरिमोहन झाजीकेँ छन्हि। उपन्यासक इतिहासक निर्माण करबाक हेतु चाहे जाहि कोनो कथाकृतिकेँ उपन्यास कहि संतोषक अनुभव करी, किन्तु मैथिलीक एहि साहित्यिक विधाक प्रति पाठकक रुचि उत्पन्न करबाक श्रेय हिनकहि छन्हि। 'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन' सँ आन भाषा-भाषीक ध्यान सेहो मैथिलीक दिशि आकृष्ट कएलन्हि। एहि प्रसंग द्वितीय अखिल भारतीय मैथिली साहित्य सम्मेलनक कथा साहित्यक सभापतिक उक्ति अछि :—

"हिनक दुनू उपन्यास 'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन'क कथा-वस्तुक आकार ओ प्रकार वर्त्तमान युगक उपन्यास सन छन्हि। भाषा छन्हि सरल, बोधगम्य, विषय तत्कालीन युवक-युवतीक वैयक्तिक जीवनसँ सम्बद्ध। किशोर बुद्धिकेँ ग्राह्य एवं आकृष्ट करबाक अद्भुत क्षमता छन्हि हिनक विनोद-पूर्ण शब्दक वाक्य विन्यासमे, ओहन परिस्थिति उपस्थित करबामे। फलतः हिनक उपन्यास अत्यन्त रोचक भेल, पाठकक संख्या बढ़ौलक एवं कतेको नवीन लेखकक हेतु प्रेरणाक स्रोत बनल।"

हरिमोहन बाबू अपन उपन्यासमे जे सामाजिक चेतनाक शंख फुकलन्हि ताहिसँ मैथिलीक अनेको उपन्यासलेखक प्रभावित भेलाह।

कन्यादान—पोथी नहि, एकटा करिश्मा

श्री राज मोहन झा

'कन्यादान'—एक टा पोथी, जे पोथी नहि एकटा करिश्मा सिद्ध भेल। अपना संग ई कय टा ने अद्भुत इतिहास जोगौने अछि। मैथिलीकें सर्वप्रथम एकटा विशाल व्यापक पाठक-समाज, कन्यादानहि सँ भेटलैक। सत्य पूछी तँ वर्ग रूपमे विशुद्ध पाठककें जन्म देनिहार यैह पोथी थिक। एहिसँ पहिने साहित्य मुट्ठी भरि लेखक-पत्रकार वर्गक अपना बीचक वस्तु छल, जे स्थिति बहुत किछु आइ फेर भऽ गेल अछि। साहित्यकें ओहि संकीर्ण व्याप्तिसँ निकालि ओकरा जनताक वस्तु बनयबाक श्रेय 'कन्यादान'कें छैक। जनताकें संग लऽ साहित्यकें एकटा विस्तृत व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित करबाक जे काज 'कन्यादान' अपना समयमे कऽ सकल, से आइयो मैथिलीक लेखक-वर्गक आगाँ एकटा चुनौती जकाँ ठाढ़ अछि।

वस्तुतः एहि बातक गम्भीरतासँ शोध होयबाक चाही जे आखिर ओ कोन तत्त्व सभ 'कन्यादान' मे अछि, जाहि कारणें पाठक एकरा हाथोहाथ लऽ लेलकै—ओ पाठक जकर अस्तित्वे एखन मैथिलीमे संदेहास्पद कहल जाइत अछि। 'कन्यादान' पढ़बाक लेल कतेको अमैथिली भाषा-भाषी व्यक्ति मैथिली सिखलक। 'कन्यादान'क पाठकमे एकटा पैघ अंश एहनो लोकक छल जे निरक्षर छल। गाम-घरमे बहुत गोटे, जकरा अक्षर-ज्ञान नहि रहैक, अनकासँ पढ़बा कऽ पोथी सुनलक। एहन साहित्यिक कृति विरल होइत अछि जे साक्षरताक सामान्य प्राथमिक शर्त आ सीमाकें टपि जन-मानस धरि एना अव्याहत रूपें पहुँचैत अछि आ साहित्यकें ई विस्तार देबाक सामर्थ्य रखैत अछि।

'कन्यादान'क एहि अभूतपूर्व सफलताक पाछाँ एकर लोकप्रियता वा मनोरंजकता मात्र देखब एकर सम्पूर्ण कथा नहि होयत। लोकप्रियताक जे ई एक टा सार्वकालिक कीर्तिमान स्थापित कऽ सकल, ताहि पाछाँ ई बात तँ अवश्ये जे लोककें एहिमे लोट-पोट भऽ जयबाक स्थिति भरि पेट भेटलैक, मुदा एहि बातकें बिसरल नहि जा सकैत अछि जे सन्देश जे एकरा सम्प्रेषित करब अभीष्ट छलैक, पाठकक हृदयमे सोझे भीतर धरि उतरि गेलैक। वस्तुतः सोद्देश्यताक संग - संग मनोरंजनक तेहन अपूर्व आ विलक्षण संयोजन 'कन्यादान' कयलक जे ई साहित्यमे एकटा सार्वकालिक आदर्श प्रस्तुत कऽ गेल। 'प्राक्कथन'क अन्तिम पंक्तिमे लेखक द्वारा प्रयुक्त 'उपकार वा मनोरंजन' शब्द एहि बातक द्योतक थिक जे लेखकक समक्ष साहित्यक ई दुनू पक्ष समान रूपसँ प्रमुख छलनि, आ एहि दुनू उद्देश्यक पूर्त्तिमे लेखककें आशातीत सफलता भेटलनि। 'कन्यादान' घर-घरमे पहुँचल। विवाह-द्विरागमनमे ई साँठबाक वस्तु बनि गेल, साहित्यकें एहि तरहें एकटा नव लौकिक सांस्कृतिक मर्यादा ई देयौलक। आ, अपन

एहि व्यापक प्रसारसँ 'कन्यादान' लेल ई सहज संभव भेलैक जे ओ सामाजिक परिवर्तनमे साहित्यक महत्वपूर्ण भूमिकाकेँ नीक जकाँ चरितार्थ कऽ सकल। स्त्री-शिक्षाक प्रसार एवं नारी जागरणक उन्मेषमे 'कन्यादान'क प्रखर भूमिका बिसरयबाक वस्तु नहि। असंख्य स्त्री-पुरुष 'कन्यादान'सँ व्यक्तिगत प्रेरणा ग्रहण कऽ जीवनमे आगाँ बढ़लाह। अनमेल विवाह आ आन सामाजिक रूढ़ि सभ पर 'कन्यादान' जे प्रहार कयलक, से सामाजिक मनोवृत्तिकेँ बदलबामे बड़ प्रभावकारी ढंगसँ समर्थ भेल। आ ई सामाजिक क्रान्ति जँ 'कन्यादान' आनि सकल तँ से अपन उच्च साहित्यिक गुणात्मक सामर्थ्यहिक कारणेँ। प्रायः ई होइत अछि जे उच्च साहित्यिक गुणात्मकतासँ युक्त कृति सर्वसाधारणमे ओतेक लोकप्रियता अर्जित नहि कऽ पबैत अछि। मुदा 'कन्यादान' एकटा एहन दुर्लभ उदाहरण अछि जे गुणात्मकता आ लोकप्रियता—दुनूक अद्भुत सामंजस्य अपनामे समेटने अछि। लोकप्रियताक संग-संग साहित्यिक ऊँचाई धरि पहुँचब कोनो कृति लेल साधारण बात नहि होइत छैक। लोकप्रियता, पाठकक निर्माण आ भाषाक प्रभाव-क्षेत्रक विस्तारकेँ ध्यानमे रखैत कय टा आलोचक 'कन्यादान'क लेखकक तुलना बाबू देवकी नन्दन खत्रीसँ करैत छथि। मुदा एहि तुलनासँ 'कन्यादान'क साहित्यिक मूल्यवत्ताक प्रति कतेक अन्याय भऽ जाइत छैक, से प्रायः हुनका ध्यानमे नहि अबैत छनि।

'कन्यादान'क वैचारिक आ आन पृष्ठभूमि तकबाक लेल 'मिथिला' (१९२९, सं० पं कुशेश्वर कुमर तथा बाबू भोला लाल दास) क फाइल उनटयबाक चाही, जाहिमे सर्वप्रथम 'कन्यादान'क किछु अंश ('तार कोना पढ़ाओल गेल' धरि आरंभिक तीन परिच्छेद) छपल छल। 'मिथिला'क दोसर अंकसँ 'कन्यादान' आरंभ भेल अछि, आ पहिल अंकमे 'कन्यादान'क लेखकक एकटा लेख अछि—'स्त्री शिक्षाक वर्त्तमान दशा।' वस्तुतः ई लेख ओ बीज थिक जाहिसँ 'कन्यादान'क सहज स्वाभाविक प्रस्फुटन बड़ स्पष्ट रूपमे देखल जा सकैत अछि। लेखक आरंभिक वार्त्तालापक अंश 'कनैँया माइक ओरिआओन'क वार्त्तालाप तँ मन पारिए देत, बुच्चीदाइसँ लऽ कऽ आवेशरानी, लालकाकी, दुलारमनि पिउसी, फुचुकरानी—सऽभ ओहिमे विद्यमान भेटि जयतीह। 'कन्यादान'क वातावरण, पात्र, संवाद ओ शैली—सभ किछु एहि आरंभिक लेखमे जेना बीज रूपमे सुरक्षित राखल अछि। कथ्यक जहाँ धरि प्रश्न अछि तँ जेना कि लेखक शीर्षकेसँ ध्वनित होइछ—बुच्चीदाइ लोकनिक तत्कालीन स्थिति तथा ओकर सामाजिक दुष्परिणाम नहि केवल एहि आरंभिक लेखक, अपितु 'मिथिला'मे बादमे छपल आन बहुत रास लेख—यथा, 'पर्दा प्रथा' (कुशेश्वर दत्त), 'स्वराज्यके लेत' (हरिमोहन झा), 'हमर पतनक कारण', स्त्रीक अनादरक दुष्परिणाम, 'शारदा बिल' आदि—क केन्द्रीय-बिन्दु रहल। नव प्रगतिशील मूल्यक स्थापनाक लेल ई लेख सब मानू एकटा स्कूल चलौलक, जकर स्वर 'मिथिला'क मूल स्वर कहि सकैत छी। आ एकर प्रतिनिधित्व कयलक 'कन्यादान'। 'स्त्री-शिक्षाक वर्त्तमान दशा' लेखक अन्त एहि तरहेँ भेल अछि—'आब प्रश्न उठैत अछि जे स्त्री-शिक्षाक सम्प्रति की रूप होमक चाही। एहि पर हम कोनो आगामी संख्यामे अपन विचार प्रकट करब।' एहि लेखक दोसर किश्त नहि लिखल गेल। ई हमरा जनैत एकटा नीक बात भेल। कारण, तँ प्रायः ई संभव भऽ सकल जे एहि स्कूल द्वारा प्रतिपादित विचारधाराकेँ समग्र रूपमे एकटा उपन्यासक शिल्पमे समेटि 'कन्यादान' सन उपन्यासक धारावाहिक प्रकाशनक आवश्यकता बूझल गेल। ई निश्चित जे एकटा 'कन्यादान'सँ एहि दिशामे जतबा काज भऽ सकल, ततबा एहि विषयवर सैकड़ो लेख द्वारा होयब प्रायः संभव नहि छल। 'कन्यादान' सम्पूर्णतः समाज-समालोचना ग्रंथ अछि। सामाजिक आ धार्मिक रूढ़िक दासताक विरुद्ध व्यापक विद्रोहक भावनाक पहिल स्वर एतहिसँ फूटल।

कोनो क्षेत्रमे क्रान्ति वा विद्रोहक जखन सूत्रपात होइत छैक, तँ समाजक एकटा जे यथास्थितिक मानसिकतामे जिउनिहार परम्परावादी वर्ग रहैत छैक, तकरा ई अनसोहाँत लगैत छैक। 'मिथिला'क जाहि प्रगतिशील स्कूलक चर्च भऽ चुकल अछि आ जकर प्रतिनिधित्व 'कन्यादान' द्वारा भेल, तकरा पुरना पीढ़ीक पंडित वर्गक कोप सहऽ पड़ल रहैक (देखू म० म० पं० मुरलीधर झाक पत्र--'मिथिला' वर्ष—१, अंक—७)। 'प्राक्कथन'मे लेखक लिखैत छथि—"कन्यादान'क किछु अंश बहराइते समालोचनाक बिरड़ो उठि गेल। केओ एकर प्रशंसाक पुल बान्हय लगलाह, त केओ कोदारिक छौ सँ ओकरा ढाहय लगलाह।" 'वैदेही समिति द्वारा आयोजित प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा-विभागक अध्यक्षीय भाषणमे लेखक एहि सम्बन्धमे कहैत छथि—'कन्यादान'क उपमा चौठिक चन्द्रसँ देल जा सकैछ। कतेक गोटा दही-केरासँ स्वागत कैलथिन्ह, कतेक गोटा ढेप फेकय लगलथिन्ह।' पोथीक 'समर्पण' मे लेखकक 'सभय समर्पित' शब्द निश्चित रूपसँ एही मिश्रित प्रतिक्रियाक उपज थिक। 'कन्यादान'क विरोधमे ओहि समय की-की प्रतिक्रिया भेल रहय, तत्कालीन पत्र-पत्रिकाक अन्वेषण कऽ। प्रकाशमे जँ आनल जाय, तऽ से मनोरंजक सामग्री भऽ सकैत अछि। एते धरि निश्चित जे 'कन्यादान'क रोचकता प्रशंसक आ विरोधी दुहू वर्गमे समान रूपसँ उत्सुकताकेँ जन्म देलक आ पोथी जनमितहि प्रसिद्ध भऽ उठल। पोथी अपना संग-संग लेखकक नामकेँ प्रसिद्धि देयौलक जे दुनू नाम एक दोसराक पर्यायवाची बनि गेल। कृति आ कृतिकारक नामक संग एहि तरहक तादात्म्य विरले साहित्यकारक संग घटित होइत छैक।

'कन्यादान'क संग एकटा ईहो विशेषता ध्यान देबा योग्य अछि, जे ई पोथी जे एकटा विशाल पाठक वर्गकेँ तैयार कयलक, वस्तुतः पाठकेक आग्रहसँ लिखलो गेल। 'प्राक्कथन' तथा प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा-विभागक अध्यक्षीय भाषणसँ ई स्पष्ट होइत अछि जे 'मिथिला'मे एकर आंशिक प्रकाशनक बाद एकर क्रम टुटि गेल, मुदा जतबा अंश छपल, से पाठकक मनमे तेहन उत्सुकता जगा गेल जे प्रकाशक (बाबू रामलोचन शरण, पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय) क नामसँ चिट्ठी पर चिट्ठी आबऽ लगलनि। मुदा एम० ए०क परीक्षाक बाद जुलाइ १९३२मे जखन लेखक पुनः दरभंगा ऐलाह, तखने 'कन्यादान'क शेष भाग पूर्ण भऽ सकल आ मइ १९३३मे 'कन्यादान' पुस्तकाकार बहरायल। पाठकक बीच 'कन्यादान'क एतेक लोकप्रिय होयबाक पाछाँ ईहो बात भऽ सकैत अछि जे ई पाठकक अपन वस्तु एहि अर्थमे भेलनि जे हुनके तगेदा आ आग्रहक कारणेँ पोथी पूर्ण भेल। मुदा ई सर्वदा संभव नहि होइत छै जे पाठकक आग्रह पर लिखल गेल पोथी पाठकक अपेक्षा वा आकांक्षाक कसौटी पर पूरापूरी उतरबे करय। 'कन्यादान'क दोसर भाग 'द्विरागमन'क पाछाँ सेहो पाठकक आग्रह छल, मुदा ओ एहि तरहेँ पाठककेँ तृप्त नहि कयलक। 'कन्यादान' एक टा एहन दुर्लभ उदाहरण अछि जे पाठकक रुचिकेँ ध्यानमे राखि लिखल गेल आ घुरतीमे फेर पाठकक रुचिक परिष्कार करैत एक टा विशाल पाठक वर्ग साहित्यकेँ दऽ सकल। पाठकक आशा-आकांक्षा आ मानसिक क्षुधाकेँ तृप्त कऽ ई जाहि तरहेँ भरि पेट संतोष देलक, से साहित्य आ पाठकक बीच एकटा तेहन रिश्ता कायम कयलक जे आगामी दूर धरिक साहित्य आ पाठकक रुचिकेँ ई अपन प्रभावान्तर्गत लऽ ओकर दिशा-निर्धारण कऽ देलक। 'कन्यादान'क प्रभाव एक दिस जतऽ ई भेल जे वैवाहिक विषय लऽ कऽ बहुत दिन धरि उपन्यास लिखाइत रहल—'द्विरागमन' (४३)सँ लऽ कऽ 'विदागरी' (६३) धरि, ततऽ दोसर दिस ईहो भेल जे जेना बान्हक फाटक खोलि देलापर बाढ़िक पानि हरहरा कऽ बहऽ लगैत अछि, तेना मैथिलीमे आनो

आन विषय लऽ कऽ मौलिक सामाजिक उपन्यास लिखल जाग लागल। मैथिली लेखक पर 'कन्यादान'क प्रभाव एहि तरहेँ धनात्मक आ निस्तारात्मक दुनू रूपमे पड़ल। मैथिली लेखकमे 'कन्यादान' कोन स्फूर्तिक संचार कऽ देलक, तकर दृष्टान्त प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा-विभागक अध्यक्षीय भाषणमे लेखकक ई तथ्योद्घाटन अछि जे एक सज्जन तँ जोशमे आबि 'कन्यादान'क उत्तरार्द्धो लिखब प्रारम्भ कऽ देलनि।

'कन्यादान'क लेखकक विषयमे अपन इतिहासमे डा० जयकान्त मिश्रक ई कथन बड़ समीचीन छनि—"ही मेड नोवेल-राइटिंग ए पेयिंग वोकेशन एण्ड रेज्ड इट टु ए हाइ आर्टिस्टिक लेवेल, द हाइ-एस्ट दैट वाज रीच्ड बाइ देन इन द लैंग्वेज। हरिमोहन झा मेड द मैथिली नोवेल इन इट्स फॉर्मेटिव ईयर्स ऐज ग्रेट ए फॉर्म ऑफ लिटररी आर्ट ऐज विद्यापति हैड मेड द लीरिक पोएट्री ऐन्ड उमापति द कीर्तनिया ड्रामा इन द पास्ट।" 'कन्यादान'क महत्त्वक विवेचन करैत ओ कहने छथि—'द ग्रेटनेस ऑफ द नोवेल लाइज नॉट इन द सोशल रिफॉर्म—एडुकेशन ऑफ मैथिल वीमेन—ह्विच द ऑथर टुक प्राइड इन ऐण्ड हि्वच द ऑर्थोडाक्स पीपुल रिजेन्टेड इन हिज नोवेल, बट इन द परफेक्ट सोशल कामेडी हि्वच ही क्रिएटेड विथ सुप्रीम गिफ्ट ऐन्ड इनसाइट।' वस्तुतः 'कन्यादान'क महत्त्व कोनो एक बात लऽ कऽ नहि छैक, अपितु ओ सभ बात मिलि कऽ एकरा महान बनबैत छैक, जे कोनो उपन्यासक सफलताक लेल आवश्यक होइत छैक। कहल गेल अछि जे उपन्यास ओहि युगमे पल्लवित-पुष्पित होइत अछि जाहिमे लोकक बौद्धिकता एवं तर्क-शक्ति बेसी सक्रिय रहैत छैक। नवता आ प्रगतिशीलताक संवाहक 'मिथिला'क जाहि स्कूल द' कहल जा चुकल अछि, तकर मानसिकताकेँ अनठा कऽ 'कन्यादान'क महत्त्वकेँ आँकबाक प्रयास नहि केवल अपूर्ण अपितु अनटोटल होयत। उपन्यासक मूल अवधारणामे जाहि दू बिन्दु पर सर्वाधिक बल देल गेल अछि, से थिक सामाजिक संलग्नता आ जीवनक यथार्थ। कविता वो उपन्यासमे यैह मूल अन्तर मानल गेल अछि, जे कविता व्यक्तिक अन्तर्जगतमँ उद्भूत सहज भावक विशिष्ट अभिव्यक्ति थिक, आ उपन्यास व्यक्तिकेँ समाजक अंगक रूपमे ओहि प्रकारेँ चित्रित करैत अछि जेहन कि ओ समाजमे रहि कऽ अनुभव करैत अछि। एहि तरहेँ कविता जतऽ स्वभावजन्य होइत अछि, ततऽ उपन्यासकेँ समाजक परिस्थिति जन्म दैत छैक। एकटा पाश्चात्य विचारक मानव समाजकेँ हाथ मानि उपन्यासक उपमा दस्तानासँ दैत छथि। जेना हाथक संचालनसँ दस्तानाक संचालन निर्धारित होइत अछि, तहिना समाजक गतिविधि उपन्यासक रूपरेखा बनबैत अछि। भारतीय मतानुसार सेहो उपन्यासक शब्दार्थ अछि उप = निकट, न्यास = राखब, अर्थात् लेखक पाठक लग अपन विशेष बात राखऽ चाहैत अछि। एहि सभ अवधारणाकेँ ध्यानमे राखि कऽ 'कन्यादान' पर विचार करी तँ ओकर महत्त्वकेँ प्रायः बेसी नीक जकाँ आँकल जा सकैत अछि। सामाजिक परिवर्त्तनक आकांक्षा लऽ सामाजिक जीवनक एतेक व्यापक आ यथार्थ चित्रण एहिसँ पूर्व नहि भेल छल। हँ, ईहो धरि निश्चित जे रोचकताकेँ जँ 'कन्यादान'सँ निकालि देल जाइत तँ सामाजिक परिवर्त्तनक सभ टा आकांक्षा आ सामाजिक यथार्थ राखले रहि जाइत।

संस्कृत लक्षणग्रंथमे उपन्यास, जे कि नाटकक सन्धिक एक उपभेद अछि, क व्याख्या दू प्रकारसँ कयल गेल अछि। एक टा मत अछि—'उपन्यासः प्रसादनम्।' अर्थात् प्रसन्न कयनिहार रचना उपन्यास थिक। एहि व्याख्याक अनुयायीलोकनि रोचकताकेँ उपन्यासक सभसँ प्रमुख विशेषता मानैत छथि।

वस्तुतः उपन्यास काज ई करैत अछि जे वर्णित सुख-दुःख, आशा-आकांक्षा एवं उत्थान-पतनक संग पाठककेँ लऽ चलैत अछि। पढ़ैत काल पाठक अपन वास्तविक स्थितिसँ उपन्यासमे वर्णित स्थितिक मिलान करैत चलैत अछि, आ एहिमे ओकरा जतेक स्वाभिकता ओ सहजताक अनुभव होइत छैक, ओकरा ओतेक अधिक तृप्ति, आनन्द आ संतोष भेटैत छैक। उपन्यासक सफलताक एकटा मापदण्ड पाठककेँ ओहिसँ भेटऽ वला तृप्ति कहल गेल अछि। पाठककेँ ई तृप्ति उपन्यास अपन रोचकतासँ दऽ सकैत अछि। दोसर व्याख्या अछि :' उत्पत्ति कृतोह्यर्थ उपन्यासः संकीर्त्तितः।' अर्थात् कोनो अर्थकेँ युक्तियुक्त रूपमे उपस्थित करब उपन्यास कहबैत अछि। एहि व्याख्याक सम्बन्ध उपन्यासक संदेश अथवा वैचारिक पक्षसँ अछि। यद्यपि नाट्य-साहित्यक 'उपन्यास' एखनुका प्रचलित 'उपन्यास'सँ कोनो मेल नहि रखैत अछि, मुदा एखनुका प्रचलित अर्थहुमे उपन्यासक ई दुनू व्याख्या सटीक बैसैत अछि आ ई बात ध्यान आकृष्ट करैत अछि जे 'कन्यादान' एहि दुनू व्याख्या पर समान रूपसँ सफल उतरैत अछि। अपन वैचारिक पक्षक उपस्थापनमे 'कन्यादान' कतेक सही आ सटीक भेल, तकर प्रमाण तँ एकर विरोधमे ठाढ़ होबऽवला आरंभक वितण्डा आ पश्चातक सामाजिक परिवर्तन अछि। आ जहाँ धरि रोचकताक प्रश्न अछि, से एकर रोचकते छल जे विरोधीलोकनिकेँ सेहो एकरा ताकि-ताकि कऽ पढ़ऽ पड़लनि। 'कन्यादान'क रोचकताक दू टा मुख्य आधार अछि। एक तँ एकर हास्य-व्यंग्य पक्ष, जे ततेक पुष्ट ओ सबल थिक, जे आन-आन विशेषता जँ 'कन्यादान'मे नहियो रहैत तँ पोथी तैयो पाठकक बीच लोकप्रिय होइत। हास्य-व्यंग्य-चमत्कारमे अहुना लोककेँ आकृष्ट करबाक प्रबल शक्ति रहैत छैक। मुदा ताहिसँ बेसी ध्यान देबाक बात ई अछि जे 'कन्यादान'मे जे हास्य-व्यंग्य अछि, से सभ तरहक वर्ग आ रुचिक लोकक लेल अछि। एक दिस जँ एहिमे अपेक्षाकृत कम परिपक्व मानसिकताक लोकक लेल पं० नमोनारायण झा, झारखंडी नाथ, बटुकजी आ घटकराज टुन्नी झा सन पात्र छथि जे अपन भाषा, भंगिमा ओ विकृतिसँ हास्य उत्पन्न करैत छथि, तँ दोसर दिस आवेशरानी, फुचुकरानी, लालकाकी, बुचकुन चौधरि आदि छथि जे अपन चारित्रिक विशिष्टतासँ सहज हास्य आ व्यंग्यक असंख्य स्थिति उत्पन्न करैत चलैत छथि। आ विकसित मानसिकताक लोकक हेतु भरि पेट मनोरंजनक सामग्री प्रस्तुत करैत छथि। सभ वर्गक लोकक हेतु समान रूपसँ रोचक होयबाक कारणहि 'कन्यादान' बच्चासँ लऽ कऽ बूढ़ धरि, निरक्षरसँ लऽ कऽ विद्वान धरि आ पुरना विचारवलासँ लऽ कऽ अंग्रेजी पढ़ल-लिखल लोक धरि पसरि सकल। 'कन्यादान'क रोचकताक दोसर सबल आधार अछि एकर सूक्ष्म यथार्थक सजीव चित्रण। लालकाकी आवेशरानीक संग चारि घंटा गप्प कऽ जखन हुनका अरिआति कऽ आँगन घुरैत छथि तँ दरबज्जा पर नेबोक गाछसँ दू टा तोड़ने अबैत छथि। एहन-एहन असंख्य सूक्ष्म यथार्थ, जे लेखकक पकड़सँ किन्नहु छूटल नहि छनि, पाठककेँ एको क्षण लेल ई भान नहि होबऽ दैत छै जे ओ जाहि परिवेश आ वातावरणमे स्वयं अछि, ताहिसँ भिन्न धरातलपर उपन्यासक घटना घटित भऽ रहल छैक।

औपन्यासिक तत्वसभक दृष्टिएँ विचार कएल जाय तँ ई बात आश्चर्यजनक लागि सकैत अछि जे कथावस्तुक दृष्टिसँ 'कन्यादान' कोनो विशेष महत्त्व नहि रखैत अछि। एकर कथानक बड़ छोट अछि आ से पर्याप्त मंथर गतिसँ चलल अछि। मुदा इहो एकटा चमत्कारे अछि जे कथा तत्वक एहि दुर्बलतासँ 'कन्यादान'क चतुर्दिक सफलताकेँ मिसियो भरि बाधा नहि होइत छैक। असलमे कथाक

मन्द-मंथर धाराक कारणें उपन्यास कूल-कगारक मनोहारी दृश्यावली देखवैत चलैत छैक जे नहि केवल एकरसतासँ बचबैत छैक, अपितु संग-संग सामाजिक स्वरूपक विवेचन सेहो करैत चलैत छैक। पूर्वक उपन्यासकार सभ केवल कथा कहैत चलैत छलाह। मुदा उपन्यास कथे टा नहि कहैत अछि। ओ मानव जीवन, जे कि समाजक मध्य घटित होइत अछि, क यथार्थ ओ सम्पूर्ण गाथा थिक। यद्यपि 'कन्यादान' जीवनक विभिन्न पक्षक चित्रण नहि करैत अछि, मुदा अपन उद्देश्यक पूर्त्ति लेल जे अपेक्षाकृत छोट कथावस्तुक परिधि ओ लेलक अछि ताहिमे सामाजिक जीवनक अगणित स्थिति, प्रकृति ओ प्रवृत्तिकें समेटि तत्कालोन समाजक अत्यन्त जीवन्त ओ यथार्थ चित्र प्रस्तुत करैत अछि। आरंभिक उपन्यासभ—जकरा उपाख्यान कहब बेसी सही होयत—सामाजिक जीवनसँ फराके छल। पं० जनार्दन झा 'जनसीदन' पहिल व्यक्ति भेलाह जे मैथिलीमे मौलिक सामाजिक उपन्यास लिखबा दिस प्रवृत्त भेलाह। 'कन्यादान' लिखबाक प्रेरणा लेखक अपन पिता जनसीदनेजीसँ ग्रहण कयलनि (देखू—प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा-विभागक अध्यक्षीय भाषण)। 'कन्यादान' पर 'पुनर्विवाह' (१९२६)क स्पष्ट प्रभावो देखल जा सकैत अछि। मुदा 'कन्यादान' सर्वप्रथम मैथिली उपन्यासकें यथातथ्यक संकीर्ण ढाँचासँ निकालि ओकरा वर्णनक विपुल ऐश्वर्यसँ समृद्ध कयलक। पूर्वक उपन्यासमे वर्णनक ई सूक्ष्मता नहि छल आ सूत्र रूपमे कथा कहि देबाक प्रवृत्ति छल। 'कन्यादान' एहि प्रणालीक अन्त कयलक आ मैथिली उपन्यासकें पहिल बेर ओकर सही भूमिपर आनि ओकरा ओहि सभक महिमासँ मंडित कयलक जे ओकरा गद्यक क्षेत्रमे महाकाव्यक दर्जा देयबैत छैक।

एकटा पाश्चात्य आलोचकक कथन छनि जे जाहि उपन्यासमे जतेक अविस्मरणीय अथवा मन रहि जायवला चरित्र भेटय, तकरा ततेक महान उपन्यास मानबाक चाही। 'कन्यादान' केँ समक्ष राखि एहि उक्तिक सत्यताक अनुभव कयल जा सकैत अछि। सी० सी० मिश्र आ बुच्चीदाइसँ लऽ आवेशरानी, फुचुकरानी, दुलारमनि पिउसी, लालकाकी, झारखंडी नाथ, बटुकजी आदि जतेक पात्र 'कन्यादान' मे छथि, अपन तेहन विशिष्ट परिचिति बनवैत छथि जे पाठककें जीवन भरि मन रहथिन। प्रत्येक पात्र एकटा 'टाइप' अछि। टाइप होयबाक कारणें पात्रक स्वाभाविक विश्वसनीयता असंदिग्ध छैक। 'टिपिकल' पात्र जे होइत अछि से स्थिर वा फ्लैट चरित्र होइत अछि, सम्पुर्ण उपन्यासमे, चाहे कोनो परिस्थितिमे उपन्यासमे ओकर प्रवेश होइ ओ एके रंग रहैत अछि, परिस्थितिक भिन्नताक कारणें ओकरामे कोनो परिवर्त्तन नहि होइत छैक। तेँ ओ गतिशील वा विकासशील नहि होइत अछि। मुदा तेँ एहन चरित्र कम महत्वपूर्ण होइत हो, वा एहन चरित्र उपन्यासमे रहब दोष हो, से बात नहि। वस्तुतः ई उपन्यासक माँग निर्धारित करत, जे ओकरा केहन चरित्र चाही। उपन्यासकार जे कोनो विशेष उद्देश्यकें ध्यानमे राखि कऽ पात्रक निर्माण करऽ चाहैत अछि, तँ ओकरा लेल बेसी उपयुक्त स्थिरे चरित्र होयतैक। स्थिर चरित्र पाठकक मनपर अपन बेसी स्थायी प्रभाव छोड़ि जाइत छैक। हास्यक सृष्टि लेल तँ स्थिरे पात्र आदर्श होइत अछि। वस्तुतः 'कन्यादान'क उद्देश्य आ ओकर मनोरंजन—दुनूक पूर्ति लेल एही प्रकारक पात्र होयब आवश्यक छलै। चरित्रक मामलामे लेखकक ई निर्माण हुनक औपन्यासिक-कलाक प्रौढ़ताक द्योतक थिक। यथार्थवादक चर्चा करैत एंगेलसक कहब छनि जे प्रतिनिधि वा 'टिपिकल' चरित्रक निर्माण करबे यथार्थवादक सार-तत्व थिक। बहुधा प्रतिनिधि चरित्रक गलत अर्थ लगाओल जाइछ। प्रतिनिधि चरित्र कोनो युग विशेषक विशिष्टता

सभक अरुचिकर अथवा भद्दा औसत नहि होइत अछि, बल्कि ओ युग विशेषक जीवनक सभसँ अर्थपूर्ण लक्षणसभक प्रतिबिम्ब होइत अछि। 'कन्यादान'क 'टिपिकल' पात्रसभकेँ आगाँ राखि एहि कथनक सत्यताकेँ देखल जा सकैत अछि।

आलोचक लोकनिक अनुसार सफल चरित्र-चित्रण लेल ई आवश्यक थिक जे पात्रकेँ पर्याप्त मूर्त्तिमत्ता तथा स्वाभाविकताक संग तेना चित्रित कयल जाय जे ओ पाठकक लेल छाया-नाम नहि रहि कमसँ कम ओहि समयक लेल उभड़ि कऽ व्यक्तित्व धारण कऽ लिअय। से 'कन्यादान'क सभ पात्र अपन तेहन व्यक्तित्व लऽ कऽ आयल अछि जे साहित्यमे अपन सार्वकालिक उपस्थिति बना लेलक अछि। घटनासँ स्वतन्त्र पात्रक व्यक्तित्व निर्माणक प्रयास एहिसँ पूर्वक उपन्यासमे नहि भेल छल। 'कन्यादान'क पात्र सभक चारित्रिक विशिष्टता पात्र सभक नामोसँ ध्वनित होइत अछि, यथा दुनमुन काकी, आवेशरानी, दुलारमनि पिउसी, झारखंडी। पात्रक क्रिया-कलाप आ वार्त्तालापसँ कोना चरित्रकेँ उजागर कयल जाइछ, तकर उदाहरण सौंसे उपन्यास अछि। आरम्भहिमे जे लालकाकीक आवेशरानी संग वार्तालाप अछि, से हुनके दुनू गोटाक नहि, दुमगुन काकी, बड़कागामवाली, दुलारमनि पिउसी—सभक चरित्रकेँ मूर्त्त कऽ दैत अछि।

चरित्र चित्रणक अतिरिक्त वातावरणक निर्माण दिस सेहो पूर्वक उपन्यासमे ओतेक ध्यान नहि देल जाइत छल। 'कन्यादान'क सजीव वर्णन आ तकर दृश्यात्मक प्रभावक पाछाँ लेखकक वातावरणक निर्माणक अद्भुत कौशल अछि। सभागाछीक दृश्य हो वा भोजनालयक वातावरण, जहाजपरक दृश्य हो वा तारवलाक कारणे भय-त्रस्त भेल आँगनक वातावरण लेखकक कौशल सभ ठाम मन पड़त। चरित्र चित्रण, वातावरण आ कथोपकथन-एहि तीनू औपन्यासिक आवश्यक तत्वक सफल प्रयोग पहिल बेर 'कन्यादान'हिमे भेल। मुदा पहिल प्रयोग होइतहुँ ई ततेक पुष्ट आ प्रौढ़ अछि जे आश्चर्यजनक अछि। लेखकक अद्भुत विलक्षण चामत्कारिक शैलीक गप्पे नहि हो। लेखकक व्यक्तित्वक संग शैलीक घनिष्ठ सम्बन्धकेँ फरिछबैत कहल जाइत अछि जे लेखकक कृतिकेँ पढ़ि सजग पाठक ई बुझि सकैत अछि जे ई अमुक व्यक्तिक रचना थिक। ई कथन जतेक 'कन्यादान'क लेखक संग सटीक बैसैत अछि, ततेक प्रायः आन कोनो लेखक संग नहि। पाठकक संग ,आत्मीयता स्थापित कऽ लेबामे, ओकरा बान्हि कऽ लऽ चलबामे, भाषामे चमत्कार ओ व्यंजना द्वारा गतिशीलता ओ प्रवाह उत्पन्न करबामे—'कन्यादान'क लेखकक जोड़ नहि अछि। उपन्यासक लेल सहज आ स्वाभाविक आदर्श भाषाक रूपक दर्शन पहिल बेर 'कन्यादान'हिमे होइत अछि, आ से जेहन प्रौढ़ रूपमे होइत अछि, से आश्चर्यजनक लागि सकैत अछि। कोनो भाषाक गद्यक स्वरूपक निर्माण करबामे उपन्यासक भाषाक सर्वाधिक भूमिका होइत छैक। आधुनिक मैथिली गद्यक पहिल सोझ सम्बन्ध 'कन्यादान'हिक गद्यसँ जुड़ैत छैक। वस्तुतः ई लेखकक सशक्त भाषा-शैलिएक कारण संभव भेल जे एकटा निश्चित संदेश आ सुधारवादी दृष्टिकोण लऽ कऽ लिखल गेलापर 'कन्यादान' उपन्यास कतहुसँ उपदेशात्मक वा सुधारवादी नहि लगैत अछि। आ प्रायः यैह कारणे छै जे ई समाजमे अभीष्ट सुधार आनि सकल।

'कन्यादान'क जन्मक कथा सेहो कम चामत्कारिक नहि अछि। कतेको पैघ घटनाक जन्म जेना आकस्मिक रूपसँ भऽ जाइत अछि, तहिना एकरो संग भेल। 'मिथिला' बहरयलाक बाद ई विचार कयल गेल जे एकटा धारावाहिक उपन्यास एहिमे छापल जाय। मुदा सम्पूर्ण उपन्यास एक बेर

लिखबाकऽ क्रमशः छापल जयबाक सुविधा प्रायः नहि भेने एकरा खंड-खंडमे लिखबाक भार लेखकके देल गेलनि। 'प्राक्कथन'सँ स्पष्ट होइत अछि जे सेहो प्रथम किश्त एक रातिमे तखन लीखि-लाखि कऽ देल जा सकल, जखन भोला बाबू आबि लेखकक ठोंठपर सवार भऽ गेलथिन जे अन्तिम फर्मा अही'क द्वारे रुकल पड़ल अछि। तकरा बादोक किश्तसभ अहिना तगेदा भेलापर लिखाइत रहल, जे कि एहु तथ्यसँ स्पष्ट अछि जे 'मिथिला'क दोसर आ तेसर अंकक बाद फेर छठम अंकमे एकर तेसर किश्त छपि सकल आ तकरा बाद फेर आगाँक छओ अंकमे एको किश्त नहि छपल। तकर कारण 'कन्यादान' आ एहि स्कूलक लेखनक पंडित वर्ग द्वारा भेल विरोध सेहो भऽ सकैत अछि। जे-से, 'कन्यादान'क आरम्भिक तीन परिच्छेद तँ मइ आ सितम्बर १९२९क बीच लिखल गेल, शेष नौ परिच्छेद जुलाइ ३२ सँ मइ ३३क मध्य लिखल गेल। प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलनक कथा विभागक अध्यक्षीय भाषणमे लेखक 'कन्यादान'क जन्मक प्रसंग कहने छथि—'ओहि समय हमर छोट वहिन (दिवंगत सोन दाइ)क कन्यादानक हेतु बाबूजी चिन्तित रहथि। कतहु जोगारे नहि लगैन्ह। एक दिन गामपर हमर माय अड़ोसिन-पड़ोसिनसँ ओहि विषयमे गप्प करैत रहथि। आवेशरानी, ढुनमुन काकी, दुलारमनि पिउसी—सभ ओहीमे भेटि गेलीह। हमरा ओ गप्प तेहन प्रियगर लागल जे हम चुपचाप सभ टा नोट कऽ लेलहुँ और वैह गप्प रंग-पालिश चढ़ा 'कनियाँ माइक ओरिआओन' शीर्षकसँ 'मिथिला'मे छपक हेतु दऽ देलिऐक। यैह भेल 'कन्यादान'क श्रीगणेश। ताहि समय हमरा ई भान नहि रहय जे ई गप्प आगाँ जा कऽ कोन आकार-प्रकार ग्रहण करत। केवल पेनी टा छानि देने छलिऐक।' ई आश्चर्यजनक लागि सकैत अछि जे एहि आकस्मिक ढंगसँ शुरू भऽ कऽ आ एना अनियोजित रूपमे तथा एतेक पैघ अन्तरालक संग लिखल जा कऽ ई एतेक सफल उपन्यास भऽ सकल। मुदा प्रायः यैह कारण भेलै जे उपन्यासक सभ परिच्छेद अपनामे स्वतन्त्र आ पूर्ण सेहो छैक, आ फेर सभ एक सूत्रमे वन्हा एक-दोसरासँ अविच्छिन्न सेहो छैक। एक परिच्छेदक सूत्र फेर एक परिच्छेदकबाद मिलाओल गेल छैक जे उपन्यासक स्थापत्य दिस लेखकक चाँकि देखबैत अछि, जे कि ओहि समय लेल एकटा नव वात छल।

'कन्यादान'क सम्वन्धमे जतेक कहल जाय से थोड़ होयत। ई वस्तुतः उपन्यास रूपमे तत्कालीन सम्पूर्ण सामाजिक स्थितिक तेहन दस्तावेज अछि जे समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणसँ शोध कयनिहार लेल एक टा वहुमूल्य संदर्भ-ग्रंथ भऽ सकैत छनि। बुच्ची दाइ आ सी० सी० मिश्र तत्कालीन सामाजिक परिस्थितिक उपजा छथि। ताहि दिन वुच्ची दाइ घर-घरमे छलीह, आइ तकलापर वुच्चीदाइ प्रायः कतहु नहि भेटतीह। मुदा ताहिसँ 'कन्यादान'क प्रासंगिकता नहि खतम भऽ जाइत छैक। 'कन्यादान'मे एहन बहुत रास सामाजिक स्थिति अछि, जे आइयो अक्षुण्ण अछि, जेना पत्र-पत्रिकाक प्रति लोकक उदासीनता अथवा बेटीक विवाहक समस्या। से मुदा भिन्न बात। कोनो कृतिकेँ तत्कालीन स्थितिएक परिप्रेक्ष्यमे राखि कऽ ओकर रसास्वादन कयल जा सकैत अछि। से जँ नहि होइतैक, तँ सऽम रुपैया-आना-पाइ वला साहित्य एहि दशमलव प्रणालीक युगमे अप्रासंगिक भऽ जइतैक। साहित्यकेँ स्थायित्व प्रदान करैत छैक ओहिमँहक मानवीय संवेदना, नहि कि युगक बदलैत मूल्य। मानवीय संवेदने ओ तत्त्व थिक जकरा कुशलतासँ गहि कऽ युगक बदलैत मूल्य-बोधकेँ टपैत कोनो कृति कालजयी होइत अछि।

एहन कालजयी साहित्यक प्रासंगिकता कहियो नहि खतम होइत छैक। यैह कारण थिक जे ओकरा जहिया जए बेर पढ़ू, तए बेर तए तरहक आनन्द देत। चिर नवीनता स्थायी साहित्यक पहिचान छैक। 'कन्यादान'क ऐतिहासिक सफलताक पाछाँ पाठकक दुनू प्रकारक सहयोग छैक— विस्तारात्मक आ घनात्मक। एतबे नहि जे बेसी लोक एकरा पढ़लक, बेसी लोक बेसी बेर पढ़लक, बेर-बेर पढ़लक।

'कन्यादान'क महत्व सभ दृष्टिएँ देखलापर तेहन छैक जेहन मैथिलीमे तँ नहिए, आनो भाषा मे भरिसक्के कोनो पोथीकेँ भेल होइक। लेखकक अन्यान्य कृति भनहि एहिसँ बेसी उत्कृष्ट होइनि वा एहिसँ बेसी यश आ प्रतिष्ठा देयौने होनि, किन्तु 'कन्यादान' एकटा तेहन ऐतिहासिक विन्दु पर ठाढ़ अछि, जे एकर महत्त्व सर्वोपरि रहतैक। ओना 'कन्यादान'क अतिरिक्त 'खट्टर ककाक तरंग'क विषयमे सेहो ई कहल जा सकैए जे लेखक जँ एकेटा यैह पोथी लिखने रहतथि, तैयो ओ साहित्यमे अमर भऽ जैतथि, मुदा लेखकक विपुल यशैश्वर्यक आधारशिला होयबाक गर्व तँ 'कन्यादाने' कऽ सकैत अछि। 'खट्टर ककाक तरंग' लेखककेँ 'खट्टरकका' भनहि बना देने होइनि, लेखक तँ ओ कन्यादानेक भेलाह।



द्विरागमन

श्री जीवकान्त

हरिमोहन बाबूक 'द्विरागमन' उपन्यास 'कन्यादान'क अगुलका कड़ी थिक। 'कन्यादान' नायिका-प्रधान कथा नहि थिक, मुदा 'द्विरागमन' नायिका-प्रधान कथा थिक। नायिका बुच्ची दाइ पति द्वारा ग्राह्य होथि, तकर प्रक्रियाक सूक्ष्म चित्रण एहिमे भेल अछि। ई कथा मनोरंजक आख्यानक संगहि मिथिलाक नवजागरणक पीड़ाकें, एक पैघ अङैठी मोड़केँ बहुत सरलतासँ देखबैत अछि।

मिथिलाक नवजागरण अंग्रेजी शिक्षाक प्रचार-प्रसारसँ भेल अछि। जँ एतबे प्रचार आइ संस्कृत शिक्षाक भेल रहैत तँ एहि प्रकारक जागरण नहि होइत आ मैथिल स्त्री आर बेसी शोपण आ अपमानमे जिबैत रहितथि।

अंग्रेजी शिक्षाक प्रचारसँ आजुक मैथिल परिवार एक्के सङ अनेक प्रकारक व्यक्तिकेँ, अनेक इतिहास आ अनेक विचार-धाराकेँ, कहियो काल परस्पर-विरोधी विचार धाराकेँ एक ठाम बन्हने अछि।

अंग्रेजी शिक्षाक मादे आइयो परम्परित मिथिला बहुत प्रेमपूर्ण आ सहज नहि भेल अछि। ई तीत दवाइ जकाँ घोंटल जा रहल अछि। अंग्रेजी शिक्षित युवक गाम-घरकेँ छोड़ने जा रहल छथि। अपन परम्पराकेँ बिसरने जा रहल छथि। अपन शब्दावलीकेँ मारने जा रहल छथि। तेँ पुरान मिथिला बहुत आहत नजरियेँ एहि दिस तकैत अछि। ई नवजागरण नव आर्थिक सम्पन्नता देलकैक अछि, नव स्वाभिमान आ आत्मविश्वास देलकैक अछि। मुदा प्रत्येक वस्तु निर्ममतासँ अपन दाम ओसुलि लैत छैक। मिथिलाक गाम आइयो पहिनेसँ बेसी विपन्न भेल जा रहल अछि, गामक कलह बढल जा रहल अछि। गामसँ बहरायल नगरमे नव बासी मैथिल परिवार बेसी संतुष्ट आ सुरेब लगैत अछि, मुदा गामक परिवार आइयो टेढ़-घोंच आ ईर्ष्यालु लगैत अछि।

'द्विरागमन' एहि सभ बातक साक्षी अछि आ एहि परिवर्तनक प्रतिक्रियाक एक दस्तावेज थिक। बुच्ची दाइक माइकेँ ई सभ टा बात तीत दवाइ जकाँ घोंटऽ पड़ैत छनि। ओ एहि रूपान्तरणकेँ बड़ कौतुकसँ नहि, बड़ अवचंकसँ देखैत छथि। ई ग्रहण कोनो सोझ ग्रहण नहि थिकैक, तेँ ई प्रक्रिया स्वाभाविक नहि लगैत छैक। एहने सन प्रसंग सभकेँ हरिमोहन बाबू बहुत कलात्मक व्यंग्य-विनोद लेल चुनि अपन हास्यरस-सम्राट्क उपाधिकेँ सार्थक कयलनि अछि।

मैथिल नारी युग-युगसँ शोपित आ दमित अछि। ओकर खोपा, ओकर कानक बाली अथवा लाल-पीयर साड़ी ओहि दासताकेँ झँपबाक बहुत प्रयत्न करैत छैक, मुदा से बड़ स्पष्टतासँ देखार

भऽ जाइत छैक, जखन गामसँ दूर कोनो रेलवे जंक्शन पर अथवा बस-स्टैंड पर प्रतीक्षा करैत मैथिल परिवारकें हमरालोकनि देखैत छी। मैथिल नारी ततेक अशिक्षित आ आर्थिक रूपें ततेक परजीवी अछि जे ओ प्रत्येक क्षण सोङर चाहैत अछि। मैथिल नारी ततेक बेसी पर्दामे गोड़ल अछि जे अपना परिवारसँ बाहरक प्रत्येक लोककें ओ डाकू मलखान सिंहसँ बेसी आतंककारी बुझैत अछि। माथपर आँचर नहि रखने अथवा "लो-कट" ब्लाउज पहीरि लेने मैथिल नारी बहुत साहसी नहि भेलीह अछि। जेना मैथिल पुरुष स्त्रिगणकें नहि टोकबाक प्रयास करैत छथि, तहिना मैथिल नारी अपना घरोमे सभ पुरुषकें टोकबाक प्रयास नहि करैत छथि। हुनकामे आत्मविश्वास आ निर्भयता नहि छनि। तें माथे उघाड़लासँ ओ स्वाभाविक मनुक्ख नहि भऽ पबैत छथि। माथ उघाड़ि कऽ चललाक बादो आजुक मैथिल नारीक ओहि बकरीसँ तुलना कयल जा सकैत अछि जे कुकूरसँ डेराइत अछि आ ओकरा सभतरि कुकूरे-कुकूर देखाइत छैक।

एक दिस संस्कृत साहित्यमे नारी-चित्रण परम रसमय भेल अछि, जे सूचित करैत अछि जे सामन्तवादी दृष्टिकोण नारीकें कतेक शोषित आ अपमानित कयलक अछि आ जकर नोंछाड़ आइयो नारीपर अछि, आजुक पढ़लो आ नवजाग्रत नारियोपर ओ चेन्हासी ओहिना अछि। संस्कृत साहित्यमे वर्णित नारी एक बहुमूल्य खेलौना जकाँ लगैत छथि। ओ उपभोग्य पदार्थ जकाँ आकर्षक लगैत छथि आ उपभोक्ता सामग्रिये जकाँ दमगर लगैत छथि। मुदा, गामक नारीकें पुरुष समाज अदौकालसँ दबने-दबने ततेक हीनकोटिक बना देलक अछि जे ओकरामे आ खुट्टामे बान्हल गाय-बकरीमे अन्तर कऽ पायब कठिन अछि।

मिथिलाक पुरुष-समाज अपन परम्पराकें एहि रूपमे खूब मानि रहल अछि जे ओ अपन परिवारक आ अपन गाम-घरक नारीक प्रति बहुत अनादर आ अविश्वाससँ भरल अछि। ओकरा होइत छैक जे जनानी जं एकसरे आङनसँ बहरायल तँ ओकरा बाघ खा जयतैक अथवा चिल्होड़ि लऽ पड़यतैक। यैह दृष्टिकोण थिक जे गामक मिथिला स्त्री-शिक्षाक बड़का विरोधी अछि। लोअर धरि पढ़ाबी, मिडिल धरि पढ़ाबी सँ बढ़ि कऽ आइ बेटीकें मैट्रिक धरि पढ़ाबीक योजना धरि ग्रामीण मिथिला पहुँचल अछि। ग्रामीण मिथिलाक एको प्रतिशत बेटी मैट्रिक धरि पढ़बाक अवसर एखन धरि नहि पौलक अछि। जेहो बेटी ओतऽ धरि गेल अछि तकरा प्रति समाज अपमान-सन्देह-क्लीवता-पूर्ण अछि।

युग-युगसँ पापाणी भेल मैथिल कन्याक दुर्गति 'कन्यादान'मे सी० सी० मिश्रा करैत छथि। बुच्ची दाइ पाथरक मुरूत भेल, बलिपर चढ़ाओल छागरक आँखि जकाँ पथरायल छथि। आजुक मिथिलाक प्रत्येक सी० सी० मिश्रा पढ़ल बुच्ची दाइ मङैत छथि। बुच्ची दाइ लोकनिक कायाकल्प भऽ रहल अछि, से कथा 'द्विरागमन'मे हरिमोहन बाबू कहैत छथि। परम्परित मिथिला एहि शिशिक्षु कन्यालोकनिकें कतेक कौतुक आ कौचर्यसँ देखैत अछि, तकर अभिव्यक्ति बुच्ची दाइक माइक व्यंग्य आ विनोदसँ प्रकट होइत अछि।

'कन्यादान'मे स्त्रीक अशिक्षाक सङ सानल सम्पूर्ण गामक अशिक्षाक चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि। 'द्विरागमन'मे स्त्री-शिक्षाक अनिच्छापूर्वक लादल जयबाक चर्चा अछि, मुदा शेष गामक शिक्षाक कोनो चर्चा नहि अछि।

उपन्यास 'कन्यादान'क ट्रेजेडीक मूल कारण स्त्री-शिक्षाक अभाव नहि थिक आ ने समस्त मिथिलांचलक शिक्षाक अभावे थिक। आजुक मिथिलांचलमे बेटाकें पढ़यबाक बड़ पैघ लालसा छैक,

बहुत बेटो लोकनि स्तरीयता धरि शिक्षितो भऽ जाइत छथि। बेटीकें चिट्ठी-पुरजीवला शिक्षा देबाक साहस लोकमे छलैक। आजुक ग्रामीण मिथिलामे मैट्रिक अथवा संस्कृतक मध्यमा धरि पढ़यबाक साहस भेलैक अछि आ सेहो व्यापक नहि अछि। 'कन्यादान'क ट्रेजेडीक मूल कारण थिकैक जे एक्के परिवारमे पति-पत्नीक मानसिक स्तर आ अभिरुचिमे जमीन-आसमानक फर्क छैक। तहिना बाप-बेटा, माय-बेटी आ सासु-पुतोहुक संस्कार, इच्छा आ अभिरुचिमे पैघ फाँक छैक। येह फाँक 'द्विरागमन'मे भरबाक प्रयास जीबा लेल कयल गेल समझौताक रूपमे अंकित अछि।

एक बातकें एहि प्रसंगमे उठाओल जा सकैत छल आ आइयो ओकरा कोनो उपन्यासमे उठाओल जा सकैत अछि। जँ मिथिलाक बेटी एम० ए० कऽ लेअय आ ओ अपन भाइ आ पतिये जकाँ नौकरीयो धऽ लेअय, तखन की होयत? आजुक संभावना ई अछि जे विवाह-विच्छेद भऽ जायत। एकर कारण स्त्री-शिक्षा नहि थिक। एकर कारण थिक पुरुख लोकनिक सामन्ती स्वभाव। मूर्ख स्त्रीक सङ पुरुख पटा लैत अछि, कारण जे ओ समानताक अपेक्षा अपन भाइ आ पतिसँ नहि रखैत अछि आने स्वाधीनताक हेतु ओ औनाइत अछि। पढ़लि स्त्री समानता मङैत अछि, स्वाधीनता मङैत अछि, जकरा पुरुख लोकनि विद्रोह बुझैत छथि। पुरुख लोकनि स्त्रीकें स्वाधीनताक स्थितिमे अपमान, उपेक्षा आ बहिष्कारक उपहार दैत छथि।

स्त्रीक शोषणक सभसँ पैघ उदाहरण ई थिक जे ओ जीवाक लेल नहि, कोनो पैघ लक्ष्यकें प्राप्त करबा लेल नहि, मात्र कन्यादान आ द्विरागमन लेल जन्म लैत अछि आ जीवैत अछि।

"कन्यादान" बड़ रमनगर छल, "द्विरागमन" ओतेक रमनगर नहि अछि। ओहिमे हास्य-व्यंग्यक प्रसंग बड़ थोड़ अछि। प्रो० हरिमोहन झा एहि द्वारें बहुत पढ़ल गेलाह जे ओ हास्य-व्यंग्य लेल अद्भुतसँ अद्भुत स्थिति (सिचुएशंस)क कल्पना अपन अधिकांश कथा-उपन्यासमे कयने छथि। 'द्विरागमन'क स्थिति ओतेक अद्भुत नहि अछि।

हरिमोहन बाबूक हास्य अद्भुत रूपें अत्यन्त उच्च स्तरक अछि। ओ नवीनसँ नवीन, औद्योगिक सभ्यताक कारणें उत्पन्न, स्थिति सभक कल्पना कयलनि अछि आ परम्परागत रूपें जिबैत आ नवीन परिस्थितिसँ अनवगत लोकक मूर्खतापूर्वक ओहि नव स्थितिक साक्षात्कारक चित्र उपस्थित करबामे बहुत सफल भेलाह अछि। स्थितिगत विसंगति हास्यक मूलमे रहल अछि।

हरिमोहन बाबू नव स्थितिक आग्रही छथि आ ओकर विरोध ओ मैथिल पंडित जकाँ कतहु ने कयलनि अछि। तें हुनक बहुतो रचनाक विरोध संस्कृत-पंडित लोकनि करैत रहलाह अछि।

ओ मैथिली आ संस्कृत शब्द सभक अत्यन्त पैघ मर्मज्ञ छथि, तें ओ शब्दकें बीछि-बीछि कऽ तेना कऽ रखैत छथि जे कतहु संगतिसँ आ कतहु विसंगतिसँ हास्यक प्रचुर सामग्री ओ जुटा दैत छथि।

हरिमोहन बाबू अपना समयक सभसँ वेसी जनप्रिय लेखक छथि। ओ अपना समयक सभसँ वेसी प्रभावशाली लेखक सेहो छथि। हुनका स्तरकें प्राप्त करब बहुतो लेल कठिन अछि। ओ जाहि स्तरक निर्माण कऽ गेलाह, ताहि उच्चता धरि पहुँचब कठिन अछि आ एखन धरि मैथिलीमे ककरो लेल ओहि उच्चताकें प्राप्त करबाक संभावना नहि देखाइत अछि।

ओ अपन लेखनमे कतहु कोनो नारा नहि देलनि। साहित्यकें साहित्य रहऽ देवा लेल ओ कोनो प्रयास नहि कयलनि, मुदा हुनक लेखनमे एक अद्भुत चमत्कार अछि जे ओ साहित्यकें साहित्ये रहऽ देलनि अछि। ओ साहित्यकें कतहु कोनो प्रकारक अस्त्र अथवा कोनो प्रकारक रामनामा चद्दरि बनयबाक प्रयास नहि कयलनि अछि। □

कथाकार श्रीहरिमोहन झा

डा० जयकान्त मिश्र

श्री हरिमोहन बाबू पुरना खाढ़ीक सबसँ उत्कृष्ट ओ यशस्वी लेखक छथि। हिनक प्रतिभा विभिन्न विधामे प्रकट भेल अछि। मुदा, सर्वत्र हिनकर अपन विशिष्टता दृष्टिगोचर होइछ। की काव्य, की भाषण, की नाटक, की गप्प, की कथा, की उपन्यास सर्वत्र नानारूपें व्यङ्ग्य ओ हास्यक पुट रहबे करत—किछु हँसओताह, किछु चुट्टी कटताह। गुदगुदी लगाएब तँ हिनकर साधारणसँ साधारण वाक्यमे भेटत। कनेक मुस्कुरा दिऔक, कनेक चकित-चमत्कृत भए जाउ, कतहु ताहूसँ सन्तोष नहि होइत छन्हि तँ तेना करताह जे भभाए कए ठहक्का मारए पड़त। ताहूसँ उपर ओ तखन जाइत छथि जखन अपना समाजक कोनो अनटोटल, असंगति-विसंगति देखलें हास्यक उपक्रम करैत छथि—कटगर, नोनगर चोट करैत छथि। एतए धरि हम विशुद्ध विनोदमय हास्य मानैत छी।

किन्तु श्री हरिमोहन बाबूक (मैथिल महासभाक तृतीय अधिवेशनमे हिनकर भाषण आदि मोन पाड़ू) एकटा स्वरूप अछि समाज-सुधारक केर। से जखन विकट रूपें हिनका आक्रान्त कए लैत छन्हि तखन हमरासभक अत्यन्त पवित्र ओ आन्तरिक, शुद्ध ओ कोमल भावनाकें ठेस लगाए दैत छथि। केओ-केओ एही कारणें श्री हरिमोहन बाबूकें नास्तिक, भौतिकवादी वा मैथिल-विरोधी विचारधाराक मानैत छथि। हम एतबे कहब जे जखन श्री हरिमोहन बाबू उच्च ओ भव्य कलाकार रहैत छथि तखन ओ गारि नहि पढ़ैत छथि, निन्दा नहि करैत छथि, ध्वंसात्मक बुद्धि नहि रखैत छथि। कारयित्री प्रतिभा कोनहु कवि ओ लेखकक स्वच्छ ओ स्वस्थ कलाकें सर्जन करैछ। तस्मात् जखन समाज-"सुधारक" अथवा समाज "ध्वंसक" बनबाक आग्रह रहैत छन्हि आर कलाकार रहबाक चेष्टा कम भए जाइत छन्हि तखने श्री हरिमोहन बाबूमे ई दोष देखि पड़ैछ।

साधारणतः जेना हम उपर इङ्गित कएल अछि हिनक व्यङ्ग्यक लक्ष्य हुनकहि शब्दें निम्न-लिखित अछि—

"पुरनका तूरक लोक 'प्राचीन'क अन्ध भक्त छथि; नवका तूरक लोक 'नवीन' पर लट्टू भए जाइत छथि। परन्तु ने केवल प्राचीनता मात्र समीचीनताक प्रमाण थिक आओर ने नवीनता मात्र प्रवीणताक द्योतक थिक। दुहूमे सत्यक अन्वेषण कए, सार भाग ग्रहण करबाक चाही।······तें यदि खटमिट्ठी सन चटकार गप्प कोनो "पंडितजी"कें ओल जकाँ कबकब लगनि वा कोनो "साहेब"कें लौङिआ मेरचाइ सदृश प्रतीत होइन्ह तँ एहिमे आश्चर्य कोन ?"

ई उक्ति श्री हरिमोहन बाबूक हास्यक उत्कृष्ट रूपकेर स्वरूप देखबैत अछि। भने कतहु-कतहु ई कहब कठिन होएत जे एतेक हुनक वास्तविक भावना छन्हि। किन्तु बहुधा ई स्पष्ट भए जाइछ। उदाहरणार्थ 'रेलक अनुभव' नामक कथाक अन्तमे कलाकार बाजि उठैत छथि—

"बात ई अछि, जे बंगवासी अपना लोकके माथपर चढ़बैत छथि आओर हमरासभ अपना लोकके पएरसँ ठोकरएबैत छी।"

एतबा लिखैत-लिखैत श्री हरिमोहन बाबूक कारयित्री प्रतिभा कविता लिखए लगैछ—

"थोड़बे दूरक तँ अन्तर छैक। तखन बङ्ग ओ मिथिलाक भूमिमे एतेक विभिन्नता किएक ? 'पद्मा' ओ 'कमला' तँ एक्के अर्थवाचक थिकीहि, तखन दुनूक पानिमे एतबा अन्तर किएक ?"

तहिना "कन्याक जीवन" नामक कथामे देखू—केहन चोटगर किन्तु पवित्र कटाक्ष अछि :

-'हे औ पाहुन ; अहाँ अपनासँ हमर किएक मिलान करैत छी ? अहाँ पुरुष छी। आर हमरा लोकनि जखने कन्या भ क जन्म लैत छी तखने सभ किछु अवधारि लैत छी। ओहि समय नेनामे ज्ञान नहि रहए तेँ अहाँसँ बरोबरी करैत रही।........

ऐँ अहाँ पुरष भ क कनैत छी ! दुर। तखन हमरालोकनि कोना धैर्य धारण करब ? जौँ हम सभ अपन नोर बहाबए लागी तँ गामक गाम दहा जाएत।"

अन्तिम पाँती अबैत-अबैत श्री हरिमोहन बाबूक भावुकता कवित्वमे परिणत भए जाइत छन्हि !

हँ, कतेको ठाम एतेक पवित्र ओ रचनात्मक भावना वा भावुकताक उदय नहि होइत छन्हि— मात्र खौंझाएल वा खिसिआएल आलोचना, शुष्क काकु वा कटाक्ष करैत छथि। जेना देखू "प्रणम्य देवता"मे आतिथ्यकेँ, धर्मशास्त्राचार्यकेँ, ज्योतिषाचार्यकेँ, पण्डितजीकेँ अथवा "खट्टरककाक तरंग"मे रामायणकेँ, दुर्गापाठकेँ, पुराणकेँ विशुद्ध हास्यविनोदक रूपेँ नहि रखलन्हि अछि। हुनक उद्देश्य अपन समस्त पवित्र, उपादेय, आदरणीय संस्कृति ओ आदर्श केँ विध्वंस करैत "उघाड़िमहं करिष्ये" करब अछि। भने साहित्यिक श्लेष, अनुप्रास, यमक आदि अलङ्कारक आनन्द होउक, किन्तु ऐहन कथा सभके पढ़ि साधारण पाठकक जीवनदर्शन विकृत भए ओझरा जएबाक पूर्ण सम्भावना छैक। देखू, केहन फुलझड़ी छोड़ने छथि, आ विचार करू—

—देशमे मूर्खताक कारण के ?—पण्डित।

—वेदकर्त्ता नास्तिक छलाह।

—पुराण सुनने स्त्रिगण दूरि भए जेतीह।

—गीता-पाठसँ फौजदारी बढ़ि जाएत।

—आयुर्वेद काव्य थिक।

—दही-चूड़ा-चीनीसँ सांख्यदर्शन बहराएल।

—रामायणमे आदर्श चरित्र के ?—रावण।

—सभ देवतामे तेज के ?—कामदेव ।

—स्त्रीजातिमे सर्वश्रेष्ठ के ?—वेश्या ।

—स्वर्ग गेने धर्म नष्ट भ जाएत ।

—भगवानकें पेनशन ल क बैसक चाहिअन्हि ।

जँ मात्र गुदगुदी लागओ, मुसुकी आबि जाए तें ई हास-परिहासक विजल्प वा वितण्डा थिक—मात्र भाङ्क तरंगमे कहल, हास्यमय अस्त व्यस्त बड़बड़ाएब प्रदर्शित करब उद्देश्य छन्हि तें FOR EDUCATED ADULTS ONLY (केवल चेतन शिक्षितक मनोरंजनार्थ) ई घोषित कए खट्टर ककाक तरंग प्रकाशित करबाक चाहैत छलन्हि । सम्प्रति जाहि प्रकारें आबालवृद्धवनिता सबहिक हेतु एना भए भारतीय कहू वा मैथिल कहू संस्कार ओ पवित्रतम स्थान सभक दोष वा उपहास मात्र करब कतेक उचित भेलन्हि से कहब कठिन अछि । रमानाथ बाबू एहि प्रकारक साहित्यकें विपटाक साहित्य कहथि । आ र से ठीके, तें विपटाक रूपमे श्री हरिमोहन बाबूक कतेको कथा अछि । विपटा स्थायी साहित्य नहि बनबैत अछि, यद्यपि ओ लगले प्रसिद्ध भए जाइछ, लोकप्रिय भए उठैछ; नास्तिक मूर्ख ओ अज्ञानीक मार्गप्रदर्शक भए जाइछ । मनोविनोद आ मुसुकी धरि तें व्यङ्ग्य सह्य वा क्षम्य कहल जाएत । किन्तु देखू अधोलिखित वाक्यसभ पाठकवृन्दपर की प्रभाव आनत—

"इएह बात तँ हमरा आइ धरि बूझ मे नहि आएल जे आखिर दुर्गापाठ लोक करैत अछि किएक ?"

"भगवानक जे पूजा करैत जाइत छिअन्हि से तँ भगवाने जनैत होएताह । हमरा तँ ओ खेले जकाँ बुझाइत अछि ।"

"हौ, हमरा तँ महाभारत देखला उत्तर इएह बूझि पड़ैत अछि जे यतोऽधर्मस्ततो जयः ।"

"देवताक बाते सभ उटपटांग होइत छन्हि ।"

"तें भोजनान्दकें हम सभसँ प्रबल मानैत छी । रसनाकें जाहि वस्तुसँ तृप्ति भेटए, सएह ब्रह्म थिक ।"

"हम पातिव्रत्य धर्मकें व्यभिचार कहैत छिऐक ।"

"हौ, ई सभ वचन कहए सुनए लेल होइत छैक ।"

"पाप-पुण्य बुड़िबक लेल होइ छैक । जे पारंगत छथि तनिका हेतु धर्म की आओर अधर्म की ?"

"मदिरा, मांस ओ मैथुन—एहि सभक वर्णनसँ तँ वेद भरल अछि ।"

हम उपर कहने छी जे ई असली श्री हरिमोहन बाबूक रूप नहि थिक—असली छथि उएह जाहि रूपमे ओ विनोद तँ प्रस्तुत करैत छथि, किन्तु विनोदक संगे दूरदर्शिता-पूर्वक स्वस्थ मार्ग प्रदर्शन करैत छथि । ताही-ताही ठाम श्री हरिमोहन बाबूक प्रतिभा कवित्वक यथार्थ रूप धारण कए लैत अछि ।

"खट्टर ककासँ भेट"वला गप्पमे (जे 'खट्टर ककाक तरंग'क द्वितीय संस्करणक भूमिकामे छपल अछि) ओ स्वयं कहैत छथि—

"हम तँ सोझ सोझ कहि दैत (कहि देल करैत) छिएक। तँ बदनाम भ जाइत छी। स्पष्ट वक्ताक कतहु गुजर होइत छैक ?"

किन्तु से ओ एतबे धरि नहि रहैत छथि। ओ तँ नव्यन्यायक,तार्किक छथि। आइ-काल्हुक ओकील छथि। जाही दिसि हुनका रखबन्हि ताही दिसुक ओकालति करताह। आधुनिक वा पाश्चात्य मान्यताहुक ओ तहिना निन्दक वा दोषदर्शक भए जाइत छथि, जेना भारतीय मान्यता सभक। एहि प्रसंग श्री हरिमोहने बाबू खट्टर कका मुहेँ जे कहैत छथि से सुनू—

"उद्धार इएह जे जखन फेर हमरा दोसर सूर चढ़त तँ एहि तरंगक जवाबो लिखा देबह। हौ, खट्टरक उत्तर खट्टरे द सकैत छथि।.......ई कोन भारी बात छैक ?"

ध्यान देबाक थिक जे श्री हरिमोहन बाबू अपन एहि रूपकेँ ततेक मार्मिक रूपेँ ओ दोगे-दोगे प्रकट करैत छथि जे बहुतो पाठकके बहुधा ओ ध्यानोपर नहि चढ़ैत छन्हि—लोक तँ प्रायः उपरे-उपरे दौड़ैत अछि। निकेँ विचारने हम इएह कहब जे असली श्री हरिमोहन बाबू एही रूपक छथि। भिन्न-भिन्न कथामे ओ कोना सन्हिआए-सन्हिआए कहैत छथिन्ह से देखू—निन्दा नहि, मार्गदर्शक विषय सभ—

"ई बात वैदिके युगसँ आबि रहल अछि। बूझह तँ अतिशयोक्ति हमरासभक वंशज गुण थिक।"

"भूतक मंत्र जनैत अछि पाश्चात्य देश। क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा—एहि पाँचो भूतकेँ ओ तेना क अपना वशमे कयने अछि जे सभ काज ओकरा सँ लए रहल अछि। आओर हमरालोकनि नकली भूतक फेरमे पड़ि उनटा सरिसव जोहने भेल फिरै छी।"

"असली पण्डित विद्याक अन्वेषणमे रहैत छथि, नकली पण्डित विदाइक अन्वेषणमे। असली पण्डित ज्ञानक विस्तार करैत छथि, नकली पण्डित धोधिक विस्तार। असली पण्डित मूर्खताक संहार करैत छथि, नकली पण्डित केवल मधुरक संहार।"

एताबता ई सिद्ध होइछ जे मूलतः श्री हरिमोहन बाबूक जीवनर्शनक जे हुनक कथासभमे श्रेष्ठ ओ सुव्यवस्थित विचार छन्हि से स्वस्थ छन्हि—हँ, यत्र-तत्र आस्थाक किछु कमी छन्हि। ओ "आर्यसमाजी" आधुनिक चकमकीसँ भसिआए जाइत छथि। हुनक निम्नलिखित वाक्यमे हमरा हुनक जीवन-दर्शनक निचोड़ देखाइछ—

> **"सभ काजमे अपन बुद्धि (विवेक) लगाबक चाही। केवल सिद्धांतक पाछाँ आँखि मूनि क चलने सिद्धान्तो भेटब कठिन। ....साप ससरि कए कतहुसँ कतहु चलि गेल आर हम सभ लाठी ल क लकीर पीटि रहल छी। युग बदलि गेल, परिस्थिति बदलि गेल, परन्तु हम प्राचीन संस्कृतिक नाम पर लठ्ठ भजैत, बुझै छी जे धर्मक रक्षा कए रहल छी।"**

एतेक जे लिखलहुँ से श्री हरिमोहन बाबूक कथा, कविता, लेख सभठाम विचारणीय थिक। तथापि ओ हिनक प्रमुख गुण थिकन्हि तेँ हम पहिने ओकरे प्रस्तुत कएल अछि।

कथाकारक रूपमे श्री हरिमोहन बाबू मुख्यतः सफल छथि। उपन्यास लिखबाक हुनकामे क्षमता तँ छन्हि, किन्तु ओ नीक उपन्यास नहि लीखि सकलाह। "कन्यादान" ओ "द्विरागमन" उपन्यासक

रूपमे असफल अछि। कोनो उपन्यासक कथानक जतेक जटिल, जतेक वहुचरित्र, जतेक विविधता ओ जीवनक लय वा धारामे वहैत स्वरूप धारण करैत अछि, ओहिमे लेखक एक घटनासँ दोसर घटना स्वाभाविक रूपेँ रसे-रसे चलैछ से श्री हरिमोहन वावू नहि कए सकैत छथि। तुलना करू शरदवावूक कोनो उपन्याससँ हिनक "कन्यादान"केँ। "कन्यादान"क असफलता तखन देखाएल जखन ओकर फिल्म वनल (अपना कारणेँ ओ विकृत फ़िल्म छल से विषय .कात रहओ)—ओहिमे कथानक किछु छैक नहि—मात्र एकटा कथाक (short story) कथानक छैक। उपन्यासमे जे जीवनक विविध रूप होइत छैक से देखवाक हो तँ श्री मणिपद्म वा श्री प्रभास कुमार चौधरीक उपन्याससभमे देखू। श्री हरिमोहन वावूक उपन्यास सभक कथानक कथासभक कथानक थिक—ओहिमे एकेटा छोटछीन ध्येय अछि, एकेटा चरम विन्दु अछि, आर समस्त वर्णन, लेखचातुरी, विन्यास ओतवे धरि सीमित अछि। कथाकार श्री हरिमोहन वावू वेजोड़ छथि—"टोटमा" लिअ, "पाँच पत्र" लिअ, "वावाक संस्कार" लिअ। सभमे चमत्कारपूर्ण एकेटा चरम-विन्दु (Climax) अछि। अत्यन्त रोचकता, अत्यन्त धारावाहिकता, अत्यन्त भाषाचमत्कार, अत्यन्त पूर्णतासँ चरित्र चित्रण अछि, वातावरण रचल अछि, रसक परिपाक अछि। किन्तु उपन्यासमे—देखू 'द्विरागमन'केँ—कथानक ढनमनाइत अछि; कृत्रिम ओ कठाइन घटनाक्रम दए कोनहुना एकटा कथानकसँ उपन्यास भरि देल गेल अछि।

श्री हरिमोहन वावूक कथाक सभसँ पैघ गुण अछि जे ओ मिथिलाक माटि-पानिसँ ओकरा गढ़ने छथि। कतहु एहन घटना वा कथा नहि कहैत जे मिथिलाक जीवनमे घटित नहि भए सकैछ। यथार्थ जीवन पर आधारित कोनो एकटा चरित्र, कोनो एकटा गप्प वा कोनो जीवनक एकटा झाँकी ओ अपना कथासभमे अनैत छथि ---इएह हुनक "टेकनीक" छन्हि जाहिसँ पाठक मुग्ध भए हुनक कथाकेँ पढ़ए लगैछ।

पढ़व आरम्भ कएला पर तँ हुनक ओजस्वी प्रसादगुणसँ ओतप्रोत भाषा ओ शैली पाठककेँ वशीभूत कए लैछ। फेर तँ ओ रस लेवए लगैछ आर डुवैत-उगैत, विनोद-परिहासक आनन्द लैत, काकूक्ति ओ कटाक्षक मर्म चखैत, भगवानक लीला जकाँ संसारक लीला देखैत कोना ने कोना रसक परिपाक पावि जीवनधाराक कूल पर पर पहुँचि जाइछ। श्री हरिमोहन वावू-एक शैलीमे हुनक कथाशिल्प सुनू—

> **"ई संसार एक अद्भुत रङ्गशाला थिक जाहिमे रंग-विरंगक पात्र अबैत छथि, आर अपन-अपन चरित्र देखाए पुनः नेपथ्यमे विलीन भए जाइत छथि। अपने लगमे चित्र-विचित्र दृश्य देखि पड़त। "नानारूपधराः देवाः विचरन्ति महीतले।"**

"एहि नाटकक सूत्रधार के? एहि खेलक रहस्य की छैक? केओ-केओ कहैत छथि जे ई सभ मिथ्या —मायाक खेल—थिक। यदि सएह वात हो तखन गंभीर चिन्ता करबाक प्रयोजने की? हँसि-हँसि क जीवनक आनन्द किएक ने लेल जाए? क्षणिके विनोद सही, रसक छिटका तँ भेटत। कोन ठेकान, कदाचित् एतबे मात्र सत्य होइक!"

तँ ई भेल श्री हरिमोहन वावूक कथाक तथ्य—जीवनक चमत्कार, जीवनक लीला, जीवनक कोनो मूल्यवान क्षण, जीवनक कोनो रूप-छटा। हम वुझैत छी हिनक कथासभक स्थायी सफलताक इएह स्रोत थिक। यद्यपि कथाक सफलता तँ साधारणतः मात्र ओकर मोनलग्गू भेनहि होइछ, आर से शक्ति हिनका कथामे अपूर्व अछिए! □

'पांच पत्र'कें पढ़ैत

श्री कुलानन्द मिश्र

मैथिली कथा अपना अवस्थामे अखनो बड़ छोट अछि। ई कथा भिन्न जे संस्कृत-परम्पराक आख्यान, उपदेशात्मक आ सुधारात्मक कथासँ प्रगति कऽ मैथिली कथाक साम्प्रतिक बोध समकालीन कथा-बोधक सहगामी भऽ गेल अछि। मैथिली कथा जखन अपन भाषा, वस्तु-बोध, शिल्प आ समन्वित अभिव्यक्ति लेल कोनो पथ बनौनिहार आ पथ देखौनिहार कृती रचनाकारक प्रतीक्षामे रहय, प्रो० हरिमोहन झा अपन क्रांतिकारी भाषा-दृष्टि आ धीपल युगबोधक संग, मैथिली कथाक अव्यवस्थित क्षेत्रमे प्रवेश कयलनि। हुनक युगान्तरकारी कृति 'कन्यादान' (उपन्यास) सँ मैथिली कथा-विधाकें व्यवस्थित आ समर्थ बहैत भाषा आ सशक्त अभिव्यंजना-शैली भेटलैक। प्रो० झा मैथिली कथा-विधाक प्रथम समर्थ उन्नायके टा नहि, बहुतो अर्थमे एकर स्वर आ भङ्गिमाक निर्धारको छथि। प्रो० झाक रचना-दृष्टिक पृष्ठभूमिमे निश्चित रूपसँ मैथिली कथाक विकास तीव्रतर भेलैक। मैथिली-कथाक ई अवधूत व्यक्तित्व बहुतो दूर धरिक यात्रा जल्दीये पार लगा देलनि। ओ मैथिली कथाक भाषा आ दृष्टिक विकासक सङ्ग-सङ्ग एक टा पाठक तैयार कयलनि आ ओहि पाठक-वर्गकें नव-रसज्ञताक अवगति सेहो प्रदान कयलनि।

मैथिल-समाज अखनो धरि मुख्यतः सामंती संस्कारक जकड़नमे अछि। मैथिली कथा-क्षेत्रमे प्रो० झाक पदार्पणक समय ई समाज आर भीषण रूपसँ एकर प्रभावमे रहय। स्वतंत्रता-पूर्वक जागरण-संस्कार आ अंग्रेजी शिक्षाक पश्चिमी प्रभावसँ परम्पराक सड़ल-गलल अंगक प्रति विरोध-भाव अलबत्त आरंभ भऽ गेल रहय। हास्य आ व्यंग्यक अनुपान सङ्ग प्रतिगामी संस्कार आ जीवन-शैलीक प्रति तीव्र आ कटु आलोचना-दृष्टि लेने प्रो० झा मैथिली कथामे तखने अपन योगदान-हेतु प्रस्तुत भेलाह। हुनक योगदान निश्चित रूपसँ प्रभावशाली छनि — मैथिली कथा-जगतक कोनो कथाकारसँ प्रायः अधिक महत्त्वपूर्ण।

प्रो० झाक प्रायः सभ कथामे, खाहे ओकर वर्ण्यविषय किछु हो, हास्य आ व्यंग्यक (अनेक स्तर पर) अंतर्भाव भेटत। अधिकांश कथाक शिल्प विषयसँ बहुत दूर धरि नियंत्रित रहितहुँ एक टा खास अव्यवस्थामे पड़ल भेटैछ—मैथिल संस्कारक बहुत ध्यान नहि देबऽबला मनःस्थितिमे गढ़ल। देखार रूपसँ फराक पड़ि जाइछ 'पाँच पत्र'—अपन शिल्प, भाषाक गतिमयता, अभिव्यक्तिक आर्द्रता आ स्पन्दन, सूक्ष्मता आ संक्षिप्तता एवं कोमल मानवीय विषयवस्तु लऽकऽ 'पाँच पत्र' प्रो० झाक प्रायः सर्वोत्तम कथा-रचना कहा सकैछ। पति-पत्नीक पारस्परिक जीवनक राग-वृत्ति आ समय-चक्रसँ तकरा पाछु धरैत जीवनक करुण बोध एक टा अद्भुत विरोधाभास आ दुखद एवं क्षोभजनक

मनःस्थितिकें जन्म दैछ। 'पाँच पत्र'क तीव्र वोध प्रो० झाक कथाकारक नव आ फराक मूल्यांकन आ विश्लेषणक आवश्यकताकें रेखाङ्कित करैछ।

'पाँच पत्र'क कथा-वस्तु प्रो० झाक कथा-भूमिमे नव क्षितिज जोड़ैत अछि। एकर कथा-वस्तु ओना छैक बड़ कम—कथा कहबा लेल मात्र वोधकें फरीछ करवा लेल। मात्र पाँच छोट-छोट पत्रक माध्यमसँ व्यक्त होइत एक टा मध्यवर्गीय मैथिल पत्नीक प्रति कालक्रमसँ वदलैत मैथिल पतिक मनःस्थितिक फरीछ चित्र एहिमे देखल जा सकैछ। एहि कथामे तीव्र यथार्थ-वोध छैक, सत्यक करुण स्वीकार छैक आ एहि सभकें बन्हैत एक टा आत्मीय संगीत छैक। एहिमे सामाजिक यथार्थक उपस्थिति एक टा फराकसँ पैघ बात अछि। एकर वस्तु कम होइतहुँ, प्रभावात्मकतामे महाकाव्यीय विस्तार, गरिमा आ शालीनतासँ मंडित अछि।

आब संक्षेपमे कथावस्तुक रेखा-चित्रपर कने ध्यान देब संगत होयत—'पाँच पात्र'मे पाँच पत्नक माध्यमसँ विवाहित जीवनक रागवृत्ति आ त्रासदीक सङ्ग-सङ्ग पारिवारिकताकें वड़ सूक्ष्म ढंगसँ चित्रित कयल गेल अछि। एहि पाँचो पत्रमे आरम्भसँ चारिपत्र एक पति (देवकृष्ण) द्वारा पत्नीकें सम्वोधित अछि आ पाँचम पत्र पिता (देवकृष्ण) द्वारा पुत्रकें सम्वोधित अछि। विशेप वात ई जे ई पाँचो पत्र दश-दश वर्षक अन्तरपर लिखल गेल अछि आ पति-पत्नीक सम्वन्धमें बोधक स्तरपर प्रायः दशकीय अन्तर दिश संकेत करैछ। एहि कालमानसँ कथाकारकें की अभीष्ट छनि से खूव स्पष्ट नहि, तखन अवस्था-वृद्धिक सङ्ग सम्बन्ध-बोधमे अन्तर वा तकर रूपान्तरण तऽ होइतहिँ छैक।

पहिल पत्रमे एक टा नवविवाहित पतिक पत्नीक प्रति मांसल प्रेम-भावकें अभिव्यक्ति भेटलैक अछि। कोनो विद्यालय वा महाविद्यालयमे पढ़ैत पति वड़ स्नेह-विगलित स्वरमे अपन विरह-व्यथाक करुण-गान करैछ। मिलनक लेल आतुरतासँ भरल ओ पति पत्नीक बाप-पित्तीपर खौंझ प्रकट करैछ जे ओकरा दू मासक वाद अयबाक बात लिखने छथिन। ओ भेँटक लेल पत्नीकें उचित मंत्रणा दैछ, चन्द्रहारक प्रलोभन दैछ। प्रो० झाक विनोदी स्वर पतिक प्रत्येक अभिव्यक्तिमे तऽ स्पष्ट अछि, मुदा अन्ततः तकर रूपान्तरण एक टा बड़ मधुर बिम्ब आ संवेदनामे होइछ।

दोसर पत्र शहरवासी अध्यापक पति द्वारा ग्रामवासिनी पत्नीकें सम्बोधित अछि। ई वैह छात्र देवकृष्ण छथि जे आब अध्यापक देवकृष्ण भऽ गेल छथि। देवकृष्ण एक टा सामान्य संस्कृत विद्यालयक अध्यापक छथि। कम-सँ-कम एक टा छेटगरि ननकिरबी आ एक टा ननकिरबाक बाप भऽ गेल छथि। नव अवस्थाक उन्माद समाप्त भऽ गेल छनि। पारिवारिक ओझरामे पड़ल जा रहल छथि। ननकिरबीक तुसारी पुजबाक बात, बेटा (बंगट)क स्कूल जयबाक प्रति जिज्ञासा, पत्नीक स्वास्थ्यक प्रति चिंता आ पत्नीक प्रति राग-बोधक सङ्ग-सङ्ग परिस्थिति-शासित व्यावहारिकताक चित्र एहि पत्रमे भेटैछ। पतिक काम-भाव आब अनुशासित भऽ गेल छैक, आतुरतामे लगाम लागि गेल छैक आ गार्हस्थ्यक विवेक देखार होमय लागल छैक।

तेसर पत्र एकटा प्रौढ़ निम्न-मध्यवर्गीय प्रवासी आ गृहस्थ पतिक पत्नीक नाम सम्बोधित पत्र अछि। स्पष्टे ई पत्रो देवकृष्ण द्वारा पत्नीकें लिखल गेल अछि। गामक अकालसँ नोकरिहा पतिक गड़बड़ होइत अर्थ-व्यवस्था आ तकरा पृष्ठभूमिमे बेटाक परीक्षा-फीस, अपन हथपैँच, खेतक मालगुजारी

चिल्हकाउर बेटीक सासुरसँ गाम अयबाक प्रस्ताव, तेसर संतानक (दोसर बेटीक) विवाहक चिन्ता आदिक बात एहि पत्रमे वर्णित अछि। पतिक अवस्था बढ़ि रहल छैक आ ओकर मोनमे जीवनक समस्या सभक समक्ष असहायता-बोध बढ़ल जाइत छैक। एहि ठाम अबैत-अबैत पत्नीक प्रति कोनो राग रहियो गेलैक अछि तऽ ओ महिसक त्रिसुखब सन छोट बातक अड़मे नुका जाइत छैक। निम्न-मध्य-वर्गक प्रौढ़ पतिक समस्या-संकुल जीवनमे पत्नीक प्रति राग-वृत्तिक एना क्रमशः सुखा जायब बड़ स्वाभाविक बात होइत छैक।

चारिमो पत्र अही वय-दुर्बल पति देवकृष्ण द्वारा पत्नीकेँ सम्बोधित अछि। आब ई पति जीवनसँ आर हारि गेल लगैछ। बेटाक व्यवहारसँ खौंझायल, पुतहुक व्यवहारसँ असंतुष्ट, बेटा द्वारा पुतहुकेँ अपना काजक जगहपर लऽ जयबाक बातसँ अप्रसन्न, पत्र द्वारा अपना कमाइसँ कोनो सहयोग नहि करबाक प्रवृत्तिसँ निराश देवकृष्णक संघर्ष-शक्ति चूकैत सन लगैछ। ओ तथापि बेटाक सुमतिक हेतु शुभकामना करैत छथि आ पत्नीक प्रबोधन करैत छथि जे माय कुमाता कहियो नहि होथि। देवकृष्णक पत्नीक प्रति पति-रूपमे आब सभ राग-चेतना शिथिल भऽ गेल छनि। आब मात्र सम्बन्धक संचेतना आ कर्त्तव्य-बोधसँ व्यवहार नियन्त्रित होइत छनि, कोनो भौतिक आधार लग नहि रहि गेल छनि।

पाँचम पत्र काशीवासी वृद्ध आ अशक्त देवकृष्ण द्वारा अपन बेटाकेँ सम्बोधित अछि। एहि वृद्ध देवकृष्णकेँ अपन शेष जीवनक सामान्य सुविधा आ पत्नीक जेहन-तेहन गतिओक लेल कुपुत्र पुत्र आ कुलच्छनि पुतहुक करुण भावसँ अभ्यर्थना करब आवश्यक लगैत छनि।

एहि पत्रमे पहिने देवकृष्ण अपन कष्ट आ दीन अवस्थाक वर्णन कय बेटाक हृदयमे अपना प्रति दया उत्पन्न करैत छथि। बूढ़ि ग्रामवासिनी पत्नीक लेल किछु जिज्ञासा अवश्य छनि, मुदा ताहि लेल अपने यात्राक कष्ट उठायब आवश्यक नहि बुझैत छथि। हुनका (देवकृष्णक) सेवा जोगर जखन ओ नहि छथिन तऽ फेर विशेष बाते कोन। कहुना गति भऽ जाइन सैह एक लाख। फेर पत्रमे पुतहुक प्रशंसा आ पत्नीक कुचेष्टा सेहो बूढ़ देवकृष्णकेँ लिखब आवश्यक लगैत छनि। बेटाकेँ प्रसन्न करबाक ई करुण आ अमोघ मंत्र एहि वर्गक प्रायः सभ बूढ़ पढ़ैत अछि जे वृद्धावस्थाक असहायावस्थामे आर्थिक रूपसँ बेटापर अवलम्बित होइछ।

एहि पत्रक अन्तमे बूढ़ा देवकृष्ण प्रचलित 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति'क पैरोडी 'कुमाता जायेत क्वचिदपि कुपुत्रो न भवति' अपना बेटाक अतिरिक्त खुशामदमे लिखैत छथि। ई कने कान आ मोनमे खटकैत अछि, मुदा बूढ़ बापक असहाय मोनक थरथरी अहूमे देखल जा सकैछ।

एहि पाँचो पत्रक माध्यमे एक टा निम्न-मध्यवर्गीय पति-पत्नीक सम्बन्धक ई शोक-गीत यथार्थक स्वर तऽ रखिते अछि, अपन प्रभावमे अतिशय द्रावक सेहो अछि। प्रो० झा स्वयं एकटा सामान्य मध्य-वर्गीय जीवनसँ आयल लोक छथि। कथाक स्वर, विषय-वस्तु, प्रस्तुति, प्रभान्विति—सभ ओहि जीवनकेँ अनेक स्तरपर उद्घाटित करैत अछि। एहि जीवनमे पति-पत्नीक रागात्मक सम्बन्धक करुण परिणति बड़ तथ्य-सम्मत आ स्वाभाविक थिक। एहि पाँचो पत्रक माध्यमे मात्र सामान्य मध्यवर्गीय मैथिल पति-पत्नीक कालक्रमसँ बदलैत सम्बन्धे टाक करुण उद्घाटन नहि होइछ, तत्कालीन संस्कृत मध्यवर्गीय मैथिल समाजक फरीछ चित्र सेहो उपलब्ध होइछ।

छठम दशकमे मिथिलामे जमींदारी प्रथा समाप्त भऽ गेल छल। स्वतन्त्रता आ पश्चिमी जागरणक प्रभावसँ सुगबुगाइत मिथिलामे परम्परासँ लड़ाइ तऽ नहि, मुदा परम्पराक गलित अङ्गक प्रति तीव्र विरोध अवश्य देखबामे आबय लागल रहैक। लग-पासक वा दूरोक साहित्यसँ आयल बोध आ चेतना मैथिली कथा-कविताकेँ नव संस्कार देमय लागल रहैक। एहि कालमे कवितामे मधुप, सुमन, यात्रीक बाद राजकमलक प्रवेश भेल रहनि आ कथा-क्षेत्रमे प्रो० झा, उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास' आ मनमोहन झाक बाद ललित, राजकमल आ प्रो० मायानन्द मिश्र अवतरित भेलाह। प्रो० झा प्राचीनतासँ अनुशासित नवताक प्रतिनिधि कथाकारक रूपमे मैथिली कथाक श्रीवृद्धि कयलनि। ओ मैथिली कथाक भीष्म पितामह छथि, अपन अनुशासनसँ आबद्ध। एहि कथाकारक प्रौढ़ि आ दृष्टि-सम्पन्नताक अन्यतम उदाहरणक रूपमे वर्ष १९५९मे प्रकाशित 'पाँच पत्र' छठम दशकक मैथिली कथाक प्रायः प्रतिनिधि कथा सेहो कहल जा सकैछ।

प्रो० झा अपन भाषामे सहजता तथा अपन ग्रामीण क्षेत्रक विशेष बान्ह आ सुगंधि लऽकऽ सहजहिँ चिन्हार होइत छथि। एहि पाँचो पत्रमे चारि पत्र एक सामान्य संस्कृत-शिक्षित पति द्वारा सामान्य शिक्षिता पत्नीकेँ सम्बोधित अछि। सम्बोधनक विशेष भंगिमासँ पतिक संस्कृत मनःस्थितिक परिचय भेटैछ। एकर भाषा मध्यवर्गीय मैथिल संस्कृत-समाजक भाषा थिक जाहिमे संस्कृत भाषाक भङ्गिमा छैक, आलङ्कारिक छटा सेहो छैक, सहजता छैक, लोक-सम्मत प्रयोग छैक आ विषयक प्रति आत्मीय अनुभूतिक सुगंधि छैक। किछु पाँती रसानुभूति लेल प्रस्तुत अछि।

(i) अहाँक लिखल चारि पाँती चारि सय बेर पढ़लहुँ।

(ii) परन्तु हमरा ओ अहाँक बीचमे भारी भदवा छथि अहाँक बाप-पित्ती जे दू मासक बाद फगुआमे हमरा आबक हेतु लिखैत छथि। ६० वर्षक बूढ़केँ की बूझि पड़तनि जे ६० दिनक विरह केहन होइ छैक।

(iii) से आइ काल्हिक बेटा-पुतहु जेहन नालायक होइ छैक से तँ जनले अछि। हम हुनका खातिर की-की ने कयल। कोन तरहे बी० ए० पास करौलियनि से हमहीं जनैत छी। तकर आब प्रतिफल दऽ रहल छथि। हम तँ ओही दिन हुनक आस छोड़ल जहिया ओ हमरा जिबितेँ मोँछ कटाबऽ लगलाह।

(iv) जे हमरा (पति-पत्नी) लोकनि ३० वर्ष मे नहि कयलहुँ सेई (बेटा-पुतहु) लोकनि तीन मासमे कऽ देखौलनि।

(v) आब काशी विश्वनाथ कहिया उठबैत छथि से नहि जानि। संग्रहणी सेहो नहि छुटैत अछि। आब हमरा लोकनिक दबाइए की? औषधं जाह्नवी तोयं वैद्यो नारायणो हरिः।

(vi) चि० पुतहुकेँ हमर शुभ आशीर्वाद कहि देबनि। ओ गृह-लक्ष्मी थिकीह। अहाँक माय जे हुनकासँ झगड़ा करैत छथिन से परम अनर्गल करै छथि। परन्तु अहाँकेँ तँ बूढ़ीक स्वभाव जनले अछि। ओ भरि जन्म हमरा दुःखे दैत रहलीह।

एहि पाँती सभमे मैथिल संस्कार आ विशेष-विशेष संवेदनाकें बड़ सूक्ष्मता आ सहजतां सँ पकड़बाक प्रयास भेटत। बोधक स्तरपर आतुरतोमे अनुशासन छैक तऽ भाषाक स्तरपर तीव्र अभिव्यक्तियोमे अनुशासनक छाप फरीछ छैक। एहि कथाक भाषापर तथा एहि भाषाक भंङ्गिमापर संस्कृतेतर कोनो भाषाक दूरस्थो प्रभाव नहि छैक। ई एकटा सुखद तथ्य जकाँ लागत।

ई कथा पाँच पत्रकमाध्यमे अपन आकार आ अभिव्यक्ति पबैछ। एहि पाँचो पत्रक विषय अपनामे सेहो पूर्ण अछि आ सभ मिलिकऽ एकटा पूर्ण बोध फराक सेहो बनबैछ। शरीरक भिन्न-भिन्न अङ्गक क्लोजप आ फेर तखन सम्पूर्ण शरीरक सम्पूर्ण चित्र—एक-एक पत्रमे पूर्ण होइत खाश-खाश बोध, ओहि बोध सभसँ स्पष्ट होइत एकटा खाश जीवन-बोध जे अन्तिम परिणति जकाँ वस्तु-निष्ठ थिक।

एहि कथाक शिल्प मैथिली कथा लेल तहिया एकदम नवीन जकाँ छल। कथाक वस्तु-बोध व्यापक आ गंभीर होइतहुँ संश्लिष्ट नहि छैक आ तें एकर शिल्पोमे एकटा सहज सौंदर्य छैक—किछु संक्षिप्त, मुदा तरासल, किछु ठोस, मुदा मधुर।

'पाँच पत्र' मैथिलीक किछु आङ्गुर पर गनबा जोगर कथामे अबैत अछि। प्रकाशन-कालसँ आइ धरि एकर मूल्याङ्कन धनात्मके होइत अयलैक अछि। 'पाँच पत्र' अखनो धरि एकटा कोमल आ धड़कैत आ मधुर चेतना तथा करुणा आ उदास नियति-बोधक कथाक रूपमे मैथिलीक अन्यतम सफल कथा थिक। एकर अंतिम पत्रक अंतमे 'पुनश्चः' कहिकऽ जोड़ल पाँती जे (देवकृष्ण पत्नीकें इंगित कय बेटाकें लिखने छथि)अद्भुत करुणा आ व्यंग्यक बोध मोनमे उत्पन्न करैछ —"यदि कोनो दिन बूढ़ीकें किछु भऽ जाइन तऽ अहाँ लोकनिक बदौलति सदगति होयबे करतनि। जाहि दिन ई सौभाग्य होइन ताहि दिन एक काठी हमरो दिससँ धऽ देबनि।"

कथाकें समाप्त करैत ई दुनू पाँती पाठककें एक बेर फेर पति-पत्नीक टिमटिमाइत राग-सम्बन्धक बात मोन पाड़ैछ आ नियतिक करुणा आ तकर अनुभूति सङ्ग, मोनकें उदास आनन्दसँ भरि दैछ।

●

प्रो० हरिमोहन झाक कथा-दृष्टि

श्री रमानन्द झा 'रमण'

प्रो० हरिमोहन झा जखन कथा-लेखन दिस प्रवृत्त भेलाह तँ मैथिलीमे कथा-लेखनक परिपाटी खूब फरिच्छ नहि भेल छल। हिनकासँ पूर्व श्रीकृष्णठाकुरक ''चन्द्रप्रभा'' तथा बाबू तुलापति सिंहक ''मदनराज चरित'' उपन्यास मित्रलाभक शैलीमे प्रकाशित भए चुकल छल तथा काली कुमार दास, श्यामानन्द झा, श्रीवल्लभ झा, काञ्चीनाथ झा 'किरण' आदि प्रथम उत्थान-कालक मैथिलीक कथाकार मौलिक कथालेखन दिस बढ़ि गेल छलाह। एहि क्रममे कुमार गंगानन्द सिंहक एक कथाक चर्चा सेहो कएल जाइछ, मुदा से उपलब्ध नहि अछि। ओहि समय धरि मैथिलीमे किछु उपन्यास सेहो प्रकाशित भए गेल छल, जाहिमे अधिकांश उपन्यास आलोच्य कथाकारक पिता पं० जनार्दन झा ''जनसीदन''क छलैन्हि। ''मिथिला मित्र'', ''मिथिला'', ''श्रीमैथिली''क माध्यमसँ जे कोनो कथा प्रकाशित भेल छल से निर्विवाद रूपेँ मैथिली कथा-साहित्यक अमूल्य निधि छल आ अछि, किन्तु प्रो० हरिमोहन झाक रचना '**तार कोना पढ़ाओल गेल**' सँ जे एक पराक्रमी विस्फोट होइछ, साहित्याकाशमे बाल अरुणक मनोहारी स्वरूपक दर्शन होइछ, मैथिली साहित्यकेँ राजदरबारक तहखानासँ बाहर कए जन-जन धरि पहुँचाबएवला किरण-पुँज समक्ष अबैछ; से अन्यत्र नहि भेटैछ। प्रायः इएह किरण-पुंज कथाकारकेँ उपन्यासकार बना दैछ तथा पहिले वेर मैथिलीमे सँठबायोग्य सामग्री उपलब्ध होइछ।

एकटा सामान्य जिज्ञासा होएब स्वाभाविक अछि जे मैथिली कथाक प्रथम विकास-युगमे किंवा ओकर बादो राष्ट्रिय स्वाधीनता संग्रामक पृष्ठभूमिमे कथा-लेखन दिस मैथिलीक कथाकार कोन कारणेँ प्रवृत्त नहि भेलाह ? जखन देशमे चारूकात महात्मा गांधीक नेतृत्वमे पराधीनताक कलंक पोछबा लेल लोक सक्रिय छल, अन्य भाषाक साहित्यकार जनमानसकेँ जगएबा लेल अपन लेखनीकेँ स्वच्छन्द छोड़ि देने छलाह तखन प्रो० हरिमोहन झा सन संवेदनशील, कलानिपुण आ दूरदृष्टिक कथाकारक लेखनी स्वाधीनता संग्रामक दिस ससरल किएक नहि ? एतय ई तर्क देल जाइछ जे मिथिलांचल देशक अन्यभाग जेकाँ राजनीतिक चेतनासम्पन्न नहि छल। मुदा, ई तर्क ओतेक साक्ष्यसम्मत नहि अछि जतेक ई जे मैथिल रचनाकार कोनो प्रकारक खतरा उठएबा लेल तैयार नहि छलाह। मुदा, कारण जे कोनो होइक, ई सत्य जे प्रो० हरिमोहन झा राष्ट्रिय जागरणमूलक साहित्यक रचना दिस प्रवृत्त नहि भेलाह । ई कथा-लेखन लेल सामाजिक क्षेत्रकेँ आधार बनाओल।

प्रो० हरिमोहन झाक कथा-साहित्यक अवलोकनसँ ई धरि अवश्य स्पष्ट भए जाइछ जे ओ छीप नहि पड़ैत छथि। विकृति एवं विडम्बनाक जड़िकेँ समूल उखाड़ि फेकबाक प्रयास करैत छथि। कारण,

हुनक स्पष्ट मान्यता प्रतीत होइछ जे छीप पङ्लासँ किछु दिन लेल खेतमे रौद लागि सकैछ मुदा ओहिसँ, स्थायी समाधान नहि होइछ। ई स्पष्ट अछि जे जँ जड़ि साफ रहतैक तँ ने तँ चुट्टी लगतैक आ ने दिवाड़ खएतैक। जड़िमे रौद-बसात लगला पर ओ लहलहैवे करतैक। देशक जड़ि भेल समाज, समाजक जड़ि भेल लोक। तेँ जँ लोक सुधरि जाए, ओ अपन दायित्वसँ परिचित भए जाए, अन्हारमे साँप मारब छोड़ि दिअए, तँ देश स्वतः सबल भए जाएत। आ, प्रायः एही धारणासँ कथाकार प्रो० हरिमोहन झा सामाजिक रूढ़ि, अन्धविश्वास आ जड़ता पर प्रहार कएल अछि, स्वस्थ समाज-निर्माणकेँ दृष्टिमे राखि चरित्रकेँ ठाढ़ कएल अछि।

प्रो० झा जखन कथालेखन क्षेत्रमे अएलाह तँ मिथिलाक समाज कोला-कोलामे बाँटल छल। प्रत्येक गाममे कमला, कोशी आ लखनदेइ उत्तरे-दक्षिणे बहैत छलीह। आभिजात्य आ सुखीसम्पन्न वर्गक जिरातक सुरक्षा हेतु नियम-कानून छल। बाबाक अमलदारीसँ चल आबि रहल समाजिक कलुषकेँ काछि फेँकबाक बदलामे ओकरा प्रश्रय देल जाइत छल। ओकरा प्रश्रय देनिहार समाजमे पूज्य छलाह। माइनजन बनल छलाह। एहन त्रिकट स्थितिमे समाजकेँ फँसल देखि ओहिसँ मुँह मोड़ब प्रो० झा लेल सम्भव नहि छलैन्हि। तैँ प्रायः ओ सामाजिक कलुषक ओधिकेँ उपाड़ि देबा लेल प्रवृत्त भेलाह।

प्रो० झाक कथामे समाजक विभिन्न क्षेत्रमे पसरल विकृति पर समधानि-समधानि प्रहार कएल गेल अछि। सामाजिक जीवनक एहन कोनो क्षेत्र नहि अछि जे हिनक आँखिक समक्ष नहि आएल हो। कौखन धार्मिक रूढ़ि पर प्रहार करैत छथि तँ कौखन सामाजिक रीति-रेवाज पर। कौखन समाजक लेल अमंगलकारी व्यक्तिकेँ चौबटिया पर छहोछित करैत छथि तँ कौखन चुपे-चाप अपन काज सुतारबा लेल अपस्याँत लोककेँ अपन व्यग्यवाणसँ भुजैत छथि। परन्तु प्रत्येक स्थितिमे तार्किक परिणति भेटैछ। भाषामे प्रवाह भेटैछ। जाहि कारणेँ व्यंग्यास्पद पाठकक समक्ष प्रस्तुत भेल लगैछ। ई कौशल कथाकारक कला-निपुणता, संवेदनशीलता, समस्याक भीतर पैसि देखबाक आ बुझबाक शक्तिक परिचायक थिक। प्रो० हरिमोहन झाक कथाक शैली कतेक सरल छैन्हि, वर्णन करबामे ओ कतेक निपुण छथि, छोटसँ छोट स्थिति अथवा घटनाकेँ कोना विश्वसनीय बना दैत छथि, तकर उदाहरणस्वरूप हिनक कथा 'टोटमा'केँ देखल जा सकैछ।

प्रो० झाक कथा **'रेलक अनुभव'** मे एक दिस जँ अपन भाषाक प्रति ममत्व आ एकत्वक शक्ति प्रकट होइछ तँ दोसर दिस आन मातृभाषाक प्रति अनादर भाव पोसनिहार मैथिलपर व्यंग्य सेहो अछि।

मैथिल समाजमे नारी जातिक प्रति कतेक दुर्भावना रहल अछि, ओकरा प्रति कतेक अन्याय कएल जाइत रहलैक अछि, तकर उदाहरणस्वरूप **'कन्याक जीवन'** कथा देखल जा सकैछ। एहि कथाक परिहारपुरवालीक करुणास्नात शब्द—"**हे औ पाहुन! अहाँ अपनासँ हमरा कियैक मिलान करै छी? अहाँ पुरुष छी और हमरा लोकनि जखने कन्या भऽ कऽ जन्म लैत छी तखने सभ किछु अवधारि लैत छी। ओहि समय नेनामे ज्ञान नहि रहय, तेँ अहाँ सँ बराबरी करैत रही, हमरा सँ जे अपराध भेल हो**

से बिसरि जायब''—कोनो एक परिहारपुरवालीक नहि थिक, अपितु मिथिलाक गाम-गाममे स्थितिक चक्का तर पिसाइत नारीक करुण-गाथा थिक ।

एतए भारती आ लखिमाक जातिकेँ दुर्गति कएनिहार मिथिलाक सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य अछि । ''**पाँच पत्र**'' कथामे कथाकार जीवनक अनित्यताक दर्शन करबैत छथि । लोकक मन; स्थिति, आयु बढ़ैत गेला पर कोना बदलैत जाइछ, तकर दर्शन एहि कथामे होइछ ।

आइ-कालिह कतेक व्यक्ति जन्म लैतहि कलम भाँजए लगैत छथि, मुदा एक-आध वर्षक बाद हुनक संवेदनशीलता भोथ भऽ जाइत छैन्हि । जाही वेगेँ ओ अबैत छथि, ओही वेगेँ चलिओ जाइत छथि । परंच प्रो० हरिमोहन झा जाहि गति आ तीव्र संवेदनाक संग कथालेखनमे प्रवेश कयलन्हि, ओही तीव्रता आ तत्परताक सङ्ग अखन धरि कथा लिखैत छथि । जीवने जकाँ कथालेखनमे कतेक उतार-चढ़ाव होइत रहैछ, मुदा प्रो० झाक जे जीवन-दृष्टि आरम्भमे छलन्हि, ओहिमे अनवरत विकास आ परिष्कार भेल अछि । अखन धरि ओहि जीवनमूल्यक प्रति प्रो० झा कतेक आस्थावान छथि तकर प्रमाण अछि हिनक नवीनतम कथा '**कालाजार**'। प्रो० झाक कथादृष्टि मिथिलाक सामाजिक प्रगति पर प्रारंभे सँ केंद्रित रहल अछि आ से आइयो ओहिना अक्षुण्ण अछि ।

प्रो० हरिमोहन झाक कविता

डा० विश्वेश्वर मिश्र

मैथिली-साहित्यक साधारण पाठक तँ हरिमोहन बाबूक अर्थ बुझैत छथि "कन्यादान" ओ "द्विरागमन"क उपन्यासकार, अर्थात मैथिलानीक त्रुटि दिशि स्पष्ट संकेत कए समाजमे सुधारक मार्ग प्रशस्त कएनिहार। हरिमोहन बाबूक अर्थ बुझैत छथि मैथिलीक सर्वश्रेष्ठ व्यंग्यकार अर्थात् मिथिलाक प्रणम्य देवताअहुकेँ प्रणम्य बनओनिहार। हरिमोहन बाबूक अर्थ अछि मिथिलाक "रंगशाला"क रहस्यकेँ उद्घाटित कएनिहार। हरिमोहन बाबूक अर्थ अछि मिथिलाक काकु ओ वक्रोक्तिक वैशिष्ट्यकेँ, खट्टरककाक तरंग'क माध्यमे अभिव्यञ्जित कएनिहार। प्रो० हरिमोहन झाजीक आइ अर्थ बूझल जाइत अछि समस्त रसिक समुदायकेँ 'चर्चरी' ओ 'एकादशी'क द्वारा रसपान करओनिहार। मिथिलाक हास्य सूनए चाहैत छी, मैथिलीक व्यंग्य ओ काकु बुझए चाहैत छी तँ "खट्टर ककाक तरंग" पढ़ू, ओ "खट्टर ककाक तरंग" पढ़ए चाहैत छी तँ मैथिली सीखू मैथिली पढ़ू, इएह थिक मैथिली साहित्यक हेतु प्रो० हरिमोहन झाजीक शाश्वत अवदान। इएह थीक झाजीक काव्य कृतिक सत्य जे शिवक संग-संग सुन्दरो अछि।

मुदा प्रो० हरिमोहन झाजी अपन कोनहु काव्य विधासँ कम श्रम कए अपन कविता कामिनी केँ नहि सजाओल अछि। प्राचीन परिवेशमे प्रादुर्भूत ओ दर्शन-शास्त्रक निविष्ट पण्डित झाजी अपन कविता कामिनी केँ सामन्तवादी रंगटीपसँ नहि प्रसाधित कए कारखानामे उत्पादित नवीनतम सौन्दर्य प्रसाधनसँ 'मेक-अप' कएल अछि। अतः हरिमोहन बाबूक कविता कामिनी मे ने "नव रसक" बहुरंगी लावण्य भेटत ओ ने हुनक अलंकारक "ध्वनि' कर्णगोचर होएत। झाजीक कविता कामिनी आजुक कुंठित ओ संत्रस्त समाजक विविध समस्यासँ आकुल व्याकुल छथि। रहु माछक प्रसंग हो अथवा ढाला झाक प्रसंग, ओ टी पार्टीक प्रसंग हो अथवा मूल्य वृद्धिक प्रसंग, हरिमोहन बाबूक कविता-कामिनी एही समस्यासँ व्यथिता छथि। अतः झाजीकेँ जखन कखनो अपन कविता-कामिनीकेँ सजएबाक भेलैन्हि तखन इहो ओहि नव उपमान, नव प्रतीक, नव विम्बसँ सजाओल जे समस्त अत्याधुनिक कविताकेँ अनुप्राणित कएलक। हिनकहु कवितामे ओएह नवीन कल्पना, ओएह नवीन भावना, ओएह नवीन शिल्प शैली ओ ओएह नवीन भाषा छन्द भेटैत अछि जे आइ समस्त काव्य कृतिकेँ अनुप्राणित कएने अछि।

हमरा जनैत हरिमोहन बाबूक कवित्व प्रतिभा हिनक कथा उपन्यास मध्य मुखरित भेल। अतः एहि वर्गक हिनक कविता कोनहुने कोनहु प्रसंगक पृष्ठभूमिमे रचित भेल अछि। मुदा प्रसंगानुकूल होइतहुँ ई कविता सब 'मुक्तक'क गुण गरिमासँ सर्वथा सम्पन्न अछि। प्रसंगसँ पृथकहु रहला पर एकरा सबहक रस-बोधमे कोनहु प्रकारक बाधा नहि पड़ैत छैक। 'मुक्तक'क कसौटी पर ई कविता सब पूर्णतः

सफल उतरैत अछि। उदाहरणार्थ हिनक एक गोट सुप्रसिद्ध कथा 'माछक महत्त्व'क ई कविता देखल जाए—

हरि, हरि ! जन्म किएक लेल ?
रोहु माछक मूड़ा जखन पेट नहि गेल ?
मोदिनीक पलइ तरल जीभ पर ने देल।
घृत महँक भुजल भाकुर कंठ मे ने गेल।
लाल-लाल झिंगा जखन दाँत तर ने गेल।
माछक रस झोर सँ चरणामृत ने लेल।
माछक अंडा लय जौं नैवेद्य नहि देल।
माछे जखन छाड़ि देब, खाएब की बकलेल।
सागेपात चिबैबाक छल त जन्म किए लेल।
हरि ! हरि ! जन्म किएक लेल ?

एहिना "खट्टर ककाक टटका गप्प" क एक 'नव नचारी' सेहो देखल जाए सकैत अछि :—

केहन भेल अन्हेर ओ बाबा, केहन भेल अन्हेर ॥
भात भेल दुर्लभ भारत मे, सपना धानक ढेर।
मकइ मखानक कान कटै अछि, अल्हुआ खाथि कुबेर।
मड़आ मिसरिक भाव बिकाइछ, जीरक भाव जनेर।
सभसँ बुड़िबक अन्न खेसारी, सेहो रुपैये सेर।
टाका भेल टकाही, वस्तुक हेतु मचल अछि रेड़।
धर्म वला धक्का खाइत छथि, पापिक हाथ बटेर।
सह सह अछि करैत साँप सन, चोरवा सबकेर जेर।
बाबा अहाँक त्रिशूल हाथमे काज देत कोन बेर।
जनता दुखसँ हहरि रहल अछि ताकि दियौ कनडेर।
हे हर ! अहाँ बहीर भेल छी, आबो सुनियौ टेर।
ओ बाबा केहन भेल अन्हेर ॥

अपन "कविजी" शीर्षक कथामे तँ हरिमोहन बाबू दश गोट "मुक्तक"क नियोजन कएने छथि। एहि दशोक प्रथम पंक्ति सबे अछि—

हे श्रमिक ! कष्ट लखिकय अहाँक
भय हृदय जाइत अछि फाँक-फाँक !

+ + +

अयि ! अनन्त कोमल करुणे !

+ + +

हे हे मजूर ! हे हे मजूर !

\+ + +

हे वीर ! हलायुध ! धरू खड्ग !

\+ + +

हे हे मजूर ! हे हे मजूर !
जीवन अहाँक अछि चूर-चूर !

\+ + +

अयि प्रचंड चंडिके !

\+ + +

घोड़ा पर फानि चढ़ि गेली, तानि छाती, केश ।
राशि कें लपेटि औ समेटि निज साड़ी ओ ।

\+ + +

प्रिये ! हम जाइत छी ओहि पार।

\+ + +

सभ पावनि संग मिलि कय कैलहुँ ।

\+ + +

हे प्रगतिशील महिला समाज !

\+ + +

एहि मध्यक कतोक कवितामे हरिमोहन बाबू समाजक आर्थिक विषमताक स्पष्ट चित्र अंकित कएल अछि। एहने एक गोट चित्र प्रस्तुत भेल अछि निम्नलिखित पाँतीमे—

नित सूखल रोटी अहाँ खाइ,
अनका हित दय खोआ मलाइ ।
धनिकक कूकुर हलुआ चटैत,
बच्चा अहाँक अछि मुँह तकैत ।
तरसैत हाय ! दू दिनक सहल,
भरि पेट अन्न बिनु बिलटि रहल ।
ज्वर लगलो उत्तर, दूध बिना,
रकटैत रहै अछि राति दिना,
औषध वैद्यक खंलबैत धून,
जगसँ चलि दै,अछि आँखि मूनि ।

एहिना अपन एकांकी 'आयाची मिश्र' मे हरिमोहन बाबू तीन गोट कविताक निबन्धन कएने छथि। एहि एकांकीक प्रारम्भे होइत अछि "मातृ वन्दना" सँ। एहि "मातृ वादना"मे मिथिलाक प्राचीन गौरव गारिमाक उपाख्यान कएल गेल अछि। "मातृ वन्दनाक" प्रारम्भ एहि पाँतीसँ भेल अछि।

धन्य धन्य मातृभूमि ! सकल ज्ञान गुणक खानि !
धन्य तों पवित्र माँटि ! धन्य अमृत तुल्य पानि !
धन्य तों बसात जाहिमे बहैछ ब्रह्मज्ञान !
धन्य तीर्थ सदृश देश शान्त तपोवन समान।
कोन देश मे भेलाह नृप विदेह सन महान ?

एहि एकांकीक दोसर कवितामे मिथिलेशक दरबारक यशगान कएल गेल अछि। ई वस्तुतः गीत थीक जे "काफी" रागमे नियोजित भेल अछि, एहि गीतसँ हरिमोहन बाबूक संगीतप्रियता ओ संगीतज्ञता सेहो सूचित होइत अछि। एहि गीतक प्रारम्भिक वाक्य थीक "धन्य ई मिथिलेशक दरबार"। मुदा एहू सबसँ चमत्कारक भेल अछि एहि एकांकीक ओ कविता जाहिमे हरिमोहन बाबू अयाचीक डीहक महत्ता स्थापित कएल अछि ? एहि कविताक अन्त निम्नलिखित अवतरणसँ कयल गेल अछि।

हे डीह ! सत्त्वगुण मूर्तिमान
पदरज जकरा मे विद्यमान
होएत ब्रह्मर्षिक ठाम-ठाम
हे धूलि ! अहाँकेँ अछि प्रणाम !

एहि सबहक अतिरिक्त "एहि बाटे अबै छथि सुरसरि धार" शीर्षक "छाया रूपक" "पोखरि परक गप्प" शीर्षक "भोला बाबाक गप्प" आदिमे सेहो कविताक निबन्धन कएल गेल अछि।

प्रो० हरिमोहन झा रचित दोसर वर्गक कविता थीक "पद्यकथा" अथवा "कथा-काव्य"। हरिमोहन बाबूक एहि वर्गक उपलब्ध रचनामे महत्वपूर्ण थीक "टी पार्टी" ओ "ढाला झा" "टी पार्टी"मे पाश्चात्य परिपाटीक उपहास कएल गेल अछि। ठेठ शब्दक बाहुल्य ओ छन्दक स्थान पर लयक प्रधानता एहि कथा-काव्यक वैशिष्ट्य थीक। एहिमे ठाम-ठाम अंगरेजी शब्दक प्रयोग हरिमोहन बाबूक कविताक सरलता सहजता, ओ स्वाभाविकता सूचित करैत अछि, जे हिनक अभिव्यक्तिकेँ सुष्ठु बनाए देलक अछि। एहि "टी पार्टी"क परिणति निम्नलिखित शब्देँ कवि व्यक्त कएल अछि—

"उत्तर देलिअन्हि "बस पार्टीक ने नाम लियऽ
सोझे जाउ भानसमे, पजारू गऽ आँच शीघ्र।
खीचड़ि और साना बनाउ जतेक जल्दी होय
और ई कार्ड लऽ कऽ चूल्हि मे कोंचि दियऽ।

"ढाला झा"मे हरिसिंहदेवीय व्यवस्थाक कुपरिणामक वर्णन कएल गेल अछि। एहि कथा-काव्यक भाषा, अभिव्यक्ति कौशल ओ लयक परिचयार्थ ई उद्धरण देखि सकैत छी :—

भोरे उठि ढाला झा ससुर कँ बजाओल निज
"औ फल्लाँ झा ! अहाँक ओतय आएल छी काज सँ ।
चारिकठ्ठा ब्रह्मोत्तर मरना अछि पड़ल हमर
एहि बेर छूटि जाएब परम जरूरी अछि ।
एही हेतु आयल छी, ततबा विदाइ करू ।
दऽ कऽ रुपैया महाजन कँ अदाय करी ।"

प्रो० हरिमोहन झाक कविताक तेसर वर्ग हम ओहि रचनाकेँ मानैत छी जे पूर्णतः मुक्तक काव्यक परम्परामे रचित भेल अछि । परिमाणक दृष्टिसँ एहि वर्गक कविताक संख्या बेसी नहि अछि मुदा जएह अछि से आधुनिकताक दृष्टिसँ महत्त्वपूर्ण अछि । कारण, एहि सबमे वर्त्तमान कालक विविध समस्याक वर्णन भेल अछि। उदाहरणार्थ "महगी" शीर्षक कविताक कतोक पाँती देखि सकैत छी, जाहिमे वर्त्तमान कालक अकास ठेकैत मूल्य वृद्धि, चोरबजारी, भ्रष्टाचारी, घुसखोरी आदिक ऊहा-पोहक वर्णन कएल गेल अछि—

ई महगी मुँह बौने अछि भीषण घरियार जकाँ
वस्तुक दाम बढ़ल जाइछ सुरसाकेर धार जकाँ
चोरिबजार बला अछि निर्भय ढीठ हुराड़ जकाँ
भ्रष्टाचारी कचरि रहल अछि छुट्टा साँढ़ जकाँ
\+ \+ \+
डालरकेँ छनि धोधि पोखरि मोहार जकाँ
जनता अछि कुहरैत सितारक टूटल तार जकाँ
अमला प्यादा चपरासी छथि कठकोकाड़े जकाँ
बिना दक्षिणा बाम रहथि खिसिऐल बिलाड़ि जकाँ
जीवन उघइत अछि जनता हकमैत कहार जकाँ
हाकिमकेँ सभ किछु भेटैत छनि सासुरक भार जकाँ....।

प्रो० हरिमोहन झाक उक्त कवितादिक उल्लेख ओ विश्लेषण-विवेचन कए हम इएह कहए चाहैत छी जे हिनक कवित्व हिनक सम्पूर्ण व्यक्तित्वक एक अंश थीक । अंश कतबो लघु रहत, मुदा एकर अभावमे सम्पूर्णता नहि प्राप्त भए सकैत छैक । कारण अंशहिक समुदाय थीक सम्पूर्णता । अतः कवित्व हरिमोहन बाबूक व्यक्तित्वक कतबो छोट अंश रहए; मुदा एकर बिना हिनक सम्पूर्ण व्यक्तित्वक परिचय नहि प्राप्त कएल जाए सकैत अछि । हमर मान्यता अछि जे हरिमोहन बाबूक सम्पूर्ण व्यक्तित्वक हिनक कवित्व एक अनिवार्य अंश थीक, अतः हरिमोहन बाबूक अध्येतासँ हमर साग्रह अनुरोध अछि जे हिनक कविताक विस्तारसँ अनुशीलन-परिशीलन करथि, एहिसँ हरिमोहन बाबूक काव्य-प्रतिभाक ओहि अंश पर प्रकाश पड़त जे अखन धरि अचर्चित रहल अछि । हम तँ हरिमोहन बाबूकेँ ओतबए सफल कवि मानैत छिऐन्हि जतबा सफल ई एकांकीकारक रूपमे छथि, कारण काव्य-कृतिक महत्ता परिमाणत्मकतामे नहि छैक, गुणात्मकतामे छैक । ओ आजुक परिवेशमे हिनक कविता पूर्णरूपेँ गुणात्मक अछि । हरिमोहन बाबू एक सफल कवि थिकाह जनिक कविता मैथिलीक पाठककेँ एक नव दिशाक बोध करबैत अछि ।

कवि हरिमोहन झा

श्री मोहन भारद्वाज

साहित्यिक रसास्वादनक हमरासभक जे रुचि रहल अछि ताहि पृष्ठभूमिमे हास्य-रचनाकारक ई नियतिए कहबाक चाही जे केओ ओकरा गंभीरतासँ नहि लैत छैक। जहिना हास्य-रचनाकार स्थिति वा व्यक्तिक विद्रूप उपस्थित कय ओकर हँसी उड़बैत अछि तहिना ओहि साहित्यकारोकेँ लोक मजाकिया मुद्रामे ग्रहण करैत अछि। फुरसतिएक घड़ीमे एहन साहित्यकार विनोद हेतु स्मरण कयल जाइत छथि। मुदा ई स्थिति तखन होइत अछि जखन साहित्यकार केवल हास्य उत्पन्न करबाक लेल विना कोनो संयत उद्देश्यक विनोदभावेँ किछु कहैत अछि। हास्यक संग व्यंग्य जुटि गेलासँ रचनाक स्वर बदलि जाइत छैक। रचना धरगर भ' जाइत छैक। आ, ओहिपर पाठकक तीव्र प्रतिक्रिया होइत अछि। प्रो० हरिमोहन झाक रचनामे हास्य अछि, किन्तु सज्जारूपमे, ओकर आन्तरिक स्वर व्यंग्यक अछि। साँच अछि हास्यक, पकवान व्यंग्यक। हिनक पाठक हिनकापर हँसलनि अछि, खौंझयलनि अछि, आ माथपर हाथ धऽ कने सोचबो लेल विवश भेलनि अछि।

मुदा कोनो रचनापर पाठकीय प्रतिक्रिया व्यक्त करब भिन्न बात थिक, ओहि रचनाकारक कृतिक विवेचन-विश्लेषण कय ओकर दायकेँ स्वीकारब भिन्न बात। प्रो० हरिमोहन झाक उपन्यास, कथा एवं व्यंग्य (खट्टर ककाक तरंग) यद्यपि वेस चर्चित-प्रशंसित भेल अछि, किन्तु से मुख्यत: पाठकक दुआरे, इतिहासकारक साहित्यालोचन बुद्धिएँ नहि। हिनक कविताकेँ तँ साफे कतिया देल गेल अछि। हास्य-कविताक विवेचन-क्रममे हिनक कविताक चर्च भेल अछि, किन्तु कवितापर गप्प करैत हास्य-व्यंग्य कवितोपर किछु कहि देल गेल अछि आ ओहिमे प्रो० हरिमोहन झा सेहो आबि गेलाह अछि। वस्तुसत्यक प्रति एहन उदासीनता वा उपेक्षासँ तथ्यक अपलाप होइत अछि! ई सत्य जे हास्य आ हास्य-मिश्रित व्यंग्यक अवलम्बन लऽ कऽ कविता लिखनिहार लोकनि संख्यामे छथिओ थोड़, तथापि हुनक कविताकेँ विवेचनक बाट धऽ कऽ जाइए नहि देबाक प्रवृत्ति श्रेयस्कर नहि कहा सकैछ।

प्रो० हरिमोहन झाक कविताक मर्म बुझबाक लेल तत्कालीन सामाजिक संदर्भकेँ बूझब आवश्यक अछि। हिनक प्रथम कविता थिक 'सनातनी बाबा ओ कलियुगी सुधारक'। ई 'मिथिला'क प्रथमे अंक अर्थात् अप्रील, १९२९मे छपल। उल्लेखनीय थिक जे व्यंग्य-चित्रक नीचाँ एहि कविताकेँ राखल गेल छल। ओहि समयमे व्यंग्य-चित्रक छपबे महत्त्वपूर्ण छल, ओकर संग एहि कविताक छाब आओरो अर्थवान। एही पत्रिकाक दोसर अंकमे हिनक दोसर कविता आयल—'कन्याक निलामी डाक'। एहि कवितासभक शीर्षके कहैत अछि जे कविक वर्ण्य-विषय की छल, कविताक

धार केम्हर छल। कविक ई मानसिकता निराधार नहि छल। सामंती संस्कार आ मान्यताक प्रति कविक जे आक्रोश व्यक्त भेल अछि से वायवीय नहि थिक। मिथिलामे ओहि समय बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, बहु-विवाह आदिक प्रचलन छल। बाल-विवाहक प्रथासँ मैथिल-संस्कृति तँ प्रभावित भइए रहल छल, संस्कृतक सामाजिक आ व्यवस्थापरक अवमूल्यनसँ शिक्षा-प्रणाली सेहो ह्रासोन्मुख भऽ गेल छल। स्वयंवरक माध्यमसँ बिआह करयबाली सीताकेँ आदर्श मानिओकऽ मिथिलाक समाज एतेक संकीर्ण भऽ गेल छल जे ओकर बेटी-पुतहुकेँ ककरोसँ गप्पो कयनाइ अनुचित बूझल जाइत छलैक। पुरुषसँ गप्प करब असभ्यताक सूचके नहि, दुश्चरित्रताक परिचायक मानल जाय लागल। फलतः पुरुषपर ओठङल समाजमे नारीक कोनो स्थान नहि रहल। ओ गेन बनि गेलि। सिरकी-सभ्यता जनमल आ पतरैत गेल। आ, एहिसभक जड़िमे छलाह मिथिलाक पंडित। अहंवादिता, संकीर्णता तथा अन्धविश्वासक शिखरपर विराजमान पंडितलोकनि मिथिलाक जन-जीवनकेँ एहि प्रकारेँ जकड़ि देलनि जे लोक औना उठल। ठीक एही समयमे दरभंगा महाराज कामेश्वर सिंह विदेश-यात्रा कयलनि। बड़ पैघ घटना भेल। विद्यावाचस्पति पं० मधुसूदन झा, उग्रमोहन ठाकुर आदिक विदेश-यात्रासँ मैथिल समाज ओतेक उद्वेलित नहि भेल छल जतेक कामेश्वर सिंहक यात्रासँ भेल। स्वाभाविके। जातिपरक समाजमे महाराजक जे स्थान छल, मिथिलाक उद्योगहीन आ अभिकेन्द्रित अर्थव्यवस्थापर मिथिलेशक जे आधिपत्य छल, ताहिमे सामाजिक मान्यता आ दैनन्दिन कार्यकलापकेँ हुनक गतिविधिसँ प्रभावित होयब आवश्यक छल। महाराज जखन बिलायत गेलाह तखन आचार आ परम्पराक व्यूहकेँ ढहैत देखि प्राचीन विचारधाराक पक्षधरलोकनि ओकर विरोध कयलनि। समाज दू दलमे बँटि गेल—'स्वदेशी आ विलैती'। पंडित लोकनिमे दूगोला भऽ गेलनि। पंडिताउ आचार-विचार आ अङरेजिया रहन-सहनक ई मतभेद पारिबारिक स्तर पर लोककेँ खंडित कऽ देलक। पंडितसभ अङरेजियालोकनिकेँ बारि देलनि, अङरेजियासभ पंडित लोकनिकेँ मोजर देब छोड़ि देलनि। मुदा महाराजक कारणेँ किछु पंडितो अङरेजिया सभक जेरमे आबि गेलाह। सामान्य लोक, जकरा ने संस्कृत पढ़ल छलैक आ ने अङरेजिये, षट्कर्मी पंडितक पाखंड-जालसँ त्राण पयबाक लेल बेगर्तित छलथहे। परिणाम ई भेल जे सामाजिक स्तरपर पंडितसभक अखंड वर्चस्विता खंडित होमय लगलनि। लोक अपना घरक टाटमे जङला ताकय लागल।

एही संक्रमणकालक रचनाकार छथि प्रो० हरिमोहन झा। हिनक पिता पंडित छलथिन, मुदा उदार प्रवृत्तिक। ई अपनहुँ संस्कृत पढ़लनि, ओकरा गुनबो कयलनि, लेकिन शिक्षा-दीक्षा भेलनि अंगरेजीक माध्यमसँ। १९२९ ई० मे ई अंगरेजी आनर्सक संग स्नातक भेलाह, आ ओही वर्ष, जेना कहि आयल छी, हिनक प्रथम कविता प्रकाशित भेल। एहि कविताक संगहि हिनक एक टा लेख सेहो 'मिथिला'क प्रथमे अंकमे छपल—'स्त्री शिक्षाक वर्तमान दशा'। अंगरेजी आनर्सक संग स्नातक भेनाइ, सनातनी बाबा ओ कलियुगी सुधारकपर व्यंग्य-कविता लिखनाइ तथा स्त्री-शिक्षाक दशापर लेख प्रकाशित करौनाइ—ई संयोगे मात्र नहि छल। एहिसँ हिनक अध्ययन एवं विचारक दिशाक ज्ञान होइत अछि, दुनूक एकसूत्रताक पता चलैत अछि।

प्रो० हरिमोहन झाक लेल पद्य ओ गद्य महत्त्वपूर्ण नहि अछि, कथा ओ कविता महत्त्वपूर्ण नहि अछि—महत्त्वपूर्ण अछि सामाजिक स्थिति। सामाजिक व्यवस्था ओ गतिविधिक खबरि लेब ई अपन प्रथमे रचनासँ शुरू कऽ देलनि आ से एखन धरि लैत रहलाह अछि। कहल जा सकैछ जे हिनक सम्पूर्ण रचनाक

दू टा प्रमुख विन्दु थिक— पंडित ओ मेम। संकीर्णता एवं यथास्थितिवादक स्वरूप पंडित, उन्मुक्तता तथा परिवर्त्तनशीलताक प्रतीक मेम। कन्यादान-द्विरागमनसँ लऽ कऽ खट्टरककाक तरंग धरिक विस्तार एही दुनू केन्द्र-विन्दुसँ भेल अछि। हिनक कविता कोनो आन दुनियाक वस्तु नहि। ढाला झा, वुचकुन बाबा, निरसन मामा, घूटर काका आदि कवितामे रूढ़िवादी मनोवृत्तिपर प्रहार कयल गेल अछि। ई सभ टा कथा-कविता थिक। सम्पूर्ण स्थितिसँ साक्षात्कारक लेल प्रतीकक आश्रय लेल गेल अछि। ई आवश्यको छल। चरित्रकेँ एहि रूपेँ ठाढ़ करब जे ओ सामने आबि जाय, पाठककेँ व्यंग्यक मर्म धरि पहुँचबाक सोझ अवगति दैत छैक। ढाला झाक परिचय दैत कवि कहैत छथि—

यैह थिका ढाला झा, लुट्टी झाक परपौत्र
नरहा पाँजि, बासी ककरौड़क, बेलौंचे वंश।

ई हुनक सामान्य परिचय थिक। विशेष परिचय अछि—

मैल फिट्ट फाटल पुरान पाग माथ पर
कान्ह पर देने गोबनौर सन अंगपोछा
कँने खल्वाट मे त्रिपुण्ड पर ठोप तीन
दाना रुद्राक्षक पँघ बान्हल टीकमे
कुम्हड़क बीया सन-सन तीन दाँत मुँहमे छन्हि
बगय खँटास सन पित्त लोहछल सन मूँह
सटर-सटर बात केवल विष सन बजैत छथि ई
चारिम विवाहमे बिकायल छथि लावापुर

ढाला झाक ई विशेष परिचय अर्थवान भऽ जाइत अछि जखन पबैत छी जे—

हाथमे फराठी नेने पहुँचल छथि सासुर ई
कइएक वर्ष बाद बकाया ओसूलक हेतु।

तथाकथित भलमनसाहतकेँ भजयबाक एहि भाँजपर कविक व्यंग्य स्पष्ट अछि। वुचकुन बाबा, निरसन मामा, घूटर काका—सभ समगोत्रिए छथि। केओ ककरोसँ कम नहि। आ, ईसभ तँ उदाहरण मात्र छथि। सड़-सड़ करैत मिथिलामजीवी लोकक कमी नहि। कवि एहन लोकसभकेँ ताकि-ताकि कऽ देखार करैत छथि।

लोकेपर नहि, ओहि सभ परिपाटी आ संस्थानपर प्रो० हरिमोहन झा प्रहार करैत छथि जे समाजकेँ जकथक अवस्थामे रखबाक लेल उत्तरदायी अछि। हिनक एक कविता अछि 'बूढ़ानाथ'। भागलपुर-स्थित बूढ़ानाथ महादेवक मंदिर आ ओकर परिसरक सजीव चित्रण द्वारा कवि पूजा-पाठ, जप-तप, ध्यान-तर्पणक वास्तविकताकेँ विवस्त्र कऽ कऽ राखि देलनि अछि। अनुभवक विभोरतामे स्थितिक गंभीरताकेँ राखब कठिन होइत छैक, मुदा स्थितिक गंभीरते जखन अनुभवक विभोरता बनि जाय तँ कविताक एक-एक शब्द बजैत चलैत छैक—

बहुतो दिनसँ नाम सुनल छल
आइ अहाँकेँ देखल बूढ़ानाथ
बूढ़ो भेला सन्ता रंगरसिया छिऐ अहाँ
छी कटैत नवका छैला केर कान नित्य

मुग्धा वाला तरुणी प्रौढ़ा
हरियर-पीयर साड़ीवाली
नित झुंड-झुंड घेरने रहैछ।
चट्टीवाली, चोटीवाली
चमकी वाली, चोली वाली
सभ आबि आबि बेरा-बेरी
पचकल लोढ़ा केँ कनेक छूबि
मानै छथि अप्पन बड़ सोहाग !

अगिआयल जेना रही अहाँ
ढारै अछि सभ क्यो जलक धार
चढ़बै अछि ठंढा बेलपात
दै अछि चहुदिस चन्दन चोभार।

अहूँ पसीजि कय पानि-पानि
भेले रहैत छी अहोरात्र
भीजल रहैछ रस मे डूबल
पचकल लोढ़ा अंगुष्ठ मात्र।

लै फूलपात माला-लोटा
सह-सह करैत छथि भक्तवृन्द
केओ टीकवला, केओ ठोपवला
केओ भस्मवला, रुद्राक्षवला
मुंडक ऊपर त्रिपुंडवला
तौनी रमनामा छापवला
बम-बम करैत ब्रु ं-ब्रु ं करैत
तिनपढ़ियावाली दिस तकैत
नहि किछु तऽ घंटे डोलबैत
दरबार लगौने अछि अहाँक
जे चाहै छथि सायुज्य मोक्ष।
× × ×

धारक तँ कोनो वर्णन नहि
जहिठाम रहै अछि नित बहार
टिकुलीवाली हँसुलीवाली
बुलकीवाली नथुनीवाली
निर्धोख अपन अँगिया उतारि
सीढ़ी पर बैसल पीठ खोलि
पाँखुरमे साबुन लगा-लगा
छाती भरि जलमे बैसि-बैसि
मलि-मलि करैत उन्मुक्त स्नान
पुरुषक छातीकें दलकबैत
तिनको किछु-किछु विचलित करैत

ऊपर बहरा तौतल युवती
कीनै छथि गद्दी ओ ऐंठा
पेड़ा लड्डू तोता मैना
मेला - घुमनी बारहमासा
औ आँचरमे दोना भरि कऽ
बूढ़ानाथ लेʼ लै छथि प्रसाद !

घाटक बाटक फाटक पर सौं
एलहुँ जँ सड़कक आर-पार
बूढ़ानाथक मन्दिर समीप
देखल मदनक पसरल बजार
सह-सह करैत छथि कामदेव
लागल अछि रति रानिक कतार।

अछि नगरपालिका धन्य एहन
जे करइछ धर्मक ई प्रचार
तीर्थ - स्थानक ई महोद्धार
बूढ़ानाथक ई जयोद्‌गार

हे जीर्ण-शीर्ण पचकल पाथर
सरिपहुँ छी पाथर अहाँ भेल
पथरायल तीनू आँखि आब
तें झाम गुड़ै छी चुप बैसल
किछु सक्क लगै अछि जौं नहि तँ
व्यर्थे गाड़ल छी एहि ठाम
बहराउ काज लोढ़ाक दियऽ
खट्टरकाका पिसताह भाङ।

एहि कविताके लगभग सौंसे उतारवाक प्रयोजन ई जे सटीक शब्दक प्रयोग आ भाषाक प्रवाहसँ कविताक व्यंग्य कतेक चोखगर भऽ गेलैक अछि से स्पष्ट भऽ जाय। असभ्यताक स्तर तक ठेकल स्त्री-गणक दिनचर्या ओ सायुज्य मोक्षकामी धर्माचारीक आचरणसँ लऽकऽ नगरपालिकाक उदासीनता धरि कविक आक्षेपक आधार जुटबैत अछि। धार्मिक क्रियाकलाप एवं धर्मपीठक मनोवैज्ञानिक व्याख्या, पौराणिक संदर्भक विचाराभिव्यक्तिक माध्यम-रूपमे प्रयोग एहि कविताकें एक टा विशिष्ट अर्थवत्ता प्रदान करैत अछि। शब्द-चयनक खूबी थिक जे कविता पढ़ैत जाउ, बिम्ब बनैत जायत। ओना, कविता पढ़ैत काल बिम्ब अनेक बनत, मुदा सम्पूर्ण कविताक जे बिम्ब बनत तकर ध्वन्यात्मकता छटपटी छोड़ा देत। एहि कवितामे कविक उद्देश्य धार्मिक भावनापर चोट करब नहि अछि; कारण धार्मिक भावना रहय तखन ने ओहिपर चोट कयल जाय !

प्रो० हरिमोहन झाक रचनाक सम्बन्धमे कहल जाइत अछि जे एहिमे मिथिलाक संस्कृतिकें दूरि करबाक नेतसँ एहिठामक पंडित आ हुनक आचार-विचारक विध्वंस कयल गेल अछि। ई आरोप उचित नहि। प्रो० हरिमोहन झा जहिना कर्मकाण्डी पंडितक वाह्याडम्बरपर बमकैत छथि तहिना पाश्चात्य सभ्यताक अखरकट्टू सभपर सेहो गुरड़ैत छथि। हिनका सिरकी-सभ्यता नहि सोहाइत छनि तँ मेम-सभ्यता सेहो स्वीकार नहि छनि। एही दुनू छोरक तर्कसम्मत आ व्यावहारिक समन्वय हिनक काम्य रहलनि अछि। 'हम पाहुन छी, पहुनाइ करब' केर उद्घोषक जहिना उपहासास्पद, 'टी-पार्टी'क आयोजको तहिना निन्दनीय। असलमे प्रो० हरिमोहन झा पंडितक नहि, पंडितामक विरोधी छथि, तिरहुतक नहि तिरहुतामक निन्दक छथि।

'**पण्डित छथि शास्त्रार्थ, मेम डांस। पंडित प्रायश्चित, मेम रोमांस**'क अतिवादी स्थितिकें दुसैत ओ जाहि निष्कर्षपर पहुँचैत छथि से इएह थिक जे '**पंडित ब्रह्म छथि, मेम छथि माया**'। बदलैत सामाजिक स्थितिपर 'पंडितक विलाप'कें रेखांकित करयवला कवि 'पंडित लोकनिसँ' कहैत छथि —

हे पण्डित आवहु दया करू
खरना-परना लए नहि झगड़ू
मदवा कें दूर बहार करू
नहि अतीचार पर आव लड़ू
संकीर्ण दृष्टि कें त्याग करू
चिरयुगक अन्धविश्वास हरू
नव सत्यक आविष्कार करू
विज्ञानक किछु भंडार भरू
विद्याक ज्योति-विस्तार करू
अपना देशक उद्धार करू
जों से नहि लागय पार, तखन
नीचाँ उतारि निज पाग धरू
हे पण्डित आवहु........।

ई उपदेश नहि, शुभकामना थिक। पहिलुक ढाठीपर चलयवला पंडित लोकनि जँ अपन महिस कुड़हरिए नथबाक अभ्यास नहि छोड़ताह तँ काल-चक्रमे पिसा जेताह, आ तेँ कविक अनुरोध जे ओ लोकनि समयक संग चलथि।

प्रो० हरिमोहन झा 'मातृभूमि-वन्दना' मुक्तकंठसँ कयलनि अछि। मिथिलाक पांडित्य परम्पराक स्तुतिगान करबामे हुनका प्रसन्नता छनि—

कोनठाँ होइछ एहन वाचस्पति सम ज्ञान
कोनठाँ होइछ एहन गंगेश सन विद्वान
कोनठाँ होइछ एहन जनकक सदृश राजर्षि
कोनठाँ होइछ एहन गौतम सदृश ब्रह्मर्षि।

'मिथिलाक माटि' केर वर्चस्व एतबे लेल नहि अछि जे एतय एक-सँ-एक विद्वान भेल छथि, एकर महत्त्व एहू लेल अछि जे एहन गोपी सिनुरिया आम आ सुन्दर फलेना जाम, एहन सुन्दर दही केर छाँछ आ सुकुमार माङुर माछ; एहन सुअदगर तरल तिलकोर आ अरिकोंच पटुआ झोर, एहन कोमल वड़ी ओ बड़ आ ललमुँहा रोहुक धड़' कोनोठाँ भेटयवला नहि अछि।

मैथिल पंडितक अवदानकेँ स्वीकारैत मिथिलाक सांस्कृतिक मर्यादाक वन्दक प्रो० हरिमोहन झा आगू बढ़य चाहैत छथि, आ एहिमे जतऽ जे अवरोधक तत्त्व भेटैत छनि तकरा खखोरिकऽ फेकवामे कनेको तारतम्य नहि करैत छथि। हिनक ई प्रगतिकामिता शुरूएसँ छनि। 'मिथिला-मिहिर'क मिथिलांक (१९३५ ई०) मे 'मिथिलाक मिहिरसँ' ई कहैत छथि—

मिथिलाक सरोवर मध्य आइ
दारिद्र्य, अविद्या, अनाचार
कौचर्य, कलह, ऋण रोगबन्ध
आदिक पसरल समतरि सेमार
चाही न आब शिशिरक प्रभात
आनू ग्रीष्मक मध्याह्न काल
सभ टा सेमार जरि होय धार
धधकाउ तादृशे तीव्र ज्वाल।

१९५३ ई० मे लिखित 'आगि' शीर्षक कविताक निम्न पंक्ति द्रष्टव्य थिक—

रातिमे हम स्वप्न देखल, आगि लागल, घर जरैये
चार सभ पुरना धधकि कय, जोरसँ धू-धू करैये
जरि रहल अछि सनसनाकय, पाँजि केर पोथाक ढेरी
राख भय सिद्धान्त सभ, पछबाक लहरा मे उड़ैये
× + +
होलिका केर एहि दहन मे, भस्म सभ किछु भय रहल अछि
किन्तु ओहि चिताक ऊपर, एक नवका घर उठैये।

पच्छिमी सभ्यताक लहरिमे मैथिल-सिद्धान्त उड़ि गेल, नवका घरो ठाढ़ भऽ गेल, मुदा ओहि घरमे रहयवला लोकक स्थिति देखि कविकेँ 'छगुन्ता' लगैत छनि—

कहू बात की, देखि किछु ,नहि फुरैये
अजगुत देखइ छी, छगुन्ता लगैये
साँढ़ खेतमे पंसल सभटा बीया चरैये
जोतयवला अन्न बिना हकन्न कनैये
कोयल अछि चुप बैसल, उल्लू राग अलापैये।
गदहा जा उद्यान मे अंगूर कचरैये।

स्पष्ट अछि जे प्रो० हरिमोहन झा समाज आ ओकर स्थितिक प्रति सभ दिनसँ साकांक्ष छथि। अपन लोकवेद, अपन समाज कोना आगू बढ़त सैह हुनक चिन्ता छनि। प्रारम्भमे ओ धार्मिक आडम्बर तथा रूढ़िवादिताकेँ थुर्री-थुर्री उड़ौलनि, तकरा बाद जेना-जेना स्थिति बदलैत गेल, हुनक कविताक विषय-वस्तु सेहो तदनुकूले होइत गेल। ''चालिस आ चौहत्तरि'मे युगक अन्तराल चित्रित अछि तँ 'गरीबिनिक बारहमासा'मे सामान्य लोकक पराभवक मार्मिक वर्णन भेटैछ। महगीपर तँ हिनक कइएक कविता प्रकाशित भेल अछि। एतेक धरि जे खट्टरकका अपन टटका गप्प महगीएपर अन्त करैत छथि— नवका नचारी गबैत।

रोगीक दर्दकेँ कम करबाक लेल आपरेशन-थियेटरमे संगीतक धुन वजायब नीक बूझल जाइत छैक। प्रो० हरिमोहन झाक व्यंग्य-कवितामे हास्यक उपस्थितिक इएह अभिनय थिक। मुदा, संगीतक तान एतेक तेज भऽ जाय जे रोगीक कुहरबो सुनबामे नहि आबय अथवा शल्य-चिकित्सक स्वयं ओहि मे तन्मय भऽ जाय तँ से घातको भऽ सकैत अछि। प्रो० झाक जाहि कवितामे हास्यक सुर तेज अछि, ओतय हिनक व्यंग्य ओही रोगीक कुहरनाइ जेकाँ सुनबामे नहि अबैत अछि। यात्रीजीक कवितामे रोगीक आर्त्तनाद बेसी स्पष्ट सुनाइत अछि। कारण, यात्रीजी हास्यकारक मुद्रामे कविता नहि लिखैत छथि। हुनक कविताक वातावरण बेसी प्रत्यक्ष आ गंभीर रहैत अछि। यात्रीजी प्रगतिशील कवि छथि, हुनक डेगो पैघ छनि। प्रो० हरिमोहन झाक 'निरसन मामा' जहिया बिना खेने-पीने भागिनक ओतयसँ पड़ा आयल रहथि तहियो यात्रीजीक 'ठीठर मामा' पिन्टूमे जलखै आ महेन्द्र घाटक होटलमे भोजन कयलनि। 'बूढ़ानाथ' आ 'नव नचारी'मे दृष्ठिकोणजन्य स्वरभिन्नता स्पष्टतः बुझबामे अबैत अछि। यात्रीजी प्रगतिशीले नहि, जनवादी छथि। प्रो० हरिमोहन झाक संग एहि प्रकारक विशेषणक प्रयोग उचित नहि। तखन एतेक धरि अवश्य जे ई श्री चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' जेकाँ यथास्थितिवादी नहि छथि। हिनका गरीब किसानक दलानपर जोड़ा बड़द देखिकऽ दुःख नहि होइत छनि, हिनका दुख छनि तँ एहि बातक जे ''बड़दक दाम बढ़ल जाइत अछि बऽरक मोल जकाँ।'' आ, तेँ हिनका साफ देखाइत छनि जे—''जनता मनमे उमसि रहल अछि प्रौढ़ कुमारि जकाँ।''

प्रो० हरिमोहन झा परिवर्त्तनकामी छथि—तर्कसम्मत नवोन्मेषक आग्रही। ओ यात्रीजीक जनवादी चेतना धरि भने नहि पहुँचैत होथि, मुदा यात्रीजीक प्रति हुनका ममता छनि—

लाख देश-विदेश घूमह, पाबि नित सत्कार
लाख क्रांतिक गीत गाबह, दूत बनि साकार
लाख जागृति केर फूकह शंख बारम्बार

लाख कविता मध्य तों बरसा करह अंगार
किन्तु, अपना घरक लेखें तों प्रचण्ड बताह
पण्डितक लेखें तोहर रचना परम मरखाह।

एहि मैथिली-सन्तानके अपन समाज सम्मान नहि दऽ रहल अछि से प्रो० हरिमोहन झाकें अत्यन्त दुःखद लगैत छनि। तें मैथिल-समाज ओ संस्कृतिकेर उन्नायक लोकनिपर व्यंग्य करैत कहैत छथि—

जखन मरि जेबह तखन तोरा हेतह सम्मान
ठाम-ठाम सभाक द्वारा हेतह शोकक गान
ओ तरौनी मध्य तोरो मूर्ति हेतौ ठाढ़
और वंशजमे उमड़तह स्नेह अतिशय गाढ़
आ जयन्ती मध्य तोहर हेतह यशकेर गान
किन्तु एखन करह तावत मूक तों विषपान
हे हमर सन्तान !

हास्य आ व्यंग्यक अवलम्ब लऽ लिखनिहार रचनाकारमे विषयक प्रति फरीछ आँखि आ मूल कथ्यक प्रति अकुंठ आपकता होयब आवश्यक छैक। जखन रचनाकार लग कहवा लेल कोनो ठोस आ अतिशय अनुभूत बात नहि रहतैक, हास्य ओकर कविताक बगयकें विश्वसनीय नहि बनय देतैक। मात्र एहन स्थिति आ तथ्यसभक चित्रण जे पाठकक मनोविनोद तँ करय, हँसाकऽ लोट-पोट कऽ देमय, मुदा तकरा संगहि पाठकके भीतरसँ हिला नहि देमय, एहि पद्धतिक रचनाके ठाढ़ होयबाक निस्सन भूमि नहि दैत छैक। प्रो० हरिमोहन झाकें स्थितिक बड़ फरीछ ज्ञान छनि, तकर सम्मत आ विरोधी पक्ष बूझल छनि, आ ओ ओहि स्थिति सभसँ नमरैत वस्तु-सत्यकें देखि पबैत छथि। ओ मात्र स्थितिकें राखि आँखि नहि मूनि लैत छथि। हुनका केवल एकरे चिन्ता नहि छनि जे कविताक पाँती सभसँ आगाँक लोक चमत्कृत भऽ रहल अछि—हँसि-हँसिकऽ ताली लगा रहल अछि—भने ओ बात सभ कोनो एक उद्देश्यक, गोत्रक आ स्थानक हो वा नहि। प्रो० हरिमोहन झा अपन रचनामे ई सतर्कता रखैत छथि जे हास्यक वेगमे अनटोटल बातसभ ने कहा जाय। तें हिनक रचनाक उपाङ्ग सभ मूल आत्माकें आहत नहि करैछ। तखन ईहो धरि अवश्ये जे यात्रीजी जेकाँ ई कविताक बाहर नहि देखैत छथि। यात्रीजी अपन कविता समाप्त करैत काल लागत जे आगाँ मुँह तकैत कवितासँ बाहर आँगुरसँ कोनो खास बिन्दुपर संकेत करैत होथि, प्रो० हरिमोहन झा अपन कविताक संगहि विराम लैत छथि।



एकांकीकार हरिमोहन झा

डा० बासुकी नाथ झा

मैथिली साहित्यक क्षेत्रमे प्रो० हरिमोहन झा एक एहन नाम अछि जकरा अपना युगक सर्वाधिक लोकप्रिय किंवा चर्चित-प्रशंसित साहित्यकारक अभिधा प्राप्त छैक। गद्य, पद्य एवं एकांकी (दृश्य काव्य) तीनू क्षेत्रमे अपन वर्चस्विता स्थापित कएनिहार विरल साहित्यकारक श्रेणीमे हिनक गणना गौरवपूर्वक होइत अछि। हिनक साहित्यिक व्यक्तित्व बहुमुखी रहल अछि। अपन उपन्यास कन्यादान, द्विरागमन तथा हास्य व्यंग्यपूर्ण गद्य रचना खट्टर ककाक तरंग, प्रणम्य देवता आदिक द्वारा मैथिली भाषा एवं साहित्यकेँ विशाल पाठक वर्ग प्रदान कएलन्हि। हिनक रचना जनसाधारणमे साहित्यक प्रति अभिरुचि उत्पन्न कएलक। उपन्यास, कथा एवं हास्य व्यंग्य रचनाक अतिरिक्त प्रो० झा मैथिली एकांकीक क्षेत्रमे सेहो पूर्ण योगदान कएलन्हि अछि।

एकांकी एक आधुनिक साहित्यिक विधा थिक। आधुनिक पश्चिमी साहित्यक स्पष्ट प्रभावसँ एकर विकास भेलैक अछि, ओना एकर मूल किंवा परम्पराकेँ भारतीय संस्कृत वाङ्मयमे सेहो किछु गोटा तकैत छथि। अस्तु ! हरिमोहन बाबू मैथिलीमे कतिपय एकांकीक रचना कएने छथि।

हिनक एकांकी रचनाकेँ मुख्यतः दू विभागमे राखल जाए सकैत अछि—(१) गम्भीर एकांकी एवं (२) प्रहसन। तीन गोट एकांकी उपलब्ध अछि—(क) अयाची मिश्र, (ख) मंडन मिश्र, एवं (ग) एहि बाटेँ अबै छथि सुरसरि धार।

एही प्रकारेँ प्रहसन सब अछि—(क) बौआक दाम, (ख) महाराज विजय, (ग) ठोपसँ टोप, (घ) रेलक झगड़ा। एकर अतिरिक्त हिनक किछु कथाकेँ एकांकीक रूपमे रूपान्तरित सेहो कएल गेल अछि; यथा—(क) 'आदर्श मैथिल' एवं (ख) 'दारोगाजीक मोंछ'।

'अयाची मिश्र' शीर्षक एकांकीमे हरिमोहन बाबू मिथिला विभूति पं० भवनाथ मिश्रक विद्या-व्यवसाय एवं संतोषी स्वभावक चित्र प्रस्तुत कएलन्हि अछि। ई व्यक्ति अपन संतोषी स्वभावक कारणेँ 'अयाची मिश्र'क नामसँ विख्यात भेलाह।

एकांकीक प्रारम्भ बालक लोकनिक समूह-गानसँ होइत अछि। दोसर दृश्यमे पूजापर बैसल अयाची मिश्र लग नवद्वीपसँ एक दर्शनशास्त्रक जिज्ञासु शिष्य उपस्थित होइत अछि जनिक शंकाक

समाधान हुनक 'अपूर्णे पंचमे वर्षे'बला बालक शंकर कए दैत छथिन्ह। एही दृश्यमे, हुनक पत्नी भवानी द्वारा आगत अतिथिक स्वागतार्थ भोजन व्यवस्थाक प्रसंगे परिवारक विपन्नताक परिचय भेटैत अछि। संगहि एक कलश सोनाक अशर्फी गाड़ल भेटब तथा ओहिसँ कण मात्रो नहि ग्रहण कए ओकरा राजकोषमे जमा करबाक निर्णयसँ हुनका लोकनिक संतोषी स्वभावक परिचय सेहो भेटैत अछि।

तेसर दृश्यमे अयाची पुत्र शंकरक तीक्ष्ण बुद्धिक परिचय करबैत छथि। शंकर स्वर्णमुद्रा-पूर्ण कलश राज दरबारमे समर्पित करैत छथि तथा ओहिसँ अयाची विद्यापीठ स्थापित करबाक निर्णय महाराज द्वारा होइत अछि।

चारिम दृश्यमे महाराज स्वयं अयाची मिश्रक निवासपर पदार्पण करैत छथि। महाराज हुनक सम्मानार्थ एक गोट परगन्ना समर्पित करए चाहैत छथि जकरा ओ विनम्रता-पूर्वक अस्वीकार करैत छथि। महाराज स्वयं मांगिकेँ अयाची मिश्रक बाड़ीक साग आदरपूर्वक अपना संग लए जाइत छथि।

पाँचम दृश्यमे महाराज द्वारा बालक शंकरकेँ उपहार स्वरूप देल गेल रत्नमाला, पूर्वमे देल गेल वचनक अनुसार, शंकरक प्रथम कमाइ मानि चमैनिकेँ देल जाइत अछि। ओहो चमैनि ओहिसँ पोखरि खुनएबाक आग्रह करैत अछि जे 'चमैनियाँ पोखरि'क नामे प्रसिद्ध भेल।

छठम दृश्यमे अयाची मिश्रक डीहपर किछु गोटा एकत्र भए ओहि माटिक प्रति श्रद्धा प्रकट करैत वन्दना करैत अछि।

एहि एकांकीक प्रसंग श्री चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' लिखैत छथि— "हिनक अयाची मिश्र वड़ सुन्दर एकांकी भेलन्हि अछि.... ...ओहि बंगाली शिष्यक जिज्ञासा, बालक शंकर द्वारा तकर प्रतिपादन, मिथिलेशक हुनका दुआरिपर पहुँचब आदि घटनाक्रम तेना विन्यस्त भेल अछि जे संतोष एवं प्रतिभाक प्रति श्रद्धाक भाव दर्शकक मनमे जागि उठैत अछि। एकटा अस्वाभाविकता ओहिमे ई मात्र अछि जे 'अपूर्णे पंचमे वर्षे' बला बालककेँ घृत आदि अनबाक भार देल जाइछ।" (एकांकी वर्त्तमान दशक— आ० भा० मै० सा० म० रचना संग्रह I पृ० १३९)

एहि एकांकीमे प्रत्येक प्रमुख पात्रक चरित्र अपन गरिमाक संग मुखरित भेल अछि। अतीतक गौरव, विद्याक अध्यवसाय, संतोष, प्रतिभा, गुणीक सम्मान आदि तत्त्वकेँ एहिमे उजागर कएल गेल अछि। मिथिलाक जाहि विभूतिक प्रति इतिहास एवं किंवदन्ती मुखर नहि रहल अछि तकरा एहि एकांकीक माध्यमसँ शाश्वतता प्रदान कएल गेल अछि। दार्शनिक एवं वैदुष्यपूर्ण वातावरणक अनुकूल भाषाक प्रयोग कएल गेल अछि। रंगमंचीय त्रुटि तँ एकांकीक प्रारम्भिक अवस्थाक सूचक थिक। रचना विधानक 'उपक्रम' एवं 'उपसंहार' अपनामे संकलन-त्रयकेँ समेटने अछि। भाव अथवा विषयक दृष्टिसँ ई एकांकी मैथिलीक उपलब्धि थिक।

'मंडन मिश्र' शीर्षक एकांकीमे प्रो० झा तत्कालीन मिथिलाक गौरवशाली सांस्कृतिक परिवेशकेँ आकर्षक ढंगसँ प्रस्तुत कएलन्हि अछि। एहिमे कर्मकांड एवं ज्ञानकांडक दू गोट दुर्धर्ष योद्धा

मंडन एवं शंकराचार्यक परस्पर शास्त्रार्थ चर्चा एवं राष्ट्र कल्याणार्थ तथा सनातन धर्म रक्षार्थ विचार-विनिमय ओ संकल्पके उजागर कएल गेल अछि।

पाँच दृश्यमे विभाजित एहि एकांकीक प्रथम दृश्यमे मंडन मिश्रक इनारपर पानि भरैत पनिभरनी एवं दक्षिण देशसँ आएल संन्यासी शंकराचार्यक वार्त्तालाप अछि। पनिभरनी वार्त्तालापसँ अपन उच्चसस्कार, बुद्धिक तीक्ष्णताक परिचय दैत छन्हि। एतय सूगा सेहो 'स्वतः प्रमाणं·····' आदि मीमांसाक वाक्य उच्चारण करैत रहैत अछि।

दोसर दृश्यमे पूजापर बैसल मंडन मिश्रक समक्ष शंकराचार्य उपस्थित होइत अपन परिचय दैत छथि। ओ विलुप्त होइत आस्तिकताक रक्षार्थ वेदान्तक आधारपर समस्त देशमे एकसूत्रता आनबाक प्रस्ताव करैत छथि। मंडन मिश्र 'वादे वादे जायते तत्वबोधः' केँ मानैत तार्किक विवेचन चाहैत छथि। शंकराचार्यक प्रस्तावपर मंडन मिश्रक पत्नी भारती मध्यस्थता करब स्वीकार करैत छथि।

तेसर दृश्यमे मंडन एवं शंकराचार्यमे मीमांसा एवं वेदान्त किंवा कर्मकांड एवं ज्ञानकांडक श्रेष्ठतापर शास्त्रार्थ होइत अछि। दुहू पक्ष अपन अपन तर्क उपस्थित करैत छथि।

चारिम दृश्यमे बाइस दिनक शास्त्र-चर्चाक निर्णय सुनाओल जाइत अछि। भारती निर्णय दैत छथि जे शंकराचार्यक वेदान्त पक्ष समीचीन अछि। मंडन मिश्र एहि निर्णयकेँ स्वीकार करैत छथि। जखन मंडनकेँ संन्यास लेबाक चर्चा होइछ तँ भारती हुनक अर्धांगिनीक रूपमे स्वयं शास्त्रार्थ करबाक हेतु प्रस्तुत भए जाइत छथि। शास्त्रार्थ प्रारम्भ होइत अछि। सृष्टि-प्रक्रियाक सम्बन्धमे शंकराचार्य अपन अज्ञानता मानैत छथि। ओ जनन विज्ञानक अध्ययन करबाक हेतु जाइत छथि।

पाँचम दृश्यमे सात वर्षक पश्चात् शंकराचार्यक पुनरागमन होइत अछि। भारती हुनक उत्तरसँ सन्तुष्ट भए मंडन मिश्रकेँ सन्यासी बनबाक स्वीकृति दैत छथि। एतबे नहि, प्रथम भिक्षामे ओ स्वयं अपन कर्णफूल उतरिकेँ दैत छथि। शंकराचार्यक आग्रहपर भारती मंडनक नव नामकरण करैत छथि --सुरेश्वराचार्य। मंडन ओ शंकर दुनू गोटा देशक कल्याणार्थ ब्रह्मविद्याक प्रचारमे संलग्न भए जाइत छथि। शंकराचार्य मिथिला, मंडन ओ भारतीक क्रमशः अभ्यर्थना करैत हुनका प्रति आभार व्यक्त करैत छथि।

एहिमे मंडन मिश्र एवं भारती दुनूक चरित्र नीक जेकाँ निखरल अछि। मिथिलामे लोकक आस्था वेदमे सदासँ रहलैक अछि, नास्तिकता एहिठाम स्थान नहि पाबि सकल अछि। मिथिलाक नारी सेहो उच्चस्तरीय विदुषी होइत छलीह तकर प्रमाण स्वरूप एहिमे भारती विद्यमान छथि। भारतीक विद्वत्ता एवं निष्पक्ष न्याय-निष्ठा प्रदर्शित करबामे एकांकीकार सफल रहलाह अछि। सम्पूर्ण मिथिलामे उच्चसंस्कार ओ ज्ञान व्याप्त अछि तथा मीमांसाक विषयमे चर्चा करैत अछि। एहिमे केवल हरबाह-परिभरनी-वार्त्तालापक अंश सन्दर्भहीन ओ जोड़ल लगैत अछि। एहिमे वैदुष्यपूर्ण सांस्कृतिक परिवेशक अनुकूल भाव तथा भाषाक प्रयोग भेल अछि।

उपर्युक्त दुनू एकांकी (अयाची मिश्र, शंकर मिश्र) मिथिलाक अतीत गौरव-स्तम्भके आधार बनाए रचल गेल अछि। एहिमे मिथिलाक सांस्कृतिक गौरवक इतिहासके साहित्यिक स्वरूप प्रदान कएल गेल अछि तें एकर ऐतिहासकि महत्त्व सेहो अछि। यद्यपि ई सब कोनो ऐतिहासिक तथ्यक उद्घाटन नहि करैत अछि केवल किंवदन्तीकें लिपिबद्ध करैत अछि तथापि विषयक ऐतिहासिकताक कारणें ऐतिहासिक एकांकीक कोटिमे असन्दिग्ध रूप सँ अवैत अछि।

एहि बाटे अबै छथि सुरसरि धार उपर्युक्त दूनू एकांकी सँ भिन्न शिल्प (टेकनीक)क वस्तु थिक। लेखक स्वयं एकरा छाया रूपक मानलन्हि अछि। छाया रूपक ओहि प्रकारक एकांकी थिक जाहि मे रंगमंच पर अभिनयक संग-संग छायाक उपयोग सेहो होइत अछि। एहन एकांकी मे युग-युगक घटनाकें छाया एवं सूत्रधारक सहायतासँ एक संग गाँथिकें प्रभावऐक्य उत्पन्न कएल जाइत अछि।

एहि एकांकीमे मिथिलाक प्रसिद्ध सौराठ सभाकें केन्द्र स्थल वनाए समाजक सर्वाधिक घृणित व्यवहार तिलक-दहेज प्रथाक उन्मूलनक कल्पना कएल गेल अछि। एकैसम शताब्दीक दोसर दशकक मिथिलाक कल्पना कए प्रो० हरिमोहन झा नारी समाजक उत्थान ओ चेतना तथा नव जागरणमे सक्रिय योगदानक काल्पनिक चर्चा कएलन्हि अछि। एहिमे भूतलक्षी प्रणाली (Flash Back Method) अपनाओल गेल अछि। एहि मे एकगोट वृद्ध सूत्रधारक काज करैत छथि तथा ५० वर्ष पूर्वक सौराठ सभाक क्रमशः ५ वर्षक पाँचटा चित्र समूह (रील) प्रस्तुत करैत छथि।

प्रथम रील मे वरक विक्रीवला चित्र अछि। एक महिला सभामे आबि तिलक-दहेज रोकबाक निवेदन करैत छथि। उपहासक पात्र वनैत छथि।

दोसर रील मे एक झुण्ड प्रगतिशील नारी सौराठ सभामे आबि आन्दोलन करैत छथि। विभिन्न प्रकारक नाराबाजी होइत अछि। लोक कनेक प्रभावित होइत अछि किन्तु अभियान दलक नायिकाक कपार फोड़ि देल जाइछ।

तेसर रील मे झुंडक झुंड शिक्षिता युवती लोकनि झंडा-पताका लए घूमैत छथि। वर लोकनि प्रभावित भए बिना तिलक दहेजक विवाह हेतु प्रस्तुत होइत छथि।

चारिम रील मे सहस्रशः महिलालोकनि उपस्थित भए विद्रोह करैत छथि। कन्यालोकनि सेहो विद्रोह करैत छथि। परस्पर कन्याक माए एवं वरक माए स्वतः विवाह निश्चित करैत छथि। वातावरण पूर्णतः बदलि जाइत अछि।

पाँचम रील मे असंख्य नर नारी उपस्थित छथि। वैवाहिक खर्च कम करबाक हेतु सामुदायिक विवाह-यज्ञक व्यवस्था होइत अछि। सहस्रो विवाह एकहि ठाम सम्पन्न होइत अछि।

अन्तमे वृद्ध (सूत्रधार) कहैत छथि जे—"पचास वर्ष पहिने जे सौराठ गाछी कलंक स्वरूप लगैत छल से आइ देशक पवित्र तीर्थ वनि गेल अछि। जाहि वेदीपर लाखो पिता बलिदान पड़ैत छलाह, ताहिपर आब लाखो कन्याक उद्धार भए रहल छैन्ह।" तिलक विनाशिनी सुरसरि सौराठक मार्गसँ आबि ओहि ठामक समस्त सड़ल-गन्हाएल, रीति-रेवाज, वस्तु-जात, मन-मस्तिष्कके धो-वहाकें स्वच्छ, निर्मल, पवित्र वना दैत छथि।

एहि नव शैलीक एकांकीमे प्रो० झा मिथिलाक सामाजिक उत्थानक हेतु नारी वर्गक क्रांतिकारी सक्रिय भूमिका तथा ओकर सफल परिणामक कल्पना अत्यन्त मार्मिक ओ प्रभावकारी ढंगसँ प्रस्तुत कएलन्हि अछि ।

पचास वर्ष पूर्वक घटना सभकेँ वृद्ध द्वारा छायांकनक माध्यमसँ प्रस्तुत कएल गेल अछि । लेखकक हृदयमे निहित नारी वर्गक प्रगतिशीलता तथा हुनक सहयोगसँ समाज परिवर्तनक कामना स्पष्ट अछि । एहिमे फैंटेसीक तत्त्व सेहो विद्यमान अछि । वस्तु तथा शैली दुनू दृष्टिसँ ई एकांकी पृथक महत्त्व रखैत अछि ।

मैथिलीमे एकांकी रचना एखनहुँ विकासशील अवस्थेमे अछि, पूर्ण विकसित नहि भेल अछि । तेँ प्रहसन आदिकेँ समग्र रूपसँ एखन एकांकीक अन्तर्गते मानब उचित बुझि पड़ैत अछि । आधुनिक एकांकीक प्रादुर्भावो तँ एहने स्थिति (Curtain Raiser एवं After Pieces) परिस्थितिक सार्थक एवं सफल प्रयोगसँ भेल अछि ।

गम्भीर एकांकी तथा छाया रूपकक अतिरिक्त हरिमोहन बाबू कतिपय प्रहसनक रचना कएने छथि । हिनक स्वाभाविक संस्कार, हास्य एवं विनोदप्रियता, हिनक प्रहसन सभमे नीक जकाँ अभिव्यक्त भेल अछि । प्रायः प्रत्येकमे कोनो ने कोनो सामाजिक विकृतिकेँ विषय बनाओल गेल अछि जाहिसँ मनोरंजनक संग-संग सामाजिक दोषक परिहार करबाक उद्देश्य स्पष्ट रहैत अछि ।

बौआक दाम शीर्षक प्रहसनमे काटर प्रथापर व्यंग्य कएल गेल अछि । बौआक बाप एक सुखितगर व्यक्ति छथि । पंडित कन्यागत तथा ओकील कन्यागत कन्यादानक प्रसंग गप्प करैत छथि । मुन्शीजीक हिसाब मे किछु और जोड़ि रजिस्ट्रीक गप्प ओकील साहेब करैत छथि जाहिपर बौआक बाप भड़कि उठैत छथि । बौआक लालन-पालन तथा पढ़एबाक खर्चक हिसाबमे हास्य अछि जकर परिणति व्यंग्यमे होइत अछि । एहिमे दहेज प्रथा तथा मैथिल समाजक संकीर्ण मनोवृत्तिपर कसगर व्यंग्य अछि ।

महाराज विजय प्रहसनमे देखाओल गेल अछि जे सिपाही द्वारा जंगली महिसक मारल गेलापर राजा अपनाकेँ वीर शिरोमणि बुझैत छथि । ओहिना महिला पहलमानसँ हारि, माटिक पहलमान बनाए ओकरा भूमिसात कए मल्लयुद्धमे विजयक उल्लास मनाओल जाइछ । एहिमे सामंती अहंकार एवं आडम्बरपर व्यंग्य कएल गेल अछि । स्थान, काल, पात्र—तीनूक बाहुल्य एहिमे रंगमंचीय त्रुटि निर्दिष्ट करैत अछि । ओना हास्यक पुट सर्वत्र विद्यमान रहैत अछि ।

रेलक झगड़ामे आधुनिक शिक्षाक वायुसँ कनेक सिहकल दू टा परिवारक विवाह-सम्बन्ध स्थिर करबाक क्रममे आकस्मिकताकेँ हास्यपूर्ण अभिव्यक्ति देल गेल अछि । कन्या देखब, देखएबाक हेतु जाइत दूनू भावी समधिन एवं भावी सासु-पुतहुक बीच रेलगाड़ीमे 'विशिष्ट-मैथिल-पद्धति'सँ झगड़ा होइत अछि । दूनू पक्षक परिचय खुजैत अछि । पश्चात्ताप प्रगट कएल जाइछ । अन्तमे वरक माए कन्याकेँ अंगीकार करैत छथि ।

विषयवस्तुक दृष्टिसँ एहिमे प्रगतिशीलताक गन्ध भेटैत अछि आ शिल्पक दृष्टिसँ हास्यसँ अधिक फैंटेसीक तत्त्व विद्यमान अछि ।

ठोपसँ टोप—ई प्रहसन सन १९३६मे लिखल गेल जकर मंचन पटनाक बी० एन० कालेजक मंचपर भेल। रूढ़िवादी परम्परामे पालित युवक चानन-ठोपक संग कालेजमे प्रवेश करैत अछि। क्रम-क्रमसँ आधुनिकताक प्रभावमे अबैत ठोप मेटाए सूट सहित टोप धारण करैत अछि। एहिमे आधुनिक जीवन-पद्धतिक वरण तथा रूढ़िवादक त्यागकेँ हास्यक संग प्रदर्शित कएल गेल अछि। एकर अप्रकाशित पांडुलिपि आब प्रायः अप्राप्य अछि।

हरिमोहन झाक किछु कथाकेँ रूपान्तरित कए एकांकीक स्वरूप प्रदान कएल गेल अछि। एहि कोटिमे 'दारोगा जीक मोंछ' प्रमुख अछि। ई पूर्णतः हास्य सम्पृक्त रचना थिक। एही प्रकारेँ 'आदर्श मैथिल' प्रहसनक सेहो चर्चा कएल जाइत अछि। रूपांतरित रहलाक कारणेँ एकर परिमाणात्मक महत्त्वक चर्चा होइत अछि।

एकर अतिरिक्त वैदेहीक जनवरी १९५४क अंकमे हरिमोहन बाबूक कविता 'टी पार्टी'केँ एकांकीक रूप दय श्री विष्णुकांत झाजी प्रकाशित करबौने छथि।

हिनक अधिकांश प्रहसनमे कथातत्त्वक प्राबल्यक कारणेँ नाटकीय तत्त्व कनेक ह्रास भए गेल अछि। ओना हास्य तत्त्वक अधिकता तथा व्यंग्यक मार्मिकता सर्वत्र उजागर अछि। अपन प्रहसन द्वारा समाजमे प्रचलित कुरीति तथा रूढ़िवादी परम्परापर हास्य ओ व्यंग्यक तीक्ष्ण वाण चलेबामे हरिमोहन बाबू पूर्णतः पटु छथि। एकरा द्वारा सामाजिक दोष दिस ध्यान आकृष्ट करएबामे सफल भेल छथि।

जहिना कथाक क्षेत्रमे 'पाँच पत्र' हिनक अन्य कथासँ भिन्न गम्भीरता नेने अछि तहिना एकांकीक क्षेत्रमे 'अयाची मिश्र' ओ 'मंडन मिश्र' मिथिलाक सांस्कृतिक गौरव-गाथा प्रस्तुत करबामे पूर्ण गम्भीरता ओ दक्षता धारण कएने अछि।

प्रत्येक एकांकीक रचना-विधान ओ संवाद-योजना ओकर कथा-वस्तुक अनुकूल राखल गेल अछि जाहिसँ प्रभावान्वितिमे कतहु व्याघात नहि होइत अछि।

अपन किछु एकांकी (अयाची मिश्र, मंडन मिश्र तथा एहि बाटेँ अबै छथि सुरसरिधार)मे हरिमोहन बाबू गीतक प्रयोग सेहो कएलन्हि अछि जाहिसँ साहित्यिकता ओ प्रभावोत्पादकतामे अभिवृद्धि भेल अछि।

मैथिली साहित्यक जाहि कालखंडमे हिनक एकांकी सभक रचना भेल अछि ताहिमे गुण एवं परिमाण दूनू दृष्टिसँ हिनक श्रेष्ठत्व स्थापित अछि। अतः हरिमोहन बाबूकेँ अपना समयक सफल एकांकीकार कहबामे हमरा संतोषक अनुभव होइत अछि। □

गप्प-साहित्यक आचार्य हरिमोहन बाबू

श्री सुधांशु 'शेखर' चौधरी

हरिमोहन बाबू साहित्य-जगत् मे जाहि वस्तु ल' क' पूज्य छथि, जीवित छथि आ चिरकालक हेतु अमर रहताह से थिक हुनक गप्प-साहित्य। आइ सँ करीब २८-३० वर्ष पूर्व, प्रायः सन् ५२-५५ क बीच मे, वैदेहीक कथा- अंकमे, जे मैथिलीक पत्र-पत्रिका-जगतमे प्रायः पहिल प्रयास छल, हम एहि सत्य-तथ्यक चर्च कयने रही, मुदा ओ चर्च मात्र छल आ आइयो धरि एहि गप्प पर चर्च मात्र होइत आयल अछि, कोनो विशद विश्लेषण प्रस्तुत नहि कयल जा सकल अछि। मैथिलीक आलोचकलोकनि बरमहल हुनका व्यंग्य-सम्राट् अथवा उपन्यास-सम्राट् घोषित करैत आयल छथि, आ वेसी तँ एहि बातक चर्वित-चर्वण करैत अयलाह अछि जे ओ प्रथम कोटिक व्यंग्यकार छथि, ओ लोकके हँसबैत-हँसबैत सामाजिक रूढ़ि सँ ग्रस्त लोकपर तेहन प्रहार कऽ दैत छथि जे प्रहारक चोट बनि व्यक्ति अकस्मात् कछमछा उठैत अछि, छटपटा उठैत अछि आ आक्रोशक आवेगमे चोटक शिकार व्यक्ति तासँ हुनका नास्तिक कहि वैसैत अछि। एहि तरहक सीमित समालोचना हुनक प्रतिभाक विशिष्ट मूल्यवत्ताक अंकन करबामे नितान्त असफल रहल अछि। तेँ हमर आग्रह अछि वर्तमान पीढ़ीक जाग्रत आ निष्ठावान् समालोचक सँ, जे निश्चित रूपसँ पूर्वक आलोचकक अपेक्षा गंभीर अध्येता छथि, हरिमोहन बाबूक गप्प-साहित्यक सही मूल्यांकन करथि आ ई प्रकाशमे आनथि जे हरिमोहन बाबू गप्प-साहित्यमे कतऽ छथि, हुनक गप्प-साहित्य की थिक अथवा हुनक गप्प-साहित्य नितान्त गप्पे टा थिक, निरुद्देश्ये टा थिक।

हरिमोहन बाबूक गप्प-साहित्यक चरमोत्कर्ष थिक 'खट्टर ककाक तरंग' जाहिमे गप्पक शैली ओ प्रकारताक निदर्शन भेटत। मुदा हमरा पोथीक अन्तरंग आवरण-पृष्ठ किछु भ्रममे दऽ देलक अछि। हमरा पहिने हुनक 'तरंग'क प्रथम संस्करण परि लागल छल आ तखने हम उद्घोषित कयने रही जे ओ गप्प-साहित्यमे बेजोड़ छथि, ओ अपन उदाहरण अपने टा छथि, हुनक जोड़ नहि अछि। मुदा दोसर संस्करणमे जे अन्तरंग आवरण छापल गेल अछि ताहिमे व्यंग्य-सम्राट् खट्टर ककाक विनोद-वार्ता उल्लिखित अछि। निश्चित रूपसँ एहि ठाम 'वार्ता' शब्दक प्रयोग रेडियोक वार्ता (आलेख) क अर्थमे नहि कयल गेल अछि। लगैत अछि, एहिठाम वार्ताक अर्थ गप्पे थिक आ एहिठाम विनोद अर्थ मैथिलीक थिक जकर अभिप्राय होइत अछि हास्य वा हँसीठट्ठा। मुदा ठामहि तकर नीचाँ छपल अछि—'काव्य-शास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्'। की एहि नीति-श्लोकक चरण मैथिलीक विनोदक अर्थमे थिक ? काव्य-शास्त्रसँ जे विनोद होइत अछि से व्यापक अर्थ थिक आ काव्य-शास्त्रक सीमा हास्ये रस धरिमे

सीमित नहि अछि, काव्य-शास्त्रसँ विनोद उठयबा लेल वा आनन्द पयबा लेल नवो रसक अपेक्षा होइत अछि। शास्त्रक हिसाबेँ करुणाकेँ महिमान्वित कयल गेल अछि। करुण एव रसः। तखन एहि ठाम नीति-श्लोकक उद्धरण छपबाक कोन नीतिमत्ता ? जे-से, अन्तरंग आवरणसँ जे हम भ्रममे पड़ल होइ, मुदा ताहिसँ हमर गप्प-साहित्यक कल्पना तकर स्थापनामे कोनो अन्तर नहि पड़ल अछि। अपितु दोसर संस्करणमे जे परिशिष्ट छापल गेल अछि आ जे पहिल संस्करणक भूमिकामे छापल गेल छल सैह स्पष्ट कऽ दैत अछि जे गप्प-साहित्य मैथिलीक एक विधा थिक ओ ओहि विधाक जन्मदाता हरिमोहने बाबू थिकाह। खट्टर कका बजैत छथि—'हमरा ओहि ठाम केओ काजसँ नहि अबैत अछि। हँ, गप्प करबाक हो त आबह।' अर्थात् ओ गप्पे टाक आचार्य छथि, दोसर कोनो काजसँ हुनका कोनो प्रयोजन नहि रहैत छनि।

गप्प करब एक कला थिक आ गप्प गढ़ब महान् कला। निरुद्देश्य गप्प गढ़ब समयकेँ नष्टे टा नहि करब थिक, अपितु अपन व्यक्तित्वक फूहड़पनीक प्रदर्शन थिक। निरुद्देश्य गप्प कयनिहार व्यक्तिकेँ लोकमे अधलाह बूझल जाइत अछि आ कलात्मक गप्पमे शिल्पक प्रयोग कयल जाय तँ ओ वस्तु साहित्य भऽ जाइत अछि। हरिमोहन बाबूक गप्पमे तर्क थिक, दर्शन थिक, आ संग लागल दुनू शास्त्र-शुष्कताकेँ हुनक विनोद तेहन सरस कऽ दैत अछि जे ओ उच्चकोटिक साहित्य भऽ जाइत अछि आ जे अनकासँ प्रायः कोनो भाषामे नैयायिक वा दार्शनिकसँ संभव नहि भऽ सकल अछि, तेँ हम कहैत छी, गप्प-साहित्यक जहिना ओ जन्मदाता थिकाह तहिना ओ एहि विधाक आविष्कारको थिकाह। जतेक हमरा देखल आ पढ़ल अछि, हम कहि सकैत छी जे भारतीय साहित्यमे ओ एकसर छथि। हमर अपन विश्वास अछि जे जा धरि खट्टर कका जीवित रहताह, हमरालोकनिक हरिमोहन बाबू मरि नहि सकैत छथि।

हरिमोहन बाबू दार्शनिक होयबाक कारण व्यक्तिगत जीवनमे अलौकिक भऽ उठैत छथि कौखन-कौखन, जेना आप्तसँ आप्त लोककेँ चिन्हबे नहि कयलहुँ आ परिचय दैत बाँहिमे समेटि लेलहुँ आ कौखन अनायासे ओहि व्यक्तिकेँ बेहाड़िकऽ धयलहुँ आ आपकताक संग गप्प करऽ लगलहुँ। जेना मुगलें आजमक टिकट कटयबा लेल जहाज घाटक काउन्टर पर सिनेमाक टिकट माङि बैसलहुँ। एहन-एहन अनेको घटना हुनक जीवनमे घटित भऽ चुकल अछि। मुदा खट्टर ककाक स्वरूपमे जखन ओ गप्पक मुद्रामे उतरि अबैत छथि तँ विनोदक गप्पमे हुनक तार्किकता अत्यन्त सजग भऽ उठैत छनि। बिना कार्य-कारणक सम्बन्ध धयने हुनक खट्टर कका गप्पकेँ ने लाड़ैत छथि, ने आगाँ बढ़बैत छथि। हुनक यैह विशिष्टता हुनक हास्य-व्यंग्यक प्राण बनल अछि।

अन्तरंग आवरणमे खट्टर ककाकेँ व्यंग्य सम्राट् कहल गेल अछि। हरिमोहन बाबूक व्यक्तिगत जीवन भलेँ दोसर प्रकारक चरित्र रखैत होइनि, जखन ओ खट्टर कका बनिकऽ मानस-मंचपर उतरैत छथि तँ ओ स्वयं व्यंग्य-सम्राट् भऽ उठैत छथि। हुनक विनोदपूर्ण तार्किकता लोककेँ हँसबैत-हँसबैत लोट-पोट कऽ दैत अछि। एहिमे सन्देह नहि जे विशेष चरित्रवला खट्टर कका ओ स्वयं होइत छथि आ हुनक गप्प सुननिहारक प्रतिनिधित्व करऽवला भातिज सेहो वैह होइत छथि। कारण जे गप्पक क्रममे ओ केवल हँ-हूँ नहि करैत अछि, ओहो तर्कक संग गप्प करैत अछि। ई प्रक्रिया बड़ विलक्षणता रखैत अछि जाहिमे गप्पक फुलझड़ी छुटैत रहैत अछि आ गप्प-साहित्यक निर्माण होइत रहैत अछि। एहि प्रकारक साहित्य निश्चित रूपसँ एक विधाक जन्म देलक अछि जे भारतक अन्य भाषामे एखन धरि सम्भव नहि भेल अछि।

हरिमोहन बाबूक गप्प-साहित्य कोनो जाति, वर्ग वा समाज पर आक्षेप करबाक लक्ष्यसँ नहि निर्मित भेल अछि। ई जे बड़े जोर-शोरसँ आलोचक लोकनि द्वारा कहल जाइत अछि जे ओ व्यंग्यसँ रूढ़ि पर प्रहार कयने छथि, ताहूमे पूर्ण सत्यता नहि अछि। ओ अपन व्यंग्य द्वारा विनोद तँ उपस्थित करिते छथि, संगहि ई सोचबा लेल बाध्य करैत छथि जे एहि वैज्ञानिक युगमे 'इसरगत' बान्हि लेब तँ ताहिसँ वास्तवमे सापसँ कतेक दूर धरि रक्षा भऽ सकत? खट्टर कका यदि प्रश्न उठाबथि तँ तकर अर्थ ई कोना भऽ जाइत अछि जे हरिमोहन बाबू नास्तिक छथि। हम व्यक्तिगत रूपसँ जनैत छी जे हिन्दू धर्मक अन्तर्गत मूर्ति-पूजा हुनका मान्य छनि। ओ बड़ उल्लाससँ अपना ओहि ठाम सरस्वती-पूजा करैत छथि। हमरा ओहिना स्मरण अछि जखन राजकमल जीबैत छलाह तँ हुनका आ हंसराजक संग हरिमोहन बाबूक ओहिठाम जाकऽ सरस्वती-पूजाक प्रसाद खा चुकल छी। तेँ ओ नास्तिक तँ किन्नहुँ नहि छथि। हँ, तखन जे पंडितलोकनि हुनका पर नास्तिकताक आरोप लगबैत छथि तकर कारण अछि हुनक शिल्पगत कलाकारिता हुनका द्वारा ग्रहण कऽ पयबाक असामर्थ्य। हमरा स्मरण भऽ आयल अछि, जखन हरिमोहन बाबू मैथिली साहित्य परिषदक बरहगोड़ियाक सभा-गोष्ठीमे 'खट्टर ककाक तरंग'क 'रामायण' अंशक पारायण कऽ रहल छलाह, महावैयाकरण स्वर्गीय पण्डित दीनबन्धु झा बिच्चेमे सभासँ पड़ा गेलाह जे हरिमोहन बाबू नास्तिक छथि, ओ मर्यादापुरुषोत्तम राम पर्यन्तकेँ गरियबैत छथि, हुनके किएक, हुनक माय-बाप पर्यन्तकेँ गरियबैत छथि। ओ नास्तिके नहि, महापतित छथि। कतबो हरिमोहन बाबू हुनका रोकलथिन जे कनेक अन्तिम अंश सुनि लेल जाओ, महावैयाकरण पर तकर कोनो प्रभाव नहि पड़ल। ओ चल गेलाह। एहि ठाम खट्टर ककाक अन्तिम उक्ति पर ध्यान देल जाओ।—'खट्टर कका रामनवमी व्रतक अवसर पर फलाहारक लेल ओरियाओल प्रसादक थारमे तुलसी दल रखैत बजलाह—हौ, तोँ एतबो नहि बुझैत छह ? हम हुनक (रामक) सासुरक लोक छिऐन्हि ने ! सासुरक हजामो गारि पढ़ैत छैक से प्रियगर लगैत छैक आर हम तँ ब्राह्मण छिऐन्हि, दोसर एना कहतैन्ह से ककर दर्प छैक ? परन्तु मिथिला-वासी तँ कहबे करतनि। मैथिलक मुँह बन्द कऽ देथिन्ह से सामर्थ भगवानोमे नहि छनि'। ई थिक हरिमोहन बाबूक एक शिल्पक चमत्कार जे राम वा हुनक माता-पिताकेँ गारि पढ़ल गेल से रामकथाक आधार लऽ कऽ जे हुनकर चरित्रमे उभरैत छनि मुदा से मिथिलावासी होयबाक कारण, किएक तँ मिथिला हुनक सासुर थिकनि।

हरिमोहन बाबूक गप्प-साहित्यक हमर स्थापनाक पुष्टि होइत अछि तखन, जखन हम ई देखैत छी जे हुनक 'गप्प' मैथिलीये धरि सीमित नहि अछि। हरिमोहन बाबूक रसिककेँ ई बूझल होइनि वा नहि जे हुनक खट्टर ककाक कतेको 'तंरग' गुजराती, मराठी, हिन्दी आदि भाषामे अनूदित भऽ प्रकाशित भेल अछि। ततबे नहि, तंरगक अनुवाद दक्षिणो भारतीय भाषामे प्रकाशित भऽ चुकल अछि आ नव विधाक विशिष्टताक कारण बढ़ियाँ जकाँ प्रशंसित भेल अछि। हरिमोहन बाबूक गप्पक। रसिककेँ ईहो बूझल होइनि अथवा नहि जे एम्हर आबिकऽ 'खट्टर ककाक तंरग'क हिन्दी अनुवाद आ सेहो सम्पूर्णताक संग भारतक प्रतिष्ठित प्रकाशक 'राजकमल प्रकाशन' 'खट्टर काका' नामसँ प्रकाशित कऽ चुकल अछि। एहिसँ की सिद्ध होइत अछि ? खट्टर कका एक एहन विशिष्ट चरित्र अछि जकरा गप्प कहऽ आ करऽ अबैत छैक आ से कि तँ एतेक मनोमोहक होइत छैक। जखन ओहि अनुवादक समीक्षा हिन्दी पत्र 'प्रखर' मे कयल गेल तँ ताहिमे जे कहल गेल से आर हमर स्थापना केँ पुष्ट करैत अछि। ओहिमे कहल

गेल जे मैथिली मे जे विशिष्ट साहित्य प्रस्तुत होइत रहल अछि से किएक हिन्दी मे एतेक विलम्बसँ आयल, आश्चर्य अछि। एकर माने की भेल ? यैह जे मैथिलीमे एतेक उत्कृष्ट रचना बहुत पहिने छपि चुकल अछि आ हिन्दी औखन धरि ताहि अर्थमे दरिद्र अछि। यैह समीक्षा हमर स्थापनाक प्रमाण बनि गेल अछि।

जेना हमरा लगैत अछि, अपना सम्बन्धमे, जे हम मूलतः नाटककार छी, गल्प लिखी वा कथा अथवा उपन्यास वा मनकथे किएक नहि लिखी—सभमे हमर नाटककार कोनो-ने-कोनो रूपमे लक्षित भऽ उठैत अछि, तहिना हरिमोहन बाबू मूलतः गप्पकार छथि। कारण जे हुनक कथे वा उपन्यास किएक ने होअय, सभमे गप्पे उजागर भऽ उठल अछि। सभ रचनामे खट्टर कका भले स्वयं उपस्थित नहि भेल होथि मुदा हुनक गप्पक टोन मुखरित भऽ उठैत अछि। एकर प्रमाणक रूपमे हुनक 'टोटमा' आ 'अलंकार-शिक्षा' सदृश रचनाकेँ उपस्थित कयल जा सकैत अछि। 'टोटमा' मे खट्टर कका सदेह भले उपस्थित नहि छथि, मुदा बहुत दिन पर गामक स्टेशन पर उतरऽवाला परदेशीकेँ जे गौआँ भेंट होइत छैक सैह वस्तुतः खट्टर ककाक छद्म रूप थिक। गौएँ घोड़ी बिकयबासँ गप्प-शप्पक आरंभ करैत अछि आ परदेशीक घरक दुःस्थितिकेँ आकाश ठेका दैत अछि। आ से किएक तँ परदेसीकेँ हिचकी छोड़यबाक टोटमा करैत अछि। जेँ कि टोटमासँ हिचकी बन्द भऽ जाइत छैक तेँ उक्त कथाक नाम टोटमा देल गेल अछि आ अन्तमे रहस्य खोलि दैत अछि तँ परदेसीक संग सभ पाठकक हँसीक फुहारा छूटि उठैत अछि। वास्तविकमे ओ एहि तरहक गप्पकेँ मनोवैज्ञानिक चिकित्साक विशेष आधार देलनि अछि। 'टोटमा'मे हास्य तँ थिके मुदा तकर मूल उपकरण गप्पे टा थिक। मनोविनोदक संग उक्त रचनाक सोद्देश्यताकेँ झुठाओल नहि जा सकैत अछि। ई सर्वविदित अछि, हिचकीकेँ बन्द करयबा लेल हिचकी उठऽवला लोकक मनकेँ दोसर दिस बहकयबाक प्रथा अछि। एहूमे पूर्व कहल शिल्पक चमत्कार अछि।

एहिना अलंकार-शिक्षामे गुरु-शिष्य जे कोठीक पाछूमे नुकायल रहैत छथि आ आङनक स्त्रीगण सभक झगड़ा-रगड़ाक झमेलमे गुरु एक-एक अलंकारक उदाहरण उपस्थित कयने जाइत छथि से ककर प्रतिनिधित्व कऽ रहल छथि ? की ओ खट्टर ककाक गप्पक टोनकेँ नहि उद्घाटित करैत छथि ? आङनक स्त्रीगण-सभ जे अपने गप्पकेँ ऊपर राखऽ चाहैत छथि से गप्पेक तरङल रूप थिक।

हुनक 'विकट पाहुन' सदृश कथा-संग्रह रहनि वा कन्यादान-द्विरागमन सदृश कथित औपन्यासिक कृति, यदि ओहि सभमे सँ कथोपकथन, जे वास्तव मे गप्पे टा थिक, छाँटि देल जाय तँ ओहि सभमे रहिये की जाइत अछि ? गप्पे-शप्पक प्रकार हुनक रचनाक प्राण छनि। तेँ हम कहैत छी जे गप्पकार ओ पहिने छथि तखन आर किछु। तेँ हमर दावा अछि जे ओ गप्प-साहित्यक आचार्य छथि. गप्प-विधाक जन्म देनिहार छथि, गप्प-साहित्यक आविष्कारक छथि आ गप्प-साहित्यक चामत्कारिक गुणमे ओ एकसर छथि। एहि प्रसंग हुनका सम्बन्धमे जे कहल जायत से थोड़ होयत। □

खट्टर ककाक तरंग : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डा० हेतुकर झा

हरिमोहन झाक लेखनीसँ मैथिली साहित्यक प्रचुर सेवा भेल अछि। हिनक लिखल बहुतो लेख, कथा कविता प्रकाशित अछि। एहि सबमे **खट्टर ककाक तरंग** सबसँ बेसी लोकप्रिय भेल। एकर अनुवाद हिन्दी, बङ्गला, गुजराती, मराठी इत्यादि भाषामे भेल।[1] एकर मान्यता क्षेत्रीय बुद्धिजीवी वर्गमे पर्याप्त उथल-पुथल मचौलक।[2] हिनक आन कोनो रचनाक एहि तरहक प्रभाव समाज पर नहि पड़ल। एकर कारण लेखक स्वयं दैत छथि जे—(खट्टर ककाकेँ) "पाखंडक खंडनमे ततबा रस भेटैत छैन्ह जे सामाजिक रूढ़ि वा अन्धविश्वास पर प्रहार करबाक हेतु सदा सोँटा नेने तैयार रहै छथि ......हँसी-हँसीमे तेहन मार्मिक बात कहि दैत छथिन्ह, हास्यक पुट दैत तेहन सूक्ष्म नश्तर लगा दैत छथिन्ह, - जे श्रोता तिलमिला उठैत छथि .. यैह छैन्ह खट्टर ककाक विशेषता जाहिसँ ओ लोककेँ आकृष्ट करै छथि।"[3] एहि उद्धरणसँ स्पष्ट होइत अछि जे लेखकक ई कृति समाजके आकृष्ट कयलक एवं तकर मूल कारण ई जे एहिमे पाखंडक विरोध एक खास विधासँ भेल जाहिमे हास्यक मिश्रण तर्कक 'सूक्ष्म नश्तर'सँ कयल गेल। हास्य स्वत: एक प्रिय रस थिक आ ओ तर्कक धरातल पर राखल गेल। मिथिलामे तर्कक प्रतिष्ठा बहुत प्राचीन अछि। युग-युगसँ पांडित्यक मान्यता लेल तर्क (शास्त्रार्थ) सबसँ पूज्य आधार रहल। लेखक एहि ऐतिहासिक तथ्यसँ अवगत छलाह, तेँ विरोध (पाखंडक)क हेतु कोनो आन मार्ग नहि लय एही मार्गकेँ अपनौलनि। हास्यक पुटसँ ओकरा रुचिगर कय देलथिन जाहिसँ ओ तर्क शुष्क नहि रहि गेल आओर विषय-वस्तु मात्र शास्त्रार्थक परिवेशमे संकुचित नहि रहि सामान्य पाठक तक पहुँचि गेल। आब प्रश्न उठैत अछि जे कोन तरहक पाठकमे ई प्रिय भेल आ किनका एहिसँ ठेस पहुँचलनि। दुनू संदर्भमे पाठकक एक विशाल समुदाय धरि ई पहुँचल, जे एकर, वा कोनो कृतिक, एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि – अपनहुँ लेल एवं मैथिली साहित्यो लेल। एहि प्रश्नक विवेचनाक हेतु आवश्यक जे लेखकक दृष्टिमे 'पाखंड'क की तात्पर्य से बूझल जाय। तात्पर्य बुझबाक हेतु, प्रथम बारह तरंगक ('दही चूड़ा चीनी'सँ लय 'ब्रह्मानन्द' धरि) अवलोकन आवश्यक। कारण, इएह बारह तरंग सबसँ पहिने लिखल गेल आ एहिसँ उपर्युक्त पाठकक दुनू वर्ग तैयार भेल। बादक तरंग एही प्रयोगक विस्तार थीक जे लेखक प्राय: अपन प्रयोगक सफलताक पश्चात् उत्साहमे कएल आ ओहो बहुत-किछु सफल भेल।

मिथिलामे सांस्कृतिक ह्रास जाहि युगसँ आयल (ई प्राय. १५हम शताब्दीक अन्तसँ शुरू भेल जे अपनामे एक स्वतन्त्र शोधक विषयक थीक) तहियासँ पाखंडक जोर बढ़ैत गेल। पाखंड समाजक

विभिन्न धरातलके आक्रान्त कयलक आ तकर परिणामस्वरूप ई कहनाइ आब असंभव भऽ गेल अछि जे समाजमे कतेक रास ओ कतेक तरहक पाखंड केहिया ओ कोना प्रादुर्भूत भेल । पाखंडक एहि विशाल क्षेत्रमे लेखक किछु खास तरहक पाखंडके चुनलनि, जकर विरोध ओ सबसँ आवश्यक बुझलनि एक खास समय ओ सामाजिक स्थितिक सन्दर्भमे । समय छल स्वतन्त्रता-प्राप्तिक बादक दशक आ समाज छल तत्कालीन मैथिल ब्राह्मण समाज (सम्पूर्ण मैथिल समाज नहि, कारण जे बारहो तरंगक आधार ब्राह्मण वर्गसँ विशेष रूपे जुटल अछि)। 'पाखंड' विश्लेषण हेतु एतय बारहो तरंगक विवेचना प्रस्तुत कयल जाइत अछि ।

पहिल तरंग अछि 'दही चूड़ा चीनी'। एहिमे लेखक आक्षेप करैत छथि जे मैथिल जातिमे पौरुषक अभाव खास तरहक भोजनक आदतिसँ अछि । दही-चूड़ा मिथिलाक प्रिय भोजन रहल अछि । **वर्ण-रत्नाकर**मे सेहो एकर प्रसंग भेटैत अछि ।[4] उनैसम शताब्दीक उत्तरार्द्ध उर्दूमे लिखल गेल पोथी **'आईने तिरहुत'**क लेखक चूड़ा-दहीके मिथिलाक प्रिय भोजन मानलनि ।[5] इतिहासक एतेक काल धरि एक समाजसँ जुटल रहबाक कारणे एहि भोजनके सांस्कृतिक मूल्य भेटि गेल । सांस्कृतिक अवसर पर मिथिलामे ब्राह्मण-भोजनमे दही चूड़ाक विशेषता रहल अछि । तैं लेखक मिथिलाक संस्कृति पर आक्षेप करबा लेल एहि भोजनके माध्यम मानल । एहि माध्यमसँ ओ सांस्कृतिक ह्रासक पक्ष पर आघात करैत छथि; **प्रथम** भोजन लेल मर्यादाके बिसरब, अर्थात् क्षुद्र बात लेल व्यवहारमे सब गौरव-गरिमाके ताख पर राखि देब । एहि शब्दमे ई कहब जे क्षुद्रताक मैथिल-संस्कृतिमे बोलबाला । **दोसर** अपनामे भेद-भाव गोल-गोलैसी, अपनेमे मारि-काटि, इत्यादि ।

एहि पक्षके दोसर तरंग 'चाणक्यक जन्मभूमि'मे बहुत नीक जकाँ प्रचलित सामाजिक व्यवहारसँ स्पष्ट कयल गेल अछि । लेखकक शब्दमे महादेव **त्रिलोचन** छलाह । हमरोलोकनि त्रिलोचन छी। तेसर आँखिसँ केवल अनकर छिद्र टा सुझैत अछि । महादेव **नीलकण्ठ** रहथि । हमरो लोकनिक कण्ठमे केहन विष रहैत अछि से दू गोटाक विवाह भेला पर प्रत्यक्ष देखि लैह । महादेवक छाती पर साँप लेटाइत रहैन्ह । हमरोलोकनिके स्वजातीयक अभ्युदय देखि छाती पर साँप लोटाय लगैत अछि । महादेव **त्रिशूलधारी** रहथि । हमरोलोकनिके अपना भाइ-बन्धुक उत्कर्ष देखि **मस्तकशूल, हृदयशूल** ओ **उदरशूल** ई तीनू प्रकारक शूल उत्पन्न भऽ जाइत अछि । महादेव सभसँ एकौर भऽ कऽ रहैत छलाह । हमरो लोकनि फुट्ट भऽ कऽ रहैत छी । महादेवक कपारमे अर्द्धचन्द्र छलैन्ह । हमरो लोकनिक कपारमे जतय जाउ अर्द्धचन्द्र लिखल रहैत अछि । समाजक एहि दुर्गतिके कहल गेल अछि महादेवक धारणाक माध्यमसँ । महादेवक पूजा मिथिलामे सबसँ बेसी लोकप्रिय अछि । सब वर्गमे निरन्तर प्रचलित रहल अछि । मिथिलाक संस्कृतिक एक ठोस प्रतीक रहल अछि । व्यंग्यक ई माध्यम इंगित करैत अछि जे एक दिशि तँ एतेक पूजा होइत अछि आ दोसर दिशि आपसी सम्बन्धमे मनोवृत्ति केहन क्षुद्र भय गेल अछि । अर्थात् पूजा-पाठ सब पाखंड भय गेल अछि—पूजाक भावना शुद्ध रहैत तँ क्षुद्रता नहि अबैत । पूजा नहि, पूजाक ढोंग पसरल अछि । एहि तरहेँ लेखक पूजा-पाठक दुराग्रही धर्मावलम्बी ब्राह्मण वर्ग पर प्रहार करैत छथि ।

'माछक महत्त्व'मे सेहो एही ढोंग (वैष्णव धर्मावलम्बी) पर आक्षेप अछि । 'आयुर्वेद' एवं 'ज्योतिष'मे लेखक वैद्य ओ ज्योतिषी लोकनि पर आक्षेप करैत छथि जे ई लोकनि अपन क्षुद्र स्वार्थ-

पूर्त्तिक हेतु शास्त्रकेँ भजौनाइ छोड़ि आओर किछु नहि करैत छथि। वैज्ञानिक मनोवृत्तिक सर्वथा अभाव अछि। मुदा हिनका लोकनिक दावा अपन-अपन नुस्खा पर सर्वोपरि छनि जाहिसँ मात्र समाजक शोषण कय रहल छथि। लेखक एक बेर फेर धर्मावलम्बी ब्राह्मण वर्ग पर लेखनीक प्रहार करैत छथि। संगहि पश्चिमी सभ्यतामे भेल वैज्ञानिक मनोवृत्तिक उत्कर्ष दिशि सेहो संकेत करैत छथि जे अंग्रेजी शिक्षाक श्रेष्ठता सिद्ध करैत अछि।

पश्चिमी सभ्यताक उच्चता 'ब्राह्मण भोजन'मे सेहो परिलक्षित अछि। एहिमे ब्राह्मण लोकनि समाजक अन्यवर्गकेँ धर्मशास्त्रक हथकंडासँ कोना शोषित करैत रहलाह अछि तकर उल्लेख अछि। लेखक धर्मावलम्बी ब्राह्मण-वर्ग पर एतेक प्रखर प्रहार एही तरंगमे कयलनि अछि। लेखकक मतेँ धर्मशास्त्रक दोहाइ पर खेपनिहार शास्त्रानुसारी ब्राह्मण लोकनि समाजक लेल बोझ परक आँटी मात्र छथि।

लेखक अपन मान्यताकेँ सिद्ध करबाक लेल एहूसँ आगू बढ़ि जाइत छथि—'रामायण', 'महाभारत', 'देवताक चरित्र', 'दुर्गापाठ' ओ 'सत्यदेवक कथा'मे। रामायण ओ महाभारत धर्मग्रन्थ अछि। राम युग-युगसँ धार्मिक संदर्भमे मर्यादा-पुरुषोत्तम मानल जाइत रहलाह अछि। रामक चरित्रमे लेखक विरोधाभास देखबैत छथि जे कोनो नवीन व्याख्या नहि थीक। मुदा लेखक ओहि विरोधाभासक आधार पर ई इंगित करैत छथि जे जखन मर्यादा-पुरुषोत्तमकेँ स्वयं किछु पाखंड रहनि तँ एहि धर्मक नाम पर खेपनिहारकेँ कतेक पाखंड भय सकैत अछि ! एहिना महाभारतोक मान्यता प्राप्त धर्मनिष्ठ पात्र सबहक चरित्रमे दोष सिद्ध करबाक चेष्टा कयल गेल अछि। 'देवताक चरित्र'मे सेहो एहने प्रयास भेल अछि। 'दुर्गापाठ'मे पाठ-परम्परा पर चोट कयल गेल अछि जे ई ह्रासोन्मुखी संस्कृतिक अभिशाप थीक। एतय पाठ-परम्परासँ जुड़ल ब्राह्मण वर्ग पर एहि अभिशापक उत्तरदायित्व लेखक दैत छथि। पाठ-परम्परा धार्मिक कर्मकाण्डक एक भाग थिक। धार्मिक कर्म-कांडकेँ लेखक समाजमे पसरल दरबारी मनोवृत्ति, जमीन्दारी मनोवृत्ति, क्षुद्रमनोवृत्ति इत्यादिक कारण मानैत छथि। 'सत्यदेवक कथा'मे लेखक एकरे स्पष्ट करैत छथि। अन्तमे 'ब्रह्मानन्द'मे पश्चिमी सभ्यताक उच्चता परिलक्षित करैत समाजमे धर्मान्धता, मिथ्या गर्व, निष्क्रियता आदि पर प्रहार करैत छथि।

एहि तरहेँ मुख्य रूपेँ ई स्पष्ट होइत अछि जे लेखक सांस्कृतिक ह्राससँ क्षुब्ध छथि आ ओहि लेल धर्मक नाम पर पसरल पाखंड ओ ओहि नाम पर दोहाइ देनिहार पाखंडी ब्राह्मण वर्गकेँ उत्तरदायी मानैत छथि। संगहि हिनका पश्चिमी सभ्यताक मूल्यक अनुकरणमे प्रकाशक आशा देखाइत छनि। लेखकक आक्षेप शास्त्रीय दृष्टिकोणसँ कतेक गम्भीर वा हल्लुक छनि से भिन्न बात भेल। महत्त्वक बात ई जे एहि तरंग सबहक पाठक तकबाक कहियो प्रयोजन नहि भेल। पाठक वर्ग अपनहि एकरा लोकि लेलनि जे एकर जनप्रियताक सूचक थीक आ तेँ ई कहि सकैत छी जे एक समयमे हरिमोहन झा मैथिली साहित्यमे एकटा आन्दोलन रहलाह। मैथिली गद्य पढ़बाक दिशि लोकमे प्रवृत्ति जगयबामे एही आन्दोलनकेँ सबसँ बेसी श्रेय छैक। समाजशास्त्रक दृष्टिसँ लेखकक एहि कृतिक इएह पक्ष महत्वपूर्ण अछि।

आब प्रश्न उठैत अछि जे कोन तरहक पाठक वर्ग हरिमोहन झाक 'तरंग'सँ प्रभावित भेल। जेना पहिने प्रस्तुत कयल गेल जे एहि 'तरंग' सबहक प्रहार छल मैथिल ब्राह्मणक धर्मावलम्बी वर्ग पर आ उद्गार छल पश्चिमी सभ्यताक उत्कर्षक प्रति। तेँ मैथिल ब्राह्मणक एहि धर्मावलम्वी वर्गक प्रच्छन्न वा प्रत्यक्ष रूपेँ विरोधी जे वर्ग समाजमे छल ओकर आक्रोशक स्वर 'तरंग'क तालसँ मेल खेलक। सबहक अपील ओकर अपन अपील भय गेल। एहिसँ एकटा आओर प्रश्न उठैत अछि जे मैथिल ब्राह्मणमे पोङा-पंथी वर्गक विरोधी कोन-कोन वर्ग छल आ ओकर आकार कतेक पैघ वा छोट छल? एहि प्रश्नक उत्तर तकबाक लेल मिथिलाक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य दिशि अवलोकन करय पड़त।

मिथिलाक गौरव-गरिमा हिन्दू धर्म एवं विद्याक एक केन्द्र होयबामे रहल अछि। धार्मिक कर्मकाण्डक प्रबल जोर एहिठाम रहल। संगहि प्राचीन संस्कृत विद्यामे नव्यन्याय सबसँ प्रतिष्ठित भेल। एहू शताब्दीक आरम्भमे कर्मकाण्डीक प्रभाव बहुत प्रबल छल आओर अंग्रेजी विद्याक प्रति कोनो आदर-भाव नहि छल। तेँ अंग्रेजी शिक्षा दिशि प्रवृत्ति रखनिहार लोकनिकेँ गतानुगतिकतावादी वर्गसँ विरोध-भाव उत्पन्न भय गेल। इएह विरोध सुनगैत-सुनगैत प्रगट भय गेल १९३०क दशकक स्वदेशी-विलैंती आन्दोलनमे—ई आन्दोलन भेल तत्कालीन महाराजाधिराज कामेश्वर सिंहक विदेश गमन पर। दरभंगा राजपरिवार सदासँ मिथिलाक धार्मिक कट्टरताक स्तम्भ रहल। संस्कृत विद्या ओ कर्मकांडक प्रबल पोषकक रूपमे एहि परिवारक मर्यादा मिथिलामे सर्वमान्य छल। एहि पृष्ठभूमिमे महाराज कामेश्वर सिंह, जे पश्चिमी सभ्यतासँ बहुत प्रभावित छलाह, समुद्र-लंघन कयलनि। समुद्र-लंघन धार्मिक दृष्टिसँ महा अनुचित मानल जाइत छल। महाराजक ई डेग धर्मान्ध लोकनिपर सबसँ प्रबल प्रहार छल जकर फलस्वरूप हुनका विरोधमे बहुत आन्दोलन भेल। महाराज जातिसँ बहिष्कृत भेलाह। गम्भीर-सँ-गम्भीर अपमानक शिकार भेलाह। मुदा ओ सब बरदास्त कयलनि। हुनका पक्षमे ओहि समयमे बेसी लोक नहि भय सकलथिन, कारण जे अंग्रेजी शिक्षा तखन कम्मे व्यक्तिकेँ भेल छलनि[8] आ तेँ पश्चिमीकरण वा आधुनिकीकरणक पक्ष लेनिहार अत्यन्त छोट एवं कमजोर वर्ग छल। विलैंती पक्ष लेनिहारकेँ समाजमे शास्त्रानुसारी वर्ग (स्वदेशी पक्ष)सँ बहुत तरहक अपमान १९३० एवं १९४० क दशकमे भेलनि। एकर फलस्वरूप स्वदेशी (orthodox पक्ष) आ विलैंती पक्षक विरोध बढ़िते गेल। एहि संग विलैंती पक्ष सबल होइत गेल। कारण, अंग्रेजी पढ़वा दिशि झुकाव समाजमे बढ़ैत गेल।[9] मैथिल ब्राह्मण समाजक भीतर अंग्रेजी शिक्षा-प्रेमीक वर्ग स्वतन्त्रता-प्राप्तिक बादक दशक अबैत-अबैत बहुत पैघ भय गेल। हरिमोहन झाक परिवार एवं ओ अपनहुँ एहि वर्गक छलाह। संगहि पांडित्य (संस्कृत शिक्षा) क परम्परा सेहो छलनि। तेँ धर्माचरणक कमजोर स्थान सब सँ अवगत छलाह आ एहन समयमे 'तरंग' प्रवाहित कयलनि जखन ओकर पक्ष लेनिहारक संख्या पर्याप्त भय गेल। ततबे नहि, मैथिल ब्राह्मण समाजक अतिरिक्त मिथिलामे अन्यो जातिक लोक सब एकर स्वागत कयने होयत। एकरो ऐतिहासक कारण अछि। अन्य संदर्भमे प्रस्तुत रचनाक लेखक विवेचना कयलनि अछि जे मिथिलामे मैथिल ब्राह्मण एवं कायस्थकेँ शेष जनसमुदाय (masses)सँ कोना विरोध रहल।[10] ब्राह्मण लोकनिक शोषणसँ निम्न जातीय वर्गक लोक

सब विक्षुब्धे छल। हरिमोहन झाक 'तरंग'मे ओहू वर्गक किछु भावना प्रवाहित छल। तेँ ओहू वर्गक लोकमे जकरा सबकेँ लिखवा-पढ़वाक अवगति छलनि तनिका धरि 'तरंग' अवश्य पहुँचल होयत आ हुनका माध्यमसँ मौखिक रूपेँ अनपढ़ समुदाय तक हरिमोहन झाक नाम अवश्य गेल होयत।

एहि तरहेँ हरिमोहन झाक कृति (जकर विवेचना कयल गेल अछि) एक विशाल समुदायक भावनाकेँ प्रतिभासित कयलक। हिनक लोकप्रियता स्वाभाविके छनि, मुदा कालक्रममे समाजक ओ संदर्भ वदलि गेल। आब ब्राह्मण लोकनिमे सेहो ओहेन धर्मान्ध व्यक्तिक चर्चा असामयिक अछि। जातीय शोषणक आधार धर्मशास्त्रक नुस्खा नहि रहल। तेँ एखन (१९८०क दशक) 'तरंग'सँ मोनमे ओतेक हिलकोर नहि उठत, किन्तु जहिया उठल से पर्याप्त उठल।

प्रसंग-निर्देश

१. खट्टर ककाक तरंग, पृ० २१४, भारती भवन, पटना, १९६७

२. ओएह

३. ओएह "निवेदन"

४. वर्णरत्नाकर, प्रो० आनन्द मिश्र एवं पंडित गोविन्द झा, पृ० १३९, मैथिली अकादमी, १९८०

५. *Aini Tirhut*, पृ० ४९

६. खट्टर ककाक तरंग, पृ० ८

७. स्व० कुमार गंगानन्द सिंहक पत्र सबहक संकलनमे (जे अद्यावधि अप्रकाशित अछि) एहि आन्दोलनक विशद वर्णन भेटैत अछि जे समाज कोना एहिसँ प्रभावित भेल। मैथिल ब्राह्मणक हेतु महाराज कामेश्वर सिंहक विदेश-गमन एक सामाजिक क्रान्ति आनि देलक। एकर संस्मरण ओ तत्कालीन उथल-पुथलक वहुत लिखित प्रमाण पं० श्री दुर्गानाथ झाक (ग्राम नवटोल, मधुबनी) सौजन्यसँ प्राप्त भेल।

८. १९१७मे योगानन्द कुमर द्वारा तैयार कएल गेल **मैथिल ब्राह्मण डाइरेक्टरीसँ** पता चलैत अछि जे प्रवासी एवं मिथिलामे वसनिहार सब मिलाकय एम० ए० मात्र ६ व्यक्ति छलाह, बी० ए० मात्र ३९ व्यक्ति, इन्टरमिडियेट मात्र ४१ व्यक्ति ओ मैट्रिकुलेट मात्र १९२ व्यक्ति। १९१७सँ १९३० धरि एहि संख्यामे कोनो अत्यधिक वृद्धि भय गेल होएत से नहि सोचि सकैत छी, कारण जे मिथिलामे अंग्रेजी शिक्षाक प्रसारक कोनो तेहेन प्रयास नहि भेल। ओहिनो १२-१३ वर्षक अभ्यन्तर केहनो infrastructure तैयार रहलासँ शिक्षामे spectaculer वृद्धि वहुत कठिन अछि। मिथिलाक स्थिति ओहि समयमे जे छल ताहिसँ एतवे अन्दाज कय सकैत छी जे किछु नगण्य वृद्धि अंग्रेजी शिक्षा लेनिहारमे भेल होएत।

९. ई बात एहिसँ स्पष्ट होइत अछि जे १९१७क डाइरेक्टरीक अनुसार प्रवासी मैथिल छोड़ि मात्र १ व्यक्ति मिथिलास्थ मैथिल ब्राह्मण सबमे एम० ए० छलाह। पटना कॉलेजक एडमिशन रजिस्टरक मोताविक १९४२ ई०मे ६ व्यक्ति एम० ए०मे छलाह। एकर अतिरिक्त पटना कालेजक एडमीशन रजिस्टरसँ इहो आँकड़ा भेटल जे १९२९ ई०मे प्रथम वर्षसँ लय एम० ए०क फाइनल इयर धरि मैथिल ब्राह्मणक संख्या मात्र १४ छल जे १९३२-३३मे १६ भेल आ १९३६ ई० मे २१ भय गेल। एकर अतिरिक्त आओर कोनो आँकड़ा उपलब्ध नहि अछि। मुदा एतबोसँ ई स्पष्ट होइत अछि जे अंग्रेजी शिक्षा लेनिहारक संख्या बढ़ैत गेल।

१०. 'Elite,-Mass Contradiction is Mithila in historical perspection. *Elite and Development* Eds. Dr. Sachchidanand and Dr. A. K. lal, Concept Publishing House, New Delhi, 1980. pp 187-205

प्रोफेसर हरिमोहन झा एवं हुनक 'खट्टर ककाक तरंग'

डॉ० प्रभावती झा

मैथिली साहित्यक इतिहासमे प्रो० हरिमोहन झा एकटा एहन नाम अछि जे मिथिला आ' मिथिलासँ वाहरो मैथिली साहित्यक क्षेत्रकेँ प्रशस्त एवं जगजिआर करबाक हेतु लेल जाइछ। एखन धरि एहि साहित्यक विभिन्न विधामे जे न्यूनाधिक विकास वा सर्जनात्मक कार्य भेल अछि, तकर अध्ययन-अनुशीलनसँ ई सहजहि स्पष्ट भए जाएत जे प्रोफेसर झाक विशिष्टता हुनका फराके रखैछ।

एक दिशि जँ हुनक 'कन्यादान' तथा 'द्विरागमन' मिथिलाक सामाजिक जीवनक व्याख्यात्मक आलोचनाक रूपमे पाठकक सोझा आएल एवं उपन्यासक विधाकेँ समृद्ध कएलक, तँ दोसर दिशि 'प्रणम्य देवता' आओर 'रंगशाला' रस-कौतुक कथा सभक सृष्टि कएलक। तहिना 'चर्चरी'मे जँ विविध मनोरंजक गप्प, प्रहसन इत्यादिक समाहार भेल अछि, तँ 'खट्टरककाक तरंग'क प्रस्तुति भेल एकटा अद्भुत तर्क-लहरीक रूपमे।

अपन देशक सभ्यता एवं संस्कृति अति प्राचीन अछि। एहिठाम समय-समय पर वाह्य संस्कृतिक जे प्रभाव पड़ल आ सभक प्रभावसँ जे संस्कृति आइ विकसित भेल से थिक समन्वयवादी संस्कृति। दिनकर जी एहि संस्कृतिकेँ 'संस्कृतिके चार अध्याय' नामक ग्रन्थमे 'सामासिक संस्कृति'क संज्ञा देल अछि। हरिमोहन वावू दर्शन-शास्त्रक पण्डित होएबाक कारणेँ अपन मैथिली-लेखनमे सभठाम समन्वयवादी संस्कृतिक आश्रय ग्रहण कएलैन्हि अछि। खट्टरककाक व्यक्तित्वमे समन्वयवादक दर्शन होइछ।

खट्टरकका जेँ विनोदी व्यक्ति छथि तेँ हुनक प्रत्येक वात विनोदपूर्ण होइत छैन्हि। ओ (खट्टरकका) भौतिकवादक जेँ समर्थक छथि तेँ लोक हुनका अभिनव चार्वाक कहैत छैन्हि। खट्टरककाक सिद्धान्त छैन्हि —'यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्'। हुनका सूर चढ़ैत छैन्हि तँ स्वर्ग-नरक, आत्मा-परलोक, पुनर्जन्म-मोक्ष, धर्म-अधर्म सभकेँ भंगक तरंगमे बहाए दैत छथि; वेद-पुराण, धर्मशास्त्र, तंत्र-मंत्र, ज्यौतिष, आयुर्वेद सभक धज्जी उड़ाए दैत छथि। भगवानोसँ परिहास करवामे ओ नहि चुकैत छथि। जेँ प्रो० झा केँ पाखंडक खंडनमे विशेष रस भेटैत छैन्हि तेँ हुनक खट्टरकका सामाजिक रूढ़ि वा अंध-विश्वास पर प्रहार करबाक हेतु सदिखन प्रस्तुत रहैत छथिन्ह। तर्कक दाव-पेँचसँ ओ अपन प्रतिपक्षीकेँ चित्त कए दैत छथि आ विनु 'हरदि-चून' बजवओने नहि छोड़ैत छथि।

खट्टरकका मात्र शुष्क तार्किकेटा नहि, सरस साहित्यिको छथि। हुनक बात-बातमे तेहन श्लेष, यमक, वक्रोक्ति आदिक चमत्कार भरल रहैत छैन्हि जे श्रोता मुग्ध भए जाइत छथि।

वस्तुतः खट्टरकका थिकाह स्वच्छन्द चिन्तन ओ बुद्धि-विलासक प्रतीक । सामान्यतः जाहि बातके लोक ठीक कऽ कऽ बुझैत अछि, तकरा विलक्षण युक्तिसँ काटि, ओकरा उनटा सिद्ध करबामे, आओर अद्भुत बात कहि श्रोताके चकित करबामे, हुनका बड़ मोन लगैत छैन्हि । एहि कलामे ओ तेहन प्रवीण छथि जे चुटकी बजबैत उनटे गंगा बहा दैत छथि । हँसी-हँसीमे तेहन मार्मिक बात कहि दैत छथिन्ह, हास्यक पुट दैत तेहन सूक्ष्म नश्तर लगा दैत छथिन्ह जे श्रोता तिलमिला उठैत छथि आओर खट्टरकका हुनका विस्मय-विमूढ़ देखि मुस्कुरा उठैत छथि । इएह छैन्हि खट्टरककाक विशेषता, जाहिसँ ओ लोकके आकृष्ट करैत छथि । हुनकामे एक गुण किंवा अवगुण छैन्हि जे ओ स्पष्टवक्ता छथि । धाख-संकोच वा लाइ-लपटाइ नहि रखैत छथि । तेँ किछु गोटे हुनका पर ग्राम्य वा अश्लीलताक दोषारोपण सेहो करैत छथि । परञ्च एही यथार्थवादिताके लऽ कऽ खट्टरककाक 'खटरत्व' छैन्हि ।

'खट्टर ककाक तरंग'क १९६७मे प्रकाशित जे संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण मैथिली जगतमे पाठकक सोझाँ आयल ताहिमे नव-पुरान मिला कए तीसटा तरंगक विन्यास भेल अछि, जेना (१) दही चूड़ा चीनी, (२) चाणक्यक जन्म भूमि, (३) माछक महत्त्व, (४) आयुर्वेद, (५) रामायण, (६) दुर्गापाठ, (७) ब्राह्मण भोजन, (८) सत्यदेवक कथा, (९) ज्योतिष, (१०) महाभारत, (११) देवताक चरित्र (१२) ब्रह्मानन्द, (१३) शास्त्रक वचन, (१४) प्राचीन आदर्श, (१५) भूतकमंत्र, (१६) चन्द्रग्रहण (१७) पंडितक गप्प, (१८) गीताक मर्म, (१९) मोक्षक विचार, (२०) भगवानक चर्चा, (२१) धर्मक महत्व, (२२) पुरातन सभ्यता, (२३) मिथिलाक संस्कृति, (२४) काव्यक रस, (२५) पुराणक चाशनी (२६) दर्शन शास्त्रक रहस्य (२७) वेदक भेद । परिशिष्टक अन्तर्गत (१) खट्टरककाक परिचय, (२) खट्टरककासँ भेँट तथा (२) खट्टरककाक गप्प संगृहीत अछि ।

खट्टरककाक तरंगमे तरंगित जतेक उत्कृष्ट हास्य बूझि पड़ैछ ताहिसँ वेसी मिश्रण अछि व्यंग्यक । हास्यक आवरणमे आवेष्टित खट्टरककाक प्रत्येक कथ्य एवं तर्क दर्पण जेकाँ झलकैत अछि । यद्यपि एहिमे मैथिल लोकनिक सामाजिक जीवनक व्यंग्यमय झाँखी देखाओल गेल अछि अवश्य, किन्तु व्यापक दृष्टिसँ विचार कयला सन्ताँ एहिमे बुद्धि-विलासिताक तरमे रसिकता पिचाएल जकाँ बुझि पड़ैछ । समाजक जाहि अंग पर हरिमोहन बाबू हँसैत-हँसैत प्रहार कएलन्हि ओतए फोँका धरि अवश्य वहरा जाइछ । इएह कारण अछि जे नवतुरिया वर्गके छोड़ि वृद्ध लोकनिक चौपाड़िमे हिनक गप्प कम लोकके प्रभावित कए सकल ।

कहल जाइछ जे हास्य आओर व्यंग्यक बीच कोनो स्पष्ट सीमा-रेखा नहि रहैछ जे एक दोसराक सम्बन्धके फराक कए सकए । परञ्च कटु सत्यक उद्घाटनमे कोमलता आनबाक लेल हास्यक रंग चढ़ाओल जाइछ । वस्तुतः जखन कोनो गप्प परिहासक निमित्त होइत अछि तँ ओ हास्य कहबैत अछि, जकर उद्देश्य मात्र मनोरंजने टा रहैछ । मुदा निहित उद्देश्यके ध्यानमे राखि कोनो विषय, परिस्थिति वा सामाजिक विषमता पर आक्षेप करबाक धारणा लए कए कएल गेल हास्य हास्येटा नहि रहैत अछि, अपितु ओ तीक्ष्ण व्यंग्यबाण बनि प्रहार सेहो करैछ । ओहिठाम व्यंग्य हास्यक आवरणमे अपन निहित उद्देश्यक उपस्थापनमे सफलता प्राप्त करैछ । ई हास्यक आवरण व्यंग्यक तीक्ष्णताके कोमलता प्रदान कए नहुँ-नहुँ व्यंग्य कएल गेल वस्तुके खकसिआह करैत

रहैछ। इएह कारण थिक जे प्रो० झाक व्यंग्य-विनोद सभके पसिन्न नहि होइत छैन्हि। जनिका हिनक व्यंग्य नहि सोहाइत छैन्हि, से सहजहि कटु आलोचना करए लगैत छथि।

खट्टर ककाक तरंग थिक चमकैत तरुआरि जाहिमे दून दिशि धार छैक। एक मारक धार आ दोसर सम्हारक धार। एहि तरुआरिक प्रथम धारसँ समाजमे प्रचलित रूढ़िवादी व्यवहार तथा क्रिया-कलापक दिग्दर्शन कराओल जाइछ आ दोसर धार ओहिमे निहित अवलाह पक्षक मार्जन करैछ। व्यंग्यकार सामाजिक जीवनक चित्रण करैत ओहिमे व्याप्त त्रुटिक बहिष्कारो करैछ। विलाड़ि बान्हिकें एकोद्दिष्ट करब एवं पाचक खाए भोजन-शक्तिकें उद्दीप्त करबा सन अन्धविश्वासी धारणाक प्रति व्यंग्यक तीक्ष्ण कटाक्ष कए ओकर मार्जनक प्रयास हिनक अद्वितीय प्रतिभाक उद्घोष करैत अछि।

वस्तुतः जखन समाज-सुधार करबालेल व्यंग्यक प्रयोग कएल जाइत अछि तँ सामाजिक तथ्य सभक सोझाँमे अबैछ तथा व्यंग्य ओहि तथ्यक चित्रणमे योगदान दैछ। व्यंग्यक माध्यमसँ समाज एवं संस्थादिक कलुष विचार, रूढ़िवादी धारणा तथा भेद-भावक संकुल स्थितिक निराकरण होइछ। खट्टरककाक तरंगमे प्रत्येक वस्तु सुधारात्मक अछि आ' ओ सामाजिक अन्धविश्वासी तत्वकें सोझाँमे आनि ओकर मार्जन करैछ।

हरिमोहन बाबूक खट्टरकका हिन्दीक संग-संग बंगला, गुजराती, मराठी इत्यादि क्षेत्रहुमे अनभुआर नहि रहलाह। खट्टरककाक तरंगमे ठाम-ठाम आदर्शवादक जे पुट भेटैत अछि तकर पृष्ठभूमि थिक हरिमोहन बाबूक यथार्थवाद। खट्टरककाक मत छैन्हि जे 'जकरामे पुरुषार्थ छैक से सवा कट्ठासँ सवा सय बीघा बना लैत अछि। जे अकर्मण्य रहैत अछि से ओतबए लए संतोष करैत अछि। (मिथिलाक संस्कृति, पृ०१५९।)

खट्टरककाक परिचय लेखक महोदय स्वयं हुनके मुहेँ एहि प्रकारेँ दिआवैत छथि—"हौ हम छी मुहफट्ट। लाइ-लपटाइ जनबे नहि करैत छी। तेँ ठाँइ-पठाँइ बात लोककें कहि दैत छियैक। सम्भव जे किछु गोटाकें बेस तीख-चोख लगैन्ह, परन्तु किछु गोटाकें तेहन झँसिगर लगतैन्ह जे आँखि-नाकसँ पानि बहय लगतैन्ह।"

मनोवैज्ञानिक दृष्टिसँ खट्टरककाक तरंगक महत्व पृथक अछि। खट्टरककाक 'ईगो' एहि शब्दावलीसँ परिलक्षित होइछ—"हौ वंशज ककर छी? रक्तक धर्म कतहु छुटलैक अछि? विज्ञानक उन्नति करबा लेल तऽ पृथ्वी पर और-और जाति अछिए। कल्पना-विलासक भार तऽ सेहो ककरो ऊपर रहक चाही। से मनमोदक बनैबाक भार हमरा लोकनि पर अछि।"—(खट्टर ककाक तरंगः 'प्राचीन आदर्श', पृ० ९३)।

डॉ० जयकान्त मिश्रक अनुसार आधुनिक गद्यक क्षेत्रमे खट्टरककाक तरंगक परिधि व्यापक अछि। हुनक शब्दमे खट्टरकका मनुष्य एवं पदार्थक विलक्षण व्याख्या प्रस्तुत करैत छथि।

जनः तपः सत्यम् : खट्टर ककाक तरंग

श्री राम चेतन्य धीरज

संस्कृति परम्परागत संस्कारकेँ द्योतित करैत अछि। भारतीय शास्त्रमे एहि संस्कारक व्याख्या दू रूपमे भेटल—एकटा ताला लागल बाकसमे, दोसर व्यावहारिक रूपमे पसरल पेटारमे। बाकसमे वन्द शास्त्रक मूल्यक आधारहि पर पौराणिक व्याख्यान जन-समुदायमे व्याप्त भेल, जे जन-समुदायक आँखिमे कारी पट्टी वान्हि ओकरा दिग्भ्रमित करैत रहल अछि। दुर्भाग्य जे वन्द वाकस भेटलैक एकटा सपेराकेँ जे गरदनिमे अजगर लपेटि तथा जोर-जोरसँ चिकरि वड़का भीड़ एकत्रित कऽ लैत अछि; एवं दोसर पेटार देसि संकेत कऽ लोकक ध्यान आकर्षित करवाक हेतु कहैत छैक—"एहू पेटारमे छोट, मुदा वड्ड विषाह साँप अछि।" जन समुदाय ओहि अजगरकेँ देखि विश्वास कऽ लैत अछि जे ठीके एहू पेटारमे साँप हेतैक आ सँपेरा अपन गोटी लाल क' लंक लैत अछि।

प्रो० हरिमोहन झा ओहि 'पेटार'केँ खोलि सभक समक्ष अनवाक प्रयास कयलनि अछि, जे देखू एहि पेटारमे की थिक! 'चूड़ा-दही चीनी' सँ लऽ वेदक भेद धरिक कथामे वर्णित विवेचन सिद्ध करैत अछि जे समाजक अंधानुकरण, कुव्यवस्था, रूढ़िवादिता वर्गवादी देन थिक। ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम्क विवेचकलोकनि वुद्धिवादी वर्गक नेता (देवता) लोकनिक विरुदावलीक सृजनमे तन्मय भऽ गेलाह। जनः तपः सत्यम्क विशाल परिवेश छिड़िया गेल। मानव जीवनक भौतिक यथार्थ मिथ्या भऽ गेल आ खट्टर कका जाहि सत्यक उद्घाटन कैलनि यैह सत्य सामाजिक व्यावहारिक सत्य वनल रहल।

आचार्यलोकनि स्वीकार कयलनि अछि जे मनुक्खक काम-शक्ति ओकर स्वाभाविक प्रेरणा थिक; जे समाजकेँ सामाजिक स्वरूप प्रदान करैत अछि। 'वेदक भेद कथा'मे स्त्री तथा पुरुषक यौन सम्बन्धी स्वतन्त्रताकेँ विवेचित कऽ व्यंग्यकार एहि सत्यकेँ उद्घाटित कैलनि अछि—"हौ, जे राति-दिन मदिरामे डूबल रहत से आओर करबे की करत ?"

ओना ऋग्वेदक बहुतरास मंत्र स्वतन्त्र जीवनक आदर्शक चरमविन्दुकेँ स्पर्श करैत अछि।

मुदा जाहि जीवनक कामना सामाजिक स्वरूपकेँ प्रारम्भमे एकटा व्यवस्था देलक से स्थिर नहि नहि रहि सकल। व्यवस्था पतनोन्मुख भऽ गेल। सम्पूर्ण जनमानसक हेतु राजा वर्ग ईश्वर भऽ गेलाह, हुनक कुकृत्यक बिरुदावली मोक्ष-प्राप्तिक साधन भऽ गेल आ जन-जीवन हुनक समक्ष आत्म-समर्पण क' देलक। अधिकतर पुराणमे युग-पुरुषक वीरता एवं रोमांसक नाटकीय वर्णन कैल गेल अछि।

मुदा खट्टर कका मात्र रोमेन्टिक वातावरणकें उपस्थित कऽ देवतालोकनिक व्यभिचारे टाकें चित्रित कयलन्हि अछि। पुराण सभमे संकलित अश्लील श्लोकक उदाहरण दऽ अपन मतकें ठोस आ प्रामाणिक बनौलनि अछि।

ब्राह्मण भोजनक व्यवस्था, दुर्गापाठक पद्धति तथा चूड़ा-दही-चीनीक महत्त्व प्रभृति वास्तविकताकें उद्घाटित करैत व्यंग्यकार स्पष्ट कऽ देने छथि जे भृत्यता प्रवृत्ति, स्थावर भऽ उदर भरवाक मनोवृत्ति 'विश्वासः फलदायकः' एवं 'इत्थं यदा यदा बाधेति श्लोक जपे महामारी शान्तिः' प्रभृति अवैज्ञानिक तर्क मैथिलकें आलसी एवं पंगु प्रकृतिक बना देलक अछि।

पुराणकार सुरा-सुन्दरीक मध्य स्थित देवता वर्गक रोमेन्टिक आ ओजस्वी भेप-भूपाक चित्रण कऽ अपन स्वार्थ सिद्ध कयलनि। वस्तुतः एहि कथा सभमे वर्णित चरित्र जे स्थान एवं महत्त्व पाओल अछि, ओहिमे बहुत रास कपोल-कल्पित कथ्यक असामाजिक समावेश कैल गेल अछि। पौराणिक कथा सभमे 'रसना रोचन श्रवण विलास'क माधुर्य-प्रवृत्तिकें सरस आ सुन्दर वना अर्थ उपार्जनक माध्यम बनाओल गेल। खट्टर ककाक शब्दमे—"हौ, हमरा तँ बुझि पड़ै अछि, जे ई सभ पंडाक प्रॉपगंडा छैक। केहनो घोर पाप करू, अमुक तीर्थमे आबि कऽ स्नान करू, शुद्ध भऽ जायब, ओ एना महात्म्य वर्णन नहि होयतैक तँ पंडा-पुरोहितकें आमदनी कोना होइतैन्ह ?"

मुदा पूँजीवादी तथा कर्मकांडी परिवेशमे जनशिक्षाकें उपयुक्त नहि मानल गेल ! मानल की गेल तँ 'प्राचीन आदर्श'। एहि आदर्शकें स्थायी महत्त्व प्रदान कऽ नारीक मानसिक उत्तेजनाकें तीव्र करबाक हेतु राम, कृष्ण, ब्रह्म, इन्द्रादि देवता सदृश पति एवं मोक्षक प्रलोभन देल गेल तथा गढ़ि-गढ़ि कऽ एकटा एहन आध्यात्मिक परिवेश वा वातावरणक निर्माण कैल गेल जे अन्धविश्वासकें सुनियोजित कयलक आ इएह सभ भरल अछि 'शास्त्रक कथन'मे जकर भंडाफोड़ खट्टर कका कयलनि।

सामाजिक चेतना, सम्यक् मनोवृत्ति तथा संश्लिष्ट साधनाक परिणाम 'जन' होइत अछि। ओ ने कोनो वैयक्तिक सत्तामे सम्भव अछि आ ने कोनो संकुचित जीवन प्रवाहमे, ओ सम्भव अछि विशाल, विवेकशील प्रगति, सहृदय सभ्य सत्तामे। पंडितक एहि रूपकें उद्घाटित करैत खट्टर कका एहि सत्ताकें प्रमाणित कयलनि अछि—"असली पंडित विद्याक अन्वेषणमे रहैत छथि, नकली पंडित विदाइक अन्वेषणमे, असली पंडित ज्ञानक विस्तार करैत छथि, नकली पंडित धोधिक विस्तार। असली पंडित मूर्खताक संहार करैत अछि, नकली पंडित मधुरक संहार।" आ जखन मधुरक संहार साधन भऽ जाइत अछि तँ सत्यमक परिवेश संकुचित एवं पिजड़ाबद्ध भऽ जाइत अछि।

भारतीय दर्शनमे जँ एक दिसि विकर्षण अछि तँ दोसर दिसि आकर्षण। एहिमे वहुतरास प्रगतिवादी आ सार्थक तत्व समाहृत अछि। एकर उदाहरण थिक जनः तपः सत्यम् विस्तृत स्वरूप। एहि पोथीमे हमरा जनैत एकरे वास्तविकताकें प्रकाशित कैल गेल अछि।



भाषाक जादूगर हरिमोहन झा

पं० श्री गोविन्द झा

जादू शब्द वैदिक यातु शब्दसँ बनल अछि। दानव जादू जनैत छल तेँ 'यातुधान' कहबैत छल। जादूक मूल अर्थ होइत अछि ककरहु अभिभूत कए देबाक दिव्य सिद्धि वा जोग-टोन। भाषाक असरि लोक पर ओहिना पड़ैत छैक जेना जादूक। तेँ भाषा सेहो एक प्रकारक जादू थिक आ तकर सफल प्रयोक्ता प्रो० हरिमोहन झाकेँ जँ भाषाक जादूगर कही तँ कोनो अनुचित नहि होएत। जे केओ हिनक रचना पढ़ने होएताह तनिका महाकवि चण्डीदासक शब्दमे अवश्य ई भावना भेल होएतन्हि जे 'कानेर भितर दिया मरमे पसिल गो आकुल करिलो मम प्रान।' अतः सहजहिँ जिज्ञासा होइत अछि जे कोन तरहक भाषा सुनैत देरी "कानक भीतर देने मर्ममे पैसि जाइत छैक, आ कोन तरहक भाषा कानमे ठुसनहु नहि ठुसाइत छैक। एकर उत्तर सोझ भाषामे ठीक-ठीक देब कठिन अछि। तथापि एतबा कहि सकैत छी जे लोक सामान्य दैनन्दिन व्यवहारमे जेहन उक्ति सुनबामे अभ्यस्त रहैत अछि तेहने उक्ति ओकर कानमे अनायास पैसैत छैक आ हृदयमे बैसैत छैक। साहित्यक समीक्षकलोकनि भाषाक एहि गुणकेँ सहजता वा स्वाभाविकता कहैत छथि। प्रो० हरिमोहन झाक भाषामे इएह सहजता वा स्वाभाविकता भरल रहैत अछि आ से जादू जेकाँ असरि करैत अछि।

भाषामे सहजता की थिक तकरा कनेक आओर फरिछाएकेँ देखल जाए। मनुष्य जे भाषा बजैत अछि से ओ स्वयं रचैत नहि अछि। भाषा के कहए, अपन वाग्व्यवहारमे कोनो टा उक्ति (utterence) ओकर अपन रचल नहि रहैत छैक। वास्तवमे ओ अपन पूर्ववर्तीक नकल करैत अछि आ' परवर्ती ओकर नकल करैत छैक। एहि परम्परानुगत अविच्छिन्न प्रवाहमे भाषा जीवैत आ आगाँ ससरैत अछि। मनुष्य कोनो खास परिस्थितिमे, कोनो खास मनस्थितिमे कोनो खास प्रकारक वाक्प्रयोग (मोकल एक्सरसाइज) करैत अछि। दोसर मनुष्य से देखैत अछि ओ ओहन परिस्थिति एवं मनस्थिति अएलापर ओहो ओही प्रकारक वाक्प्रयोग करैत अछि, आ इएह भेल नकल करब।

प्रत्येक उक्ति नकल होइत अछि किएक तँ प्रत्येक उक्तिक एकैटा निर्धारित विन्यास, फ़िक्स्ड पैटर्न होइत छैक आ तहिना प्रत्येक परिस्थिति आ मनस्थितिक सेहो खास-खास पैटर्न होइत छैक। एहू दूनूक पैटर्नकेँ तथा पैटर्नक प्रत्येक पारस्परिक सम्बन्धकेँ जे जतेक नीक जेकाँ जनैत अछि से ततेक सहज-स्वाभाविक भाषा लिखि सकैत अछि। दोसर शब्दमे परिस्थितिक शब्द प्रतिक्रियाक अनुकृति वा अभिनयमे प्रवीणता प्राप्त भेनहि केओ सहज भाषा लिखि सकैत अछि। प्रो० झा एहि

अनुकृति वा अभिनयमे कतेक प्रवीण छथि से हिनक लिखित साहित्य पढ़ने जतबा बुझबामे आओत ताहि सँ कति गुण बेसी हिनक रोचक गपमे।

प्रो० झाक सहजता-गुणकें हम सर्वोपरि स्थान दैत छी, तें एहि प्रसंग किछु अधिक बढ़िकें लिखल। एकर अर्थ ई नहि बूझल जाए जे साहित्यकारमे केवल अनुकृति-क्षमते टा चाही, वा ओकरामे भाषापर अपन कृतित्व किछु नहि रहैत छैक। वास्तवमे अनुकृतिक संग-संग प्रयोक्ताक किछु अपनो गुण होइत छैक। प्रयोक्ताक पाएर भनहि पूर्ववर्णित पैटर्नक डोरीमे बन्हाएल हो, परन्तु ओहि डोरीक लम्बाइक भीतर किछु खेल-तमाशा, किछु कूद-फान ओ अपन रुचि वा प्रतिभासँ सेहो कए सकैत अछि। भाषाक ई कूद-फान सहज नहि, सायास थिक, कृत्रिम थिक, एक तरहक व्यायाम थिक, बुद्धिक व्यायामक भाषात्मक प्रतिच्छवि थिक। प्रो० झा इहो कूद-फान खूब जनैत छथि आ' यथावसर खूब करैत छथि। सामान्य समीक्षक एकरा एक शब्दमे भाषाक चमत्कार कहैत छथि। एहि चमत्कारकें उत्पन्न करबाक तीन गोट मुख्य साधन अछि—अनुप्रास श्लेषादि शब्दालंकार, लक्षणा ओ व्यंजना। भाषामे अलंकारक प्रयोग कतेक व्यापक आ अनिवार्य अछि से 'खट्टरकका'क मुहें 'अलंकार'क कथा सुननिहार स्वयं जानि सकैत छथि। प्रो० झा एहि तीनू साधनसँ जे चमत्कारक सृजन कएलनि अछि तकर उदाहरण हिनक रचनामे यत्र-तत्र प्रकीर्ण अछि; परन्तु भाषाक जादू सभसँ बेसी 'खट्टरकका' जनैत छथि कारण जे ओ 'पण्डित' छथि, सहज भाषाक प्रयोग ढुनमुन काकी, बुच्ची दाइ ओ तत्समकक्ष ग्राम्य चरित्र सभ जनैत छथि, 'प्रणम्य देवता' लोकनि अलंकारक प्रयोगमे ओतेक दक्ष नहि छथि जतेक लक्षणा ओ व्यंजनाक प्रहार करबामे। उदाहरण पाठक स्वयं ताकि सकैत छथि; तदर्थ उद्धरण दए-दए हम लेखकें पँघ करए नहि चाहैत छी।

आब प्रकारान्तरसँ विचार कएल जाए। भाषाक तीन तत्त्व होइत अछि—शब्द तत्त्व, रूप तत्त्व ओ वाक्य तत्त्व। एहिमे दोसर आ तेसर व्याकरणक अन्दर अबैत अछि, अतः एकर द्विधा-विभाजन सेहो कएल जा सकैत अछि—(१) शब्द-तत्त्व ओ (२) व्याकरण-तत्त्व। व्याकरण एक एहन बन्धन थिक जकरा केओ लेखक वा वक्ता तोड़ि नहि सकैत छथि। अतः एहि पर कोनहु लेखककें एको पाइ स्वाधिकार नहि छनि। तखन रहि जाइत अछि शब्दतत्त्व, जाहिपर वक्ताकें पूर्ण स्वतन्त्रता रहैत छैक। शब्द प्रतिक्षण परिवर्तनशील वस्तु थिक आ' एकहि कालमे एके अर्थक हेतु भिन्न-भिन्न शब्द भिन्न-भिन्न वक्ता अपन-अपन रुचिक अनुसार बजैत छथि ओ बाजि सकैत छथि। तें शब्दक प्रयोगमे वक्ता गलतियो बहुत करैत अछि। उचित शब्दक चयन विशेष प्रतिभाक काज थिक। आ' एहूमे, प्रो० झाक प्रतिभा अपूर्व पाओल जाइत अछि।

मैथिलीमे, वा कोनहु आधुनिक भारतीय भाषामे, शब्दक दारिद्र्य नहि, प्रत्युत बाहुल्य अछि। एक दिस पंडित लोकनि कादम्बरी, नैषधीयचरित ओ शिशुपालबधक शब्दक मोटा मैथिलीक माथपर पटकने छथि; दोसर दिस मुसलमान ओ पछिमा काएथ लोकनि अपन अरबी फारसी परस्तीक प्रहार मैथिलीपर करैत अएलाह अछि; तेसर दिस अङरेजिआ बाबू लोकनि अङरेजीक चासनी दैत मैथिलीकें अरस्तूपरस्त अर्थात् अरिष्टाकृष्ट अर्थात् एरिस्टोक्रैट बना रहलाह अछि; चारिम दिस, पूर्वांचल (बङला आदि) सँ सोलहो आना सम्बन्ध तोड़ि केवल पश्चिम दिस मुह घुमओने आ अगबे हिन्दीसँ पेट भरैत

तथाकथित नवीन तूरक मैथिल अन्धाधुन्ध पछिमा हिन्दीक शब्द ओ पदबन्धकेँ मैथिलीमे ठुसने जा रहल छथि; आ' एहि चतुर्दिक आक्रमणसँ त्रस्त मैथिलीक अपन विशुद्ध (तद्भव ओ देशज) शब्दावली केवल मूर्ख जनताक बीच शरणार्थीक जीवन बिता रहल अछि। फलतः बहुधा एक-एक वस्तुक हेतु चारि-चारि वा पाँच-पाँच शब्द एकहि कालमे चलि रहल अछि—(१) तत्सम, (२) तद्भव, (३) अरबी वा फारसी, (४) अङरेजी, (५) हिन्दी। उदाहरणार्थ शक्ति, सक, ताकति, पावर, दम इत्यादि। एहीमे विवेक चाही जे कोन शब्द कतए उचित होएत ओ कतए अनुचित। आ' प्रो० झाक विवेक एहि विषयमे अपूर्व अछि। एकरो उदाहरण देब हम अनावश्यक विस्तार मानैत छी। तथापि एतबा कहल जा सकैत अछि जे जकरा हम मैथिलीक विशुद्ध शब्दावली कहल अछि तकरा प्रो० झा सर्वत्र अग्रता देलन्हि अछि; आ' एकर त्याग ततहि कएलन्हि अछि जतए कोनो विशेष चमत्कारक हेतु से करए पड़लन्हि अछि। केहनो कोनमे दबकल मैथिलीक विशुद्ध शब्द हिनक नजरिसँ दूर नहि अछि। एकर प्रमाण इएह जे मैथिली शब्दकोश बनएबामे डा० जयकान्त मिश्रकेँ तथा हमरा (ज्ञातव्य जे मैथिली अकादमी, पटनामे हमहूँ एक शब्दकोशक सम्पादन-संकलन कए रहल छी) जतेक सामग्री प्रो० झाक रचनामे भेटल अछि ततेक अन्यत्र नहि।

भाषाक प्रसंग मैथिलीमे एक बात आओर विचारणीय होइछ आ' से थिक शैली वा वर्तनी। प्रो० झा एहि प्रसंग बड़ उदार छथि आ' ई जे वर्तनी अपना मनसँ अपन साहित्यिक जीवनक आरम्भहिमे अपनओलनि, से अन्त धरि अपनओने रहलाह, आ' संयोगवश वा सौभाग्यवश आइ अधिकांश लेखक बहुत दूर धरि प्रो० झाक ओहि शैलीकेँ अपनबैत आएल अछि। परन्तु ई बात पुनः स्पष्ट कए देब जे एक शब्द एक वर्तनी वा एक ध्वनि एक व्यंजक एहि निर्विवाद सिद्धान्तक पालन प्रो० झा कहिओ नहि कएलनि। उदाहरणार्थ, हिनक कृति सभमे कैलन्हि, कैलनि, कयलन्हि, कयलैन इत्यादि अनेक रूप देखबामे आओत जे सम्भवतः मुद्रणभ्रम वा हिनक उदार विचारक प्रमाण थिक।



प्रोफेसर हरिमोहन झा आ मैथिली

प्रोफेसर राधाकृष्ण चौधरी

आधुनिक मैथिलीक स्वरूपक स्थापनाक क्रममे जे दू-चारि व्यक्तिक स्मरण इतिहासमे भविष्य मे कहियो कएल जाएत ताहिमे प्रो० हरिमोहन झाक नाम अग्रगण्य रहत। अहुना मैथिली प्रसिद्ध आ प्रचलित भऽ चुकल अछि, साहित्य अकादमीमे एकरा विशिष्ट स्थान प्राप्त छैक एवं विश्वविद्यालयक उच्चतम स्तर पर एकर पठन-पाठन भऽ रहल छैक, प्रतियोगिता परीक्षामे सेहो एकरा स्थान भेटल छैक—मुदा ई स्थिति आइसँ ४५-५० वर्ष पूर्व नहि रहैक। मैथिली ताहि दिन गाम-घरक स्त्रीगणक मध्य गीतक रूपमे सुरक्षित छल, गामघरमे बाजल जाइत छल आ मैथिली लिपिक व्यवहार मिथिलामे निमंत्रण पत्रमे होइत छल। मैथिली प्राचीन भाषाक कोटिमे छल, एहिमे सब प्रकारक ग्रन्थक रचना सेहो होइत रहल छल, मुदा एकर व्यापकता एवं अत्याधुनिक साहित्यिक रूपक निखार केनिहार छथि हमर मित्रप्रवर एवं अग्रज चिन्तक-मनीषी प्रोफेसर हरिमोहन झा, जनिक देनक मूल्यांकन अद्यावधि भेल नहि अछि—यद्यपि हुनका पर शोध प्रबन्ध सेहो लिखल जा चुकल अछि। ओ मात्र मैथिली साहित्यक प्रचारक माध्यमेटा नहि रहल छथि अपितु ओ अपन कलमक माध्यमे बहुत रास सामाजिक कुरीतिकेँ दूर करबामे सेहो जनक कहल जा सकैत छथि।

हमरा स्मरण अछि, ओ दिन जखन हम नेनहि छलहुँ आर सर्वप्रथम मैथिलीक दू गोट पुस्तकक हमरा ज्ञान छल। चन्दा झाक रामायण, जकर अंश हम अपन पिताक मुँहसँ प्रति दिन सुनैत छलहुँ आर दोसर, प्रोफेसर हरिमोहन बाबूक 'कन्यादान' जकरा हम कैकवेर पढल आ **'एकर उत्तरदायी के'** (**कन्यादान** क अन्तिम वाक्य) शीर्षकसँ एकटा आलोचनात्मक निबन्ध ताहि दिनक **मिथिला मिहिरमे** (अप्रैल १८-१९—१९४०-४१) प्रकाशित कएल। मैथिलीमे विधिवत लिखब हम एही निबन्धसँ प्रारम्भ कएल। आ तहियासँ आइ धरि हरिमोहन बाबूक सँग कैकटा सभा-सोसाइटीमे योगदान सेहो देल। अपन 'द्विरागमन'क भूमिकामे हरिमोहन बाबू लिखने छथि जे 'कन्यादान'क बाद 'द्विरागमन'क तकादा केनिहारक संख्या बढ़ल आ बाध्य भऽ हुनका लिखय पड़लनि।

हरिमोहन बाबू अपन कलम सँ ई सिद्ध कऽ चुकल छथि जे लेखनी तलवारसँ अधिक शक्तिशाली होइछ (Pen is Mightier than sword)। जे काज भाषण, मिटिङ्ग आर प्रचारसँ मिथिलामे संभव नहि भऽ सकल अछि से काज सहज रूपेँ हरिमोहन बाबू अपन लेखनीसँ करबामे सफल भेल छथि। हरिमोहन बाबूक सभटा रचना पढ़बाक सौभाग्य प्राप्त भेल अछि। आ हिनक सँग बातचीत

करबाक अवसर सेहो भेल अछि, मुदा हुनका चिन्हबाक आधार हमरा लेटल हुनक कलमें भेल अछि। यदि केओ साहित्यमे अमरत्व प्राप्त कयलनि अछि तँ ओ छथि हरिमोहन बाबू, जे घर-आङनक व्यवस्थित-अव्यवस्थित रूपसँ स्वर्ग धरिक सभ मार्गक विश्लेषण अपना ढंगे कऽ ई सिद्ध कऽ चुकल छथि जे मैथिलीमे सब किछु लिखल जा सकैये। अपन धरती आ समाजक प्रति हुनक प्रेम असीम अछि। ओ एहि माँटि-पानिसँ एतबा संपृक्त छथि जे हुनक वाक्य-वाक्य मिथिलाक सांस्कृतिक पुटसँ समायोजित बुझना जाइत अछि। मैथिलीक सबसँ विशेष अनूदित (आन भाषामे) हरिमोहने बाबू छथि। खट्टर ककाक कोनो तरंग हो किंवा रंगशालाक कथा अथवा 'मोछक महिमा' आर कि कोनो सामयिक काव्य, हरिमोहन बाबूक मैथिलत्व एवं मैथिल संस्कृतिक वैशिष्ट्य सबठाम एक्के रंग निखरल अछि आ सेहो अद्वितीय ढंगसँ।

ओना हरिमोहन बाबू एक्के संग उपन्यासकार, कथाकार, कवि, दार्शनिक एवं चिन्तक रहल छथि। दर्शनक महान पंडित रहितहुँ ओ ओहि दर्शनकेँ मैथिली साहित्यक विभिन्न विधाकेँ गौरवान्वित करबामे लगौलनि आ एहिसँ मैथिली साहित्यक गरिमा चतुर्दिक बढ़ल अछि। दर्शनक क्षेत्रमे ओ पंडित रामावतार शर्माक दर्शनसँ प्रभावित रहल छथि आर एकरो छाप मैथिली साहित्यमे देखबामे अबैछ। मैथिली समाज हुनक लेखनीसँ कतेक प्रभावित भेल अछि तकर मूल्यांकन हमरा लोकनिकेँ करबाक अछि आ हमर तँ विनम्र सुझाव ई होयत जे जाधरि ओ जीवित छथि ताधरि मैथिली सम्बन्धी विभिन्न विधा पर हुनकासँ साक्षात्कार कएल जाय, हुनक उत्तरकेँ 'टेप' कय राखल जाय जाहिसँ भविष्यक इतिहास-लेखनमे सहयोग भेटय। साहित्यकारक रूपमे हुनक तुलना हार्डी, शेक्सपीयरसँ होइत अछि मुदा हमरा बुझने हुनक जे अपन मौलिकता अछि से सर्वथा अद्वितीय। अद्यावधि मैथिलीमे ओ जे यथार्थ धरि पहुँचल छथि से आन साहित्यकार नहि। ओना सबहिक क्षेत्र भिन्न होइत अछि मुदा मौलिकता एवं नवीनताक क्रममे ओ मैथिल समाजकेँ जाहि कसौटी पर राखि कसलनि अछि आ ओहिमे जे सफलता प्राप्त कयलनि अछि से सर्वथा अद्वितीय कहल जायत। एकतरहेँ जकरा हम 'मैथिलीतत्व'क संज्ञा दऽ सकैत छियैक सैह छथि हरिमोहन बाबू, जनिक स्मृतिकेँ चिरस्थायी करबाक प्रयत्न हमरालोकनिकेँ करबाक अछि। कोनो समाज अपन साहित्यकारक कलमसँ जानल जाइछ आर ई कथन जँ उपयुक्त अछि तँ अहुना हमर मैथिल समाज (विभिन्न विधाक समायोजनक संग) सेहो हरिमोहन बाबूक कलमसँ जानल जाइछ। मैथिलीक सब विधाकेँ योगदान दऽ प्रोफेसर हरिमोहन झा मातृभाषाक फूल अर्पित कए दोसराक हेतु एकटा अनन्य उदाहरण प्रस्तुत कयने छथि जे सर्वथा सराहनीय अछि।

हुनक अभिनन्दन करैत हम इएह प्रार्थना करैत छी जे ओ युग-युग जीवित रहथु आ अपन विद्वताक प्रसाद हमरालोकनिमे बँटैत रहथु जाहिसँ हमरोलोकनि माँ मैथिलीक सेवामे तदनुरूप अर्पित भऽ सकी। माँ मैथिली अपन एहि वरद पुत्रकेँ चिरायु बनबथु।

हमर दृष्टिमे हरिमोहन बाबू

श्री हीरानन्द झा 'शास्त्री'

हरिमोहन बाबूसँ हमरा पहिल भेँट अपन गाम लोहनेमे भेल। हमरालोकनि अपन गामक देवी-मन्दिर पर गोविन्ददास-स्मृति-दिवसक आयोजन कयने रही, जकर सभापतित्व स्व० कुमार गंगानन्द सिंह कयने छलाह। जखन हमरा लोकनि कुमार साहेबक ओतऽ एहि हेतुक अनुरोध करऽ गेल रहियनि, तखन ओहि ठाम हरिमोहन बाबू छलाह, आ ओ अपन सद्यः प्रकाशित भेनिहार पोथी 'प्रणम्य देवता'क भूमिका हुनकासँ लिखा रहल छलाह। कुमार साहेब आमन्त्रण देनिहार लोकनिकेँ कहलथिन जे अहाँलोकनि हरिमोहन बाबूकेँ किएक ने आमन्त्रित करैत छियनि ? हम अपन संगहिँ लेने अयबनि। आमन्त्रण देनिहारलोकनि एहि अयाचित लाभसँ गद्गद भऽ गेलाह। आ, यथासंमत हरिमोहन वाबू कुमार साहेबक संग लोहना पहुँचल छलाह। आ' ओहि समारोहमे 'प्रणम्य देवता'क एक-आध खण्ड अपनहिँ मुँहेँ लोककेँ सुनौने छलथिन।

एहि गप्पकेँ पैंतीस वर्षसँ ऊपर बीति गेलैक, परंच जखन हरिमोहन वाबूक चर्चा होवऽ लगैत अछि तँ बूझि पड़ैत अछि, जेना ई कल्हुके घटना हो।

हरिमोहन बाबूसँ साक्षात् भलेँ हमरा ओहि दिन भेल होअय, परंच हुनक नाम ओहिसँ बहुत पूर्वहिँसँ हमरालोकनिक जिह्वापर बैसल छल, कारण ओहि समयमे मैथिलीमे गद्य-पुस्तकक बहुत अभाव छलैक, आ उपन्यास रूपमे यदि कोनो पोथी छल तँ ओ हरिमोहन बाबूक 'कन्यादान' छल। शिष्ट हास्यमे बोरल हुनक व्यंग्य साहित्यक मर्मज्ञ लोकनिकेँ तँ आह्लादित करिते छलनि, संगहिँ जनसाधारण केँ ओ पर्याप्त आह्लादित करैत छलैक। ठेठ परंच प्रांजल भाषा तथा मैथिलीक ठेठ अभिव्यक्ति हुनक रचनाकेँ सजीव बनयबामे विशेष योगदान करैत छलैक। जहिना, सुनैत छी जे स्वर्गीय वाबू देवकी-नन्दन खत्रीक 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास पढ़बाले' बहुतो गोटे हिन्दी सिखने छलाह, तहिना हरिमोहन वाबूक 'कन्यादान' बहुतो गोटेकेँ मैथिली पोथी पढ़वाक चहटि लगौलकनि आओर ग्रामीण क्षेत्रक मैथिल महिला समाजकेँ तँ साक्षरता बढ़यबोमे एकर प्रमुख योगदान रहलैक।

युग बदलि गेल। 'कन्यादान', 'द्विरागमन' किंवा 'प्रणम्य देवता'क बहुतो पात्र आब तकला सँ नहि भेटताह। आइ जँ क्यो हरिमोहन बाबूक 'ढाला झा'केँ ताकऽ विदा होअय तँ कतहु नहि भेटथिन। परंच, बीसम शताब्दीक पूर्वार्द्ध धरि बहुतो अंश तक अशिक्षित रूढ़िवादी मैथिल समाजक यथार्थ चित्रक जनिका तलाश होयतनि हुनका हरिमोहन बाबूक रचनासँ पैघ एकर प्रामाणिक दस्तावेज आर

कतहु नहि भेटलनि । जँ साहित्य यथार्थमे समाजक दर्पण थिक तँ हम निस्संकोच कहब जे हरिमोहन बाबूसँ पैघ एवं साफ दर्पण मैथिलीक कोनो अन्य रचनाकार आइ धरि नहि प्रस्तुत कऽ सकलाह अछि ।

गूढ़सँ गूढ़ विषयकेँ हँसी-मजाकक ढंगसँ सोझराकऽ राखि देब हरिमोहन बाबूक विशिष्टता रहलनि अछि । 'खट्टर ककाक तरंग', हुनक एहि विशिष्टताक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण अछि । हम निस्संकोच कहि सकैत छी जे हरिमोहन बाबूक 'दही चूड़ा चीनी' सन सशक्त एहि विधांक रचना कोनो समसामयिक भारतीय वाङ्मयमे भेवे नहि कयल अछि । वस्तुतः हरिमोहन बाबूक रचना हुनक लेखन-शैलीक एवं चिन्तन-शैलीक परिपक्वताक क्रमबद्ध इतिहास अछि । 'कन्यादान'क हरिमोहन बाबू 'खट्टर ककाक तरंग'क हरिमोहन बाबूसँ भिन्न छथि। 'खट्टर ककाक तरंग'क हरिमोहन बाबूक गूढ़ दार्शनिक ज्ञान हुनक साहित्यिक प्रतिभाक संग तादात्म्य स्थापित कऽ लैछ आ अपन सरल, सहज एवं सजीव शैली आ भाषामे ओ जे शब्द-चित्र प्रस्तुत करैत छथि, से कतहु आरण्यक किंवा उपनिषदक संवाद जकाँ रुचिकर तथा जिज्ञासा बढ़ौनिहार प्रतीत होइत अछि तथा कतहु ओहि शिक्षक जकाँ जे गूढ़सँ गूढ़ विषयकेँ बहुत सहज ढंगसँ अपन नेना-भुटका विद्यार्थीकेँ नीक जकाँ बुझा देबामे समर्थ होइछ ।

अपन एहि शैलीक कारणेँ हरिमोहन बाबूकेँ कम मूल्य नहि चुकाबऽ पड़लन्हि । बहुतो कट्टर रूढ़िवादी हुनका छिद्रान्वेषी कहैत रहलथिन तँ बहुतो गोटे हुनकर लोकप्रियतासँ रुष्ट भऽ हुनका 'बिपटा' कहि अपन आक्रोश व्यक्त करैत रहलाह । परंच हरिमोहन बाबू एहि आलोचनासँ कहियो विचलित नहि भेलाह आ हुनक लोकप्रियता पर एकर कोनो असरि नहि पड़ल । ई मैथिलीक सौभाग्य होइतैक जँ किछुओ लेखकलोकनि हरिमोहन बाबूक पद-चिह्नक तत्परतासँ अनुसरण करितथि । आइयो समाजमे एहनो बहुत वर्ग भेटत जकरा पर 'प्रणम्य देवता'क शैलीमे हास्य-रसमे भीजल व्यंग्य करबाक आवश्यकता छैक । वैज्ञानिक अनुसन्धानक एहि भौतिकवादी युगमे बहुतो एहन नवीन प्रश्न आबि गेल छैक जकरापर व्यंग्यात्मक टिप्पणी 'खट्टरककाक तरंग'क शैलीमे बहुत नीक जकाँ कयल जा सकैत अछि। परंच, मैथिलीक कोनो लेखकक ध्यान हमरा एखन धरि एहि दिस देखबामे नहि आएल अछि। तेँ हमरा बूझि पड़ैत अछि जे हरिमोहन बाबूक शैली, हरिमोहन बाबूक भाषा सम्भवतः हरिमोहन बाबूक संगहि समाप्त भऽ जायत । एखन मैथिली कथा-साहित्यक धारा हम जाहि दिशामे द्रुतगतिसँ बढ़ैत देखि रहल छी, ताहिसँ कखनहुँ कऽ हमरा ईहो अंदेसा होइत अछि जे कतहु आगू जा कऽ मैथिली कथा-साहित्य एहि लोकोक्तिकेँ चरितार्थ करय जे 'खंजन चलली बगड़ाक चालि, अपनो चालि बिसरली' ।

बहुतो गोटा हरिमोहन बाबू पर अश्लीलताक आरोप लगबैत रहलाह अछि। 'खट्टरककाक तरंग'क किछु अंश ओ एहि प्रसंगमे उदाहरण स्वरूप प्रस्तुतो करैत छथि । कलाक संसारमे अश्लील ककरा कही, ई प्रश्न सदैव विवादास्पद रहल । खजुराहो, कोणार्क किंवा जगन्नाथपुरीक मन्दिरपर अंकित सैकड़ो तथाकथित अश्लील भित्तिचित्र तथा जयदेव, कालिदास किंवा विद्यापतिक बहुतो पद कोनो निष्पक्ष विचारकक समक्ष प्रश्न उपस्थित कऽ दैछ जे अश्लीलता वस्तुपरक थिक किंवा दृष्टिपरक । एतबा तँ मानहिं पड़त जे सार्त्र, कामू किंवा फ्रायडक नाम जपनिहार कतेको साहित्यकार लोकनि जेना सप्रयास अपन रचनामे अश्लील किंवा कामोत्तेजक चित्र प्रतिस्थापित करैत छथि, हरिमोहन बाबूक कोनो रचनामे एहि तरहक कोनो प्रयास नहि परिलक्षित होइत अछि। कोनो साहित्यक मूल्यांकन

ओकर समग्रतामे कयल जाइत अछि आ एहि कसौटीपर हरिमोहन बाबूक संभवतः कोनो रचना अश्लील नहि प्रमाणित होयत।

पेटक खातिर हमरो हिन्दीमे बहुतो दिनसँ हास्य-व्यंग्य लिखऽ पड़ल अछि। हास्य-व्यंग्य लिखनिहारकेँ कोन कष्ट होइत छैक, एकर थोड़-बहुत अनुभव हमरो भेटैत रहल अछि। अपन अनुभवक आधारपर जखन हम हरिमोहन बाबूक मूल्यांकन करऽ वैसैत छी तँ हमरा लगैत अछि जे ओ महान छथि आओर हुनक रचना कोनो हास्य-व्यंग्य-रचनाकारकेँ सदैव मार्गदर्शकक काज करैत रहतनि। सामान्यतः हास्य-व्यंग्य लेखनमे सभसँ अधिक कठिनता हास्य-व्यंग्यक बीच सन्तुलन रखबामे होइत छैक। कतहु हास्य एतेक प्रबल भऽ जाइत छैक जे हास्यक विहाड़िमे व्यंग्यक तीक्षता भोथ भऽ जाइत छैक तँ कतहु व्यंग्य ततेक तीक्ष्ण भऽ जाइत छैक जे हास्यक माधुर्य ओकर कटुताकेँ नहि सोटि पबैत छैक। आ कतहु तँ ईहो देखब जे हास्य-व्यंग्यक बीच संतुलन रखबाक प्रयासमे कथानके एतेक गौण भऽ जाइत छैक जे नीरस लागऽ लगैत छैक आ आगू पढ़बाक उत्कंठा समाप्त भऽ जाइत छैक।

हास्य-व्यंग्य रचनाकार ले' भाषोक महत्त्व कम नहि होइत छैक। ओ कतहु दुर्बोध शब्दक प्रयोग कैए नहि सकैत अछि। जे क्यो हरिमोहन बाबूक व्यक्तित्त्व एवं कृतित्वक मूल्यांकन करथि, हुनका हास्य-व्यंग्य रचनाकारक एहि जन्मजात विवशताकेँ दृष्टिमे राखिए कऽ हुनक मूल्यांकन करऽ पड़तनि। हमरा जनैत मैथिली समालोचना-साहित्यमे हरिमोहन बाबूक यथार्थ मूल्यांकन एखनहुँ धरि नहि भेल अछि। हमरा प्रसन्नता होयत जँ मैथिली साहित्यक इतिहास लिखनिहारलोकनि एहि विषय पर गंभीरतापूर्वक विचार करथि आ जेना एफ० आर० लिमिस अंग्रेजी साहित्यक हेतु—'Revaluation' नामक पोथी लिखि सम्पूर्ण अंग्रेजी साहित्यक पुनर्मूल्यांकन कयने छथि, तहिना ओलोकनि मैथिली साहित्यक पुनर्मूल्यांकन कऽ हरिमोहन बाबूकेँ उचित स्थान पर प्रतिष्ठित करथि।

सबहक हँसीमे विराजमान हरिमोहन बाबू

श्री चतुरानन मिश्र

जावत धरि दुनियाँमे हास्य-व्यंग्य रहत, हरिमोहन बाबू अपने नहियो हँसताह तैयो सबहक हँसी मे विराजमान रहताह। कन्यादानसँ लऽ अनेक एहन कृति ओ देने छथि। धर्मक नाम पर अंधविश्वास मे डूबल, कूपमण्डूक, अहंकारी आर अत्यधिक पिछड़ल मैथिल समाजकेँ, खासकय ओतूका ब्राह्मण, कायस्थ आदि उच्च जातीय समाजकेँ जे अपन पिछड़लपने केँ पैघत्व बुझै छलाह, अपन सहज विनोदमय हास्य किन्तु अति तीव्र व्यंग्य-तीर-वर्षासँ जगेबाक जे काज मैथिली साहित्यमे हरिमोहन बाबू कयलैन्हि अछि तेहन केओ नहि कय सकल। कन्यादान स्त्रीगणकेँ जगेबामे ततेक सफल भेल जे ओकरा पढ़ै लए, पढ़ाकय सुनै लए स्त्री-समाजमे होड़ लागि गेल रहए। मिथिलाक केओ समाज-सुधारक वा राजनीतिज्ञ अपन गर्मसँ गर्म गर्जन कय समाजक निन्न तोड़बामे एतेक समर्थ नहि भेल जतेक हरिमोहन बाबूक एक-पर-एक प्रकाशन। आतिथ्यक लेल विख्यात मैथिल समाजकेँ केहन-केहन विकट पाहुनसँ भेँट होइछलैन्ह वा आर सब एहने लोकनि प्रणम्य देवतामे चहकै छथि। साहित्य कलाक की उद्देश्य थिक ताहि पर उद्धरण भरल भाषण सुनैत-सुनैत कान पाकय लगै अछि, मुदा हरिमोहन बाबूक कृति अपनहि बिना भाषणे साहित्य-कलाक उद्देश्यकेँ स्पष्ट बुझा दैत छैक।

एहन लेखनक लेल साहस चाही; चारू कातक जवाबी वाण-वर्षा रोकै लए, तएँ संभवत: मैथिल राष्ट्रीय पेय सँ खट्टरकका केँ हरिमोहन बाबू भंगपीबा बना वेद-पुराण, तंत्र-मंत्र, धर्म-अधर्म, ज्योतिष, आयुर्वेद, दर्शन आदिकेँ धज्जी उड़ाएब तऽ नहि मुदा ओकर विकृतिक तेहन वमन करा देलैन्हि अछि जे असगरे खट्टरकका हरिमोहन बाबूकेँ अमर रखै लए काफी अछि। ओना खट्टर ककाक टटका गप्पमे समाजक किछु पुरनके गप्प छैन्हि आर ओ भाड़ा वाला खेलाड़ी वा फीस पर मुद्दइ-मुद्दालह दुनू दिससँ बहस करैवला भऽ गेल छथि—'जकर खेबैक, तकर गेबैक। जतेक खेबैक, ततेक गेबैक। जेहन खेबैक, तेहन गेबैक' मुदा एहन महेशवानी 'भात भेल दुर्लभ भारतमे सपना धानक ढेर, मकइ मखानक कान कटै अछि अल्हुआ खाथि कुबेर। सह-सह अछि करैत साँप सन चोरबा सबकेर जेर, बाबा ! अहाँक त्रिशूल हाथमे, काज देत कोन बेर ?' आर के सुनाओत?

तहिना 'माछे जखन छाड़ि देब, खाएब की बकलेल ! सागे-पात चिबैबाक छल त जन्म किए लेल'सँ मैथिल आ बंगाली पुलकित भऽ उठताह किन्तु खट्टरकका यथार्थमे सम्पूर्ण देशक विचार-चिन्तनमे जे कैएक सय वर्ष धरि विकृति आबि गेल छल आर जे भारतक महापतनक कारण भेल, साहित्यिक रूप मे तकर भंडाफोड़ करै मे अद्वितीय छथि।

आयुर्वेद विज्ञान थिक आर भारत हजारो वर्ष पूर्व एकरामे विलक्षण ज्ञान प्राप्त कयने छल। ओकरा दंतकथामे परिणत कय देल गेल जे ज्वर महादेवक फुफकार सँ आ पारा महादेवक वीर्य पतन सँ उत्पन्न भेल। 'भावप्रकाश' केँ विज्ञान नहि 'काव्य' कहि खट्टरकका सन उपहास आर कोन दोसर साहित्यमे छैक, से हमरा नहि बुझल अछि।

ज्योतिष सन विज्ञानमे हजारो वर्ष पूर्व भारत बहुत बढ़ि गेल छल, किन्तु ओहि विज्ञान-विकासक तारकेँ तोड़ि फलित ज्योतिषमे परिणत कय पतनक गर्तमे हमरा लोकनि चल गेलहुँ (ओना एखनहुँ मन्त्री-गण ज्योतिषी-तान्त्रिकके बजा-बजा फेर ओम्हरे देशकेँ लऽ जा रहल छथि, जे आब संभव नहि छैक) आर खट्टरकका दिन तकैबाला ज्योतिषीजीकेँ 'काल की अहाँक चितकबरी घोड़ी छथि जे एखनि पुबरिया हत्तामे चरय गेल छथि — अहाँ जे लाल मोसिकेँ लऽ कऽ लंफार-चक्र बनबै छी से सरासर जाली दस्तावेज थीक। चाहे राजयोग लिखियौक वा जारयोग। आ पाराशर होरासारक वचन भौमांशगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽपि च। भौमयुक्ते च दृष्टेच भगचुम्बनभाग् भवेत् उद्धरण कय ज्योतिषीजीकेँ लतोपतो भगा ज्योतिषक विज्ञान रूपक जे रक्षा कयलन्हि अछि, से मिथिलांचले नहि सम्पूर्ण देशक लेल महत्त्वपूर्ण अछि।

तहिना वेदोक विषयमे जे देशव्यापी बिनु पढ़नहि-सुननहि एक अज्ञानपूर्ण अहंकारी भावना अछि तकरा तोड़ै लए और वेदक यथार्थतापरक ज्ञान लए जे कैएक अर्थमे हजारो वर्ष पुरान हेबाक कारणेँ आर विलक्षण अछि, खट्टरकका ऋग्वेदक सरज्जारो स योषणां, वरो न योनिमासदम् (ऋग्०) सोमरस तहिना कलशमे जा रहल अछि जेना युवती मे जार आदि-आदिक उद्धरण करबाक अपूर्व साहस कयलन्हि अछि।

आधुनिक पुरातत्त्व विज्ञानमे सबहक जन्म अपने-अपने प्रान्त, अंचल, जिला आदिमे देखैबामे जे हास्यप्रद प्रयास भऽ रहल अछि तकरो व्यंग्यपूर्ण उपहास करैमे खट्टरकका अद्भुत छथि— "महादेवो दरभंगेक छलाह। हुनके पर महादेव झा पांजि अछि आर नाम दरभंगा दरबजे-दरबजे भांगक खेती पर अछि।"

तहिना भूतक मंत्र, दर्शनशास्त्रक रहस्य, काव्यक रस, पुराणक चाशनी, धर्मक तत्त्व, भगवान विचार, गीताक मर्म, प्राचीन आदर्श, शास्त्रक वचन, रामायण, महाभारत, दुर्गापाठ आदिक चर्चामे खट्टरकका जाहि विकृतिक चर्चा कयलनि अछि, ओकर राष्ट्रव्यापी महत्त्व छैक आर तएँ हरिमोहन बाबू अपन मात्र एकटा कृतिसँ सम्पूर्ण भारतमे सबदिन चर्चित रहताह—अमर रहताह। एहि रचनाक अनुवाद आन-आन सब भाषामे भेल अछि आ राष्ट्रीय प्रेसमे चर्चित अछि। एहन हरिमोहन बाबू सदा चिरंजीवी रहथु। बाद मे जँ जानकीजीसँ भेँट होइन्ह तऽ कहिअथिन्ह जे आबहु तऽ अपन नैहर परसँ श्राप—

'रणे भीताः गृहे शूराः परस्पर विरोधिनः ॥

कुलाभिमानिनो यूयं निथिलायां भविष्यथ

वापस लियऽ। बहुत दिन भेल। कानूनन वा संविधानतः एकरा तमादियो आब भऽ जेबाक चाही !

हरिमोहन बाबू—एक अध्ययन

प्रो० कार्तिक नाथ मिश्र

जखन हरिमोहन बाबू एम० ए० पास कय प्रोफेसर भेलाह, ओहि समय धरि किछु आनो मैथिलबन्धु उच्च शिक्षा प्राप्त कय उच्च पद पर स्थापित भऽ चुकल छलाह। परंच, साहित्य साधनाक हेतु हुनक कलम धयनाय, एक अद्वितीय घटना भऽ गेल। मैथिलीक सेवा ओहू समयमे, आओर बादो, आनो लोकनि कयलन्हि; परंच, मैथिली गगन एवं मैथिल हृदयमे जाहि रूपें आओर जतेक दिन धरि हरिमोहन बाबू प्रतिभाषित होइत रहलाह, से गौरव आन किनको नहि प्राप्त भऽ सकलैन्हि। एकरा चलैत अनायास हुनका पर एक सामाजिक दायित्व आबि गेलैन्हि; जकर एहसास हरिमोहन बाबूकें अपनहु नहि भेलैन्ह। एकर प्रभाव मैथिली एवं मैथिलक लेल बड्ड दूरगामी सिद्ध भेलैक।

हरिमोहन बाबूक आविर्भाव ओहि समयमे भेल, जखन सामन्तवाद, अंगरेजक संरक्षणमे, मध्याह्न अवस्थाकें प्राप्त कऽ चुकल छल। सामाजिक स्थिति बंगाले जकां छल; जतय स्त्री-समस्या एवं कुलीन समस्यापर शरत् बाबू एवं रवि बाबू ताबड़-तोड़ प्रहार कय रहल छलाह—रवि बाबू तऽ शान्ति निकेतनक प्रयोगो प्रारम्भ कय देने छलाह—परंच मिथिलाक लेल धनि सन। रूसक सफल क्रान्ति सम्पूर्ण विश्वक राजनीतिक, सामाजिक एवं बौद्धिक चिन्तनमे क्रान्ति आनि रहल छल—परंच, मिथिलाक लेल धनि सन। एहि परिप्रेक्ष्यमे हरिमोहन बाबूक उत्तरदायित्व बहुत बेशी भऽ गेल छलैन्ह; परंच, हुनका एकर एहसास नहि भेलैन्हि।

प्रारम्भिक जीवन सामन्ती दरबारमे कुमार साहब लोकनिक बीच, पिताक अभिभावकत्वमे व्यतीत भेलैन्ह। ओतय सर्वहारा, बुद्धिजीवी, गायक एवं अन्यान्य कलाकार सभक शोषण होइत देखितहुँ, हिनक विद्वान पिता एवं स्वयं अपने आजीवन मौन रहलाह; कारण वैह छल, जकरा चलैत द्रौपदीक चीर-हरण होइत देखितहुँ भीष्म एवं द्रोण चुप रहि गेल छलाह।

आर्थिक सम्पन्नता-प्राप्तिक पश्चात् हरिमोहन बाबू सामन्ती शोषणक समस्याक दिसिसँ पूर्णतः विमुख भऽ गेलाह। हिनक सम्पूर्ण वाङ्मयमे विभिन्न प्रकारक शोषणक धधकैत समस्या पर एक्को वाक्य देखबामे नहि अबैत अछि। 'यथास्थिति'वादी जीवन-दर्शनक अनुयायीक रूपमे, राजनैतिक एवं आर्थिक समस्याक प्रति, गीताक 'कूर्मोङ्गानीव' बनल रहलाह। एहि कमजोरीसँ जँ ऊपर उठल रहितथि, तऽ हमरालोकनि हिनका मिथिलाक मैक्सिम गोर्कीक रूप मे देखितहुँ।

साहित्यिक क्षेत्रमे हरिमोहन बाबू शरत् बाबूकें अपन प्रेरक मानैत छथि। परंच, ओ एहि बात पर ध्यान नहि देलैन्हि जे बंगाल आओर मिथिलाक सामाजिक समस्या प्रायः एक्के प्रकारक रहितहुँ

बंगाल आओर मिथिलाक लोकक चिन्तन प्रक्रियामे आसमान-जमीनक भेद छैक। ओहि ठाम मात्र पी० सी० सरकार जादूगर नहि भेल छथि। सदासँ अभाव-ग्रस्त क्षेत्र रहितहुँ, बंकिम बाबू 'सुजलां सुफलां मलयज शीतलां' सम्पन्न बंगालमे 'सप्तकोटि कंठ कलकल निनाद' करैत देखलन्हि आओर 'त्रिस कोटि' भारतवासी एकरा राष्ट्रगान बना लेलक। तहिना, 'शुष्का बंगाल'केँ रवि बाबू 'सोनार बांगला' बना देलन्हि। शरत् बाबू कलकत्ता स्थित बाल-विधवा-सेवित स्टूडेंट-लॉज सभ मे एकसँ एक चरित्रवान् विद्यार्थी एवं चरित्रवती संरक्षिता सभकेँ देखौलन्हि आओर ढेरक ढेर उपन्यास लिखलन्हि। हरिमोहन बाबूक लेल मिथिलामे एहेन इन्द्रजाल ठाढ़ करब सम्भव नहि छलन्हि। मिथिलाक 'पल्ली समाज' केँ ओ अपन कार्यक्षेत्र बनौलन्हि अवश्य; परंच, हास्यक सृजनक क्रममे हिनक 'पल्ली'क लोक सभ सहानुभूतिक पात्र नहि बनि, मात्र 'मजाक'क पात्र बनि कय रहि गेल। 'खट्टरकका'सँ लोकके अपेक्षा छलै जे ओ 'परशुराम'सँ बीस होथि, उन्नैस नहि रहथि। एहि आकांक्षाक पूर्त्ति कतेक दूर धरि भेलैक, से विवादास्पद भनहि हो, परंच अनेको अहिल्याकेँ शिक्षिता बना ओकर उद्धार करबामे हरिमोहन बाबू वास्तविक कर्मक्षेत्रमे शरत् बाबूसँ अधिक उदार रहलाह; एहिमे कोनो सन्देह नहि।

पता नहि एकरा मात्र संयोग कहल जाय अथवा आर किछु, जे तथाकथित मैथिल-मैथिली जागरण आओर हरिमोहन बाबूक हास्य-रचना प्रायः एक्के समयमे आरम्भ भेल। जागरणक एहि प्रक्रियामे हरिमोहन बाबू क हास्य-रचनाक बहुत हाथ रहल। परिणामतः हास्य-साहित्यक माध्यमसँ ककहरा सीखि, एक एहेन वर्ग तैयार भेल जकरा जीवनमे गम्भीरताक सतत अभाव रहलैक। जीवनके 'सीरि-यसली' नहि लेबाक उपदेश हरिमोहन बाबू मौखिक रूपसँ आजीवन दैत रहलाह अछि। तकरा चलैत, बहुतो लोकक जीवन निरर्थक भऽ गेलैक। एहिमे किछु गोटे चाहे तऽ बिचकाठी किंवा विदूषक(प्राचीन-अर्थमे नहि) भऽ गेलाह अथवा मैथिलीक 'डॉन क्विक्जोट'। जनक, याज्ञवल्क्य, मंडन, अयाची, गंगेश आदि मात्र भाषणमे उद्धरणक वस्तु रहि गेल छथि। हरिमोहन बाबूकेँ स्वयं एकर आभास कमल बन्द करबासँ किछु पूर्व भऽ गेल छलैन्हि; फेर की छल, 'खट्टरकका'केँ फेर एक 'तरंग' आबि गेलैन्ह आओर भरल लोटा भांग एक्के साँस मे गटगटा गेलाह !

साहित्य-सम्राट् हरिमोहन बाबू

श्री मार्कण्डेय प्रवासी

आधुनिक मैथिली भाषा-साहित्य-साधना जखन सदेह भऽ उठलैक, तखन लोक चिन्हलक जे वस्तुतः श्री हरिमोहन झा जी अवतरित भऽ गेलाह अछि। क्यो कहलक जे ई गद्यकार छथि आ क्यो ई कहैत सुनल गेल जे ई कवि छथि। क्यो हिनका व्यंग्य-सम्राट कहलक आ क्यो हास्य-रसावतार, मुदा वास्तविकता यैह छलैक जे ई केवल हरिमोहन झा छलाह। आइयो ई वैह छथि, जे तहिया छलाह आ काल्हियो ई वैह रहताह जे आइ छथि।

हरिमोहन बाबू घनघोर शाक्त रहितो 'हरि' अर्थात् विष्णु रूप छथि। दर्शनक विद्वानक रूपमे भने जे रहल होथि, मुदा हिनक साहित्य लोकके सम्मोहित कयलक अछि, तेँ ई 'मोहन' छथि, प्राध्यापक रहलाह अछि, तेँ ई स्वाभाविके जे ई ठाकुर, मिश्र, चौधरी वा पाठक आदि नहि भऽ कऽ झा छथि। जे पढ़ाबय सैह उपाध्याय अथवा झा किने !

ई सत्य जे भगवती वाग्देवी हिनका हास्य-व्यंग्यक रस-धार बहयबाक हेतु मैथिली भाषा-साहित्यमे अवतरित कयलथिन। ईहो सत्य जे ई मैथिलीक लिखित हास्य-साहित्य-गंगाक भगीरथ छथि। मुदा, ईहो तथ्य सत्यसँ कनेको कम नहि अछि जे हरिमोहन बाबूक हास्य-साहित्य-भागीरथी ठाम-ठाम सुन्दर वन जकाँ डेल्टा बनौलक अछि, जतऽ पाठक हँसीक फुलझड़ी छोड़ैत अथवा ठहाका लगबैत आगाँ बढ़बाक बदलामे रमैए आ चिन्तन-मनन करबाक हेतु विवश होइए।

गंगा जहिना भगीरथक अवतरणसँ पूर्व कखनो विष्णुक जाँघमे, कखनो ब्रह्माक कमण्डलूमे आ कखनहुँ शिवक जटामे रहैत छलीह, तहिना मैथिली क्षेत्रक हास्य-विनोद हरिमोहन बाबूक अवतरणसँ पूर्व कोनो बाबू साहेबक दरबारक गप्प-शप्प, कोनो दूटा समतुरियाक हल्लुक-फुल्लुक वार्त्तालाप आ कोनो सार-बहिनोइक गुदगुदी टाममे सीमित छल। गोनू झा खाहे जतेक सय वर्ष पूर्वसँ मिथिलांचलक लोकके गुदगुदा कऽ लोक-प्रिय बनल रहल होथि, हुनक हास्य-विनोद चुटकुला टाक विषय छल, साहित्यक सम्पत्ति नहि। साहित्यक धरतीपर हास्यक गंगाके उतारबाक श्रेय मैथिलीमे जँ कोनो साहित्यक भगीरथके छनि, तँ ओ निस्संदेह हरिमोहन बाबू छथि। कान्हपा, सरहपा, ज्योतिरीश्वर एवं विद्यापतिक ब्रह्मत्व जाहि मैथिली साहित्यके जन्म देलक, ओकरा अपन विष्णुत्वसँ पल्लवित-पुष्पित कयनिहार 'हरि' छथि हरिमोहन बाबू। अंग्रेजी, हिन्दी एवं उर्दू आदिक समसामयिक साहित्याकर्षणके विफल बना अपन मौलिक हास्य साहित्य-निर्झर सँ पाठकके मोहि लेनिहार 'मोहन' छथि हरिमोहन बाबू। केवल पोथियेमे नहि, पाठक किंवा श्रोताके

निकट बैसा (उपेत्याधीयते यस्मात् नः उपाध्यायः) अपन महाप्राण हास्य-रसावतारत्वसँ मैथिली पढ़बा सुनबाक दीक्षा देनिहार झोपाख्य उपाध्याय छथि हरिमोहन बाबू। मैथिलीक जन-मानस एहि 'हरि'केँ चिन्हलक, तेँ मैथिली साहित्य आइ एतेक लोकप्रिय आ विकसित भऽ सकल अछि। मिथिला हिनक साहित्यसँ सम्मोहित भेल, तेँ आइयो एकाग्र भऽ मैथिली पढ़निहार आ लिखनिहारक पँघ सेना मैथिलीक श्रीवृद्धिक हेतु ध्यानस्थ अछि तथा अपन एहि 'मोहन' केँ देखि मंत्रमुग्ध अछि।

कथा हो अथवा उपन्यास वा कविता, हरिमोहन बाबू हँसी-हँसीमे ततेक गम्भीर बात कहि जयबामे सिद्धहस्त छथि जे लोक आश्चर्यचकित भऽ उठैछ आ हुनक अनुपम प्रतिभाक प्रति नतमस्तक भेने बिना नहि रहैछ। मलाह जेना जालकेँ कान्हपर समेटिकऽ तेना फेकैछ जे बाकुटभरि मोट जाल कतेको धूर क्षेत्रक पानिमे पसरि जाइछ आ ओहि क्षेत्रक गोट-गोट माँछकेँ फँसा लैछ, तहिना हरिमोहन बाबू हल्लुक-फुल्लुक हास्य -व्यंग्यक छोट छिन जाल फेकि अर्थ-विस्तारक ततेक रास सम्भावनाकेँ छानि लैत छथि, जे देखबामे बनैछ। वाक्य अथवा अनुच्छेद पूर्ण होयबासँ पूर्वधरि पाठक हँसैत रहैछ, मुदा दोसरे क्षण ओकरा अनुभव होबऽ लगैत छैक जे हास्य तँ दही छल, ओकरा मथने जे घी बाहर भेल अछि से आने वस्तु अछि। समाजमे जतऽ कतहु विसंगति, पाखण्ड, अव्यवस्था एवं अस्वाभाविकता छैक, हरिमोहन बाबू ओकरापर हँसैत छथि—शुद्ध सुधारवादी दृष्टिकोणसँ ठहाका लगबैत छथि। ई हँसी अथवा ठहाका कोनो बुच्ची दाइ, कोनो सी० सी० मिश्र, कोनो खट्टर कका अथवा कोनो विकट पाहुन वा प्रणम्य देवताकेँ भने अधलाह लगनि, मुदा मिथिलांचलमे हरिमोहन बाबूक ठहाकासँ भेल सुधारकेँ के नकारि सकैछ ?

मैथिलीमे हास्य-रसक जे खुट्टा हरिमोहन बाबू गाड़ि देने छथि, वैह मानदण्ड बनि गेल अछि। जहिना साबिक जमानाक सर्वेक पाथर आइयो उखाड़ल नहि जा सकैछ, तहिना मैथिली हास्य साहित्यक खेतमे हरिमोहन बाबू द्वारा गाड़ल गेल खुट्टा किंवा पाथर ने तँ उखाड़ल जा सकैछ आ ने ओहि सम्बन्धमे कोनो विवाद ठाढ़ कयल जा सकैछ। एना कहबाक चाही जे मैथिली हास्य साहित्यक खेतकेँ नापिकऽ सर्वमान्य नक्शापर हस्ताक्षर कयनिहार पहिल अमीन छथि हरिमोहन बाबू। अगिला अमीन लोकनि हिनके द्वारा गाड़ल गेल खुट्टा आ हिनके द्वारा बनाओल गेल नक्शाकेँ आदर्श मानिकऽ चलताह, से निर्विवाद अछि।

हरिमोहन बाबूकेँ गद्यक विद्यापति मानल जाइछ आ से उचिते। अनुचित जँ किछु अछि तँ यैह जे ईश्वरक एक टा छोट छिन गलतीक कारण गद्यक विद्यापति मैथिलीकेँ पद्यक विद्यापतिक साढ़े पाँच सय वर्ष बाद भेटलथिन अछि। जँ दुनू विद्यापति एके युगमे वशिष्ठ आ अगस्त्य जकाँ अवतरित भेल रहितथि तँ आइ मैथिलीक गुमाने आन ढंगक रहैत। कालक एहि पँघ अन्तरालक बादो मैथिली तनिकऽ ठाढ़ अछि तँ केवल एही कारणे जे विद्यापति मूलतः पद्यकार रहितो गद्यो लिखि गेल छथि आ हरिमोहन बाबू मूलतः गद्यकार रहितो पद्यो लिखैत रहलाह अछि। पद्यक विद्यापतिसँ गद्यक विद्यापति एक अर्थमे श्रेष्ठ छथि जे विद्यापति जतऽ मैथिलीमे एको पाँती गद्य नहि लिखि सकलाह (केवल अवहट्ठ आ संस्कृतमे

लिखलनि) ओतय हरिमोहन बाबू गद्य-सम्राट रहितो गोटेक गप कवितो लिखलनि। एहि श्रेष्ठताक बलपर कहल जा सकैछ जे विद्यापति जँ पाँच सय वर्षधरि असंख्य नर-नारीक कंठमे रहलाह तँ हरिमोहन बाबू हजारो वर्षधरि लोकक हृदयमे बसताह। पद्यक विद्यापति लोकक ठोँठे गुनगुनौलनि तेँ ओ कंठस्थ रहलाह, गद्यक विद्यापति लोकक हृदयकेँ गुदगुदबैत रहलाह अछि, तेँ हृदयस्थ रहताह। दुनू विद्यापति जँ पौराणिक किंवा वैदिक युगक रहितथि तँ आइ पुराणोकनि कहितथिन्ह जे विद्यापतिक वाहन कंठ आ हरिमोहन बाबूक वाहन हृदय छनि। तहिना जेना गणेशक वाहन मूस आ कार्त्तिकेयक वाहन मयूर छनि।

गद्य कहने एखनो कथा, निबन्ध आ उपन्यासेक बोध होइछ। माने ई जे समीक्षात्मक गद्यकेँ एखनहु सर्जनात्मक गद्य-साहित्य सामान्यतया नहि मानल जाइछ। अतः समीक्षा विधामे मैथिलीकेँ एखन एक टा विद्यापतिक आओर प्रयोजन छैक। महत्वाकांक्षा राखल जा सकैछ जे विद्यापति आब समीक्षोक क्षेत्रमे अवतरित होयताह आ तखन ई बात आओर स्पष्ट भऽ जायत जे गद्यक विद्यापति अनेक अर्थमे सर्वश्रेष्ठ विद्यापति छथि। ओना हास्य-व्यंग्यक माध्यमसँ हरिमोहन बाबू अलंकार, रस, नीति, वैद्यक, ज्योतिष एवं दर्शनशास्त्र आदिक अनेक प्रसंगकेँ ततेक नीक जकाँ फरिछा देने छथि जे कहल जा सकैछ जे हरिमोहन बाबू विद्यापतिक सम्पूर्ण गद्यावतार छथि आ तेँ समीक्षाक क्षेत्रमे जँ आब विद्यापतिक अवतरण नहियो होअय तँ मैथिली गद्य कमजोर नहि पड़त।

हरिमोहन बाबू हास्य रसकेँ ओढ़ने होथि एहन बात नहि अछि। जीवन आ साहित्यमे जतेक तादात्म्य ओ स्थापित कयलनि अछि, से दुर्लभ अछि। प्रतिभाक जे मौलिकता हिनक साहित्यमे भेटैछ, वैह हिनका निकट बैसने आ हिनका सँ गप्प-शप्प कयनहु भेटैछ। अपन पाठककेँ हँसाकऽ लोट-पोट कय-निहार हरिमोहन बाबू अपन श्रोतोकेँ हँसा कऽ लोट-पोट करैत छथि। रस निष्ठाक एहन पैघ उदाहरण सम्पूर्ण आधुनिक भारतीय वाङ्मयमे दुर्लभ अछि। एहने विभ्राट व्यक्तित्वकेँ आपादमस्तक साहित्यकार कहल जाइछ।

हास्य-व्यंग्य-लेखनमे एकटा खतरा रहैत छैक जे एक दिस जँ लेखक असंख्य लोककेँ आह्लादित कऽ यश लूटैछ तँ दोसर दिस किछु लोकक कोपभाजनो बनैछ। हरिमोहन बाबूकेँ प्रारम्भिक कालमे किछु लोकक आक्रोश सहय पड़लनि, जे स्वाभाविक छल। सामाजिक-सांस्कृतिक जड़ताकेँ अपन हास्य-व्यंग्य रचना द्वारा तोड़निहार एहि महाप्राण साहित्यकारकेँ कयो धर्मद्रोही कहलक, कयो नास्तिक आ कयो एकटा खास वर्गक विरोधी। पाखण्डपूर्ण वातावरणकेँ उद्वेलित देखियो कऽ हरिमोहन बाबू सागर-जकाँ शान्त रहलाह तथा अपन रचनाक हिलकोरसँ सामाजिक चेतनाकेँ जगबैत रहलाह। हिनक जुआन लेखन कथाक हेतु 'टाइप' एवं प्रतीक गढ़ि-गढ़ि कऽ नहि जानि ओहि युगक कतेको जरद्गवक जरद्गवत्व आ मगरमच्छक मगरमच्छत्व ढाहलक। ई विशेषता हिनक सरस्वतीक छनि जे हिनक 'टाइप' आ प्रतीक कहियो नहि पुरनयबाक गुणवत्ताक कारण सामयिक नहि भऽ कऽ शाश्वत अछि। लिखैत काल भने लेखकक मनमे कोनो खास खट्टर कका, बुच्ची दाइ, सी० सी० मिश्र अथवा विकट

पाहुन रहल होथि—एहि चरित्र सभक ततेक साधारणीकरण भऽ गेलैक अछि जे आब जतऽ प्रवृत्ति विशेष देखल जाइछ, हरिमोहन बाबूक पात्र विशेष अनायास लोकक मनमे जीवित भऽ उठैत छथिन। आब हिनक साहित्यक ढाला झा फलां गामक नहि, एक संग अगणित गामक ढाला झा छथि। आधुनिकता, शिक्षा, आर्थिक विकास एवं कार्यव्यवस्थाक कारण जखन अगिला किछु सय वर्षमे ककरो कतहु अकारण पहुनाइ करबाक अवकाश नहि रहतैक तँ हरिमोहने बाबूक कथा-कविता पढ़िकऽ अनुमान करत जे मिथिलामे कहियो विकट पाहुन रहैत छलाह। स्त्री शिक्षा जखन पराकाष्ठा पर विकसित भऽ जयतैक तखन लोक हरिमोहन बाबूक 'कन्यादान' उपन्यासे पढ़ि कऽ बूझि सकत जे मिथिलाक कन्या बुच्ची दाइ-सन होइत छलीह। आइ कथा एवं उपन्यासक शिल्प खाहे जतेक विकसित भऽ गेल हो, लोक कथाकार एवं उपन्यासकार हरिमोहन बाबूक अवदानकेँ किन्नहु नहि बिसरि सकैछ। मैथिली साहित्यक पाठक युग-युगधरि हिनक प्रजा बनल रहत आ ओ साहित्य-सम्राट बनल रहताह।

हास्यव्यंग्य सम्राट प्रोफेसर हरिमोहन झा

डा० प्रेमशंकर सिंह

आधुनिक जीवन निश्चये विभिन्न प्रकारक विसंगति एवं विषमता द्वारा खंडित भेल जा रहल अछि। एहन स्थितिमे अभिव्यक्तिमे तिक्तता आयब अस्वाभाविक नहि। गंभीर रूपें आहत भेल मनुष्य जखन बाजत तखन ओ व्यंग्ये बाजत, जखन ओ किछु करत तखन प्रहारे करत। इएह कारण अछि जे जखन रचनाकार आन्तरिक एवं बाह्य रूपें अपनाकें आहत अनुभव करैत छथि तखनहि व्यंग्यकार बनि जाइत छथि। व्यंग्यकारक उत्तरदायित्व भ' जाइत छनि जे समसामयिक युगक समस्त विसंगतिक आलोचना प्रस्तुत करथि। वस्तुत: व्यंग्य एक एहन साहित्यिक अभिव्यक्ति अछि जाहिमे व्यक्ति तथा समाजक दुर्बलता, करनी-कथनीक अन्तरक समीक्षा वा निन्दाकें वक्रभंगिमा दए वा पूर्णत: सपाट शब्दक माध्यमे प्रहार कयल जाइत अछि। व्यंग्य पूर्णत: अगंभीर रहितहुँ गंभीर भ' सकैछ, निर्दय रहितहुँ दयालु भ' सकैछ, प्रहारात्मक होइतहुँ तटस्थ लागि सकैछ, मखौल लगितहुँ बौद्धिक भ' सकैछ, अतिश-योक्ति एवं अतिरंजनाक आभास देबाक बदला पूर्णत: सत्य भ' सकैछ। व्यंग्यमे आक्रमणक मुद्रा तँ अनिवार्य अछि। प्राय: व्यंग्यकें उपहास, उपालम्भ, परिहास, प्रहसन, वाक्-वैदग्ध्य एवं वक्रोक्ति आदिसँ पृथक क' देखबाक प्रचलन नहि अछि, किन्तु हास्य एवं व्यंग्यमे किछु विषमता अछि। हास्य निष्प्रयोजन मुक्त एवं बाह्य धरातलक वस्तु होइछ तें ओ विशिष्ट नहि भ' सकैछ, परन्तु व्यंग्य कहियो निष्प्रयोजन नहि होइछ। व्यंग्यक प्रयोजन वस्तुत: गूढ़ एवं मार्मिक अछि।

हास्य मनकें सतेज एवं प्राणकें सजीव करैत अछि। प्राकृत-हास्य मानव स्वभावक उज्ज्वल गुण थीक। एहिमे घृणा वा विरक्तिक लेशो नहि रहैत छैक। सिद्धान्त, व्यवहार, धारणा एवं वस्तु स्वरूपक बीचक असंगति हमरा हँसबाक हेतु बाध्य करैछ। प्राकृत-हास्य कटुताक बोध नहि करबैत अछि, प्रत्युत असीम सामान्यता एवं असंगति तथा अन्तर्विरोधसँ उपर उठबाक आत्म विश्वास दिअबैछ, कारण मनक बाह्य स्तर पर असंगति वा अन्तर्विरोध 'हास्य-कर' होइछ। गंभीर स्तर पर तँ ओ दुःख, पीड़ा, वेदना उत्पन्न करैछ। प्राकृत-हास्यमे एहि हेतु एक प्रकारक वृहत् अनुभूतिक आशा रहैत अछि आ सामान्य अनभिज्ञता वा उपलब्धि सेहो। उच्चतम हास्यसँ कोमलता एवं करुणार्द्रताक अभेद संबंध रहैत अछि। हास्यसँ हमर अभिप्राय ओहि प्रत्येक मन: स्थितिसँ अछि जकरा हास्य व्यंग्य, हँसी-ठट्ठा, कौतुक, विनोद-रसिकता आदि शब्दसँ साहित्यमे व्यक्त कयल जाइत अछि। अंग्रेजीमे ह्युमर शब्दमे आयॅरॅनि, सैटाइअॅ, फन, जोक्स, प्लेजन्ट्रि, जेस्ट, विट, फारस, पैरडि, रिड्-इक्यूल, आदि द्वारा व्यक्त सम्पूर्ण मन:

स्थिति कोनो ने कोनो रूपसँ मिश्रित अछि। अतएव अंग्रेजीक ह्युमर विषयक धारणासँ अर्वाचीन साहित्य अत्यधिक प्रभावित अछि।

रसमयी रचनाक सिद्धहस्त प्रणेता हास्यरसावतार प्रोफेसर हरिमोहन झा आधुनिक मैथिली साहित्यमे अपन अद्वितीय प्रतिभाक परिचय देलनि अछि। एकरे फलस्वरूप ओ एतेक लोकप्रियता अर्जित कयलनि। एहिसँ सिद्ध भ' गेल अछि जे मिथिलाक पावन भूमि एहि क्षेत्रमे विद्यापतिक जन्म द' सकैछ। हिनक उपलब्ध रचनामे गद्यक प्रधानता अछि। हिनक प्रवृत्ति कथा-साहित्य दिस विशेष रहल। हिनक पूर्ववर्ती कथाकार कथामे करुणा उत्पन्न क' अन्तमे पात्रक हत्या क' दैत छलाह। अवसाद एवं निराशाक वातावरणसँ संपूर्ण मैथिली कथा साहित्य तिमिराच्छन्न भ' रहल छल। मैथिली साहित्यमे ई श्रेय प्रो० हरिमोहन झाकेँ छनि जे सर्वप्रथम एहि प्रवृत्तिकेँ चिन्हलनि आ एहिसँ पृथक भ' हास्य-व्यंग्यक नव प्रवृत्तिक अवलम्बन कयलनि। मैथिलीक पाठकके अवसादमय वातावरणसँ फराक क' हास्य व्यंग्यक एक नवीन मार्गक रश्मि प्रदान कयलनि। मैथिलीमे हिनक हास्य-व्यंग्यसँ युक्त रचनामे कन्यादान, द्विरागमन, प्रणम्य देवता, रंगशाला, खट्टर ककाक तरंग, चर्चरी, एवं एकादशी, पुस्तकाकार प्रकाशित अछि। एहिसँ अतिरिक्तो किछु कथा तथा स्फुट कविता समय-समय पर पत्रिकादिमे यत्र-तत्र प्रकाशित अछि जाहिमे हास्य-व्यंग्यक अजस्र धारा बहाओल गेल अछि। जीवनक प्रत्यक्ष देखल अनुभवगम्य रूपकेँ हास्य-व्यंग्यक माध्यमे चित्रित करब हिनक वैशिष्ट्य अछि। समकालीन मैथिल समाजक कुरुचिपूर्ण एवं सामाजिक विकृति पर कुठाराघात करैत-करैत ई अतिरंजनाक आश्रय सेहो लेलनि अछि। जीवनमे अंतर्विरोध, असंगति, क्षुद्र प्रवृत्ति, मूर्खतापूर्ण संघर्ष, बाबा वाक्यं प्रमाणम्क हठधर्मिता, दम्भ, पाखण्ड, ढोंग, मिथ्या बड़प्पन, स्वार्थ-परता आदि हिनक हास्य-व्यंग्यक प्रमुख आलम्बन रहल अछि। हिनक रचनामे आचार, अनुष्ठान एवं धार्मिक वाह्याडम्बरक प्रति तीव्र आक्रोश भेटैत अछि। ई अपन रचनामे मानव मनक मोद, मोह, शोक, वेदनाकेँ एक मनोवैज्ञानिक जकाँ पर्यवेक्षण कयलनि अछि। वस्तुतः ग्राम्य परिवेशक यथार्थक अवतारणामे ई सिद्धहस्त छथि।

'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन' हिनक बहुचर्चित उपन्यास थीक। मैथिली उपन्यासमे 'कन्यादान'क विशेष महत्व अछि। एहिमे अनमेल विवाहक समस्याकेँ उठाओल गेल अछि। पति-पत्नीक ई बेमेल ओकर अवस्था वा रूपक कारणे नहि, प्रत्युत शिक्षा दीक्षाकेँ ल' कय अछि। एक एम० ए० पास युवकक विवाह ए० बी० सी० पर्यन्त नहि जननिहारि कनियाक संग होइत छैक। एहि प्रकारक विवाहकेँ उपन्यासकार नाटक काहिक' भर्त्सना करैत छथि। अतएव स्त्री-शिक्षा 'कन्यादान'क प्रमुख स्वर थीक। एतय उपन्यासकार मैथिल समाजमे प्रचलित वैवाहिक विषमताकेँ अपन हास्य व्यंग्यक पृष्ठभूमि बनौलनि।

एकर नायक सी० सी० मिश्र अत्याधुनिक पाश्चात्य सभ्यताक प्रतीक थिकाह जे ग्रामीण परिवेशसँ अनभिज्ञ रहलाक कारणेँ अपन मातृभाषा पर्यन्तसँ अपरिचित भ' जाइत छथि। नायिका बुच्ची दाइ प्राचीन मैथिल संस्कृतिक प्रतीक थिकीह जनिका पर पाश्चात्य सभ्यताक कोनो छाप नहि छनि। नायक-नायिकाक संघर्षमय परिस्थितिक चित्रण कय उपन्यासकार हास्य-व्यंग्यसँ ओत-प्रोत वातावरणक निर्माण पाठकक हेतु कयलनि अछि। कन्यादानक अवसर पर जखन नायकसँ नाम पुछल जाइत छनि तखन ओ उत्तर दैत छथि—'हमर नाम छय सी० सी० मिश्रा।'[1] एहन उत्तर सुनि मिथिलाक अशिक्षित महिलावृन्दक अट्टहाससँ सम्पूर्ण वातावरण गुंजित भ' जाइत अछि। एहि पर एक तरुणी जे अपनाकेँ

सबसँ बुधियारि बुझैत छथि ओ टिप्पणी करैत छथिन —'तखन तँ बोतल मिसर हिनक बापे होइथिन।'[2] वस्तुतः एहि प्रकारक कथोपकथन उपन्यासमे अनेक स्थल पर आयल अछि, जतय उपन्यासकार हास्य-रससँ युक्त वातावरणक निर्माण करबामे सफल भेलाह अछि, ओतहि अशिक्षित मैथिलानी पर व्यंग्य सेहो कयलनि अछि।

एकर किछु चरित्रकेँ व्यग्यंकार एहि प्रकारेँ प्रस्तुत कयलनि अछि जे पाठक पर अपन अमिट छाप छोड़ैत छथि। 'कन्यादान'क घटकराज टुन्नी झाक स्वरूप, बजबाक शैली एवं उच्चारण प्रक्रियासँ लोक चीन्हि जाइत अछि जे घटकैती करबामे पूर्ण अनुभवी भ' गेला पर कथा तीन प्रकारेँ स्थिर करैत छथि "एकटा खनखनौआ जाहिमे कन्यागत खनखनाके टाका हँसोथि लैत छथि। दोसर मानि लिय टनटनौआ जाहिमे वर पक्ष टनटनाक' हजार पाँच शैक तोरा गनबैत छथि। तेसर मानि लिय ठनठनौआ जाहिमे वर कन्यागत दुहू ठनठन गोपाल भए काज करैत छथि।'[3] हिनक खनखनौआ, टनटनौआ, ठनठनौआ वला घटकैतीक वृत्तान्त सुनितहि पाठक हँसैत-हँसैत लोट-पोट भ' जाइत अछि। घटकराज अपन वाक्-पटुतासँ सेहो मनोरंजन करैत छथि। घटकराजकेँ घटकैतीक प्रति ई वैज्ञानिक दृष्टिकोण देखाय उपन्यासकार हुनका अपूर्व क्षमता प्रदान कयलनि अछि। हमरा जनैत एहिसँ सफल चरित्र कन्यादानमे आर कोनो नहि अछि . तकर कारण जे टुन्नी झा जकाँ अपन पक्षक प्रतिपादन ककरो बुते नहि भेलनि। ओ सामाजकि दोष— तिलक-प्रथाक स्तम्भ स्वरूप थिकाह। एकरे फलस्वरूप मैथिल समाज दिन प्रतिदिन जर्जरित भेल जा रहल अछि।

'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन'क अविस्मरणीय चरित्र झारखण्डीनाथक क्रिया-कलाप, बाजब-भुकब, चलब-फिरब, खायब-पीयब सभमे हल्लुक हास्य भेटैत अछि। झारखण्डीकेँ वास्तवसे एतबा ज्ञान नहि छनि जे लाल काकीक तारक विषयमे ककरो आगूमे चर्चा नहि करबाक प्रतिज्ञा क' एकर पालन करी। डाक्टरक संग हुनक कथोपकथनक एक अंश श्रवणीय अछि - "हमरा आङनमे कनेक कब्जियत बूझि पाता है। रामजीक परतापसँ कहियो-कहियो पेटो फूलि जाता है और लोक वेद नीके रहता है।"[4] जतेक बेर 'कन्यादान' पाठक पढ़ैत अछि एको बेर एहि 'डायलग' पर विना भभाक' हँसने नहि रहि सकैत अछि। डाक्टरक द्वारा वयस पुछला पर हुनक उत्तर तँ सुनू—"सरकार ! हमरा लोक सभ दुलारसँ 'खट्टर' कहता है, लेकिन असल नाम झारखण्डी माय-बाप राखि दिया। और उमिरमे सरकार सब भाईसँ छोट है।"[5] 'द्विरागमन'मे झारखण्डीनाथ लाल ककाक ओतय बुच्ची दाइक शिक्षिका मेम साहेबक स्वागत करबाक हेतु प्रस्तुत होइत छथि। मेम साहेब हुनकासँ जिज्ञासा करैत छथिन—"बाथ (स्नानागार) किधर है ?" झारखण्डी नाथ माथ कुड़ियबैत कहैत छथिन—"बाथ एहि ठामसँ बहुत दूर है। कोस छवेक-सातेकसँ कम नहि पड़ेगा। बाथ (गाम) मे आपका के रहता है ?'[6]

वहवाँड़ि उत्तर तथा अपरिचित भाषाक नकलसँ एहिठाम हँसी लगैत अछि। उपन्यासकार हास्य उत्पन्न करबाक हेतु कतिपय चरित्रकेँ अवलम्ब वनौलनि अछि। पुरोहित, जनिका लेल शुद्ध उच्चारण करब गुण नहि, प्रत्युत आवश्यक छनि; तोतराइत छथि। एहन पुरोहितक प्रसंगमे उपन्यासकार कहैत छथि—"पंडित नवोनाथ झा तोतराइत-तोतराइत कंठरूपी वोरासँ उभड़-खाभड़ मंत्रक रोड़ा गड़गड़ा कए उझिलय लगलाह।"[7] मोहरिर जे लिखाइ-पढ़ाइ करैत-करैत वूढ़ भ' गेल छथि, किन्तु

तारक 'क' अक्षर पढ़बाक परिश्रममे असफल भ' जाइत छथि। बड़का गामवाली एवं वटुक जी प्राचीन परंपरागत रूढ़िक झुंडमे रहितहुँ शुद्ध ओहि पक्षक पक्षपाती नहि छथि। हिनका सभक चरित्रमे साधारण बुद्धि उपन्यासक अन्य पात्रक अपेक्षें अधिक मात्रामे छनि। वटुक जी मूर्ख रहितहुँ अदूषित बुद्धिक छथि। हिनक वार्तालाप पाठकक मनोरंजन करैत अछि। एहि दृष्टिसँ सी० सी० मिश्रक प्रसंग हिनक कथ्य विलक्षण अछि—"हमरा लेखें त कुछ न छथ। 'शंशकीरित'मे हमरा साथ न बोल सकै छथ। एगो कनी गो 'जोतिश' के बात पूछ देलिएन ताहीमें ढेकार हो गेलन। शीशूबोध के एगो इशलोक पूछलिऐन त चूड़ा अमौट दुन्नू खसे लगलैन। कुछ न छथ। मङनीमे महग छथ"[8] ग्रामीण परिवेशमे रहितहुँ बड़का गामवाली पाश्चात्य सभ्यताक प्रतीक थिकीह जे सी० सी० मिश्रकें अपन हाथक कठपुतरी बना लैत छथि। हिनकेमे सी० सी० मिश्र अपन भावी पत्नीक मधुर कल्पना करय लगैत छथि जकर वास्तविकताक रहस्योद्‌घाटन चतुर्थीक राति भ' जाइत अछि। उपर्युक्त चरित्र उपन्यासमे 'कौमिक' वातावरण उत्पन्न करबामे सहायक भेल अछि। एहन-एहन पात्रक वृत्तान्त पढ़ि क' हँसी तँ लगबे करैछ, संगहि इहो अनुभव होइछ जे समाजक प्रत्येक अंगमे सुधारक प्रयोजन अछि।

'प्रणम्य-देवता' कटाक्ष-पूर्ण रेखा-चित्र अछि जे प्रधानतः सामामाजिक आलोचना प्रस्तुत करैत अछि। एहिमे ओ प्राचीन कथा-पद्धतिकें ग्रहण क' गंभीर-सँ-गंभीर विषयकें सरस-सुस्वादु बना क' जनमन-रंजनक संग रूढ़ि-ग्रस्त, जीर्ण-शीर्ण, विचारधारा पर आघात कय नवीन प्रगतिक प्रेरणा दैत छथि। हिनका ने तँ प्राचीन अन्ध-विश्वासक प्रति निष्ठा छनि आ ने नवीनताक प्रति आसक्ति। एहिमे हास्य-व्यंग्यक सबसँ उपयुक्त स्थल तखन अबैत अछि जखन ओ भोजन अथवा धर्माचरणक प्रसंगकें ल' कय कथाक पृष्ठिभूमि बनबैत छथि। जेना 'विकट-पाहुन'क चित्रणमे भोजन-प्रियता एवं अव्यवहार-कुशलताक कारणें हिनका सभकें दोसराक असौकर्यक कोनो ध्यान नहि रहैत छनि। पाहुनलोकनि अपन परिचय प्रोफेसर साहेबक लग कोना दैत छथि से देखू—"हें-हें-हें-हें अपने जे किने से हमरा चिन्हने हैब। चीन्हब कोना ? कहियो देखने रही तखन ने ! हम अपनेक मसियौतक जे किने से-साढ़ूक पिसिऔत भाय होयबैन्ह।"[9] एहि प्रकारक परिचये वास्तवमे हास्यास्पद भ' जाइत अछि। अधपक्कू कटहर, एक हत्था पाकल केरा, एक बोतल घृत, माल्टेड मिल्क, एक पसेरी दालमोट एवं एक धरिका अमोटसँ गजेन्द्र नाथ, ब्रजेन्द्र नाथ, भीमेन्द्र नाथ एवं दिगम्बर नाथक पनपिआइ होइत छनि। आब भोजनक सूची दिस दृक्‌पात करू—"किन्तु हमर सरबेटा दिगम्बर नाथ—हें-हें-हें बिनु सौजने भात कोना खैताह ? हिनका लेल छनुआ सोहारी, अनोन तरकारी बना देबैन्ह। मधुरक संग खा लेताह। हमरालोकनि तँ -हें-हें-हें-हें घरे थिक। भोजनमे जे किने से भात, दालि, तरकारी, घृत, दही, चीनी सब, आर की। हमरा संगमे एकटा जमीरी नेबो अछि से दूरि भेल जाइत अछि। तँ थोड़ेक माछो मंगा लेब।"[10] मैथिलक भोजनप्रियताक एलबम एहिमे भेटि जाइत अछि जे हास्य उत्पन्न करबामे सहायक सिद्ध होइछ।

'प्रणम्य-देवता'मे धार्मिक आचरणक उल्लेख 'धर्मशास्त्राचार्य' एवं 'ज्योतिपाचार्य'मे विशेप रूपें भेल अछि। धर्मशास्त्राचार्य महामहोपाध्याय धुरन्धर शास्त्री अपन धार्मिक आचरण एवं आडम्बर ततेक ने पसारैत छथि जे पहिने ओ गामक लोक पर हँसैत छलाह ; किन्तु वाह्याडम्बरक विरोध भेला पर आब हुनके पर संपूर्ण गाम हँसय लगैत अछि। 'ज्योतिपाचार्य'क अन्तर्गत ज्योतिप जनित

आडम्बर पर व्यंग्य कयल गेल अछि। एहि दोषपूर्ण शिक्षाक कारणें आदित्यनाथ एवं मार्त्तण्डनाथक बीच टीका-टिकौअलि सेहो भ' जाइत छनि।

एहिमे सामाजिक समस्याक अतिरिक्त पारिवारिक समस्या पर सेहो व्यंग्य कयल गेल अछि। 'साझी आश्रम'मे जे चित्र प्रस्तुत कयल गेल अछि ओहि आधार पर परिवार सुख-साधनक बदला दुःखक अपार सागर बनि गेल अछि। वस्तुतः साझी आश्रमक जे दुर्दशा होइत छैक तकर एलबम भगीरथ झाक परिवारमे भेटैत अछि।[11]

व्यग्यकार अत्याधुनिक युगमे फैशनक बढ़ैत स्वरूप पर दृष्टिपात करैत छथि तँ हुनक लेखनी अत्यधिक प्रखर भ' जाइत छनि। एहि प्रकारक फैशनक अत्यधिक प्रभाव समकालीन नवयुवक समुदाय पर पड़ल अछि। अत्यधिक आधुनिक बनने दुर्घटना भ' जैबाक संभावना रहैत छैक। आइ कालहुक 'अप-टुडेट लेडी'क प्रतीक थिकीह 'मंजुला देवी।'[12] 'नकली लेडी' कोना सहजहि गमा जाइत छथि से 'प्रणम्य देवता'क 'अंगरेजिया बाबू'क पत्नी 'चमेली दाइ छथि।'[13] हुनक नकली स्वरूप तँ देखू—"हे भगवान ! ई की ! श्रीमती जी सबटा चौपट कैलैन्हि। नाक पर 'स्नो' लागल। कनपट्टी पर 'पाउडर' पोतल ! गाल पर 'लिपिस्टिक' ढेउरल ! ठोर पर 'नेल पालिश' लेभरल ! हाय ! हाय ! बहुरुपियाक वेश बना लेलन्हि।"[14] जे 'हिन्दुस्तानी साहेब' अंग्रेजक 'प्रियतम सम्बन्धी' बनय चाहैत छथि तनिक झलक मधुकान्त चरित्रमे भेटैत अछि।

'रंगशाला'क प्रत्येक कथा ओना तँ हास्य-व्यंग्यसँ ओत-प्रोत अछि, किन्तु एकरा हिनक अन्यान्य रचना सदृश लोकप्रियता नहि भेटलैक। एहि प्रसंगमे ओ स्वयं लिखैत छथि—"ई तेँहन मनो-नुकूल नहि भेल आ तनबा लोकप्रियो नहि भ' सकल। तथापि एकरा द्वारा एक ढर्रा कायम भ' गेलैक और आनो गोटा नव-नव साँचा पर कथा-कहानी लिखय लगलाह।"[15] एकर प्रत्येक कथा एक वर्ग विशेषक प्रतिनिधित्व करैछ। हास्य-व्यंगक माध्यमे कथाकार सामाजिक दुर्नीतिसँ समाजकेँ पृथक करबाक प्रयास कयलनि अछि। पात्रक चयनमे कथाकारकेँ बौआय नहि पड़लनि अछि। कथाकार स्वयं एहि तथ्यकेँ स्वीकार करैत छथि—"हँसि-हँसि कऽ जीवनक आनन्द कियेक ने लेल जाय ? क्षणिके विनोद सही, रसक छिटका तँ भेटत। कोन ठेकान, कदाचित एतबे मात्र सत्य होइक।"[16]

हास्य व्यंग्यक अत्यन्त सजीव चित्र 'खट्टर ककाक तरंग'मे उपलब्ध होइछ। एकर कथा नायक खट्टर कका पूर्णतः विनोदी प्रकृतिक व्यक्ति छथि। हिनक प्रत्येक बात विनोदपूर्ण होइत छनि। ई अपन प्रत्युत्पन्नमतित्वक कारणें सदिखन काव्य-शास्त्र-विनोदक धारा प्रवाहित करैत छथि। हिनक विनोदपूर्ण वार्तामे व्यंग्यकार व्यक्ति, समाज, धर्म, दर्शन आदिक कटु आलोचना करैत छथि। थैंकरे जकरा 'राउण्ड एबाउट पेपर्स' कहलनि तकरा व्यंग्यकार खट्टर ककाक समक्ष पुरातन परम्परा-के केन्द्र बिन्दु बनबैत छथि। ओकर चारू भाग नवीन विचार-धारा प्रस्तुत करैत छथि। आधुनिक परिप्रेक्ष्यमे प्राचीन मान्यता कोनो अर्थ नहि रखैत अछि। 'खट्टर ककाक तरंग'मे वर्णित विषय विचारात्मक, सरस एवं मनोरंजक अछि। हिनक बात लुत्ती सन होइत छनि। ई देशक मूर्खताक श्रेय पंडितकेँ दैत छथि। एहि क्रममे ई असली एवं नकली पंडितक सम्यक् विश्लेषण कयलनि अछि—

"असली पंडित विद्याक अन्वेषणमे रहैत छथि, नकली पंडित विदाइक अन्वेषणमे। असली पंडित ज्ञानक विस्तार करैत छथि, नकली पंडित धोधिक विस्तार। असली पंडित मूर्खताक संहार करैत छथि, नकली पंडित केवल मधुरक।"[17] हिनका अनुसारे वैह वास्तवमे पांडित्य प्राप्त कयने छथि जे अपन बुद्धिक प्रयोग नित-नूतन आविष्कार हेतु करैत छथि।ग

वेद-पुराण, कर्मकांड-धर्मशास्त्र, गीता-वेदान्त, रामायण-महाभारत, ज्योतिष-आयुर्वेद, तंत्र-मंत्र, देवी-देवता, स्वर्ग-नरक, पुनर्जन्म-मोक्ष, पाप-पुण्य सभकें ई कोना लैत छथि से देखबाक एवं हँसबाक अवसर एहीमे भेटैत अछि। एकर मर्मस्पर्शी व्यंग्य अन्तस्तलमे पहुँचि गुरगुरी लगा दैत अछि। ओ अन्ध-विश्वास, धार्मिक पाखण्ड, ढोंग, रूढ़ि आदिक प्रति व्यंग्यक माध्यमे भयानक विद्रोह करैत छथि। एहि प्रकारक मतक खण्डनमे हिनका ततवा रस भेटैत छनि जे सामाजिक रूढ़ि वा अन्धविश्वास पर प्रहार करबाक हेतु ई सदिखन भंगघोटना लेने तत्पर रहैत छथि। जाधरि पाश्चात्य–प्राच्य सभ्यता एवं संस्कृतिक समन्वय नहि हैत ताधरि जीवनक कोनो मूल्य नहि। अतएव एहन समन्वय कोन प्रकारें होमक चाही? युगक अनुसारें समन्वय अनिवार्य प्रतीत होइत अछि। एहि प्रसंगमे खट्टरककाक दावा छनि जे ओ गोनू एवं गंगेश दुनूक वंशज थिकाह तखन पाश्चात्य सभ्यताक प्रतीक बूझब भ्रम थीक। हुनक कथन छनि जे "हौ इयैह बात तँ बुझबामे नहि अबैत अछि। कोन प्रकारें समन्वय करै कहैत छह? आबसँ शिवजीक माथ पर 'सोडा वाटर' ढारि दिऐन्ह? भगवतीकें आँचरक वदला 'गाउन' ओढ़ा दिऐन्ह? कुल देवताकें 'लिपिस्टिक' लगा दिऐन्ह? श्राद्धमे 'केक' ल' कए पिंड दी? ब्राह्मण भोजन करा क' हाथमे 'विल' द' दिऐन्ह? जनउ धोबक हेतु 'लौण्ड्री'मे द' दिऐक? तोरा काकीकें अँग्रेजीमे समदाउन गावय कहिऐन्ह।"[18]

एहि प्रकारें परम्परावादिताक जालमे ओझरायल समाज एवं व्यक्ति पर ओ जे व्यंग्य कयलनि अछि ताहिमे शाश्वतक माधुर्य्य एवं कुनैनक तिक्तताक प्राचुर्य अछि। हुनक कथन छनि "हमर बात होइत अछि ओलक टोंटी। कतेक गोटाकें भक द' लगतैन्ह। कतेक गोटाकें अमाँशय उखड़ि जेतैन्ह।"[19] हिनक विनोदपूर्ण विचार-लहरी पाठकक विशेष रूपसँ मनोरंजन करबे करैत अछि संगहि स्थल-स्थल पर व्यंग्य रूप तेहन झँसिगर भऽ गेल अछि जे आँखि-नाकसँ पानि सेहो बहय लगैत अछि। एहिसँ स्पष्ट भ' जाइछ जे हिनक व्यंग्यक अत्यंत स्पष्ट रूप एहिमे उपलब्ध होइछ।

'चर्चरी' हिनक विविध रूपक रचना संग्रह थीक। एहिमे कथा-पिहानी, एकांकी-प्रहसन, गप्प-सप्प सभ किछु संगृहीत अछि जाहिमे प्राचीनता एवं आधुनिकता पर समान रूपें व्यंग्य कयल गेल अछि। परम्परावादी एवं अन्धविश्वासी मैथिल संस्कृतिक प्रतीक थिकाह भोल बाबा, जे अपन वाक् चातुर्य्यसँ हास्य एवं व्यंग्यक धारा बहौलनि अछि। ओ पुरातनताक पृष्ठभूमिमे अर्वाचीनताक जन्म मानैत छथि। उपर्युक्त परिप्रेक्ष्यमे हिनक 'दलान परक गप्प', 'चौपाड़ि परक गप्प', 'घूर तरक गप्प' एवं 'पोखरि परक गप्प' विशेष उल्लेखनीय अछि। हिनक मान्यता छनि जे प्राचीन महापुरुष लोकनिक आदर्शमय जीवन छलनि। ओ स्वाभिमान, मर्यादा एवं मनस्विताक सुरक्षार्थ सतत तत्पर रहैत छलाह। भोल बाबाक अनुसारें आधुनिक सभ्यता प्राचीन पृष्ठभूमिमे कोनो अर्थ नहि रखैछ। ई प्राचीनकें आदर्श-

मानि आधुनिकता पर व्यंग्य करैत कहैत छथि जे आधुनिक समयमे सब प्राचीन वस्तु समाप्त भेल जा रहल अछि—"हाथीकें मोटर खयलक, घोड़ाकें साइकिल खयलक, रामलीलाकें सिनेमा खयलक, भोजकें पार्टी खयलक, भाँगकें चाह खयलक तथा संस्कृतकें अँग्रेजी खयलक।"[20]

हरिमोहन झा हास्य-व्यंग्यक माध्यमे नारी जागरणक शंखनाद कयलनि। चर्चरीक अनेक कथाक माध्यमे ओ मिथिलाक नारीमे दुर्गाक रूप प्रतिष्ठित करय चाहैत छलाह। 'ग्रेजुएट पुतोहु'[21]मे ओ एक शिक्षिता नारीक प्रति समाजमे उत्पन्न प्रतिक्रियासँ परिचय करबैत छथि। 'ग्राम सेविका'[22] मे ओ जाग्रत नारीक मंजुल मंगलमयी मूर्तिकें प्रतिष्ठित करैत छथि। नारी जागरणक फलस्वरूप ओहो सब आब काटरक विरोधमे नारा लगबैत छथि। 'एहि बाटे आबै छथि सुरसरि धार'[23] मे मिथिलाक नारी अनमेल विवाह एवं तिलक दहेजक विरोधमे आवाज उठौलनि। ओ सब कहैत छथि जे "बिक्री बला वर जाथु अपन घर। जे मँगताह हजार से रहताह कुमार। जे गनताह ओ कनताह। घटक पजियार होउ होशियार आब ने चलत ई रोजगार।"[24]

किछुए दिनक पश्चात् नारीक एतेक बेशी जागरण भेल जे ओ सब आदर्श-विवाहक हेतु आन्दोलन प्रारंभ कयलनि। समाजक एहन क्रांति देखि व्यंग्यकार कहैत छथि "हरब तिलक ने तँ रहब कुमारि। जे नहि करताह द्रव्यक माँग, सैह भरता कन्याक माँग। तिलक करू दूर तखन दिअ सिन्दूर।"[25] एहन परिवर्तित परिस्थितिमे नारी पुरुषक संग चलब प्रारंभ कयलनि तकरा देखि भोल बाबा चिन्तित भऽ जाइत छथि। ओ कहैत छथि जे नारी जागरणक फलस्वरूप "पुरुषक संग बैसि क' खाय लागल अछि। घोड़ा पर चढ़य लागल अछि। बन्दूक चलाबय लागल अछि। फाँड़ भीड़ि क' दौड़ैत अछि, कुदैत अछि, फनैत अछि, हेलैत अछि, नचैत अछि।"[26]

हिनक हास्य व्यंग्यक प्रतिभाक वास्तविक प्रस्फुटन हिनक काव्यमे भेल अछि। हिनक हास्य व्यंग्यक रूप अधिक स्पष्ट तखन होइत अछि जखन ओ समकालीन समाजमे प्रचलित अवस्थाक कारणें अनमेल विवाहक समस्या पर प्रहार करैत छथि। मिथिलाक सामाजिक जीवनमे ई मान्यता प्रचलित रहल अछि जे पुरुष कतबो विवाह किऐक ने करथु, किन्तु नारी एकहि विवाहक अधिकारिणी छथि। एकरे फलस्वरूप वृद्ध व्यक्ति अपन कुलीनताक आधार पर अनेक विवाह करैत छथि। व्यंग्य-कवि एहि पृष्ठ भूमिक व्यंग्यात्मक शब्द चित्र अपन प्रसिद्ध कविता 'ढालाझा'[27]मे प्रस्तुत कयलनि अछि। ढाला झाक स्वरूपक चित्रण करैत कवि कहैत छथि जे हुनक माथ पर फाटल पुरान पाग तथा कान्ह पर गोबरीर सन अंगपोछा, माथ खल्वाट, त्रिपुण्डक तीन ठोप तथा पँच रुद्राक्ष टीकमे बान्हल छनि। इऐह थिकाह ढाला झा, लुट्टी झाक प्रपौत्र, नरहा पाँजि, ककड़ौड़क वासी एवं बेलौंचेक वंशज। हिनक यथार्थ स्वरूप कार्टून सदृश अछि जकरा देखतहि पाठकक हास्यक कोनो अन्त नहि रहैछ। ओ बहुविवाहमे विश्वास रखनिहार ओहि प्राचीन परम्पराक अनुमोदक तथा कुलीन प्रथाक प्रतीक थिकाह जे सासुरकें आर्थिक आयक अजस्र स्रोत मानैत छथि। समय-समय पर ओ ओतय ओहिना प्रस्तुत होइत छथि जेना महाजन लहना-तगादाक हेतु खदुकाक ओतय जाइछ। ओ अपन श्वसुरक प्रसंगमे जिज्ञासा करैत छथि—

कहाँ गेलाह फल्लाँ झा कन्यादानी श्वशुर हमरे
हुनकासँ जरूरी खानगीमे गप्प करबाक अछि[28]

कुलीनताक कारणेँ ढाला झा अपन श्वसुरक प्रति एहन संबोधन देत छथि। मैथिल समाज विभिन्न प्रकारक पाँजि एवं जातिक नाम पर विभाजित अछि। ओ श्वशुरसँ गरना छोड़ैबाक हेतु टाकाक माँग करैत छथि, किन्तु हुनक अस्वीकारात्मक उत्तर पाबि बमकि उठैत छथि —

सासुरक अछि कोन कमी, जाइत छी दोसर ठाम
जे नहि रुपैया देत, भोगत भरि जन्म फल
बेटी हफन्न रहतइ कनैत ओकर जीवन भरि
हमरा की ? जेम्हरे जैब, सार कोनो भेटिए जैत।
ई कहि फराठी लैत, लग्गा सन डेग दैत
मैल किट्ट फाटल पुरान पाग माथ पर
लैत अङपोछा कान्ह, क्रुद्ध फठकोंकाँड़ि जकाँ
विदा भेलाह ढाला झा पित्ते थर-थर कपैत[29]

एतय हास्यमे सन्निहित व्यंग्य द्वारा ओ सामाजिक दोष दिस सर्वसाधारणक दृष्टिकेँ आकृष्ट करैत छथि।

मिथिला मध्य एहि प्रकारक वैवाहिक प्रचलन मुख्यत: जाति-पाँति पर अवलंबित अछि। मैथिलके गर्व छनि जे ओ श्रीकान्त झा, महादेव झा, यजुआड़ एवं वेलौंचेक वंशज थिकाह। वस्तुत: मूल आर गोत्र पर समाज ततेक विश्वास करैत अछि जे ओहि वितण्डावादक फलस्वरूप ओकर अध: पतन शनै:-शनै भेल जा रहल अछि। एहि प्रकारक परंपरावादी वैवाहिक कुरीतिसँ जर्जरित समाजक पाँजि-पाटि, सिद्धान्त पतड़ा, हरिसिंह देवी व्यवस्था ओ कर्मकाण्ड पर व्यंग्य करैत कवि कहैत छथि जे आधुनिक परिप्रेक्ष्यमे ओ सव 'आगि'[30]मे धू-धू क' जरि रहल अछि—

रातिमे हम स्वप्न देखल, आगि लागल घर जरैये।
चार सभ पुरना धधकि कय जोर सँ धू-धू करैये ॥[31]

जहिना-जहिना आधुनिकताक अग्नि अत्यधिक प्रज्वलित भेल जा रहल अछि तहिना पुरातनताक धज्जी-धज्जी उड़ि रहल अछि। एतय ओ अन्धविश्वास, असमर्थता, आडम्बर, धर्म-नीति एवं संस्कृति पर निर्ममतापूर्वक व्यंग्य कयलनि अछि जतय फोंका पर्यन्त वहरा जाइत अछि।

अर्थाभावक कारणेँ समकालीन मैथिल समाजमे कन्या-विक्रयक प्रथा सेहो प्रचलित अछि। कन्या-विक्रयक कारणेँ अनमेल विवाहकेँ प्रोत्साहन भेटल अछि। एकरे परिणाम थीक जे कोमल कलीकेँ कोकनल ढेंगक संग निर्वाह करय पड़ैत छनि। व्यंग्यकार 'कन्याक नीलामी डाक'[32]मे अध:पतित कुलीन प्रथा एवं समाज पर कुठाराघात करैत छथि। वर पक्ष एवं कन्या पक्षक घटक उपस्थित भ' कोना परस्पर वर्तालाप करैत छथि, कथा स्थिर करैत छथि, तकर रूप तँ देखू—

वर पक्षक घटक—

सिह लग्न मे जन्म भेल छन्हि, वयस तीनिये बीस।
टीपनि अपने मिला लिय, संवत उनैस सँ तीस।
कलम चारि बीघा अपन छन्हि, हर बड़द दुइ जोड़।
डेढ़ पाइ मासो किनलन्हि अछि, टका छैन्हि नहि थोड़।
बेस किमतिगर छथि पनिगर हिनका सन भेटत ने आन।

(कानमे कहैत छथि)

तीस टका अपनहु के भेटत, खैब सुपारी पान।[33]

दुनू पक्षक घटकक पारस्परिक वार्तालापक क्रममे विवाह स्थिर भ' जाइछ, कारण कन्याक पिता कन्या बिक्री हेतु उताहुल छथि। व्यंग्यकार एहन कन्याक पिता पर व्यंग्य करैत छथि—

करब कथा पहिने जौं हम्मर सभटा कर्ज सधावी
चारि सौ जे गनि दिय' व्यवस्था झट सिद्धान्त लिखावी[34]

एहि पर वरक उत्तर छनि—

तावत तिन सँ आनल, बाँकी देब सधाय[35]

एहि पर कन्याक पिता उत्तर दैत छथि—

'हुँण्ड नोट लिखि देल जाय, अपनेकेँ कयल जमाय'[36]

जहिना कोनो वस्तुक बिक्रीक हेतु बजारमे खेंचाहेंच होइछ तहिना वर एवं कन्यापक्षक घटक बीच सेहो होइछ। आश्चर्य तँ तखन होइछ जखन कन्याक पिता निर्लज्जतापूर्वक घोषणा करैत छथि जे जैह कर्ज सधा सकताह सैह कन्याक अधिकारी हेताह। समाजक आर्थिक दशा सुदृढ़ नहि रहलाक कारणेँ मिथिलामे एहि प्रकारक अनमेल विवाह प्रचलित अछि। एतय हास्य एवं व्यंग्य दुनूक रूप अत्यन्त तीव्र अछि।

मैथिल लोकनिक भोजनप्रियता जगत्प्रसिद्ध अछि। एहन भोजन-विन्यास पर प्रो० झा निश्चित रूपेँ व्यंग्य कयलनि अछि। मिथिलामे जमायक स्वागतार्थ कतेक विन्यास कयल जाइछ तकर स्पष्ट चित्र 'ढाला झा'मे भेटैछ :—

रातिमे सचार लागल ढाला झाक आगाँमे
बाटी अठारह टा हुनका आगाँ लगाओल गेल
बड़ बड़ी भटबड़ कदीमा तिलकोड़ और
पापड़ तिलौरी ओ दनौरी अदौरी भाँटा
एक बट्टा छल्हिगर दही एक बट्टा खोआ गाढ़

चीनी पर्याप्त, मालभोग केरा पाकल खूब
डेढ़ सेर मेही भात, जाँति कऽ छलन्हि परसल
घृतसँ फैल चिपफन तथा बाटीमे राहड़ि दालि
आमिल देल, ऊपर खूब घृत छह छह करैत।[37]

एहि प्रकारक भोजन-विन्यासक वर्णन सुनितहिँ निश्चये क्षुधाग्नि जागृत भऽ जाइछ। एतय व्यंग्यकार प्रचलित परंपरा पर प्रहार क' हास्ये नहि, व्यंग्यक पर्याप्त सामग्री पाठकके देबाक प्रयास कयलनि अछि।

समाजक अन्यान्य वर्गक अपेक्षा ढोंगी-पोंगा-पंथी पंडित लोकनि हिनक हास्य-व्यंग्यक सबसँ बेशी शिकार भेलाह। तन्त्र-मन्त्र, शास्त्र-पुराणक वितण्डावादक कारणेँ सामाजिक जीवन दिन-प्रति-दिन विषम भेल जा रहल अछि। एहना स्थितिमे व्यंग्यकार कोना चुप्प बैसि सकैत छथि? धर्मक नाम पर अपनाकेँ अग्रदूत बुझनिहार पाखंडी 'पंडित लोकनि' पर व्यंग्य कय व्यंग्यकार हुनक भंडा फोड़लनि अछि। यथार्थतः ओ लोकनि अपन ज्ञानक दुरुपयोग निष्प्रयोजन शास्त्रार्थक चक्रमे समाप्त क' दैत छथि। आधुनिक संदर्भमे पंडितलोकनिक क्रिया-कलाप ठप पड़ि गेल, किएक तँ युग परिवर्तित भ' गेल अछि। परिवर्त्तित परिस्थितिकेँ देखि पंडितलोकनिमे आक्रोशक भावना स्वाभाविके अछि। एहना स्थितिमे हुनका सभक विलापक अतिरिक्त आन कोनो उपाय नहि रहि जाइछ। 'पंडित विलाप'मे पाठककेँ प्रचुर सामग्री भेटैत छनि—

जमाना बदलि गेलैक, उनटलै बात सब पुरना।
उठै अछि पित्त तेँ बहुतो करू की वृद्ध अथबल छी
जहाँ बट्टाक बट्टा घृत पड़ै छल भोजमे आगाँ
तहाँ आब डालडासँ दालि छौंकल देखि दबकल छी[38]

'बुचकुन बाबा'केँ आधुनिक नारीक पहिरब-ओढ़ब, चलब-फिरब, लिखब-पढ़ब एवं उन्मुक्त जीवन फुटलो आँखिए नहि सोहाइत छनि। हुनका अनुसारेँ नारी सतत दासताक बेड़ीमे जकड़ल रहथि, सैह उत्तम। हुनकर कथन छनि जे लोक केचुआकेँ फूँकि-फूँकि साँपक सर्जन कऽ रहल छथि। एहन परिस्थितिमे ओ हफीम खा क' अपन प्राणान्त करय चाहैत छथि। व्यंग्यकार वस्तुतः एहन पण्डितक अन्ते चाहैत छथि।

पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृतिक रगमे रँगाक' नारी ग्रामीण परिवेशमे अत्यन्त उपहासात्मक वनि जाइछ। एकर स्पष्ट चित्रण व्यंग्यकार 'अँङरेजिया लड़कीक समदाउन'मे कयलनि अछि —

आङनक बाहर घुमय नहि जयबैक
भैंसुर जैताह पड़ाय
देब पितर किनको नहि हँसबैन्ह
सभ जैताह तमसाय

ओहिठाम जा अण्डा नहि मङ्यैक
तफर ने छैक उपाय
जौं मन हो कहयैन्ह चुपचापहि
आनि देताह हमर जमाय[9]

पाश्चात्य सभ्यतामे लालित-पालित कन्याकें पिता चेतावनी दैत छथि; किन्तु हुनक व्यवहार पर व्यंग्यकारक आक्षेप एकदम स्पष्ट अछि ।

आधुनिक सभ्यतामे प्रो० झा कें जे दोष परिलक्षित होइत छनि तकरो ई व्यंग्यक माध्यम बनबैत छथि । हिनक प्रसिद्ध कविता 'टी-पार्टी' विशुद्ध हास्य-रसक रचना थीक । टी-पार्टी आधुनिक सभ्यता एवं संस्कृतिक प्रतीक थीक । एहि कवितामे कृत्रिमताक अभाव अछि, व्यंग्यकार कोनो अलंकरणक चेष्टा नहि कयलनि अछि । एकर भाषामे अद्‌भुत प्रवाह अछि । हास्य-रसक पुष्टिक हेतु जेहन भाषा आवश्यक अछि ताहि रूपक भाषाक प्रयोग एहिमे कयल गेल अछि । 'टी-पार्टी'क वाह्याडम्बरक प्रति कवि उपहास करैत छथि —

दूरे सँ देखैत छी जे अपूर्व अछि समारोह
कुर्सी ओ टेबुल कतार सँ सजाओल अछि
उज्जर दपादप श्वेत चादर ओछाओल और
नाना प्रकारक फूलदान अछि शोभायमान[10]

पार्टीक साज-सज्जा तथा अल्प भोजनकें देखि कवि व्यंग्य करैत छथि—

एकटा सिंहारा और एक फक्का दालमोट
एक रसगुल्ला और बुनिया एक चौठी मात्र
तोला भरि सेबइ समतोला दुइ फाँक
एक चुटकी किशमिश तथा सोहल केरा टा[11]

पार्टीक पश्चात् व्यंग्यकारक मनमे आधुनिक सभ्यताक प्रति जे भावना जागृत भेल ओ निश्चये उपहासात्मक थीक ।

बस पार्टीक ने नाम लिय
सोझे जाउ भानसमे पजारू गऽ आँच शीघ्र
खीचड़ि और साना बनाउ जतेक जल्दी हो
आर ई कार्ड लऽ कऽ चूल्हिमे झोंकि दिअ[12]

प्रोफेसर हरिमोहन झाक उपर्युक्त रचना समूहक विश्लेषणसँ एतबा निश्चित रूपें कहल जा सकैछ जे ई मैथिली हास्य-व्यंग्य-साहित्यक उज्ज्वल भविष्यक सूचक भेलाह । हिनक हास्य-व्यंग्य रचनाक प्रभाव मैथिली समाज पर तीन रूपें पड़लैक । प्रथम तँ ई मैथिलीमे पाठक वर्गक निर्माण कयलनि । द्वितीय, मिथिलाक कन्यालोकनिक व्यक्तिगत जीवन प्रभावित भेल जकर फलस्वरूप हजारक

हजार कन्या शिक्षित भ' रहलि छथि। तेसर प्रभाव मैथिलीक परवर्ती साहित्यकारलोकनि पर पड़लनि जे एहि दिशा मे उन्मुख भेलाह। जहिना सुस्वादु, चर्व्य, चोष्य, लेह्य, पेय भोजनकेँ प्राप्त कयला पर पेटूकेँ आनन्द होइत छनि तहिना हास्य-व्यंग्यमे अभिरुचि रखनिहार पाठककेँ हिनक रचनाक पारायणोत्तर प्रसन्नता होइत छनि। हिनक रचनाक लोकप्रियताक अनुमान तँ एही सँ लगाओल जा सकैछ जे जहिना देवकीनन्दन खत्रीक उपन्यास 'चन्द्रकान्ता संतति' केँ पढ़बाक हेतु अनेक अहिन्दी भाषी पाठक हिन्दी सिखलनि तहिना प्रोफेसर हरिमोहन झाक चित्ताकर्षक हास्य-व्यंग्य-रचनाक रसास्वादनक लेल बहुतो लोक मैथिली सिखलनि। हिनक विभिन्न रचना समय-समय पर विभिन्न भारतीय भाषाक प्रमुख साप्ताहिक, पाक्षिक एवं मासिक पत्रिकादिमे अनूदित भ' प्रकाशित होइत रहल अछि। वस्तुतः मैथिली साहित्यमे ई श्रेय हिनके छनि जनिक सर्वाधिक रचना विभिन्न भाषामे सेहो अनूदित एवं समादृत भेल अछि।

प्रसंग-निर्देश

1. कन्यादान, पृष्ठ ९८
2. तत्रैव, पृष्ठ-९९.
3. तत्रैव, पृष्ठ—२१.
4. तत्रैव, पृष्ठ—३७
5. तत्रैव, पृष्ठ—३७
6. द्विरागमन, पृष्ठ—१५८.
7. कन्यादान, पृष्ठ—१०४
8. तत्रैव, पृष्ठ—५९
9. प्रणम्य देवता, पृष्ठ—३.
10. तत्रैव, पृ—१२
11. तत्रैव, पृष्ठ—५३
12. तत्रैव, पृष्ठ—२३२-२४५.
13. तत्रैव, पृष्ठ—२७०
14. तत्रैव, पृष्ठ—२७४
15. प्रथम अखिल भारतीय मैथिली लेखक सम्मेलन, कथा विभागीय सभापतिक भाषण, वैदेही समिति, लाल बाग, दरभंगा-१९५६, पृष्ठ-६
16. रंगशाला एक-झलक, पृष्ठ—'ख'
17. खट्टर ककाक तरंग, पृष्ठ-२१६
18. तत्रैव भूमिका, पृष्ठ-छ
19. तत्रैव—पृष्ठ-ग
20. चर्चरी, पृष्ठ-२२०

21. तत्रैव, पृष्ठ-१
22. तत्रैव पृष्ठ-२४
23. तत्रैव, पृष्ठ-१८७.
24. तत्रैव, पृष्ठ-१८९
25. तत्रैव, पृष्ठ-१९१
26. तत्रैव, पृष्ठ-२४८.
27. मासिक स्वदेश, वर्ष-१, अंक-४ विक्रम संवत् २००५, चैत्र, पृष्ठ-१५२
28. तत्रैव, पृष्ठ-१५३.
29. तत्रैव, पृष्ठ-१५३.
30. वैदेही, अक्तूबर १९५३, पृष्ठ-१५५
31. तत्रैव
32. मिथिला, वर्ष-१, अंक-२, जेठ, सन् १३३६ पृष्ठ-७७.
33. तत्रैव
34. तत्रैव
35. तत्रैव
36. तत्रैव
37. मासिक स्वदेश, पृष्ठ-१५४.
38. मिथिला-दर्शन, मार्च १९६०, पृष्ठ-२
39. वैदेही विशेषांक- सन् १३५८, पृष्ठ-८
40. मासिक स्वदेश, वर्ष-१ अंक-४, वैशाख, विक्रम संवत् २००५ पृष्ट-२१९
41. तत्रैव, पृष्ठ-२२०
42. तत्रैव, पृष्ठ-२२२

पहिल दशकक नवरत्न

डा० भीमनाथ झा

उनैसम शताब्दीकेँ काल गीड़ि लेने छलैक।

किन्तु, जाइत-जाइत ओ शती मैथिलीक मंगलमय कोरमे अपन सय वर्षक धरोहरि छोड़ि गेल छल—अपन विगत शतीसँ प्राप्त निधिक अतिरिक्त।

विद्यापतिक पश्चात् मैथिली जे बुद्धिजीवीक मस्तिष्कमे पतनुकान लऽ लेने छलीह, से उनैसम शताब्दीक उत्तरार्धमे पुनः सर्वसाधारणक जीहपर चढ़िकऽ बाजऽ लगलीह। पद्यमे चन्दा झा आ गद्यमे जीवन झा मैथिलीक एहि दुनू विधाकेँ तरासिकऽ चमका चुकल छलाह। एहि दुनू साहित्यशिरोमणिक अतिरिक्त रघुनन्दन दास, जनसीदन, मुरलीधर झा, लालदास प्रभृति समर्थ सरस्वती-पुत्रकेँ दिवंगत शती एहि शताब्दीकेँ उपहारमे दऽ गेल छल। एतबे नहि, अपन अन्तिमो दशकमे ओ किछु शिशुक जन्म दऽकऽ गेल। ओहि शिशुक रूपमे ओ एहन ठोस न्योँ तैयार कऽ गेल, जाहिपर एहि बीसम शताब्दीमे मैथिली-अट्टालिकाक मोट-मोट खाम्ह आ पैघ-पैघ देवाल ठाढ़ भेल अछि। कहऽ नहि पड़त जे सीताराम झा (१८९१), बदरीनाथ झा (१=९३), उमेश मिश्र (१८९७), भोलालाल दास (१८९७) तथा गंगानन्द सिंह (१८९८), उनैसम शतीक अन्तिम दशकक ई नेनालोकनि, एहि बीसम शताब्दीक मैथिली साहित्यक कतेक दबर्दस्त न्योँ साबित भेलाह!

उनैसम शताब्दी कालक गालमे चल गेल छल।

बीसम शताब्दीक शुभागमन भऽ गेल छलैक।

दिवंगत शतीक अंतिम दशकक ओ शिशुलोकनि अपन नैसर्गिक किलकारीसँ नवागत शतीक सहर्ष स्वागत कयलनि।

चन्दा झा द्वारा तोड़ल गेल परतीपर कविवर सीताराम झा-प्रणीत मैथिली कविताक जजाति लहलहा उठल। कविता एक दिस नव-नव बाटकेँ जोहि आगाँ बढ़ैत छल तँ दोसर दिस गोविन्ददास-उमापति-हर्षनाथक आलंकारिक परम्पराकेँ सेहो भंग नहि करऽ चाहैत छल। कविशेखर बदरीनाथ झा ओहि परम्पराकेँ आओर गरिमामण्डित बना रहल छलाह। म० म० डा० उमेश मिश्र गद्यकेँ ठोस भूमि दऽ रहल छलाह तँ भोलालाल दास मैथिलीकेँ सार्वजनिक मान्यता आ विश्वविद्यालयमे एकरा उचित स्थान देअयबा-लेल फाँड़ कसने छलाह। ततबे नहि, पत्रकारिताकेँ सेहो ओ नवीन आ युगीन

दृष्टि देवामे तत्पर छलाह। कुमार गंगानन्द सिंह लड़खड़ायल 'फिक्शन'कें ठाढ़ कऽ ओहिमे ऊर्जा भरवामे लागल छलाह। अर्थात्, साहित्यक मुख्य-मुख्य विधाक संग मैथिली-आन्दोलनक दिशामे सेहो प्रगतिक शुभ संकेत परिलक्षित भेल।

ईसभ उनैसम शताब्दीक सन्तानक उपहार छल।

वीसम शताब्दीमे समयकें जेना पाँखि लागि गेलैक। पहिलुका सभ वस्तु लोकक आकांक्षाकें तृप्त करवामे अक्षम होवऽ लगलैक। लोक जीवनक प्रत्येक क्षेत्रमे नव-नव आवश्यकताक अनुभव करऽ लागल—साहित्यमे सेहो। उनैसम शताब्दीमे उत्पन्न साहित्यकारलोकनि यद्यपि अनेक नवीन आ उत्कृष्ट वस्तु समाजकें उपहृत कयलनि, तथापि आगाँ दिस ताकऽवला समाज किछु आर परिष्कृत, किछु आर सन्दर्भित, किछु आर आन्दोलित करऽवला वस्तु प्राप्त करबा ले' बेहाल छल।

वीसम शताब्दी मैथिल समाजक एहि व्यग्रताकें बुझलक तथा ओ अपन पहिले दशकमे मैथिलीक अंकमे नओ गोट रत्न, अर्थात् नवरत्न, क उपहार अर्पित कऽ देलक।

बीसम शताब्दीक पहिल दशक। दशकक उत्तरार्ध—सन् १९०६ सँ १० धरिक पाँच वर्ष। एहि पाँच वर्षमे नओ गोट युगद्रष्टा साहित्य-महारथीक प्रादुर्भाव भेल। सभक व्यक्तित्व महान। अपन कर्तृत्वमे सभ स्वतन्त्र, भिन्न-भिन्न, किन्तु किछु-ने-किछु सभमे साम्य—किछु-ने-किछु वैषम्य सेहो।

एहि नवो रत्नमे वयसक हिसावें क्रम एना वैसैत अछि—रमानाथ झा (२१-३-१९०६), काशीकान्त मिश्र 'मधुप' (२-१०-१९०६), कांचीनाथ झा 'किरण' (२८-१२-१९०६), लक्ष्मीपति सिंह (१५-२-१९०७), भुवनेश्वर सिंह 'भुवन' (चैत्र कृष्ण, मार्च १९०७), ईशनाथ झा (१८-६-१९०७), हरिमोहन झा (१८-९-१९०८), तन्त्रनाथ झा (२३-८-१९०९) तथा सुरेन्द्र झा 'सुमन' (आश्विन शुदि पंचमी, ९ अक्टूबर १९१०)।

एहिमे चारि गोटे—भुवन, ईशनाथ झा, रमानाथ झा तथा लक्ष्मीपति सिंह आव स्मृतिशेष भऽ गेल छथि।

एहि शताब्दीक आरम्भमे, मिथिलांचल अनेक समस्यासँ ग्रस्त छल, यथा अनमेल विवाह, वहुविवाह, वर्गभेद, जातिभेद, रूढ़िवादिता, दरिद्रता, राजनीतिक चेतनाहीनता, अशिक्षा, वेकारी आदि। समाजक विशाल वर्ग अशिक्षित, अकर्मण्य, अहम्मन्य—अपनेमे घटेसर राजा छल। जे गनल-गुथल लोक शिक्षा प्राप्त करितो छल, से संस्कृतक, ताहूमे पारम्परिक ढंगसँ, तें नवीन दृष्टि ग्रहण करवामे शिक्षितो वर्ग चुकले रहैत छल।

एहि ठाम अंगरेजी शिक्षाक प्रचार वहुत वादमे भेलैक। तें, प्रगतिक जे वसात सौंसे देशमे सिहकऽ लागल छलैक, एतऽ धरि जे अपन पड़ोसी वंगालो ओकर झोंकमे नीक जकाँ झूमऽ लागल छल, तकरा मिथिलाक सीमाक भीतर अयवामे अत्यधिक विलम्ब लगलैक। कारण तकर ई छल जे एहि ठामक लोक अपन केवाड़-खिड़की वहुत दिन धरि वन्द कयने रहल। आ वन्द घरमे, अपन छोट-छीन आश्रमकें लऽकऽ, ओकरे लूरू-खूरू करैत, सीमिते साधनमे निर्वाह कऽ लेवामे ओलोकनि बुद्धिमानी मानऽ लागल।

किन्तु, ई नवरत्न ओहि परम्पराकेँ भंग कयलक। एहिमे बेसी गोटे नवीन शिक्षा-पद्धति दिस झुकलाह—ई साहित्यमे आबऽवला क्रान्तिक पूर्वाभास छल।

श्री हरिमोहन झाक पिता तँ संस्कृतक पंडित छलथिन जरूर, किन्तु ओ जीवन भरि अपन दलानेपर बैसल नहि रहि गेलाह। पूब-पश्चिम देखलनि, युगक ध्वनिकेँ चिन्हलनि आ अपन पुत्रकेँ अंगरेजी शिक्षा दिस प्रवृत्त कयलनि। हरिमोहन झा अंगरेजी विषयमे बी० ए० आनर्स तथा दर्शनशास्त्रमे एम० ए० कयलनि आ युनिवर्सीटीमे अध्यापन-कार्य कयलनि। अपन कौलिक संस्कारक कारणेँ ई संस्कृतोक अध्ययन कयलनि तथा व्याकरण, साहित्य आ न्यायमे विशेष रुचि देखौलनि।

अंगरेजीक विधिवत् अध्ययन कयनिहार हिनक समवयस्कलोकनिमे रमानाथ झा, किरण, लक्ष्मीपति सिंह आ तन्त्रनाथ झा छथि। रमानाथ झा अंगरेजीमे एम० ए० छलाह, किरण मैथिलीमे एम०ए०, पी-एच० डी० कयने छथि, लक्ष्मीपति सिंह बी०ए० छलाह तथा तन्त्रनाथ झा अर्थशास्त्रमे एम०ए० छथि। किरण वैद्य छथि तँ रमानाथ झाकेँ पंजीक गम्भीर अध्ययन छलनि। ई चारू गोटे संस्कृतोक नीक वेत्ता।

परम्परानुसार संस्कृतक अध्ययन कऽ आचार्यक उपाधि प्राप्त कयनिहारमे हिनक दू गोट समवयस्क छथिन—मधुप ओ सुमन। मधुप व्याकरण-साहित्याचार्य-वेदान्तशास्त्री छथि आ सुमन साहित्याचार्य। ईशनाथ झा सेहो आचार्य छलाह किन्तु संगीतक, यद्यपि संस्कृतोक योग्यता हुनकामे पर्याप्त छलनि। मधुपकेँ छोड़ि उक्त दुनू गोटे अंगरेजियोक ज्ञाता।

भुवनकेँ सेहो संस्कृत आ अंगरेजीमे नीक प्रवेश छलनि।

एतावता, पहिल दशकक नवरत्नमे ई तँ स्वाभाविके जे नवो गोटे संस्कृतक वेत्ता रहल छथि, किन्तु सुखद आश्चर्य ई अवश्य जे एहिमेसँ आठ गोटे अंगरेजियोक नीक जानकार छथि, जाहिमे पाँच तँ उपाधिधारी विद्वाने छथि।

हरिमोहन झा अध्यापक छथि। ई अपन सम्पूर्ण सेवावधि छात्रलोकनिकेँ शिक्षादान करबामे बितौलनि।

संयोग ई जे मैथिलीक नवरत्नमे लक्ष्मीपति सिंह आ भुवनकेँ छोड़िकऽ शेष सात गोटे अध्यापके रहलाह अछि, यद्यपि एहू दुनूमे लक्ष्मीपति सिंह किछु दिन धरि अध्यापनो-कार्य कयने छलाह।

हरिमोहन झा जेना सम्पूर्ण सेवावधि युनिवर्सीटिएमे बितौलनि, तहिना मधुप आदिसँ अन्त धरि हाइस्कूलेमे रहलाह। रमानाथ झा पुस्तकाध्यक्षक पद छोड़िकऽ कालेज गेल छलाह तँ सुमन मिथिला मिहिरक संपादन-काजसँ विरत भऽकऽ। किरण आ तन्त्रनाथ झा स्कूल आ कालेज दुनू ठाम पढ़ौलनि। ईशनाथ झा संगीतमे बहुत दिन साधना कयलाक बाद कालेजमे प्रवेश कयने रहथि।

ईशनाथ झा तँ संगीतक आचार्य छलाह, किन्तु संगीतसँ रुचि नवरत्नमे सभकेँ रहलनि अछि। ईशनाथ झा शत-प्रति-शत कविता गाबिकऽ पढ़ैत छलाह। मधुप आ हरिमोहन झा छन्दोबद्ध गीत गाबिएकऽ पाठ करैत छथि। किरण सेहो कवि-सम्मेलनमे बेसी ठाम गबिते छथि। भुवनक काव्यपाठ सुनबाक हमरा सौभाग्य नहि भेल। तन्त्रनाथ झा कविसम्मेलनमे काव्यपाठ करितहि नहि छथि। सुमन धाराप्रवाह कविता पढ़ैत छथि। लक्ष्मीपति सिंह कवि-सम्मेलनमे जाइत छलाह कि नहि, से हमरा ज्ञात नहि। रमानाथ झा कवि रहबे नहि करथि।

नवो गोटेक परिवार पंडितक। नवो रत्न शाक्त।

हरिमोहन झा कोनो उपनाम नहि रखलनि। तहिना रमानाथ झा, लक्ष्मीपति सिंह, तन्त्रनाथ झा आ ईशनाथ झा सेहो उपनामहीन। शेष चारि गोटे नामक संग उपनामोसँ, वा कही जे उपनामेसँ वेसी, प्रसिद्ध छथि।

भारतक सर्वोच्च राष्ट्रिय साहित्यिक सस्था साहित्य अकादेमीसँ हरिमोहन झा सम्बद्ध रहलाह अछि—पहिने मैथिली परामर्शदातृ-समितिक सदस्यक रूपमे तथा बादमे एकर अतिरिक्त ओकर सामान्य परिषदक विशिष्ट भारतीय विद्वान-सदस्यक रूपमे। रमानाथ झा ओकर कार्य-समितिक मैथिली भाषाक पहिल प्रतिनिधि सदस्य रहि चुकल छलाह। मधुप, सुमन आ तन्त्रनाथ झाकेँ साहित्य अकादेमीक पुरस्कार प्राप्त भऽ चुकल छनि। सुमन एहि पाँच वर्ष (८३सँ८७)क हेतु मैथिली भाषाक प्रतिनिधि-रूपमे ओकर कार्य-समितिक सदस्य सेहो चुनल गेलाह अछि। भुवनक देहान्त साहित्य अकादेमीक गठनसँ पूर्वहिँ भऽ गेल छल। साहित्यकारक सम्मानार्थ अभिनन्दन-ग्रन्थक स्वस्थ परम्पराक श्रीगणेश सेहो एही नवरत्नसँ भेल अछि। रमानाथ झा तथा तन्त्रनाथ झाक अनन्तर हरिमोहन झाक अभिनन्दन-ग्रन्थ पटनाक एक सामाजिक संस्था मैथिल गोष्ठीक सत्प्रयाससँ प्रस्तुत कयल जा रहल अछि।

हरिमोहन झा राजनीतिसँ सदा दूरे रहलाह। सक्रिय राजनीतिमे रुचि रखनिहार नवरत्नमे मुख्यतः दुइए गोटे छथि—किरण आ सुमन। किरण सोसलिस्ट विचारधाराक पक्षधर, सुमन भारतीय जनता पार्टीक सदस्य। सुमन तँ अपन दलक एम० एल० ए० तथा एम० पी० सेहो भेलाह।

हरिमोहन झा वड़ सहज, आवेसी, आत्मीय आ गप्पप्रिय, तहिना लक्ष्मीपति सिंह सेहो। एकर विपरीत, रमानाथ झा आ तन्त्रनाथ झाक व्यक्तित्व अत्यन्त गम्भीर। ईशनाथ झामे आभिजात्य। सुमन आ मधुप तेहने मधुर। किरण आ भुवन कने 'तेज'—ठाँहि-पठाँहि कहनिहार।

किन्तु, दृष्टिकोण सभक उदार। परस्पर किछु साम्य किछु वैषम्य रहितो मैथिलीक प्रति समर्पणक भाव सभमे उपर्युपरि। क्यो साहित्यक एके विधाकेँ गहि ओकरे समृद्धतर कयलनि तँ क्यो विभिन्न विधाकेँ अपन प्रतिभासँ चमकौलनि। उपन्यास, कथा, कविता, निबन्ध, आलोचना, नाटक, अनुवाद, संपादन, पत्रकारिता आदि जतेक मुख्य-मुख्य अंग अछि साहित्यक, सभ क्षेत्रमे एहि नवरत्नक असाधारण योगदान रहल अछि। उक्त सभ क्षेत्रमे हिनकालोकनि द्वारा चर्वित चर्वण कम, नव जमीनक खोज वेसी भेल अछि। किछु विधा तँ म्रियमाण छल पहिने, तकरा पुनरुज्जीविते नहि कयल गेल, अपितु पर्याप्त शक्तिशाली वना देल गेल। कतिपय विधामे तँ एखनहुँ एही नवरत्नक गाड़ल मीलक पाथर अछि।

मैथिली कथा आख्यायिका-युगसँ लगले वहरायले छल। कुमार गंगानन्द सिंह ओकरा झाड़ि-पोछिकऽ तैयार करवामे लागल छलाह। किन्तु, ओहि विधाक आगाँ, तैयो, वड़का टा नहरि छलैक, जकरा टपलाक वादे ओ पूर्णतः सामाजिक भऽ सकैत छल। उपन्यासक स्थिति तँ आओरो शोचनीय छलैक। जनार्दन झा 'जनसीदन' आ जीवछ मिश्र प्रयोगावस्थेमे छलाह। ओसभ उपन्यासक व्यापकताकेँ पकड़बामे

प्रयत्नशील रहितो, सफल नहि भऽ सकलाह। कथा आ उपन्यासक, कहू जे मोटामोटी समस्त मैथिली साहित्यक, एहन जे दुर्गति छलैक, तकर पाछाँ अनेक कारण छल।

एहि ठामक समाज घोर अशिक्षाक अन्धकारमे टोइया-टापर दैत छल। स्त्रीवर्गक दुर्दश स्थिति तँ आर दारुण छलैक। नारी पुरुषक भोगक साधन आ तारण-प्रतारणक पात्र मात्र भऽकऽ रहि गेलि छलि। एहि स्थितिकेँ सुधारलो जा सकैत छल—जेना ई बात लोकक ध्यानपर चढ़बे नहि करैक, अथवा क्यो एकरा अपन ध्यानपर चड़ऽ देबालेल तैयारे ने छलैक—खाली वैवाहिक समस्यामे ओझरायल अपन जीवनकेँ बिता दैत छल। लोकक मुख्य काज छलैक—विवाह करब, विवाह करायब, पहुनाइ करब, बस। जाति-प्रथा चरम सीमापर पहुँचि गेल छलैक। एक-एक भलमानुस तीसा-चालीसा धरि होइत छल। मिथिला विधवाक देश बनैत जा रहल छल।

प्रो० हरिमोहन झा मिथिलाक एहि दुःस्थितिक अनुभव नीक जकाँ कयलनि। ई शिक्षित भऽ चुकल छलाह, अपन अड़ोस-पड़ोसकेँ देखि चुकल छलाह। अपन मातृभूमिकेँ एहि नारकीय स्थितिसँ उबारबाक विचार हिनक मनमे उपजलनि। मुदा, से समाजमे नीक जकाँ प्रवेश कयने बिना होयब संभव नहि छल। ई राजनीतिक जीव तँ छलाह नहि जे सभा-सोसाइटी करितथि, घर-घर जाकऽ लोकेमे चेतनाक मंत्र फुकितथि, सुधारक नारा दितथि। ई तँ कलमधर छलाह। किन्तु, अपन पूर्ववर्ती कलमधरकेँ असफल होइत देखि चुकल छलाह। तखन, हिनका अपन तार्किक बुद्धि काज देलकनि।

समाज ऊपर-ऊपरसँ तँ बड़ शान्त लगैत छल, आँखि मूनिकऽ बैसल बूढ़ सन, किन्तु एकर भीतर—शोषित वर्गक हृदयमे—बेचैनी तँ छलैके। एहिसँ इतरो वर्ग एकरस भऽ गेल छल। समाजमे ओहन किछु छलैक नहि, जाहिसँ लोक मनोरंजन करैत आ तनावमुक्त होइत। एहिपर हिनक ध्यान गेलनि। बस, समाजमे प्रवेश करबाक हेतु हिनका एक आशासूत्र हाथ लागि गेलनि।

ई विचारलनि जे जँ ओहन गप्प कहिऐक जे लोककेँ नीक लगैक, ओकर भारी मस्तिष्ककेँ हल्लुक करैक, मनोरंजनक साधन जुटबैक तँ अवश्य हिनक बात लोक सूनत, हिनक वस्तुकेँ लोक लपकिकऽ लेत। प्रयोगकेँ ई अजमौलनि आ हिनका आशातीत रूपेँ सफलता भेटलनि। ई हास्यकेँ अपनौलनि, तकर पाछाँ यैह कारण छल।

किन्तु, हास्य तँ हिनक साधन छलनि, साध्य छलनि मिथिलाक रूढ़िपर प्रहार करब, नारी-समाजक उन्नयन करब, समाजक आनो-आन विसंगतिकेँ दूर करब, युगकेँ चिन्हायब, प्रगतिक बाट धरायब। मिथिलाक समाज हिनक कॉलेजक छात्र तँ छलनि नहि, जकरा ई उपर्युक्त पाठ पढ़वितथिन। ओ तँ पाठक नामेसँ कोसो दूर पड़ायवला समाज छल। एतहु हिनक तार्किक बुद्धि काज देलकनि। हँसिये-हँसीमे किछु तेहन बात कहि देबाक शैलीकेँ ई अपनौलनि जे पाठककेँ कने बिसबिसाइ सेहो, कने मस्तिष्ककेँ झकझोड़बो करैक, कने चेतनाकेँ सेहो छूबैक, मुदा ओकर हँसीमे—मनोरंजनमे—कतहु बाधक नहि होइक। हास्य-मिश्रित व्यंग्य हिनक साहित्यमे आबि गेल, तकरो पाछाँ कारण यैह छल।

ईहो प्रयोग आशातीत सफल रहलनि। हँसिये-हँसीमे लोक अपन त्रुटिकेँ बूझऽ लागल। अनमेल विवाहक अभिशाप लोकक आँखि खोलऽ लगलैक। नारीवर्गमे जागरण आबऽ लागल, ओहू वर्गमे शिक्षाक

प्रचार शुरू भेल। आ, डेग-डेगपर बाधाक पहाड़ रहितो, मिथिला प्रगतिक बाटपर बढ़ऽ लागल—लेखकक स्वप्न साकार भेल।

हरिमोहन झाक लेखनीसँ जहिना मिथिला आन्दोलित भेल, एहि ठाम नवजागरणक संचार भेलैक, तहिना साहित्योमे लोकप्रियताक नवीन युगक सूत्रपात भेलैक। मैथिली साहित्य, जकरा पहिने मिथिलोक लोक पढ़बा ले' तैयार नहि छल, हरिमोहन झाक पदार्पण होइते मिथिलासँ बाहरोक लोक, मैथिलसँ इतरो समाज, एकरा पढ़बा ले' लालायित होबऽ लागल। हिनक साहित्यक रसास्वादन करबा लेल अमैथिल जन मैथिली पर्यन्त सिखलक। विद्यापतिक पश्चात् पहिल बेर मैथिलीकेँ पाठकवर्ग भेटलैक—विशाल पाठकवर्ग।

हिनका द्वारा उपन्यास आ कथाविधाकेँ नवजीवन प्राप्त भेलैक। ई एक एहन पक्की सड़क तैयार कऽ देलनि, जाहिपर हिनक समकालीन आ परवर्तीलोकनिक साहित्य-सबारी निर्बाध आगाँ बढ़ैत गेलनि। नवरत्नक ई रत्न उक्त दुनू मुख्य विधाक अतिरिक्त सर्जनात्मक साहित्यक आनो-आन विधामे देखार निखार अनलनि।

हिनक समवयस्क अन्य आठो रत्न अपन-अपन क्षेत्रमे उल्लेखनीय योगदान देलनि।

प्रो० रमानाथ झा मैथिली आलोचनाक आचार्य भऽ गेलाह। रमानाथ झासँ पहिने मैथिलीमे आलोचनाक कोनो स्वरूपे स्पष्ट नहि छल। ओ अंगरेजीक विद्वान छलाह, अंगरेजी-आलोचनाक विशिष्ट प्रणालीसँ अवगत छलाह, संगहिँ संस्कृत-काव्यशास्त्रक बोद्धा सेहो छलाह। मैथिली काव्यक प्रकृति जेँ संस्कृतेपर आधारित अछि, तेँ एहि साहित्यक आलोचना संस्कृतक सम्यक् ज्ञानक बिना संभव नहि अछि। मैथिली साहित्यक आत्माकेँ संस्कृत काव्यशास्त्रीय एक्स-रे मशीनसँ परखि ओकरा पाश्चात्य वैज्ञानिक साँचमे ढारि, मैथिली आलोचनाकेँ एक टा भव्य रूप रमानाथ झा देलनि।

ओ मैथिली लेखनक स्वरूप स्थिर करबाक लक्ष्यसँ एकरा एके वर्तनीमे लिखल जयबाक आन्दोलन चलौलनि आ अपन एक टा वर्तनी निश्चित कऽ ओकर व्यापक प्रचार कयलनि, जकर अनुसरण आइयो एक टा वर्ग—बहुत छोट वर्ग नहि—कऽ रहल अछि।

ओ मैथिलीक अनुसन्धाता आ गवेषक छलाह। प्राचीन गौरवमय साहित्य, जे कोनो पुस्तकालयमे तँ कोनो संदुकचीमे बन्द पड़ल छल, तकरा ताकि-ताकिकऽ बाहर अनलनि तथा ओकर महत्तासँ लोककेँ अवगत करौलनि। अनेक संकलन, गद्य ओ पद्यक, सुसंपादित रूपमे ओ प्रकाशित करौने छलाह। एकर अतिरिक्त, ओ 'मैथिली साहित्य पत्र' नामक सुप्रसिद्ध त्रैमासिकक संपादक-संचालक छलाह। संस्कृत साहित्यक किछु प्रसिद्ध उपाख्यानक मैथिली अनुवाद सेहो ओ कयने छलाह आ ओहन दू गोट हुनक पोथी मुद्रितो भेल छनि। मैथिलीक व्याकरण सेहो ओ लिखलनि।

हरिमोहन झा साहित्यक सर्जनात्मक पक्षकेँ लेलनि तँ रमानाथ झा आलोचनात्मक पक्षकेँ। केओ एक गोटे दोसर गोटेक क्षेत्रमे दखल देबाक प्रयास नहि कयलनि। दुनू गोटे अपन-अपन क्षेत्रमे कीर्त्तिमान स्थापित कयलनि। हरिमोहन झा स्वयं मैथिली साहित्यमे रमानाथ झाक अमूल्य योगदानकेँ चिरस्मरणीय मानने छथि, जखन ई हुनक समस्त विशेषताक स्मरण करैत कहने छथि—''मैथिलीक प्रति असीम

आस्था ओ निष्ठासँ भरल, मैथिलीक प्राचीन लिपि ओ शैलीक संरक्षणमे अदम्य उत्साहसँ युक्त, शोध, गवेषणा ओ समीक्षाक क्षेत्रमे सेनानी जकाँ नेतृत्व करैत, साहित्यक निर्माण, संकलन, संपादन ओ दिशा-निर्देशन द्वारा मैथिलीक तेहन अमूल्य सेवा कयने छथि जे इतिहासमे चिरस्मरणीय रहत।''

कविचूड़ामणि श्री काशीकान्त मिश्र 'मधुप' नवरत्नमे एकमात्र एहन रत्न छथि जे साहित्यक एके विधाकेँ आदिसँ अन्त धरि धयने रहि गेलाह। ओ कविता लऽकऽ साहित्यमे प्रवेश कयलनि आ कवितेकेँ सजबैत-धजबैत, अलंकृत-सुरंजित करैत रहलाह। किन्तु, काव्यमे ततबा व्याप्ति ओ अनलनि जे तकर प्रसादात् मैथिली कविता बहुत आगाँ धरि बढ़ि गेल। गीतिकाव्य, कथाकाव्य आ प्रबन्धकाव्य—तीनू पक्षकेँ ओ सुपुष्ट कयलनि।

हिन्दी सिनेमा-गीतक अन्धाधुन्ध प्रचारक कारणेँ मिथिलाक सामान्य समाज, विशेषतः स्त्रीवर्ग आ मजदूरवर्गक ठोरपरसँ विद्यापतिक गीत बिला रहल छल आ ओ वर्ग हिन्दी-गीत दिस आँखि मूनिकऽ टूटि पड़ल छल, तँ मधुपे भेलाह जे पुनः मैथिली-गीतकेँ लऽ जाकऽ ओकरालोकनिक ठोरपर पहुँचा देलनि। हुनक मैथिली-गीत एहि युगक कविमे सर्वाधिक लोकप्रिय भेल। आर्थिक वर्गभेदक पराकाष्ठाक कारणेँ मधुपक भावुक हृदय विगलित भऽ उठल आ ओ अपन कथाकाव्यमे शोषकवर्गक अमानवीय अत्याचारक हृदयविदारक चित्रण प्रस्तुत कयलनि। कृष्णकाव्यक परम्परामे संस्कृत-प्रबन्धकाव्यक ढंगपर महत्त्वपूर्ण मैथिली महाकाव्यक सर्जना सेहो ओ कयलनि।

हुनक लोकगीतक भाषा जहिना एकदम सहज-सरल, तहिना साहित्यिक काव्य अलंकारक भारसँ लदल-दबल। स्वानुभूतिपरक रचनाक हुनकामे प्रचुरता। वीर, शृंगार आदि रसक प्रति झुकाव अवश्य, किन्तु करुण रसक तँ अद्वितीय श्रष्टा। हुनक काव्य दलित-उपेक्षितक प्रबल पक्षधर।

हरिमोहन झा कवितो लिखलनि, मुदा मधुप कविते लिखलनि। हरिमोहन झाक मूल प्रवृत्ति हास्य-व्यंग्य, मुदा मधुपक करुणा। दुनू अपन-अपन रसक शीर्षपर। हरिमोहन झाक मुख्य प्रहार-विन्दु छल अनमेल विवाह, अशिक्षा, नारी-बन्धन, रूढ़िवादिता तँ मधुपक छल असामान्य अर्थव्यवस्था—शोषकक दुराचार आ दलितक दुर्दशा।

किन्तु, एक काज दुनू गोटेक साहित्य, अपन-अपन क्षेत्रमे, एक रंग कयलक। मैथिली गद्य हरिमोहन झाक रचनासँ व्यापक क्षेत्रमे अपन प्रभाव-विस्तार कयलक तँ मधुपक लोकगीतो मैथिली काव्यकेँ वर्गविशेषक मुट्ठीसँ निकालिकऽ मिथिलाक विशाल जनसमुदायक जीहपर चढ़ा देलक। गद्य आ पद्य एके संग लोकप्रियताक शिखरपर पहुँचि गेल—मैथिलीक भविष्यक लेल ई महान सुघटना सिद्ध भेल।

एहि दुनू रत्नमे एक बेर काव्यद्वन्द्व सेहो मचि गेल छल। सहरसाक विराट् कवि-सम्मेलनमे हास्य आ करुणाक ओ मधुर संग्राम ऐतिहासिक महत्त्वक घटना भऽ गेल अछि।

डा० काञ्चीनाथ झा 'किरण' विलक्षण व्यक्तित्व रखनिहार मैथिलीक पहिल दशकक नवरत्नमे थिकाह। हुनक व्यक्तित्व संघर्षक आगिमे तपि-तपिकऽ कुन्दन बनि गेल अछि। छात्ररूपमे काशी गेलाह तँ ओतहु मैथिलीक लेल संघटन-आन्दोलन कयलनि। हाइस्कूलमे शिक्षक भऽ सरिसब पाही अयलाह तँ ओहू ठामसँ विद्यापति-पर्वक अलख जगौलनि, गाम-गाम घुरि-घुरि मैथिलीक प्रचार-प्रसार कयलनि,

आन्दोलनक हेतु जनताकेँ जगौलनि—उकसौलनि। मैथिलीक कार्यकर्त्ता, सेनानीमे किरणक नाम अग्रगण्य अछि। पहिल दशकक नवरत्नमे एकमात्र येह छथि जे साहित्येतरो क्षेत्रमे मैथिलीक हेतु मूल्यवान काज कयने छथि। 'किरण'क व्यक्तित्व-छटाकेँ एही नवरत्नक एक 'सुमन' एक ठाम खूब नीक जकाँ झलका देने छथि - "वाणीमे स्पष्टता, विचारमे प्रौढ़ता, चिन्तनमे मौलिकता, सामाजिक जीवनमे सुधार करबाक दुर्दान्त आग्रह आ तदनुकूल आचरण, दलित-पीड़ितक प्रति सहज सहानुभूति, क्रान्तिक प्रखरता तथापि शान्तिक रम्यता, सिद्धान्तमे कठोर अथच व्यवहारमे कोमल किरणजीक चरितक रूपरेखा थिक।"

साहित्यमे हुनक योगदान बहुमुखी अछि। उपन्यास, कथा, नाटक, एकांकी, आलोचना, कविता आदि विधामे ओ जे लिखने छथि, यद्यपि लिखने छथि थोड़-थोड़, किन्तु से विसरजला नहि अछि। हुनक सर्जनात्मक साहित्यमे आर्थिक विषमता आ शोषण-उत्पीड़न उजागर भेल अछि तँ आलोचनात्मक साहित्यमे मौलिक चिन्तन आ वस्तुपरक सूक्ष्म दृष्टि देखबामे अबैत अछि।

साहित्यक एकाधिक विधामे, हरिमोहन झा आ किरण, एहि दुनू गोटेक योगदान रहल अछि। उपन्यास दुनू गोटे लिखने छथि—किरण 'चन्द्रग्रहण' तँ हरिमोहन झा 'कन्यादान' 'द्विरागमन'। पुस्तकाकार पहिने छपल अछि चन्द्रग्रहणे, किन्तु ओहिसँ पूर्वे पत्रिकाक माध्यमे कन्यादानक कतिपय अंश पाठकक समक्ष आबि गेल छल। चन्द्रग्रहण लघु उपन्यास थिक, किन्तु कन्यादान-द्विरागमन पूर्णकायिक उपन्यास। कथावस्तु दुनूक यद्यपि सामाजिक विषमतापर आधारित अछि, किन्तु वर्णनक विलक्षण छटा, हास्य-व्यंग्यात्मक शैली आ यथार्थक सटीक चित्रणक कारणेँ कन्यादानक लोकप्रियता कतहु अधिक बढ़ि गेल।

कथा सेहो दुनू गोटे लिखने छथि, अपन मुख्य विधा मानिकऽ लिखने छथि तथा दुनू गोटेक दृष्टिकोण अपन-अपन कथाक माध्यमे नीक जकाँ फरिच्छ भेल अछि। अर्थवादक प्रति किरणक आक्रोश हुनक कथासभमे उमड़िकऽ आयल अछि तँ मिथिलाक बहुविध रूढ़िपर चोट करब हरिमोहन झाक कथाक मुख्य ध्येय रहल अछि।

हरिमोहन झा नाटक तँ नहि लिखने छथि, किन्तु एकांकी लिखने छथि। हिनक एकांकीक पात्र सभ मिथिलाक ऐतिहासिक व्यक्ति छथिन—आयाची आ मण्डन। किरण नाटक लिखलनि तँ हुनको पात्र मिथिलेक ऐतिहासिक पुरुष छथिन—विद्यापति। 'जय जन्मभूमि'क पात्रसभ सेहो मिथिलाक ऐतिहासिके मानव थिकथिन। एतावता, मिथिलाक ऐतिहासिक महापुरुषकेँ अपन नाटक आ एकांकीक पात्र दुनू गोटे बनौलनि अछि। तात्पर्य, मिथिलाक गौरवमय परम्परा आ एहिठामक महापुरुषलोकनिक उदात्त चरित्रसँ जनताकेँ प्रत्यक्ष दर्शन करायब, दुनू गोटे एके रंग आवश्यक बुझलनि।

कविता सेहो दुनू गोटे लिखने छथि, यद्यपि दुनूमेसँ कनिको मुख्य विधा ई नहि रहलनि। हरिमोहन झाक कविता हास्य आ व्यंग्यसँ ओतप्रोत अछि तँ किरणक चिन्तनात्मक बेसी। आस्तिक—ईश्वरकेँ मूर्तिरूपमे माननिहार—दुनूमेसँ क्यो नहि। हरिमोहन झा नियतिवादी छथि तँ किरण कर्मवादी। एक हास्यसम्राट् तँ दोसर हास्यकेँ रसे मानबाक हेतु तैयार नहि।

बाबू लक्ष्मीपति सिंह बहुविधावादी छलाह। उपन्यास, कविता, निबन्ध, समीक्षा, रेडियो-रूपक आदि क्षेत्रमे हुनक काज कयल छनि। किन्तु, एहिसँ पैघ काज, हमर दृष्टिमे, ओ कऽ गेलाह प्रवासी मैथिलकेँ अपन भूमि आ भाषासँ भावात्मक रूपेँ जोड़बाक। आगरा, अजमेर, अलीगढ़, गाजियाबाद आदि

शहरमे बसनिहार प्रवासी मैथिल-सन्तान, जे अपन मातृभाषाकें बिसरि गेल छल, तकरासभकें जन्मभूमिक लगन लगा देब आ मैथिली आन्दोलनमे ओकरासभसँ सक्रिय सहयोग लेब—ई एहन काज छल, जकरा बाबूए साहेब सन रत्न कऽ सकैत छलाह। ओ दू गोट मासिक पत्रक संपादको रहलाह तथा जीविकाक क्रममे किछु वर्ष धरि कोश-निर्माण-कार्य सेहो कयने छलाह।

हरिमोहन झा आ लक्ष्मीपति सिंह—दुनू गोटे दू-दू उपन्यास लिखलनि, किन्तु हरिमोहन झाक दोसर उपन्यास पहिलक पूरक थिकनि, किन्तु लक्ष्मीपति सिंहक दुनू स्वतन्त्र। हरिमोहन झाक दुनू उपन्यासक शीर्षक विवाह-विषयक अछि तँ लक्ष्मीपति सिंहक दुनूक शीर्षक पुराण-संवद्ध। दुनू गोटे यद्यपि अनेक विधामे लिखलनि, किन्तु पहिल कृति दुनू गोटेक उपन्यासे प्रकाशित भेलनि, ताहूमे संयोग ई जे दुनू गोटेक पहिल उपन्यास पुस्तक-रूपमे अयबासँ पूर्वे पत्रिकामे छपि चुकल छलनि।

कविता सेहो दुनू गोटे लिखलनि, किन्तु ओकर विषय-वस्तु आ शैली दुनू गोटे भिन्न-भिन्न अपनौलनि। लक्ष्मीपति सिंहक कविता, पद कहू, परंपरागत शैलीमे, प्राचीने विषय-वस्तुपर आधारित अछि तँ हरिमोहन झाक कविता शिल्प आ कथ्य दुनूमे नवीनताक पोषक। लक्ष्मीपति सिंहक पद भक्तिरससँ ओतप्रोत तँ हरिमोहन झाक कविता हास्यरसमे सराबोर।

एक टा आओर साम्य दुनू रत्नमे भऽ जायत, जखन हरिमोहन झाक आत्मकथा प्रकाशित होयत। लक्ष्मीपति सिंहक आत्मकथा पूर्वे छपि चुकल अछि। आ, संभावना एहू साम्यक अछि जे दुनू गोटेक अन्तिम मौलिक कृति आत्मकथे होयत। यद्यपि, हमरालोकनिक कामना अछि जे हरिमोहन झाक अमर लेखनीसँ आओर अभिनव अमूल्य निधि हमरालोकनिकें बहुत दिन धरि भेटैत रहय। एखन धरि दुइए गोट साहित्यकार आत्मकथा लिखलनि अछि आ ओ दुनू पहिल दशकक नवरत्नमे छथि।

बाबू भुवनेश्वर सिंह 'भुवन' पहिल दशकक नवरत्नमे सभमेँ अल्पजीवी सदस्य भेलाह। मार्च १९०७मे जन्म आ ११ नवम्बर '४४कें निधन—मात्र सैंतीस वर्षक लघु जीवन ओ पौलनि, किन्तु ओतबे अवस्थामे अपन अप्रतिम कृतित्वसँ महान बनि गेलाह। मैथिलीक नामपर सर्वस्व होम कऽ देनिहार ओहि पुरुषपुंगवक व्यक्तित्व केहन उदात्त आ जीवन कतेक संघर्षशील छल, तकर साक्षी हुनके कविताक ई अंश अछि—

दीन छी, भाग्य-विहीन विपन्न
स्वभावहिँ सँ करुणा-निधान छी
प्रीतिक गीत गबैत छी मुग्ध भऽ
दैवक हाय विचित्र विधान छी
घोर विपत्तिक चोटहुमे
दयनीयक हेतु कुबेर समान छी
रिक्त छी, तैयो लुटाबी विभूति
कहौ जग तुच्छ, परन्तु महान छी

मूलतः ओ कवि छलाह। कवि केहन, तँ जे यात्रीक शब्दमे "की शिल्प-विधान आ की तत्त्व-

चिन्तन, ओ काव्यधाराकें नवीन दिशामे मोड़ि देल।" ओ कथाकारो छलाह। यद्यपि हुनक कथा संख्यामे थोड़ अछि, किन्तु जतबे अछि से सहज़ोर। एक दिस बंगलाक 'विरहिणी ब्रजांगना'क पद्यमय सफल अनुवाद कयलनि तँ दोसर दिस रामदासक 'आनन्द-विजय नाटिका'क सम्पादन सेहो कयलनि। एक आर महत्त्वपूर्ण काज, प्रायः ककरोसँ कम महत्त्वपूर्ण नहि, ओ कयलनि—'विभूति'क प्रकाशन-संपादन, जे तत्कालीन पत्र-पत्रिकासभमे खूब चर्चित भेल।

हरिमोहन झाक मुख्य विधा यद्यपि कथा-उपन्यास रहलनि आ भुवनक कविता, तैयो हरिमोहन झा कवितो लिखलनि आ भुवन कथो। कवियोक रूपमे हरिमोहन झा चर्चित, तहिना कथाकारोक रूपमे भुवनकें मान्यता। हरिमोहन झाक कथा समाजक व्रणपर सुइ भोँकैछ तँ भुवनक कविता सोझे प्रलयेक आह्वान कऽ दैछ। किन्तु, लक्ष्य दुनूक एके, परिवर्तनक कामना दुनूमे समाने। भुवनक समस्त काव्य-कृति 'भुवन-भारती'क नामें एक ठाम संकलित अछि, तहिना हरिमोहन झाक समस्त कृतिक प्रकाशन 'हरिमोहन-रचनावली'क नामें मैथिली अकादमीमे संकल्पित अछि।

सरसकवि ईशनाथ झा मधुर कविए नहि, माजल नाटककार आ मानल अनुवादको छलाह। संगीतक वेत्ता छलाह, अतएव हुनक कविता संगीतनिवद्धे रहैत छल। ओ कोमल शब्दक विन्यासी आ कोमल भावक आवेसी छलाह। मौलिक कविता तँ हुनक वेसी नहि अछि, किन्तु महाभारतक जतेक अंशक काव्यमय अनुवाद कयल अछि, सेहो मौलिकेक रसास्वादन करवैत अछि। जतवे मुख्य हुनका हेतु कविता-विधा छल, ततवे नाटको। मौलिक नाटकमे एक गोट ऐतिहासिक किंवदन्तीक आधारपर अछि तँ दोसर समस्यामूलक सामाजिक। संस्कृतक दू गोट विख्यात नाटकक अनुवाद सेहो कयने छलाह। चारू नाटक हुनक प्रकाशित अछि आ मौलिक कविताक एक संग्रह सेहो। किन्तु, महाभारतक अनुवाद, जतबो कयल अछि, से सभ टा प्रकाशित नहि अछि। काव्यक प्रिय विषय हुनक छल प्रकृति-वर्णन। प्रकृतिक निरीक्षण ओ बड़ आत्मीय रूपें कयने छलाह आ तेहने आत्मीयतासँ ओकर चित्रांकनो कऽ गेल छथि। ओ किछु स्वानुभूतिपरक गीत सेहो लिखने छलाह, जकरा रमानाथ झा हुनक रचनामे महत्त्वपूर्ण मानने छथि।

साहित्यगत समता हरिमोहन झा आ ईशनाथ झामे दृष्टिगत नहि होइत अछि। ईशनाथ झा कविता आ नाटक टाकें अपनौलनि तँ हरिमोहन झा कथा-उपन्यासक संग कविता-एकांकी सहित आनो विधाकें सजौलनि। हुनक उपाधि छल 'सरसकवि' आ हिनक हृदये रससँ ओतप्रोत अछि, जे प्रतिपल छलकैत रहैत अछि।

प्रो० तन्त्रनाथ झा कवि छथि, महाकवि छथि—दू गोट सुप्रसिद्ध महाकाव्यक रचयिता छथि, किछु प्राचीन परिपाटीक भक्तिपद आ किछु अंगरेजी काव्यक अनुकरणपर सफल कविता लिखने छथि। एकांकीक एक संग्रह सेहो हुनक प्रकाशित अछि। एकाध कथाक अतिरिक्त हितोपदेशक गद्यपद्यमय अनुवाद कयने छथि। वालसाहित्य सेहो लिखलनि आ ओकरा अपने अक्षरमे, तिरहुतामे, लेथो कराय पोथी तैयार करौने छथि।

हुनक प्रसिद्धिक आधार भेल कीचकवध महाकाव्य, जे अछि तँ तत्सम शब्दबहुल महाभारतीय कथापर आधारित, किन्तु शैली ओकर छैक परम्परागत महाकाव्यसँ भिन्न, अंगरेजी महाकाव्यक

ढंगपर, छन्द अमित्राक्षर। हुनक नवीन शैलीक स्फुट कवितामे समाजमे व्याप्त अहितकर प्रवृत्तिपर आक्षेप व्यंजित भेल अछि। हुनक एकाकीसभ सेहो लोकप्रिय भेल, जाहिमे हास्य-व्यंग्य ठाम-ठाम नीक जकाँ उजागर भेल अछि तथा कतहु-कतहु अन्तःसंघर्ष सेहो देखबामे अबैत अछि।

हरिमोहन झाक सहजोर व्यंग्यक प्रहार जतेक व्यापक वर्गपर पड़ल अछि, तन्त्रनाथ झाक ओतेक नहि—ने ओतेक सहजोरे, ने ओतेक व्यापके वर्गपर। हरिमोहन झाक हास्य आ ताहि संग व्यंग्यो गंगाक लहरि जकाँ कलकल करैत चलैत अछि, किन्तु तन्त्रनाथ झाक व्यंग्य अन्तःसलिला अछि। हरिमोहन झा सहज-सरल भाषाक पक्षधर छथि तँ तन्त्रनाथ झाक झुकाव संस्कृतनिष्ठ क्लिष्ट भाषा दिस वेसी छनि—काव्यमे से पराकाष्ठापर पहुँचि गेलनि अछि। दुनूक अपन व्यक्तित्वे जकाँ हुनकालोकनिक काव्य-व्यक्तित्व सेहो भिन्न छनि—एकक घुलल-मिलल, उन्मुक्त, हँसीक फुलझड़ी छोड़ैत तँ दोसरक पंडिताम, गम्भीर, दहसति उत्पन्न करऽवला। किन्तु, हरिमोहन झाक 'ढाला झा' आ तन्त्रनाथ झाक 'मुसरी झा' दुनू टिपिकल मैथिल, अपन-अपन रूढ़िक पाँकमे आकंठ गड़ल, दुनू पात्र जनसमुदायमे खूब प्रसिद्ध, पर्याप्त लोकरंजक।

प्रो० सुरेन्द्र झा 'सुमन' पहिल दशाब्दीक नवरत्नक अन्तिम रत्न थिकाह। किन्तु, नवरत्नक जे माला बनल अछि, ताहिमे अन्तिम केओ नहि भऽ सकैत छथि—सुमन तँ नहियेँ। हुनक कवि-व्यक्तित्व अति महान अछि, सम्पूर्ण व्यक्तित्वे दीप्तिमान अछि। एखनहुँ, जखन हुनक समवयस्कलोकनि आब सभ तरहेँ अवकाश लऽ लेलनि अछि, ओ सघन रूपेँ कार्यशील छथि। दैनिक 'स्वदेश'क यज्ञमे अपन तन-मन-धनक आहूति दऽ रहल छथि। एके व्यक्तिक कान्हक जोरपर दैनिक पत्रक गाड़ी गुड़कब—एहि असम्भव काजकेँ ओ एखन धरि सम्भव कयने छथि।

हुनक काव्य यद्यपि संस्कृत-परम्परासँ परिचालित होइछ, किन्तु नवीनताक सन्निवेशो ओहिमे प्रचुर मात्रामे भेटैछ, नवीनता—शिल्प-शैलीक परिवर्तनमे नहि, कल्पनाक नव-नव क्षितिजक अनुसन्धानमे, विचारक अधुनातन प्रतिस्थापनमे, राष्ट्रिय चेतनाकेँ जन-जनमे जगयबामे।

ओ मिथिला मिहिरक यशस्वी सम्पादक रहलाह, संस्कृत-बंगला साहित्यक अनुवादक भेलाह, नव-नव साहित्यकारक प्रेरणा-स्रोत बनलाह।

हरिमोहन झा आ सुमनक साहित्य-क्षेत्र नितान्त भिन्न रहलनि—विधामे, शिल्पमे, दृष्टिकोणमे, भावमे। किन्तु, प्रभावमे अपन-अपन ढंगसँ दुनू गोटेक साहित्य बेजोर। हरिमोहन झा कवितो कम नहि लिखलनि, किन्तु दुनूक कविता दू विपरीत छोरपर। एकक विज्ञवर्गक बीच प्रतिष्ठित तँ दोसरक जनसामान्यमे प्रचलित। सुमन किछु कथो लिखने छथि, किन्तु अपने काव्य-प्रकाशक आगाँ ओ तिरोहित भऽ गेल छनि, आ हरिमोहन झाक कथाक संग तँ तुलना नहिएँ कयल जा सकैत छनि।

दुनू गोटे अत्यन्त विनयी। एक सौजन्यक सुरभि छिटैत 'सुमने' तँ दोसर जन-मन-विहारी 'मोहने'। एक शान्त रसक मूर्त्तिश्री तँ दोसर हास्य-कानन-केसरी। एक महाकवि-नायक तँ दोसर विविध विधा-उन्नायक। एक रस-दार्शनिक तँ दोसर दर्शन-रसिक।

साहित्यक कोनो विधा हो, एहि नवरत्नक अपूर्व योगदानक सुफल समक्ष अयनहिँ; काव्यकलाक कोनो पक्ष हो, नवरत्नक दक्ष कलमक कमाल प्रत्यक्ष भेनहिँ। सभ रत्नक अपन-अपन दमक, सभ

सुमनक खास-खास गमक, सभ प्रभा-मण्डलक भिन्न-भिन्न चमक, सभ मणि अपनामे पूर्ण, सभ एक-पर-एक महत्त्वपूर्ण। किन्तु, एहि रत्नक गुंफित मालाक अपन महत्त्व भिन्ने—ई नवो रत्न परस्पर अभिन्ने। जेना काव्यक नवो रस भिन्न-भिन्न, किन्तु साहित्यक सर्वतोमुखी समृद्धि सभक सम्यक् योगदानहिसँ संभव; जेना भक्तिक बाट सभ टा फराक-फराक, मुदा ईश्वरक प्रति सम्पूर्ण समर्पण-भाव नवधा भक्तिएमे निहित, तहिना वर्तमान शताब्दीमे भेल मैथिलीक श्रीवृद्धिक मूलमे पहिल दशकक एही नवरत्नक समतुल प्रभाव सुविदित अछि। कथा-उपन्यास की, कविता-नाटक की, निबन्ध-आलोचना की, अनुवाद-सम्पादन की, पत्रकारिता-आन्दोलन की—जाही दिस नजरि खिरायब, साहित्यमे बेसी ठाम एखनहुँ नवरत्नेक गाड़ल मीलक पाथर पायब। किछु पाथर आगाँ गाड़लो गेल अछि तँ ओहू पाथरकेँ उठाकऽ आगाँ धरि पहुँचयबा लेल जोर लगौनिहारमे एहि नवरत्नक कोनो-ने-कोनो हाथ अछिए। एखनहुँ जे हाथ दृश्य अछि, से कि तँ नूतन सर्जनामे रत अछि अथवा शुभकामनाक मंगल-कलश भरने नवीन पीढ़ीक माथपर आशीर्वादक रस छलका रहल अछि।

मैथिलीक ई नवरत्न—बीसम शताब्दीक पहिल दशक द्वारा प्रदत्त ई अमूल्य उपहार—साहित्य-हिमालयक अनेक चोटीपर अपन-अपन कीर्त्ति-केतु फहरा देने अछि। आइयो ई ओहिना लहरा रहल अछि। हमरालोकनि ओम्हर ताकि-ताकि विभोर भऽ रहल छी।

आबऽवला शताब्दी सेहो एहि नवो पताकाक नीचाँ अपनाकेँ गौरवान्वित अनुभव करत।



युगदर्शी साहित्यकार प्रोफेसर हरिमोहन झा

श्री भाग्यनारायण झा

हरिमोहन बाबू !

ई नाम कोनो व्यक्तिक नहि, अपितु संस्थाक अछि। जखन कोनो व्यक्ति अपन व्यक्तित्व एवं कृतित्वसँ समाजपर एकटा अमिट छाप छोड़ि जाइत अछि, तखन ओहन लोक व्यक्ति नहि, संस्था भऽ जाइत अछि। एहने व्यक्तिक श्रेणीमे हरिमोहन झाजीकेँ राखल जा सकैत छनि।

पटना विश्वविद्यालयक अवकाशप्राप्त दर्शन विभागाध्यक्ष प्रोफेसर हरिमोहन झा स्वनामधन्य साहित्यकार पं० जनार्दन झा 'जनसीदन'क पुत्र छथि। सुयोग्य पिताक सुयोग्य पुत्र। वैशाली जिलाक कुमर वाजितपुर गाममे एक मध्यवर्गीय परिवारमे हुनक जन्म भेल छलन्हि, किन्तु अपन परिश्रम, कर्मठता, लगन आ अध्यवसायसँ ई वरदपुत्र मैथिली साहित्यक वरदान बनलाह। जीवन-यात्रा शुरू करैत देरी ओ अपन मातृभाषाक साहित्यक संवर्द्धनामे लागि गेलाह आ एखनोधरि कइये रहल छथि।

कवि-कोकिल विद्यापतिसँ मैथिली साहित्य आ मैथिली-भाषी जहिना गौरवान्वित अछि, ओहिना प्रोफेसर हरिमोहन झासँ मैथिली-भाषी आ साहित्य गौरवान्वित भेल अछि, भऽ रहल अछि आ होइत रहत। विद्यापतिसँ हरिमोहन बाबूक तुलना करबाक हमर अभिप्राय ई जे जहिना विद्यापतिक गीत मिथिलांचलक लोकक कंठमे सदिखन हिलोर मारैत रहैत छैक, ओही तरहेँ हरिमोहन बाबूक 'खट्टर ककाक तरंग' वा 'प्रणम्य देवता'क व्यंग्य-वर्षा कखनो विसरल नहि जाइत छैक। जेना देश-विदेशमे विद्यापतिक रचनाक कारणेँ मैथिली साहित्यकेँ प्रतिष्ठा आ स्थान भेटलैक अछि आ भेटि रहल छैक, ओहिना एहि शताब्दीमे हरिमोहन बाबूक रचनाक लोकप्रियताक कारणेँ मैथिली-साहित्यक क्षेत्र-विस्तार भेल अछि।

ओना तँ मैथिलीमे प्रगतिशील साहित्यकारक आब बाढ़ि आबि गेल अछि, मुदा हरिमोहन बाबू अपन साहित्यमे प्रगतिशीलताक शंख तखन फुकलनि जखन देशमे सामंती-व्यवस्था आ दकियानूसी विचारधारासँ लोक ग्रस्त छल। मैथिल एखनो कतेक कट्टरपंथी होइत छथि से तँ हमरालोकनि देखिते छी। ओहन परिस्थितिमे हरिमोहन बाबूक प्रगतिशील लेखनक बेस महत्व अछि किएक तँ ओ मैथिल-समाजकेँ संकीर्णताक भावनासँ उपर अनबाक चेष्टा कऽ देशक मुख्य धारामे मिथिलाकेँ जोड़ऽमे अद्भुत आ सराहनीय प्रयास कयने छथि।

साहित्यकार समाजक दर्पण होइत अछि आ ओकर लेखनसँ समाजक पूर्ण छवि परिलक्षित होइछ। एतबे नहि, साहित्यकार समाजक प्रहरी आ अगुआ होइत अछि। एहि संदर्भमे कहल जा सकैछ जे हरिमोहन बाबू युगद्रष्टा छथि ओ युगक नाड़ीकेँ एकटा नव मोड़ दऽ समाजकेँ झकझोड़ि देबाक प्रयास कयलन्हि। मैथिल-समाजक एकटा वर्ग (पंडित लोकनि) हुनक व्यंग्य-रचनासँ पहिने बेस खौंझयलाह, किन्तु बदलैत युगक क्रममे हुनक साहित्यक उपयोगिता एवं उपादेयता बूझल जाय लागल। ओ अपन प्रायः सभ रचनामे मैथिल-पंडितक दकियानूसी विचार पर प्रहार कयने छथि, जे पढ़ैत काल सामान्य पाठक लोट-पोट भइये जाइत अछि, ओ अपन समाजक रूढ़िवादी विचारधाराक चांगुरसँ मुक्त होयबाक सम्बन्धमे कम-सँ-कम सोचऽ आ विचारक लेल अवश्ये विवश होइत अछि।

दार्शनिक साहित्यकार हरिमोहन झा समाज-सुधारक सेहो छथि। हुनक मान्यता छन्हि जे समाज युगक अनुरूप डेग बढ़ाबय, अन्यथा लोक पाछू पड़ि जायत। तेँ ओ अपन लेखन में पोङापंथी मैथिलपर बेस कटाक्ष कयने छथि। हुनक कटाक्ष करक ढंग एहन छनि जे ककरो मोनकेँ आकर्षित कऽ लैत छैक।

ओ कवि, कथाकार आ उपन्यासकार छथि। निम्न पाँतीमे कविक प्रगतिशीलताक भावना कोना टपकैत अछि से देखू—

"पीसी ए पीसी
अहाँ कुटू तीसी
आ
हम जाइत जी एन० सी० सी....।"

हुनक ई पाँती कोन बातक संकेत करैत अछि? कवि पुरान पीढ़ीक विचारसँ असहमत होइत नव पीढ़ीकेँ आगू बढ़क लेल आह्वान करैत छथि। एहि पाँतीसँ ई भाव देखल जा सकैछ जे पुरान लोक तीसी कूटि कऽ भनेँ संतुष्ट भऽ जाइथ, मुदा नव पीढ़ी एहि कट्टरपंथी जालकेँ फाड़ि आगू बढ़बे करत। पीसीकेँ तीसी कुटक लेल व्यंग्य आ अपने एन० सी० सी० मे जयबाक लेल व्यग्र—प्रमाणित करैछ जे हरिमोहन बाबू पुरान युगक रहितहुँ आधुनिकताक एकटा पैघ पक्षधर छथि।

□

मैथिली गद्यक विद्यापति

श्री गोकुलनाथ झा

साहित्यमे हास्य ओ व्यंग्यकें न्यून वा गौण बूझल जाइत छल। हास्य शृंगारक अन्तर्गत अबैत छल। मुदा आब व्यंग्य अपन बहुलतासँ स्वतंत्र विधाक रूपमे नामांकन करा लेलक अछि। हास्य तँ सहजहिँ जीवनकें जीवन्त रखबाक साधने थिक।

व्यंग्य दिस दृष्टिपात कएलासँ ई स्पष्ट बोध होइछ जे व्यंग्य आर किछु नहि, कोनो व्यक्ति आ कार्यक दोष वा त्रुटिकें उद्घाटित करब थिक। व्यंग्याभिव्यक्तिकें समग्र रूपसँ पूर्ण बनयबाक सर्वाधिक उपयोगी एवं अनिवार्य साधन थिक विसंगति। आर्थिक विनिमय, धार्मिक अनुष्ठान, पारिवारिक संगठन आ वैयक्तिक क्रिया-कलापक मध्य यदि विसंगतिक सामञ्जस्य नहि होइत तँ व्यंग्यक सृष्टिए सम्भव नहि भऽ सकैत छल। विसंगति मनुष्य जीवनक मूलमे सदासँ रहैत आएल अछि। एही विसंगतिक न्यूनाधिक मात्रासँ बुधियार आ बकलेल आँकल जाइत रहल अछि। ई अति सामान्य स्थितिसँ लऽ गहन समस्या धरि मानवीय जीवनक यन्त्रणामे पसरल अछि। अनुपयुक्तता, अनौचित्य, असम्बद्धता, अनियमितता एवं अनैतिकता द्वारा असंगतिक विकास-प्रसार होइछ। जीवनक कोनो क्षेत्रमे त्रुटिक उपस्थिति असंगत कहबैत अछि। औचित्य पर अनौचित्यक प्रभाव असंगतिएसँ अविहित होइछ। सभक एक परिसीमा होइछ; ओकर अतिक्रमण कोनो-ने-कोनो रूपें होइते आएल अछि आ ओएह अतिक्रमणक विन्दु व्यंग्यक निमित्त बनि जाइत अछि। यथा, मुँहक हिसावें नाक पैघ, आँखि भयावह लागब आदि। एहिना क्रियाकलापमे सेहो देखना जाइछ।

व्यंग्य लेखकक चेतनाकें व्यंग्याभिव्यक्ति झिकझोरैत अछि आ लेखनीक माध्यमसँ विसंगतिक प्रतिक्रियात्मक वर्णनक हेतु प्रेरित करैत अछि। आ एहन स्थितिक वर्णन सहजता, स्वाभाविकताक संग करबामे जे समर्थ होइत छथि ओएह सफल व्यंग्य-लेखक होइत रहलाह अछि।

हमरा चर्चित लेखक हास्य-व्यंग्य सम्राट प्रो० श्री हरिमोहन झाक कृतिक विश्लेषणसँ पूर्व व्यंग्यक सामयिकता आ व्यक्तिपरकता दिस दृष्टिपात करब आवश्यक प्रतीत होइत अछि। यदि व्यक्तिपरक व्यंग्य नैतिकताक आश्रयणमे पल्लवित पुष्पित होइत अछि तँ ओ सर्वपरक आ सनातन भऽ जाइछ। यदि उद्घाटित दोष सार्वभौमिक भऽ मानव स्वभावक निहित दोषकें चिरन्तन बनाय उद्घाटित करए तँ उत्तम काव्यमे परिगणित होयत। व्यंग्य सामयिक रहने ओकर प्रभाव थोड़ समय धरि रहैत अछि;

कारण, काल, पात्र, स्थानक आमूल परिवर्त्तन भेने ओ वातावरणे नहि रहत जे ओ दोप वा त्रुटि लोकके त्रुटि वा दोष बुझना जाएत।

प्रो० हरिमोहन झाक समग्र कृतिक विवेचन कयलासँ ई स्पष्ट बुझना जाइछ जे हिनक उपस्थापनक रीति, जकरा अंग्रेजीमे 'टेलिंग' कहल जाइत छैक, बड़ उत्कृष्ट आ रोचक छन्हि जकर प्रभावेँ पाठक सहसा आकृष्ट भऽ जाइत अछि। सामान्यो बातकेँ ततेक रोचकतासँ प्रस्तुत करैत छथि जे अनायास मुग्ध भऽ जायब।

हिनक साहित्यमे चरित्र मात्र एक व्यक्तिक चरित्र नहि रहि 'टाइप' भऽ जाइत अछि। यथा, 'प्रणम्य देवता'मे वेदान्तीजीक चरित्र पूर्णतया अतिरञ्जित भ' गेल अछि जे व्यंग्यक गुणे थिक। घटनाक मात्रासँ अधिक ओकर विश्लेषण होइत छैक, तेँ एकर 'टेकनिक'मे अतिरंजन होएब आवश्यके छैक। जमाय वर्गक वर्णन-क्रममे व्यंग्य जातिपरक भऽ जाइत अछि। जेँ ई व्यक्तिपरकसँ व्यापक भऽ चित्रित भेल अछि तेँ एकरा तत्जातीय 'टाइप' कहि सकैत छी। एहिसँ समाजमे दोपक मात्राकेँ कम करबाक फलोत्पत्ति होइत छैक जे व्यंग्यक उद्देश्यकेँ समग्ररूपेँ परिपूरित करैत अछि।

प्रो० हरिमोहन झाक व्यंग्य अंग्रेजीक 'सटायर'क निकट छन्हि। एहिमे प्रत्युत्पन्नमतित्व, स्फुरणक वैचित्र्य आ मर्मस्पर्शी बातक विश्लेषण सर्वत्र परिलक्षित होइत अछि। व्यंग्य दू प्रकारेँ लिखल जाइत अछि : एक छैक लेखकक दृष्टिमे दोषपर उग्रता देखायब। एहिमे चित्रित पात्रक उपस्थापनमे लेखक गारि पर्यन्त पढ़ि दैत छैक। एहनो व्यंग्य मैथिलीमे म० म० मुरलीधर झाक कृतिमे ठाम-ठाम भेटैछ। मुदा, आचार्य हरिमोहन झाक व्यंग्य लेखन दोसर प्रकारमे अबैत अछि जे थिक मनोरञ्जनार्थ वर्णन। पहिल यदि उग्र होइत छैक तँ दोसर मृदु। ई पढ़बाकाल रोचक आ प्रिय लगैत अछि भने सोचला पर मर्म धरिकेँ बेधैत हो। प्रो० हरिमोहन झाक कृतिमे नैतिक-आर्थिक दोषक उद्घाटनसँ अधिक सामाजिक दोषक प्रकाशन मनोरञ्जनार्थ कएल गेल अछि। यथा, 'कविजी'मे यथार्थ आ कल्पनामे अन्तर भेलेसँ हास्यक बीज प्रस्फुटित होइत छैक। अंचलजीक देखावट आ विचारमे बड़ अन्तर छन्हि, तेँ ओ हास्यक पुट बेस दैत अछि। प्रो० झाक काव्यमे हास्यक स्फुरण विशेषतया शब्दसँ होइत अछि। हिनक हास्य 'विट' पर निर्भर अछि। 'बीमाक एजेन्ट'मे सस्पेन्सक रोचकता प्रशंसनीय अछि। धर्मशास्त्रीजी, ज्योतिषीजीमे आक्षेपमूलक व्यंग्य अछि, तेँ एहिमे लघुताक हेतु हास्यक आश्रय लेल गेल अछि। एहने स्थितिमे दोष कहलो उत्तर पढ़बामे अप्रिय नहि लगैछ—यद्यपि मनमे कूही होइते छैक। एहि प्रसंगमे कुमार गंगानन्द सिंह लिखैत छथि—"हास्य रसमे सन्निहित व्यंग्य द्वारा ओ सामाजिक दोष दिस हमरा लोकनिक दृष्टिकेँ आकृष्ट करैत छथि। प्राचीन एवं अर्वाचीन परिपाटीक जे दोष सभ सम्प्रत्ति वर्त्तमान छैक ओहि सभमेसँ किछुकेँ लक्ष्य बनाय ओकरा बेध करबाक प्रयास कयलन्हि अछि।" सामाजिक जाहि व्यक्ति सभपर हिनक व्यंग्य वाण प्रक्षेपित अछि ताहिमे "पण्डितजी भनहि बिगड़थु, कविजी कानथु, अंगरेजिया बाबू माथ ठोकथु, दम्पति प्रणय-कलहक रहस्योद्घाटनसँ भनहि खौंझाथु, पारिवारिक एवं कौटम्बिक लतखुरदनिकेँ समाज वरदान मानैत रहऽ, परन्तु बजनिहार वजबे करत।"

हिनक कथाक प्रत्येक चरित्र 'टाइप' अछि जे समाजक अनेको व्यक्तिसँ साम्य रखैत अछि। पाठक अपनाकेँ परिचित चरित्रसँ मिलाय आनन्द लैत रहैत छथि। 'प्रणम्य देवता'क प्रसंग कुमार

गंगानन्द सिंह लिखैत छथि—''प्रणम्य देवता एक अलबम थिक 'नाना रूप धरा देवा'। एहिमे चित्रित गजेन्द्रनाथ, व्रजेन्द्रनाथ, भीमेन्द्रनाथ आ बसौनिया दिगम्बरनाथ जनिका परदीयाक असौकर्यक चिन्तै नहि, कतहु धोती खोलि पड़ायबला, तऽ कतहु धर्माधारवालाओं पत्नावृक स्पर्श सेहो प्रायश्चित्ती, तऽ कतहु अंगरेजिया बाबूक छोटा हाजरीक पावरोटीक गन्ध विलीलाह, पण्डितजी आ कविजीक सँ मते नहि, सैद्धान्तिक आ व्यावहारिक पद्धतामे सर्वथा भिन्न, परजनीयाक जीवन चुल्हाइ झाक देथु, गाढ़ी आश्रमक फोटो भगीरथ झा, भदेणक नमूना मौजेलाल झाकेँ देखने भेटत, वीमाक एजेन्टमे ध्रुवनन्दन प्रसादक चरम पहुँच, अपटूडेट लेडी चमेली दाइ, हिन्दुस्तानी साहेब मधुकान्त बाबूमे भेटत।'

'माँजी सन सासु आ बबुआनीजी सन स्त्री, लुट्टी झा सन श्वसुर आ हुनक जमाए सन जमाए, पण्डितजीक समस्त वेदान्त ज्ञान मधुरक पेटीमे जाए विलीन भए जाइत छन्हि, कविजीक सभ आधुनिकता अपन पत्नीक आगाँ विलीन भए जाइत छनि, फलित ज्योतिष फोचाइ झा आ खट्टरक शास्त्रार्थमे देखू। एतादृश एकादशो रूद्रमे कोन घट्टी आ कोन बेसी से प्रणम्य देवतामे देखू'।

व्यंग्य साहित्यमे प्रो० झाक जे मौलिकता दृष्टिगोचर होइछ से अन्यत्र नहि भेटैछ। लिखबाक शैली, कहबाक रीति-नीति, विश्लेषणक वैशिष्ट्य तेहन आकर्षण आ रोचकताक सृष्टि करैत अछि जे अनायास पाठक रमि जाइत अछि। भोलबबाक गप्प अपन अन्यतम स्थान रोचकताक हेतु बनौने अछि। गप्पेक माध्यमसँ हँसीए-हँसीमे गम्भीरसँ गम्भीर विषयकेँ तार्किक लेपक संग प्रस्तुत करैत रहलाह अछि जे पश्नात पाठकक मानस पटलपर अपन छाप परिलक्षित करबैत अछि। गप्पेक माध्यमसँ न्याय, वेदान्त. मीमांसा आ कर्मकांड सभ विषयक रोचक उपस्थापन सशक्त लेखनीक माध्यमसँ प्रस्तुत कएल गेल अछि। हास्य ओकर आवरण रहलैक अछि, व्यंग्य ओकर अन्तर्जीवन आ सुधारक लक्ष्य ओकर आत्मा।

एहिमे संदेह नहि जे प्रो० हरिमोहन झा मैथिलीक व्यंग्य-लेखनकेँ समृद्ध कयलनि अछि। मैथिली कथा, कविता ओ एकांकी साहित्यक क्षेत्रमे हिनक जे अवदान अछि, से तऽ अछिए—हास्य-व्यंग्यकारक रूपमे हिनक देन अद्वितीय अछि। कहल जा सकैछ जे मैथिलीक गद्य-साहित्यकेँ ई आगू बढ़ौलनि अछि। भाषाक व्यापकता अर्थक बहुआयामी प्रयोगसँ बढ़ल अछि। तेँ हिनका मैथिली गद्यक विद्यापति कहल जाइत अछि, आ से सर्वथा उचित।



हिनका अपार स्नेह दैत छनि पाठक

श्री उदय चन्द्र झा 'विनोद'

एहिमे ककरो आपत्ति नहि होयतनि यदि कहल जाय जे मैथिली गद्य साहित्यके लोक धरि पहुँचाबयबला पहिल आर अध्यतन सभसँ पैघ नाम थिक हरिमोहन झा। ओना ताहिसँ पहिनो गद्य लिखल जाइत छल आ ताहिमे एकसँ एक संपन्न व्यक्तित्वक अवदान रहल, मुदा ओ अपन प्रकृति आ स्वरूपक कारणें प्रबुद्धो मैथिल धरि पूरापूरी नहि पहुँचि पबैत छल। गाड़ी चलि रहल छल धुकधुक। हरिमोहन बाबू साहित्यकें जनतामे पहुँचा देलनि।

लेखक मोटा-मोटी तीन तरहक होइत अछि। पहिल आ प्रभावशाली वर्ग ओ थिक जकरा साहित्यिक मानक आ मूल्य सभसँ किछु लेबाक-देबाक नहि रहैत छैक। ओ लगातार लिखैत चल जाइए सुर्रा। ओ बिपटै करैए आ समाजक एकटा विशाल वर्ग ओकर बिपटै देखैए। ओकरा पढ़ल, सुनल आ पसिन्न कैल जाइत छैक। बातकें स्पष्ट करक लेल कोनो बम्बइया पाकेट बुकक कोनो लेखकक उदाहरण देल जा सकैत अछि।

लेखकक दोसर वर्ग ओ होइत अछि जे किछु गोटे लेल लिखैए। गुणवत्ता के चीन्हऽ-परेखऽवला ओ नियामक लोक ओकरा पढ़ैत-गुनैत छैक। ओहुना कृतिक श्रेष्ठत्व लेल अधिकाधिक लोककें पसिन्न पड़ब तेहन शर्त छैको नहि। एक गोट कविवर सुरेन्द्र झा 'सुमन'क नाम लऽकऽ हम बातकें स्पष्ट करऽ चाहब जनिका विषयमे गछल जा चुकल छनि जे ओ 'कविक कवि' थिकाह।

लेखकक एक गोट तेसर आ संख्यामे बड़ थोड़ होइतो सभसँ महत्त्वपूर्ण वर्ग ओ होइत अछि जकरा अध्ययन शिविरमे बैसल अध्येतासँ लऽ कऽ खेत-खरिहान आ कल-कारखाना तकमे रसैत-बसैत लघु-विराट सभ तरहक लोक पढ़ैत आ चाहैत छैक। एहन प्रिय लेखक युगक बाद अबैत छैक आ सूतल मेधाकें जगा कऽ नव बाट धरा दैत छैक। कोनो गोर्की वा प्रेमचन्द बहुत कठिनतासँ भेटैत छैक।

प्रो० हरिमोहन झा एही तेसर वर्गमे अबैत छथि। 'कनियाँ माइक ओरिआओन'सँ प्रारम्भ कऽकऽ 'द्वादश निदान' तकक रचनाक माध्यमे ओ आजीवन मुक्तिक लड़ाइमे लागल रहलाह। विगलित परम्पराकें ध्वंश कऽ कऽ सर्जनात्मक उपलब्धिक नव मानदण्ड स्थापित कयलनि। पहिल बेर मैथिलीकें पाठक भेटलैक आ से पाठक हिनका अपार स्नेह देलकनि। अपना जीवनकालेमे 'क्लासिक' भऽ गेलाह।

यात्रीजी उचिते हिनका 'आधुनिक मैथिली साहित्यक भीष्म पितामह' कहलथिन अछि।

हिनका पाठक वर्गमे सभ प्रकारक लोक भेटि सकैत अछि। कुशल गृहिणीसँ लऽ कऽ अकुशल छात्र तक, किरानीसँ लऽ कऽ अध्यापक तक, धीमानसँ लऽ कऽ श्रीमान तक। तकर कारण छैक।

मिथिलाक लोक-जीवन, संस्कृति आ साहित्यकेँ प्रभावित आ गरिमामंडित करयवला एक गोट परम्परा रहलैक अछि, गप्पक परम्परा, पंडित गोनू झाक परम्परा। 'वादे वादे जायते तत्व बोधः'मे आस्थावान लोकक एहि अंचलमे बातकेँ तिक्ख-चोख करबाक परम्परा रहलैक अछि। हरिमोहन बाबू तकरा पकड़लनि ओ तकर पूर्ण परिष्कार कयलनि।

ताहिमे हुनक दार्शनिक सेहो सहायक भेलनि। कपिल, कणादक परम्पराक एहि अक्खड़ दार्शनिकक हाथेँ साहित्यक ग्रहणशीलता बढ़लैक। भारतीय दर्शनक उद्‌गमस्थली परक बसिन्दाकेँ अपन आत्म-निरीक्षण करबाक अवसर भेटलैक। अपन दर्शन भेटलैक।

अपन सोझ साफ भाषा-शैलीमे लोकक दुर्गुणकेँ लोकक सोझां राखि देलनि गहन संवेदनाक संग। अपना साहित्यमे अपन स्वप्न परसैत रहलाह हरिमोहन बाबू। लोककेँ से नीक लगलै।

कटाह बोलीमे नहि। हास्य-व्यंग्यक माध्यमे। हास्य आ करूणाक अपूर्व संयोग—पाठक तकरा पसिन्न करैत गेल।

मनुक्खक लेल हँसब आ स्वप्न देखब आवश्यक होइत छैक। ओ हँसय नहि तऽ गलि कऽ मरि जायत आ यदि स्वप्न नहि देखय तऽ सड़ि कऽ मरि जायत। हरिमोहन बाबू एकटा अभिनव समाजक स्वप्न देखलनि आ तकरा लेल सन्नद्ध भऽ गेलाह। हास्य, उपालम्भ, वक्रोक्ति आ प्रहसनक उपयोग बड़ कलात्मकताक संग कयलनि। हिनका पढ़ैत काल पाठककेँ मनोरंजनक संग ई बराबरि भान होइत रहैत छैक जे ओ एक एहन लेखकक संग अछि जकरा भारतीय दर्शनक पाण्डित्य छैक समाजक विषयमे च-चूकऽ सभटा पता छैक, मूल्यक समझदारी आ सघन संवेदना छैक आ तकरा सहज-सुलभ भाषामे राखक अपूर्व कौशल छैक। हिनक साहित्य पाठकमे सोझे प्रवेश कऽ जाइत छैक आ हँसा-बजाकऽ करूणा उत्पन्न कऽ जाइत छैक। लेखक अविस्मरणीय भऽ जाइत छथि।

महान रूसी लेखक दोस्तोव्स्की कतहु कहने छथि जे साहित्य 'आत्म निरीक्षणक माध्यम होइत अछि। हम की छी आ हमरा की होयबाक चाही। अपन कुनीति-कुरीति, विगलित परम्परा आ सड़ल समाजक मैथिल मात्रकेँ उपादान देलथिन। तेहन रोचक शैलीमे कथा कहलथिन जे लोक हपसि कऽ पकड़लक। ओ बेजोड़ भऽ गेलाह।

"बाहर बाजथि 'तिलक प्रथाकेँ विष सम जानू', घरमे बाजथि, 'दुइ हजारस कम नहि आनू' बाहर बाजथि 'छुआछूतकेँ शीघ्र हटाउ', घरमे बाजथि 'ई चमैनि थिक, दूर भगाउ' बाजथि वस्त्र विलायती छुइबो टा क्यो जुनि करी घर आनथि फरमाइशी, चटक-मटक साड़ी घड़ी"

अशिक्षा, अज्ञान, धर्मान्धता, पाखण्ड आदि पर सोझे चोट केलथिन। अंधकारक विरुद्ध एक गोट रणमे लागि गेलाह प्रोफेसर हरिमोहन झा। जीवनक गहन अनुभूतिसँ बहरायल हिनक साहित्य अंधकार मे प्रकाशक काज कयलक।

हरिमोहन बाबू मैथिली साहित्यकें पढ़बाक योग्य बनौलनि। एहिसँ पूर्व विद्यापति गाओल जाइत छलाह, चन्दा झा बाँचल जाइत छलाह। यद्यपि गद्य आ पद्य दुनूमे ई रचना कयलनि मुदा असली प्रसिद्धिक कारण भेल हिनक उपन्यास 'कन्यादान' आ गल्प संग्रह 'प्रणम्य देवता' तथा 'खट्टर ककाक तरंग'।

'कन्यादन' (१९३३) जहिया प्रकाशित भेल तहियासँ आइधरि एकर पाठकक संख्यामे लगातार वृद्धि होइत रहल अछि। ओझाजी सासुरमे सरहोजि संगे पढ़ैत छथि, दुलहिन सासुरमे दालि चढ़ाक चुल्हा लग पढ़ैत छथि। छात्र वर्ग कक्षामे आ पंडितजी दलानपर पढ़ैत छथि। एहि उपन्यासक कतेको संस्करण भेल आ एहि सालक नवीनतम संस्करण बजारमे आबि गेल अछि।

हरिमोहन बाबू मैथिलीक कोनो लेखकसँ अधिक पढ़ल गेलाह। प्रणम्य देवता, खट्टर ककाक तरंग, रंगशाला, चर्चरी, एकादशी सभ हाथोहाथ लोकाइत चल गेल।

हरिमोहन बाबू अत्यन्त लोकप्रिय भेलाह तकर अर्थ ई नहि जे ओ विवादास्पद नहि रहलाह। पंडित त्रिलोकनाथ मिश्र, प्रो० रमानाथ झा, डा० जयकान्त मिश्र आ डा० सुभद्र झा—सभ हुनकापर आरोप-प्रत्यारोप केलथिन, पंडित समाज तऽ आलोचनाक झड़ी लगा देलक मुदा ताहिसँ कोनो हानि नहि भऽ सकल। हिनक रचना पढ़बसँ क्यो अवंच नहि रहऽ चाहलक। मिथिले टामे नहि अपितु वृहत्तर भारतक पाठक हिनका पढ़लक आ पसिन्न कयलक। विद्यापतिक बाद ई पहिल मैथिली लेखक छलाह जे अखिल भारतीय स्तरपर मान्य आ श्रद्धेय भेलाह।

हरिमोहन बाबूक लोकप्रियता कोनो लेखकक लेल स्पृहाक वस्तु भऽ सकैत छैक। हुनक अवतार मैथिल साहित्यक लेल युगान्तकारी घटना छल। मैथिलीक व्यंग्य साहित्यक संग समस्त मैथिली प्रतिष्ठित भेलीह। पाठककें एकटा नव दृष्टि भेटलैक। कोनो आलोचनाक बिहाड़ि ओहि वटवृक्षकें नहि डोला सकल।

कोनो लेखककें तीन दृष्टिकोण सँ परेखल जा सकैत अछि—कथावाचक, शिक्षक आ जादूगर। कोनो महान लेखककें यैह तीनू तत्व कालजयी बनबैत छैक। हिनकामे एहि तीनू तत्वक विरल संयोजन भेटैछ। अपन चमत्कारक संग समाजकें साफ-सहज भाषा-शैलीमे शिक्षित करबाक कलामे निष्णात। हिनक सौम्य, शांत आ विवश बुच्ची दाइ, कट्टर मुदा प्रखर पंडित खट्टर कका, पश्चिमी जगतक कार्बन कापी सी० सी० मिश्रा प्रभृति पात्र पाठकक लेल अविस्मरणीय अछि। अपना परिवेश आ पात्रक अन्तरंग परिचय हिनक सघन दर्द बाटे जखन हास्य-व्यंग्यक रूपमे अभिव्यक्त होइत अछि तँ पाठक एके संग विमोहित आ आहत भऽ जाइत अछि। मूल्यहीनता आ कुत्साक अनुभवसँ गुजरि ओ संवेदनशील आ भावसंपन्न भऽ उठैत अछि।

हरिमोहन बाबूक लोकप्रियताक कुंजी छल लोक-जीवनसँ हुनक संपृक्ति। ओ जाहि समाजक रत्न छलाह तकर आधि-व्याधिकें खूजल नजरिसँ देखि-परेखि ओकरा ओही समाजक सोझाँ परसि देलनि। मैथिल समाजक रूढ़ि आ पाखंड हुनका सभसँ अधिक मारक लगलनि आ ताहिपर ओ समधानि कऽ आक्रमण केलनि। एहना स्थितिमे थापित वर्गक कोपभाजन बनब एकदम स्वाभाविक छलै आ से भेलै मुदा ताहि सभसँ बाधा नहि, हुनका सहायते होइत गेलनि। सर्जनाक यज्ञमे लागल एहि मनीषीकें जतेक अधिक अवरोध भेल, ततेक अधिक तीव्र गतिसँ ओ आर अधिक ठोस आ व्यापक होइत गेलाह।

हरिमोहन बाबूक विषयमे एखन विचार होयब बाँकी अछि। हमर इतिहासकार आ समालोचक केँ एखनधरि विद्यापतिएसँ छुट्टी नहि छनि। हमरा सन एक गोट अल्पमतिक लोक हुनका विषयमे कहैत-कहैत तोतराय लगैए। हँ, एकटा पाठकक रूपमे हुनका हम आ हमरे सन लाखो लोक शतशः प्रणाम करैत छनि।

एहन विभूतिक खाहे कतबो प्रशस्तिगान करी, उकरू नहि लागत। 'मैथिल गोष्ठी' द्वारा हुनका अभिनन्दनमे ग्रन्थ बहार करब एकटा बड़ आवश्यक आ नीक काज लगैए।

सत्ते एहन के पाठक होयत जे 'कन्यादान' नहि पढ़ने होयत? जे क्यो 'खट्टर ककाक तरंग' पढ़ने होयत से कोना ने प्रभावित भेल होयत? ठोरपर हँसी आ मोनमे बेचैनी ककरा ने भेल हेतै?

गहन अनुभूति, विरल प्रेक्षण बुद्धि, गहन संवेदन आ सुधारवादी विचारक महान साहित्यकार प्रो० हरिमोहन बाबूसँ हमर साहित्य एक बेर फेर चिन्हार भेल अछि।

एहि महान साधककेँ हमर बेर-बेर सादर प्रणाम।



हरिमोहन बाबू की छथि

श्री छत्रानन्द

मैथिली साहित्यमे हरिमोहन बाबू पहिने बहुत विवादास्पद व्यक्ति रहलाह। एक दिस जँ हुनक 'कन्यादान' आ 'द्विरागमन' नव-कनियाँक पौतीमे सँठायल जाइत छल तँ दोसर दिस 'खट्टर ककाक तरंग' आ 'प्रणम्य देवता' पण्डितलोकनिक कोपभाजन बनल। हरिमोहन बाबूक निन्दा कयल गेल। हुनका नास्तिक, संस्कृति-द्रोही—आ, नहि जानि की-की ने कहल गेल।

विवादक एहि स्थिति पर विचार करबासँ पूर्व एकर पृष्ठभूमिपर विचार कऽ देव बेसी उचित ओ आवश्यक होयत। कारण, कोनो रचनाकार अथवा रचनापर विवादक बहुतो कारण होइत छैक, हरिमोहन बाबूक रचना-काल भारतीय स्वतंत्रता संग्रामक काल अछि। किछु रचना स्वतंत्रतासँ पूर्वक अछि आ किछु रचना स्वतंत्रता प्राप्तिक बादक। अँग्रेजी शासन द्वारा अंग्रेजी भाषाकेँ भारत-वासीपर आरोपण, औद्योगिक क्रान्ति, संस्कृत शिक्षाक घटैत लोकप्रियता, नारी-मुक्ति-आन्दोलन आदि भारतीय समाजकेँ बहुत प्रभावित कयलक। एहि परिस्थितिसँ रचनाकार प्रभावित कोना नहि होइतथि !

हरिमोहन बाबू संस्कृत साहित्यक मर्मज्ञ छथि। अंग्रेजी साहित्यक सेहो नीक अध्ययन छनि। फलतः संस्कृत वाङमयक अध्ययन नव दृष्टिकोणसँ ओ कयलनि। नीक-बेजाय पक्षक विवेचन ओ नीक ढंगसँ कऽ सकैत छथि, कयलनि।

अंधविश्वास, धर्मांधता, शोषण आदि भारतीय समाजकेँ जकड़ने छल। भूत-प्रेत, डाइनि-जोगिन, ओझा-भगतासँ समाज तबाह भऽ उठल छल। पुरोहितीमे जजमानसँ बेसीसँ बेसी दक्षिणा पायब, अनुष्ठानसँ अभीष्टक प्राप्तिक लोभ, नीककेँ बेजाय आ बेजायकेँ नीक कहि अपन ज्ञान-बाहुल्यसँ लोककेँ दिग्भ्रमित करब—ई पढ़ल-लिखल (पण्डित लोकनिक) व्यक्तिक जीविका छल। आ, एहन स्थितिमे तथाकथित पण्डित लोकनिक प्रति अनास्था होयब स्वभाविके छल। हरिमोहन बाबू एहि दिशामे अपन कलम उठौलनि। तेँ पण्डितलोकनिक कोपभाजन भेलाह। एहन स्थिति लेखकेक नहि, सभक भऽ सकैत अछि। स्थापित मान्यता वा कोनो सिद्धान्तक खण्डन कयनिहार व्यक्तिकेँ परम्परावादीक निन्दा भेटिते छैक। से हरिमोहनो बाबूकेँ भेटलनि—ई कोनो आश्चर्यक विषय नहि।

औद्योगिक क्रान्ति, अँग्रेजी शासन आदिसँ देशमे शैक्षणिक वातावरण बदललैक। वैचारिक आदान-प्रदान होमऽ लागल। निषिद्ध विदेश-यात्राक बंधन स्वतः टूटऽ लागल। बहुतो विलेती भारतमे छलाह आ बहुतो भारतीय विदेश जाय लगलाह। हरिमोहन बाबू पटना विश्वविद्यालयमे प्राध्यापकीय पदपर तँ छलाहे। बहुतो अंग्रेज विद्वान पटना विश्वविद्यालयमे कार्यरत रहथि। बहुतो भारतीय विदेशसँ अध्ययन कऽ एतऽ आबथि। वैचारिक आदान-प्रदान स्वाभाविके छलैक। आ एहि पृष्ठभूमिमे हरिमोहन बाबू मैथिल समाजमे नव-जागरण अनबाक लेल अपन कलम उठौलनि। एहिमे खतरा तँ छलैके। मुदा, हरिमोहन बाबू अपन लक्ष्य दिस बढ़ैत गेलाह—पण्डितलोकनिक निन्दासँ घबरयलाह नहि। निश्चित रूपसँ भारतीय स्वतंत्रताक लेल महात्मा गाँधीक आन्दोलन हिनका अपन लक्ष्य दिशि बढ़बाक लेल प्रेरित करैत होयतनि।

महात्मा गाँधीक नेतृत्वमे भारत स्वतंत्रता आन्दोलनमे सफल भेल। देश स्वतंत्र भेल। हरिमोहनो बाबू अपन लक्ष्यकेँ पाबिकऽ रहलाह। तथाकथित 'नास्तिक' आ 'संस्कृति-द्रोही' हरिमोहन बाबू अपार मैथिली-पाठकक प्रिय लेखक भेलाह। हरिमोहन बाबू सभक लेल आदरक पात्र बनलाह। हरिमोहन बाबूक निन्दा कयनिहार पण्डित लोकनि सेहो चोरा-नुकाकऽ हरिमोहन बाबूक रचना पढ़ल करथि आ अपनाकेँ गुदगुदीसँ भरल पाबथि। एक रचनाकारक लेल एहिसँ बढ़ि सफलताक प्रमाण की चाही ! बातो तँ ठीक लिखने छथि—शास्त्र-सम्मत। शास्त्रेक उद्धरण। अपन दोषक चर्चा करब अनुचित तँ नहि छैक। शरीरमे जँ कोनो रोग रहत, तँ ओहि लेल दवाइ तँ चाहबे करी। रोगकेँ नुकायब भेल ओकरा आर बढ़ायब। हरिमोहन बाबू रोगी समाजकेँ रोगसँ मुक्तिक लेल औषध बँटलनि। समाजक 'भगत'केँ ई कोना अरघितनि ! झार-फूक आ उनटा सरिसबक प्रयोगमे लोकक विश्वास घटलैक। ओझालोकनिक समक्ष रोटीक समस्या ठाढ़ भऽ गेल। भला एहन स्थितिमे हरिमोहन बाबूकेँ नास्तिक किएक नहि कहल जइतनि।

तँ की हरिमोहन बाबू समाज सुधारक छथि ? हिनक रचनामे तँ बहुतो समाज-सुधारक तत्व अछि। अंधविश्वास, धर्मान्धता आदिक प्रति आन्दोलनक स्वर मुखरित भेल अछि। राजा राजमोहन राय सती-प्रथाक विरूद्ध आन्दोलन कयलनि। हरिमोहनो बाबू तँ नारी-शिक्षाक आह्वान कयलनि। नारी-जागरणक बिगुल बजौलनि। अंध-विश्वासकेँ समाप्त करबाक लेल जन-जन धरि 'भूतक मंत्र' पहुँचौलनि। तखन ओ कोना नहि समाज-सुधारक छथि ? नहि। हरिमोहन बाबू मात्र एकटा कथाकार छथि—हास्य कथाकार ! हास्य-सम्राट् ! हास्य-व्यंग्य सम्राट् !

कथाकार हरिमोहन झा मात्र कथाकार छथि—समाज सुधारक नहि। जँ से रहितथि तँ ओहो राममोहन राय जकाँ भाषण करितथि। कथा नहि लिखितथि। नाम भइये जइतनि। मुदा ओ रहलाह कथाकार। सेहो हास्य-कथाकार ! अपन कथाकेँ ओ समाजक समक्ष रखलनि। लोकक आँखि खुजलैक। सत्-साहित्यक यैह तँ उद्देश्य छैक। कथाकार हरिमोहन झाक उद्देश्य सफल होइत छनि एतऽ।

कथा-शिल्पी हरिमोहन झा अत्यन्त दूरदर्शी व्यक्ति छथि। तेँ समाजसँ संघर्षक लेल हास्यकेँ अपन अस्त्र बनौलनि। पहिने तँ कथा पढ़ि लोक हँसैत अछि, आ बादमे हँसैत-हँसैत गुम्म भऽ जाइत

अछि। सब एक-दोसराक मुँह तकैत अछि। अरे, ई तँ हमरे पर लिखल अछि। लोक सावधान भऽ जाइत अछि, साकांक्ष भऽ जाइत अछि। कथाकार हरिमोहन झाक लक्ष्य यैह छनि।

हरिमोहन बाबूक कथापर हम जखन विचार करैत छी, तँ बहुतो प्रकारक धारणा बनैत अछि। किछु बनलो धारणा बदलैत अछि। हरिमोहन बाबूक अधिकांश कथाकेँ कोनो विद्वान हास्य कहैत छथि, तँ कोनो विद्वान व्यंग्य। हरिमोहन बाबू हास्य-कथाकार छथि आ कि व्यंग्य-कथाकार? ई प्रश्न हमरा मनमे बराबरि उठल करैत अछि। एहि प्रश्नक उत्तरक लेल हास्य-व्यंग्य आ हरिमोहन बाबूक समग्र कथा-साहित्यकेँ ठोकसँ बूझऽ पड़त। एहि अध्ययन-अनुशीलनक लेल समय चाहि। आ, भऽ सकैत अछि, विषयान्तर तँ नहि, मुदा निबन्ध व्याप्ति-दोषसँ बचि नहि सकत। तेँ, हास्य आ व्यंग्यक फराकसँ चर्चा नहि कऽ, हम ई स्पष्ट रूपसँ कहि दियऽ चाहब जे हास्य आ व्यंग्यक अपन फराक विशेषता छैक—फराक 'जमीन' छैक। हास्यमे मनोरंजन प्रधान रूपसँ रहैत छैक आ व्यंग्यमे छटपटी, करूआहटि, तिलमिलाहटिक प्रभाव बेसी रहैत छैक। हास्यमे तँ बूझल जाय, जे एक प्रकारसँ कल्लोल सन भावना रहैत छैक। एहिमे लेखकक 'मूड' सेहो सहज रहैत छनि। आ, एहि सहज 'मूड'मे हँसयबाक लेल किछु तेहन बात कहि देल जाइत छैक जे पाठक सेहो हँसऽ लगैत अछि। परन्तु व्यंग्य स्वयंमे गम्भीर होइत अछि। उपरसँ देखलापर साधारण लागि सकैत अछि, परन्तु मूलरूपसँ ओ मर्मान्तिक चोट करैत अछि। एतावता ई कहल जा सकैत अछि जे व्यंग्यक कार्य-स्थितिक चित्रण करब नहि अपितु ओकर विसंगतिकेँ अथवा विडम्बनाकेँ अभिव्यक्त करब छैक।

हरिमोहन बाबूक अधिकांश कथामे मनोरंजन छनि—तेँ ओ हास्य भेल। मनोरंजनपूर्ण रचनोमे समाजक विसंगति अथवा विडम्बनाक अभिव्यक्ति छैक—तेँ व्यंग्य भेल। तखन हुनकर कथाकेँ हास्य कहल जाय अथवा व्यंग्य। व्यंग्य एहि हेतुयेँ नहि कहल जा सकैत अछि, जेँ कि व्यंग्यपर हास्य कसिकऽ 'हावी' छैक। व्यंग्यक सम्पूर्ण कथा प्रभावकेँ हास्य बाधित करैत छैक। तेँ हम हरिमोहन बाबू कथाकेँ हास्य व्यंग्य नहि मानैत छी। हिनक कथाकेँ हास्य-व्यंग्य मानल जा सकैत अछि। ओना बहुतो विद्वान व्यंग्यमे हास्यक उपस्थितिकेँ नीक नहि मानैत छथि, मुदा हमरा जनैत व्यंग्यमे हास्यक उपस्थिति ओकर प्रभावकेँ आर बढ़बिते छैक। तेँ एकर (हास्यक) रहब कोनो बेजाय नहि। व्यंग्य विसंगतिक कारणेँ जन्म लैत अछि आ विसंगति आक्रोशक संग-संग हास्य उत्पन्न करबाक क्षमता रखैत अछि। हरिमोहन झाक कथामे व्यंग्यत्वकेँ हास्यसँ कोनो घाटा नहि होइत छैक। तथापि एहि कथाकेँ व्यंग्य नहि मानल जा सकैत अछि, कारण हास्य, व्यंग्यक प्रभावकेँ घटबैत छैक। पाठक हास्य रचनाक रूपमे एकरा स्वीकारैत अछि।

अन्तमे, हम ई मानैत छी जे हरिमोहन बाबू हास्य-व्यंग्य कथाकार छथि।

मैथिलीक गौरव

डा० हरिमोहन मिश्र

१९३३ ई०सँ एखन धरि प्रो० हरिमोहन झाजी मैथिलीक हास्य-साहित्यमे अपन एकाधिकार जमओने छथि। हिनक कृतिकें उपन्यास ओ गल्पक नामे दुइ भागमे विभक्त कएल जाए सकैछ। प्रथम कृति 'कन्यादान' १९३३ ई० मे तथा द्वितीय कृति 'द्विरागमन' १९४२ ई० मे प्रकाशित भेल। हिनक गल्प संग्रह अछि—'प्रणम्य देवता', 'रंगशाला', 'चर्चरी' तथा 'खट्टर ककाक तरंग'। हिनक उपन्यास हो अथवा गल्प, ओ कथा तत्त्वक दृष्टिएँ सफल नहि कहल जाए सकैछ। ताहि दिस लेखकक ध्यानो नहि छनि। हिनक गप्प तँ गप्पे थिक। तखन एतबा अवश्य जे गप्प केहेन जोरगर-कटगर ओ रसगर भए सकैछ तकर उदाहरण हिनके कृति अछि। एहि दृष्टिसँ हिनक 'खट्टर ककाक तरंग' भारतीय साहित्य मे अपन ढंगक अपनहि अछि। रूढ़िग्रस्त शास्त्रीय मान्यता, सामाजिक कुरीति तथा भ्रष्ट आचारक सड़ल परतकें तर्कक तेज चक्कूसँ उघारबामे ई सिद्धहस्त छाथे। किन्तु सामाजिक सुधार हिनक परम लक्ष्य नहि बुझि पड़ैत अछि। 'कन्यादान' सँ 'खट्टर ककाक तरंग' पर्यन्त हिनक साहित्यक अवलोकनसँ ई बुझि पड़ैत अछि जे आरम्भमे हिनक मुख्य लक्ष्य छल सामाजिक कुरीति पर व्यंग्य करब ओ गौण लक्ष्य छल हास्य-सृष्टि, किन्तु क्रमशः ओ परिवर्तित होइत गेल तथा अन्तमे हास्य-सृष्टि सएह मुख्य भए गेल तथा सुधारक-प्रवृत्ति पाछाँ पड़ि गेल। इएह कारण थिक जे हिनक तर्क कखनहुँ-कखनहुँ लीला-कैवल्यमे रस लैत लक्षित होइत अछि। तेँ ई दही-चूड़ा-चीनीसँ सांख्य दर्शनकें सेहो बहार करैत छथि। विस्तृत अध्ययन, तेज तर्क ओ षट-रस हास्य हिनक साहित्यक वैशिष्ट्य थिक। लोक भाषाक रेती पर चढ़ि हिनक तर्क केहन चकचक ओ धरगर भए गेल अछि तकर उहाहरण तँ पाते-पाते भेटत। एहि साहित्यक द्वारा ई मैथिलीकें समृद्ध कए ओकर एहि समृद्धिकें भारतीय साहित्यक मध्य प्रतिष्ठापित कयने छथि।

आधुनिक कालमे भारतक अन्य भाषा-भाषी पाठक मैथिली साहित्यक नामपर विशेष रूपसँ हिनके कृतिसँ परिचित छथि। ई लेखकक हेतु तँ अवश्ये, मैथिलीक हेतु सेहो गौरवक विषय थिक।

एक कुशल अनुवादक एवं सम्पादक

डा० फुलेश्वर मिश्र

आधुनिक मैथिली साहित्यक लोकप्रिय कथाकारक रूपमे प्रो० श्री हरिमोहन झा प्रख्यात छथि। परन्तु दर्शनशास्त्रक क्षेत्रमे सेहो हिनक योगदानक उपेक्षा नहि कएल जा सकैछ। न्याय, वैशेषिक आदि दर्शनशास्त्रक मौलिक ग्रन्थक संग विभिन्न पत्र-पत्रिकामे हिनक कतिपय शोध-निबन्ध प्रकाशित छनि। एकर अतिरिक्त अनुवादक एवं संकलनकर्त्ताक रूपमे सेहो प्रो० श्री हरिमोहन बाबू दर्शन-क्षेत्रमे उच्च प्रतिष्ठा अर्जित कएलनि।

दर्शनशास्त्रक लब्धप्रतिष्ठ विद्वान डा० श्री सतीशचन्द्र चट्टोपाध्याय, भूतपूर्व अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र, कलकत्ता विश्वविद्यालय तथा डा० श्री धीरेन्द्र मोहन दत्त, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र, पटना विश्वविद्यालयक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'An Introduction to Indian Philosophy' देश-विदेशक विभिन्न विश्वविद्यालयमे पाठ्य-ग्रन्थक रूपमे स्वीकृत छल। स्वतन्त्र भारतमे जखन राष्ट्रभाषा हिन्दी शिक्षाक माध्यम बनल आओर भारतीय दर्शनक बढ़यबाक लेल एहि ग्रन्थक हिन्दी अनुवाद आवश्यक बुझना गेल, तखन बिहारक ख्यातिप्राप्त प्रकाशक पुस्तक भण्डार, पटना एहि ग्रन्थक हिन्दी अनुवाद करबाक हेतु डा० डी० एम० दत्तक सुयोग्य शिष्य प्रो० श्री हरिमोहन झा एवं प्रो० श्री नित्यानन्द मिश्रकें चुनलक। विद्वान अनुवादक मनोयोग पूर्वक एकर अनुवाद कयल जे 'भारतीय दर्शन'क नामे प्रकाशित भेल।

एहि अनुवादमे मूल ग्रन्थक भाव मौलिक ग्रन्थ जेकाँ व्यक्त कएल गेल अछि। भाषा सरल एवं सुगम्य होयबाक कारणें छात्र एवं प्राध्यापक द्वारा अत्यधिक प्रशंसित भेल। 'भारतीय दर्शन'क प्रकाशकक शब्दमे :—"इसमें अनुवाद की वह गन्ध नहीं मिलेगी जो इस तरह की अनूदित पुस्तकों में प्राय: रहा करती है।"

'भारतीय दर्शन'क सफल अनुवादक मूल कारण अछि प्रो० झाक भाषापर असाधारण अधिकार। अनुवाद ततेक सफल भेल जे शीघ्रहि दोसर संस्करण प्रकाशित करए पड़ल। प्रकाशक स्वयं स्वीकार करैत छथि जे "इन लेखकों के हाथ पड़ने से यह हिन्दी संस्करण भी मौलिक ग्रन्थ सा हो गया है।"

एहि ग्रन्थक हिन्दीमे अनुवादसँ हिन्दी साहित्य भण्डारक एकटा विशिष्ट अभावक पूर्त्तिक संग दर्शनशास्त्रक अनुरागी पाठकके सेहो तुष्टि भेटलनि ।

ग्रन्थ-संपादनक कलामे सेहो प्रो० झा एकटा विशिष्ट एवं सम्मानित स्थानक अधिकारी छथि। १९४२ ई०मे विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय द्वारा प्रकाशित 'जयन्ती स्मारक ग्रन्थ' श्रीमान महाराजाधिराज मिथिलेश डा० सर कर्नल कामेश्वर सिंह बहादुर द्वारा विहारक गौरवस्तम्भ साहित्य तपस्वी, साहित्य-तरणीक कुशल कर्णधार, हिन्दी व्याकरणक वंदनीय आचार्य, बाल-कंठहार 'बालक'क सफल सम्पादक, तीर्थस्वरूप पुस्तक भण्डारक संस्थापक आचार्य श्री रामलोचन शरण 'विहारी'के प्रदत्त कएल गेल छलनि, तकर सर्वाधिक सफल तीन सम्पादकमे सँ एक सम्पादक प्रो० हरिमोहन झा छलाह। प्रस्तुत जयन्ती ग्रन्थ एक हजार बारह पृष्ठक आकार-प्रकारमे अपना ढंगक अद्भुते टा नहि, ऐतिहासिक स्मारक ग्रन्थ सेहो अछि। एहि ग्रन्थमे बिहारक संग मिथिलाक विभिन्न विषयपर आधिकारिक विद्वानक सारगर्भित शोध-निबन्धक संग धार्मिक, ऐतिहासिक एवं बौद्धिक व्यक्तित्वक छायाचित्र सेहो अंकित अछि। एहिमे 'मेरे साहित्यिक गुरु' शीर्षकसँ हिन्दीमे प्रो० झाक निबन्ध छनि जे अत्यधिक रोचक अछि। प्रस्तुत दीर्घाकार 'जयन्ती स्मारक ग्रन्थ'क अवलोकन कएलासँ सम्पादकक एकांत परिश्रम, असीम धैर्य आओर सम्पादन-कलाक परिचय भेटैत अछि।

प्रो० श्री हरिमोहन झा द्वारा सम्पादित दोसर पोथी अछि 'दार्शनिक विवेचनाएँ' जे अगस्त १९७३ ई०मे बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी द्वारा, प्रकाशित भेल छल। एहि पोथीक प्रकाशनार्थ भारत सरकारक शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालयसँ शत-प्रतिशत अनुदान प्रदान कएल गेल छल। प्रस्तुत पोथी दुइ भागमे विभाजित अछि—(क) निबन्ध आओर (ख) परिचर्चा। निबन्धक चयनक सम्बन्धमे विद्वान सम्पादकक दुइ दृष्टिकोण छनि, जे हम हुनके शब्दमे उद्धृत कए रहल छी—"(क) भारतीय दर्शन में कतिपय ऐसे विषय हैं जो प्रायः संस्कृत पंडितों के लिए अपरिचित या अबोधगम्य हैं। ऐसे विषयों पर अधिकारी विद्वानों से आग्रहपूर्वक लेख लिखाये गये हैं। यथा-अवच्छेदवाद, स्फोटवाद, अभिहितान्वयवाद इत्यादि। (ख) 'आधुनिक वैज्ञानिक युग के सन्दर्भ में भारतीय दर्शन के मूलभूत सिद्धांतों का पुनर्वीक्षण एवं मूल्यांकन होना वांछनीय है। अतएव आत्मा, परमात्मा, पुनर्जन्म प्रभृति विषयों पर विद्वान अध्यापकों के विचार परिचर्चा में आमन्त्रित किये गये थे, जो इस ग्रन्थ में समाविष्ट हैं।"

ग्रन्थक दोसर भागमे संकलित परिचर्चाक विषय अछि—संत विनोबाक सर्वोदय आओर महात्मा गाँधीक ब्रह्मचर्य सिद्धांत। ई बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी द्वारा बोध गयामे आयोजित कएल गेल छल आओर अध्यक्षता प्रस्तुत पोथीक सम्पादक प्रो० श्री हरिमोहन झा कएने छलाह। प्रस्तुत संगोष्ठी-ग्रंथक परिकल्पनासँ लए रूप-सज्जा तकमे प्रो० झाक परिश्रम एकांत रूपेँ निहित अछि।

एहि तरहेँ प्रो० झाक प्रतिभा सम्पादनक क्षेत्रमे सेहो प्रशंसनीय रहलनि। अन्तमे हमर गर्वोक्ति अछि जे श्री हरिमोहन बाबूक पारस पाणिक स्पर्श जाहि वस्तुसँ भेल ओ स्वर्णकांतिसँ उद्भासित भए गेल।



प्रो० हरिमोहन झा : समालोचकक दृष्टिमे

डा० गिरीश चन्द्र

श्री पशुपति नाथ 'विप्लवी'

अप्रील १९२९ ई० मे हरिमोहन झाक पहिल रचना प्रकाशित भेल छनि आ तहियासँ लेखन कार्य अविच्छिन्न रूपें चलि रहल छनि। एतेक दीर्घकाल धरि रचनाशील रहनिहार एहि जीवंत साहित्यकार पर इतिहासकार एवं समालोचकक तीव्र आ' बहुमुखी प्रतिक्रियाक पथार देखवामे अवैत अछि। केओ दुसलकनि अछि तँ केओ माला पहिरौलकनि अछि। केओ छिद्रान्वेषी कहलकनि अछि तँ केओ समाज सुधारक।

एहिठाम ओहि पथारक थोड़ेक बानगीं उपस्थित कयल गेल अछि, जाहिसँ एतेक धरि निश्चित दृष्टिगोचर होइछ जे हरिमोहन बाबूक रचना व्यापक स्तर पर प्रतिक्रिया उत्पन्न कयने अछि। बानगीकेँ काल-क्रमानुसार अथवा समीक्षकक वयानुसार नहि सजाओल गेल अछि। जे जेना हमरा सभ लग उपलब्ध होइत गेल, से तहिना सजैत गेल।

डा० धीरेन्द्र मोहन दत्त हरिमोहन बाबूक गुरु रहथिन। दर्शनशास्त्रक गुरु। तेँ हुनके सँ प्रतिक्रियाक पथारकेँ देखब प्रारंभ कयल जाय, सएह उचित आ नीको।

डा० धीरेन्द्र मोहन दत्त

शिष्य अधिक विद्वान् और यशस्वी होने से ही गुरु को अधिक गौरव है। हरिमोहन जी पाश्चात्य दर्शनशास्त्र की उच्चतम परीक्षा में उच्चतम स्थान प्राप्त करके ही संतुष्ट नहीं हुए। अध्यापन का गुरु-भार उठाते हुए भी ये अपने पुण्य-श्लोक मैथिल पूर्वजों का दृष्टान्त अनुसरण करके नियत अध्ययन और ज्ञानवर्द्धन के लिए सचेष्ट हैं और अपने विद्या-गौरव से गुरुओं को भी गौरव और आनन्द प्रदान कर रहे हैं। ऐसा आदर्श आजकल बहुत विरल है।

(प्रो० हरिमोहन झा रचित 'न्याय-दर्शन' नामक पुस्तकमें
डा० दत्त द्वारा लिखित 'दो शब्द'सें)

कुमार गंगानन्द सिंह

हास्यरसमे सन्निहित व्यंग्य द्वारा ओ सामाजिक दोष दिस हमरालोकनिक दृष्टिकें आकृष्ट करैत छथि। प्राचीन एवं अर्वाचीन परिपाटीक जे दोष सम्प्रति वर्त्तमान छैक ओहि सभमे सँ किछुकें लक्ष्य बनाय ओकरा वेध करबाक प्रयास कयलैन्ह अछि।

जाहि सभ घटनाक चित्रण ओ कयलैन्ह अछि से मिथिलाक प्रसिद्ध 'पंचक्रोश 'क सीमासँ बाहरक क्षेत्रक थिकैक एवं रंगटीप काल्पनिक भेनहु ओहि सभक आधार एवं रूपरेखाक अधिक अंश रचयिता महोदयक कथनानुसार वास्तविके छैक। जाहि क्षेत्रक घटना छैक तकरे अनुरूप भाषा एवं मनोवृत्ति-विश्लेषण छैन्ह। सजीव उपमा, मौलिक उत्प्रेक्षा आदि अलंकार एवं ठेठ मैथिलीक सम्मिश्रणसँ कथाक रोचकताक पर्याप्त वृद्धि भेल छैक।

सुस्वादु चर्व्य, चोष्य, लेह्य, पेय पूर्ण भोजनीय पदार्थ पाबि पेटूकें जाहि प्रकारक आनन्द होइ छैक ओही प्रकारक आनन्द मैथिली साहित्यकें सुसम्पन्न देखबाक अभिलाषी व्यक्तिकें एहि पुस्तकसँ प्राप्त हयतैन्ह, एहिमे कोनो संदेह नहि।

पंडितजी बिगड़थु, कविजी कानथु, अंगरेजिया बाबू माथ पटकथु, दम्पति प्रणय-कलहक रहस्योद्-घाटनसँ त्रिमुछथु, पारिवारिक एवं कौटुम्बिक लतखुरदनिकें समाज वरदान मानैत रहौ, परन्तु बजनिहार बजताहे।

...नियन्त्रित प्रगतिए कल्याणकारी भय सकैत अछि। जहिना अप्रगतिशीलता; तहिना अनियंत्रित प्रगतिशीलता हमरालोकनिकें रसातल दिस लए जायत। एहि दुनू प्रकारक गुणक विकास कैनिहार देवतागण प्रणम्य छथि। प्रणाम कय हम हुनकालोकनिसँ यैह प्रार्थना करबैन्ह जे ओ लोकनि 'पाट' जाथु।

('प्रणम्य देवता' क प्राक्कथनसँ)
६-६-४५

जयदेव मिश्र

पं० जीवन झा अथवा हुनका उपरान्त पं० श्री हरिमोहन झा दुनू यज्वालय मूलक हैबाक सम्बन्धे एके मैथिल कुलक वंशधर छथि। दुहू चरित्रगत अथवा परिस्थितिगत विषमता अथवा विद्रूपता पर जतेक जोर देलथिन्ह अछि ततेक ओकर सरस, उदार अध्ययन पर नहि, दुनूक कला विधानमे अतिरजनक मात्रा औचित्यकें अतिक्रमण करितो देखि पड़ैत छैन्हि। पं० श्री हरिमोहन झा केर कन्यादान, द्विरागमन, प्रणम्य देवता आदि मैथिललोकनिक सामाजिक जीवनक व्यंग्यमय चित्र सभसँ ओत-प्रोत छन्हि से अवश्य, मुदा व्यापक दृष्टिएँ विचार कैला उत्तर एहिमे बुद्धि-विलासिताक तरमे रसिकता पिचैल जकाँ बूझि पड़ैछ। समाजक जाहि अंग पर श्री हरिमोहन बाबू देखैबाक हेतु हँसैत-हँसैत प्रहार करैत छथिन्ह ओतै फोँका धरि बहार भै जाइत छैक। एही कारणे हिनक हास्य-रचना समान रूपसँ सभक हेतु प्रिय नहि बनि सकल छन्हि।.......

(मिथिलाक हास्य साहित्य, वैदेही, मार्च १९५४)

डा० जयकान्त मिश्र

The Maithili novel reached a turning point when Prof. Harimohan Jha took to novel writing in early years of 30s. He made novel-writing a paying vocation and raised it to a high artistic level, the highest that was reached by then in language. He made Maithili novel in its formative years as great a form of literary art as Vidyapati had made the lyric poetry and Umapati the Kirtaniya drama in the past····Jha made his mark with the publication of Kanyadan in 1930-33. The greatness of the novel lies not in the social reform—education of Maithil women ...., but in the perfect social comedy which he created with supreme gift and insight. His humour is broad but his minute observation is remarkable... .... In the second novel Dviragaman he is not as successful as in the first because of absence of this quality. Harimohan Babu used his talent for humour in the books like Khattar-Kakak Tarang more openly and effectively. I think, Harimohan Babu excels all our other novelists when he creates living characters with a certain indescribable individuality and makes us laugh....

Unlike his novels his stories lead the broad humour. On the whole, Harimohan Jha's stories are marred by his obsessions of finding fault with even some of those things which form the really noble, sublime and good in our culture.

(History of Maithili Literature)

प्रो० भक्तिनाथ सिंह ठाकुर

हरिमोहन बाबू अपन कथा-साहित्यमे—उपन्यास हो अथवा गल्प—हास्यक सामान्य रूपें प्रिय बुझना जाइत छथि। हास्य रसक तँ ई मानू जे अवतारे छथि। अपन हास्यक विशेषतासँ तथा अन्य कलाचातुरीसँ श्री हरिमोहन बाबू मैथिली-साहित्यमे जतेक प्रसिद्धि प्राप्त कैलैन्हि, ततेक मैथिलीक अन्य कोनो कवि अथवा लेखक नहि। एतबे नहि, मैथिली कथा-साहित्यमे यदि क्यो कथाकार अपन एकटा "स्कूल" निश्चित कैलक तऽ श्री हरिमोहन बाबू मात्र। जाहि हास्यक बल पर हरिमोहन बाबू एतेक ख्याति प्राप्त कैलैन्हि अछि ताहि हास्यमे हुनक दर्शन शास्त्रक पाण्डित्य आ अपन मैथिल समाजक व्यावहारिकताक पूर्ण ज्ञान प्रदर्शित होइत छन्हि। हरिमोहन बाबू अपन उपन्यास एवं गल्प दुहूमे सुधारवादी दृष्टिकोण राखि समाज पर व्यंग्य कैलन्हि अछि, जे बहुतो साहित्यमे एतेक सुन्दर रूपें भेटब असंभव अछि। हास्योक एतेक प्रचुरता अन्यत्र दुर्लभ। गोनू झाक बाद मैथिली साहित्यमे यदि क्यो हास्य अपनौलक तँ हरिमोहने बाबू। अपितु ई कहि सकैत छी जे गोनू झाक हास्यमे तऽ चलाकी भरल छलैन्हि, किन्तु हरिमोहन बाबूक हास्य पूर्ण सजीव, स्वाभाविक एवं साहित्यिक अछि। एतेक उच्च कोटिक हास्य आ साहित्यिकता गोनू झाक कथामे कतँ ?

(पी० इ० एन० केर तत्वावधानमे अ० भा० तृतीय लेखक सम्मेलन अन्नामलाइ नगरमे पठित आलेख तथा 'विवेचना' मे संगृहीत)

श्री पंडित

खट्टरकका मैथिलीक पुरान संबंधिक छथि जनिक आगमनसँ मैथिलीक परिवारमे वृद्धिएटा नहि भेल अछि अपितु एक नवीनता आयल अछि। कतेक पुरिबाक आगर पर अँसुआ कऽ सूतल छलाह तनिका खट्टरकका पछ्वा बिहाड़ि जकाँ अकचका कऽ उठा देल। पुरान संबंधिकक फराठी जखन दलान पर बजरैत छैक तऽ परिवारक बूढ़ लोकक मुँहपर एक आवेश देखना जाइछ, नवका लोकक मुँह पर एक कुतूहल। ताहिमे जखन खट्टरकका गोनू झाक परिचय दैत अएलाह तँ बूढ़-नव सभमे एक नव उत्सुकता अएलैक। ....आर जे किछु, एकटा काज तऽ खट्टरकका कएलैन्हि अछि जे जनिका-जनिका काजमे अपन गप्पक तरंग बहओलैन्हि अछि तनिकर निसा धरि तोड़ि देलथिन्ह अछि। ....

....हमरा लोकनिकेँ कुम्भकर्णी निद्रा घेरने अछि। यावत् घण्टाक शब्द कानमे नहि पड़त तावत् निन्द टूटब कठिन। एहि कारणेँ हम खट्टरककाक अतिशयोक्ति सभकेँ क्षमा कऽ दैत छिऐन्हि। एतेक तऽ खट्टरककाकेँ श्रेय देबैन्ह जे ओ हँसा कऽ एवं निन्दा कऽ कऽ सबकेँ सचेत कऽ देलैन्ह अछि, मैथिलक दलान पर आनो परिवारक लोक गप्प सूनए अबैछ, जाहि दलान पर दिनहुँमे फोंफ ओ ठड़र पड़ैत छल ततऽ चहल-पहल रहैछ। आ ढनमनाइत भीतकेँ जँ दू-चारि लाठी लगा दैत छथि खट्टरकका तऽ तात्कालिक कष्ट अवश्ये होइछ जे घर खसि पड़त, किन्तु फर्दमे रहबाक यावत् अनुभव नहि होयत तावत् नव घर हम सभ बान्हब से हमर विश्वास नहि अछि।

(वैदेही; अक्टूबर, १९५५)

सम्पादक, वैदेही

....किन्तु हरिमोहन बाबूक कलाक चरम परिणति मात्र 'कन्यादान-द्विरागमन' आ कि हुनक कथा-संग्रह सभ धरि सीमित नहि रहल, वस्तुतः हुनक कलाक विशुद्ध रूप 'खट्टरककाक तरंग'मे परिलक्षित भेल। मुदा हुनक तरंग सभकेँ कतेको सम्पादक वा कि प्रकाशक कथासाहित्यक अन्तर्गत राखि अपन अल्पज्ञताक तँ नहि, परंच अपन हठकारिताक परिचय अवश्य दैत छथि। वस्तुतः हुनक तरंग 'गल्प साहित्य'सँ सर्वथा भिन्न ओ 'गप्प-साहित्य'क नाम सँ अभिहित कैल जा सकैछ।

आधुनिक भारतीय कलाकारलोकनि पाश्चात्य कथा-पद्धतिकेँ अपनाय अपनाकेँ कृत-कृत्य मानैत छथि, मुदा हरिमोहन बाबू प्राचीन भारतीय कथा-पद्धतिकेँ गहि गंभीर सँ गंभीर विषयकेँ सरस ओ सुस्वादु बनाय जनरंजनक संग रूढ़िग्रस्त, जीर्ण-शीर्ण विचारधारा पर कशाघात के' नवीन प्रगतिक प्रेरणा दैत छथि। ...हरिमोहन बाबूक सफलताक कुंजी ऐह थिकनि जे ओ प्रकट रूपेँ मैथिल संस्कृतिकेँ चिन्हलन्हि।

(सम्पादकीय, वैदेही, नवम्वर-दिसम्बर १९५५)

श्री 'सरस-हृदय'

'ग्राम-सेविका' सँ युगधर्मक पालन करऽ चाहैत छथि हरिमोहन बाबू समाजमे। भने लोक हुनका समाजसँ बाहर बुझऽ किन्तु ओ बाजल छथि समयानुकूले। अपन समाज पछिला रोटी खेनिहार अछि से

प्रोफेसर साहेव अपनो जनैत छथि। शंख बजवाक बजवे करत—जखन तकर कोनो मूल्य नहि। अपनेक कथा तँ रोचक रहितहिँ अछि तकर चर्चे व्यर्थ। कथावस्तुसँ अपने विप्लव चाहैत छी। अनुयायी भेटब कठिन नहि। अङैठीमोड़ दैत अछि लोक। आब उठबे करत, आगू बढ़बाक टा काज।

(वैदेही, मार्च १९५६)

श्री राधाकृष्ण

मैथिली गल्पकेँ नवीन ढब मे आनयवला हमरा बुझने हरिमोहने बाबू छथि। ....हरिमोहन बाबूक प्रत्येक पात्र एही माटि-पानिक छनि। एही वाध-बोन आ एही शहर-बजारक कात-करोटमे घुरि-आइत छनि। हुनक एक-एक पात्र समाजक एक-एक समस्या थीक। मुदा एकर ई अर्थ नहि जे हुनक पात्र वा मैथिली-गल्पक पात्र आन ठाम नहि भेटताह। हुनक प्रणम्य देवता अहाँकेँ बाटे-घाटे भेटताह। तकवाक काज नहि, अहाँक डेरा ताकि कै स्वयं पहुँचि जैताह। बुच्ची दाइ कने लेर झाड़लनि अछि, ताहू लेल लोक थूके दैत छनि। ई ताल!

खट्टरकका आजुक उचितवक्ता थिकाह। एतेक शोधल, एतेक समीचीन, एतेक सदर्थ आ एतेक प्रामाणिक गप्प कतहु भङेरी कहै? लगैत अछि जेना खट्टरककाक पाण्डित्यसँ अधिक भरिगर भाङक माहात्म्य हो।

(परिषद्‌क २५म अधिवेशन, बहेड़ा : कथा विभागक अध्यक्षपदीय भाषण तथा वैदेही, अगस्त १९५७मे प्रकाशित)

अनामिका चौधरी

जँ एखनउ साहित्यकारलोकनि विशुद्ध भाषा शैली, विशुद्ध आदर्शवाद, विशुद्ध वैष्णवी साहित्यक फेरमे पड़ल रहताह त' साहित्यक भविष्य अन्हारे-अन्हार रहत। उदाहरणार्थ श्री हरिमोहन बाबूक रचनादिके राखल जा सकइए। 'प्रणम्य देवता', 'रंगशाला', 'खट्टरककाक तरंग' आदि संग्रहक अधिकाधिक गल्पकथाकेँ अश्लील आ अभद्र मानि वर्जित आ अग्राह्य क' देल जा सकइए। कहल जा सकइए जे एहि रचना सभसँ स्त्री जाति पर खराब प्रभाव पड़तइ किअए त' "भोलबाबाक गप्प" आदिमे हरिमोहन जी पाठक-पाठिकाकेँ "कुच-विहारसँ कटि-हार" आ' "कटि-हार"सँ आरो निम्न-निम्न स्थानक परिभ्रमण करा दइ छथिन। मुदा एहि आधार पर की अस्वीकार कएल जा सकइए जे मैथिलीक सबसँ लोकप्रिय लेखक "कन्यादान"क लेखक अइछ। एक पाठिका हएबाक कारणे हम विश्वास आ अनुभवपूर्वक कहि सकइ छी जे जाहि स्त्रीकेँ दूइओ आखर पढ़ए-लिखए अबइ छइ, ओ हिनकर अक्षर-अक्षर रचना चाटि जाइए, रटिओ जाइए।

(पल्लव, फरवरी १९५८)

उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास'

जखन एहि शताब्दीक तृतीय दशकमे कथा-साहित्य सामाजिक क्षेत्रमे उतरल, तखन पाठकक रुचिक संग लेखक सबहिक उत्साह बढ़लन्हि आओर कथा-साहित्यमे एक नवीन प्रवाह अनलन्हि मूर्धन्य

लेखक श्री हरिमोहन झा जी····। हिनक दुनू उपन्यास 'कन्यादान' एवं 'द्विरागमन'क कथा-वस्तु, आकार ओ प्रकार वर्त्तमान युगक उपन्यासक सन छन्हि, भाषा छन्हि सरल, बोधगम्य, विषय तत्कालीन युवक-युवतीक वैयक्तिक जीवन सँ सम्बद्ध। किशोर बुद्धिके ग्राह्य एवं आकृष्ट करबाक अद्भुत क्षमता छन्हि हिनक विनोदपूर्ण शब्द-वाक्य-विन्यासमे, ओहन परिस्थिति उपस्थित करबामे।

१९४० ई० क बाद सँ मैथिली कथा साहित्य नवीन रूप धारण कयलक अछि। श्री हरिमोहन झाजी सामाजिक कुरीति पर तऽ प्रहार करबे कएलैनि संगहि परम्परागत कतेको धार्मिक रूढ़िओ पर असाधारण हास्यरस प्रोत शैलीसँ कखनहु कोमल कखनहु तीव्र आक्षेप कयलन्हि अछि। हिनक कतेको चित्रण वा व्यंग बहुतो गोटाकें अश्लील बूझि पड़ैत छैन्हि, असह्यो लगैत छैन्ह परन्तु अधिकांश पाठक, विशेष कए किशोर एवं नवयुवकक हेतु ई सभ अत्यन्त रुचिगर, चहटगर।

(द्वितीय अखिल भारतीय मैथिली साहित्य सम्मेलन १९६२मे पठित तथा वैदेही, दिसम्बर १९६२क पूरक रूपमे प्रकाशित 'साहित्य-समीक्षा' द्वितीय भागसँ)

प्रो० रमानाथ झा

दर्शनशास्त्रक आचार्य पं० श्री हरिमोहन झाजी अपन हास्य रसक कथा सबहिक हेतु देश भरिमे सुप्रसिद्ध छथि ओ से कथा सभ मुख्यत: गद्यमे अछि; किन्तु पद्यहुमे हिनक रचना ओहने रोचक, ओहने विलक्षण, ओहने लोकप्रिय होइत अछि। हिनक रचनामे ठाम-ठाम अतिरंजन रहैत अछि, ठाम-ठाम उपहास रहैत अछि, ठाम-ठाम अश्लीलता सेहो चल अबैत अछि।

ज्यो० पं० बलदेव मिश्र

देशक हेतु अपमानजनक वस्तुक प्रकाशन समुचित नहि, 'कन्यादान' पुस्तक पढ़िकँ लोक एहने निश्चय कऽ सकैत छथि जे मिथिला देशमे स्त्री समाजमे सतीत्व धर्म नहि छैक। नवीन विवाह कैनिहार लोक तादृश सम्बन्धमे ऐनिहारि स्त्री समाजसँ हँसीठट्ठा सुन्दर जकाँ कै सकैत छथि। ····श्री हरिमोहन बाबूक विषयमे तँ ई विचार होइत छल जे ओ नवयुवक छथि, प्रतिभा छन्हि, प्रतिभाक उद्रेकमे जे से लिखि रहल छथि। ····पश्चात् हुनक 'प्रणम्य देवता' तथा अन्यान्यो लेखमे तादृश भाव देखि हम एक बेरि समालोचना धरि तँ दरभंगाक मिथिला मिहिरक द्वारा प्रकाशित कैल, किन्तु जनसाधारणमे हुनक लेखक, हुनक पुस्तकक प्रशंसा तथा लोकप्रियता देखि यैह बूझि पड़ल जे काल तादृशे छैक।····

श्री हरिमोहन बाबू जाही रूपें मैथिली-गद्य लिखबामे निर्धोख छथि तादृशे कवितो खूब सुन्दर लिखैत छथि। ओ चाहे गद्य लिखथु वा पद्य हुनक प्रतिभा हुनक भावप्रवणता ताहिमे स्पष्ट रहैत छैन्हि। हुनक लेखमे एक विशेषता इहो छन्हि जे ओ प्राचीन-नवीन दूनू विचारकें खूब ठेकानसँ प्रतिपादन करैत छथि। पाठककें ई निर्णय करब कठिन होइत छन्हि जे लेखक स्वयं कोन विचारक छथि। प्राचीन लोकक विचारक आपत्ति यैह भऽ सकैत छनि जे प्राचीन विषयक समालोचना एतेक निर्मम रूपें किएक छैक। किन्तु नवीन विचारक लोकक हेतु तँ हुनक लेख अत्यन्त प्रिय बुझना जाइत अछि।

(श्याम नन्दन सहाय व्याख्यान माला १९६५)

डॉ० अमरेश पाठक

हरिमोहन झा मैथिलीक पहिल उपन्यासकार छथि जनिक रचना शिल्प एवं विषय दुहू दृष्टिएँ हमरालोकनिक ध्यान आकृष्ट करैछ। ई पहिल उपन्यासकार छथि जे सामाजिक परिवेशमे मनोरंजक सामग्रीक संग सशक्त कथानकक निर्माण कयने छथि। जेना हिन्दी साहित्यमे उपन्यासक दिश पाठकक ध्यान आकृष्ट करबाक श्रेय देवकीनन्दन खत्रीकेँ छैन्हि तहिना मैथिली साहित्यमे हरिमोहन झाकेँ। किंतु खत्रीजीक चन्द्रकान्तामे वास्तविकताक प्रति आग्रह वहुत कम अछि—श्री हरिमोहन झाक रचनामे वास्तविकताक प्रति पूर्ण आग्रह। कन्यादानक अधिकांश चरित्रक निर्माण व्यंग्य-चित्रण रूपमे चित्रित अछि। एहिमे पात्रक उएह रूप व्यक्त होइछ जे अनायास ओकर सामाजिक आचरण द्वारा जानल जाइत अछि। पात्रक सम्पूर्ण चरित्र चित्रित नहि भए सकल अछि। वस्तुतः चरित्र-चित्रण करब हिनक साध्य नहि, साधन अछि। 'द्विरागमन'मे कथानकक स्वाभाविकता नष्ट भए गेल छैक।

(निबन्ध संग्रह, भारती मंडन भाषणमाला १९७३,
'मैथिली उपन्यासक आलोचनात्मक अध्ययन' इत्यादिसँ)

प्रो० निगमानन्द कुमर

आइ जँ मैथिली पाठकगणक वीच 'चर्चरी' के सेहो लोकप्रियता भेटि रहल अछि तऽ ई हमर सभक हीन दृष्टिकोणक प्रमाण दय रहल अछि। जे स्वस्थ व्यंग लय श्री हरिमोहन वावू 'कन्यादान' सँ यात्रा प्रारम्भ कयलैन्हि, वुझाइत अछि जे रस्तेमे साँझ भेल देखि दिक्भ्रमित भ' गेलाह। 'प्रणम्य देवता' सन उत्कृष्ट व्यंग ओ हास्यक खटमिट्ठी दोसर नहि भेटत मुदा खट्टरककाक संग पड़ि हुनका शास्त्रार्थमे श्री हरिमोहन बाबू तेना ने ओझरा गेलाह जे 'चर्चरी' धरि अबैत अबैत तऽ एना लगैत अछि जेना डुमराँव ट्रेन दुर्घटना भऽ गेल हो जाहिमे मात्र हल्ला अर्थात् गप्प आर ठहाका के किछु वुझाइत अछिये नहि। चर्चरीक लोकप्रियताक कारण मुख्यतः श्री झाजीक यश अछि आकि ····साहित्य सँ दूर रहि, साहित्य केँ समय कटवाक साधन वूझि जे लोकनि भोलवावाक चौपाड़िक सक्रिय सदस्य छथि तनिके मनमोहिनी छथिन्ह 'चर्चरी दाइ'। वस्तुतः श्री हरिमोहन वावू मुख्यतः ह्यूमरिस्ट छथि—हास्य लेखक। हुनकर व्यंग ततेक स्वस्थ आ यथार्थ छैन्ह 'कन्यादान', 'द्विरागमन' ओ 'प्रणम्य देवता'मे जे तीनू शाश्वत शब्दक दही-चूरा-चीनी जकाँ एकोहम् भ' गेल अछि। 'कन्यादान'क वास्तविकता अर्थात् सत्यता, 'द्विरागमन'क शिव, आ 'प्रणम्य देवता'क सुन्दरम् तिनफक्का चानन जकाँ फराकेसँ चमकि उठैत अछि। ········ मुदा एतेक होइतहुँ गद्य साहित्य अखनहुँ कोशी-वलानक दहायले क्षेत्र जकाँ लागि रहल अछि। ····एकर सजीवता, कथावस्तुक सत्यता आ शैलीक प्रवाह गर्मी सँ अपस्याँत भेल शरीरमे शीतल समीरक आनन्द दैत अछि।···· हुनकर 'टी पार्टी' आ 'ढ़ाला झा' स्वस्थ व्यंग आ हास्यक यथार्थ प्रमाण अछि। ····एकर सजीवता, कथा- हमरा जनिते जे हरिमोहन वावूक चौखड़ि पर हुनकर गप्प सुनने हएत से जहिना हुनका नहि विसरत

तहिना हुनकर 'ढाला झा' के सेहो नहि बिसरि सकैत अछि, चाहे ललका लिफाफ चुल्हामे झोंकऽ पड़ैक तऽ हर्ज नहि।

(अ० भा० मैथिली लेखक सम्मेलन १९६३ मे पठित आलेख 'आधुनिक मैथिली साहित्यक पोस्टमार्टम' सँ, जे रचना संग्रह भाग-४ मे प्रकाशित अछि)

डा० बालगोविन्द झा 'व्यथित'

प्रो० हरिमोहन झा जी कविता बड़ कम लिखने छथि, मुदा जे किछु लिखने छथि ताहिमे हुनक तीव्र व्यंग्य ओहिना निखरल अछि। ई मुख्यत: कथाकार छथि तेँ कविता करितहुँ हिनक कथाकार सजग भए जाइत अछि। आधुनिक भौतिकवादी युग, पाश्चात्य सभ्यताक प्रभाव, मिथिलाक अन्ध परम्परा, महार्घता आदि हिनक कविताक मुख्य विषय रहैत अछि। टी पार्टी शुद्ध हास्यरसक रचना थिक ओ एहिमे उपहासक ध्वनि अछिओ तँ ओहि समाजक, जाहिमे एकर एतेक महत्त्व देल जाइछ। ई विशुद्ध बोल-चालिक भाषाक प्रयोग करैत छथि जाहिमे कोनो प्रकारक कृत्रिमता नहि रहैत अछि आने अलंकरण चेष्टा। 'हास्य रसाचार्य' झाजी प्राय: ओहने भाषाक प्रयोग करैत छथि जे हास्य रसक उद्रेक कए सकए।

(मैथिली कवि-दर्शन)

डा० दुर्गानाथ झा 'श्रीश'

हिनक रचनामे हास्यतत्त्व प्रधान रहैत छैन्हि, संघर्ष-तत्व गौण। हिनक एकांकी कोनो ने कोनो सामाजिक विकृतिकेँ विषय बनबैत अछि। ....वस्तुत: प्रो० झा मैथिल समाजक जाहि विकृतिक चित्रण कयल से समाजक आलोचनाक निमित्त नहि, मनोरंजन करबाक उद्देश्येँ, आधुनिकता ओ प्राचीनताक संघर्षक विकृतिक चित्रण कए हास्य सृष्टि करबाक हेतु। मुदा मनोरंजन ओ स्वस्थ उद्देश्य संग-संग चलैत अछि, तकरा ओ बिसरने छलाह। ....ओ अपन उपन्यासमे पाश्चात्य साहित्यक चित्रण प्रणालीक सुन्दर मैथिलीकरण कएल। कतोक दृष्टिएँ ओ अपन पिता जनसीदन जीक वर्णन प्रणालीकेँ चरम उत्कर्ष पर पहुँचाए देल। मैथिली कथा-साहित्यक इतिहासमे हिनक आगमन स्वर्णयुगक परिचायक कहल जा सकैत अछि। ....हिनक सुप्रसिद्ध 'खट्टरककाक तरंग' मैथिली कथाक श्रेणीमे परिगणित कएल जाइत अछि, मुदा कथाक मूल तत्व 'कथा'क एहिमे अभाव अछि। एकरा व्यंग्य-वक्रोक्तिपूर्ण नाटकीय हास्य निबन्ध कहब सएह उचित थिक।

(मैथिली साहित्यक इतिहास)

डा० जयधारी सिंह

'प्रणम्य देवता' समाज-सुधार भावनासँ प्रेरित अवश्य अछि, किन्तु प्रधानता आबि गेल अछि व्यंग्यात्मक उपहासक। एहि प्रसंग हमर वैयक्तिक अनुसंधान ई अछि जे श्री हरिमोहन बाबूक आलम्बन

छथि बुड़िबक……। वस्तुतः श्री हरिमोहन बाबू बुड़िबक वा बेढवक लक्षण एकेटा बुझैत छथि—बूड़ि ओएह थिकाह जे कोनहु प्रकारेँ अतिशयता रखैत होथि आ' तेँ अपनाकेँ अतिशय रितिआएल मानि अतिशय असावधान पाहुन 'विकट पाहुन' बनि जेताह, अतिशय काव्य रचनाभ्यासी 'कविजी', अतिशय लगारी 'बीमाक एजेंट', अतिशय अंगरेजिया (आधुनिक) 'अंगरेजिया बाबू' आदि। तेँ इएह क्रम रहल श्री हरि मोहन बाबूक कथा साहित्यक एहि ३०-३५ वर्षक अवधिमे—हिनक प्रणम्य देवता, रंगशाला, तीर्थयात्रा, चर्चरी, खट्टरककाक तरंग तथा एकादशी सभ एही दृष्टिकोणक (Thesis) प्रमाण अछि। तेँ समाज-सुधारक रहितहुँ कथाकार किछु स्वतंत्र ढंगक बुझल जाथि से उचित।

(मैथिली कथा साहित्य, भारती मंडन भाषणमाला ७३)

मोहन भारद्वाज

श्री हरिमोहन बाबू साहित्यक भाषाकेँ पंडितक दरबारसँ उबारि क' गाम-घरक चौपालमे पहुँचा देलनि। भावुकताक झुल्ल तथा विवाहक वेदीसँ बहरा क' मैथिली-कथा पहिल बेर करौट फेरलक। परंच खटरकका मिथिलाक माँटिकेँ भलेँ कोड़ि देथु, ओहि पर नव गछुली नहि लगा सकलाह। खट्टरककाक चासल-समारल खेत ओहिना रहि गेल—मिथिलाक लोकजीवनक सुरसरि धार ओहि बाटे नहि बहलीह। ……अभिजात वर्गीय खट्टरकका द्वारा मिथिलाक अभिजात संस्कार पर जतेक निर्ममतापूर्वक प्रहार कयल गेल से अन्यत्र संभव नहि भ' सकल अछि। ओना ईहो सत्य थिक जे समस्त जीवनक विरूपताकेँ रेखांकित कर' बला जत' मनुष्य मात्र एक जोकर बनि क' रहि जाइत अछि, व्यंग्य कथा मैथिलीमे एखन धरि लिखल नहि गेल अछि।

(मिथिला मिहिर ९ नवम्बर, १९७५)

सुरेन्द्र झा 'सुमन'

हुनक हास्य-व्यंग्यक लहरि तँ अद्भुत होइत अछि। ….आइ जँ हरिमोहन बाबू नहि रहितथि, हुनक रचना नहि रहितनि तँ मैथिलीएक की स्थिति होइतैक? घर-घर गाम-गाममे एतबे किएक, आनो भाषा-भाषी क्षेत्रमे जे आइ मैथिली पसरल अछि, तकर बहुत किछु श्रेय हमरा जनैत हरिमोहन बाबूकेँ छनि। ……स्वदेश (मासिक) क कोनो अंक हम बिनु हुनक रचने नहि छपने छी। …असलमे हरिमोहन बाबू ओ कविजीक (सीताराम झा) रचना ओहि समयमे धूम मचौने छल। लोक उत्सुकताक संग हिनका लोकनिक रचना पढ़ैत छल……

(मिथिला मिहिर, १७ अक्टूबर १९७६)

सुधांशु 'शेखर' चौधरी

असलमे हरिमोहन बाबू अपन व्यंग्यवाणसँ समाजक कूपमंडूकता पर तेहन तीव्र प्रहार कयलनि अछि जे अन्यान्यो भाषाक कथा-साहित्यमे विरल अछि। हुनक 'खट्टरककाक तरंग' यद्यपि हमरा मतेँ भारतीय भाषा साहित्यमे एक विशिष्ट विधाक जन्म देलक अछि आ' जकर गणना हम गप्प साहित्यक रूपमे करैत छी, तथापि ओहिमे 'खट्टरकका'क एक विशेष चरित्र बजैत अछि, जकर जोड़ नहि अछि।

('समकालीन कथा साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य'मे संगृहीत लेखसँ जे पूर्वाँचलीय विचार गोष्ठी १९७४ मे पढ़ल गेल छल)

जोवकान्त

बड़का सामन्तक छाँह मिथिलामे नहि पड़ल। खुदरा सामन्त सम एत' फूह खेलयलाह। धर्म आ' धार्मिक ग्रन्थ सामन्ती व्यवस्थाक ओगरबाह छल। शास्त्रकेँ पढ़निहार आ' ओकर अनुपालन करौनिहार पंडा आ पुरोहित वर्ग ओकरा संजीवनी शक्ति द' जिअयबाक चेष्टा करैत छल। पंडा आ' पुरोहित वर्ग पर हरिमोहन झा जाहि प्रकारेँ आक्रमण कएलनि, से प्रशंसनीय छल, मुदा हुनक परम्परा हुनके संग सैंता गेल।

(समकालीन कथा साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य)

डा० शिवशंकर झा 'कान्त'

हरिमोहन झाक कथाक परिपाटी अपन छनि, ताहिसँ ओ किंचितो फराक नहि भेल छथि। आधुनिक जीवनसँ ओहि कथा सभक मेल छैक किन्तु प्रयोग आ' ताहिमे स्थिरता ओतऽ नहि भेटैत अछि, भेटैत वैह अछि जे सन् ४०क करीबमे भेटल रहय।

(समकालीन कथा साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य)

राधाकृष्ण चौधरो

Besides being a master humourist, Harimohan Jha is a skilful satirist and a successful comedian. What thousands of reformers failed to do in the last hundred years, Harimohan Babu did it with a stroke of his pen. The pen in this case' is mightier (not only) than the sword but also the voluminous speeches .... His novels bear the impress of Hardy and Shakespeareand his command over the language, colloquial idioms, construction of sentences and the way of putting things in an original manner are superb.

In the field of story as well, Harimohan Jha surpasses all. He writes with a gusto unparalleled in any modern Indian language fiction. Humour and satire are his two armouries and social evils are his forte. He brings to the scene typical social problem in a most readable and humorous style. He is equally adept in touching the notable sentiments of both male and female. He has been critical of all the orthodoxy that is Maithila and has been a consistent supporter of modernism.

(A Survey of Maithili Literature)

सोमदेव

मैथिली चरित्र के अनुकूल सहज हास्य और सनातनपंथी संस्कृति पर कठोर एवं तर्कपूर्ण व्यंग्य के लिये जिस अद्भुत कौशल का प्रयोग हरिमोहन बाबू ने किया, उस कारण उनकी कहानियाँ मैथिली कथा साहित्य की अमूल्य निधि हैं, और किसी भी भाषा के लिये गौरवपूर्ण। 'प्रणम्य देवता' नाम से कहानियों के संकलन में टिपिकल मैथिल चरित्र मिलेंगे, जिन्हें पढ़कर हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जाते हैं। हरिमोहन झा बाद में भी लिखते रहे, जिनमें 'खट्टर काका के तरंग' को अभूतपूर्व प्रसिद्धि मिली। खट्टर काका भंग की तरंग में कट्टरपंथी सनातनी समाज की शल्यक्रिया उन्हीं की प्राचीन संस्कृतनिष्ठ

शैली में करते हैं। फैंटेसी के रूप में लिखित "ब्रह्मा का शाप" कहानी में ब्रह्मा भांग के नशे में लुढ़क-कर दनुजरूप मनुष्य की मूर्ति गढ़ जाते हैं। मध्य युग (१९३५-१९५०) के इस प्रकाश-स्तम्भ के सामने अन्य टिमटिमाते लघुदीप की तरह लगते हैं। अतः इस युग को हरिमोहन युग भी कहा जा सकता है।

(सारिका, १ सँ १४ अप्रैल १९७७)

शरद चन्द्र मिश्र

एकांकी नाट्यकारमे प्रो० हरिमोहन झाक नाम अग्रणी अछि। ई उपन्यास एवं लघुकथाक क्षेत्रमे जेहने सफल छथि तेहने सफल एकांकीक क्षेत्रमे सेहो छथि। 'बौआक दाम', 'महाराज विजय', 'दरोगाजीक मोंछ', 'अयाची मिश्र', 'मंडन मिश्र', आदि हिनक उच्चकोटिक एकांकी नाटक अछि। हास्यात्मक एवं व्यंग्यात्मक दृष्टिएँ हिनक एकांकी अत्यन्त सरस एवं मर्मस्पर्शी भेल अछि। हिनक एकांकीमे राष्ट्रीयता एवं आदर्श पर आधारित यथार्थक सुन्दर चित्रण प्रस्तुत भेल अछि। हिनक एकांकी श्रोताक मोनकें हास्य उदधिमे गोंति दैत अछि आ' हुनक यथार्थवादी चित्रण हुनका लोकनिक वस्तु-स्थिति पर विचार करक हेतु बाध्य क' दैत अछि।

('समाज-चक्र' नाट्य पुस्तकक अग्रलेख सँ)

उदयचन्द्र झा 'विनोद'

मिथिलाक रूढ़ि, पाखंड, कूपमंडूकता प्रभृति पर प्रबल चोट करितो श्री हरिमोहन बाबू सन प्रबल लेखको ओहि परिधि (पुरना श्रम-विभाजनमे औनाइत गोसाउनिक सीरसँ विवाह-द्विरागमन धरि) सँ बाहर नहि जा सकलाह आ' हुनको कन्याक जीवन, ग्रेजुएट पुतोहु प्रभृतिए धरि पार लागि सकलनि। ओना यदि लोकप्रियताकें दृष्टिमे राखि क' विचार कयल जाय तँ हरिमोहन झा सदृश लेखक कोनो भाषा साहित्यक लेल स्पृहाक विषय भ' सकैत छथि।

(मिथिला मिहिर, ६ फरवरी १९७७)

प्रो० आनन्द मिश्र

....किन्तु हुनक अतिरंजकता हुनक चरित्र (पात्र)कें झाँपि दैत छनि, पाठक चरित्रकें बिसरि किछु दोसरे वस्तुक आनन्द लैत अछि। हुनक 'कथा' कथासँ बेसी 'गप्प' अछि बेस चहटगर, तिक्त, कषाय आदि सभ रससँ युक्त; कोनो चरित्र जावत धरि अतिशय चित्रित नहि करताह तावत जेना संतोषे नहि होइनि।

(मिथिला मिहिर १० अप्रैल १९७७)

डा० दिनेश कुमार झा

हिनक कथा सभक विशेषता अछि जे ई पाठककें हँसबैत ओकरा अपन दुर्बलतासँ सेहो ताहि रूपें अवगत करबैत नवीन प्रगतिक प्रेरणा दैत अछि जे ओकरा बुझयबो नहि करैत छैक आओर कथाकारक समाज-सुधारक उद्देश्य सेहो सिद्ध भ' जाइत छनि। हिनक 'प्रणम्य देवता'क प्रत्येक कथा 'रेखा-चित्र' अछि। 'रंगशाला' एवं 'एकादशी'क कथा सभमे जाहि कोनो विसंगति पर प्रहार कयल गेल अछि से हल्लुक लगितो गंभीर अछि, दयालु लगितो निर्दय अछि, प्रहारात्मक होइतो निरपेक्ष अछि, वाक्-विलास लगितो बौद्धिक अछि तथा अतिरंजना लगितो सत्य अछि। 'पाँच पत्र' शीर्षक

कथामे प्रो० झा मध्यवर्गक लोकक सम्पूर्ण जीवनक यथार्थकेँ समेटने से कथाकारक अद्‌भुत छथि कौशलक परिचय दैत अछि।

(मैथिली साहित्यक आलोचनात्मक इतिहास)

भोला लाल दास

एक आर उपलब्धि वा विशेषता 'मिथिला'क (१९२९-३१) ईहो भेल जे मैथिलीमे व्यंगपूर्ण नव साहित्य-सर्जना श्रीयुत हरिमोहन झाजीक कलात्मक लेखनीक चमत्कार हुनक 'कन्यादान' नामक धारावाही उपन्यास तथा आनो व्यंगात्मक लेख, कविता एवं चित्र प्रायः सब अंकमे प्रकाशित होइत रहल। हिनक रचना एतेक मनोरंजक होइन्ह जे ओ 'मिथिला'क एक खास आकर्षण बनि गेल छल तथा ओकर प्रतीक्षा समस्त पाठकमंडली उत्सुकता पूर्वक करै छल। ई वस्तुतः मैथिली साहित्य-सर्जनाकेँ एक नवीन मोड़ एवं नव विधा देलन्हि जकर अनुकरण बादमे अनेकानेक साहित्य-सेवी, लेखक तथा कविगण कैलन्हि। हिनक एहि प्रकारक रचनाक अनुवाद भारतक अनेक भाषामे भेल।

'भारती' (१९३७)मे 'झाजीक पत्रिका' शीर्षक काल्पनिक लेख विशेषतः प्रो० श्री हरिमोहन झाजीसँ लिखबाय मैथिलीभाषी समाज विशेषतः शिक्षित एवं श्रीमान लोकनिक ध्यान मैथिली साहित्य एवं मिथिलाक्षर पर केन्द्रित करबाक हेतु व्यंग्य वा समालोचना पूर्ण चलैत रहल।

(संस्मरण : पटना विश्वविद्यालयमे मैथिलीक प्रवेश)

डा० बासुकी नाथ झा

कथ्य एवं शिल्प दुनू दृष्टिसँ हरिमोहन झाक कन्यादानकेँ सफल एवं आकर्षक कहल जा सकैत अछि। एहिमे स्वाभाविकता एवं भाषाक प्रवाह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अछि।

(उपन्यास ओ सामाजिक चेतना, नवम्बर '७८)

यात्री (नागार्जुन)

अपन कथा-कृतिक माध्यमे हरिमोहन बाबू मिथिला ओ समग्र बिहार मध्य बंकिमचन्द्र एवं शरच्चन्द्रक दायित्वक निर्वाह बेश जीक जकाँ कएने छथि। हिनक कन्यादान ओ प्रणम्य देवता तथा खट्टर ककाक तरंग समुच्चा भारतवर्षमे अपूर्व मान्यता प्राप्त कऽ रहल अछि·······

रूढ़िभंजनक संगहि नवचेतनाक प्रवाहक दृष्टिएँ आदरणीय श्री हरिमोहन बाबू साहित्य ओ संस्कृतिक क्षेत्रमे "शलाकापुरुष" बनल रहताह·······

(प्रो० हरिमोहन झा अभिनन्दन समारोह-स्मारिका)

डा० प्रेम शंकर सिंह

हरिमोहन झा 'अयाची मिश्र' एकांकीमे मिथिलाक ओहि पक्षक उद्घाटन कयलनि अछि जकरा सम्बन्धमे इतिहास ओ किंवदन्ती मुखर नहि अछि। एकांकी अत्यन्त लघुकाय अछि तेँ छुछुल लगैत अछि। एकर प्रत्येक चरित्रक निजी विशेषता छैक। एकांकीकार सतत सतर्क रहलाह अछि जे कोनो पात्र ऐतिहासिक वा काल्पनिक आदर्शसँ एकोस्ती स्खलित नहि होमय पाबय।

('मैथिली नाटक परिचय'सँ)

खट्टर कका : बिम्ब-प्रतिबिम्ब

श्री आरसी प्रसाद सिंह

हरिमोहन बाबूक मित्र-मण्डली बड़ पैघ हयतनि। विश्वविद्यालयक प्राध्यापक वर्ग, देश विदेशक साहित्यिक एवं मनीषी लोकनि सतत हुनका सँ मिलऽ ले साकांक्ष रहैत छथि मुदा, सागरमे अपार जलराशि रहितो बयो ओतबे पानि लऽ सकैत अछि, जतेक ओकर अपन पात्रमे अँटि सकै छै ! कतेक महान् छथि ओ जे हमरो सन व्यक्तिकेँ अपन मित्र-मण्डलीमे आनि कऽ धन्य करै छथि !

हरिमोहन बाबूक मित्र-मण्डलीमे सबसँ पहिल नाम, जे हमरा मोन पड़ैए से छलथिन्ह हुनक पत्नी, स्वर्गीया श्रीमती सुभद्रा देवी। ओ हरिमोहनबाबूक धर्मपत्नीक संगहि मित्रो छलथिन; आ मात्र मित्रे नहि, कालिदासक शब्दमे हम यैह कहय चाहब जे, ओ छलथिन हरिमोहन बाबूक "गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ।" दोसर चरणमे ओ कहै छथि—"करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम्।" सेहो हरिमोहन बाबू पर पूर्णतया चरितार्थ होइत छनि।

बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्यायक प्रसंग सुनल अछि जे, जे कोनो साहित्यकार वा मनीषी हुनका सँ भेट करऽ जाइत रहथिन, तनिकासँ ओ मात्र बाजारक भाव छोड़ि कऽ आन कोनो साहित्यिक वा राजनीतिक गप्प नहि करथिन ! हरिमोहन बाबू केर सम्बन्धोमे ई चरितार्थ छनि ! ओहो अपन भेट-कर्त्ता लोकनिसँ बाजारे-भाव आ खान-पानक गप्प करै छथि। साहित्यिक गप्प क्वचित् कभार।

जखन-गप्प सभक एकेटा विषय तँ कतेक नवीनता लाओल जाए ! एके बात घुमा-फिरा कऽ ओ ततेक बेर ने पुछताह, जे जवाब दैत नहि बनि पड़य। एक बेर एहन विषम परिस्थिति उपस्थित भऽ गेल अछि, जे सवालपर सवाल कऽ रहल छथि—हम जवाब पर जवाब दऽ रहल छियैन, मोने मोन खौंझैत, सोचैत, जे हद्द भऽ गेल, आब दोसर गप्प करू ! ई प्रश्न फेर नहि करू—की, हमर ई मनोभाव हरिमोहन बाबू बूझथु वा नहि, सुभद्रा झा केँ तत्काल बोध भऽ जाइनि, हरिमोहन बाबूक दिस ताकि कऽ कहथिन— "कहलनि तँ, एक बेर, आब की बेर-बेर एके बात घोखि रहल छियै।" ई सुनिते, जेना कोनो स्कूली चटिया छड़ीदार गुरुजीक डाँट सुनिते सकदम भऽ जाइत छै तहिना हरिमोहन बाबू भऽ जाथि। ई छल श्रीमती सुभद्रा जीक प्रभाव !

सरिपोँ, हरिमोहन बाबूक लगमे पहुँचब जतबे आसान बूझल जाइत छै ताहिसँ बहुत कठिन अछि हुनका लगसँ मुक्त भऽ कऽ घूरि आयब। एकटा कविकेँ हम हुनका फाटकपर असकरे ठाढ़ देखि

कऽ पुछने छलियनि तँ ओ यैह कहलनि, समय कम अछि ! भेट करैत डऽर होइ-ए ! तेँ, बाहरेमे ठाढ़ छी !

"आउ, आउ, आउ" कहि कऽ ओ सभकेँ नीक जकाँ स्वागत करै छथिन, मुदा जाइत काल "कनेक बैसू ! एखन बेरे की भैले-ए !" आदि कहि-कहि कऽ रोकऽ लगताह ।

हरिमोहन बाबू प्राय: समस्त भारतवर्षक प्रसिद्ध-प्रसिद्ध नगरक यात्रा कयलनि ! यात्रामे पत्नी सुभद्रो जी रहल करथिन ! सुभद्रा जीकेँ प्रदेश-प्रदेशक भोजन बनैबाक लूरिसह जेँ प्राप्त भऽ गेल छलनि ! खैबाक सौख तँ हरिमोहन बाबूकेँ स्वयं छनि जे हुनक प्रख्यात पोथी "खट्टर ककाक तरंग"सँ परिचित छथि, से जनैत होयताह, जे ओहि कृतिमे कतोक प्रकार केर भोजनक वर्णन भेल अछि ! दही, चूड़ा, चीनीसँ तँ पोथीक प्रारम्भे भेल अछि ! "माछक महत्त्व" पर लगले एकटा पूर्ण रचना अछि । "ब्राह्मण-भोजन" नामक निबन्धमे सेहो भोजनेक वर्णन अछि। एकर अतिरिक्तो, प्राय: अधिकांश लेखमे भोजन द्रव्यक चर्च अछि ! एहिसँ हरिमोहन बाबू केर भोजन-सम्बन्धी विशिष्टता नीक जकाँ उजागर होइत छनि ! ब्रह्मानन्दक परिचय करबैत खट्टर कका की कहैत छथि—"दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सितापि मधुरैव । तस्यतदेव हि मधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नम् ।"

अतएव, हमरासँ यदि केओ पूछय जे जीवनक चरम आनन्द की थीक ? तँ हमर उत्तर अछि, रसो वै स: । अर्थात् रसगुल्ला । रसगुल्लाकेँ हम साकार ब्रह्मक प्रतीक मानै छियै—

अखण्डमण्डलाकारं श्वेत-वर्ण-रसान्वितम् ।
सर्वानन्दकरं दिव्यं रसगोलं भजाम्यहम् ॥

सब प्रकारक भोज्य-सामग्रीक रसास्वादन जहिना मौखिक रूपेँ हरिमोहन बाबू करावथि, तहिना जीभक चरितार्थ सुभद्रा देवी !

हम असकरुआ लोक आ स्वयंपाकी—तेँ भिनसरमे खिच्चड़ि बनायल करी आ रातिमे रोटी ! एहि बातक चर्च हमरासँ बरोबरि तँ करिते रहथि, जे क्यो हमरा सोझामे हुनका ओतय आबथि, तिनको कहल करथिन जे कोना आरसी जी सब दिन खिच्चड़ि खाइत छथि से जानि ने ! मुदा, कहियो इहो कहैत हुनका मुँहसँ सुनल जाइत छल जे "हइ-औ ! हमरो खिच्चड़ि खयबाक मोन होइत अछि !" पता नहि, ई उद्‌गार व्यंग्यमे निकलै छलनि की सत्ये-सत्य ! परंच, हम मोने-मोन कही जे, बड़ नीक ! खाउ ने ! रोकय-ऐ के ? एहि तरहेँ हुनक बहुत रास मोनक बात कल्पनोमे चलैत रहैत छलनि, जकरा मूर्त्त रूप देबाक कोनो योजना नहि रहनि !

एक बेरक गप्प मोन पड़ै-ऐ जे, चंद्रशेखर बाबूसँ, जे हुनक परम मित्र आ राज्य शिक्षा संस्थानमे नीक पदाधिकारी छथि, सम्बन्धित अछि । चंद्रशेखर बाबू बड़ घुमंता लोक छथि । भारतक कोनो जोनक प्रसंग पूछि कऽ देखियौन, तखने अहाँकेँ ओ धड़ाधड़ि गाड़ीक नम्बर, स्टेशन, टाइम सबटा कहि कऽ अहाँकेँ चकित कऽ देताह । हरिमोहन बाबू चन्द्रशेखर बाबू सँ हरिद्वारसँ गंगोत्री धरिक मार्ग दर्शन पुछलथिन । चन्द्रशेखरो बाबू तेना ने मनमोहक ढंगसँ प्रस्तावित यात्राक वर्णन कयलथिन, जे हरिमोहन बाबू गद्‌गद भऽ गेलाह ! बूझि पड़ल जे ओ उत्तराखण्डक यात्रा ले बिल्कुल तैयारे बैसल छथि आ किछुए सप्ताह वा दिनमे विदा भऽ जैताह ! चोट्टे प्रस्ताव कयलनि जे आरसीजी, अहौं चलू ! हमरो कल्पनामे बहुत दिन सँ

ई बात घुरिआयल छल। मुदा, हम उपरका मोनसँ हरिमोहनबाबूक बात राखि लेलियैन आ कहि देलियैन —"बेश"। परंच, मोनमे इहो भय बैसि गेल रहय जे हरिमोहन बाबूकें वचन तँ दऽ देलयनि ; किस्यात् ओ तैयार भऽ जाथि, बहाना कैल जयतै कि चलल जयतै ? तावत्, चन्द्रशेखर बाबूसँ किछुए दिनक उपरांत भेट भेल, तँ हुनका हम पुछलियनि जे कहू, हरिमोहन बाबूक यात्रा-मुहूर्त्त कहिया बनैत छनि ! ओ कहलनि—"हरिमोहन बाबू अइ बेर बदरी केदारक यात्रा करताह, से के कही।"

"तखन ई गाड़ीक समय-सारिणी आ यात्राक विवरणी ?"

"ओ ! ई बात तँ दस वर्ष सँ पूछि रहल छथि।" ओ कहलनि।

"आ, अहाँ ?"

"हँ। हम दस वर्षसँ हुनका ओहिना समय-सारिणी आ खर्च-वर्चक सबटा ब्यौरा बता रहल छियैन, जेना पहिले बेर पूछि रहल होथि।"

हरिमोहन बाबूक मित्र-मण्डलीक उमाशंकर वर्मा, हरिमोहनक संग गप्प-शप्पमे प्रायः हमरा साथे रहथि ! एक समय हम हरिमोहन बाबूक बासाक नजदीके मे मकान लऽ कऽ रहैत छलहुँ ! ओ दू-तीन वर्ष तेहन सत्संगमे बीतल, जे ओकर स्मृतिएसँ मोन पुलकित भऽ जाइत अछि ! मुदा, "ते हि नो दिवसा गताः।"

हरिमोहन बाबूकें तेना ने हमरासँ स्नेह बढ़ऽ लगलनि, गोटेक दिन जे भेंट नहि करियनि, तँ कैफियत देबऽ पड़य ! हुनक परम प्रिय सेवक 'बहादुर' पहुँचि जाए—"साहब बुला रहे हैं !" अपन पोती केँ पठौथिन, नाम जकर छै "गुड्डी" ! "बाबा बजबै छथि"-ओ कहय आ हमर हाथ पकड़ि कऽ खींचऽ लागय ! तेहन बाबाक हुकुम ! हरिमोहन बाबू कहबो करथिन जे गुड्डीकें वारण्ट एवं जब्ती-कुर्की केर आदेशक साथ पठबै छियै।

ओना तँ हम एसकरो हरिमोहन बाबूसँ मिलऽ ले चलि जाइ आ, पर्याप्त गप्प-सप्पक बाजार गरम होए ! मुदा, उमाशंकर वर्मा जखन संगमे रहथि तँ गुलशनमे वसन्त-बहार आबि जाए ! वर्माजी स्वयं माधुर्यक खानि आ ओम्हर हरिमोहन बाबू माधुर्यावतार ! दुनू गोटेमे तेना ने पटरी बैसइ छनि जे आनन्दक रेलगाड़ी धड़ाधड़ जेट विमानक स्पीडमे दौड़ऽ लगइ छै !

से, ई स्नेहासक्ति तेहन प्रगाढ़ भेल गेल छलय, जँ वर्माजी असकर जाथि, तँ हरिमोहन बाबू पुछथिन—"ऐँ-औ, आरसीजी नहि अबइ छथि ? कतहु बाहर तँ नहि गेल छथि ?"

फेर तहिना जखन हम असकर हुनका लगमे जाइ, तँ प्रश्नक झड़ी लागि जाय ! "वर्माजी कियै ने अयलाह ?"

से, ई प्रबल स्नेहासक्ति वर्मेजी धरि रहैत होनि, से नहि बूझल जाए ! हुनक परिचय परिवेशमे अयनिहार कतेको व्यक्तिकें ई अनुभव प्रत्यक्ष-गोचर होइत होयतनि ! कोनो दिन ओ पूछि बैसथि, जे कोम्हर जायब ? आ जँ हम कहियनि, राजकमल प्रकाशन दिस, तँ चट्ट ओ फरमा देथि जे "ओही ठाम सुमनो सरीनकेर घर छै ! राजकमलक बगलेमे ! कनेक ओकरोसँ भेट कऽ लेबइ ! बहुत दिनसँ ओकर हाल-चाल नहि मालूम भेल-ऐ !" हमरा मोनमे बड़ तामस होए जे देखू ने ! हम

ओकरा ओहि ठाम बिना बजाओल कियै जयवै ? ओ की बुझतै ? किन्तु, हरिमोहन बाबूकें तँ सुमन सरीनक प्रति स्नेहक भावना छलनि !

हमर एक कन्या चौधरी टोलामे रहैत छथि आ रामकुमार चौधरी, महेन्द्र प्रशिक्षण महाविद्यालयक प्राध्यापक, जिनकर धर्मपत्नी हरिमोहन बाबूक गामक थिकीह ओही महल्लाक निवासी छथिन ! आब ई बात जखन हरिमोहन बाबूकें मालूम भेलनि, चौधरीजीक चर्च भूत जकाँ हमरा संग लागि गेल ! "चौधरी टोला जाइ तँ कनेक रामकुमार चौधरीसँ भेँट कऽ लेबनि ! ओ बहुत दिन सँ भेँट नहि देला-ए ! कहबनि, भेँट करऽ ले ! आ हुनक पत्नीओक कुशल बुझने आयब ! ओ हमरे गामक बेटी थिकी !"

आ, हम, जे कैक बेर प्रयास कैल, चौधरी जी ओतऽ गेलहुँ, हुनका समाद पठाओल, मुदा, ओ टस-मस नहि भेलाह ! हरिमोहन बाबू सँ भेट करऽ ले नहिए अयलाह ! आ, हम ऊधोजीक अभिनय करैत माधोजीक सनेस गोकुलमे पहुँचा-पहुँचा कऽ थाकि गेलहुँ, तखन हमरा पिण्ड छोड़बयबालै कहऽ पड़ल जे, "हम नहि जायब चौधरीजीक ओहि ठाम ! ओ नहि औताह ! नहि औताह ! तँ एते खुशामदि कियै ?"

आ, हुनक मुसुकी फेर गजब छल, "औ ! की करू ? मोन नै मानय ऐ ! अच्छा, एकबेर फेर कहबनि—कतौ रस्तोमे की नहि भेटताह ?"

एकटा पोता, पाँचे छः वर्षक आयुमे, स्वर्गीय भऽ गेलनि, तँ कैक मास धरि देखलियनि, हुनका किछु नीक नहि लगनि ! बरोबरि ओही सोचमे डूबल रहथि ! हमरो सभसँ वैह गप्प, गोष्ठियोमे ओकरे कथा ! ई मातम बहुत दिन धरि मनाओल गेल, तखन हुनक चित्त-वृत्ति शान्त भेल। फेर तहिना, पत्नीओक देहान्त भेलापर भड़भड़ायल आवाज, डबडबायल आँखिक कोर, उदास चेहरा; सभकें जीवन भरि हँसबैत रहऽवला आइ अंतमे स्वयं कानऽ लागल छथि ! यैह थिक विधि विडम्बना ! की सँ की भऽ जाइत छै ! तें तँ नहि की ओ आब नियतिवादी भेल जाइत छथि ? कहियो हुनका मुँहसँ ईश्वर वा राम-कृष्णक नाम सुनबामे नहि आयल छल, से एम्हर, विशेष रूपसँ जहिया सँ ओ अशक्त भेल जाइत छथि, आ अस्पतालमे मरणासन्न स्थितिमे रहि कऽ बुझू जे पुनर्जन्म पावि कऽ अयला, तहियेसँ ओ कहय लगलाह जे "आब हम नियतिवादी भेल जाइ छी ! जे करइ छै से नियति करइ छै !" ई हुनक उक्ति छनि ! आत्मा; परमात्मा; शैव-शाक्त; जैन-बौद्ध; वेद-उपनिषद जानि ने कतेक शास्त्रकें ओ मंथन कयने होयताह; घोंटि कऽ पीबि गेल होयताह; प्रवचन देने होयताह; पुस्तक लिखने होयताह; छात्र-प्रछात्र लोकनिकें पढ़ौने होयताह; मुदा, ओना गप्प-शप्पमे वा घरेलू वातावरणमे क्यो ने कहियो हुनका मुँहसँ देव-पितरक चर्च सुनने होयताह ! हुनका ले ओ शास्त्रीय खण्डन-मण्डन आ तर्क-वितर्क जीविके उपार्जनक साधन बनल रहि गेलनि। गम्भीर रूपे कहियो तेहन समस्या बनि कऽ जिनगीमे नहि उभरलनि ; मुदा, आचार्य शंकर जेना कहने छथि, "अंगं गलितं, पलितं मुण्डं दशन-विहीनं····" आदि-आदि,से परिस्थिति जखन मनुक्ख कें पूर्णतया ग्रसित कऽ लैत छै, तखन "नहि नहि रक्षित डुकृञ् करणे सेहो वैह कहने छथि; तें, बड़े-बड़े पुरुषार्थवादियो कें जखन सब विद्या-वृद्धि आ कला कौशल समेत सम्बर्द्धित पुरुषार्थ जबाब दऽ दइ छै तखन ओहो जँ भाग्यवादी

बनि कऽ ''नियति''क शरणापन्न भऽ जाथि तँ एहिमे आश्चर्य नहि करवाक चाही ! एकरो प्रबल पुरुषार्थेक चरम परिणति बुझबाक चाही ।

एहि विवाद-ग्रस्त भूमिकाक संग हुनक व्यक्तित्वमे नहि जा कऽ हुनक पोथी ''खट्टर ककाक तरंग'' देखवाक चाही ! हमरा जनिते ''खट्टर कका'' सनक उनचास हाथक अद्भुत-अलौकिक मनुक्खक सृष्टिए ताही लेल भेल अछि, जे हरिमोहन वावूक सबटा शास्त्रीय विचार अपना माध्यमसँ जनताक समक्ष प्रकट कऽ सकय ! एहि लेल प्रश्न उठैत अछि, जे की हरिमोहन वावूक आगाँमे कोनो सोझ रस्ता नहि छलनि ? की राधाकृष्णन, दासगुप्ता आदि पारम्परिक दार्शनिक अध्येता-जकाँ दर्शन-विषयपर स्वतंत्र रूपसँ विचार करैत कोनो पैघ ग्रंथक निर्माण नहि कऽ सकैत छलाह ? यदि कहल जाए, कि निश्चय कऽ सकैत छलाह; तखन फेर प्रश्न वैह उठैत अछि जे ''खट्टर ककाक तरंग''क रचनाक की उद्देश्य रहल होयतनि ?

हमरा जनिते हरिमोहन वावू दर्शन-शास्त्रपर पारम्परिक रूपसँ ग्रंथ लिखवामे समर्थ छथि ! एक दर्शन-विषयक ग्रंथो लिखि कऽ प्रकाशित करौने छथि ! मुदा, पारम्परिक ग्रंथ लिखवामे विचार-स्वातंत्र्य तँ रहिते नहि छै ! वनल-वनाओल लीखपर पुरान वैलगाड़ीओ कहुना लड़खड़ाइत चलिये जाइत छै, जँ बहलमान सुतलो होए ! तें ओकर क्षेत्र संकुचित होइत छै ! अपन वात कहवाक गुंजाइश तँ नहिए जकाँ रहैत छै ! तखन, हरिमोहन वावू सनक स्वतंत्र विचारक कोनो वनल-वनाओल साँचामे कोना घुसिया सकैत अछि ? सरिपहुँ, ओकरा कोनो दोसर रस्ता अख्तियार करऽ पड़तय, जाहिमे ओकर पूर्ण स्वाधीनता बनल रहय ! आ, से आवि कऽ घटित भेल ''खट्टर ककाक तरंग'' मे ।

खट्टर कका एवं हरिमोहन वावूमे यद्यपि चचा-भतीजा वादक सुगंधि भेटइ अछि; आ, ई सम्बन्ध ग्रन्थक समर्पण-पृष्ठो द्वारा अभिव्यक्त होइत अछि ! ग्रन्थो ''खट्टरे कका'' केँ पितृव्य कहि कऽ अर्पित कैल गेल अछि ! यदि थोड़ेक काल लेल ई वात मानि लेल जाए, जे लेखके-जकाँ ''खट्टरो कका''क भौतिक अस्तित्व एहि पृथ्वीपर छनि; तथापि, एहिमे संदेह नहि जे हुनक वौद्धिक चेतना हरिमोहन वावू द्वारा हुनकामे प्रक्षेपित छनि ! ओ मात्र एकटा एहन प्रोजेक्टर यंत्र छथि, जिनका माध्यमसँ प्रकाश बहरा कऽ पर्दापर फिल्मकेँ देखवइ अछि ! मुदा, ओ प्रकाश आओर फिल्म दुनू स्वयं हरिमोहने वावू छथि !

'खट्टर कका' खण्डनाचार्य छथि ! ओ सिर्फ खंडने-खंडन करैत चलि जाइत छथि ! धोखोसँ, किरियो खाइ ले, कतहु कोनो बातक मण्डन नहि कयने छथि ! भोजन, भोज आ भाँग, यैह तीनटा ओ जनैत छथि; एकरे समर्थन करैत छथि ! वाँकी सवटा चूल्हिमे झोंकने चलि जाइत छथि ! वाथरूमक टबमे नहाइत बच्चाक संदर्भमे, जेना क्यो अलेल टवक पानि फेकवा काल ओकरे संग वच्चोकेँ भसा दै छै, तहिना ''खट्टर ककाक तरंग''मे की नीक, की वेजाय? किछु ने वूझि पड़इ-ए ! हुनका आगाँ जे किछु पड़ल, दू-टूक भऽ गेल ! रामायण, चण्डी, ज्योतिष, महाभारत, देवता, ब्रह्म, गीता, मोक्ष, भगवान, धर्म, काव्य, पुराण, दर्शन, वेद, आयुर्वेद, सत्यदेव, पंडित, प्राचीन सभ्यता; यैह तँ हमर संस्कृति, समाज, दर्शन, अध्यात्म, जीवन, सबहक आधार-शिला रहल अछि । वैदिक कालसँ लऽ कऽ आइ धरि भारतीय समाजक जे किछु विकास भेल अछि, ताहिसँ यदि उपरका किछु स्तम्भकेँ खसा देल जाए, तँ पूरा महल भड़भड़ाकऽ धराशायी भऽ जायत ! मुदा खट्टर कका तँ सवटा खंभाकेँ उखाड़ि कऽ फेंकऽ ले सन्नद्ध छथि !

ताल ठोकि कऽ मयदानमे जुटल छथि ! अपन तर्कक तीक्ष्ण प्रहारसँ सब विचारकेँ धज्जी-धज्जी उड़ा दैत छथि ! आब कनेक ज्ञानझाक योग दऽ कऽ विचार कैल जाए, जे खट्टर कका केर मस्तिष्क-रूपी तरकशसँ विषधर-साँप जकाँ फनफनाइत एकपर एक भयंकर तीर सभ छूटइ अछि, से ककर ? निस्सन्देह, सब क्यो सहमत होयताह, जे एकमात्र हरिमोहन बाबूए केर, जे एहि पोथीक स्वनामधन्य लेखक छथि—आ, "खट्टर कका" रूपी महा-चरित्रकेँ धृष्टद्युम्न जकाँ ठाढ़ कऽ, स्वयं सव्यसाची बनि, पाछाँ सँ सम्पूर्ण शास्त्र श्रृंखला केर भीष्मपर प्रहार कयने छथि ! आ, अपना जनिते, ओ एक तरहेँ पितामहकेँ मारिये देने छथि ! भले, पितामहकेँ इच्छा, मृत्युक वरदान भेटल होइनि आ ओ उत्तरायणक प्रतीक्षामे शर-शय्या पर पड़ल होथि !

कहबाक प्रयोजन नहि, देखबाक योग्य अछि, जे "खट्टर ककाक तरंग"मे लेखक स्वयं अपनेकेँ दू भागमे बाँटि लेने छथि ! एक पक्षमे तँ हुनक प्रकांड पांडित्य, अपराजेय तर्कसँ प्रतिष्ठित अपना आसनपर विराजमान छनि ! आ, दोसर पक्षमे वैह एकटा निरीह सरल निष्कपट बालकक अभिनय कऽ रहल छथि, जकर काज मात्र एतबे छै, जे ओ खट्टर ककाक आगांमे कोनो तेह्न बात राखि कऽ चुप भऽ जाए, जाहिसँ ककाक चोख कतरनी ओकरा कतरै लागय ! कुट्टी काटऽ वला मशीन देखने हयबै, तँ मोन पड़त, जे किसान एक तरफसँ मशीनक दाँतमे घास घुसिया दैत छै आ दोसर दिससँ कट-कट कटैत कुट्टी खसल जाइत छै ! वैह दृश्य एहि ठाम हरिमोहन बाबू "खट्टर ककाक तरंग" मे उपस्थित करैत छथि ! प्रश्न कर्त्ताक जन्मे एही लेल भेल छनि जे ओ भतीजा बनि कऽ अपन कका ले विचार क्षेत्रक विराट बोन-बाधसँ सब तरहक घास लाबि कऽ हुनका मुँहमे गौंसँ राखि देथिन, जेकरा ओ थुर्री-थुर्री उड़ा कऽ थुकरि दैथि ! ई जे प्रलयंकर प्रतिभाक दिग्दर्शन खट्टर ककामे देखल जाइत अछि, से प्रच्छन्न रूपमे की स्वयं हरिमोहन बाबू नहि कऽ सकैत छथि ?

कुरीति, कुप्रथा, अंधविश्वास आदि असामाजिक तत्वपर खाहे क्यो अनपढ़-पढ़ल प्रहार कऽ सकइ अछि ! कोनो रोक-टोक, लांछन-अभियोगक प्रश्न नहि उठैत अछि ! मुदा दर्शन, संप्रदाय, वेद, शास्त्र आदि शिष्ट-गंभीर विषयोपर खंडन-मंडन खूब भेल अछि—प्रच्छन्न रूपसँ नहि, एकदम खोलि कऽ ! कतहु अपन मतक "खंडन-खंडखाद्य" लिखऽ पड़लनि; स्वामी दयानन्द केँ सत्यार्थ प्रकाशन करय पड़लनि ! आ कतहु, अपना दिससँ कोनो मतामतक प्रतिष्ठापन ले किछु नहि रहितहु एहन दुर्घट-दुघर्ष विद्वान होइ छथि, जे सिर्फ सब मत-संप्रदाय केर खंडनेमे अपन प्रतिभा निःशेष कऽ दैत छथि—जेना, एकटा सुप्रसिद्ध उदाहरण लेल जाए—बौद्ध महायान केर प्रकांड पंडित नागार्जुनक ! जे, ओ शिकारी छथि, जकरा मांसाहारी नहि कहि सकइ छिए—मुदा, तइयो ओ वंदूक लैने जंगले-जंगल शिकार कैने फिरइ-ए ! ओकरा एहीमे आनन्द भेटइ छै, तँ क्यो की क' सकइ छै ? हमरा बुझि पड़इ-ए, खट्टर कका अपर नागार्जुने छथि ! जेना शंकराचार्य प्रच्छन्न बौद्ध कहल जाइत छथि ! खट्टर ककाक अपन की सिद्धांत छनि, से ओ कतहु प्रकट नहि करइ छथि ! मुदा आनक नीकसँ नीक सिद्धांतो केँ तेना ने काटि-कूटि कऽ फेंकि देताह, जे लेखकेक भाषामे कहऽ पड़त—"(१) खट्टर कका, अहाँक बात लुतिए सन होइत अछि ! (२) खट्टर कका, एना बजबै, तँ लोक नास्तिक कहत, (३) खट्टर कका, अहाँक तँ सभ बाते अद्भुत होइत अछि, (४) खट्टर कका, अहाँ वेदक बात कहि रहल छी कि वाममार्गक ? (५) शांतं पापम् ! ई त वाममार्गोसँ टपि गेल (६) खट्टर कका, एखन अहाँ तरंगमे छी (७) खट्टर कका, अहाँके

नशा चढ़ल अछि ! (८) खट्टर कका, अहाँ भाँगक तरंगमे ई नहि बाजि रहल छियै ? हँ सरिपहुँ, हमरो बूझि पड़इ-ए जे खट्टर कका भाँगेक तरंगमे सबटा बात कयने छथि !

ककाक विचित्र तर्क-तरंगमे उभ-चुभ करैत भतीजाक जे टिप्पणी होइत छै, ताहिमेसँ किछु बानगी रूपे ई प्रस्तुत कैल गेल अछि ! ओना, एहि तरहक उक्तिसँ, जे भतीजाक मुँहसँ अकबका कऽ बहार भऽ जाइत छै, सम्पूर्ण पोथी भरल अछि ! एहिसँ की व्यक्त होइत छै कहू तँ ? पाठकवर्गपर एहि प्रकारक टीका-टिप्पणी, जे प्रश्नकर्त्ता एवं एकमात्र श्रोता द्वारा कैल गेल छै, खट्टर ककाक चरित्रपर, से की कहि रहल अछि ? की एहिसँ पाठकके सन्देह नहि भऽ सकइ छनि, जे खट्टर कका वाममार्गी, अधार्मिक एवं नास्तिक छथि ! चार्वाकक कलियुगी अवतारो जँ कहियनि, तँ अत्युक्ति ने ? ई मंतव्य हमरे नहि, स्वयं लेखको अपन निवेदनमे स्पष्ट रूपसँ कहि देने छथि-"खट्टर ककाके लोक अभिनव चार्वाक कहै छैन्ह। कारण जे हुनको सिद्धांत छैन्ह—यावत् जीवेत सुखं जीवेत्। (ऋणं कृत्वा घृतं पिवेतो की ?) आब पुनः विचार कैल जाओ, जे पोथीक विद्वान लेखक की अपन कृतित्वसँ अवगत नहि होयताह ? इहो टीका-टिप्पणी तँ एक प्रकारें हुनके लेखनीसँ बहार भेल होयतनि ? तखन की कखनो हुनका अपन खट्टर ककाक ई खट्टरत्व किंवा चार्वाकिता खटकैत नहि होयतनि ! आखिर, विचारसँ यदि किछु मतभेदो स्वीकार कैल जाए, तँ सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिएँ तँ ओ एही माटि-देशक उपज छथि ! अपन तर्क-वितर्कक कर्कश प्रहार सँ ओ जेकरा पौलनि, जे आगाँमे पड़लनि, सनकल साँढ़ जकाँ उठा कऽ ठामहि चित्त कऽ देलनि, पेटमे सींघो घुसिया कऽ हुरपेटि देलनि, मुदा, अंतरात्मा तँ रहल होयतनि साहित्यकारे-कलाकारक ने ? तेँ, ओ खट्टर ककाक हाथमे भङघोटना दऽ कऽ सतैत काल भाँगेक निसामे बुत्त देखौने छथि ? आब, जखन ओ अपन होसेमे नहि छथि, तँ हुनक बातके क्यो गंभीरता-पूर्वक नहि लियै, साँचे नहि मानि लियै, ई बात डंकाक चोटपर ललकारि कऽ कहि रहल छथि ! अदालतोमे हुनकापर कोनो केस नहि चलि सकइ अछि ! हुनका ले एकदम सात खून माफ ! ओना, ओ भाँगक तरंगमे आबि साते कियै, सात सै खून कऽ चुकल होयताह !

ओना तँ, व्यंग-विनोद अपनहि तेहन निरामिष साहित्यिक विधा छैक, जेकर अढ़ लऽ कऽ हास्य-व्यंगकार लेखकलोकनि अपन निरंकुशता, आक्रोश, विचार स्वातंत्र्य आदि विषय लऽ कऽ राजनीति वा लोकनीतिपर तीक्ष्ण प्रहार करैत रहलाह अछि। आ, अपन कथा-नायकपर कोनो तरहक दुर्बलताक आरोप नहि करऽ पड़लनि ! से तखनहि संभव भऽ सकइ अछि, जखन कथा-नायक यथार्थक सीमा टपि कऽ असीममे पयर नहि धरय ! हास्यो-व्यंग्यक एक निश्चित सीमा होइत छै ! आ, एक सीमे धरि ओ लोक-प्रिय एवं सर्व-सहिष्णु होइत छै ! परंच, वैह जखन दुनू कातक बान्ह तोड़ि कऽ नग्न-उन्मत्त नृत्य करऽ लगै छै, तखन ओकर तर्कमे खाहे अकाट्य बल होए, खाहे, ओकर प्रति-पादनशैलीमे विशिष्ट कला होए, ओ जखन विदग्धक मर्म स्पर्श करैत छै, तँ तिलमिलाइये नहि दै छै, दग्धो कऽकऽ छोड़इ छै ! एक ठाम स्वयं खट्टर कका अपन परिचयमे कहि रहल छथि····हौ, हम छी मुँहफट्ट ! लाइ-लपटाइ जनबे नहि करइ छी। तैं ठाइ-पठाइ बात लोक कें कहि दैछियैक। संभव जे किछु गोटाके बेस तीख-चोख लगैन्ह,परंतु किछु गोटाके तेहन झँसिगर लगतैन्ह जे आँखि-नाकसँ पानि बहय लगतैन्ह··· जेना लौंगिया मरचाइक बुकनी।हास्य तँ ओकरा कहब, जे हँसा दियै ! विनोदो एकरे दोसर नाम छै ! व्यंग्यो द्वारा गुदगुदी लगायल जाइत छै ! किन्तु, खट्टर ककाक तरंगमे तँ कतहु तेहन ने विष भरल रहैत छनि, जे ककरो कोनो दिन

प्राणो लऽ सकैत छै ! एहि अपराधसँ बचयबे खातिर, बूझि पड़इ-ए, जे खट्टर कका केर हाथमे भंगघोटना दऽ देल गेलनि ! नहि तँ, पाठकक आक्रोशसँ ओ कोना बाँचि कऽ जा सकितथि ? भाँगक निसा हुनका बचैबा ले ब्रह्मास्त्र बनि कऽ आबि जाइ छनि !

आब खट्टर कका प्रत्यक्षमे जे होथि, हमरा एहिसँ कोनो विवाद नहि। मुदा, परोक्षमे ओ लेखक महोदय हरिमोहन झा स्वयं अपन अन्य प्रतिमूर्तिमे प्रकट भेल छथि। जिनका एहि कथनपर विश्वास नहि जमनि, से एक बेर पोथीक समर्पण-पृष्ठ देखि जाथु ! पुस्तक समर्पित स्वयं खट्टर ककाकें ! समर्पण-वाक्य छै जे भंगक तरंगमे काव्य-शास्त्र धारा बहा दैत छथि।

'जनिक प्रवाहमे थोड़े कालक हेतु वेदपुराण, (थोड़े कालक हेतुपर ध्यान देबय) धर्मशास्त्र, सभटा भसिया जाइत अछि !

जे बात-बातमे अद्भुत रस ओ चमत्कारक चाशनी घोरि दैत छथि।

जे मर्मस्पर्शी व्यंग्य द्वारा लोकक अंतस्तलमे पहुँचि गुदगुदी (मात्र गुदगुदिये—की बिठुओ काटि लैत छथि ?) लगा दैत छथि।

तेहन चिर-आनन्दमूर्ति, परिहास-प्रिय खट्टर ककाकें।'

की आबहु खट्टर ककाकें चीन्हबामे कोनो भाङठ अछि ? खट्टर कका पर आरोपित ई सबटा विशेषण ककरापर जाइत छै ?

हास्य-व्यंग्यक संगमे ई अद्भुत रस कोन ठाम चोट करइ छै ? कनेक बिचारल तँ जाय, अद्भुत रस केकरा कहइ छै ? बालक कृष्ण जखन माटि खा लेने छलाह, तखन यशोदाके मुँह खोलि कऽ जे दृश्य देखौने रहथिन से कोन रस छलैक ? गीतामे वैह कृष्ण जखन अर्जुनकें अपन विराट रूप देखौलथिन, तखन कोन रसक सृष्टि भेलैक ? साहित्यक नवो रस जखन फराक-फराक रहैत छैक, तखन एक बात भेल। मुदा, जखन अनेक वा सभ रसक एके ठाम परिपाक होइत छैक, तखन कहबै छैक अद्भुत रस ! खट्टरो ककामे तहिना एके रस नहि, रसक पूर्ण संहार पाओल जाइत अछि ! आ तहिना, की स्वयं हरिमोहन बाबूओमे विभिन्न रसक समाहार नहि देखल जाइत छनि ? की साहित्य, दर्शन, कविता, हास्य, व्यंग्य, विनोद, सभटा हुनकामे एके संग ओत-प्रोत नहि छनि ? कवि जयदेवक जे गर्वोक्ति ओ खट्टर ककाक संदर्भमे, पोथीक निवेदनमे, उद्धृत कयने छथि—

येषां कोमल काव्य कौशलकला लीलावती भारती
तेषां कर्कश तर्क वक्र वचनोदगारेऽपि किं हीयते।
यैः कान्ताकुच मंडले कररुहाः सानन्द मारोपिताः
तैः किं मत्त करीन्द्र कुंभशिखरे नारोपणीयाः शराः॥

मुदा, खट्टर ककाक निर्मम प्रहार सँ क्यो नहि बाँचल, ई मानैत हम एकटा बात कहब जे, एकठाम निश्चित रूपसँ खट्टर कका चूकि गेलाह ! सभपर हुनक तीर तुक्का चलल, परंच वर्तमान राजनीति अनदेखे रहि गेल ! बूझि पड़इ-ए, एहि मामिलामे खट्टर कका बरोबरि होसमे रहैत छलाह ! भाँगोक तरंगमे बहैत, जखन ओ दनादनि सभपर लाठी भाँजैत चलि जाइत छथि, आधुनिक व्यवस्थापर एको हाथ नहि चलबैत छथि ! एहि ठाम जा कऽ हुनक सभटा 'मुँहफटता' गायब भऽ जाइ छनि ! की हुनका ई

बात बूझल तँ नहि छनि, जे 'को जाने केहि वेशमे सी० आइ० डी० मिलि जाहि !' फेर तँ कतहु भंग-घोटनोपर सरकारक नजरि नहि पड़ि जाए ! तेँ, नीक अछि जे, लौकिक सेत खाइ—सरकारी बगीचासँ जतेक फराक रही, कल्याणमस्तु। के आन्हर बिर्नीक खोतामे हाथ दियै ? धर्म, समाज, वेद, शास्त्र सभटा मुइल व्यवस्था! मोसम्मात ! क्यो बाजऽ आओत ? की किछु कहत ? भगवानकेँ आइ धरि एते ने गारि पड़ल गेल छनि, जे जँ ओ कतहु होयताह तँ गत्तर-गत्तरमे भूर भऽ गेल होयतनि ! मुदा, आइ धरि ककरापर ओ कोन थाना-पुलिसमे खबरि करऽ गेलाह ? से, जे किछु हो....

एक बातमे हम खट्टर ककाक अत्यंत आभारी छियनि, जे ओ एक महा-पंडितक सभटा शास्त्रीय भड़ांसकेँ अपन व्यक्तित्वपर ओढ़िकऽ साहित्य गंगामे प्रवाहित कऽ देलन्हि ! नहि तँ, के जानैय-ए, जँ प्रो० हरिमोहन झाक एहि तर्क वितर्ककेँ समुचित निकास नहि भेटैत, तँ कोन-ने-कोन गजब भऽ जयतै ? हुनक 'खंडन खंड-खाद्य'क अद्भुत रसास्वादन ओहि मित्र-मंडलीएँ केँ भोगऽ पड़तय, जे हुनका घनिष्ठता प्राप्त करितय ! आ, तखन फेर क्यो किये कहितै, जे हरिमोहन बाबूक मुँहसँ कखनो ज्ञान-विज्ञानक गप्प नहि सुनइ छी ? हौ बाबू, सुनब कोना कऽ ? ओ गप्प तँ सब बटोरिकऽ खट्टर कका लऽ गेलनि ! आब जँ ई कथा-वार्त्ता सुनबाक मोन होए, तँ चल जाउ लग ! आ, ओ जेना अहीं सनक सुधी-सरस श्रोताक प्रतीक्षामे भंगघोटना लेने बैसल छथि ! ओ अहाँकेँ तेहन ने लौंगी मरचाइक धुक्कनि देताह की अहाँक सब सर्दी-बोखार तत्काले पड़ा जायत ! आ, अहाँ फुक्कल-फाकल भऽ जायब ! मुदा, एक बातसँ सावधान रहब ! 'खट्टर ककाक तरंग'मे भसिया कऽ अहाँ घोर नास्तिक ने बनि जाइ ! जेकर सभावना सदैव बनल रहइ छै ! तेँ हुनक विनोदकेँ विनोदार्थे सुनब—आ, घर घुरिकऽ अबैत काल—"यच्छूत्वं तच्छ्रु गुरुवे नमः ।" कहि प्रणाम कऽ लेबनि !

धार्मिक कृत्य कीर्तन-भजन, यज्ञ-जाप, पूजा-पाठ आदि विषयक सम्बन्धमे हरिमोहन बाबूकेँ कोनो विचार-विमर्श नहि करैत देखि कऽ लोककेँ इहो बुझना जाइत छै, ओ कतौ नास्तिक तँ नहि छथि ! मुदा, शास्त्रमे नास्तिक ककरा कहल जाइत छै, ई कतहु ककरो स्पष्ट भऽ कऽ विदित नहि छै—तेँ ककरो सोझे नास्तिक मानि लेब अपने बुद्धिक देवालियापन सिद्ध होयत। ओना सरस साहित्यिक व्यक्ति कखनो नास्तिक नहि भऽ सकै अछि—कोनो अर्थमे नहि ! तखन ई भऽ सकैत अछि जे ओकर आस्तिकता ततेक गंभीर होए, जे 'आधा-मात्र गगरी' जकाँ ओहिना राह-बाटमे निरर्थक छलकैत नहि रहैत होए ! एहि संदर्भमे एकटा महिला छथिन, 'अहल्या'—ओ आनन्द-मार्गी छथिन। बाबामे पूर्ण श्रद्धा रखैत छथिन ! बाबाक प्रति भक्ति प्रकट करय-बला आत्म निवेदन-परक स्वरमे गाबि कऽ सुनबैत छथिन—ओ 'अहल्या' जी सँ भक्ति परक गीत सुनि आनन्दमे मगन भऽ कऽ झूमि उठैत रहथिन ! जखन आनन्दमार्गी 'बाबा' क स्तुति गानसँ हुनका एतेक प्रेम भऽ सकइ छनि, तँ आन धार्मिक विषय-वस्तुसँ उपराग किये होयतनि ! ओना, अन्ध-विश्वास रूढ़ि, धार्मिक मदान्धता, जादू-टोना, चमत्कार, तंत्र-मंत्र आदिकेँ ओ कोनो खास महत्त्व नहि दै छथिन, आ सबकेँ एके लाठीसँ हाँकि कऽ खेतसँ निकाल-बाहर कऽ दै छथिन, तेँ यदि हुनका नास्तिक मानल जाए, तँ सर्व-साधारणक दृष्टिएँ उचिते थिक ! कारण जे ओकर पहुँचब ताही ठाम धरि अछि !

समाज-सुधारोसँ हुनका दिलचस्पी रहैत छनि, आ मउका भेटनि तऽ (लेखनी द्वारा जे कयने छथि, से सर्व-विदिते छै) प्रत्यक्षो किछु करबा ले तत्पर भऽ जाइत छथि ! एक बेर तेहने संयोग लागि गेलनि

हुँ स्वयं अगुआ बनि दू-टा कायस्थ परिवारक लड़िका-लड़िकीकेँ दोसर परिवारक तेहने योग्य लड़िका-लड़िकीक संग गोलट विवाह करा देलथिन—नाम मात्रेक खर्चमे, जाहिसँ दूनू परिवारमे खुशीक लहरि उठि गेल ! कतौ कोनो युवक-युवतीक विवाह जँ बिना दहेजक होइत सुनैत छथिन, तँ बहुत प्रसन्न भऽ आशीर्वादक मंगल-वर्षा करय लगइ छथिन !

हुनका संगमे हमर बहुत रास खेल भेल अछि ! गुल्ली-डंडा आ चित्त-कबड्डीसँ लऽ कऽ फुटवाल-क्रिकेट धरि ! यद्यपि ई सभ खेल मनोराज्यमे भेल अछि, मुदा, शतरंज तऽ वास्तविक रूप धऽ लेने छलय ! शतरंजक अपूर्व महिमा छैक ! शतरंजक, माने सै प्रकारक रंज, अर्थात् ठेठ भाषामे, क्रोध, आवेश, रूसा-फूली ! से सब तँ भेले छै, शतरंजक खेलो भेल छै ! एक दिन हुनका ओहि ठाम शतरंजक गोटी देखलयनि आ हमर नजरि पड़िते पूछि देलनि—अहाँ शतरंज खेलाइ छी ?

बस, ओहि दिन जे शतरंज पसरि गेल, से संध्या काल प्राय: रोज चलय लागल ! जाड़क रातिमे नौ-दस बजे ठिठुरल घर जाइत रहीं ! ओम्हरसँ उमाशंकर वर्मा सेहो आबि जायल करथि। सबसँ बढ़ि कऽ मजा त' तखन आबय, जखन शतरंजक चैम्पीयन एकटा पंडित जी महाराज कतहु सँ घूमैत-फिरैत पटना आबि जाथि आ हरिमोहन बाबूक अतिथि बनथि !

बहुत दिन धरि ई खेल चलैत रहल। कखनो हम हारि जाइ, तँ तखनो हुनको हारऽ पड़नि। तावत धरि खेल चालू रहय, जावत धरि ओ हारि ने जाथि ! जीतपर हुनका उत्साह बढ़ल जाइनि। हारले पर कहथि—"आब छोड़ि दिअऽ !"

एहि बीचमे एक दिन पटनामे आयोजित शतरंजक एकटा चैम्पियनशिप प्रतियोगिता देखलहुँ, जे इंजीनियरिंग कालेजक हालमे भेल छलय ! प्रतियोगितामे महाराष्ट्रसँ आयलि 'रोहिणी' नामक एकटा महिला खेलाड़ी आ ओकर छोट बहिन बहुत दिन धरि हमर सभक गोष्ठीमे चर्चाक विषय बनलि रहलि। हरिमोहन बाबू बड़े मनोयोगपूर्वक ओहि दूनू बहीनक खेल देखलनि आ बहुत दिन धरि ओ स्मरण कैल गेलि !

ई हुनकामे विशेष गुण छनि, जे कोनो प्रतिभाशाली, गुणज्ञ, होनहार कलाकार होथि आ हुनकर संपर्कमे आबि जाथि, तँ हुनका आसमान पर चढ़यबामे कनेको विलम्ब नहि करथिन ! एहने एकटा कलाकार रहथिन, समस्तीपुरवाली शारदा सिनहा !

हम शतरंजक गप्प कहैत छलहुँ। एकदिन हरिमोहन बाबू हमरा आगू शतरंज पसारि देने रहथि—"डाक्टर कहलक अछि जे कहुना मोनकेँ खेल मे रमौने रहू जे चिन्ता-फिकिर फराक रहय !" तहिना एकदिन स्वयं कहै छथि—"डाक्टर मना करय-ए जे शतरंज नहि खेलू। दिमाग पर जोर पड़इ छै !" आ हठात् उसरि गेल शतरंजक खेल !

ओना शतरंजसँ हमर विरक्ति प्रारम्भेसँ छल ! किन्तु, हरिमोहन बाबूक रोच राखइ लै शतरंज खेलऽ लगलौं, तँ मुइल गाछ जेना पनकि गेल ! एक बेर, फेर ओहिसँ पुराने आसक्ति पैदा भऽ गेल आ जमैत-जमैत जमि गेल, तँ साँझ होइते मोन कछमछ करऽ लागय जे कौखन हरिमोहन बाबूक ओहि ठाम पहुँची आ शतरंजक बाजी शुरू होए ! तेँ एकाएक हरिमोहन बाबू जे खेल उसारि देलनि, ताहिसँ साँचे-साँच कहू, बड़ मोन केनादन भऽ गेल ! सोचमे पड़ि गेलहुँ, जे देखू ! गाछ पर चढ़ा कऽ खसायब एकरे त नहि कहय छै, जे आइ हरिमोहन बाबू कयलनि-ए !

मुदा, हरिमोहन बाबू स्वयं जखन गाँज घर कयलनि, तखन कपार ठोकि कऽ हमहूँ बैसि रहलहुँ !

हँ, कहियो-कहियो किछु साहित्यिको गप्प चलैत रहय। ताहिमे, पुरान साहित्यकार तँ कम्मे होइत रहथि ! जँ चर्चमे आबैत रहथि तँ दू-चारि स्तुति-परक वाक्य अथवा संस्मृति-संस्मरणमे विदा कऽ देल जाइत रहथि ! बेर-बेर आबथि तँ नवीन मुक्तबाधी साहित्यकार आ कवि जिनका प्रति हरिमोहन बाबूक नितांत प्रतिपक्षी विचार रहैत छनि। नव कविताक रचनाकार कवि लोकनि भेलाह स्वयंसिद्ध, स्वनामधन्य, सर्वतंत्र स्वतंत्र, स्वच्छन्द; छन्द, रस, अलंकार सभक टांग तोड़ऽवला—हरिमोहनकें से एकदम पसिन्न ने !

"एँ-औ ? ओ कवि-लोकनि की लिखैत छथि, अहाँकें अर्थ लगइ-ए ? बूझइ छी ?" हरिमोहन बाबू विकट सवाल करइ छथि ! हम मुश्किलमे पड़ि जाइ छी !

मुदा ओ दिन आ ओ वृन्दावन कोना बिसरल जा सकैत अछि, जाहि ठाम जानि ने कतेक रास-लीला भेल छलय ! विद्यापतिक समस्त पदावलीक सभटा भाव-भंगी जेना रूपायित भऽ कऽ साकार-सदेह ठाढ़ भऽ गेल होए। नोंक-झोंक, मान-दान, रूसब-मनायब। कुंज-विहार। हम कतेक बेर विगड़ि कऽ चलि आबी, जे आब फेर ओहिठाम पयर नहि धरब। मुदा, बिहाने भऽ कऽ पुनः ओहिठाम अपने आप पयर पहुँचि जाए- कोना, से ने जानि। ओ कहथि—"हमरा सँ खिसिया गेल छलियै ?"

भला, अहुना कतहु होइ छै ? हमरा चाह पीबऽक नहि मोन होइत अछि। अहाँ वलजोरी कहैत छियै—"एक घोंट पीबि लिअऽ ! लाओ जी बहादुर ! जल्दी लाओ !" हमरा खैंवाक मोन नहि अछि, अहाँ आगूमे की ने की राखि दै छियै हमरा कतौ जयबाक नहि मोन होइ-ए, अहाँ अपना गर्जे कहै छी "चलू, घूमऽ ले ! —हे असकर हमरा साहस नहि होइ-ए ! अहाँ संगमे रहब, तँ सहारा भेटत ! जानि ने, कतऽ खसि पड़ी !" मुदा, हमरा की बुझइ-छियै ? हम साधारण लोक—आ, अहाँ महा-पुरुष ! कहाँ-कहाँ हम अहाँकें सम्हारने फिरब ? —"हे कनेक फलाँठाम हमर ई समाद लेने जाउ ! जाइते छी ओम्हर, तँ हुनका कहि देबनि !" हौ जी, हम की कोनो समदिया छी ! कोनो आनकें पठा नहि होइ-ए ! एकबेर, जखन, शतरंज खेल ओ अपनहि ई कहि कऽ उसारि देलनि, जे डाक्टर मना कयने अछि, हमरा मोनमे परम विरक्तिक भावना भरि देलनि ! मोन मसोसि कऽ रहि गेल छलहुँ ओहि दिन। आ, तकरो छ मासक बाद फेर कोना ने कोना कहैत छथि, शतरंज खेलू ! हमरा बिसरल नहि ओहि उसरल दिनक बात। कहलियनि, जोर दऽ कऽ एक बेर कहलियनि, नहि, नहि ! हम नहि खेलायब ! नहि खेलायब, नहि......

आ, ओ अपन जिद्दमे शतरंज लावऽ ले कमराक अन्दर गेलाह। पहिने बाहरे बरामदामे बैसल छलहुँ कि हम आँखि मूनि कऽ पड़यलहुँ ओतऽ सँ, यैह ले, वैह ले ! ...ओ शतरंज लऽ कऽ बाहर आयल होयताह, तखन हमरा नहि देखि कऽ मोनमे हमरा प्रति केहन भावना कयने होयताह, से तँ वैह जानथि, की भगवाने। मुदा, दोसर दिन फेर ओहिठाम पहुँचइ छी, तँ वैह "मधुर गीतम्"क रेकार्ड बाजि रहल अछि। वैह चाह, वैह जलपान ! वैह गाओल गीत फेर गाओल जा रहल अछि !

□

युग-ध्वनि

श्री केदार कानन

रचनाकार समाजक सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी होइत अछि। ओकरा परिवेश आ युग चेतना सभसँ वेसी प्रभावित करैत छैक आ ओएह साहित्यक रूप लऽ आविर्भूत होइत छैक। हरिमोहन बाबूक रचना हिनका युगीन महत्त्वसँ ऊपर कालजयी बना दैत छनि।

प्रो० हरिमोहन बाबू संक्रमण युगक साहित्यिक छथि। हिनका युगमे मिथिलाक सामाजिक स्थिति बड़ करुण, दयनीय आ विकृत छलैक। धार्मिक अन्धविश्वास, सामाजिक कुरीति, लचरल आर्थिक-स्वरूप एकर सही स्वरूपकेँ नष्ट आ भ्रष्ट कऽ देने छल। लोक यथास्थितिवादी आ नियतिवादी भऽ गेल छल। स्वार्थ, जड़ता, लोभ, ईर्ष्या, मोह, धर्मान्धता समाजक गत्र-गत्रमे व्याप्त छल।

हरिमोहन बाबू अंग्रेजी-शिक्षा प्राप्त कएने छलाह। जाहि वर्गसँ ई आयल छलाह, ओहि वर्गक स्थितिक पोर-पोरसँ ई परिचित रहथि। समाजक परिवेशमे जतय कतहु हिनका खटकऽ वला बात भेटि जाइत छलनि, ओकरा सही ढंगसँ पकड़ि हास्य आ व्यंग्यक माध्यमे व्यक्त कयलनि हरिमोहन बाबू।

स्थितिक जड़ता पर, समाजक मूढ़ता पर, ओकर अनैतिक आ अनपेक्षित क्रिया-कलाप पर आ टिपिकल मैथिल-प्रवृत्ति पर प्रहार करब हिनक रचनाक उद्देश्य थिकनि। समाजक गति एवं स्थिति केँ अपन अन्तश्चक्षुसँ देखि, ओकरा अविकल प्रस्तुत करबाक अपार क्षमता छनि हिनकामे।

उपेक्षित कम नहि रहलाह हरिमोहन बाबू। अपन सही आ मौलिक दृष्टिक कारणेँ हिनका समाजक एक खास वर्गक सदति उपेक्षे भेटलनि। ओ वर्ग छल जे समाजकेँ एखनहुँ अपन चाँगुरमे राखऽ चाहैत अछि, आ समाजमे कोनो नव प्रयोगक विरोध करैत अछि। मुदा हिनक सदाबहार आ अत्यन्त उदार व्यक्तित्व एहि सभक परवाहि नहि कयलक। निरन्तर अपन पथ पर आगाँ बढ़ैत गेलनि हिनक रचना।

हरिमोहन बाबूक रचनाक मुख्य विषय तँ नहि मुदा ई वर्ग एकटा विषय अवश्य थिकनि। ओ एहि वर्गक सत्यकेँ, बीभत्स आ कुरूप स्थितिकेँ, यथास्थितिवादी प्रवृत्तिकेँ रंगि-टीपिकेँ पाठक वर्गसँ साक्षात्कार करौलनि। ओ वर्ग अपन रहस्योद्घाटन केँ देखि विचलित आ आक्रामक भऽ गेल।

ई लेखकक अपार सफलताक द्योतक छल। हिनक रचनामे ई ताकति अछि जे सामान्य तरहें पढ़ैत काल पाठक खूब हँसि लैत अछि, लेखकके एहन गोनलग्गू आ अद्भुत रचनाक लेल धन्यवाद दैत अछि मुदा, कनियें गम्भीरतासँ सोचला पर, चिन्तन-मनन कयला पर, एकटा आँगुर अपने दिस उठि जाइत छैक। इएह आँगुर, इएह सत्य प्रो० हरिमोहन बाबूक रचनाक अपार सफलता थिक।

पाठकक बीचमे हिनक रचना अद्भुत लोकप्रिय भेल। साहित्यक एकटा उद्देश्य मनोरंजन सेहो होइत छैक। थाकल ठेहिआएल, श्रान्त-क्लान्त, अपन स्थितिसँ ऊबल लोकके मनोरंजन चाहवे करी। हुनका सभकें हिनक हास्य-व्यंग्यसँ ओत-प्रोत रचना पर्याप्त मनोरंजन कयलक। हिनक सहज-सुलभ गमैया आ कलकल-छलछल गंगा सन प्रवाहित होइत मधुर भाषा पाठक वर्गकें भीतर धरि छूलक आ तृप्त कयलक।

मिथिलामे जड़ता एखनो छैक। हाल धरि स्त्री-शिक्षा-विरोधी लोक सभ छलाह। पर्दा-प्रथा अपन उत्कर्ष पर छल। मैथिल-स्त्रीके 'बुच्चीदाइ' बनलि रहि जायब नियति भऽ गेल छलनि। ओहि वर्गकें कोनो सामाजिक अधिकार प्राप्त नहि छलैक। चूल्हि फूकब, अपन नूआके मलिछौंह बनौने रहब, आँगन नीपब-बहारब, साँझके तुलसीचौड़ा लग दीप जरायब, कपड़ा खीचब-सुखायब, संतानोत्पत्ति करब आ अपन पति आ परिवारक सोझाँ दुनू 'टेम' थारी भरि अन्न परसिकें राखि देबाक अतिरिक्त हुनका सभकें आन कोनो सुविधा आ आन कोनो काज नहि रहनि।

एहि जड़ताकें सर्वप्रथम अपना साहित्यमे हरिमोहने बाबू तोड़लनि। ततबे नहि, ओकर दिशा निर्देशन सेहो कयलनि। आरम्भमे पुरातनपंथीकें ई बरदाश्त नहि भेलनि मुदा ई तँ युगक मौलिक माँग छलैक। कालक प्रवाहकें के रोकि सकैत छल ? हिनक रचनाक प्रखर प्रवाह ओहि सड़ल-गलल परम्पराक चट्टानकें तौड़ैत-धाँगैत बहुत आगाँ, जन जीवनक समतल आ सहज भूमि पर पसरि गेल छल।

आइ मिथिलामे ओतेक भयंकर रूपमे पर्दा-प्रथा नहि अछि, स्त्री-अशिक्षा नहि अछि। आइ मैथिल स्त्रीकें सभटा अधिकार सहज-सुलभ प्राप्त छैक। 'बुच्चीदाइ' बनलि रहि जायब ककरो नियति नहि छैक। समय-संकेतकें आब सभ चिन्हैत अछि, कर्मक महत्त्वकें सभ स्वीकार कऽ लेलक— एहि सभ परिवर्त्तनमे महत्त्वपूर्ण योगदान हरिमोहने बाबूक साहित्यकें छनि।

एकटा विशाल पाठक वर्गकें तैयार कयलनि हरिमोहन बाबू। मैथिलीकें लोकप्रिय बनयबामे, एहि भाषाक पोर-पोरमे माधुर्य भरबामे, एहि भाषाकें आन-आन भारतीय भाषाक समकक्ष आनि देबामे हरिमोहन बाबू जतेक सक्षम आ सार्थक भेलाह ओतेक आन केओ साहित्यिक व्यक्तित्व नहि। हरिमोहन बाबू अपना तरहक नितान्त एकसर छथि।

खाहे मिथिलाक धर्मान्धता, अन्धविश्वास, स्त्री-अशिक्षा, पर्दा-प्रथा दूर करबाक प्रसंग हो, खाहे मैथिलीक गद्यकें स्थिर कऽ सुदृढ़ करबाक प्रसंग हो, खाहे मैथिलीकें व्यापक लोकप्रियता दिअय-बाक प्रसंग हो वा एकटा विशाल पाठक वर्ग तैयार करयबाक प्रसंग हो—प्रो० हरिमोहन बाबू सभ प्रसंगक अगिला पाँतिक पहिल साहित्यिक व्यक्तित्वक रूपमे सभदिन प्रासंगिक रहताह।



हरिमोहन झा : एक मूल्यांकन

श्री रामचन्द्र लाल दास

रंगशाला श्री हरिमोहन झा की हास्य-रचना की एक और कड़ी है।

हास्य-व्यंग्य के माध्यम से जीवन की विकृतियों पर जो प्रहार किये गये हैं वे हमारी दुखती रग को तो छूते ही हैं, बहुत कुछ सोचने को विवश भी करते हैं। श्री झाजी ने इसमें विभिन्न रंगों के चित्र उकेरे हैं।

गुदगुदाने की सीमा तक प्रफुल्लित करते हुए चेतना तंत्र को झंकृत कर देना लेखक की विशेपता है। रंगशाला के पात्र हँसते हँसाते विसंगति की परिस्थितियों को मूल उत्स तक ले जाकर अनायास ही दार्शनिक प्रभाव छोड़ जाते हैं।

रसमय संस्कृति की अवधारणा, अभाव में भी जीवन्तता का भाव, उक्ति-वैचित्र्य में परिहास का आनन्दातिरेक, यह मिथिलांचल की विशेषता है। अपनी सहज विनोदी प्रवृत्ति को जीवन की दैनन्दिन घटनाओं के माध्यम से एक प्रवीण चितेरा की नाईं लेखक ने अपने पात्रों के द्वारा व्यक्त करवाने में सफलता प्राप्त की है।

लेखक दर्शनशास्त्र के विद्वान हैं और अपने कथ्य को संवारने के क्रम में वे इसे दार्शनिकता की चाशनी में यदा-कदा डुवो देते हैं पर इससे न तो कथाशिल्प में गतिरोध आता है और नहीं विषय-वस्तु ही वोझिल होती है।

आंचलिक परिवेश में सहज सुकुमार अकृत्रिम आडम्बरहीन सौन्दर्य की दृष्टि सर्वत्र परिलक्षित होती है। वह चाहे 'रंगशाला' की नायिका के वक्ष-सौन्दर्य की तीव्रता हो या 'महाराज विजय' की अन्तःपुर कथा में केलि प्रसंग का परिचारिकाओं द्वारा प्रकारान्तर से वर्णन अथवा 'बौआक दान' में "स्तन पान कराने से यौवन के अधःपतन" का उल्लेख। 'प्रेसक लीला' में तो प्रेस की समस्त कथावस्तु को शब्दों की वाजीगरी से सेक्स उपादानों की ओर मोड़ दिया गया है। मैथिली भाषा एवं साहित्य का माधुर्य एवं कोमलता जगतविदित है। इसी अवधारणा के तहत 'मदन्तिका' एवं 'सासुरक चिह्न' की तथाकथित नायिका के पराक्रम वर्णन जैसे उत्तेजक क्षणों में भी क्रमशः 'पीनस्तनी' वा 'महाराजक अपने जी चपचपा गेलैन्ह अछि' 'कः समः करिवर्यस्य मालतीपुष्पमर्दने' तथा 'मुग्धा नायिका नहि, जुआएल तरुणी' आदि शब्दों से कथाकार ने अपनी सरस दृष्टि का परिचय दिया है।

सम्पूर्ण 'रंगशाला' में सूत्रधार का कथानक भले ही व्यापक न हो परंच कथोपकथन एवं विशिष्ट प्रहार बड़ा ही सटीक बन पड़ा है।

शब्द कौतुक से कहानी को एक नया मोड़ दे देना एवं हास्य में शृंगार के लास्य का मोती पिरो देना कथाकार की अन्यतम विशेषता है जो उद्देश्य विशेष को व्यक्त करने के लिये प्रयुक्त होने पर भी कहीं दुरूह नहीं दीखता; यथा 'दरोगाजीक मोक्ष' में आलिंगन-चुम्बन के उद्दीपन को भी बड़ी ही सफाई से शब्द जाल में उलझाकर पत्र पूर्ति कर दी गयी है। यह कथानक को सुखद नाटकीय मोड़ देता ही है साथ ही अन्तर्मन में प्रच्छन्न शृंगारलोलुपता की एक झलक भी प्रकारान्तर से दे जाता है। उसी प्रकार 'देवीजीक संस्कार'मे "नयनालस्य सँ रजनि रहस्यकेँ अर्द्ध-व्यंजित करैत, गजमर्दित मालती जकाँ दलमलित श्रीमती शन्नो देवी केलि भवन सौं बहरा रहल छथि" में भी लेखक की रससिद्ध लेखनी ने उक्ति-वैचित्र्य से अपने अन्तर्मन में छिपे शृंगार बोध को उजागर करने में कोई कोताही नहीं बरती है।

लेखक ने विसंगति के विभिन्न आयामों को अपने पात्रों के माध्यम से छूने का प्रयास किया है जो आज भी मिथिलांचल में नासूर की तरह व्याप्त हैं। लगता है जैसे इनकी रचनाओं की सभी घटनायें हमारे आस पास की हों और हम इस पुस्तक के माध्यम से कहीं अपने ही का साक्षात्कार कर रहे होते हैं।

कहने को तो समाज में व्याप्त कुरीतियों, जातीय सांस्कृतिक चेतना के लोप, एवं बौद्धिक पिछड़ापन (रेलक अनुभव) आदि समस्याओं की बड़ी ही सटीक व्याख्या की गयी है, परन्तु इनमें दिशा-निर्देश का अभाव है। सोद्देश्य एवं सार्थक साहित्य वही है जो अन्याय एवं असंगतियों के विरुद्ध लड़ने की प्रेरणा दे। हमारे जैसे पतनशील, क्षीणमूल्य समाज में रचनात्मक संघर्ष की भूमिका का उद्बोधन लेखकीय कर्त्तव्य है। वे समाज के नासूर को छू भर देते हैं। पर यह नहीं जानते कि छूने से नासूर के रोगी को मर्मान्तक पीड़ा होती है, निदान कुछ भी नहीं हो पाता।

वैसे 'धोखा', 'प्रेसक लीला', 'आदर्श भोजन', 'रेशमी दोलाइ', 'चिकित्साक चक्र', 'काली वाड़ीक चोर', 'दरोगाजीक मोछ' आदि में मानव स्वभाव के सूक्ष्मतम भावों का चित्रण बड़ी ही सफलतापूर्वक किया गया है, जो अपने आप में व्यापक प्रभाव छोड़ता है। 'कन्याक जीवन' में कथा-क्रम के क्षेपक में ही वर्णित पूर्णियां के मलेरिया, कोशीका विनाशकारी प्रभाव, ऋणग्रस्त प्राकृतिक विभीषिका त्रस्त समाज की झलक अनायास ही दे जाते हैं। ये सभी प्रभावोत्पादकता के क्षेत्र में कथा को समृद्ध बनाते हैं। 'सानुरक चिह्न' में मैथिल लोकाचार एवं दाम्पत्य जीवन की मधुरिमा एवं अत्यंत ही रसात्मक वैवाहिक अनुभव का अन्तरंग वर्णन मिलता है जो अत्यंत स्वाभाविक है। अभावों से जूझते, परम्परा जर्जरित विशृंखलित सामाजिक मूल्यों के बीच जीते मैथिल समाज के अन्तर्मन मे रचीबसी सुकुमार भावना एवं सरसता की जो प्रतिच्छवि यह कथा-संग्रह अजाने ही दिखा जाता है वह लेखक की अन्यतम सफलता है।

कुल मिलाकर यह कथा-संग्रह गुण प्रभाव विस्तार माधुर्य एवं प्रेरणा का एक गुलदस्ता है जिसमें विभिन्न रचना-कुसुम की अप्रतिम सुगंध के बावजूद गंध-विस्तार-प्रसार क्षेत्र सीमित है।

बांला साहित्येर व्यंग्य रचना ओ मैथिली हास्यरसिक हरिमोहन झा

डा० देवनारायण राय

अध्यापक हरिमोहन झा सम्पर्के लिखते हबे जेने ताँह साहित्य निये पड़ा-शुना आरम्भ करि सब पड़ेछि बलले बाड़िये बला हबे, एक टु उलटे-पालटे देखेछि मात्र। किन्तु ये टुकु देखेछि तातेइ विस्मित हयेछि। आर बारबार मने पड़ेछे किछु दिन आगे ताँके पाटना विश्वविद्यालयेर दर्शनशास्त्रेर अध्यक्ष हिसेबे येमन देखेछि। तखन तो जाना छिल ना खट्टर ककार तरङ्गेर मत ग्रन्थेर रचयिता इनि। शुधु जानताम इनि एकजन मैथिली साहित्यिक। दीर्घदेही, चोखे चशमा, धुति-जामा परिहित एइ भद्रलोक के बहुवार काछाकाछि पेयेछि, नमस्कार-विनिमय करे सौजन्य टुकु जेनियेइ क्षान्त हयेछि। एखन ताँर साहित्येर झलपले एसे नतून भावे ताँके आविष्कार करछि। आर औत्सुक्य निये अपेक्षा करछि ताँर लेखनी थेके एबार कि बेरोबे।

बांला ओ मैथिली भाषा भग्नी स्थानीया एकथा आमरा भाषातत्त्वेर कल्याणे बहु आगे थेकेइ जानि। एवं एटाओ जानि ये विद्यापति मैथिल कवि हलेओ बांला साहित्येर सङ्गे ओतप्रोत भावे युक्त। एइ तो ऊनविंश शतकेर शेषेर दिके आविष्कृत हयेछे पदकर्ता विद्यापति मैथिल, ता ना हले तो बाङाली बलेइ परिचित छिलेन। आर द्वारभाङ्गा तो 'द्वारवङ्ग', बांला देशेर तोरण द्वार। एमनि आरो बहु वस्तु आछे याते बाङाली ओ मैथिलके एक करे रेखेछे। सांस्कृतिक मिलनेर ओ दृष्टान्त अनेक। दुर्गापूजा तो उभयेरइ श्रेष्ठ उत्सव।

पाश्चात्य प्रचारे बांला गद्येर विकाश हले उपन्यास ओ उन्नत धरणेर प्रबन्ध रचना आरम्भ हय, मैथिली तेओ ताइ, विशेष करे विंश शतकेइ आधुनिक मैथिली साहित्य गड़े उठेछे। एइ शतके अनेकेइ लिखेछेन एवं लिखबेन, हरिमोहन झा एँदेर मध्ये अन्यतम। कथा-साहित्य ओ रस-रचनाय इनि यथेष्ट कृतित्वेर अधिकारी। 'कन्यादान', 'द्विरागमन', 'प्रणम्य देवता', 'रङ्गशाला', 'चर्चरी', 'खट्टर ककाक तरङ्ग' प्रभृति ग्रन्थ रचना करे हरिमोहन झा मैथिली साहित्ये प्रसिद्ध कथासाहित्यिक एवं व्यंग-स्रष्टा। दर्शनेर अध्यापक एइ व्यक्तिर मध्ये दार्शनिक प्रज्ञार सङ्गे-सङ्गे ये साहित्यिक सत्ताओ लुकिये आछे ता विस्मयकर। दीर्घदिन दर्शननिये चिन्ता करेओ साहित्य रस विन्दुमात्र शुष्क हयनि। मानवजीवने रस चर्चा ओ आत्मा-परमात्मार चिन्ता दुइ टि समान्तराल चलेछे।

उपरन्तु बला याय दर्शनेर गभीर ज्ञानके यथेष्ट काजे लागियेछेन 'खट्टर ककाक तरङ्ग' ग्रन्थे। खट्टर ककार वेद, पुराण, रामायण, महाभारतेर प्रसंगे येन एकजन दार्शनिक उँकि देय। दर्शनेर गभीर ज्ञान थाकार जन्येइ लेखकेर पक्षे सम्भव हयेछे इच्छामतो मतवाद सृष्टि करे युक्ति दिये प्रतिष्ठित करा।

मैथिली साहित्ये हास्यरसेर आमदानी खुब बेशि दिनेर नय। आर हास्यरसेर अतिनिकट संगी व्यंग, सुतरां व्यंग ओ खूब बेशि दिनेर नय। व्यंग उच्च श्रेणीर साहित्य माध्यम हलेओ अत्युच्च श्रेणीर कि ना ता निये संशयओ आछे। सुतरां व्यंग साहित्य के युग कालेर गण्डि पेरिये एसे ठिके थाकते हले यथेष्ट बलिष्ठ हते हबे। हरिमोहन झार व्यंग रचनाय सेइ बलिष्टता आछे, ताइ एँर रचना कालजयी हबे एकथा बला याय। व्यंग रचनार मध्येओ 'खट्टर ककाक तरंग' सर्वश्रेष्ठ। खट्टर खुड़ो सिद्धि (भाङ) तैरी करते-करते कत रकमेर प्रसंगेर आलोचना करे एवं शेषे सिद्धिपान करे विषयेर परिसमाप्ति घोषणा करे। एगुलो आमादेर स्मरण करिये देय बंकिमचन्द्रेर कमलाकान्त चक्रवर्तीके। कमलाकान्त आफिएर नेशाय झिमुते झिमुते जगत टाके नतून दृष्टिते देखेछे। तार चोखे फुटे उठेछे बाङालीदेर दुर्दशार आरम्भ काल त्रयोदश शताब्दी, वखतियारकर्तृक बांला देशेर जय। आर मने हयेछे एका स्वार्थपर हये बेँचे थेके सुख नेइ, यथार्थ सुख होल परेर उपकार करातेइ। आबार कखनो मने हयेछे मानुषेरा विभिन्न धरणेर कलेर मतो। एइ उद्‌भट कल्पना मध्येओ संगति आछे। सादा चोखेर सलालोचना, असंगतिर खोंचा सहजे केउइ हजम करते पारेना अथ च अफिमखोर कमलाकान्त यदि किछु बलेओ ता हामते हामते सह्य करा जाय नेशाखोरेर प्रलापोक्ति बले। खट्टर खुड़ओ तो ताइ सिद्धिर नेशाय यदि किछु बलेओ थाके ताके सह्य करा कठिन हवे ना। से जीवनेर जानलाय बसे जीवनके देखे तारइ उपर कल्पनार रंग बुलिये कथार फुलझड़ी पाठकके उपहार दिये छे। खट्टर खुड़ो मिथिलार सस्कृति, प्राचीन सभ्यता, दर्शन शास्त्रेर रहस्य प्रभृति भिन्न-भिन्न विषय निये चमकप्रद तथ्य उपहार दिएछे। चाणक्येर जन्मभूमि मिथिलाय, महादेव मैथिल छिलेन एइ धरणेर मन्तव्येर पेछने खट्टर खुड़ो जे सब युक्ति देय ताते आमरा चमत्कृत ना होय परिना। दइ, चिंडे एवं चीनी अतिप्रिय खाद्य। एइ खाद्य तालिकार संगे दर्शनेर मोक्ष तत्वके युक्त कए हेयेछे। माछ बांङाली देर अति प्रिय। खट्टर खुड़ोरओ मत्स्यप्रियता आछे एवं से प्रमाण करे दियेछे माछेर उपकारिता। खट्टर खुड़ो जेभावे आलोचना करे आत्मप्रसाद लाभ करे ताते मने हय से त्रैलोक्यनाथ मुखोपाध्यायेर डमरुधरेर समगोत्रीय। व्यंग्य सृष्टि ते त्रैलोक्यनाथेर "डमरुचरित" एक अविस्मरणीय सृष्टि। जीवनेर निगूढ़ सत्यके एकटि हालका कामिक मूडे व्यक्त करा हयेछे। 'डमरुचरित' येन आमादेरइ चित्त मानसेर एक स्वच्छ दर्पण। ताइ एते आमादेरइ दोष, त्रुटि, दुर्बलतार प्रतिटि चिन्हके अति स्पष्ट रूपे देखते पाइ। लेखक तांर अभिज्ञता दिये जीवनके देखे छेन, जीवन के चेने छेन। देखेछेन मानुषेर भण्डामि, प्रवंचना, लोभ, लालसा, निष्ठुरता, कदर्यताके। जीवनेर एइ कुश्रीताके देखे-देखे तिनि मर्मान्तिक वेदना अनुभव करेछेन। आर डमरुधरेर माध्यमे आमादेर स्वभावेर सेइ हास्यकर असंगतिमय दुर्बलता गुलिके व्यक्त करे दियेछेन। ताइ डमरुधारेर मध्ये कोन व्यक्ति विशेषके तिनि व्यंग्य करेननि, करेछेन तत्कालीन ओ चिरकालीन बंगाली समाज ओ मानवस्वभावके। हरिमोहन झार "खट्टर ककाक तरंग" पड़ते-

पड़ते आमादेर अनुरूप चिन्ताइ जागे। खट्टर खुड़ोके तो व्यंग्य करा उद्देश्य नय लेखकेर, तिनि एइ चरित्रेर माध्यमे सामाजिक अनाचार, अव्यवस्था किंवा धर्मीय, साहित्यिक ओ आत्मप्रसादतुष्ट जे कोन रकमेर भण्डामिकेइ आक्रमण करेछेन।

बाङला साहित्येर डमरुधरेर उत्तर-पुरुषदेर देखते पाइ परशुरामेर (राजशेखर वसुर) रचनाय। त्रैलोक्यनाथ ओ परशुराम बाङला भाषार श्रेष्ठ व्यंग्य साहित्यिक। कालहिसेवे त्रैलोक्यनाथ आगे बलेइ ताँर प्रभाव परवर्तीकालेर परशुराम उपर सुप्रचुर। तबे एइ प्रभावे परशुरामेर प्रतिष्ठा ढाका पड़ेनि। ताँर हास्य रसेर विशेष प्रकृति प्रच्छन्न तिरस्कार। अजस्र गल्प लिखेछेन, विषयवस्तुर वैचित्र्यओ कम नय एवं सब गल्पेइ खुड़ानो आछे गूढ़ार्थ व्यंग्य मंतव्य। रचनार सूक्ष्मताय, व्यंग्येर तीक्ष्णता बुद्धिर अनुशीलने परशुरामेर श्रेष्ठत्व बाङला साहित्ये स्वीकृत। कि आधुनिक समाज, कि पौराणिक युग सबइ परशुरामेर कुठाराघाते छिन्न-भिन्न हयेछे। अनेकइ आबार बलेन परशुरामेर हाते पौराणिक नर-नारीर वा काहिनीर अपकर्ष साधित हयेछे। एकथा यथार्थ नय, तवे पुराणेर संगे परशुरामेर गल्प बलाय जे भेद घटेछे ता सत्य। एइ प्रभेद लेखकेर दृष्टिर प्रभेद। कालेर एवं लेखकेर दावी अनुसारे परशुरामेर हाते पुराणेर जन्मान्तर हयेछे बलले अन्याय हबे ना। एइ विषये येन हरिमोहन झार खट्टर खुड़ोर किछुटा मिल आछे। खट्टर खुड़ोर हातेओ एइ भावेइ वेद. पुराण रामायण, महाभारतेर रूपान्तर घटे गेछे। खट्टर खुड़ोर तत्व ग्रहणयोग्य कि ना ता विचार्य नय, एखाने विचार्य तार देखबार कौशलटा। चिराचरित कोन मंतव्यइ तार पछन्द नय, प्रति टि वस्तुके, काहिनी के नतून भावे विचार ना करले येन तार तृप्ति हय ना। माटिर संगे सम्पर्क रेखेइ सब किछु के विचार करते चाय।

बाङला साहित्येर व्यंग्य स्रष्टारा भिन्न परिवेशे, भिन्न काले बले रचना करेछेन तबु येन तार संगे मैथिली भाषाय रचित व्यंग्य रचना गुलिर कोथाओ योग सूत्र लक्षित हय। आसले व्यंग्य शिल्पीदेर मौलिक दृष्टिभंगितेइ मिल अछि। व्यंग्य स्रष्टारा ताँदेर संधानी दृष्टि जगतेर प्रति उन्मुख करे राखेन। तादेर पर्यवेक्षणे निपुण शिल्पी। सुतरां व्यंग्य जे बहुलांशेइ पर्यवेक्षण शक्ति निर्भर ए सत्य अनस्वीकार्य। याँर यतखानि एइ शक्ति आछे तिनि ततखानि व्यंग्य सृष्टिते सार्थक। कखनो कखनो व्यंग्यशिल्पी उच्च कल्पना शक्तिर प्रभावेइ समपर्यायमुक्त हये ओठेन। एइ समपर्यायमुक्त हओया उत्युच्च कल्पना शक्तिरइ फल, या हयेछे हरिमोहन झा ओ बङला व्यंग्य रचनार क्षेत्रे।

The Agnostic Existentialist

Dr. Basant Kumar Lal

[I]

Agnosticism and Existentialism are manifestly incompatible with each other. Agnosticism doubts the possibility of knowledge of reality and Existentialism proceeds on the presupposition of the centrality of man. As such, Agnosticism will obviously question the presuppositions of Existentialism itself. But, in spite of this apparent incompatibility it has been possible to cultivate and develop a philosophy of life by combining the essence of Agnosticism with that of Existentialism. That has been done very effectively by Achārya Shri Hari Mohan Jha. Let us try to elaborate.

One of the essential features of an agnostic attitude is that it is initially prepared to listen to every kind of assertion. The agnostic willingly suffers even fools seriously. The only condition that he observes is that he is ready to accept anything provided it is backed up by sound rational evidences. That is why the agnostic goes on questioning every assertion. He raises doubts about every proposal with the sole intention of forcing the proposer to come out with evidences. He suspends acceptance till evidences satisfying the doubt are given forth. He will also assert that he is not impatient—that he can wait, willing to "accept", provided the condition of producing rational evidences is finally satisfied.

The Existentialist, on the other hand, makes his thought essentially man-centric. He analyses the conditions of man, comes to discover the existential anxiety in and through which man has to live and finally comes to suggest a way in which man can live as man even in the midst of anxiety.

These two elements which constitute the essence of Agnosticism and of Existentialism respectively have been miraculously synthesised in the philosophy of life that Prof Hari Mohan Jha has lived through. Not that he has given his theoretic

attention to these thoughts in some such way, not that he has tried to codify these ideas or theorise about them in learned documents and discourses. He has, more or less, **lived** this philosophy, and persons who had the good fortune of being in his association for a long time, are in a position to determine and outline the nature of this philosophy. It is on account of this peculiarly synthetic character of his philosophy that enables us to describe the thinker in him as an **Agnostic Existentialist**. He is an agnostic because he is not prepared to accept anything unless it is supported by solid evidences. He is an existentialist because he recommends a way of life which would enable individuals to live in a manly way in spite of strifes and discords. This will be apparent as we proceed further.

[II]

Evidences in philosophy can be of various types, but for the sake of convenience they can be brougnt under two heads :**empirical** and **logical**. Empirical evidences relate to the conditions of intelligibility, and logical evidences exhibit the logical relationship of a proposition with another proposition from which it follows essentially.

The importace of empirical evidences lies in the fact that it is ultimately in terms of things known empirically that an idea or a thought becomes intelligible. Prof. Jha is keen on using this test of intelligibility on every kind of assertion including the metaphysical or the trans-empirical. He is not an atheist, he is not a thoroughgoing sceptic, he is not even ante-metaphysics. These impressions about his philosophic position are, at times, created by his strict adherence to the test of intelligibility outlined above. In fact he seems to be prepared to accept everything provided of course it comes through his test. Let us take a few examples. A Jaina scholar states his position about the possibility of the attainment of omniscience. The problem before Prof. Jha is to comprehend the concept of omniscience. 'How do you understand this concepts', he asks. He is told that it means 'all knowing'—that the omniscient knows everything. Prof. Jha at once applies his test of intelligibility by asking the following question, "supposing a few potatoes are put in the oven, will the omniscient know from before which one of them would be half-baked, which fully baked and which one would be over-baked ?' Obviously the supporter of the Kaivalya-theory is perplexed. Let us take another example. Somebody comes out with the assertion that God is personal. Now the concept of the personality of God has to be made intelligible. Prof. Jha naturally asks. "Why do you call God a Person ?' 'how do you understand Divine Personality ?' In what respects is the Divine personality similar to and in what respects different from human personality ?

He is told it is very much like human personality, the difference is not of quality but of degree. The doubter in Prof. Jha persists and he asks, 'Does God also use bathroom ?' The believer is puzzled. Both these examples are not from nowhere. They are actual example of Prof. Jha's use of the test of intelligibility in his various philosophic discourses.

At the first glance, one may dismiss these doubts as common place meant only to embarass protagonist of the views. But a little reflection will show that it exhibits an eagerness to reduce an otherwise unintelligible concept to intelligible terms. It proceeds on the presupposition that the ultimate units in terms of which an idea becomes intelligible are invariably experemential or empirical. It in a way forces the upholder of a view to clarify whether his concepts have an impirical base or not. In the examples given above the purpose of the questionings is obvious. These questionings would force the **Jaina scholar** or the **Religionist** to think whether **'omniscience'** or **'the concept of a Divine Person'** can be understood in the normal rational way or whether these concept are concepts of an entirely different kind. The agnostic forced everyone to avoid ambiguity.

Likewise, the usual way in which Prof. Jha seeks to understand every argumentation or assertion is by demanding the demonstration of the **Major Premise** from which the assertion follows. His pet mood is **Barbara**, and he feels that no logic can be adequate unless it is in the form of **Barbara**. He feels that an assertion can be justified if and only if it can be shown to be an instance of a universal assertion of that kind. Indeed it is not possible to discover a universal justification of a particular assertion. But for Prof. Jha, as it is not done, the validity of the assertion is not acceptable. Throughout his life and career he has used this methodology with effective success establishing thereby the fruitfulness of his Agnosticism.

III

In spite of his agnosticism Prof. Jha has been able to cultivate a way of dealing with practical affairs, which makes him, more or less, an existentialist of his own type. He is aware of the realities of the present day life. He is aware that the present-day technological society opens up a world of competition alluring men to enter into it with hectic activities. But, this worlds till leaves everything uncertain; and this uncertainty, on its turn, causes strifes, clash of passions, anxiety and an accompanying feeling of the ultimate superfluity of evrything. Prof. Jha is aware of all this ; but he also feels that it is possible to assert man's dignity aginst these situations. Strifes and Struggles are facts of life, but in spite of that, man can live **a life of love** showering his affection on all the near and dear ones.

And for this Prof. Jha has been able to evolve a maxim for ones conduct and behaviour in worldly affairs. One cannot practise love by being a recluse—from

a distance. For this one has to be in the midst of life's situations and must base his action on some maxim. For Prof. Jha the maxim of behaviour has to be concerned with actual dealings of life—with actual human inter-action. His maxim has both a positive and a negative content. The positive content of the maxim is 'Do good to others to the best of your ability'. This positive love is very difficult to practise. At times it becomes really difficult even to help, at times one is at a loss to decide what really would be the good act. At least when man is placed in a position of importance and is constrained to make choices, it is impossible for him to practise love in the positively objective way. A decision may be benificial to some one, but may go against someone else. Therefore, one is at a loss to decide how to do good to everybody. Therefore, Prof. Jha adds a second—a negative content to his maxim. This negative content is by far more vital. He says that if you cannot do good to everybody at least see that you do not harm any body. Your decisions may not be beneficial to everyone, but care should be taken to see that it does not harm any one – that if does not create any obstacle in the way of the well-being of anybody. One very extreme—almost a controversial example will illustrate this point. Prof. Jha once found himself in a very uncomfortable predicament. He was at that time the university Professor and Head of the department of Philosophy of Patna University. He was asked to recommend names of his colleagues for promotion. There were a few posts only and obviously only a few names could be recommended. He gave his recommendation in one sentence, "All those whose cases are being considered are suitable for promotion." Let us try to analyse his act without trying to work out a justification for it. From one point of view his recommendation was utterly inadequate—Prof. Jha can be accused even of not being able to justify his position. But Prof. Jha had based his action on a different criterion. He could clearly see that his one single action would either preserve or shatter the atmosphere of love prevailing in the department. He was guided by the negative aspect of his maxim. He felt that if he was not in a position to help everybody, his action should not harm anybody. His action was inadequate from the point of view of the requirements of the office that he was holding, but this shows that he was prepared to go even to that extent to practise his maxim of love. For him, the most basic thing in life is to live happily even in the midst of strife—promoting situations. Obviously this, in its own way, is an assertion of one's own personality against the demands of life – situations. This, in its own way, is a manly adherence to one's cherished aims of life. This is existential living.

●

द्वितीय खंड

हास्य ओ व्यंग्य

प० श्री मदन मोहन झा

भारतीय काव्यशास्त्रीय चिन्तनक एकमात्र स्वीकृत सिद्धान्त रस-सम्प्रदाय नहि थिक—ई बात यद्यपि सर्वथा सत्य अछि, तथापि ई मानबामे ककरो प्रायः आपत्ति नहि भय सकैछ जे भारतीय अलंकार-शास्त्रक परम्परामे रस-सम्प्रदाय अति प्राचीन ओ सभ सम्प्रदाय सँ सुप्रतिष्ठित सम्प्रदाय थिक। नाट्य-शास्त्रक प्रणेता भरतमुनि सँ रसगंगाधरकार पण्डितराज जगन्नाथ धरि रस-सम्प्रदायक महत्ता ओ सर्वसम्प्रदायश्रेष्ठता अक्षुण्ण अछि।

आचार्य भरत रसक संख्या आठ मानलनि। हुनक उक्ति अछि :

"शृंगार-हास्य करुण - रौद्रवीर - भयानकाः
बीभत्साद्‌भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः

किछु आचार्य 'शान्त' नामक रस मानि रसक संख्या नौ कय देलनि। आचार्य मम्मटक 'नवरस-रुचिराम्' ओ 'शान्तोऽपि नवमो रसः' उक्ति प्रसिद्ध अछि। कतिपय आचार्य 'वात्सल्य'कें सेहो रसक कोटिमे राखि ओकर संख्या दस कय देलनि। 'शृंगार-प्रकाश'कार भोजराजक घोषणा संस्कृत साहित्य-गगनमे गूँजि रहल अछि :

"शृंगार-वीर-करुणाद्‌भुत-रौद्र-हास्य-
बीभत्स-वत्सल-भयानक-शान्त-नाम्नः।
आम्नासिषर्दश रसान् सुधियो वयं तु
शृंगारमेव रसनाद् रसमामनामः॥"

अभिप्राय ई जे रसवादी सभ आचार्य एकस्वरसँ हास्यरसकें मान्यता दैत आबि रहल छथि। आचार्य भरत अपन रसविवेचन प्रसंगमे इहो कहैत छथि जे आठ रसमे चारि मौलिक ओ चारि मौलिकसँ उद्‌भूत रस होइछ। एहिमे हास्य शृंगारसँ उद्‌भूत रस कहल गेल अछि। अग्निपुराणमे सेहो 'शृंगाराज्जायते हासः' लिखल अछि। हास्यकें शृंगारमूलक मानबाक रहस्य ई थिक जे हास्य शृंगारेक संग उचित रूप सँ सम्बद्ध भय सकैछ, अन्य रसक संग नहि। अतएव पण्डितराज जगन्नाथ 'रसगंगाधर'मे रसक परस्पर विरोधाविरोधक विचार करैत हास्य रसकें केवल शृंगार रसक अविरोधी आ अन्य सभ रसक विरोधी मानलनि अछि। अर्थात् शृंगारेक संग हास्यक वर्णन कयल जा सकैछ, अन्य रसक

संग नहि। ई एक भिन्न बात थिक जे पण्डितराज जगन्नाथ रस-विरोध-परिहारक उपाय सेहो देखौलनि अछि आ तदनुसार द्वू विरोधियो रसक समावेश एकठाम कयल जा सकैछ।

रससम्प्रदायक सर्वश्रेष्ठ आचार्य अभिनवगुप्त नाट्यशास्त्रक 'अभिनव-भारती' नामक अपन मौलिक व्याख्यामे हास्यक शृंगारमूलकताक व्याख्या करैत शृंगाराभाससँ हास्यक सम्बन्ध स्थिर कयलनि अछि। जे कि अभिनवगुप्त शृंगाराभाससँ हास्यक सम्बन्ध जोड़ैत छथि, तेँ ओ हास्यक मूलमे अनौचित्योक गन्ध पबैत छथि। कारण, रसाभासक परिभाषा करैत आचार्यलोकनि "अनौचित्यप्रवृत्तो रसो रसाभासः" कहलनि अछि। यद्यपि पण्डितराज एहि परिभाषाक व्याख्या करैत कहैत छथि जे रस जखन पूर्ण घनानन्द ब्रह्मस्वरूप थिक तखन ओहिमे अनौचित्य कथमपि सम्भव नहि। तेँ उक्त परिभाषाक शब्दावली ई होमक चाही—"अनौचित्य प्रवृत्तस्थायिको रसो रसाभासः"। सारांश ई जे स्थायी भाव जखन रसावस्थामे परिणत भय जाइछ तखन ओहिमे औचित्यानौचित्यक भावना भइए नहि सकैत छैक, कारण जे रस केवल आनन्दस्वरूप थिक। "रसो वै सः रसंह्येवायंलब्ध्वाऽऽनन्दी भवति।" आनन्द कोनो प्रकारक हो, ओ अविभाज्य होइछ, ओहिमे नीक-बेजायक समावेश संभव नहि। अस्तु, रसाभासक परिभाषा जे किछु हो, ओहिमे अनौचित्यक मात्रा साक्षात् वा परम्परया अवश्य रहैछ। आ, एहि दृष्टिकोणसँ हास्य रसक संग अनौचित्यक संपर्क मानल जा सकैत अछि। एहि प्रसंग केओ-केओ हास्यक अनौचित्य-सम्पर्किताक प्रमाणरूपमे क्षेमेन्द्रक "शौर्येण प्रणतेरिपौ करुणया न्यायान्तिके हास्यताम्" उक्ति उद्धृत करैत छथि।

आब विचारणीय अछि जे हास्यक लक्षण की भय सकैछ ? पण्डितराज जगन्नाथ हास्य रसक स्थायीभावक लक्षण वाणी, अंग आदिक विकारक अवलोकन सँ उत्पन्न भेनिहार विकास नामक चित्त-वृत्ति हास थिक, एहि रूपमे करैत छथि। एहिसँ सिद्ध भेल जे उक्त लक्षण लक्षित हास जकर स्थायीभाव हो ओ हास्यरस थिक। हास्य रसक विकृत वाक् अथवा विकृत अंगवला व्यक्ति आलम्बन विभाव, विकृत वाणी तथा विकृत चेष्टा उद्दीपन विभाव, दाँत निपोड़ब अनुभाव ओ उद्वेग आदि व्यभिचारी भाव होइछ। एकरा बाद पण्डितराज द्वारा निम्न पद्य उदाहरणरूपमे प्रस्तुत कयल गेल अछि :

"श्रीतातपादैर्विहिते निबन्धे निरूपिता नूतनयुक्तिरेषा
अंगं गवां पूर्वमहो पवित्रं न वा कथं रासभधर्मपत्न्याः"

अर्थात् पिताजीक द्वारा रचित निबन्धमे एक नवीन युक्ति देखल। ओ कहने छथि जे गायक पूर्वांग यदि पवित्र तँ गदहाक धर्मपत्नी (गदही) क पूर्वांग पवित्र किएक नहि ? उपपादनमे पण्डितराजक कथन छनि जे एतय अनुचित वाणीक प्रयोक्ता तार्किक पुत्र आलम्बन विभाव, ओकर निःशंक उक्ति उद्दीपन विभाव, दशन-विकासादि अनुभाव, उद्वेग आदि संचारी भाव आ हास स्थायी भाव अछि। एतेक विचार कयलाक पश्चात हास्यक आत्मस्थ-परस्थ भेद कय पुनः उत्तम, मध्यम तथा अधम नायकक आधार पर हसित, अतिहसित आदि भेद कयल गेल। हास्यरसक प्रसंग संस्कृत अलंकारशास्त्रमे बस एतबे विचार देखबामे अबैत अछि।

परञ्च, एहि प्रसंगमे किछु एहन प्रश्न उठैत रहल अछि जाहि दिस सुधीजनक ध्यान आकृष्ट करब आवश्यक बुझैत छी। प्रथम प्रश्न ई अछि जे की कोनो विकृतवाक् अथवा विकृतांग व्यक्तिकेँ

देखलापर चित्तक विकास आ तकर परिणतिरूपमे आनन्दक उद्भव सभ्य समाजमे संभव छैक ? यदि नहि, तँ कोन आधार पर हास्यरसक प्रासाद ठाढ़ कयल गेल अछि ?

एकर उत्तरमे कहल जा सकैत अछि जे ककरो विकृतवचनता अथवा विकृतांगता भने हास्यक हेतु किंवा आनन्दजनक नहि हो, परन्तु ओकर अनुकरण हास्यरसक उपयुक्त भय जाइत अछि। नाटकमे विदूषकक अनुकरणात्मक चेष्टे हास्यक सृष्टि करैछ। श्रव्यकाव्यमे वाचिके अनुकरण रहैछ। करुण रसोमे तँ किछु एहने सन बात होइछ। जे राम-सीता आदिक जटाबल्कल धारण, वनगमन लौकिक स्थितिमे दुःखक कारण भेल होयत सैह काव्यमे वर्णित भय रससृष्टि करैत अछि।

दोसर प्रश्न ई उठैत अछि जे की हास्यरस वस्तुतः शृंगारजे थिक ? यदि से सत्य तँ पंडित-राज जगन्नाथ द्वारा प्रदत्त पूर्वोक्त पद्य हास्यरसक उदाहरण कोना भेल ? ओहिमे तँ शृंगारक गन्धो नहि अछि। एहिसँ की ई सिद्ध नहि होइछ जे शृंगारमुक्त स्वतंत्रो हास्य रस भय सकैत अछि ? संस्कृतमे हास्यरस-प्रधान श्रव्यकाव्य तँ प्रायः अछिए नहि, आ दृश्यकाव्यक भेदोपभेदरूपमे जे किछु प्रहसन, भाण आदि हास्यरसपूर्ण उपलब्ध अछि से सभ यद्यपि शृंगाराभास-मिश्रिते अछि, तथापि ताहिसँ ई मानि लेब जे शृंगारेक संग हास्यरसक वर्णन भय सकैछ, हमरा जनैत आवश्यक नहि। यदि से हो तखन ई किएक नहि कहल जाय जे हास्य रस थिके नहि ? हास शृंगारक व्यभिचारी भाव मात्र थिक। ओहिसँ शृंगारक पुष्टि होइत रहला पर शृंगार ध्वनि ओ हासक प्रधानताक दशामे हासात्मक भावध्वनि हो। 'व्यभिचार्यञ्जितो भावः' सर्वमतसिद्ध सिद्धांत थिक। की केओ कहि सकैत छी जे हास्यानुभूतिक्षणमे विगलितवेद्यान्तरता, जे रसदशाक अनिवार्य शर्त्त होइछ, होइत छैक ?

एतय एकटा प्रश्न आओर उठैत अछि। यदि शृंगाराभासजन्य होयबाक कारणेँ हास्यमे अनौचित्यक मात्रा रहैत अछि तँ की ओ अनौचित्य हास्यक रसतामे बाधक नहि होयत ? "अनौचित्यात् ऋते नान्यत् रसभंगस्य कारणम्"—ई सिद्धान्त की हास्यरसक प्रसंग लागू नहि अछि ?

अन्तमे एक बात आओर अछि। 'परिहास' ओ 'हास'मे की भेद छैक ? परिहास शब्दक प्रयोग तँ मिथ्यावस्तुक आधारपर कयल गेल 'हँसी-ठट्ठा'क अर्थमे पबैत छी। "परिहास-विजल्पितं सखे ! परमार्थेन न गृह्यतां वचः" इत्यादि। परिहासकथो प्रायः एहने अर्थक बोध करबैछ। तँ की हास्यरसोक कल्पना मिथ्येक आधारपर होइत छैक ?

आब हास्य शब्दक संग सटल व्यंग्य (हास्य-व्यंग्य)पर विचार कयल जाय। आइ-कालिह व्यंग्य काव्य कहलासँ एक स्वतन्त्र काव्यविधाक बोध होइछ। कतोक व्यक्ति व्यंग्य-काव्ये लिखैत छथि आ कवि कोटिमे परिगणित होइत छथि। संस्कृत साहित्यमे यद्यपि 'व्यंग्य-काव्य' नामक कोनो काव्यविधाक उल्लेख कतहु नहि भेल अछि, परन्तु जेहन काव्यकेँ आइ व्यंग्यकाव्य कहल जाइछ तकर अभाव संस्कृत साहित्योमे नहि अछि।

नीलकण्ठ दीक्षित लिखित **कलि विडम्बन** आ क्षेमेन्द्ररचित **कलाविलास, देशोपदेश, नर्ममाला** तथा **समयमातृका** आदि ग्रन्थ ओही कोटिमे आओत जकरा आइ व्यंग्यकाव्य कहल जाइछ। उक्त ग्रंथक कतिपय उदाहरण प्रस्तुत करबासँ पूर्व हम एक अज्ञातनामा कविक एक पद्यकेँ राखय चाहब जाहिमे

अद्वैत सिद्धांतक बहानासँ एकटा कुलटाक अभीष्ट सिद्धिक उपाय ताकल गेल अछि। जें हेतु ब्रह्मसँ भिन्न संसारमे किछु नहि अछि, तें हम 'स्व-पर'मे कोनो भेद-बुद्धि नहि रखैत छी आ हे सखी! हम अपन पति ओ प्रेमीसँ समाने व्यवहार करैत छी। दुनियाक लोक व्यर्थ हमरा 'असती' (कुलटा) कहि-कहि कदर्थित करैत अछि :

ब्रह्मैव सत्यमखिलं नहि किञ्चिदन्यत्
तस्मान्न मे सखि परापर भेद-बुद्धिः।
जारे तथा निजवरे सदृशोऽनुरागः
व्यर्थं किमर्थमसतीति कदर्थयन्ति॥

कुलटाक चरित्रपर केहन ठेकाकऽ कयल गेल व्यंग्य अछि एहिमे! केओ एहि पद्यमे अद्वैत-सिद्धांतक मखौल सेहो देखि सकैत छथि।

'कलि-विडम्बन'मे नीलकण्ठ दीक्षित एक खास श्रेणीक शिक्षक (जकर अभाव के कहय, संख्यामे सम्प्रति वृद्धिए भेल अछि) पर केहन चुटकी लेलनि अछि से द्रष्टव्य थिक। ओ कहैत छथि—यदि एहि तरहें अहाँ वर्गमे पढ़ाबी कि 'बच्चा! पढ़ू, पढ़ैत जाउ। समय समाप्त भय गेल, घंटी खतम भेल, आगू सभ किछु स्पष्ट भऽ जायत' तँ एहि रूपें पढ़ौनिहारक लेल कोनो ग्रंथमे कठिनता कोन?

वाच्यतां समयोऽतीतः स्पष्टमग्रे भविष्यति।
इति पाठयतां ग्रंथे काठिन्यं कुत्र वर्त्तते॥

अल्पज्ञ वैद्यके दीक्षितजी विचार दैत छथिन जे 'पथ्य कठिन कहियौक, औषध चाहे जेहन दियौक। यदि रोगी रोगमुक्त भऽ गेल तँ वैद्यके यशे-यश, यदि कदाचित् रोगमुक्त नहि भेल तँ पथ्यक गड़बड़ी कारण कहाओत :

भैषज्यं तु यथाकामं पथ्यं तु कठिनं वदेत्।
आरोग्यं वैद्यमाहात्म्यादन्यथात्वमपथ्यतः॥

महाकवि क्षेमेन्द्रके प्रायः शास्त्रीय संगीतसँ सर्वथा अरुचि छलनि। हुनक विचार छलनि जे 'चोर तँ अन्धकारोमे हल्ला भऽ गेलापर पड़ा जाइछ, परन्तु गायक प्रकाशमे खुलेआम हल्ला मचा कऽ धन लूटि लऽ जाइछ :

तमसि वराकश्चौरो हाहाकारेणयाति संत्रस्तः।
गायन चौरः प्रकटं हाहाकृत्वैव हरति सर्वस्वम्॥

'कलाविलास'मे ज्योतिषीपर कयल गेल कटाक्ष अद्भुत अछि। ज्योतिषीजी आकाशमे चन्द्रमाक संग विशाखाक समागमक गणना करबाक दाबा तँ करैत छथि, मुदा अनेक परपुरुषक संग क्रीड़ामे सम्मिलित भेनिहारि अपन पत्नीक पता नहि पबैत छथि :

गणयति गगने गणकश्चन्द्रेण समागमं विशाखायाः।
विविध-भुजंग-क्रीड़ासक्तां गृहिणीं न जानाति॥

एकठाम छात्रक विषयमे ओ कहैत छथि जे 'जे छात्र अक्षरज्ञानो ठीकसँ नहि रखैत छथि ओ बड़का-बड़का ग्रन्थकारसभक नाम जपैत जूता खटखटबैत अपन पार्श्वभागकेँ, जाहिमे छूरा लटकल रहैत छनि, देखबैत चहलकदमी करैत रहैत छथि :

लोहितच्छुरिकापट्टवेष्टितां वीक्षते कटिम्।

एहि प्रकारक व्यंग्यक संस्कृतमे अभाव नहि अछि। संस्कृत-साहित्यमे व्यंग्यक उदाहरण प्रभूत मात्रामे उपलब्ध रहितहु ओकरा कोनो नव काव्य-विधाक संज्ञा नहि देल गेल।

हमरा जनैत ई कोनो नव विधा थिको नहि। संस्कृतक अलंकारशास्त्रीलोकनि रस, वस्तु आ अलंकारभेदसँ जे त्रिविध ध्वनि मानलनि अछि ताहिमेसँ वस्तुध्वनिएक उदाहरण ई सभटा व्यंग्य-रचना थिक। एतेक धरि निश्चित जे एहन काव्यमे तीक्ष्णतर कटुसत्य ध्वनित होइत रहैछ आ कहबाक शैली उपहासोचित होइछ। एतबहिसँ जँ एक नव विधाक संज्ञा एहि प्रकारक गद्य वा पद्यकेँ देमय चाही तँ से देल जा सकैत अछि।

□

मैथिली कवितामे हास्य-व्यंग्य

डा० प्रेमशंकर सिंह

मैथिली कवितामे हास्य-व्यंग्यक सुदीर्घ परम्परा अछि। जतय परंपरागत रूपसँ कविलोकनि एहि प्रवृत्तिकेँ अपन काव्यमे प्रश्रय देलनि ततय आधुनिकतासँ आयल विकृतिपर सेहो अपन लेखनी उठौलनि। मैथिलीक कविलोकनि हास्य-व्यंग्यक माध्यमे जतय सामाजिक जीवनमे आयल विसंगतिक प्रति साकांक्ष करबाक प्रयास कयलनि अछि ओतहि समाज-सुधारकक समान एकरामे सुधार अनबाक चेष्टो कयलनि अछि। समाजक एहि विडम्बनाकेँ प्रदर्शित करबाक हेतु मैथिलीक कविलोकनि उक्ति-वैचित्र्य, वाक्-विदग्धता, वक्रोक्ति आदिकेँ हास्य-व्यंग्यक साधन बनौलनि। मैथिलीक अधिकांश हास्य-व्यंग्यक कविता अत्यन्त सरल अछि जकरा पाठक सुगमतापूर्वक आत्मसात क' लैत छथि। हास्यकेँ प्रस्तुत कयनिहार कविलोकनि व्यंग्य-चित्रूपक सेहो अधिक सहायता लेलनि अछि।

जीवनमे प्रत्यक्षतः देखल गेल विषयवस्तुकेँ कविलोकनि हास्य-व्यंग्यक आधार बनौलनि अछि। ओ लोकनि समकालीन मैथिल समाजक कुरुचिपूर्ण एवं सामाजिक विकृतिपर कुठाराघात कयलनि अछि। हास्य-व्यंग्यक कवितामे परम्परागत आलम्बनक संगहि नवीनतम आलम्बनक ग्रहण द्वारा अतियथार्थक परिचय भेटैत अछि। एतय आलम्बन-रूपमे आयल प्रमुख विषयक आधारपर मैथिली कविताक हास्य-व्यंग्यकेँ संक्षेपमे रेखांकित करबाक प्रयास कयल जा रहल अछि।

आधुनिक कविताक परिप्रेक्ष्यमे सर्वप्रथम उल्लेख्य अछि कवीश्वर चन्दा झाक 'मिथिला भाषा रामायण'[1] एवं महाकवि लालदासक 'रमेश्वर चरित मैथिली रामायण',[2] जाहिमे यथास्थल हास्य-व्यंग्यक दिग्दर्शन होइछ। 'मिथिला भाषा रामायण'मे हास्य-व्यंग्यक अनेक स्थल आयल अछि, किन्तु ओहिमे प्रमुख अछि परशुराम-शतानन्द, परशुराम-लक्ष्मण एवं अंगद-रावण-संवाद। शतानन्दसँ धनुष-भंगक वृत्तान्त सुनिक' परशुराम क्रोधित भ' हुनका प्रति जाहि शब्दक प्रयोग कयलनि ताहिमे व्यंग्य-मिश्रित हास्यक सुन्दर निदर्शन भेल अछि :—

कर्म पुरोहित अति स्वच्छन्द। घर घर नाचथि मूसर चंद॥
शांत जनक भूपक नहि त्रास। सबहिक गुरु गोवर्द्धन दास॥
जनकक सभा तोहर बड़ गाल। उपलक्षण ढोढ़ी धरि माल॥
शतानन्द तोँ छेँ बड़ भूच। नाँ बड़ ऊँच कान दुहु बूच॥[3]

एतय 'मूसर चन्द', 'गुरु गोवर्द्धन दास', 'बड़ भूच', 'कान दुहु बूच' सदृश व्यंग्योक्ति द्वारा शतानन्दक उपहास कयल गेल अछि। प्रथम दुइ अभिव्यक्ति फूहड़पन तथा अन्तिम तीन विकृत वेष एवं विकृत आकारक ज्ञापक अछि।

क्रुद्ध परशुरामक आत्मप्रशंसा तथा शिवक धनुपभंग कयनिहारकें मृत्यु-दण्ड देबाक बातपर लक्ष्मणक उक्तिमे व्यंग्यपूर्ण हास्य अछि :—

लक्ष्मण कहलनि की अजगूत।
क्षत्रिय क्षय कत अपनैं बूत॥
शिव धनु टूटल देत के जोड़ि।
की होअ आब कपारे फोड़ि॥[४]

एहिसँ अवगत भेलापर परशुराम क्रोधित भ' जाइत छथि। हुनक क्रोध पाठकक हृदयमे सूक्ष्म हास्यक सृष्टि करैछ। एतय कवीश्वर काकु एवं परिस्थितिजन्य हास्यक अनेक उदाहरण प्रस्तुत कयलनि। एहि दृष्टिसँ रावण-अंगद-संवाद विशेष उल्लेखनीय अछि जाहिमे एक दोसरापर व्यंग्य-बाणक प्रयोग करैत छथि। अन्तमे रावणक पराक्रम-गर्वकें भंग करबाक उद्देश्यसँ अंगद पृथ्वी पर अपन पैर राखि कहैत छथि जे जँ क्यो एकरा डिगा देत तँ हम अपन पराजय स्वीकार क' लेब। अन्य वीरक विफल भेलापर स्वयं रावण अबैत अछि। अंगद व्यंग्य करैत छथि:—

कयलह रघुनन्दन सौं बैर। बकर ककर नहि धरबह पैर॥
रावण लज्जित बैसला घूरि। अंगद लेल प्रतिज्ञा पूरि॥[५]

एकरा सुनितहि रावण लज्जित भय वापस भ' जाइछ जे हास्यक सृष्टिमे सहायक होइछ।

'रमेश्वर चरित मैथिली रामायण'क अन्तर्गत हास्य एवं व्यंग्यक वास्तविक स्वरूपक परिचय धनुष-यज्ञक अवसरपर भेटैछ। शिव-धनुष-भंग करबामे प्रत्येक राजा श्रीहत भ' अपन समाजमे बैसि जाइत छथि। एहन विषम परिस्थितिमे रावण धनुष-भंग करबाक हेतु सभा बीच उपस्थित होइत छथि। रावणकें देखि शतानन्द व्यंग्यपूर्ण हँसी हँसैत छथि :—

शतानन्द रावण दिस ताकि। बजला बिहँसि व्यंग्य युत झाँकि॥
बीस भुजा बल बीस समुद्र। तेहिमे ई धनु तरणी क्षुद्र॥[६]

सीताक विवाहोत्सवपर मैथिल विपटा उपस्थित भ' अपन विविध क्रिया-कलापसँ हास्य-पूर्ण वातावरणक सृष्टि करबामे सहायक भेलाह। ओ तँ पहिने महाराज दशरथकें उपहासक आलम्बन बनबैछ। चारू भायक जँ पृथक्-पृथक् अवसरपर विवाह रचाओल जाइत तँ दान-दहेज एवं सुस्वादुपूर्ण भोजन अनेक अवसरपर भेटैत, किन्तु चारू कार्य एकहि बेर कयलनि जे हुनक कृपणताक परिचायक थीक। तेँ ओ व्यंग्य करैछ :—

मैथिल विपटा लगबथ ताल
कहय कृपण वड़ अवध मुआल ॥
चारि बेर खैतहुँ जे भोज।
पबितहुँ दान दहेज नहि ओज ॥
खर्चक डरें अवध महाराज।
कयल एकहि बेरि चारू काज ॥
अपने लेता चारि दहेज।
याचक नर्तक पुरलक सेज ॥[७]

अकाल

महात्मा गांधी स्वातन्त्र्योत्तर भारतवर्षमे रामराज्यक स्थापना करबाक कल्पना कयने छलाह, किन्तु हिनक कल्पना पर तुषारपात भ' जाइछ। सम्पूर्ण देशमे अकाल, दुर्भिक्ष, वस्त्राभाव, भुखमरीक अधिकतासँ मनुष्यक जीवन संकटापन्न भ' गेल अछि। मैथिलीक हास्य-रसक कविलोकनि एकरा आलम्बन बनाक' एहि चित्रकेँ प्रस्तुत कयलनि अछि। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' उपर्युक्त स्थितिक व्यंग्यात्मक शब्द-चित्र एक लोकगीतमे प्रस्तुत कयलनि अछि :—

देखहक हौ गांधी बाबा तोरो स्वराजमे
लाखो करैं छह काँहि-काँहि हो।
पेटमे ने अन्न छैं न देह पर कपड़ा
घरमे खर्चो ने चार पर खपरा
× × × ×
दिनकर तपौने जाइ छथि धरती
धरती से बाँझ पड़ल बनिक' परती
करती बहुआसिन की चुल्हा जरा कय
नेना करैं' छनि खाँहि खाँहि हो।[८]

वैद्यनाथ मिश्र 'यात्री' (नागार्जुन) अकालक एहि स्थितिक अतियथार्थ चित्र अपन कवितामे प्रस्तुत कयलनि अछि जाहिमे व्यंग्यक मार्मिकता चरम सीमापर पहुँचि जाइछ :—

शिशु कंकाल
तरुण कंकाल
वृद्ध कंकाल
कंकाल वृद्धाक
कंकाल तरुणीक
कंकाल ननकिरबीक
× × ×

माल गाड़ी वाला साइडिंग दिश
लाइन केर दोवगली
भरि भरि आँजुर, भरि भरि मुट्ठी
दाना मिश्रित धूरा उठबैत कंकाल।[९]

एतय 'दाना मिश्रित धूरा उठबैत कंकाल'मे व्यंग्यक मार्मिकता आक्रोशक कारण बनि जाइत अछि।

अनमेल विवाह

मैथिली कवितामे हास्य-व्यंग्यक रूप तखन अधिक स्पष्ट होइत अछि जखन कवि लोकनि समकालीन समाजमे प्रचलित अवस्था, रूप-गुण एवं शिक्षा-दीक्षाक कारणेँ अनमेल विवाहक समस्याकेँ कविताक आलम्बन बनबैत छथि। मिथिलाक सामाजिक जीवनमे एहन मान्यता रहल अछि जे पुरुष कतबो विवाह किएक ने क' लेथु, सब क्षम्य अछि। एकरे फलस्वरूप बालविवाह एवं वृद्धविवाहकेँ प्रोत्साहन भेटल अछि। एकरे परिणाम भेल अछि जे सारा दिस जाइत वृद्ध सेहो अपन कुलीनताक आधारपर अनेक विवाह करैत रहलाह अछि। हरिमोहन झा एही पृष्ठभूमिक व्यंग्यात्मक शब्द-चित्र अपन प्रसिद्ध कविता 'ढाला झा'मे प्रस्तुत कयलनि अछि। 'ढाला झा'क स्वरूपक चित्रण करैत कवि कहैत छथि जे हुनका माथपर मैल पुरान पाग एवं कान्हपर पुरान गमछी छनि, ओ खल्वाट छथि, त्रिपुण्डक ऊपर 'तीन ठोप' आर एक पँच रुद्राक्ष हुनक टीकमे बान्हल छनि। हुनका आब तीनिएटा दाँत शेष रहि गेल छनि, किन्तु क्रोधाग्नि नँ ज्वालामुखीक समान विस्फोट करैत रहैछ। एहन ढाला झा अपन चारिम विवाहमे 'लावापुर' विकायल छथि। कवि एहन वरपर व्यंग्य करैत छथि :—

कुम्हड़क बीया सन तीन दाँत मुँहमे छन्हि
वगय खटाँस सन पित्ते लोहछल सन मुँह
सटर-सटर बात केवल विष सन वजैत छथि, ई
चारिम विवाहमे विकायल छथि लावापुर।[१०]

इएह छथि ढाला झा, लुट्टी झाक प्रपौत्र, नरहा पाँजि, ककरौड़क निवासी तथा बेलौंचिक वंशज, जनिक स्वरूपकेँ देखतहि पाठकक हास्यक अन्त नहि रहि जाइछ। ई बहुविवाहमे विश्वास रखनिहार ओहि प्राचीन परम्पराक प्रतीक एवं कुलीन प्रथाक अनुमोदक छथि जे सासुरकेँ आर्थिक आयक स्रोत मानैत छथि।

कवि यात्री वरक यथार्थ स्वरूपसँ पाठककेँ अवगत करबैत कहैत छथि :—

माय छलन्हि औन्हल छाँछ जकाँ
जौह गाँजक गोलही माछ जकाँ
दाँत ने रहन्हि निवत्त रहथि
बूढ़ि रहथि, घोंघा बसंत रहथि[११]

एहि दृष्टिसँ चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'क व्यंग्यात्मक शब्द-चित्र 'बुढ़वा काका' सेहो उल्लेखनीय अछि। वृद्धावस्थामे विवाहक हेतु औनायल वृद्धक इच्छापर 'शारदा एक्ट'क कारणेँ कुठाराघात भ' जाइछ, मुदा हुनका लग सवैया अछि तँ विवाह के रोकि सकैछ ? ओ पूर्ण आशान्वित छथि जे विवाह अवश्य हैत :—

तेँ की विवाह नहि हैत ? वाह !
से की कहैत छी ? आगि देखौने
कतहु नहि नमरैक लाह ?[12]

अन्ततः सौराठ सभामे हुनक विवाह नौ सय टाकामे स्थिर भ' जाइछ। एही बीच कोनो विषय पर वर एवं कन्या पक्षक बीच तुमुल संघर्ष होमय लगैछ। ताधरि क्यो टाकाक थैली ल' कय पड़ा जाइछ। कवि एहन स्थितिक अत्यन्त उपहासात्मक चित्र नाटकीय ढंगसँ एहि पंक्तिमे खिचलनि अछि :—

फेकन बिगड़ल
काधेँ तड़पल
किछु बातचीतमे छाता पर छाता
कड़कल हल्ला बजरल।[13]

सामाजिक जीवनमे एहन विवाहकेँ प्रश्रय देनिहार विवाहक नियोजक छथि घटकवृन्द जे आसानीसँ एकर निर्धारण करैत छथि। एहन व्यक्तिक व्यक्तित्व वस्तुतः एहि प्रकारक बनल रहैछ जे ओहो हास्य-व्यंग्यक आलम्बन बनि जाइत छथि। यात्री एहन नियोजकपर व्यंग्य कयलनि अछि :—

हाथमे हुनक नोसिदानी रहन्हि
छाता : रहन्हि, टूटल कमानी रहन्हि
उसरगल छलन्हि कि दनही छलन्हि
कुकुरक चिबौल पनही छलन्हि
साठा पाग रहन्हि चूनक छाँछी जकाँ
कनपट्टीक मसुविर्ध माछी जकाँ[14]

एहने घटकक अत्यन्त जीवन्त वर्णन कविवर जीवन झा सेहो कयने छथि। जतय एहि प्रकारक विवाहक नियोजक वर्त्तमान रहताह ओतय स्वाभाविके अछि जे बाल-विवाह एवं वृद्ध-विवाहकेँ प्रश्रय भेटबे करत। बाल-विवाह तँ मैथिल समाजक एक जटिल समस्या बनि गेल अछि। एकरे फलस्वरूप हजारक हजार बालक-बालिकाक उज्ज्वल भविष्य अंधकारमे विलीन भेल जा रहल अछि। बाल-विवाहक कारणेँ नवयुवक 'घुनचट्टू', 'अखरकट्टू', 'बहरबट्टू' एवं 'गिदरकट्टू' भेल जा रहल छथि। कविवर सीताराम झा बाल-विवाहक वास्तविक स्वरूपपर व्यंग्य करैत छथि :—

सब आइ बाल-विवाह सौं छी भेल मुतचट्टू जकाँ।
मन ने लगै अछि काजमे कखनहु अखरकट्टू जकाँ॥
फुसिए घुमैत फिरैत छी सब बयो बहरबट्टू जकाँ।
तामस रहै अछि नाक पर केवल गिदरकट्टू जकाँ॥[१५]

एहि प्रकारक बाल-विवाहक दुष्परिणाम स्वरूप विधवाक संख्यामे तीव्र गतिसँ वृद्धि भेल जा अछि। यात्री बाल-विवाहक दुष्परिणामकेँ 'विलाप'मे ध्वनित कयलनि अछि। ओ एक विधवाक करुणकथा तथा हुनक मानसिक स्थितिक विश्लेषण अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढंगसँ प्रस्तुत कयलनि अछि :—

मुस्साक आगि जकाँ नहू-नहू
जरै छी मने-मने हमहूँ
फटै छी कुसियारक पोर जकाँ
चैतक पछवामे ठाँर जकाँ[१६]

आधुनिक नेता

आइ नेता लोकनि हास्य-व्यंग्यक आलम्बन बनि गेलाह अछि। राजनीतिमे परिवर्त्तन अवश्यंभावी अछि जकर फलस्वरूप राजनीतिक स्थिरता शनैः-शनैः समाप्त भेल जा रहल अछि। नेतापर लोकक आस्था घटल जा रहल अछि। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' एक दलबदलू नेतापर व्यंग्य कयलनि अछि :—

रंग-बिरंगक ए-मे-ले अछि,
गाम-घरमे हूलेले अछि
पगहा-पड़रू सहित पानिमे
ई महींस निश्चय गेले अछि
दल-बदलू सब सोचि रहल छथि अदलि-बदलि दल हाथ सुतारी[१७]

वर्तमान स्थितिमे नेतापरसँ जनताक विश्वास समाप्त भ' गेल अछि। हुनका सभक कार्य-दक्षता समाप्तप्राय अछि। आसुरी वृत्तिक अधिकता अछि। एहने नेता लोकनिक क्रिया-कलापक भंडाफोड़ कविवर सीताराम झा एहि प्रकारेँ कयलनि अछि :—

खद्दर धारिक फुजि गेल पोल
करमे कैंची मुख मीठ बोल
अपनहुमे फैलन्हि तीन गोल
अन्नक महगी सौं उठल घोल[१८]

'देशदशाष्टक'मे यात्री देशक समसामयिक वातावरण दिस ध्यान आकर्षित कयलनि। वस्तुतः

नेता एहि युगकें पक्षपात एवं भ्रष्टाचारक युग बना देलनि अछि। एहन नेता अपन सर-सम्बन्धी लोकनिक हेतु प्रत्येक भ्रष्टाचार करबाक हेतु सतत तत्पर रहैत छथि। यात्री सदृश सशक्त व्यंग्यकार एहन नेताक पर्दाफाश कयलनि :—

भाय भातिजक साड़ू सारक लेल
अपनहि चढ़ि कऽ तोड़थि झोँझक बेल
धन्य भाग जे चानि ने छैन्हि उघाड़
नहि तँ कोना पचबितथि सौंस पहाड़'[१९]

एतय 'धन्य भाग जे चानि ने छैन्हि उघाड़'मे निहित व्यंग्य अछि गाँधीटोपी पहिरयवला तथा-कथित नेतापर। वस्तुतः देशकें दरिद्र बनयबाक सब श्रेय एहि राजनीतिज्ञ लोकनिकें छनि जे अपन छोट-छोट स्वार्थक कारणें किछु करबाक हेतु तैयार रहैत छथि। समकालीन स्थितिमे देशकें महगीक स्थितिमे पहुँचैबाक सभ श्रेय एही नेता लोकनिपर छनि। 'पन्द्रह अगस्त'मे राधाकृष्ण झा 'बहेड़' एहन नेता लोकनिक पर्दाफाश कयलनि अछि जनिक सत्प्रयाससँ महगी सुरसाक समान दिन-प्रति-दिन बढ़ैत जा रहल अछि :—

सुनइ छलहुँ हिनको बड़ उच्च नाम
बढ़ि गेल सागक ततेक उच्च दाम
लोक छथि लाखक खाइ छथि करोड़
फाइलमे कारी, मुदा नेतामे गोर
मामाक भरोस छनि, काकाक आशीष
छथि वैद्य, मुर्दोसँ असूलइ छथि फीस[२०]

आधुनिक नेता प्रजातन्त्रीय शासनव्यवस्थामे जनमतक मुँहपर ताला मारिकऽ अपन शिकार करैत छथि। देशक एहन स्थितिकें देखिकऽ व्यंग्यकार कखन धरि चुप्प बैसि सकैछ? एहि दृष्टिसँ श्रीमन्त पाठकक 'बहुतो भाड़ापर सनकै अछि' एवं 'धोधिक तऽह देखार करैं छी' विशेष उल्लेखनीय थिक। पदलोलुप नेता लोकनिपर श्रीमन्त पाठक व्यंग्य करैत छथि :—

गान्धी गाइक नाङरि धऽ कऽ
सभ वैतरणी पार करै अछि
जनताकेर मुँह जाबि देलक अछि
लोकतन्त्र मुँह बाबि देलक अछि
टोप बदलि टोपी माथा धऽ
बगुलाभगत शिकार करै अछि[२१]

आधुनिक तथाकथित नेता अपन त्याग, तपस्या एवं सुधारवादी दृष्टिकोणक स्वाँग मात्र मूर्खकें प्रभावित करबाक हेतु करैत छथि। ओ 'विषकुम्भंपयोमुखम्'क समान होइत छथि। एहन नेताकें चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' 'श्रीफल'क उपाधि दैत छथि :—

हम श्रीफल छी,
ऊपरसँ चिक्कन बेस सफल।
अन्तर लस्सासँ ओत-प्रोत
कंठे लग अछि आँठी अँटकल ॥[22]

'करू की'मे राधाकृष्ण झा 'बहेड़'क कथन छनि जे नेता लोकनिक कारणेँ लोक आब असत्यक पुजारी बनि गेल अछि तथा सत्यक सर्वनाश भ' रहल अछि :—

जरल जी केर बोल कबकब ओलसन लागत करू की ?
सत्य केर अङोर ककरो ठोर जँ दागत करू की ?
हमर सन हमरा कहै छथि ओ हुनक सन जाय हुनका
सत्य खाइछ निठुर नीतिक राति दिन भरि पोख टुनका[23]

आधुनिक फैशन

आधुनिक सभ्यताक सबसँ विलक्षण देन थीक फैशन। एकरा प्रति लोक अत्यधिक आकर्षित भेल जा रहल अछि। एकर सबसँ अधिक प्रभाव पड़ल अछि समसामयिक युवक-युवतीपर। फैशन-परस्त युवक-युवतीकेँ देखिक' ई कहब कठिन भ' गेल अछि जे संसार कोन दिशामे जा रहल अछि। यात्री एक फैशनपरस्त युवतीक चित्र समाजक समक्ष प्रस्तुत कयलनि जकर बाब्ड हेयर, कजरायल आँखि, अनावृत शरीर निश्चये समाजक भविष्यक हेतु एक प्रश्नचिह्न उपस्थित करैछ :—

बाब्ड हेयर केश कपचल कृष्ण कुंतल जाल
भऊँह बेश पिजौल
मर्मवेधी टाकुसन कजरैल आँखिक कोर
अनावृत मुक्तोदरी आवर्त दारुण नाभि
रङल बीसो नहक उज्जर पीठ
हरित वसना आइ कालुक राधिका[24]

यात्री एहन नायिकाकेँ आधुनिक 'राधिका' कहैत छथि। यात्री एक एहने महिलाक केश-विन्यास पर व्यंग्य कयलनि अछि :—

माथ पर उत्तुंग खोपा···
तपोवनी स्टाइलमे बान्हल
आ ताहिमे लपेटल चम्पाक माला[25]

ई तँ रहल महिलाक स्थिति, किन्तु पुरुषक स्थिति सेहो एहिसँ कम भयंकर नहि अछि। आजुक युवकक स्थिति देखिक' एहन प्रतीत होइछ जे ओ स्त्रीगणे जेकाँ अपनाकेँ सजबैत छथि। युवकक एहन स्थितिकेँ देखिक' चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' व्यंग्य करैत छथि :—

सुन्दरता लें पुरुष फट छथि
नारी वर्गक कान कटै छथि
तँ तँ महिला सब उठि चलली
काटै पुरुषक कान, कहो के ?[२६]

आधुनिक फैशनक अति व्यापक प्रभाव परम्परावादी पंडित लोकनिपर सेहो पड़ल अछि। ओहो सब आधुनिकताक संग पयरमे पयर मिलाक' चलय लगलाह अछि। गोपालजी झा 'गोपेश' एक पोंगा पंडितकें देखिक' कटु यथार्थ दिस व्यंग्य कयलनि अछि :—

देखने छलियनि पंडित जी कें
टोस्टक सङ चाहक चुस्की लैत
वैदिको जी भेटला सिनेमे मे
देखय आएल छलाह राजकपूरक सतरंगी तमाशा
सङमे गृहणी छलथिन
कार्डिगन पहिरने, लिपस्टिक लगओने
आ' किदनि-किदनि पंडित जी सङ फदकैत[२७]

स्वातन्त्र्योत्तर कालमे मिथिलाक सामाजिक जीवनमे तथाकथित जे नारी-जागरण भेल अछि तकरा प्रत्यक्षतः समाज स्वीकार करबाक हेतु तत्पर नहि। फैशनपरस्त प्रवृत्तिक समाजमे तीव्र प्रतिक्रिया भेल अछि। आधुनिकताक फलस्वरूप आब नारी पुरुषक संग चलय लगलीह अछि। व्यंग्यकार हरिमोहन झा आधुनिक नारीक प्रगतिशीलताक वर्णन करैत कहैत छथि:—

निधोख अपन अंगिया उतारि
सीढ़ी पर बैसल पीठ खोलि
पाँखुरमे साबुन लगा-लगा
छाती भरि जलमे बैसि-बैसि
मलि-मलि करैत उन्मुक्त स्नान[२८]

आधुनिक फैशनक परिप्रेक्ष्यमे कविवर सीताराम झा पुरुष एवं नारीक समुचित स्वरूपक जे लक्षण निर्धारित कयलनि अछि तकरासँ अवगत होइतहि लोक हँसैत-हँसैत लोट-पोट भ' जाइछ। नूतन पंडितपर ओ व्यंग्य करैत छथि :—

सीटथि बूट कमीज छड़ी पगड़ी पुनि जेब घड़ी लटकाबथि
सार्टिफिकेटक गेंट देखाय सदा नवका सबकें भटकाबथि
पूजित भेथहि सौं सवठाम घड़ी पल लाटहु कें अँटकाबथि
नूतन पंडित लक्षण किन्तु सभा बिच नाङरिकें सटकाबथि।[२९]

कन्ट्रोल

स्वतन्त्रताक उपजा थीक कन्ट्रोल। कन्ट्रोलक ई दुष्परिणाम जे उपलब्धो वस्तु यथाशीघ्र अनुपलब्ध भ' जाइछ। देशक एहन विषम परिस्थितिकें देखि हास्य-व्यंग्यकार एकरा अपन रचनाक आलम्बन बनौलनि अछि। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' देशक विषमताकें व्यंग्येक माध्यमे 'युगचक्र'मे प्रदर्शित कयलनि अछि। कन्ट्रोल, चोरबजारी एवं व्यक्तिगत स्वार्थकें देखि कविक हृदय द्रवीभूत भ' जाइत छनि :—

उठल नियन्त्रण भारत वर्षक
सुनलक बात जखन ई हर्षक
बनियां आ' टुटपुंजिया नेता
सब कोठी अजबारि रहल अछि।[30]

बनियां सब अपन तहखानाकें नव-नव वस्तुसँ भरिक' चोरबजारीकें बढ़ावा द' रहल अछि। आधुनिक परिप्रेक्ष्यमे एहन स्थिति छोट-पैघ नेतालोकनिक सेहो भऽ गेल अछि। एतय 'बनियां' एवं 'टुटपुजिया नेता'क हेतु कोठीक प्रयोगमे श्लेष वक्रोक्तिक चमत्कार भेटैछ। मटिया तेलपर जखन कंट्रोल होइत अछि तँ सम्पूर्ण देशक विषम स्थिति भ' जाइछ। एहि दृष्टिसँ आरसी प्रसाद सिंहक 'कलि कौतुक' विशेष उल्लेखनीय अछि :—

अमृत किरासन तेल भेल अछि
सगरो ठेलम ठेल भेल अछि
रेलक नाङरि पकड़ि मुसाफिर
वैतरणी कें पार करै अछि
कलि कौतुक विस्तार करै अछि[31]

कंट्रोल भेलापर खद्दरधारी नेता लोकनि कोन प्रकारें ब्लैक मार्केटिंगकें प्रोत्साहन दैत छथि तकर वास्तविक स्वरूप हमरा यात्रीक 'परमिटक साड़ी'मे भेटैत अछि। नेतालोकनिपर कवि व्यंग्य करैत छथि :—

खधड़क अंगा खधड़क टोपी
ओ नोन नुकाकें रखने अछि भनसाघरमे
दू दू आनामे बेचइए दीयासलाइ
हनुमान चलीसा पाठ करइए सांझ-प्रात[32]

चुनाव

स्वातन्त्र्योत्तर भारतमे चुनावक प्रचलन अत्यधिक भेल अछि। बात-बातमे चुनावक चर्चा होमय लगैत अछि। एहन लगैछ जे एहि युगमे चुनावक बिना कोनो कार्य नहि चलि सकैछ। वस्तुतः चुनावक एहन स्थिति अछि जे एहिमे बहुमतेकें मान्यता भेटैछ। चुनावक समय पार्टीक अधिकता सेहो एक

दृष्टिएँ खतरनाक सिद्ध होइत अछि। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' पार्टीक अधिकताकेँ देखि व्यंग्य करैत छथि जाहिमे हास्यक मात्रा सेहो ओही रूपेँ वर्तमान अछि :—

अल्पमतक बहुमतक सोहारी
बेलि रहल छथि सत्ताधारी
× × ×
आबि विदेशी ई अछि हुलकी
पार्टी सब भय गेल' छि मुलकी
अमरीकी गहुमक खा फुलकी
जनता चलय चालि पुनि दुलकी
ई किसान अलबीकक टाडी
पंपिङ सेटक करय पुछारी।[33]

चुनावक पूर्व अनेक वादा कयल जाइत अछि, किन्तु जितलाक बाद केओ पुछयवला नहि तेँ कविक व्यंग्य अलबीकक टाड़ी किसानपर आक्रोशक मुद्रामे मुखर भेल अछि।

चंदा

आधुनिक युगमे हास्यक आलम्बनमे अनेक परिवर्त्तन भेल अछि। आब चुंगी, चंदा आदि विषयपर पर्याप्त व्यंग्य कविता लिखल गेल अछि। आधुनिक नेतामे चन्दा तहसील करबाक क्षमता अधिक रहैत अछि। जँ केओ हुनका मन मोताबिक चन्दा नहि देल तँ ओकर काज नहि भ' सकैछ। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' एहन नेता लोकनिक चन्दा तहसील करबाक प्रक्रियापर व्यंग्य कयलनि अछि :—

फल टटका दी,
बड़का बड़का केँ अंटका दी
चन्दा सँ जेबी भरि संस्थाकेँ
फाँसीपर हम लटका दी।[34]

धार्मिक पाखण्ड

हास्य-व्यंग्यक माध्यमसँ परम्परावादिता, धार्मिक पाखण्ड, ढोंग आदिक कारणेँ पोंगापंथी पंडित सबसँ अधिक आक्रान्त भेलाह। मंत्र-तंत्र, शास्त्र-पुराणक वितण्डावादक कारणेँ सामाजिक जीवन दिन-प्रति-दिन जटिल भेल जा रहल अछि। धर्मक नामपर अपनाकेँ अग्रदूत बुझनिहार पाखण्डी पंडितक भंडाफोड़ हरिमोहन झा अपन अनेक कवितामे कयलनि, अछि।

राजकमल चौधरी वैद्यनाथ धामक पंडाक धार्मिक पाखंडपर व्यंग्य करैत कहैत छथि जे आधुनिक समाजमे हिनका सभसँ मुक्ति भेटब कठिन बुझि पड़ैछ। एहन धार्मिक पाखण्डक प्रति ध्यान आकर्षित

करैत ओ कहैत छथि जे जखन संसारक प्रत्येक वस्तु मिथ्या अछि तखन एहिमे विश्वास करबाक कोन प्रयोजन :—

पढ़ि-पढ़ि हिनक धर्म-लेख सभटा विवादग्रस्त
वितण्डा लोक करइए, होइए अति नष्ट-ध्वस्त
जे विश्व थिक मिथ्या, मात्र ब्रह्म थिक सत्य
जे नइ ब्रह्म थिक फूसि, मात्र सत्ये थिक मर्त्य
जे सभसँ छथि पूजनीया दुर्गा
(जे पहिने अंडा भेल की मुर्गा ?)[३५]

धार्मिक पाखण्डक कारणेँ अन्ध-विश्वासक जन्म होइत अछि। अन्ध-विश्वास अशिक्षाक पुत्र, रूढ़िक सहोदर भाय तथा भ्रमक पिता होइछ। अज्ञानक अन्धकारमे एकर जन्म होइछ जाहिसँ प्राचीनताक प्रति मोहक झूलामे ई झुलैत रहैछ। समकालीन मैथिल समाजपर अन्धविश्वासक साम्राज्य अछि। आद्यानाथ झा 'निरंकुश' अपन 'गामक भूत' एवं 'ब्रह्मथान'मे एहन अन्धविश्वासी पर गंभीर व्यंग्य कयलनि अछि। गामक ओझा-गुनी कोना आडम्बरक जाल बिछाक' अपन स्वार्थक सिद्धि करैत छथि तकर स्पष्ट चित्र भेटैत अछि :—

ताकि रहल छथि पहिने सँ ई
निहुँछल परिछल छागर एतय अनेक
भरि भरि चोलम देश विदेशक
गाँजा केर कबुला लगइत छन्हि नीक
जा धरि आधार''''गाड़ ई
ताधरि चिन्ता रहतन्हि व्यर्थ कथीक।[३६]

जेना कबीर अन्ध-विश्वासी समाजमे मूर्ति-पूजाक विरोध कयने रहथि तेना कांचीनाथ झा 'किरण' 'माटिक महादेव' द्वारा मैथिल समाजमे प्रचलित एहि परम्पराक विरोध कयलनि अछि। ओ कहैत छथि :—

ताहि लोढ़ी सिलोट केँ ओंघराय
मंदिरमे स्थापित करब व्यर्थ
पाषाण-पिण्डकेँ करतैं केओ प्रणाम ?
तञ हे माटिक महादेव
नहि करह कनेको अहंकार।[३७]

धार्मिक कट्टरता एवं सामाजिक असहिष्णुताकेँ लक्ष्य बनाक' लिखनिहार व्यंग्यकारमे तंत्रनाथ झा अग्रगण्य छथि। ओ 'मुसरी झा'मे एही पृष्ठभूमिमे व्यंग्य प्रस्तुत कयलनि जाहिमे हास्यक रूप सेहो स्पष्ट अछि। धर्मक कर्णधार मुसरी झा कुकुरक स्पर्श भेलासँ गंगामे अनेक बेर डुबकी लगबैत छथि

तथापि हुनक मन पवित्र नहि होइत छनि। किन्तु विधिक विडम्बना एहन होइत अछि जे कुकुरक उच्छिष्ट दूध पीबिक' कोन प्रकारेँ तृप्त होइत छथि :—

धर्मशास्त्रमे स्पष्ट लिखल अछि
एहन ब्राह्मण थिक चांडाल
कोन परि पुनि शरीर शुचि पाओत
पीअब गोंत गिड़ब वरु बाल।
बहुविध बहुत विचार कयल पुनि
दुहु जन कयल घोंघाउजि खूब
अन्तिम निर्णय ई पओलक जे
मुसरी देथि सिमरिया डूब।[३८]

परम्परावादी अन्धविश्वासी धर्मावलम्बी लोकनिक मान्यता छनि जे पाश्चात्य सभ्यताक संपर्कक फलस्वरूप शनैः शनैः धर्मक पतन भेल जा रहल अछि। समयक गतिक क्रममे जहिना-जहिना समाजक विधि-विधान, रीति-नीतिमे परिवर्तन भेल जा रहल अछि, तहिना-तहिना धार्मिक पाखंडताक विनाश भेल जा रहल अछि। तथापि, परम्परावादी ढोंगी व्यक्ति एहन परिवर्त्तनकेँ स्वीकार करबाक हेतु तत्पर नहि होइत छथि। तेँ व्यंग्यकार एहन व्यक्तिकेँ अपन आलम्बन बनबैत छथि :—

तोहूँ ओकरा संग बैसि जुत्ता पहिरि खाइत छला
काँचे पेयाजक संग कीदन गिरैत छला
जाति धर्म सभकेँ ताँ भसौलह ओहि सी० सी० मे
× × ×
फेकू सभ भात दालि एखन विदा होउ
भागिन कृस्तान भेल, छूआ छूति उठा देलक
चलू आब गंगाजीमे बालु माटि गीड़य पड़त।[३९]

राजनीति

आधुनिक मैथिली काव्यमे राजनीतिक पृष्ठभूमिमे हास्य-व्यंग्यक कवि लोकनि वास्तविकताक उद्घाटन कयलनि अछि। एहि क्षेत्रमे चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'क एकाधिकार छनि। ई 'युग-चक्र'मे भारतवर्षक स्वतन्त्रता, महात्मा गांधीक अभिलाषा, जमीनदारी उन्मूलन एवं द्वितीय विश्वयुद्धक विभीषिकापर हास्य-व्यंग्यक अजस्र धारा बहौलनि अछि। स्वतंत्रताक पश्चात् भारतवर्षमे महात्मा गांधी रामराज्यक कल्पनाकेँ साकार रूप देमय चाहैत छलाह, किन्तु कुशासनक फलस्वरूप हुनक कल्पना साकार नहि भ' सकल। व्यंग्य-कवि चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'क कथन छनि :—

मनमे होइछ सदिखन शंका
रामराजमे बनै न लंका

कवि छथि बहुतो किन्तु कपीशक
बिनु के डाहत नगर भयंकर।[४०]

एतय 'रामराज्य', 'लंका' एवं 'कपि' मे भयंकर व्यंग्य अन्तर्निहित अछि। 'जी हमर मजबूर'मे राधाकृष्ण झा 'बहेड़' स्वतन्त्र भारतक विषयमे जे कल्पना कयलनि अछि तकरा स्पष्ट करब समुचित बुझना जाइछ। कविक कल्पना जखन साकार नहि भ' पबैछ तँ भारतक योजनावादी नीतिक कटु आलोचना व्यंग्यक माध्यमे करैत छथि :—

'हम स्वतंत्र छी' से कहबा ले जी हम्मर मजबूर
आशा आ' विश्वासक करसी द' कय तापी घूर
विपुल वाहिनी संग योजना-अश्व उमकि छिड़ियाय
मानव-सुख-सपना रटना क' चौतारहिँ किकियाय
यज्ञ हेतु होता अपनहि घी सँ जनु प्रक्षालय
मुक्त विहग विहगी व्याकुल खोंता लगबय ककरा लय[४१]

किन्तु भारतमे एहन-एहन योजनाक कोनो क्रांतिकारी प्रभाव नहि परिलक्षित भ' रहल अछि। हास्य-व्यंग्यकार लोकनिकेँ एहन सुअवसरपर नव-नव मसालो भेटैत छनि। जगदीश मिश्र 'प्रशान्त' 'मोखा लग मोथा जनमल अछि' मे एहन योजनापर तीक्ष्ण व्यंग्य कयलनि अछि :

जकयक सबटा काज पड़ल अछि
जाल लगौलक भरि घर मकड़ा
कते सुनब ई मूसक झगड़ा
चीं चीं चों चों होइछ सदिखन
की देखू हम पोथी-पतरा
चिनवाड़क चर्चे जनु पूछू
मोखा लग मोथा जनमल अछि।[४२]

किन्तु देशक आर्थिक स्थितिक विकास कनेको नहि भेल। एहन स्थितिमे इऐह भ' रहल अछि जे व्यक्ति वा वर्गविशेष अपन स्वार्थसिद्धिक हेतु प्रयत्नशील भ' गेल छथि। समाजक एहन विषम स्थिति केँ देखिक' व्यंग्यकार किंकर्त्तव्यविमूढ़ भ' कहैछ :—

किनक किनक मुख - चन्द्र निहारू?
किनक-किनक पद - कमल पखारू?
लाजेँ नत कोंठी सम एक दिस
किनकर घोघ कुमारि उघारू
जखन एम्हर की जानि कखन सँ
वेहरि पर ठठरी राखल अछि।[४३]

मैथिलीक हास्य-व्यंग्य कवि अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक पृष्ठभूमिमे अनेक काव्यक सर्जन कयलनि। द्वितीय महायुद्धक विभीषिकासँ सम्पूर्ण संसार संत्रस्त भ' गेल छल। एहि विश्वयुद्धमे रूस, अमेरिका एवं ब्रिटेन एक संग भ' की-की ने कयलक ? देशक स्थितिकेँ देखि चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' कहैत छथि :—

पदलोलुप सब लोक भेल अछि
निस्तन जे छल फोंक भेल अछि
त्यागक मंत्र सिखाबै अनका
ओ अपने घसकान दंत अछि
हमर कथा क्यो कान दैत अछि।[४४]

एहि युद्धक पश्चात् अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिमे क्रान्तिकारी परिवर्त्तन भेल। एकरा आलम्बन बनाक' लिखनिहार कविवर सीताराम झा व्यंग्य करैत छथि :—

हिटलरक युद्ध घमसान भेल
ट्रूमेन चर्चिलक मिलान भेल
सम सृष्टि रूस बलवान भेल
मर्दित जर्मन जापान भेल
इटली ब्रिलटल हतप्रान भेल
अङरेजक शौर्य मलान भेल
अमरीकी दल बहुमान भेल
भारतमे पाकिस्तान भेल।[४५]

अमेरिकाक वैदेशिक नीतिकेँ सम्पूर्ण संसारमे एतेक प्रमुखता भेटल जे पी० एल० ४८० क अन्तर्गत एक-एक क' सब देशकेँ ओकरा अधीन होमय पड़ल। चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' पी० एल० ४८० क एहि नीतिपर व्यंग्य करैत छथि, जे हास्यक उत्पत्तिक हेतु पर्याप्त अछि :—

जानसन बखाड़ीमे विलसन छथि ठेकी
भुट्टो छथि ऊखरि सुकर्ण थिका ढेकी
चाउ-माउ जंघा जर्दान बनल पुछरा
भारत बनि पैसल अछि साम बला मुसरा[४६]

राजनीतिक वात्याचक्रक कारणेँ भारतवर्षमे मुसलमानक शासनक पश्चात् अंग्रेजी राज्यक स्थापना भेल। न्याय-व्यवस्थाकेँ सुदृढ़ रखबाक दृष्टिएँ अंग्रेज शासक लोकनि कचहरीक स्थापना कयलनि जकर उद्देश्य छल जे व्यक्ति-व्यक्तिकेँ समुचित रूपेँ न्याय भेटि सकय। किन्तु न्यायक नामपर अन्याय कतेक भ' रहल अछि तकर वास्तविक स्वरूपपर कवीश्वर निर्ममतापूर्वक व्यंग्य करैत छथि :—

न्यायक भवन कचहरी नाम।
सभ अन्याय भरल तेहि ठाम।
सत्य वचन विरले जन भाय।
सभ मन धनक हरन अभिलाय।
कपट भरल कत कोटिक कोटि।
ककर न कर मर्यादा छोटि।
कवि मन चन्द्र कचहरी घूस।
सभ सहमत ककरा के दूस।[47]

एतय शासन-व्यवस्थापर अत्यन्त गंभीर व्यंग्य अछि। अंग्रेज लोकनि अस्त्र-शस्त्रपर मनहि प्रतिबन्ध लगौने होथि, किन्तु कचहरी सदृश संघर्षक नव द्वार खोलल गेल अछि। एतय मोकदमाबाजीक कारणेँ लोकक बीच पारस्परिक सद्भावना एवं सामंजस्यक अभाव भ' गेल अछि। कवि व्यंग्य करैत छथि :—

अस्त्र-शस्त्र रोक आब मामिलाक मारि
भाइ-भाइकेँ पड़ैछ नित्य-नित्य गारि।
ठक्क लोक हुक्क पाव साधु के उजारि।
दैव जे ललाट लेख के सकैछ टारि।[48]

सामाजिक विषमता

मिथिलाक सामाजिक पृष्ठभूमिमे शोषित वर्गक स्थिति अत्यन्त दयनीय अछि। कविचूड़ामणि काशीकान्त मिश्र 'मधुप'क अधिकांश कविता शोषितक स्थितिपर प्रकाश दैत अछि। 'दीनिवाह'मे एक निर्धन सुकनाक वर्णन अछि जे शिशिर ऋतुक भयंकर शीतमे अपन मालिकक सेवामे प्रस्तुत होइत अछि, किन्तु भूलुंठित भ' जाइत अछि। समाजक एहन पक्षक रहस्योद्घाटन एहि पंक्तिमे भेल अछि :—

पालासँ भीजल दुर्बल तन
कृशकाय पीठमे गत पाँजर
चोकटल युग गाल धसल लोचन
कंकाल अकालक बनि पाहुन।[49]

एहन असहनीय स्थितिमे क्रूर-कठोर शोषक ओकरापर कठोर लाठीक प्रयोग करैछ। ओकर पत्नी बिलटी घटना-स्थल पर उपस्थित होइछ आ स्थितिकेँ देखि-बूझि हाक्रोश कय उठैछ :—

शीतक चपेटमे पड़ि रौजा
चल गेल हमहि हिनका खेलहुँ
ई की शोणितसँ भिजल खोह ?
रे दैवा ? फूटल छइ कपार
धुठियोपर लाठक चेन्ह ओह ? [50]

'घसल अठन्नी'मे शोषक वर्गक कठोरताक स्पष्ट चित्र भेटैछ। शोषक वर्ग कोन प्रकारें शोषण करैछ ताहि दिस कवि संकेत करैत छथि। ग्रीष्म ऋतुक प्रचंड ज्वालामे क्षुधित, पिपासित वुचनी अपन गृहस्थक खेत कोड़ैछ किन्तु जखन ओ अपन पारिश्रमिकक हेतु पहुँचैछ तखन ओकर मालिक भुटकुन बाबू एक घसल अठन्नी द' विदा क' दैत छथि। वुचनीक दशाक चित्रण कय कवि व्यंग्य करैत छथि जे समाजक एहन उपेक्षित एवं क्षुधितक के अवलम्ब अछि? वुचनी जखन घसल अठन्नी बदलबाक हेतु अबैछ तँ ओकर मालिक कोना ओकर स्वागत करैछ ताहि दिस दृकूपात तँ करू :—

चट, चट, चट, चट
कुलिशहुँ सँ कर्कश भीमकाय
मखनाक चाट सँ निस्सहाय
भू-लुंठित दूनू माय पूत
भ' गेल बेहोश।[५१]

सामाजिक विषमताक परिणाम अछि जे भाय-भायक बीच सेहो पारस्परिक वैमनस्य मुखर भ' रहल अछि। 'एका तारा मया दृष्टा'मे रामचरित्र पाण्डेय 'अणु' एही भावनापर व्यंग्य कयलनि अछि :—

अछि पड़ोसमे अपने छोटका भाय
भिन्न परुकें जे भल'ए
दृष्टि पड़ल ओम्हर नहि
ज कदाच भए गेल गगन रण घन-आच्छादित।[५२]

मैथिलीक व्यंग्यकार एहि विषमताक अतिरिक्त मिथिलाक सामाजिक जीवनक कल्पना नव ढंगस करय चाहैत छथि। गोविन्द झा 'अन्न देवता'मे नव समाजक कल्पना कयलनि अछि :—

अरे मुट्ठी भरि मनुक्खक दास
एकसरे हम खाउ तोहर मांस।
संनिहित छह जकर कण-कण मध्य
लाख भूखल मानवक अंशांश।
खाउ एकसर कोन विधि हम, हाए
नहि सकब एत गोट पाप पचाए
छल-छूरी सँ काटि आनक घेंट
जे अपने भरने रहै अछि टेंट॥[५३]

'बइमान'मे रामचरित्र पाण्डेय 'अणु' सामाजिक विषमताकें प्रतीक रूपमे देखलनि। दलित वर्गक स्थिति तँ समाजमे अत्यन्त दयनीय अछिए, अभिजात वर्गक ऐंठन एखन धरि नहि जरल अछि। एहन मनोदशापर कवि व्यंग्य करैत छथि :—

आगि बबुला भेलाह
गारि ओ श्राप दैत बजलाह
'एक दिन पनपियाइ नहि गेलै
तकर ई दशा ?'
पीठ केर खाल खींचि नहि लेब ओकर
तँ की हम बाभन ?[५४]

मिथिलाक सामाजिक जीवनमे पर्दाप्रथाक प्रचलन अछि जकर अनुगमन नहि कयलापर कठोर सँ कठोर आलोचना होइत अछि। एकरे परिणाम थिक जे स्त्रीगणक शारीरिक, मानसिक एवं चारित्रिक विकास अवरुद्ध भ' गेल अछि। व्यंग्यकार हरिमोहन झा 'सनातनी बाबा ओर कलियुगी सुधारक'मे एहि प्रथापर निर्ममतापूर्वक प्रहार कयलनि अछि। ओ एहन सामाजिक व्यवस्था आ ओकर परिणाम पर व्यंग्य करैत छथि जतय हुनक शरीर उपर सूर्यक किरण सेहो नहि लागि पबैछ :—

दै पिठार सरबासँ मूनल, जहिना भारक कूर।
तहिना पुतोहु रहथि स।सुरमे, झाँपनि नहि हो दूर॥
जे अलच्छि बाला विधवा अछि, करौ जन्म भरि पाठ।
वर दोसर कोवर करबा लय, जाथि सभा सौराठ॥[५५]

मिथिलामे एहनो उदाहरण भेटैछ जतय पति पत्नीक नाक पर्यन्तक दर्शन नहि करबामे गौरव-बोध करैत छथि। एहन विषम सामाजिक परिस्थितिक चित्रणमे हास्यक धारा फूटि पड़ैछ, किन्तु व्यंग्य सेहो ओतबे मार्मिक अछि :—

नानी तोहर आइ धरि मुँह नहि उघाड़लथुन्ह
कहियो नहि आइ धरि पीढ़ी पर बैसलीह।
हम पर्यन्त हुनक नाक नहि देखलिऐन्हि,
चौकठिसँ बाहर ओ कहियो पैर देलन्हि नहि।[५६]

मैथिलीक हास्य-व्यंग्य साहित्यकार यथार्थक प्रति पूर्ण सजगताक परिचय देलनि अछि। मुदा, मैथिलीक कथाकार एवं उपन्यासकारक प्रतिभा हास्य-व्यंग्यक प्रस्तुतीकरणमे वैवाहिक समस्याक परिधिसँ आगाँ नहि बढ़ि सकलनि। केओ नव समस्याक प्रति सजगता नहि देखौलनि—ओना परवर्ती युगमे किछु एहन उदीयमान साहित्यकारक प्रादुर्भाव अवश्य भेल अछि जे उपर्युक्त समस्यासँ पृथक् भ' हास्य-व्यंग्यक व्यापक आधार देलनि अछि।

जते दूर धरि नाटक, एकांकी एवं प्रहसनक प्रश्न अछि, हास्य-व्यंग्यकार दुइ प्रवृत्तिक परिचय देलनि—किछु तँ परम्परागत रूपसँ संस्कृत नाटकक विदूषक परम्पराक अनुगमन कयलनि, किछु एहिसँ पृथक् विभिन्न सामाजिक विषमतापर प्रहार कयलनि। एहि दृष्टिसँ एकांकी आ प्रहसन विशेष प्रौढ़ कहल जा सकैछ। एहिमे रचनाकारलोकनि वस्तुतः नव समस्याकेँ अपनाकय एक स्वतन्त्र दृष्टिकोण प्रस्तुत कयलनि। किन्तु हास्य-व्यंग्यमे मैथिली कविता अधिक सशक्त कहल जा सकैछ। एहिमे कविलोकनि अपन परिधिकेँ सीमित नहि रखलनि, प्रत्युत अपन विशाल

पर्यवेक्षण-शक्तिक परिचय देलनि। वैवाहिक समस्यापर लिखल गेल कविता हास्य-व्यंग्यक दृष्टिसँ निश्चित रूपसँ प्रभावशाली अछि। ओ पाठककेँ अपना दिस आकर्षित करैछ। एतदतिरिक्त अन्यान्य ज्वलन्त समस्यापर लिखल गेल जे हास्य-व्यंग्य गोत्रक कविता उपलब्ध अछि ओहो पाठकक आकर्षणक केन्द्र बनि गेल अछि। हास्य-व्यंग्य कविलोकनिक दृष्टिकोण स्वस्थ एवं संतुलित अछि। कहल जा सकैछ जे आधुनिक हास्य-व्यंग्ययुक्त कविताक उपलब्धि निश्चित रूपेँ महत्त्वपूर्ण अछि।

सन्दर्भ-निर्देश

१. दरभंगा प्रेस कम्पनी, प्रथम संस्करण, सन् १२७७ साल।

२. प्रभुनारायण दास, ग्राम-खड़ौआ, अड़रिया संग्राम, मधुबनी, प्रथम सस्करण, संवत् २०११।

३. मिथिला भाषा रामायण, पृष्ठ ५७।

४. तत्रैव, पृष्ठ ५८।

५. तत्रैव, पृष्ठ २८०।

६. रमेश्वर चरित मैथिली रामायण, पृष्ठ ५९।

७. तत्रैव, पृष्ठ ६५।

८. उनटा पाल, नवरत्न गोष्ठी, मिश्रटोला, दरभंगा, प्रथम-संस्करण, १९७४, पृष्ठ ४८-४६।

९. पत्रहीन नग्न गाछ, मैथिली एकेडमी, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, १९६७, पृष्ठ २०-२१।

१०. स्वदेश, वर्ष १, अंक ३, मार्च १९४७, पृष्ठ १५२।

११. चित्रा, अखिल भारतीय मैथिली साहित्य समिति, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, १३७६ साल, पृष्ठ ११।

१२. गुदगुदी, नवरत्न गोष्ठी, दरभंगा, प्रथम संस्करण, १३६४ साल, पृष्ठ २१।

१३. तत्रैव, पृष्ठ ५३।

१४. चित्रा, पृष्ठ १२।

१५. अलंकार-दर्पण, मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, कचौड़ी गली, बनारस सिटी, पृ० ९।

१६. चित्रा, पृष्ठ १७।

१७. उनटा पाल, पृष्ठ ५५।

१८. उनटा बसात, मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, कचौड़ी गली, बनारस सिटी, प्रथम संस्करण, संवत् २००९, पृष्ठ १३।

१९. चित्रा, पृष्ठ ७७ ।
२०. मैथिली नवीन गीत, विद्यापति प्रकाशन, दरभंगा, प्रथम संस्करण, १९६५, पृष्ठ १८७ ।
२१. मिथिला मिहिर, ९ अप्रैल, १९६२, पृष्ठ १२ ।
२२. गुदगुदी, पृष्ठ ३५ ।
२३. मिथिला मिहिर, रवि १९ मार्च १९६१, पृष्ठ १२ ।
२४. पत्रहीन नग्न गाछ, पृष्ठ ५१ ।
२५. तत्रैव, पृष्ठ ५७ ।
२६. युगचक्र, नवरत्न गोष्ठी, मिश्रटोला, दरभंगा, प्रथम संस्करण, १९५२, पृष्ठ २५ ।
२७. गुम्म भेल ठाढ़ छी, ठुट्ठा परिवार, काजीपुर पटना-४, प्रथम संस्करण, १९६६, पृष्ठ ३० ।
२८. मिथिला दर्शन, फरवरी १९६०, पृष्ठ ३ ।
२९. लोकलक्षण, मास्टर खेलाड़ी लाल एण्ड सन्स, कचौड़ी गली, बनारस सिटी, पृष्ठ २-३ ।
३०. युगचक्र, पृष्ठ १७ ।
३१. माटिक दीप, तारामंडल, मुजफ्फरपुर, द्वितीय संस्करण, १९६५, पृष्ठ १८ ।
३२. चित्रा, पृष्ठ ४६ ।
३३. उनटा पाल, पृष्ठ ५४-५५ ।
३४. गुदगुदी, पृष्ठ ३३ ।
३५. स्वरगन्धा, त्रिवेणी प्रकाशन, खानपुरा, दरभंगा, प्रथम संस्करण, १९५६, पृष्ठ ७ ।
३६. वैदेही, अगस्त १९५६, पृष्ठ १८५ ।
३७. तत्रैव, नवम्बर, १९५६, पृष्ठ २५६ ।
३८. समस्या, वैद्यनाथ झा, राजकुमार गंज, दरभंगा, प्रथम संस्करण, १९६८ ।
३९. वैदेही, जून १९५३, पृष्ठ ९० ।
४०. युगचक्र, पृष्ठ ३१ ।
४१ मिथिला मिहिर, २८ मइ १९६१, पृष्ठ ८ ।
४२. मिथिला मिहिर, १९ फरवरी १९६१, पृष्ठ ९ ।
४३. तत्रैव, पृष्ठ ९ ।
४४. युगचक्र, पृष्ठ ३७ ।
४५. उनटा बसात, पृष्ठ ११ ।
४६. मिथिला मिहिर, २८ नवम्बर १९६५, पृष्ठ ६ ।

४७. चन्द्रपद्यावली, श्री रमेश्वर यन्त्रालय, दरभंगा, प्रथम संस्करण, संवत् १९८८, पृष्ठ २१०-११।

४८. तत्रैव।

४९. त्रिवेणी, निर्माण प्रकाशन, लहेरियासराय, वसन्त पंचमी, २०११, पृष्ठ ३।

५०. तत्रैव, पृष्ठ ४।

५१. तत्रैव, पृष्ठ ३५।

५२. नक्षत्र, पाण्डेय प्रकाशन, लक्ष्मीपुर (पंडौल) मधुबनी, प्रथम संस्करण, १९५६, पृष्ठ ७४।

५३. मैथिली नवीन गीत, पृष्ठ १३७।

५४. तत्रैव, पृष्ठ ४४।

५५. मिथिला, वर्ष १, अंक १, पृष्ठ ३०।

५६. वैदेही, विशेषांक, सन् १३५८ साल, पृष्ठ ९।



हिन्दी साहित्य में हास्य एवं व्यंग्य

डा० नरेन्द्र झा

हास्य का मूल असंगति में है। वाणी, आकार, चेष्टा, वेशभूषा आदि की विकृति हास्य उत्पन्न करती है। अर्थात् हमारे मन की धारणा के प्रतिकूल जब किसी वस्तु या व्यक्ति के वेष, चेष्टा, वाणी, आकार आदि में असंगति दीखती है तब अनायास हमारे मन में गुदगुदी उठती है और यह गुदगुदी हास्य की जननी है। हास्य का जीवन में महत्त्व जानकर ही भारतीय आचार्यों ने हास्य को स्थायी भावों में स्थान दिया और साहित्य में हास्यरस की स्वतन्त्र सत्ता मानी। आचार्यों के अनुसार "असंगत वेशभूषा, वचन आदि वाले व्यक्ति (आलम्बन विभाव) को देखने से उद्बुद्ध, उसकी असंगत वेशभूषा, वचन के दर्शन तथा श्रवण आदि से उद्दीपन विभाव, आलस्य, चपलता, अवहित्था इत्यादि संचारियों से परिपुष्ट एवं मुख के फैलने, सिकुड़ने, आँखों के मींचने आदि (अनुभावों) से परिपुष्ट, सामाजिक का हास (स्थायीभाव) ही हास्यरस की पूर्णदशा प्राप्त करता है। संक्षेप में, हास्यरस वहाँ होता है जहाँ विकृत वेशभूषा, रूप, वाणी तथा अंग-भंगी आदि के देखने-सुनने से हास स्थायीभाव परिपुष्ट हो जाता है।

पंडितराज जगन्नाथ ने हास्य के दो भेद किये हैं—आत्मस्थ और परस्थ। आलम्बन को देखकर जो हास स्वतः प्रस्फुटित होता है वह आत्मस्थ कहलाता है और जो दूसरों को हँसते देखने से उत्पन्न होता है वह परस्थ कहलाता है। हास्य की मात्रा के अनुसार हास्य के अन्य भेद भी किये गये हैं जैसे स्मित, हसित, विहसित, अवहसित और अतिहसित। हिन्दी के आचार्य कवि केशवदास ने मन्दहास, कलहास, अतिहास और परिहास नामक चार अन्य भेद किये हैं। एक अन्य आचार्य ने दिव्य, किन्नरी तथा विद्याधरी नामक वर्गीकरण किया है।

पश्चिम में हास्य-साहित्य कई रूपों में प्राप्त है। हास्य के कारणों के आधार पर वहाँ हास्य के ह्यूमर, वाक्छल (Wit), व्यंग्य (Satire), वक्रोक्ति (Irony) और प्रहसन (Farce) नामक भेद किये गये हैं। हॉब्स, वर्गसाँ, फ्रॉयड आदि यूरोपीय चिन्तकों ने हास्य पर मनोवैज्ञानिक ढंग से विचार किया है। पाश्चात्य हास्यसाहित्य समृद्ध होने के साथ ही विविधता में पूर्ण है। पं० रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार "शिष्ट और परिष्कृत हास्य का जैसा सुन्दर विकास पाश्चात्य साहित्य में हुआ है, वैसा अपने यहाँ नहीं दिखाई दे रहा है।"

हास्य का ही एक उपभेद व्यंग्य है। हास्य प्रायः निश्छल तथा विनोद के लिए होता है, किन्तु व्यंग्य उद्देश्यपरक होता है। "हास्य अपनी मूल प्रकृति में बहुत निश्छल होता है, वह किसी का जी दुखाए बिना आलम्बन की विचित्रता का चित्रण कर एक आह्लाद प्रदान करता है। वह किसी को कचोटता नहीं, खुला सुख देता है। व्यंग्य का सम्बन्ध समाज और व्यक्ति दोनों के जीवन से हो सकता है किन्तु मूलतः सामाजिक जीवन से ही अधिक होता है।"[1] व्यंग्य में दूसरों पर हँसा जाता है और उनकी त्रुटियों को उजागर किया जाता है। व्यंग्य की मूलात्मा असन्तोष है। व्यक्ति, वस्तु या व्यवस्था के प्रति असन्तोष व्यक्त करने के क्रम में व्यंग्य की सृष्टि होती है। वचनवक्रता प्रायः व्यंग्य की जान है। हिन्दी साहित्य में हास्य का यह भेद पर्याप्त मात्रा में मिलता है। 'धार्मिक, सामाजिक तथा अन्य सुधारों के लिये इसका आरम्भ से ही प्रयोग किया गया है।'

हास्य और व्यंग्य के इस सिद्धान्त-विवेचन के बाद जब हम हिन्दी साहित्य के हास्य एवं व्यंग्य की ओर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि अन्य रसों एवं मनोदशाओं की तुलना में हिन्दी में हास्य का साहित्य बहुत उपेक्षित रहा है। हिन्दी ही क्यों, एक तरह से समस्त भारतीय साहित्य में हास्य का अभाव है। संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश जैसे प्राचीन साहित्य में भी स्वतन्त्र रूप से हास्य-साहित्य की रचना नहीं हुई है। संस्कृत नाटकों में भोजनभट्ट विदूषकों की योजना को छोड़कर हास्य के प्रसंग में छिटपुट प्रयास ही हुए। महान एवं गम्भीर कवियों ने हास्य रस की प्रायः उपेक्षा ही की है। अधिकांश लोगों ने इस उपेक्षा का मूल कारण अद्वैतप्रधान भारतीय दृष्टिकोण को माना है। जयशंकर प्रसाद के अनुसार "हास्य मनोरंजनी वृत्ति का विकास है और शताब्दियों से पराधीन और पददलित रहने के कारण यह वृत्ति ही सठिया गयी है।"

हिन्दी में हास्य एवं व्यंग्य का विकास आधुनिक काल में भारतेन्दु की रचनाओं से होता है, किन्तु पहले भी यत्र-तत्र इसकी झलक हमें मिलती है। आदिकाल के अमीर खुसरो ने पहेलियों और मुकरियों के रूप में हास्य-साहित्य की रचना की। खुसरो बड़े विनोदी एवं सहृदय व्यक्ति थे। जनता के मनोरंजन के लिये उन्होंने पहेलियों और मुकरियों की रचना की। आदिकाल में खड़ीबोली को काव्य की भाषा बनानेवाले वे पहले कवि हैं। उदाहरणार्थ उनकी पहेली देखें –

(क) रोटी जली क्यों, घोड़ा अड़ा क्यों, पान सड़ा क्यों ? फेरा न गया।

(ख) श्याम बरन और दांत अनेक लचकत जैसे नारी
दोनों हाथ से खुसरो खींचे और कहे तू आरी।

इस प्रकार की लोकप्रचलित एवं लोकप्रिय पहेलियों के साथ ही उन्होंने चार पंक्तियों की चौकानेवाली पहेलियाँ भी लिखी हैं जिन्हें उन्होंने मुकरियाँ कही हैं। इनमें 'क्यों सखि साजन' के प्रश्न के साथ सामान्य से भिन्न उत्तर का कौतूहलपूर्ण वर्णन बड़ा ही रोचक है। जैसे—

(क) वह आवे तब शादी होय
उस दिन दूजा और न कोय
मीठे लागे वाके बोल
क्यों सखि साजन, ना सखि ढोल।

(ख)

जब मेरे मन्दिर में आवे
सोते मुझको आन जगावे
पढ़त फिरत वह विरहके अच्छर
ऐ सखि साजन, ना सखि मच्छर।

भक्तिकाल आध्यात्मिक भावों के उत्कर्ष का काल रहा है। भौतिकता की उपेक्षा करते हुए कवियों ने ईश्वर की भक्ति के गीत रचे हैं। किन्तु फिर भी अवान्तर रूप से कहीं-कहीं हास्य के प्रसंग भी आए हैं। संत कवियों ने बाह्याचारों एवं आडम्बरों पर व्यंग्य किए हैं। कबीर का यह पद लिया जा सकता है—

मन न रंगौलें, रंगौले जोगी कपड़ा
आसन मारि मॅन्दिर में बैठे नाम छाड़ि पूजन लागे पथरा।
कनवां फड़ाय जोगी जटवा बढ़ौले दढ़िया बढ़ाय जोगी बन गैले बकरा।
जंगल जाय जोगी धुनिया रमौले काम जराय जोगी बन गैले हिजरा॥

वात्सल्य एवं शृंगार के निष्णात कवि सूरदास भी बड़े विनोदी प्रकृति के थे। तभी तो सूर-सागर में कई अवसरों पर उन्होंने हास्य का नियोजन किया है। बालकृष्ण दूसरे घर में चोरी से माखन खा रहे हैं कि तभी घर की मालकिन आकर पूछती है—

श्याम कहा चाहत से डोलत?

तपाक से कृष्ण जो उत्तर देते हैं उसमें उनका वाक्छल (wit) दीखता है—

मैं जान्यो ये घर अपनो है या धोखे में आयो।
देखत ही गोरस में चींटी काढ़न को कर नायो॥

ज्ञानोपदेश देनेवाले ऊधो की गोपियाँ खूब खबर लेती हैं—

आए जोग सिखावन पाँड़े
परमारथी पुरानन लादे ज्यों बनजारे टाँड़े॥

भ्रमरगीत व्यंग्य-काव्य का अद्‌भुत उदाहरण है।

महाकवि तुलसीदास ने भी रामचरितमानस, कवितावली एवं विनयपत्रिका में हास्य की सुन्दर नियोजना की है। मानस में दुष्ट-वन्दना, पार्वती-परीक्षा, शिव-विवाह, नारद-मोह, अंगद-रावण-संवाद शूर्पनखा-प्रसंग आदि स्थलों पर हास्य के भेदोपभेदों का निदर्शन होता है। लक्ष्मण-परशुराम-संवाद में वक्रोक्ति का सुन्दर उदाहरण मिलता है—

क्रोधी परशुराम की उलटी-सीधी बातों को सुनकर लक्ष्मण कहते हैं—

लखन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनै पारा॥
अपने मुँह तुम्ह आपन करनी। बार अनेक भाँति बहु बरनी॥

नहि सन्तोष त पुनि कछु कहहू । जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू ॥
वीरव्रती तुम्ह धीर अछोभा । गारी देत न पावहु सोभा ॥
....कहेउ लखन मुनि शील तुम्हारा । को नहि जान विदित संसारा ॥
माता-पितहि उरिन भए नीकें । गुर रिनु रिन रहा सोचु बड़ जीकें ॥

रीतिकाल शृंगारकाल के नाम से जाना जाता है। कई लोगों ने हास्य को शृंगार से ही विकसित माना है। (शृंगाराद्भवेद् हासः)। सचमुच विलासिता तथा हास्य का सहभाव स्वाभाविक है। किन्तु आश्चर्य है कि रीतिकाल में शृंगारप्रधान साहित्य की रचना तो प्रचुर मात्रा में तथा अश्लीलता की सीमा तक हुई, किन्तु हास्य-व्यंग्य पूर्णतः उपेक्षित रह गया। रेगिस्तान में 'ओएसिस' की तरह थोड़ी-बहुत हास्य एवं व्यंग्य की रचनाएँ हमें देखने को मिलती हैं। बिहारी ने कई दोहों में व्यंग्य का मनोरंजक चित्रण किया है। उदाहरण के लिये उनका निम्नलिखित दोहा लिया जा सकता है जिसमें स्वयं नपुंसक वैद द्वारा दूसरों को शक्तिवर्धक दवा बाँटते देख वैदवधू की प्रतिक्रिया व्यक्त की गयी है—

बहुधन लै अहसानु कै, पारौ देत सराहि ।
वैदवधू हँसि भेद सौं, रही नाह मुँह चाहि ॥

रीतिकाल के ही अलीमुहीव खाँ 'प्रीतम' भी हास्य रस के प्रसिद्ध कवि हुए। उन्होंने 'खटमल बाईसी' की रचना की है जिसमें खटमल से सभी प्राणियों को भयग्रस्त दिखाया गया है, यहाँ तक कि देवता भी खटमल के कारण ही खाट पर नहीं सोते—

विधि हरि हर, और इनते न कोऊ, तेऊ
खाट पै न सोवैं खटमलनि सौं डरि कै ।

रीतिकाल के ही बेनी कवि ने एक कंजूस व्यक्ति पर बड़ा पैना व्यंग्य किया है, क्योंकि उस कृपण ने अपने पिता के श्राद्ध में कवि को दुर्गन्धयुक्त सड़े हुए पेड़े दान किए थे—

चींटी न चाटत मूसे न सूंघत, माछी न बास ते आवत नेरे ।
आनि धरे जब ते घर में, तब ते रहै हैजा परोसिन घेरे ॥
माटिहु में कछु स्वाद मिलै इन्हैं, खात सो ढूढ़त हर्र बहेरे ।
चौंकि उठ्यो पितु लोक में बाप ये,आपके देखि सराध के पेरे ॥

१९वीं शती भारत के लिये पुनरुत्थान की शती है। नवीन शिक्षा-प्रणाली, रेल-तार की सुविधा तथा ज्ञान-विज्ञान के विकास से नवचेतना की लहर चतुर्दिक व्याप्त हो गयी और भारतवासियों में भी धीरे-धीरे अपनी स्थिति को पहचानने और अंग्रेजों की शोषक-नीति को जानने का अवसर मिला। अतः इस नवचेतना के कारण भारतेन्दु-युग हास्य एवं व्यंग्य की रचना की दृष्टि से बड़ा उर्वर रहा। "हरिश्चन्द्र तथा उनके सम-सामयिक लेखकों में जो एक सामान्य गुण लक्षित होता है वह है सजीवता या जिन्दादिली। सब में हास्य या विनोद की मात्रा थोड़ी-बहुत पायी जाती है।"[२]

इस काल के कवियों एवं लेखकों की रचनाओं में हास्य के सभी भेदोपभेदों के उदाहरण हमें मिलते हैं। "हास्य के आलम्बन अब सूम तथा अरसिक ही नहीं रह गये, सरकार के खुशामदी दम्भी देशभक्त, पुरानी लकीर के फकीर, फैशन के गुलाम आदि में भी हँसने की सामग्री मिलने लगी।"[३]

भारतेन्दु-युग से हिन्दी के आधुनिक युग का प्रारम्भ होता है। रीतिकाल तक हिन्दी साहित्य का इतिहास हिन्दी कविता का इतिहास ही रहा है, क्योंकि गद्य का प्रचार साहित्य रचना के लिये तबतक नहीं हुआ था। भारतेन्दु ने गद्य को व्यवस्थित कर इसके सभी रूपों का विकास किया। अतः भारतेन्दु-युग से कविता के अतिरिक्त निबन्ध, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि के रूप में हिन्दी साहित्य की अनेक कोंपलें फूटीं। भारतेन्दु ने पद्य तथा गद्य दोनों में प्रचुर हास्य का मिश्रण किया है। अपने नाटकों में उन्होंने कई शिष्ट हास्यमय गीतों का प्रयोग किया है, जैसे 'चने जोर गरम' शीर्षक उनका गीत—

चने बनावें घासीराम जिनकी झोली में दूकान।
चना चुरमुर चुरमुर बोले, बाबू खाने को मुँह खोले।
चना खाते सब बंगाली, जिनकी धोती ढीली-ढाली।
चना खाते मियाँ जुलाहे दाढ़ी हिलती गाहे-बेगाहे॥

बड़ी संख्या में उन्होंने व्यंग्य गीतों तथा मुकरियों की रचना की थी। 'नये जमाने की मुकरी' शीर्षक से उन्होंने समकालीन सामाजिक राजनीतिक विसंगतियों को लेकर मुकरियाँ लिखी हैं जिनपर खुसरो की शैली का स्पष्ट प्रभाव है।

'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'विषस्यविषमौषधम्', 'अन्धेर नगरी', तथा 'भारत-दुर्दशा' में पर्याप्त व्यंग्य है। अन्धेर नगरी का व्यंग्य तो इतना लोकप्रिय हुआ कि 'अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' एक कहावत बन गया।

भारतेन्दु के अतिरिक्त भारतेन्दु-मंडल के अन्य साहित्यकारों, जैसे पं० प्रताप नारायण मिश्र, पं० बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', बालमुकुन्द गुप्त आदि, ने भी प्रहसनों एवं व्यंग्य-गीतों की रचना के द्वारा हास्यरस का साहित्य प्रस्तुत किया।

'प्रेमघन' के 'प्रेमघन सर्वस्व' का 'हास्यविन्दु' समसामयिक परिस्थितियों का विनोदपूर्ण वर्णन करता है। प्रताप नारायण मिश्र की 'तृप्यन्ताम्', 'हरगंगा', 'बुढ़ापा' और 'ककाराष्टक' शीर्षक कविताएँ अपनी नयी तर्ज के लिये प्रसिद्ध हैं। 'तृप्यन्ताम्' में इन्होंने बताया है कि हिन्दू अपने पितरों का तर्पण करते हैं, किन्तु अकाल और महँगी में मृत्युदेवता को छोड़कर अन्य देवता का तर्पण तो संभव ही नहीं है :—

लैसन इनकम चुंगी चन्दा, पुलिस अदालत बरसा घाम,
सबके हायन असन-वसन जीवन संशयमय रहत सुदाम।

जो इनहू ते प्राण बचें तो गोली बोलति हाय धड़ाम
मृत्यु देवता नमस्कार सब सब पुकार बस तृप्यन्ताम् ।।

इस काल में 'स्यापा' लिखने का भी खूब प्रचलन हुआ और इसका श्रीगणेश भी भारतेन्दु ने 'उर्दू का स्यापा' लिखकर किया था। बाद में अन्य कवियों ने भी स्यापे लिखे। राधाचरण गोस्वामी ने 'इलबर्ट बिल' पर स्यापा के माध्यम से व्यंग्य किया था :—

है इलबर्ट बिल हाय-हाय, हैं है मुश्किल हाय-हाय
है हकतल्फी हाय-हाय, सब इकतरफी हाय-हाय।
बच्चा-बच्ची हाय-हाय, चच्चा चच्ची हाय-हाय।
सच्चा बनियाँ हाय-हाय, बड़ा कहनियाँ हाय-हाय ।।

कविता के अतिरिक्त भारतेन्दु-मण्डल के सभी साहित्यकारों ने प्रहसनों, निबन्धों एवं उपन्यासों के माध्यम से भी हास्य-साहित्य का विकास किया। प्रताप नारायण मिश्र का 'कलिकौतुक रूपक', पं० बालकृष्ण भट्ट का 'जैसा काम वैसा दुष्परिणाम' तथा राधाचरण गोस्वामी का 'भंग-तरंग' मनोरंजक प्रहसन हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने व्यंग्य शैली में कई निबन्ध लिखे थे जिनमें तत्कालीन राजनीति, व्यक्ति एवं समाज पर व्यंग्य किया गया था। 'आप ही तो हैं', 'कंकड़ स्तोत्र' 'पाँचवें पैगम्बर' 'स्वर्ग में विचार-सभा का अधिवेशन' आदि इनके कुछ प्रमुख हास्य-निबंध हैं। बालकृष्ण भट्ट ने नये-नये विषयों पर मनोरंजक निबन्ध लिखे, यथा 'ईश्वर का ही ठठोला हैं', 'पुरुष अहेरी की स्त्रियाँ अहेर हैं', 'भकुआ कौन है', 'खटका' आदि। उदाहरणार्थ 'खटका' की कुछ पंक्तियाँ देखें :—

"स्कूल में मास्टर साहब साक्षात् यमराज के अवतार, घर में मा-बाप की घुड़की और खटका। बरसवें दिन परीक्षा और दरजा चढ़ाए जाने का खटका। कुछ याद नहीं है, बिना इम्तिहान दिये बनता नहीं। फेल हुए तो अपने साथियों में आँखें नीली होती हैं,। 'साल भर तक किताब के साथ लिपटे रहे। हिस्टरी याद है तो मैथेमैटिक्स का खटका है। खैर किसी तरह इम्तिहान दे दिवाय फारिग हुए अब तो एक नम्बर कम रहने का खटका रहा।"

बालमुकुन्द गुप्त द्वारा लिखित 'शिवशम्भु का चिट्ठा' भी व्यंग्य-विनोद का अच्छा मसाला प्रस्तुत करता है। कुल मिलाकर भारतेन्दु युग में हास्य-रस का हमें बहुआयामी स्वरूप मिलता है।

द्विवेदीयुग खड़ीबोली के विकास एवं व्यापक सुधारों का युग था। इस युग में भी कई कवियों ने हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ की हैं। किन्तु फिर भी "भारतेन्दु-युग जैसी जिन्दादिली, चुहलबाजी और फक्कड़पन इस युग में नहीं रह गया था, अतः उस युग के समान हास्य-व्यंग्यपूर्ण कविता का प्राचुर्य द्विवेदी-युग में नहीं है। इस दिशा में जितना भी लिखा गया है, वह द्विवेदीजी के व्यक्तित्व के प्रभावस्वरूप अपेक्षाकृत संयत और मर्यादित है। हास्य और व्यंग्य के विषय राजनीतिक शोषण, सामाजिक कुरीतियाँ, धर्माडम्बर, लकीर की फकीरी, विदेशीयता का अन्धानुकरण, फैशनपरस्ती तथा व्यभिचार आदि हैं।"[४]

स्वयं आचार्य द्विवेदी ने 'कल्लू अल्हैत' के छद्मनाम से कुछ हास्य कविताएँ लिखी थीं। अड़तीस छन्दों का इनका 'कान्यकुब्ज लीलामृत' भी प्रसिद्ध है। इस युग के अन्य हास्यकार कवि हैं नाथूराम शंकर, ईश्वरी प्र० शर्मा, पं० शिवनाथ शर्मा तथा पं० जगन्नाथ प्र० चतुर्वेदी आदि। आर्यसमाजी नाथूराम 'शंकर' अन्धविश्वासों के विरोधी एवं नये सुधारों के पक्षधर थे। अतः इनका व्यंग्य फब्तियों तथा फटकारों से ओतप्रोत है। निम्नलिखित कविता से पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण करने वाले लोगों को देखकर ये ब्रजराजकृष्ण के बहाने उनपर व्यंग्य करते हैं :—

भड़क भुला दो भूतकाल के सजिए वर्तमान के साज
फैशनफेर इन्डिया भर के गोरे गार्ड बनो ब्रजराज
गौरवर्ण वृषभानुसुता का काढ़ो काले तन पर तोप
नाथ उतारो मोर मुकुट को सिर पै साजो साहिबी टोप
पावडर चन्दन पोंछ लपेटो आनन की श्रीज्योति जगाय
अंजन अँखियों में मत पाओ, आला ऐनक लेहु लगाय।

जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी इसकाल के एक प्रतिभावान हास्यलेखक थे। उस समय उन्हें 'हास्य रसावतार' कहा जाता था। एक बार द्विवेदीजी ने बाबू श्यामसुन्दर दास की प्रशंसा में एक दोहा 'सरस्वती' में प्रकाशित किया था :—

मातृभाषा के प्रचारक विमल बी० ए० पास
सौम्य शीलनिधान बाबू श्याम सुन्दर दास।

इस पर व्यंग्य करते हुए 'भारतमित्र' साप्ताहिक के संपादक बालमुकुन्द गुप्त ने जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी के विषय में लिखा था :

पितृभाषा के बिगाड़क सफल एम० ए० फिस्स
जगन्नाथ प्रसाद वेदी बीस कम चौबीस्स।

'पढ़ीस' नामक अवधीभाषा के कवि भी इस युग के श्रेष्ठ हास्यकवि थे।

द्विवेदीयुग गद्य-विकास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण था। अतः इस युग में गद्य की विभिन्न विधाओं में भी व्यंग्य विनोद की रचनाएँ हुईं। गुलाब राय, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी आदि इस युग के श्रेष्ठ निबन्ध-लेखक थे। इसी युग में जी० पी० श्रीवास्तव जैसे हास्य कथाएँ लिखने वाले लेखक हुए थे जिन्हें हास्यरस की कहानियों का जन्मदाता कहा जाता है। इनकी कहानियों का संग्रह 'लम्बीदाढ़ी' के नाम से प्रकाशित हुआ। 'लतखोरी लाल' 'गंगायमुनी' जैसे हास्यपरक उपन्यास भी इन्होंने लिखे थे। किन्तु जी० पी० श्रीवास्तव की कथाओं का हास्य बेढंगा और भोंड़ा होता था, शिष्ट और परिष्कृत हास्य का उनमें अभाव है।

छायावाद एवं छायावादोत्तर काल में हास्य-व्यंग्य-साहित्य में प्राचुर्य के साथ विविधताएँ भी देखने को मिलती है। छायावाद के गौरव स्तम्भ, पौरुष के प्रतीक कविवर 'निराला' के काव्य में

शुरू से ही व्यंग्य का स्पर्श मिलता है और इसका चरमोत्कर्ष 'कुकुरमुत्ता' में दीखता है। 'कुकुरमुत्ता' को निस्सन्देह हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ व्यंग्य रचना माना जा सकता है। इसमें 'कुकुरमुत्ता' सर्वहारा का प्रतीक है और गुलाब पूँजीपति वर्ग का। कुकुरमुत्ता गुलाब पर तीखा प्रहार करते हुए कहता है :—

अबे, सुन बे गुलाब,
भूल मत गर पाई खुशबू रंगोआब।
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा कैपिटलिस्ट।

इसी तरह 'रानी और कानी', खजोहरा, मिस्टर गिडवानी, गर्म पकौड़ी, मास्को डायलॉग्स, प्रेम संगीत आदि इनकी श्रेष्ठ व्यंग्य कविताएँ हैं। पं० हरिशंकर शर्मा, कान्तानाथ पाण्डेय 'चोंच', बेढ़ब बनारसी, अन्नपूर्णानन्द वर्मा, वंशीधर शुक्ल, बेधड़क बनारसी, श्री नारायण चतुर्वेदी, गोपाल प्र० शर्मा आदि इस समय के श्रेष्ठ हास्य लेखक एवं कवि हैं। पं० हरिशंकर शर्मा ने हास्यपरक गद्य के साथ ही हास्यरस की कविताएँ भी बड़ी मात्रा में लिखी हैं। 'चिड़ियाघर', पिंजरापोल' आदि इनकी हास्यपरक कविताओं के संग्रह हैं। "शर्माजी के व्यंग्य में निरालाजी की गहराई और मार्मिकता तो नहीं है, किन्तु साधारणतः यह व्यंग्य उच्चकोटि का कहा जा सकता है। छन्द पुराने और सरल हैं, भाषा भी मार्जित है। शर्माजी का लक्ष्य समाज-सुधार था और उसमें वह पर्याप्त सफल भी हुए हैं।"[५]

कृष्णदेव प्रसाद गौड़ 'बेढब बनारसी' के रूप में ही विख्यात हुए। गद्य और पद्य दोनों में इन्होंने विलक्षण हास्य साहित्य का सर्जन किया। 'बेढब की बहक' शीर्षक की भूमिका में वे कहते हैं— "जैसे कुछ लोग कला के लिये कला की दुहाई देते हैं मैं विनोद विनोद के लिए लिखता हूँ।" इन्होंने समाज की कुरीतियों, फैसनपरस्ती, बेकारी, नौकरी के लिये दौड़, हाकिमों की खुशामद, विदेशी सभ्यता की गुलामी आदि को हास्य-व्यंग्य का विषय बनाया है।" 'बिजली' इनकी कविताओं का दूसरा संग्रह है। फैशनपरस्तों को लक्ष्यकर उन्होंने लिखा है :—

नजाकत औरतों सी, बाल लम्बे साफ मूछें हैं
नये फैशन के लोगों की अजब सूरत निराली है
पता मुझको नहीं कुछ इन्डिया में भी है लिटरेचर
मगर याद सारा मिल्टनो बेकन जवानी है।

जयशंकर प्रसाद की कविता 'बीती विभावरी जागरी' पर इनकी पैरोडी देखें :—

बीती विभावरी जाग री।
छप्पर पर बैठे कांव-कांव
करते हैं कितने काग री।
तू लम्बे ताने सोती है,

बिटिया मा कहकर रोती है
रो-रोकर गिरा दिये उसने
आँसू अब तक दो गागरी।
बिजली का भोंपू बोल रहा
धोबी गदहे को खोल रहा।
इतना दिन चढ़ आया लेकिन
तू ने न जलाया आग री।

कान्तानाथ पांडेय 'चोंच' बाद में 'चोंच' हटाकर 'राजहंस' बने थे। ये भी हास्य-व्यंग्य के बड़े सफल कवि थे। सामाजिक कुरीतियों पर इनके व्यंग्य बड़े प्रसिद्ध हुए। निम्नपंक्तियों में फैशनपरस्त व्यक्ति पर-व्यंग्य है :—

मूँछ की गायब निशानी खूब है, कमर की पतली कमानी खूब है
वाह मिस्टर मुलमुले भण्डारकर, आपकी सूरत जनानी खूब है।

श्री 'सम्पूर्णानन्द' के अनुज 'अन्नपूर्णानन्द' ने पहले 'निखट्टू' उपनाम से और बादमें अन्नपूर्णानन्द वर्मा 'निखट्टू' पूरे नाम से रचनाएँ की हैं। महाकवि चच्चा, मेरी हजामत, मंगल प्रमोद, मगन रहो चेला तथा मनमयूर इनके पांच संग्रह थे गद्य-पद्य के। "बेढब, चोंच और अन्नपूर्णानन्द हिन्दी के तीन हास्यरस के कवि थे जिन्होंने शिष्ट और मनोवैज्ञानिक हास-परिहास की परम्परा स्थापित की थी।"

बेधड़क बनारसी भी एक लोकप्रिय हास्यकवि हैं और इन्होंने सामाजिक तथा राजनैतिक व्यंग्य लिखे हैं। रूबाइयाँ, शेर आदि उर्दू के छन्दों का भी इन्होंने खुलकर प्रयोग किया है। वे लिखते हैं :—

हास्य रस में ही लिखा करता हूँ मैं और यूँ मनहूसियत हरता हूँ मैं
नाम मेरा हो भले ही बेधड़क, दोस्तों से बहुत ही डरता हूँ मैं।

गोपाल प्रसाद व्यास न केवल हास्यरस के कवि हैं बल्कि व्यावहारिक जीवन में भी हास्य रसावतार हैं। दिल्ली में होनेवाले 'महामूर्ख सम्मेलन' के आयोजक तथा आजन्म महामन्त्री हैं। 'अजी सुनो' इनकी कविताओं का संग्रह है। सुखशान्ति के लिए समस्त मानव जाति को महामूर्ख होने का आह्वान करते हुए वे कहते हैं—

यह विश्वशान्ति का मूलमन्त्र, यह रामराज्य की प्रथम शर्त
अपना दिमाग गिरवी रखकर खाओ खेलो स्वच्छन्द बनो
अब मूर्ख बनो, मतिमन्द बनो।

मूर्खता के प्रतीक गधे को क्रान्ति करने की प्रेरणा देते हुए वे लिखते हैं—

इस भारत के धोबी कुम्हार भी शोषक पूँजीवादी हैं
तुम क्रांति करो, लादी पटको, बर्तन फोड़ो, घर से भागो

हे प्रगतिशील युग के प्राणी तुम रचो नया संसार गधे
मेरे प्यारे सुकुमार गधे !

पं० श्री नारायण चतुर्वेदी ने भी 'विनोद शर्मा' उपनाम से हास्यरस के लेख तथा अनेक कविताएँ लिखी हैं जो 'छेड़छाड़' शीर्षक में संगृहीत हैं। "एक असाधारण गुण जो इनमें है वह अपने ऊपर व्यंग्य लिखने की विशेषता। दूसरों पर व्यंग्य लिखनेवालों की कमी नहीं, किन्तु अपने को हास्य का आलम्बन बनाने वाले शायद ऊँगली पर गिनने लायक भी न मिलें।"[४]

पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी 'व्योमकेश शास्त्री' के नाम से मनोरंजक व्यंग्यपूर्ण पद्यरचना की है। हिन्दी की कई काव्य शैलियों की इन्होंने पैरोडी की है और व्रज, संस्कृत, उर्दू, बंगला का मजेदार मिश्रण किया है। उदाहरणार्थ

बंदे मोही तोंद मुदारम
जनपरिवादाधान कार्य सुनिपुण मंजूषाकारम्।
विफल वितंडावाद जल्पना मिथ्यावाद पिटारम्।
विद्वज्जन गर्जना श्रवणजं धुकुड़पूकुड़म स्वमनुकारम।
मूर्ख मंडली मध्य समर्पित करमति बुद्धि बघारम्।
सकल पुराणशास्त्रमधरीकृत भविहत स्थौल्याकारम्॥

दिनकरजी ने भी अन्तिम दिनों में कुछ उत्कृष्ट व्यंग्य लिखे थे।

कविताओं के अतिरिक्त गद्य की विभिन्न विधाओं में हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ प्रचुर मात्रा में इस युग में हुई हैं। कान्तानाथ पाण्डेय 'चोंच' ने कई वर्णनात्मक निबन्धों में अतिरंजित घटनाओं का सम्मिश्रण करके हास्य का सर्जन किया है। 'छड़ी बनाम सोटा' तथा 'मौसेरे भाई' शीर्षकों से इनकी हास्य प्रधान कहानियों के संग्रह प्रकाशित हुए। बेढ़ब बनारसी के कई हास्य-व्यंग्य प्रधान निबन्धों के अतिरिक्त 'मि० पिगसन की डायरी' नामक उपन्यास तथा 'बनारसी एक्का' 'गाँधीजी का भूत', मसूरीवाली', तथा 'टनाटन' शीर्षकों में संगृहीत कहानियाँ प्रकाशित हुई। पं० विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' ने 'विजयानन्द दूबे की चिट्ठी' के रूप में कई हास्य-व्यंग्य भरे पत्र लिखे। 'प्रेमचन्द' ने भी कुछ उत्कृष्ट हास्य कथाएँ लिखी हैं। 'मोटेराम शास्त्री' को नायक बनाकर इन्होंने हास्यरस की कहानियाँ लिखी हैं तथा उनके माध्यम से ब्राह्मणों के पेटूपन तथा भुक्खड़पन पर व्यंग्य किया है। निराला जी ने भी 'चतुरी चमार' तथा 'सुकुल की बीबी' शीर्षक से समाज के विद्रूपों को चित्रित करनेवाली कहानियाँ लिखी हैं तथा 'बिल्लेसुर बकरीहा' तथा 'कुल्लीभाट' नामक उपन्यास लिखे।

राँची के श्री राधाकृष्ण ने 'वरदान का फेर' तथा अन्य कहानियाँ लिखी।

भगवती चरण वर्मा, यशपाल, अमृत लाल नागर ने भी उत्कृष्ट हास्य-व्यंग्यपूर्ण कथाएँ लिखी। नागर जी के 'नवाबी मसनद' तथा 'सेठ बाँकेमल' को अत्यधिक लोकप्रियता मिली है। अनेक प्रहसनों तथा व्यंग्यप्रधान नाटकों की रचना भी आधुनिक काल में हुई है। पं० बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'उजबक' तथा 'चार बेचारे' नामक प्रहसनों की रचना की थी। उपेन्द्रनाथ 'अश्क' एक उच्चकोटि के कथाकार

के साथ ही श्रेष्ठ नाटककार भी हैं। इनके हास्य-व्यंग्य प्रधान एकांकियों का संग्रह 'पर्दा उठाओ, पर्दा गिराओ' के नाम से प्रकाशित हुआ है जिसमें खासकर 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ' 'कईसा साहब कइसी आया' तथा 'तौलिये' बड़े मनोरंजक एकांकी हैं। इसी तरह 'स्वर्ग की झलक' में उच्चवर्गीय लोगों की स्नॉबरी पर इन्होंने व्यंग्य किया है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी हास्य-व्यंग्यपूर्ण एकांकी लिखे हैं। 'रिमझिम' में उनके हास्यरस के एकांकी संकलित हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में हास्य-व्यंग्यपूर्ण रचनाओं में अत्यधिक वृद्धि हुई है तथा काव्य, नाटक, कहानी, निबन्ध, आलोचना प्रत्येक क्षेत्र में नवीन कृतियों का प्रकाशन हुआ है। स्वतन्त्रता के बाद की हास्यपरक रचनाओं का आयाम भी विस्तृत हुआ है। नेताओं की स्वार्थपरता, जनता के प्रति किये गये वादों की खिलाफी, चुनाव-प्रक्रिया एवं प्रपंच, प्रचार तन्त्रों का दुरुपयोग, सरकारी नियन्त्रण, कालाबाजारी, बढ़ते हुए मूल्य तथा महँगाई, काला धन, आवश्यक वस्तुओं का अभाव, पूँजीपतियों की मक्कारी आदि विषय प्रमुख रहे हैं। स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय समाज विसंगतियों से ग्रस्त रहा है। कथनी और करनी के बीच की खाई बढ़ती गई। 'प्रयोगवादी' काव्य एवं 'नयी कविता' में व्यंग्य की ही प्रमुखता रही है। 'सप्तकों' के कवियों ने इसी कारण यथेष्ट मात्रा में हास्य-व्यंग्य की रचना की है। अज्ञेय, मुक्तिबोध, भारती, भवानी प्रसाद मिश्र, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल, विजयदेव नारायण साही, नागार्जुन, रामविलास शर्मा आदि की रचनाओं में व्यंग्य की प्रचुरता है। अज्ञेय की 'सांप' तथा भवानी प्रसाद मिश्र की 'गीत फरोश' प्रसिद्ध व्यंग्य रचनाएँ हैं। नागार्जुन एवं रामविलास शर्मा ने देश की राजनैतिक स्थिति पर तीखे व्यंग्य लिखे हैं। वादा खिलाफी करनेवाले तथा जनता को ठगनेवाले नेताओं को लक्ष्यकर लिखी गयी नागार्जुन की निम्नलिखित कविता की पंक्तियाँ देखें :—

बेच बेच गांधीजी का नाम
बटोरो वोट
हिलाओ शीश
निपोड़ो खीस
बैंक बैलेंस बढ़ाओ
राजघाट में बापू की वेदी के आगे अश्रु बहाओ
तेल-घी के चहबच्चों में अमृत की हौदी में
बाबू खूब नहाओ
हमें छोड़ दो राम भरोसे
जिएँ तो भले, मरें तो भले
क्या बिगड़ेगा अजी तुम्हारा

भारत भूषण अग्रवाल के व्यंग्य भी बड़े पैने एवं व्यंजक होते हैं। उदाहरणार्थ निम्न पंक्तियों को लिया जा सकता है :—

पहले बिके धर्म पर, फिर बिके शील पर
रूप पर मध्य युग में बिके, बिकना तो अपनी परम्परा है।

आज इस संकट की बाढ़ में, जब कहीं धर्म नहीं
शील नहीं, रूप नहीं
हार कर हम बिके चाँदी के टुकड़ों पर।

चार-चार पंक्तियों के व्यंग्यात्मक मुक्तक उन्होंने 'तुक्तक' नाम से बड़ी संख्या में लिखे हैं। उदाहरणार्थ इस तुक्तक को हम देख सकते हैं—

तानपुरा लेकर वे करते थे स्वर साधना
सा रे ग म प न न ना
बोल थे विचित्र
राधे दाल मत रान्धना।

पिछले वर्षों में कवि-सम्मेलनों के मंच से भी हास्यरस की रचनाओं को काफी प्रोत्साहन मिला है। कुछ विद्वानों ने समकालीन हास्य रचनाओं को मंच एवं मंचेतर रचनाओं के रूप में भी बाँटा है और यह स्वीकार किया है कि "गम्भीर साहित्य सर्जना अपने को मंच से नहीं जोड़ती, किन्तु मंच की कविता की रचना-प्रक्रिया में जाने-अनजाने मंच हावी हो उठता है। यही वजह है कि कुछ अपवादों को छोड़कर हिन्दी का श्रेष्ठ कवि मंच का कवि नहीं रहा और दूसरी ओर मंच का कवि साहित्य की सीमा में प्रवेश नहीं पा सका।"[७]

यह सच है कि मंच पर सफल होने के लिये श्रोताओं की भीड़ को हँसाने की आवश्यकता पड़ती है और भीड़ गम्भीर कविताओं से अधिक वरीयता हल्के-फुल्के विषयों पर लिखी कविताओं को देती है। इसी कारण कवि सम्मेलन के मंच पर की कविताओं के विषय मुख्यतया साली, सलवार, पत्नी, पत्नीभीत पति, सिनेमा, नेता आदि रहे हैं। अनेक नगरों में आयोजित कवि सम्मेलनों तथा पत्र-पत्रिकाओं के हास्य-विनोद विशेषांकों ने भी अनेक कवियों को लोकप्रियता दिलायी है। मंचों से जो हास्य कवि चमके हैं उनमें प्रधान हैं काका हाथरसी, निर्भय हाथरसी, शैल चतुर्वेदी, रामरिख मनहर, हरिओम बेचैन, ओम प्रकाश आदित्य, अल्हड़ बीकानेरी, सूर्य कुमार पाण्डेय, जैमिनी हरियाणवी, सुरेन्द्र शर्मा, माणिक वर्मा, किशोर काबरा, रमई काका, मनीषा दुबे आदि। काका हाथरसी (असली नाम : प्रभु लाल गर्ग) की एक दर्जन से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, यथा, काका की फुलझड़ियाँ, हँसगुल्ले, काका के कारतूस, नोंक-झोंक, काकदूत, कहं काका कविराय, हसंत-वसंत, लव लेटर्स काका-काकी के, आदि। फिल्मी गीतों की पैरोडियों के अतिरिक्त समकालीन समस्याओं पर उन्होंने व्यंग्य लिखे हैं। वे मंचीय कवियों में सबसे सफल एवं लोकप्रिय हैं।

ऐसा नहीं है कि उपर्युक्त कवियों को केवल मंचीय कवि मानकर उन्हें उपेक्षित समझा जाय। इन कवियों ने भी बड़े तीखे व्यंग्य तथा शिष्ट हास्य का सर्जन किया है तथा हास्य-व्यंग्य के साहित्य में उनका निश्चित योगदान है। ओम प्रकाश आदित्य के कवित्त इधर विभिन्न पत्रिकाओं में आ रहे हैं। एक कवित्त यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

मंत्री जी की पत्नी ने एक सहेली से कहा
सखि ! मेरी जान का बवाल हुई कुर्सी

इनके दरस को मैं घर में तरसती हूँ
बाँहों का परस ले निहाल हुई कुर्सी
ससुराल में भी दिन-पीहर से काटती मैं,
पीहर में इन्हें ससुराल हुई कुर्सी
तोड़ दूँगी टाँगें इसकी या इनको ही छोड़ दूँगी
मैं रहूँगी या रहेगी ये छिनाल कुर्सी ।।

पिछले दस-पन्द्रह वर्षों में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में स्तरीय कवियों के अतिरिक्त अनेक नये कवियों की रचनाएँ प्रकाशित होती रही हैं। इन कविताओं में देश की राजनैतिक स्थिति, विसंगतियाँ आदि पर व्यंग्य किये गये हैं। उदाहरण के लिये जनतान्त्रिक समाजवादी शासन-प्रणाली वाले हमारे देश में समाजवाद कहाँ फूला-फूला है यह दिनकर सोलवलकर की निम्न पंक्तियों में देखें—

रिश्वत लेने में ऊपर से नीचे तक
सबका बराबर का हिस्सा है
यानी ये भी
एक समाजवादी किस्सा है।

और देश की अभावजन्य स्थिति पर देवेन्द्र दीपक का व्यंग्य—

मेरे देश की मौजूदा कैफियत
बस कुछ न पूछिए
बारूद खुली मिलती है
सिमेन्ट नहीं मिलता।।

कविता के अतिरिक्त समकालीन गद्य साहित्य में हास्य-व्यंग्य की अनेक उत्कृष्ट रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। हरिशंकर पारसाई, शरद जोशी, रवीन्द्र नाथ त्यागी, सुशील कालरा, लतीफ घोंघी, के० पी० सक्सेना, लक्ष्मी कान्त वैष्णव, ज्ञान चतुर्वेदी, प्रकाश पुरोहित, कैलाश चन्द्र आदि अनेक लेखकों ने निबन्धों, कहानियों एवं एकांकियों के माध्यम से उच्च कोटि की व्यंग्य रचना प्रस्तुत की है। पारसाईजी की रचनाएँ हास्य और विनोद से भरपूर होते हुए भी वर्तमान जीवन की वास्तविकताओं पर तीखा व्यंग्य करती हैं। 'उल्टीसीधी' 'अपनी-अपनी बीमारी' 'ठिठुरता हुआ गणतन्त्र', 'वैष्णव की फिसलन', 'सदाचार का तावीज' आदि इनकी हास्य रचनाएँ हैं। इनकी एक व्यंग्य रचना का नमूना देखें—"भगवान को भारत से हर वर्ष एक निश्चित मात्रा में पूजा मिलती है। तीन चौथाई पूजा-स्तुति उन सरकारी नौकरों की तरफ से मिलती है जो सस्पेन्ड हो जाते हैं, जिनकी तरक्की रोक ली जाती है या जिनपर घूस आदि के मामले चलते हैं। इस तरह भगवान की सत्ता सरकारी नौकरों के 'कण्डक्ट रूल्स' और 'इंडियन पेनल कोड' पर टिकी हुई है। दो सरकारों के सहयोग का इससे अच्छा उदाहरण नहीं मिल सकता। यदि भारत सरकार अपने कर्मचारियों के खिलाफ कार्रवाई न करे तो मध्यम वर्ग से भगवान का नाम उठ ही जाए।" रवीन्द्रनाथ त्यागी की प्रकाशित रचनाएँ हैं—अतिथि

कथा, रिक्शा के पेड़, गलियारा की परम्परा, 'शोक सभा' आदि। शरद जोशी के व्यंग्य 'मेरी श्रेष्ठ रचनाएँ' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। के० पी० सक्सेना की हास्य रचना 'नया सिरफिट' काफी लोकप्रिय हुई है। 'परीक्षा का मौसम, मौसम की परीक्षा' शीर्षक इनके व्यंग्य-निबन्ध की पंक्तियाँ देखें :— कृपया नोट करते चलें। कहने से कि ये सब कोटेशन संदर्भ हैं। जिन्हें आगे चलकर हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखना है और चार ऐसे बनाने हैं, उनके काम आयेगा। ऐसे ही छोटे-छोटे टोटके पी-एच० डी० दिला देते हैं। जिन दिनों आजादी ताजी-ताजी मिली थी, उन दिनों साहित्य में पढ़कर संगीत की दीवानगी सिर्फ दो लोगों की थी। सुपरिचित लेखक अमृतराय की और अपरिचित लेखक आपके इस गुलाम की।"

इनके अतिरिक्त नरेन्द्र कोहली, कन्हैया लाल नन्दन, काका हाथरसी की व्यंग्य रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। पुराने ढंग के लेखकों की भी इस बीच कई रचनाएँ आयी हैं जैसे बरसाने लाल चतुर्वेदी की पागलखाना, नेता और अभिनेता आदि कृतियाँ तथा अमृत लाल नागर की 'कृपया दाएँ चलिए, भारत पुत्र नौरंगी लाल तथा 'हम फिदाएँ लखनऊ' आदि। भागलपुर के डॉ० शिवनन्दन प्रसाद ने 'अलबटं कृष्ण अली' के नाम से व्यंग्य लिखे हैं। 'कालिदास के समधी' इनकी प्रतिनिधि रचना है।

इस प्रकार कुल मिलाकर "कम से कम पाँच सौ लेखक-कवि कहानीकार इस क्षेत्र में अपने हथियार भाँज रहे हैं, उस्तरे साफ कर रहे हैं या अखाड़े में व्यायाम कर रहे हैं। कई अब उनमें भूतपूर्व हास्य-व्यंग्य लेखक हो गए (जैसे हम) कइयों ने 'तुक्तक' आदि का सम्प्रदाय चलाया। कई राज-नीतिक आशय वाले कटु व्यंग्य लिखकर उसी में कविता का आधुनिक बोध ढूंढने लगे हैं।"[८]

आधुनिक काल में हास्य-व्यंग्य के साहित्य के बहुआयामी विस्तार में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के योगदान की चर्चा करना सर्वथा उचित होगा। १९वीं शती में हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं के विकास के साथ ही हास्य-व्यंग्य की रचनाएँ प्रकाश में आने लगी और इन रचनाओं के कारण उन पत्रिकाओं को लोकप्रियता मिली। आज भी प्रायः सभी पत्रिकाओं में हास्य-व्यंग्य के स्थायी स्तम्भ रहते हैं। साथ ही इन पत्रिकाओं के होलिकांक के साथ अन्य दिनों भी कभी-कभी 'व्यंग्य-विनोद विशेषांक' प्रकाशित होते रहते हैं। इनके अतिरिक्त भारतेन्दुकाल से ही विशुद्ध रूप से हास्य रस की पत्रिका प्रकाशित करने का प्रयास भी होता रहा है। भारतेन्दु बाबू ने स्वयं लिखा था :—"मेरी बहुत दिनों से इच्छा है कि हास्य-रस का हिन्दी भाषा में पंचपत्र प्रचलित करूँ, सब हिन्दी के रसिकों से सहायता की प्रार्थना है। अभी केवल १३ ग्राहक हुए हैं और १०० ग्राहक होने पर पत्र छपेगा।"[९]

द्विवेदी-युग में कलकत्ते से 'मतवाला' पत्रिका १९२३ में प्रकाशित हुई थी और बड़ी लोकप्रिय हुई थी। इसके मुख पृष्ठ पर लिखा रहता था :—

अमिय गरल शशि शीकर, राग-विराग भरा प्याला
पीते हैं जो साधक उनका प्यारा है यह मतवाला।

एवं मूल्य के लिये लिखा जाता था :—

एक प्याले का एक आना नकद, वार्षिक बोतल तीन रुपए पेशगी।

कलकत्ते से ही 'मौजी' नामक दूसरी हास्य पत्रिका निकली थी। लखनऊ से पहले 'रसिक पंच' एवं बाद में अमृत लाल नागर के सम्पादकत्व में 'चकल्लस' भी निकला। हरिद्वार से 'सरपंच', इलाहाबाद से 'मदारी' तथा आगरा से 'नोंकझोंक' पत्र निकले थे। बनारस से बेधड़क बनारसी ने 'तरंग' निकाला था। इनके अतिरिक्त विभिन्न नगरों से समय-समय पर हास्य-रस की पत्रिका प्रकाशित करने के प्रयास होते रहे हैं। पटने से 'चाणक्य', भागलपुर से 'उल्लू', कानपुर से 'चिसमिस' ऐसे ही प्रयास थे।

प्रसंग-निर्देश

१. हिन्दी साहित्य का इतिहास—संपादक; डा० नगेन्द्र, पृ० ६५८।

२. हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल; पृ० ३९३।

३. हिन्दी साहित्य में हास्य रस—डा० नगेन्द्र ('वीणा' पत्रिका में प्रकाशित निबंध)।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास—संपादक : डा० नगेन्द्र, पृ० ४९९ (डा० उमाकान्त का लेख)।

५ हिन्दी साहित्य में हास्य रस—डा० बरसाने लाल चतुर्वेदी, पृ० २१२।

६. उपरिवत्, पृ० २२८।

७. हिन्दी साहित्य का इतिहास—संपादक : डा० नगेन्द्र, पृ० ६५९।

८. हिन्दुस्तान—१ चैत्र वि० २०२७ : डा० प्रभाकर माचवे का निबन्ध।

९. हरिश्चन्द्र चन्द्रिका : अक्टूबर, १९७७ ई०।



बांला गद्य साहित्ये हास्यरसेर संक्षिप्त परिचय

पूर्णेन्दु मुखोपाध्याय

साहित्य विचार करवार समय सामाजिक ओ जातीय वैशिष्ट्येर स्वरूप सम्पर्के सुगंभीर ज्ञान थाका दरकार। कारण साहित्ये घनिष्ठ भावे जीवन-निर्भर। मानव जीवने जे सामाजिक ओ जातीय वैशिष्ट्य गुलि प्रतिफलित हय साहित्य तार द्वारा प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष भावे प्रभावित ना हये पारे ना। ताइ ये जातिर येमन वैशिष्ट्य सेइ जातिर साहित्यओ तेमन। यदि ओ साहित्येर विश्वजनीनतार प्रसंगटि एक्षेत्रे अस्वीकार करा हच्छे ना। एकटि उदाहरण देओया याक। भारतीय जीवन दर्शन अनुसारे शरीरेर मृत्यु हय आत्मार मृत्यु नेइ। सुतरां एइ दर्शन अनुसारे मृत्यु जीवनेर परिसमाप्ति नय, मृत्यु अमृतलोकेर पथप्रदर्शक मात्र। ताइ संस्कृत नाट्य साहित्ये देखा याय ट्राजेडिर अभाव रये छे। शान्त रसे नाटक गुलिर परिसमाप्ति हयेछे। अथच पाश्चात्य साहित्ये उत्कृष्ट ट्राजेडिर साक्षात् पाया याय।

हास्यरसेर आलोचना प्रसंगे एइ कथाटि मने राखते हबे ये जातीय वैशिष्ट्य अनुयायी हास्य रसेर चरित्र अनेकांशे नियन्त्रित। विख्यात समालोचक Lauis Cazamian ताँर The Development of English Literature नामक ग्रन्थे फरासी ओ इंराज जातिर साहित्ये हास्य रसेर स्वरूप सम्पर्के तुलनामूलक आलोचना प्रसंगे देखियेछेन फारसी जाति उच्छ्वसित कौतुक ओ प्रमत्त आमोदप्रिय जाति। ताइ तादेर साहित्ये कौतुक, व्यंग आ वाग्वैदग्ध्येर निदर्शन पाओया याय। आबार इंराज जातिर वैशिष्ट्य अन्यरूप। तारा गम्भीर ओ चिन्ताशील जाति। सुतरां इंराजी साहित्ये करुण हास्य रस अर्थात् Humour एर प्राचुर्य देखा याय। हास्यरसेर प्रति बाङाली जातिर मनोभाव अनुसन्धान करले देखा यावे ये करुण रसेर प्रति बाङाली जातिर स्वाभाविक आकर्षण रयेछे। ताइ बाङाली जातेर रचित साहित्ये हास्यरस अपेक्षा करुण रसेर प्राधान्य रयेछे। एकजन विशिष्ट समालोचक ए सम्पर्के लिखे छेन—'ताहार (बाङ्गलीर) काछे कान्नाटा हासि अपेक्षा अनेक बेशि मूल्यवान ओ प्रयोजनीय जिनिस, सेजन्य ताहार मत फाँदिते ओ काँदाइते केह (?) पारेना। बांला साहित्ये एइ कारणेइ कान्नार जोयार दुट फूल भासाइया प्रवाहित हइयाछे।'[1] संस्कृत साहित्य पर्यालोचना करले देखा याबे सेखानेओ हास्यरसेर परिणाम खुबइ कम। सेखानेओ हास्यरसेर मर्यादा सर्वोच्च नय। ड०अजित घोषेर मते—सुगभीर आदर्शवाद, नीति ओ धर्म सम्बन्धे सूक्ष्म सचेतनता एवं इहलोक अपेक्षा परलोकेर प्रति अधिकतर आसक्तिरजन्य आंगल साहित्ये हास्य रसेर वैचित्र्य ओ प्रबलता देखा याय नाइ।[2] संस्कृत नाटके हास्य कौतुकेर प्राचुर्य देखा अन्यत्र नय।

प्राचीन ओ मध्ययुगीय बांला साहित्ये हास्यरसेर साक्षात् पाओया याय। किन्तु सेइ हास्यरसेर मध्ये उन्नत मानेर, परिशीलित रुचि ओ मनेर परिचय नेइ बललेइ चले। अधिकांश क्षेत्रे तार गाये

भोंड़ामि ओ अश्लीलतार पाँक लेगे आछे। उन्नत मानेर रुचिशील हास्यरस आधुनिक सभ्यतार दान। आधुनिक साहित्येइ हास्यरस तार उपयुक्त मर्यादा लाभ करेछे। इंराजी साहित्येओ बसारेर आगे हास्यरसेर परिचय पाओया याय ना। पाश्चात्य साहित्येर विशुद्ध हास्यरसेर संगे परिचित हवार पर आधुनिक युगे बांगला साहित्ये हास्यरस यथायोग्य मर्यादा लाभ करल।[3]

ऊनविंश शताब्दीर प्रथमार्धे बांला गद्य साहित्य गड़े उठार प्रथम अध्याये भवानीचरण वन्द्योपाध्याय तिनटि गल्प काहिनी रचना करेन—'नवबाबू विलास', 'दूती-विलास' ओ 'नव विवि विलास'। बांला साहित्येर विशिष्ट ऐतिहासिक ब्रजेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्यायेर मते—"प्रकृत प्रस्तावे नवबाबू विलासइ ये बांला व्यंगचित्र ओ व्यंगमूलक उपन्यासेर प्रथम निदर्शन ताहा अस्वीकार करिवार उपाय नाइ।"[4] भवानीचरणेर ग्रन्थे रंगरस घटना वा वर्णनार मध्य दिये स्फूर्ति लाभ करे नि, ता, चरित्र गुलिके आश्रय करे परिस्फुट हयेछे। भवानीचरण छिलेन से युगेर एकजन नीम्जादा संवादिक, धर्मसभा-संगठक। समाज चेतना, धर्मज्ञान ओ साहित्य प्रतिभा प्रभृति सर्वक्षेत्रेइ तार अबाध विचरण छिल। तिनि किछुटा रक्षणशील ओ नीतिवादी छिलेन। दुर्नीति-परायण, कुरीति आसक्त समाजके उद्धार करार जन्य तिनि यत्परोनास्ति सक्रिय छिलेन। ताँर एइ व्यंग रसात्मक ग्रन्थ गुलि रचनार पेछने तार संस्कारप्रयासी आदर्शवादी मनेर परिचय पाओया याय। ताँर सृष्ट चरित्रगुलि विचित्र धरणेर कुटनी, नापतिनी, मूर्ख उस्ताद, खोसामदे इयार, भण्ड दालाल, प्राचीन लोच्चा ओ वृद्धा वेश्या इत्यादि। ऊनविंश शताब्दीर प्रथम दिके कालकाता ओ तार पार्श्ववर्ती अंचले बाङ्गाली समाजेर एक श्रेणीर सुविधान्वेषी लोक इंराजदेर अनुग्रहे नाना धरणेर वृत्ति ओ व्यवसायेर सुयोग लाभ करे हठात् बड़लोक हये समाजे प्रेतनृत्य शुरु करे देय। तादेर प्रचुर काँचा टाकाइ छिल, किन्तु शिक्षादीक्षा नीतिज्ञान, संस्कृति, चेतनार लेशमात्र छिलना। एरा समाजके क्रमशः दूषित करे तुलछिल। भवानीचरणेर नव बाबू विलासे एइ समाज चित्र नैपुण्येर सङ्गे आङ्कित हयेछे। व्यंगेर तीव्र कशाघाते समाजेर चैतन्यादरेर साधुसंकल्प निये भावानी अग्रसर हयेछेन। परवर्ती ग्रंथ 'दूतीविलासे' अवश्य व्यंगरसात्मक भङ्गी परित्याग करे छेन। ग्रंथत्रयेर हास्यरसेर वैशिष्ट्य सम्पर्के आलोचना प्रसंगे डॉ० अजित कुमार घोष मने करेन—"नववाबू विलास, नव बीवीविलास ओ कलिकाता कमलालये लेखकेर विद्रूपप्रियताइ प्रधान हइया उठियाछे ताहा सत्य, किन्तु एइ विद्रूप निर्मम ओ क्षमाहीन नहे, इहार दाह हासिर वाष्पके एकेवारे शुष्क करिया फेले नाइ। संस्कार ओ शोधन लेखकेर उद्देश्य वटे, किन्तु ए कथा तिनि भुलिया यान नाइ ये, तिनि मास्टर नहेन।"[5]

बांला साहित्ये प्यारी चाँद मित्र वा टेक चाँद ठाकुर (१८१४-१८८३) 'आलीलेर घरेर दुलाल' (१८५८) नामक प्रथम उपन्यास रचनार जन्य इतिहासख्यात हये आछेन। भवानीचरणेर मत तिनिओ तार शिक्षा, संस्कृति चेतना ओ उच्चादर्श मन निये समाजेर कुरीति ओ व्यभिचारेर विरुद्ध लेखनी धारण करे छिलेन। समाज संस्कार करा तारओ उद्देश्य छिल। तिनिओ निछक शिल्पवादी छिलेन ना।[6] तिनि छिलेन दायबद्ध (Committed) साहित्य सृष्टिर पथेर पथिक। तिनि विपथगामी हठात् धनी बाबू सम्प्रदायेर विकृति ओ असदाचरणेर वास्तव चित्र अङ्कन करे समाजके कलुषमुक्त करार महत् उद्देश्य निये साहित्यक्षेत्रे अवतीर्ण हयेछिलेन। अतिरिक्त मद्यपानेर फले ये कत भयङ्कर परिणामेर सम्मुखीन हते हय ता देखिये पाठकेर चोख खुले दिते हयेछिलेन। कौलिक प्रथा, बहु विवाह,

कपट धर्माचरण इत्यादि कुरीतिके तीव्र चाबुक मेरे छिलेन । व्यंग विद्रूपात्मक लेखन भंगी ए काजे ताके साहाय्य करेछिलेन । करुण हास्यरस अर्थात् humour तॉर लेखाय प्रायः अनुपस्थित बललेइ हय । तबे माझे माझे कौतुक रसेर (Fun) साक्षात् तॉर लेखाय पाओया याय। तॉर उपन्यासटिते असंख्य चरित्रेर मिछिल चलेछे -कृपण, अनुदार, अन्यायेर प्रश्रयदाता धनी व्यक्ति, उन्मार्गगामी, विकृतमति, कुक्रियासक्त धनी सन्तान, अर्थलोलुप, स्वार्थपर मास्टार, धूर्त, फन्दिबाज दालाल इत्यादि । "किन्तु तॉर सर्वापेक्षा जीवन्त चरित्र ठक चाचा । ठकचाचार कथा वार्ता, चाल चलन, फन्दि ओ मतलब एरूप विशद ओ विशिष्ट भावे अङ्कन करा हइयाछे ये, चरित्रटिर प्रति सतत आमादेर घृणा ओ धिक्कार उत्सारित हइलेओ ताहार प्रति आमादेर कौतूहली, रसमग्न चित्त सर्वदा आसक्त हइया थाके।"[7] प्यारी चाँदेर आर एकखानि नक्सा जातीय काहिनी 'मद खाओया बड़ दाय जाति थाकार कि उपाय'।

काली प्रसन्न सिंहेर (१८४०-१८७०) प्रसिद्ध व्यंग (Satire) रचना 'हुतोम प्याचार नकशा' बांला साहित्ये चिरस्थायी मर्यादार आसन लाभ करेछे । तॉरओ उद्देश्य छिल समाज संस्कार । तिनि समाजेर अन्धकार दिक ओ चरित्रेर ओपर शाणित व्यंगेर उज्ज्वल आलो निक्षेप करे तार क्षति-कारक दिक् टि पाठकेर सामने तुले । "ऐ युगेर कलकात्तार धनी, माध्यवित्त ओ साधारण समाज की परिमाणे हुजुगप्रिय छिल, हुल्लोड़ेर धूलोट-उत्सवे कतटा माखामाखि करत, उत्सव अनुष्ठाने जघन्य व्यापार कत आलीलाक्रमे अनुष्ठित हत—शिक्षित युवक, घोर ब्राह्म, नासिक्यध्वनिकारी वैष्णव बाबाजी, अलिन्द्रविहारिणी कुलाङ्गिनी बीरवधू, चड़क, गाजन, दुर्गोत्सव, माहेशेर रथ, ठाकुर बाबु, मोसाहेब परिवृत मांसेर स्तूप अर्थात् जमिदार, पथेर भिखारी, केरानी, दोकानी, हाटुरे, पुरुतठाकुर, मिशिर्दाते, रंदार जूतो परे नवीन नीगर इत्यादि कलकातार संबाद्वार नानाविध रंदार व्यापार छद्मनामी हुतोम आमादेर सामने उपस्थित करेछेन।"[8] हुतोमेर हास्यरसेर स्वरूप सम्पर्के अन्य समालोचकेर विश्लेषण एइ धरणेर—"हुतोमेर हासि व्यंगरसाश्रित ताहा सत्य, किन्तु एइ व्यंगरसे व्यंग अपेक्षा रस बेशि, इहाते हुलेर खोंचाय यत ज्वाला हय मधुर प्रलेपे ताहा अपेक्षा आराम लागे अनेक बेशि। हुतोमेर आसल उद्देश्य एकटु मजा करा, सकले मिलिया एकटु आमोद करा एवं सेइ उद्देश्येइ काहाकेओ एकटु चिमटि काटिया, काहकेओ एकटु खोंचा दिया एवं काहाकेओ एकटु चड़चापड़ मारिया चलियाछेन।"[9]

माइकेल मधुसूदन दत्तेर (१८२४-१८७३) लेखा दुटि प्रहसने (Farce) कौतुक ओ व्यंगेर प्रचुर निदर्शन आछे । 'एकेइ कि बले सत्यता,य (१८६०) इंराजी शिक्षाय शिक्षित भ्रष्टाचारी तरुण युवकदेर तीव्र व्यंगबाणे विद्ध करा हयेछे । 'बुड़ो शालिखेर घाड़े रों' (१८६०) प्रहसने तत्कालीन एक-श्रेणीय ब्राह्मण समाजपतिर कुचरित्र ओ लाम्पट्य रसालभावे वर्णना करा हयेछे ।

केउ-केउ दीनबन्धु मित्र के (१८३०-७०) बांला साहित्येर श्रेष्ठ हास्य रसेर लेखक बले मने करेन । अवश्य ए व्यापारे मतपार्थक्य आछे । तबे तिनि ये श्रेष्ठ लेखकदेर पंक्तिते बसार उप-युक्त ए विषये कोन सन्देह नेइ । तॉर विख्यात 'नीलदर्पण' (१८६०) नाटक 'बिये पागला बुड़ो' (१८६६) 'जामाइ वारिक' (१८७२) ओ 'सधवार एकादशी' (१८६६) प्रहसन तिनटिते हास्यरसेर ये अफुरन्त धारा प्रवाह बइछे तार उत्कर्षता सम्पर्के प्राय समालोचक एकमत । ड० सुशील कुमार दे तॉर हास्य-रसेर प्रकृति सम्पर्के ये मन्तव्य करछेन ता यथार्थ बलेइ मने हय—"निछक प्रहसन हइते वेदनार अश्रुदीप्त

हासि पर्यन्त हास्य स्पीर निरवच्छिन्न स्फूर्ति, कथावार्तार भङ्गीभावे परिकल्पित घटना संस्थाने सर्वत्र ई निमित उच्छ्वसित रूप धारण करियाछे ताहारमध्ये कोथाओ नाट्यकारेर क्रोध वा घृणा नाइ, आछे शुधु निमल रसकल्पनार सहज ओ उदार प्रीति। शकुन्तलाक भागमधा आछे बटे, किन्तु ताहार सबटाइ रङ्ग, सबटाइ आमोद। तथापि एइ आपाधिक आनन्देर फाँके-फाँके हास्यरसिकेर अश्रु येन अश्रुभाराक्रान्त हइया पड़े। चित्तेर माधुर्य रसे हास्य एर सत्यानुभूति करे गाढ़, हास्य रसओ करुण रसे स्निग्ध हइयाछे।"[11] ए प्रसंगे थ्याकरेर उक्ति स्मरणीय—"We cannot suppress the smile on the lip, but tear should also stand ready to start from the eye"[11] आर एकजन विख्यात समालोचक मेरिडिथेर मतओ एइ धरणेर—"The stroke of the great humourist is world wide with lights of Tragedy in his laughter."[12]

शेक्सपीयारेर हास्यरसेर प्रधान अवलम्बन कौतूहलोद्दीपक घटना ओ ग्राम्य ओ दुर्बल चरित्र। दीनबन्धुर नाटक ओ प्रहसनेओ घटना ओ चरित्र उभयके केन्द्र करे हास्य रसेर योग बहते देखा याय। किन्तु नाट्यकार मलियेर हास्य रस उत्सारित हयेछे मूलतः चरित्रके अवलम्बन करे। मलियेर Harpagons, Tartuffe, ओ Alcestes चरित्र समाजेर दोषी वा विकृत चरित्रमात्र नय, तारा चिरन्तन ओ गम्भीरतर जीवन सत्यके एक-एक भावे प्रकाश करे छे। दीनबन्धुर निमचाँद शुद्ध मात्र अवज्ञात मातल नय, गोपीनाथ शुधुमात्र नीच, पदलेही देओयान नय, राजीवलोचन विगत समाजेर एकजन निरे पागला बुड़ो मात्र नय। एरा समाजेर छिल, आछे एवं भविष्यतेओ थाकवे। विशुद्ध हास्यरसेर (Humour) प्रकृष्ट उदाहरण निमचाँद चरित्र टि।[13] कौतुक रसात्मक (Funny) चरित्रेर मध्ये उल्लेखयोग्य आदुरी, पेँचोर मा हावार मा, वगया इत्यादि। व्यंगात्मक (Satirical) चरित्रेर मध्ये घटिराम डेपुटी ओ भोँलाराम भाट। निमचाँद, गोपीनाथ ओ श्रीनाथेर संलापे वाग्वैदग्ध्येर (wit) आलोक छटा पाठकेर बुद्धिके चमत्कृत करे। तिनिइ सर्वप्रथम हास्यरसके व्यंग ओ कौतुकेर स्तर हते विशुद्ध वा करुण हास्यरसेर पर्याये निये यान।

दीनबन्धुर आलोचना प्रसंगे निमचाँद चरित्रटि सम्पर्के विशेष मर्यादार संगे आलोचना ना करले आलोचना अपूर्ण थेके याबे। एइ चरित्रटिके सकल समालोचक बांला साहित्ये उच्चाङ्गेर hum-our एर निदर्शन बले घोषणा करे छेन।[14] ड० श्रीकुमार बन्द्योपाध्याय एके शेक्सपियरेर Fal-staff एर तुलनीय बले मने करेन। उभयेरइ रसिकता तादेर समग्र व्यक्तित्वस्वरूपेर संगे गम्भीर भावे युक्त, तादेर अन्तरेर ऐश्वर्य ओ परिपक्वतार अभिव्यक्ति। निमचाँदेर रसिकतापूर्ण उक्तिगुलि केवल तार बुद्धिवृत्तिप्रसूत नय, केवल उत्तर-प्रत्युत्तरेर मल्लयुद्ध नय—वरं तार अन्तरेर गम्भीरता प्रदेशेर संगे सम्पर्कान्वित, तार समग्र चरित्र वैशिष्ट्येर अभिव्यक्ति। तार मद्यासक्ति केवल एक प्रकारेर बाह्य उच्छृंखलता वा नीच भोगव्यसन मात्र नय।

ऊनविंश शतकेर श्रेष्ठ औपन्यासिक ओ मनीषी वंकिम चन्द्रेर (१८३४-७४) उपन्यास ओ प्रबन्धे नाना धरणेर हास्यरसेर समावेश हयेछे। तार मध्ये प्राचीन ओ आधुनिक, लौकिक ओ विदग्ध

मत धरणेर ऐतिह्येर संगे योगसूत्र आविष्कार करा याय। 'दुर्गेशनन्दिनी' उपन्यासे गजपति विद्यादिग्गजेर घटनागुलि तार संगे आश्मनिर प्रेमाभिनय, 'विषवृक्षे' हीरार आयिगुड़ि, 'मृणालिनी'ते दिग्विजय गिरिजा-यार उग्ररूपी प्रेमकाहिनी, 'देवि चौधुरानी'ते गोबरार मा, 'सीतारामे' रामचाँद श्यामचाँद ओ मुरला दासी, 'चंद्रशेखरे' रामचरण इत्यादि सकलेइ लौकिक ओ प्राचीन हास्यरसेर ऐतिह्येर संगे युक्त। मेर श्रेष्ठ हास्यरस सृष्टिर प्रकृष्ट उदाहरण ताँर प्रबन्धगुलि विशेष करे 'कमलाकान्तेर दप्तर' (१८७५) ग्रन्थटि। एखाने हास्यरसे ये जीवन सत्येर अनुसन्धान साधनार एकटि प्रधान कार्यकरी पन्था, ता सुस्पष्ट भावे धरा पड़ेछे। विपथगामी जातिके पथे फिरिये आनते गेले उपदेश दिले काज हवे ना, व्यंग विद्रूप ओ हिउमारेर अस्त्रे तार विवेक-बोधके विद्ध करते हवे—बंकिमचन्द्र एइ सत्य गम्भीर भावे उपलब्ध करते पेरे छिलेन। सुप्रसिद्ध समालोचक ओ इंराजी साहित्ये सुपण्डित ड० श्रीकुमार वन्द्योपाध्यायेर मते—"हासिर एमन एकटी सुगंभीर रूपान्तर, एमन कि गोत्रान्तर विश्वसाहित्ये विरल। हासि मानुषेर एकटा प्रान्तिक वृत्तिते परिणत हइयाछे। इहा बड़ जोर जीवन रूप वस्त्रेर शेषे लोना एकटि सरु पाड़ेर मत। किन्तु कमलाकान्ते एइ प्रान्तिक एकटि केन्द्रीय वृत्तिते परिणत हइयाछे। इहा जीवनेर सवटुकु प्रज्ञाघन अनुभूति, उहार करुण, अश्रुसजल वेदनाविधुर मर्मवाणी, उहार बन्धनहीन आनन्द भावुकता ओ परम तात्पर्य मन्थान सकलके संहत करिया एक व्यापकतम परिणततम जीवनदर्शनेर रूप परिग्रह करियाछे। हासिर एइरूप सार्वभौम मर्यादा, जीवन रहस्यभेदी तत्त्व रूप-उद्‌घाटन क्षम दिव्य चेतना बांला साहित्ये आर कोथाओ नाइ।"[15] तिनि अन्यत्र बलेछेन "कमलाकान्तेर हास्यरसओ कोथाओ अति संयत, अलक्षितप्राय, एकटु वक्र कटाक्ष ओ ओष्ठाधरेर ईषत् बङ्किम आन्दोलने मात्र प्रकाशित; कोथाओ farce एर मत उतरोल, उच्चकण्ठ, कोथाओ वा Comedyr उदार प्राणखोला उच्छवास, कोथाओ वा Tragedyr गम्भीर-विषण्ण आभासे स्निग्ध सजल भावराज्येर सुर ग्रामेर समस्त उच्च-नीच पर्दा ओ ताहादेर मध्यवर्ती सूक्ष्म मीड़ मूर्च्छनार उपर लेखकेर समान अधिकार।"[16] कमलाकान्तेर अनुभूति जीवनेर ये गम्भीरतर प्रदेशे प्रवेश करेछे सेखाने हासि ओ कान्ना परस्पर विरोधी नय—सहोदर। ए प्रसङ्गे लेहाण्टेर विख्यात उक्ति स्मरण करा येते पारे—"It does not follow that everything witty or humorous excites laughter. It may be accompanied with a sense of too many other things to do so, with too mach thought, with too great a perfection even, or with pathos and sorrow. All extremes meet, excess of laughter runs into tears, and mirth becoms heaviness. Mirth itself is too often but melancholy in disguise."[17]

विचित्र अभिज्ञता, भूयोदर्शिता ओ बहु विषयेर ज्ञानी त्रैलोक्य मुखोपाध्याय (१८५७-१९१९ बांला हास्यरस साहित्येर आकाशे आर एकजन उज्ज्वल ज्योतिष्क। समाज कल्याण मूलक मनोभाव निये तिनि लेखनी धरे छिलेन तबे ताँर साहित्ये शिल्पेर न्याय (logic of art) रक्षित हयेछे बले लेखा गुलिते आदौ प्रचारधर्मितार मूल रं लागेनि। समाजेर मंगलाकांक्षी हलेओ—"पृथिवी ये स्वर्गराज्ये परिणत हइते पारे ना ताहा तिनि जानितेन। तबे मानुष आर एकटु यदि हृदयवान हय, आर एकटु परार्थपर हय, आर एकटु विचार बुद्धि सम्पन्न हय, तबे संसारेर दु-एकटि कण्टक उत्पाटित हइया

सहजेटा आर एकटु भद्र रकम ओ वासोपयोगी हय। इहाइ तो यथेष्ट। इहार वेशी आर किछु हओया सम्भव नय, ताइ तदधिक किछुइ तिनि चाइतेन ना।"[18] तिनि दुइ धरणेर काहिनी रचना करेछिलेन। एकटि भूत-प्रेत इत्यादि उद्भट विचित्र निये, अपरटि वास्तव प्रेक्षितेर काहिनी। ताँर भूत प्रेतदेर मध्ये अधिकांशेइ लौकिक समाजेर लीला मानुष-मानुषीर चरित्रेर प्रतिफलित रूप।" तादेर स्वभाव ओ आचरणेर मध्ये एमन अद्भुत, उद्भट रसेर आधिक्य देखा याय ये आमरा प्रबल हासिर बाँध भाङ्गा स्रोतके किछुतेइ वशे राखिते पारि ना, बुद्धि ओ चिन्तार वेड़ा सेइ स्रोते कोथाय भेसे जाय। किन्तु वास्तव काहिनी वर्णनार क्षेत्रटि अन्यरूप सेखाने "घटनार उद्भटत्व ओ तज्ज्वलित हासिर प्रचण्डता नाइ, सेखाने लेखक सूक्ष्मसन्धानी श्लेष ओ अन्तरशायी विद्रूपात्मक इङ्गित पाठकेर मनेर सम्मुखे तुलिया धरते पारियाछेन, समाजेर लोभ ओ स्वार्थपरता, नीचता ओ निर्ममता, कापट्य ओ कुटिलता तखन ताँहार व्यंग्येर अव्यर्थ शरे विद्ध हइया कदर्य, कुत्सित रूपे अनावृत हइया पड़ियाछे।"[19] फले आमरा प्रत्यक्ष करलाम अर्थपिशाच तनुराय, भण्डधर्मध्वजधारी पाँड़ेश्वर, बिये पागला जनार्दन चौधुरी, निष्ठुर हृदयहीन गुरुदेवके। मानुषेर प्रति सीमाहीन ममता ओ सहानुभूति छिल बले या मानव समाजके शोषण ओ पददलित करे तादेर विरुद्धे लेखकेर तीव्र प्रतिक्रिया छिल, दरद ओ सहानुभूतिर मिश्रण थाकाय तार हास्यरसके विशुद्ध वा करुणामय हास्यरसेर (humour) पर्यायभुक्त करा याय। त्रैलोक्यनाथेर विख्यात रचनार मध्ये उल्लेखयोग्य 'कङ्कावती' (१८९२) 'फोकला दिगम्बर' (१९०१) 'डमरुचरित' (१९२३) प्रभृति।

इन्द्रनाथ बन्द्योपाध्याय (१८४९-१९११) एमन एकजन लेखक छिलेन याँर एकमात्र परिचय हास्य लेखक रूपे। मुष्टिमेय कयेकटि प्रबन्ध छाड़ा कविता, उपन्यास, प्रहसन, चुटकी, नक्सा-प्रभृति सब लेखाइ हास्यरसके मूलमन्त्र करे लेखा। तिनि छिलेन मजलिसी मानुष एवं सर्वक्षण येन हास्यरसेर स्रोते साँतार काटतेन। बङ्किमचन्द्र ताँर गुणग्राही छिलेन एवं से युगेर सकले ताके खातिर करत। पंचनन्द छद्मनामे तिनि बंगवासी पत्रिकाय नियमित लिखितेन एवं से युगे असाधारण जनप्रियता अर्जन करेन। ताँर दुइटि ग्रन्थ 'कल्पतरु' (१८७४) ओ 'क्षुदिराम' उल्लेख योग्य। तिनि सामयिक पत्रिकार सङ्गे युक्त छिलेन बले समसामयिक प्रसङ्ग व्यंग्य विद्रुपेर मध्ये प्राधान्यलाभ करेछे। आइन-आदालत, स्वायत्तशासन ओ पौरव्यवस्था, इलबार्ट विल, सुरेन्द्रनाथेर कारावरण इत्यादि विषय निये कौतुक करेछेन। तवे इनि किछुटा रक्षणशील, सनातनधर्मी छिलेन। समाज-परिवर्तनेर अनेक भाल लक्षणके तिनि सन्देहेर चोखे देखे छेन।

इन्द्रनाथेर सांनिध्य थेके ताँर द्वारा अनुप्राणित हन योगेशचन्द्र बसु (१८५४-१९०५)। इनिओ प्रगतिविरोधी ओ रक्षणशीलतार पृष्ठपोषक छिलेन एजन्य ताँर व्यंग्य बाण बाधित हयेछे से युगे परिवर्तनकामी, संस्कारपन्थी देर प्रति। इंराजी भाषा ओ संस्कृति प्रेमिक ओ ब्राह्मधर्मावलम्बीरा ताँर आक्रमणेर लक्ष्य छिलेन। ताँर एइ धरणेर व्यंग्य रचनार मध्ये 'मडेल भगिनी' (१८८६-१८८८), 'चिनिवास चरितामृत' (१८८६), 'काला चाँद' (१८८९-९०) ओ 'श्रीश्रीराजलक्ष्मी' (१९०२)। एर अतिरंजित व्यंग्य-विद्रूपे ज्वाला धरिए दित। कखनो-कखनो व्यक्तिगत विद्वेष प्राधान्य लाभ करत। अतिरंजित भावधारार प्राधान्य ओ सुरुचिर सीमा लंघनेर जन्य तिनि समालोचित हयेछेन।[20]

रवीन्द्रनाथेर (१८६१-१९४१) प्रतिभा एत विचित्र ये हास्यरसेर लेखक हिसेबे ताँर स्वतन्त्र कोन परिचय नेइ।[21] तबे अन्यान्य रसेर सङ्गे सहावस्थान करेछे ये हास्यरस सेइ हास्यरसेर असंख्य उदाहरण तार उपन्यास, छोट गल्प, प्रबन्ध ओ कविताय छड़िये आछे। एमन कि निज जीवनेर स्मृति-चित्रण करते गिए गुरुगम्भीर ऐतिहासिक परिवेशेरम ध्येओ तिनि सरस कौतुकरे भङ्गीटि परित्याग करेननि, याँरा ताँर सान्निध्य लाभेर सौभाग्य अर्जन करछिल ताँदेर साक्ष्यथेके जाना याय हास्य-परिहासेर अफुरन्त भाण्डार छिलेन तिनि। ताँर प्रतिदिनेर आलाप-आलोचना गुलि चयन करे गोपालचन्द्र राय 'रवीन्द्रनाथेर हास्य परिहास' ग्रन्थ टि रचना करेन। रवीन्द्रनाथ मानुष हिसेबे यदि एत रसिक हन तार प्रतिफलन ताँर रचित साहित्ये ये हबेइ ता बलाइ बाहुल्य। रवीन्द्र साहित्ये वाग्वैदग्ध्यमय हास्य (wit) ओ सजल हास्य रस (Humour) एर भूरि-भूरि उदाहरण पाओया याय। सुरुचिसम्पन्न, बुद्धिदीप्त, वैदग्ध्येर लावण्ये झलमल करा, सुसंयत सुगभीर सहानुभूतिमिश्रित हास्यरसेर लेखक हिसेबे तिनि चिरकाल हास्य-रस साहित्येर जगत्के आलोकित करे राखबेन। रवीन्द्र साहित्ये हास्यरसेर स्वरूप सम्पर्के समालोचकेर वक्तव्य —"रवीन्द्रनाथेर हास्यरसे एक उदार, संयत सहनशील ओ भूयोदर्शी जीवनबोधेर परिचय पाओया याय। तिनि समाज-जीवनके गम्भीर भावे देखियाछिलेन किन्तु एइ जीवनेर सङ्गे जड़ाइया पड़ेन नाइ। एजन्य ताँर हास्यरसे कोन दलीयता ओ श्रेणीस्वार्थ प्रधान उठे नाइ। ताँहार हास्यरसेर आवेदन ए कारेणइ सार्वजनीन ओ चिरन्तन,"……तिनि आमादेर हासाइयाछेन; किन्तु निजेके निरपेक्ष राखियाछेन, एइ बुद्धिसचेतन, स्वातन्त्र्यवादी, गूढ़रससन्धानी दृष्टिइ हइल आधुनिक रसदृष्टि। एइ रस दृष्टिर सर्वोत्तम रवीन्द्रनाथेर साहित्य।"[22]

रवीन्द्र साहित्ये उइट (wit) ओ humour एर निपुण शिल्पसम्मत प्रयोग देखा याय। रवीन्द्रनाथेर wit ताँर सुगभीर जीवनदृष्टिर सङ्गे सङ्गतिपूर्ण। विदग्ध समालोचकेर मते —"अदृश्य रक्तधारा मानव देहके येमन सजीव करिया तोले, ताँहार प्रच्छन्न हास्यधारा तेमनि ताँहार साहित्यके सरस ओ समृद्ध करिया तुलियाछे।"[23]

'हास्य-कौतुक' ओ 'व्यंग्य-कौतुक' दुइ खानि ग्रन्थ रङ्ग-व्यङ्ग मिश्रित हास्य रसेर प्रकृष्ट उदाहरण। हास्य कौतुकेर नाटिका गुलिते कौतुक रस प्रधान अवलम्बन हलेओ माझे-माझे ताते व्यंग्य एवं श्लेषेर प्रलेप आछे। व्यंग्य कौतुकेर नाटिका गुलि आधार मूलतः व्यंग्यधर्मी। 'वैकुंठेर खाता' (1897), 'चिरकुमार सभा' ओ 'शेषरक्षा' एइ तिनटि रवीन्द्रनाथेर खाँटि प्रणागि प्रहसन हिसेबे जनप्रिय। वैकुंठेर खाताय हास्यरस चरित्रके अवलम्बन करे निर्मल करुणाधारार मत प्रवाहित हयेछे। चिरकुमार सभाय हास्यरस चमत्कारी, वैदग्ध्यपूर्ण वाग्रीतिर उपर निर्भरशील। शेषरक्षाय हास्यरस स्फूर्तिलाभ करेछे जटिल घटनाके केन्द्र करे। वैकुंठेर खाताय हास्यरस हिउमारेर उज्ज्वल उदाहरण। 'तासेर देश' (१९३३) नाटके रुहितन, इस्कावन, हरतन, टेक्का प्रभृति तासगुलिके मानब मानवीर मत आचरण प्रचुर कौतुकेर संचार करे। रवीन्द्रनाथेर गल्पगुलिर मध्ये हास्यरसेर अनाविल फल्गुधारा प्रवाहित हते देखा याय। तबे केवल हास्यरसात्मक गल्पेर संख्या-खूबइ कम। इच्छापूरण, आधाड़े, दर्पहरण, अध्यापक, राजटिका, ठाकुरदा इत्यादि ग्रन्थे हास्य रसेर प्राधान्य आछे। बाकी गल्पगुलिते माझे-माझे हास्यरसेर

अवतारणा करा हयेछे। तार मूल्य आदौ उपेक्षणीय नय। उपन्यासेओ कोथाओ कोथाओ हास्यरसेर साक्षात् पाओया याय, तबे गल्प अपेक्षा तार परिमाण खूबइ कम। ए प्रसङ्गे सवचेये उल्लेखयोग्य हलो 'शेषेर कविता। एखाने epigram धर्मी भाषार सङ्गे हास्यरस अंगांगीभावे युक्त। निपुण वैग्वैदग्ध्येर सङ्गे-सङ्गे विद्रूपेर संमिश्रणे एइ हास्यरसेर स्वतन्त्र स्वाद सृष्ट हयेछे।

रवीन्द्रनाथेर प्रबन्ध साहित्येर परिमाण तांर काव्य रचना अपेक्षा कम नय। प्रबन्धेर गुरुगम्भीर दार्शनिक नन्दनतात्विक आलोचनार समयेओ येन तिनि हास्य रस सृष्टिर कथा विस्मृत हननि। तबे कयेकटि हास्यरसात्मक प्रबन्धओ तिनि लिखेछिलेन। येमन—रसिकतार फलाफल, मीमांसा, डेअ पिपड़ेर मन्तव्य, प्रत्नतत्व, लेखार नमूना, पयसार लांछना। एइ सब प्रबन्धे तीक्ष्ण व्यंग्य विद्रूप प्रकाश पेयेछे। 'पंचभूत' ग्रन्थे हास्यरसेर शर्करा दिये गुरुगम्भीर तत्वके उपभोग्य करा हयेछे। प्रबन्ध छाड़ाओ व्यक्तिगत अजस्र चिठिपत्रेर मध्ये हास्यकौतुकेर अजस्र उदाहरण खुंजे पाओया याय।

बांला साहित्ये शरत्चन्द्र सवचेये बेशि मानवदरदी लेखकरूपे परिचित। तांर हास्यरसेर मध्ये मानवीय करुणाधारार अन्तःसलिला फल्गु प्रवाहित हयेछे। प्रकृत Humourist एर वैशिष्ट्यइ एइ। शरत्चन्द्र यादेर निये हासिर फोयारा सृष्टि करछेन तादेर निविड़ भावे भालवेसेछेन। "ताहार हासि येन अश्रुर जमाट तुषारराशि, येन जलभारानत मेघेर बुके चंचल विद्युत विलास।"[२१] तार हृदय करुणाय परिपूर्ण छिल बलेइ मानुषेर चरित्रेर असंगति, भण्डामि, स्वार्थपरताके क्षमा करेननि। एइ धरणेर मानुषगुलि निरपराध मानुषदेर दुःख दुर्दशार कारण। येमन नतून दादा, गोविन्द गाङ्गुलि, गोपाल चाटुज्ये, रासविहारी चरित। किन्तु एदेर स्वरूप पाठकेर सामने स्पष्ट भावे तुले धरेछेन याते पाठकइ एदेर विचार करेन। नन्द मिस्त्री, टगर वोस्टमी, बाकोबावा, साधुजी, प्रियनाथ ओ कैलाश खुड़ो, दीनानाथ, धर्मदास, पोड़ाकाठ प्रभृति चरित्रगुलि समाजेर धूलिधूसरित पथथेके साहित्येर मंचे तेने आना हयेछे, कारोइ जाति वा पेशागत कौलीन्य नेइ। स्निग्ध हास्यरसेर छोयाय एराइ हये उठेछे अनाविल हास्यरसेर उत्स। साधु-संन्यासीर चरित्र निये श्रीकान्तेर प्रथम पाठ कौतुक करेछेन। श्रीकान्तेर अन्यान्य पाठेओ हास्यरसात्मक वर्णनार साक्षात्त पाओया याय, तार मध्ये दु-एकटिर उल्लेख करा येते पारे। जाहाजे ओठवार जन्य प्रतीक्षारत यात्रीदेर वर्णनार मध्ये प्रचुर हास्यरसेर खोराक आछे। सकले उच्चैःस्वरे जातीय संगीत गाइछे। एक जन काबुलिओयालाओ गान शुरू करे दियेछे, तार सरस कौतुकावह वर्णना आछे। शरत्चन्द्र एमन कतकगुलि चरित्र सृष्टि करेछेन यारा निजेराइ परिहासप्रिय हासरसिक। येमन गृहदाहेर मृणाल, श्री कान्तेर राजलक्ष्मी ओ कमललता, किरणमयी प्रभृति। शरत्चन्द्रके कोन-कोन समालोचक बांला साहित्येर श्रेष्ठ Humourist बले मने करेन।[२५]

प्रमथ चौधुरी के निछक विट वा वाग्वैदग्ध्यमय हास्य रसेर श्रेष्ठ लेखक बले अनेक मने करेन। तांर लेखाय Humour एर स्थान नेइ बललेइ चले। रवीन्द्रनाथ वाग्वैदग्ध्यके जीवनरसेर अङ्गीभूत करे छिलेन, किन्तु प्रमथ चौधुरी जीवनरसेर ओपर वाग्वैदग्ध्यके स्थान दियेछिलेन बले केउ केउ मने करेन।[२६] एजन्य बुद्धिवादी ओ समाजे मार्जित रुचि उच्चशिक्षित श्रेणीर काछे तांर आवेदन दीर्घस्थायी हयेछे। किन्तु जनसाधारणेर काछे तिनि सुदूर नक्षत्र लोकेर वासिन्दा। एकदिके तिनि येमन

प्राचीनेर अन्धमोह ओ निष्क्रय जड़ताके आघात करेछेन अन्यदिके तेमनि जीवनेर भावप्रवणतार आतिशय्य केओ आघात करेछे। तिनि फरासी साहित्ये पारदर्शी छिलेन सेजन्य स्थूलरुचि ओ रसिकताके अपछन्द करतेन।

रवीन्द्र ओ शरत् परवर्ती युगे राजशेखर वसुर मत हास्य सृष्टिर नजीर आर केउ देखाते पारेननि। इनि पुरोपुरि हासिर गल्पेर लेखक हिंसेबेइ साहित्ये परिचित। तार प्रबन्धगुलि सम्पर्के अनेकेइ खोंज खबर राखेननि, तार नामटि येन प्रवादेर महिमा लाभ करेछे। "ताहार कौतुकरस एत अवरित ओ उतरोल हइयाओ एत सावलील ओ अनायासजात, उद्भावनी शक्तिर एत मौलिक ओ ताँहार अभावनीय चरित्र सृष्टि एत वास्तव ओ जीवन्त ये ताँहार गल्पगुलि प्रत्येक पाठककेइ अफुरन्त आमोदे उत्तेजित करिते थाके।"[१४] राजशेखरेर हास्यरस प्रधानत सृष्ट हयेछे नतून-नतून मजार परिस्थितिर अवतारणार द्वारा। 'गड्डलिका'र भुशुण्डीर माठे, कज्जलीर जाबालि, 'हनुमानेर स्वप्ने'र महेशेर महायात्रा, प्रेमचक्र, धुस्तरी मायार दुइ बुड़ोर रूपकथा, भरतेर झुमझुमि, रेवतीर पतिलाभ, वदल चौधुरीर शोकसभा यदु डाक्तारेर पेशेन्ट, षष्ठीर कृपा, 'गल्प कल्पे'र गामानुषजातिर कथा, रामराज्य, तिन विधाता, चिरंजीव, 'कृष्ण कलि'र जटाधर बकशी, बालखिल्य गणेर उत्पत्ति इत्यादि गल्प ए प्रसङ्गे उल्लेखयोग्य। ए छाड़ाओ ताँर बहु गल्प आछे यार हास्यरस स्फूर्तिलाभ करेछे वास्तवधर्मी सामाजिक परिवेशे संघटित अद्भुत कौतुकप्रद घटनावलीर मध्ये। येमन चिकित्सा-संकट 'लम्बकर्ण, परशपाथर' दक्षिणराय निरामिषाशी वाघ, स्वयंवर, कविसंसद ओ उलटपुराण प्रभृति।

राजशेखरेर विद्रूपधर्मी गल्प रचना करछेन; येमन श्रीश्रीसिद्धेश्वरी लिमिटेड, महाविद्या, विरिञ्चिबाबा, रामधनेर वैराग्य, रामराज्य इत्यादि, किन्तु एगुलिते ज्वालाधरानो निर्मम व्यंग्यरस प्राधान्य पाय नि। एखानेओ तार प्रसन्न हास्य-परिहास-प्रियतार सौम्य मूर्त्तिखानि अम्लान हये आछे। "ए हासिर उद्देश्य साधित हय अथच उद्दिष्ट व्यक्ति पीड़ित हयना।"[१६]

अधिकांश क्षेत्रे घटनानिर्भर हास्यरस सृष्टि करलेओ राजशेखर कतक गुलि अविस्मरणीय हास्य-रसात्मक चरित्र सृष्टि करेछेन, येमन कविराज तारिणी, वैज्ञानिक गवेषक ननी, रटन्ती कुमार, जिगीषा देवी, गण्डेरिराम बाटपारिया, लालिमा पाल (पुं०), विपुला मल्लिक, विरिञ्चि बाबा इत्यादि। भाषार उपर असाधारण अधिकार एवं बहुविचित्र विषयेर ज्ञान थाकार फले ताँर निजस्व वर्णना ओ मन्तव्य गुलि उच्चांगेर परिशीलित हास्य रसेर स्रोत बइये दियेछे। तिनजन विहारवासी हास्य-रस-स्रष्टार नाम बांला साहित्ये चिरस्थापितत्व लाभ करार योग्यता अर्जन करेछेन। तारा हलेन पूर्णियावासी केदारनाथ बन्द्योपाध्याय, द्वारभाङ्गा निवासी विभूति भूषण मुखोपाध्याय ओ भागलपुर निवासी वनफूल वा बलाइचाँद मुखोपाध्याय।

केदारनाथेर हास्यरसेर मध्ये करुणा रसेर सार्थक समन्वय अनेकांशे सार्थकता लाभ करेछे। एर फले कि उपन्यास कि छोट-गल्प—सर्वत्रइ ताँर हासिर मध्ये एकटा सजल करुण भाव प्रच्छन्न थाकते देखा याय। ताँर हासिर मध्ये एकटा दिल-खोला उदारता, वैराग्यमय विषादेर अन्तर्लीन छाया पड़ते देखा याय। "ताँहार उक्ति गुलिर मध्ये Wit एर चाकचिक्य ओ संक्षिप्त अर्थ-गौरव प्रचुर परिमाणे विद्यमान। Wit एर चमकप्रद आकस्मिकता, इहार इंगित ओ व्यंजनागर्भ

प्रकाशभङ्गी ओ अनुप्रासेर समावेश कौशल, ताहार वाक्यविन्यासेर बाहुल्य वर्जित गतिवेग, चञ्चल तीक्ष्णाग्रता —ए समस्तेरइ उपर ताँहार अकुण्ठित अधिकार।"[29] केदारनाथेर विचित्रधर्मी हास्य रसमय चरित्र सृष्टिर दक्षतार कथा सकलेइ स्वीकार करेछेन। केदारनाथेर रसिकता गर्भर्व बुद्धि-मार्जित, उच्चांगेर रुचिशील मनेर फसल नय बरं ता येन प्राकृत जनेर संगे हात धराधरि करे अग्रसर हयेछे। किन्तु जीवनधर्मी स्थूलता ओ अतिरंजित भावधारा तार मध्ये एसे पड़ेछे। फले तार पाठक श्रेणीर संख्या विपुल। तार 'चीन यात्री' (१९१८), 'शेष खेयार' (१९२५) पड़ेइ प्रबल हास्यरसेर धारा शतधाराय प्रवाहित हयेछे। 'आमरा कि ओ के' (१९२७), 'कबुलात' (१९२८), 'पाथेय' (१९३०) ओ 'दुःखेर देओयाली' (१९३२) ग्रंथगुलिते तार हास्य-रस सृष्टिर अफुरंत शक्तिर विस्मयकर निदर्शन पाओया याय। आशी बछर वयसे रचित 'नमस्कारी' गल्प संग्रह टिलेओ तार चिर सजीव, सृजनशील हास्यरसिक हृदयेर सम्यक् परिचय आछे। तार उपन्यासेर मध्ये 'भादुड़ी मशाइ' ओ 'कोष्ठीर फलाफल' ग्रन्थ दुटि तार प्रतिभार वाहन। तबे एर मध्ये द्वितीय टि तार हास्यरस सृजन क्षमतार उपयुक्त निदर्शन।

विभूतिभूषण मुखोपाध्यायेर गल्प ओ उपन्यासगुलि निर्मल हास्यरसेर अतुलनीय निर्झर: राणुर प्रथम भाग (१९३७), राणुर द्वितीय भाग (१९३८), राणुर तृतीय भाग (१९४०)। श्रीकुमार बाबू बलेछेन, "एइ गल्पगुलेर मध्ये शिशु-चित्तेर नाना विस्मयकर खेयाल ओ कल्पनार वर्णना आछे, किन्तु आर्ट ओ भाव गंभीरतार दिक दिया कोनटिइ राणुर प्रथम भागेर समकक्ष हय नाइ।"[30] मेघदूत, विपन्न, बसन्ते गल्पगुलि नवविवाहितेर वास्तव विडम्बित ओ बाधाग्रस्त प्रणयावेगेर काहिनी। हैमन्ती (१९४४) कायकल्प (१९४४) गल्प संकलन दुटिते लेखकेर नव-नव सृष्टिर दक्षताके स्वीकार करते हय। हास्यरस सृष्टिर नतून-नतून पन्था आविष्कार करे लेखक वैचित्र्य सृष्टि करेछेन। नोरा, होमियोप्याथि, अव्यवहिता, कर्ममै हविषा विधेम, मधुलिड, तीर्थंकेरत, पंचादिर नष्टामि, सबजान्ता, माथा ना थाकिलेओ प्रभृति गल्पे कौतुक-रसेर संगे गभीरतर सुरे मिश्रण घटे गल्पगुलिर आवेदन वृद्धि करेछे। विभूतिभूषणेर उल्लेखयोग्य हास्यरसात्मक उपन्यास ओ बड़ गल्पेर मध्ये पोणुर चिठि (१९५४, ओ काञ्चनमूल्य (१९५६) विशेष प्रशंसार दावि राखे।

बनफूल वा बलाइचाँद मुखोपाध्यायेर छोट गल्पेर मध्ये हास्यरसेर विचित्र उपादान छड़िये आछे। छोट गल्पेइ तिनि तार तिर्यक व्यंग्य-विद्रूप ओ श्लेषेर बाण-निक्षेप करेछेन। तार उपन्यासेर स्थान संकुचित। तार श्रीपति सामन्त, सनातनपुरेर अधिवासिवृन्द, स्थानभ्रष्टार अजाण्डे, समाधान, छेले-मेये, जैविक नियम इत्यादि ग्रन्थ विशेष भावे उल्लेखयोग्य। बनफूलेर व्यंग्य तीक्ष्ण ओ मर्मभेदी हलेओ एकबारे सहानुभूतिवर्जित नय। मानुषके निये तिनि तीव्र परिहास करछेन, तार त्रुटि, दुर्बलता, हीनता, नीचता, कृत्रिमता निये निर्मम कठिन व्यंग्यओ करेछेन। तबे केउ-केउ सेइ व्यंग्य-विद्रूपेर अन्तराले तार हृदयहीनतार स्पर्श पाबेन।[31]

विभूतिभूषण, केदारनाथ ओ बनफूल—बांला साहित्ये एइ तिन जन विशिष्ट हास्य रस स्रष्टा के निये बिहार गर्व करते पारे। एइ तिन जनेर सृष्टिर परिमाण विपुल। आयतन ओ मान दुइटि उपेक्षणीय नय।

रवीन्द्रनाथ ओ शरत्‌चन्द्रेर माझे आर एक जन सरस कौतुक रसेर गल्पलेखकेर कथा उल्लेख करा दरकार, ताँर नाम प्रभातकुमार मुखोपाध्याय (१२७९-१३३८ बंगाब्द)। ताँर सब गल्पेइ हास्य रसेर स्पर्श नेइ, कोन-कोन गल्पे आछे। प्रणय-परिणाम बाल्य प्रणयेर हास्य मधुर काहिनी। बलवान जामाता गल्पे कौतुकजनक घटना-सन्स्थानेर माध्यमे हास्यरस सृष्टि करा हयेछे। निषिद्ध फल, चकोरेर व्यथा ताँर बहुप्रशंसित कौतुक काहिनी।

ए छाड़ा आछेन सामयिक कालेर ख्यातिमान हास्य-काहिनी लेखक विरूपाक्ष ओ कुमारेश घोष, शिवराम चक्रवर्ती, नारायण गंगोपाध्याय, गौरकिशोर घोष।

नाटके दीनबन्धुर आगे यार नाम उल्लेख करा दरकार तिनि हलेन रामनारायण याँर कुलीन-कुल-सर्वस्व ओ नव-नाटके कौलीन्य प्रथा ओ बहुविवाहेर कुफल वर्णित हयेछे। नाटक दुटिते रंग ओ व्यंग्य रस नैपुण्येर सङ्गे परिवेशित हयेछे। ज्योतिरिन्द्रनाथ गम्भीर रसाश्रित नाटक रचनार प्रति अधिक मनोनिवेश करलेओ कौतुक रसेर दिकेओ उपेक्षार दृष्टि ते ताकाननि। ताँर सृष्ट कौतुक व्यंग्य चरित्र अलीक बाबूर नाम जानेननि एमन बाङ्गाली खुब कम आछे। ताँर दुटि प्रहसन 'हठात् नवाब' ओ 'दाय पड़े दायग्रह' एक समय ख्याति लाभ करेछिल। किञ्चित् जलयोग नाटके मानुषेर बाह्यमत ओ अन्तः प्रकृतिर मध्ये वैषम्य दखिये ज्योतिरिन्द्रनाथ कौतुक सृष्टि करछेन।

प्रहसन रचनार ख्यातिमान लेखक अमृतलाल बसुर स्थान दीनबन्धु मित्रेर परेइ। ताँर प्रतिभा लघु हास्य रस सृष्टिर मध्येइ गतिवेग संग करेछे एवं दक्षतार परिचय ज्ञान करेछे।

ड० अजित कुमार घोष अमृतलालेर हास्य रसेर स्वरूप सम्पर्के मन्तव्य करते गिये यथार्थ बलेछेन—"दीनबन्धुर हास्य रस समवेदनाकरुण हिउमार किन्तु अमृतलालेर हास्यरस शासन-कठोर स्याटायार। दीनबन्धु समाजेर दोष ओ विकृति देखाइया हासिर अर्गल मुक्त करिया दियाछेन। सेइ हासिर अजस्र उच्छ्वासे सर्वप्रकार क्लेद, ग्लानि, अप्रीति ओ असन्तोष दूरीभूत हइया गियाछे। सेइ हासिर उदार ओ प्रसन्न जगते दोषी ओ निर्दोष, भ्रान्त ओ शुष्क सब एक हइया गियाछे। किन्तु अमृतलाल हासिर उच्छ्वासे निजेके हाराइया फेलेन नाइ। हासि टि ताहार छल मात्र, सेइ हासिर मध्य दिया मानुषेर स्थूल, विकृत ओ विभ्रान्त अंशगुलि प्रकाश्ये तुलिया धराइ हइल ताहार उद्देश्य।··· हास्य रसिकेर पक्षे ये अपक्षपाती सामग्रिक ओ सामञ्जस्यपूर्ण दृष्टि थाका प्रयोजन ताहा अमृतलालेर छिल ना।"[3] चोरेर उपर चाट पाड़ि, डिसमिस, चाटुय्ये ओ बाँडुय्ये, ताजुब व्यापार, कृपणेर धन, विवाह-विभ्राट, बाबू, एकाकार, बौमा इत्यादि प्रहसन एक समय विपुल जनप्रियता अर्जन करे छिल।

द्विजेन्द्रलाल ऐतिहासिक उपादान निये गुरु-गम्भीर नाटक रचना करे विख्यात हयेछिलेन, ताँर नाटके Comic Relief हिसेवे उच्चांगेर हास्य रस माझे-माझे एसेछे। प्रथम दिकेर नाटक गुलिते हास्य रसके प्राबल्य देओया हयेछे। ताँर ऋणं कृत्वा, भूतपूर्व स्वामी, मौ चाके ढिल, परिहास विजल्पितम्—प्रभृति नाटकेर उल्लेख करा येते पारे।

विस्तारित आलोचना ना करे बला याय वर्तमान युगे बांला गद्य साहित्ये हास्यरसेर धारा टि अतीतेर तुलनाय किछुटा मिश्रित। एखनकार युगे हास्यरसेर लेखक हिसेवे उल्लेख्य वीरेन्द्र कृष्ण भद्र, कुमारेश घोष, परिमल गोस्वामी, सजनीकान्त, हिमानीश गोस्वामी, सञ्जीव चट्टोपाध्याय प्रभृति।

सन्दर्भ-निर्देश

१. बंग साहित्ये हास्य रसेर धारा—डा. अजितकुमार घोष, पृ० ४७।
२. तदेव, पृ० ५४।
३. तदेव, पृ० ४८।
४. नवबाबू विलासेर भूमिका – ब्रजेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय।
५. बंग साहित्ये हा. र. धा.—डा० अ० कु० घोष, पृ० २८।
६. बंग साहित्ये उपन्यासेर धारा—श्रीकुमार वन्द्योपाध्याय पृ० ३१।
७. बंग साहित्ये हा०र०धा०—डा० अ० कु० घोष, पृ० २८८।
८. बांला साहित्येर सम्पूर्ण इतिवृत्त—डा० असित कुमार वन्द्योपाध्याय, पृ० ४३२।
९. बंग साहित्ये हा०र०धा०—डा० अ० कु० घोष, पृ० २९६।
१०. दीनबन्धु मित्र—डा० सुशील कुमार दे, पृ० ३४-३५।
११. Wit and Humour—W. Hazlitt.
१२. The Idea of Comedy—Meridith.
१३. बंग साहित्ये हा० रा० धा०—डा० अ० कु० घोष, पृ० ५२६।
१४. बांला साहित्येर सम्पूर्ण इतिवृत्त—डा० असित वन्द्यो०, पृ० ४५६।
१५. बंग साहित्ये हा० र० धा०—भूमिका, श्रीकुमार वन्द्योपाध्याय।
१६. बंग साहित्ये उपन्यासेर धारा– श्री कुमार वन्द्योपाध्याय, पृ० ३७८।
१७. Wit and Humour—Leigh Hunt.
१८. त्रैलोक्य मुखोपाध्यायेर श्रेष्ठ गल्प—भूमिका, प्रमथनाथ विशी।
१९. बंग साहित्ये हा० रा० धा०– डा० अ० कु० घोष, पृ० ३३०-३१।
२०. बंग साहित्ये उपन्यासेर धारा—श्री कुमारवन्द्योपाध्याय, पृ० ३०४।
२१. बंग साहित्ये हा० र० धा०—डा० अ० कु० घोष, पृ० ३५०।
२२. तदेव, पृ० ५३३।
२३. तदेव, पृ० ५३४।
२४. तदेव पृ० ३९९।
२५. तदेव, पृ० ३९९।
२६. तदेव, पृ० ५३६।
२७. तदेव, पृ० ४५९।
२८. परशुराम ग्रन्थावली (१म खंड)—भूमिका, प्रमथनाथ विशी, पृ० २६।
२९. बंग साहित्ये उपन्यासधारा – श्रीकुमार वन्द्योपाध्याय, पृ० ४०९।
३०. तदेव, पृ० ४१७।
३१. दुइ महायुद्धेर मध्यकालीन बांला साहित्य—गोपीनाथ रायचौधरी, पृ० ४१३।
३२. बंग साहित्ये हा० र० धा०—डा० अ० कु० घोष, पृ० ४७७-७८।

मैथिली लोकसाहित्यक सौरभ

श्री मणिपद्‍म

मिथिला भारतक एकटा रमणीय जनपद रहल। एक दिस बंगाल आ दोसर दिस अवधक सीमा। एक दिस हिमालय ओ दोसर दिस गंगा। भूमि सुखद आ पानि सुलभ।

एहिठामक समाज कतोक प्रकारक महाजाति (रेस) आ तकर उपजातिसँ बनल। संस्कृत भाषा आर्यक संगे आयल। ताहिसँ पहिने एहिठामक लोकक अपन जे कोनो भाषा छल ताहि पर गोरखाली-तिब्बती, आदिम बंगला आ आदिम मगही, भोजपुरी आ अवधीक मखरल-धोखरल रंग चढ़ल छल। आर्यक आगमनसँ टूटैत संस्कृत, प्राकृत आ अवहट्ट बनैत एहिठामक लोक-भाषाक दूधमे केशरि आ मिसरी बनि कऽ घोरा गेल आ एकरा समृद्धिशाली बना देलक। विद्यापतिक रचनाक्रममे ई प्रक्रिया सहजहि स्पष्ट रूपें परिलक्षित होइत अछि।

एहिठामक समाजमे कतेक प्रकारक देवी-देवता, पंथ-सम्प्रदाय, पूजा-पद्धति, आस्था-विश्वास, रहन-सहन, रस्म-रेवाज आ अवैदिक ओ वैदिक परम्परा मिझराइत-सिझराइत रहल आ एकाकार होइत रहल। मनुक्खक सर्जनात्मक उद्‌वेग ओकरा चित्र, संगीत, नृत्य आ साहित्य सिरजइ लेल बाध्य करैत रहलैक। अलिखित साहित्यक विकास उपासनागीत, ऋतु-गीत आ आचार-गीतक रूपमे भेल।

अगणित देवी-देवताक अगणित उपासना-गीत अछि, अगणित प्रकारक। एहिमे गोसाउनिक गीत भगति-गीत आ नचारी-गीत आदिम गीतमे सँ अछि। किछु उपासना गीतमे वैदिक ऋचाक भासक आभास होइत अछि। ऋतु गीतमे होरी, चैती, चौमासा, बरहमासा, मलार आ कजरी आदि प्रसिद्ध अछि। आचार गीतक कमिये कोन ? जतेक प्रकारक आचार आ तकर विध अछि ततेक प्रकारक तकर गीत भेल। एहिमे वैवाहिक गीत बड़ प्रशस्त। बेटीक विदा कालक समदाउन अश्रुसँ भीजल रहैत अछि। गीत प्रारम्भ भेल कि व्यक्ति-व्यक्तिक आँखि झहरय लागल !

संसार भरिमे पक्षी-त्योहार जापानेमे कि मिथिलेटामे मनाओल जाइत छैक। जाहि कालमे सुदूर पूर्वक कुरील द्वीपसँ चाहा जातीय पक्षी तीन हजार मीलक अविराम उड़ान (नन स्टाप फ्लाइट) दऽ कऽ मिथिलाक चर-चाँचरमे अबैत छैक ओमहर ओही समयमे सुदूर बैकाल झील सँ बक आ हंस जातीय पंछी जाड़सँ बचय लेल मिथिला अबैत छैक। ई सामा (श्याम-चकेब) त्यौहार भाव भीजल, भाइ-बहिनिक सिनेहपूर्ण रूपक गीतक आलम्बनसँ मनाओल जाइत छैक—पक्षी-पर्वक रूपमे। एहि गीत सबहिक अपन-अपन विभिन्न प्रकारक सम्मोहक भास होइत छैक।

एहि लोकसाहित्यक कथाभाग बड़ रोचक, सम्मोहक आ जीवन-स्पर्शी। कथा-साहित्यक दू रूप विशेष रूपसँ जगजगार छैक—कथा ओ पिहानी। कथा साहित्यपर जातक-कथा, कथा-सरित्सागर, विशेषतः बैताल-पचीसी आ सिंहासन-बतीसीक, बड़ प्रभाव।

किन्तु हमर कहब (Contention) अछि जे लोककथा सबहिक सम्हरल-सुधरल रूप भेल कथा-सरित्सागर, बैताल-पचीसी आ सिंहासन-बतीसी अर्थात् मैथिली लोककथापर कथा-सरित्सागर, बैताल-पचीसी आ सिंहासन-बतीसीक-प्रभाव नहि भऽ कऽ सरित्सागर, बतीसी आ पचीसियेमे एहि लोक-कथा सबहिक बिम्ब छैक।

जे-से, ई कथा-पिहानी (जाहि कथाक परतर देल जाय अथवा मानक रूपमे कहल जाय अथवा जकरा पार्श्व-कथा किंवा शाखा-कथाक रूपमे उपस्थित कयल जाय से कहौलक पिहानी) सब एखनहु अगणित संख्यामे अगणित कंठमे वास करैत अलिखित छैक।

लोक महागाथाकाव्य मैथिली साहित्यक अनमोल मणि-माणिक्यमेसँ छैक। 'बंगला साहित्येर इतिहास' (डा० सुकुमार सेन) क मैथिली-अनुवाद करबाक क्रममे परिलक्षित भेल जे मैथिली लोकमहा-गाथा साहित्यक आयु बंगलाक लोकगाथा-साहित्य बड झूर-झमान बुझाइत छैक। एकर कारण छैक, जे जहाँ बंगलाक लोक-महागाथा (जेना शून्य पुराण, धर्म-मंगल, चण्डी मंगल, मनसा-मंगल आदि मगल महाकाव्यक शृंखला आछि) देवी-देवताक दर्प, माहात्म्य, पारस्परिक द्वन्द्व आदिकेँ व्यक्त करैत छैक ओहिठाम मैथिली लोकगाथा देवी-देवताक खेलसँ अधिकाधिक मुक्त छैक। एकर नायक-नायिका अपन देवी अथवा देवताक भक्त छैक अवश्य, किन्तु ओ सब देवताक गुलाम नहि भऽ कऽ अथवा कोनो देवी-देवताक अंशी-अवतारी नहि भऽ कऽ सुच्चा मनुक्ख छैक। ओ सब मानवीय सुख-दुख सँ चालित छैक आ मानवीय शौर्य-सतीत्वक गरिमा आ महिमा सँ मंडित।

एहि महागाथा सबहिक कथानक, ध्वनि आयोजन, शब्द विन्यास, प्रवाह-शैली आ उपमा अलंकार ओ उत्प्रेक्षाक संग मानवीय स्पन्दन एकरा सबकेँ विश्व-साहित्यक कोटिमे आनि दैत छैक।

बंगला लोकमहाकाव्य आ मैथिली लोकमहाकाव्यमे एकटा मौलिक अन्तर इहो छैक जे जतय बंगला गाथा-गीतमे चौखड़ी-चौबड़ी पर रचयिताक नाम गुम्फित छैक, मैथिली महागाथामे अजन्ताक चित्रकार जेकाँ रचयिताक नामक कतहु निशान नहि अछि।

जतेक महागाथा एखन धरि हम रेकर्ड कय सकलहुँ अछि तकर संख्या आठ अछि। पैघ-छोट क्रमे ओ एना अछि—लोरिकायनि, दुलरा दयाल, राजा सलहेस, नैका बनिजारा लवहरि-कुशहरि, राय रणपाल आ दीना-भद्री। एकटा आर जे महागाथा उपलब्ध भेल अछि ओ थिक हंसराज-बंसराज। एहि पर एखनो अनुसन्धान चलैयं रहल अछि।

जतेक महागाथा अछि से सब गेय अछि। एकर कारण छैक जे कागत आ छापाक आविष्कारसँ पहिलुका साहित्य युद्ध, रोमांस, धर्मक विजय सुनलासँ कामना अथवा स्वर्गक प्राप्तिक विवरणक कारणेँ गेयधर्मिताक बल पर प्रचारित-प्रसारित ओ शाश्वत बनल रहैत छलैक।

मैथिली लोकमहागाथा सबमे सब सँ पैघ छैक 'लोरिकानि"। ई लोक महाकाव्य बड़ पैघ आ बड़ पुरान छैक—प्रायः रामचरितमानस एतेटा। एखन धरि ई अलिखित छैक आ उत्तर भारतक अधिकांश भाषा ओ लोकभाषामे ई थोड़े-थोड़े रूपान्तरक संग प्रचलित रहलैक अछि। भाषा एकर बड़ प्राञ्जल, प्रवाह कोशीक धार सन कलकल करैत। एकर मैथिली-स्वरूप बड़ सम्मोहक। जाहिना भू-स्पर्शी तहिना मर्म-स्पर्शी। ज्योतिरीश्वर अपन 'वर्ण रत्नाकर'मे एकर चर्च 'लोरिक नाच्यो'सँ कयने छथि।

एकर कथा आदिम लोकक्रान्तिक कथा अछि। महागाथाक विशेषता ई अछि जे एकर नायक राजा वा राजकुमार नहि भऽ कऽ अत्यन्त जनसाधारणमे सँ छथि। लोरिक आ हुनक छोट भाइ सावर सौंसे गामक गायक चरवाहिन खुलैन आ राजा सहदेवक हरवाह कुब्वेक बेटा। हेरिया छलथिन बंठा चमार, बारू आ राजल धोबी।

ई कथा दुर्गाक भक्ति, सामन्ती अत्याचार आ अनाचारक प्रति विद्रोह, सामन्ती षड़यन्त्र, राजा सबपर साधारण लोकक विजय, प्रेम, रोमांस, युद्ध आ शौर्यक गाथा अछि। पाँती सब साहित्यिक छटा सँ भरल। मिथिलाक सीमा देखू :—

पुब्ब रे पुरनियाँ पुजलौं
पच्छिम रे विहार (लोरिया गढ़)
उत्तर जे नेपाल पुजलिअइ
दक्षिण गंगा धार
रौता जे तिलकेश्वर पुजलौं
झाड़ी बैजनाथ
भोरे उठि कँ हाथ उठौलिअइ
दिनकर दीनानाथ

ई महागाथा एकटा दीप्तिमान क्लासिक अछि।

'**दुलरा दयाल**' महागाथा मिथिलाक जलजीवी लोक, प्रवहमान नदी आ उत्ताल तरंगित सागरक जीवन्त गाथा अछि। एकर नायक 'दयाल सिंह' कमला नदीक अखंड भक्त छथि, एकटा तान्त्रिक नर्त्तक, एकटा दुस्साहसिक सार्थवाह आ एकटा वीर अभियानी छथि। ई गाथा संसारक कोनो देशक कोनो साहसिक गाथाक समक्ष राखल जा सकैत अछि। कथाक परिवेश हिमालय, मिथिला, कामरूप आ बंगभूमि होइत यवद्वीप आ बालीद्वीप धरि अछि। एकर नायक असिवर नहि भऽ कऽ एकटा निष्णात नर्त्तक छथि। नृत्ये द्वारा सर्वत्र विजयी होइत छथि। एहि गाथामे हिमालयकेँ हंसालय, मिथिलाकेँ कमलालय आ सागरकेँ शंखालय कहल गेल छैक। बानगी लेल एकटा सम्मोहक कथोपकथन :—

—"गे मैया कमला, सरोवर गुँगुआइ छइ, अइमे नइ प्रवेश करही कमल-वन उखिया जेतइ"

—"गे मालिन बेटी, कमल-वन तँ हमर भ्रिमहार छिअइ।"

—"गे मैया, हांस-चकेवाक जोड़ी बिछुड़ि जेतइ।"

—"गे मालिन बेटी, हाँस-चकेवा तँ हमर कर्णफूल छी"

—"माता हे माता, नाग-नागिन पड़ा जेतइ।"

—"गे मालिन बेटी, नाग-नागिन तँ हमर केश-बन्हना छी।"

—"गे तिरहुतनी-भगवती, गामक नहाइत धी-बेटी डरे कानैत घर घूरि जेतइ।"

—"गे मालिन बेटी, ओकरा सबकेँ कही जे ओ सब हमरा सेवा-पूजा देत आ हम ओकरा सबकेँ खोंइछामे धान देबइ, फोंका मखान देबइ, कोरामे फूल देबइ, आँचर तर दूध देबइ आ मुँहमे पान देबइ।"

दुलरा दयाल महाकाव्य नदी-साहित्यक एकटा सशक्त दस्तावेज अछि।

राजा सलहेस जंगल-पहाड़ घाटी-चोटी, बाघ-भालु आ हाथीसँ भरल वातावरणक एकटा रोमांटिक आ शौर्य भरल गाथा अछि। ओ आ हुनक प्रेयसी वनदेवी अनंगकुसुमा एखनहु देवता आ देवीक रूप मे सुपूजित छथि।

नैका बनिजारा, एकटा महावाणिकक भ्रमणगाथा आ एकटा सती-साध्वी नारीक जीवन-संघर्षक गाथा अछि जे कैहनो परिस्थितिमे अडिग रहलीह। एहिमे तिलंगा नामक बाछाक दिव्य मानवीकरण भेल अछि।

लवहरि-कुशहरि भगवती सीताक वन-प्रवास, लवकुशक विजय आ भगवतीक पाताल प्रवेशक नोर भरल कथा अछि। विश्वसाहित्यमे भरिसवके कोनो राज-राजेश्वरीक एकटा साधारण नारी भऽ कऽ वनपरिस्थितिमे अपन दूनू पुत्रकेँ गढ़वाक ओ महान बनैवाक गाथा भेटत।

राय रणपाल एकटा वीर क्षत्राणीक शौर्य आ धैर्यक गाथा अछि।

दीना भद्री दूटा बलिदानी श्रमवीरक कथा अछि। एकरा श्रमिक सबहिक आदिम विद्रोहक कथा कहि सकैत छी जकर नेतृत्व दीना आ भद्री नामक वीर मुसहरच-दु कयलनि। ई दूनू आइयो दादाजीक नामे सुपूजित छथि।

कारू खिड़हरिक गाथा, चारागाह युगक गाथा अछि। खिड़हरि पशुरक्षक छलाह आ आइयो ताही रूपमे सुपूजित छथि।

एहि प्रकारेँ मैथिली लोकसाहित्य सन भारत किंवा विश्वक कोनो भाषाक लोक साहित्य, विशेष कऽ गाथासाहित्य, एतेक समृद्धिशाली अछि कि नहि ताहिमे सन्देह। एहि लोकसाहित्यकेँ जाज्वल्यमान सन्त साहित्य सेहो छैक जे अन्यत्र दुर्लभ अछि! किन्तु अत्यन्त खेदक बात अछि जे एखन धरि मैथिलीक लोकसाहित्य, जे एतेक महिमामय आ साहित्यिक सौन्दर्य, सुषमा आ शक्ति सँ सम्पन्न अछि, लोककंठमे अछि आ अलिखित अछि। एकरा सबहिक संकलन, अध्ययन आ प्रकाशनक सुगठित प्रयास एखनहु धरि नहि भेल अछि।

मैथिलीक लोकसाहित्य मने अमृत पीने छैक। हजार-हजार बरिस वितलो पर ई ओहिना सम्मोहक आ सप्राण बनल छैक जे जन-समाज केँ शक्तिवर्द्धक जीवनरस प्रदान करैत अयलैक अछि। अपन एहि शाश्वत धरोहरिक रक्षा हमरासबहिक पुनीत कर्त्तव्य अछि।

मैथिली लोकगीत

श्री प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन'

पूर्वांचलक लोकजीवनक अनुभूतिक्रम युग-युगसँ मैथिली लोकगीतमे प्रवाहित होइत हमरालोकनिक जीवनधाराकेँ प्राणवन्त बनौने चल आबि रहल अछि। मैथिली लोकगीतक विस्तार, जन्मसँ लऽ कऽ मृत्यु धरि, पाबनि-तिहारसँ लऽ कऽ धार्मिक अनुष्ठान धरि, घर-आँगनसँ लऽ कऽ खेत-खरिहान धरि एवं व्यक्तिगत अनुभूतिसँ लऽ कऽ लोकोत्सव धरि स्पष्टतः देखल जाइछ, जकर अनंतताकेँ बान्हल नहि जा सकैछ।

भारतीय लोकगीत-साहित्यक परिप्रेक्ष्यमे मैथिली लोकगीत-संपदाक मूल्यांकनसँ ई स्पष्ट भऽ जाइछ जे सम्पूर्ण लोकगीत साहित्य एकहि आत्मा, प्राण, रस ओ रंगसँ स्पंदित, अनुप्राणित ओ अनुरंजित अछि। जँ कोनो भिन्नता देखना जाइछ तँ भाषा-भेद, संस्कार-भेद ओ भौगोलिक भेदक कारणेँ। आ यैह होइछ प्रत्येक भूभागक लोकगीतक वैशिष्ट्य। उदाहरणार्थ पर्वतांचल ओ हरितांचलक प्राकृतिक पृष्ठभूमि ओ जीवनधारा अवश्ये भिन्न होयत। राजस्थानक धरतीमे जे ऊष्मा, पंजाब-हरियाणाक धरतीमे जे उछाह, मस्ती ओ वांचलक धरतीमे जे सौकुमार्य छैक से अन्यत्र दुर्लभ मानल जायत। मुदा मैथिली लोकगीतमे जे जीवन-दर्शन व्यक्त भेल अछि से विशिष्ट अछि। जेना, सोहर ओ मंगलगीतक करुणा ओ उछाह, देव-देवी गीतक श्रद्धा से भक्ति, चैती-चांचर-मलार सन ऋतुगीतक प्रेमभावना, गंगा-कमला-कोशी सन नदीगीतक जीवन-प्रवाह, बटगमनी, जँतसार, लगनी आदि गीतक गार्हस्थ्य प्रेम, विरहनिगीतक करुणा, विदागीतक उदासी, बाल गीतक निश्छलता, मंत्रगीतक रहस्य, नृत्यगीतक स्पंदन एवं मरखी, मटौती वा निर्गुण गीतक दार्शनिकताकेँ प्रस्तुत कयल जा सकैछ। पूर्वांचलक लोकगीतकेँ सबसँ बेसी प्रभावित कयल विद्यापति ओ कबीर। दोसर शब्दावलीमे इहो निःसकोच कहल जा सकैछ जे पूर्वांचलक 'लोक' मे व्याप्त शृंगारक प्रतिनिधित्व विद्यापति कयलनि तँ निर्गुणवादक प्रतिनिधित्व कबीर। हुनक भाषा ओ भावपरम्पराक सहस्राधिक पदसभ एखनो पूर्वांचलीय लोक-साहित्यक अमूल्य निधि मानल जाइछ जकर प्रभाव एहि भूभागक लोकजीवन पर युग-युगसँ पड़ैत आबि रहल अछि। एवंप्रकारेँ मिथिलांचलक सहज, सरल ओ प्रवाहमय मैथिली लोकगीतक माध्यमे जीवनक प्रायः समस्त चिन्ता-धाराक सरस अभिव्यक्ति भेल अछि। निम्नलिखित लोकगीतांशपर क्रमशः विद्यापति ओ कबीरक प्रभाव स्पष्ट अछि —

(१) माधव, हमरी रे निहोरवा। माधव छाड़ो वे रे अंचरवा ॥
एक त कुसुम रंग साड़ी। दोसरे जीवन भेल भारी ॥
हठ जनु करहु मुरारी। हम वृषभानु दुलारी ॥....

(मोरंगक थारू लोकगीत)

(२) सुन्दर बदन देखि मत भुलु सखिया, येहो तन गिधयो न खाय।
येहो तन छिये माटी के बरतनमा, टोलमा लगते फुटो जाय।।
(गुनगरीक कोइरी लोकगीत)

मैथिली लोकगीत-साहित्यकेँ मिथिलांचलक जीवनकोश कहल जा सकैछ जाहिमे लोकजीवनक सम्पूर्ण परिवेश मुखरित भऽ गेल अछि। डॉ० अणिमा सिंह सरलता, उदार दृष्टिकोण, मंगलपणा, धर्मोन्मुखता एवं आदर्श सम्बन्धकेँ मैथिली लोकगीतक विशिष्टता मानने छथि जे पूर्वांचलीय लोकजीवनक अंग-अंगमे व्याप्त छैक। मुदा जँ मैथिली लोकगीत-सागरक मंथन कयल जाय तँ ओहिसँ दूटा अनमोल रत्नक प्राप्ति होयत—प्रेम ओ करुणा, जे सम्पूर्ण मानवजीवनकेँ सूत्रबद्ध कयने अछि। प्रेमक सम्बन्ध एक दिस विरह-वेदनासँ अछि तँ दोसर दिस संयोगानन्दसँ। एहि तरहेँ बटगमनी, विरहनि, जँतसार, चाँचर, चैती, झूमर, मलार, बरहमासा आदि गीत सभमे लौकिक प्रेमक मार्मिक अभिव्यक्ति भेल अछि। एहिठामक चाँचर, फागु, चैता आदि गीतमे जतेक उत्तेजना ओ मांसलता छैक ओतबे बरहमासा, विरहनि आदि गीतसभमे विरहजन्य मर्मस्पर्शिता। एहि तरहेँ मैथिली लोकगीतमे विरहनि नारीक कोमल कंठसँ करुण स्वरलहरी युग-युगसँ निनादित होइत आबि रहल छैक। नेपालक थरुहटमे विरहजन्य आठ प्रकारक बरहमासा एवं छ' प्रकारक विरहनि-गीत प्राप्त भेल अछि जाहिमे वियोग दुखक विस्तृत परिवेश ओ अनुभूतिक मार्मिक अभिव्यक्ति अछि—

जब विधि कर्म दाहिन छल, हरि संग कएलौं विलास।
सेहो अब दिन मोरा बीतल, जाएब ककरा के पास।।
दामिनि दमसि डेरावल हे; बरिसत औरे घहराइ।
कामिनि मनेमन झुरमइ, लोचन बहे उमराइ।।
आनि लता सुत बारब हे, जारब येहो तन खाक।
हुनके उपर जीव हन्तब हे, मरब जहर विष खाय।।

उपरका गीतांशमे विरहक दशा ओ उत्तेजना अंकित भेल अछि। प्राणार्पण विरहक अन्तिम दशा मानल जाइछ। सम्पूर्ण मैथिली लोकगीत-साहित्यमे विरहजन्य दुखक स्वर सर्वोच्च अछि। जकर करुणा संतकविलोकनिकेँ बड़ आकृष्ट कयलकनि—'जिहि घट विरह न संचरै, सो घट सदा मसान'। मुदा लोकगीतक 'विरहनि' ओ संतलोकनिक 'विरहनि'मे बड़ अन्तर पाओल जाइछ। लोकगीतक विरहनिमे लौकिक प्रेमक अभिव्यक्ति भेल अछि तँ संतलोकनिक विरहनिमे पारलौकिक प्रेमक। बटगमनीक अंगनामे विरहक ओ वृक्ष रोपल अछि जाहिसँ रातिभरि नोरक फूल चुबैत रहैत छैक, जकर कारुणिक गंधसँ युग-युगसँ लोकजीवन भीजैत आबि रहल अछि—

ननदोक अंगना लङ्ग केर गछिया
लङ्ग चुअए आधी राति।...

एहि तरहेँ वियोगक मर्मान्तक पीड़ाकेँ झेलैत सतीत्वक रक्षा सभठाम कयल गेल अछि। मिथिलांचलक नारी बरहमासाक वेदना पीबि जाइत अछि, राही-बटोहीक प्रलोभनकेँ ठुकरा दैत अछि एवं

कामी-भोगीक प्रणयनिवेदनकें नकारि दैत अछि। सभठाम सतीत्वक पहरा, आचारक बन्धन एवं शीलक रक्षा-प्रयत्न देखल जाइछ जे मैथिली लोकगीतक विशिष्टता मानल जायत।

मैथिली लोकगीतमे प्रेमक दूनू पक्ष अंकित भेल अछि—संयोग (सुख) ओ वियोग (दुख)। किनको पति-प्रवासक दुख छनि तँ किनको सौतिनिक। किनको सासुक प्रताड़नाक दुख छनि तँ किनको ननदिक कटुताक। किनको धन बिना दुख छनि तँ किनको पूत बिना। मुदा, मिथिलांचलक लोक अपन भूख-पिआसकें सेहो स्वीकारि लेने अछि —

भुखले जे खेलियौ हे बूढ़ी माय, अछता के चाउर हे,
प्यासल पिलियै गंगा नीर हे।
नांगटे पिन्हलियै हे मैया, चनुवा के कपड़ा हे,
उठू मैया लागू ने गोहारि हे।

(मैथिली लोकगीत : डा० अणिमा सिंह)

मुदा, रसिकताक जे सरस अभिव्यक्ति बटगबनीक निम्नलिखित गीतांशमे भेल अछि से अद्वितीय अछि। प्रस्तुत गीतांशक नारी अपन पतिक रसिकतापर कनेक मुग्ध होइत अछि तँ कनेक खौंझयबो करैत अछि –

माथा मलइ गेलियै बाबाके पोखरिया हो,
पियवा छै सड़िया लेके ठाढ़ हो कन्हैयाजी।
एक मन होइ छै लड़ियवा छीनि मारितौं हो,
बचपन के आदत छोड़ैबतौं हो कन्हैयाजी।
मुँह पोछे गेलियै बाबाके हवेलिया हो,
बलमुआ छै अइनमा लेके ठाढ़ हो कन्हैयाजी।

(मै० लोकगीत,मौन)

मनुष्य जीवनकें आदर्श एवं आलोकमय बनयबाक हेतु शास्त्रमे विविध संस्कारक विधान कयल गेल अछि। मैथिली लोकगीत जीवनक प्रत्येक संस्कारकें स्पर्श करैत अपन विविधतामे कोनो इतरभाषाक संस्कारगीतसँ बेसी समृद्ध अछि। अतः ई नि संकोच कहल जा सकैछ जे मिथिलाक जीवन संस्कारसभसँ आवेष्टित अछि आ ओ सभटा संस्कार गीतमय अछि। चाहे ओ पुत्रजन्मक उछाहमय संस्कार हो, चाहे ओ मरणक विषादमय संस्कार हो, सभठाम सरस ओ भावपूर्ण लोकगीतक परम्परा सोहर, मंगल, विवाह, मरखी (मटौती) आदिमे अनुस्यूत अछि। एहि संस्कारक संपादनमे मिथिलाक कतेको वर्ण ओ जाति-उपजातिक लोकसभ सम्बद्ध अछि—

बबखो जे दान मांगै अंगना नचौनी,
पमरिया जे दान मांगै चिलका खेलौनी।
दगरिन जे दान मांगै नार के छिलौनी,
नौअनि जे दान मांगै आरत लगौनी।
धोबिया जे दान मांगै सिरक धुलौनी।…

एतबे नहि, धार्मिक आचार-अनुष्ठानोमे आन-आन जातिक अपेक्षित सहयोग देखल जाइछ। छठि ओ विषहरिक निम्नलिखित गीतांशमे तकर उल्लेख भेल अछि —

विहने के पहरमे डोमिन बेटिया हे,
बेटिया धनिया दौरिया लए आउ।
विहने के पहरमे बनिआइन बेटिया हे,
बनिआइन नवका कसैलिया लए आउ।
विहने के पहर मे मालिन बेटिया हे,
मालिन सतरंगा हार लए आउ।
विहने के पहर मे तोहे बाभन भैया हे,
बाभन पियरी जनेउआ लए आउ।

(छठिक गीत)

× × ×

पांचो बहिन विषहरि पटवा आंगन ठाढ़ि, पाटे सूत लेसब
पांचो बहिन विषहरि कुम्हरा आंगन ठाढ़ि, कलस नव पूजब
पांचो बहिन विषहरि गुअरा आंगन ठाढ़ि, गाइ दूध पूजब

संस्कारगीतक अंतर्गत सोहरमे पति-पत्नीक रति-प्रसंग, प्रसव-पीड़ा, ननदि-भाउजक नोक-झोंक आदि अर्थात् शृंगार, हास्य ओ करुणाक अभिव्यक्ति भेल अछि जाहिमे प्रसव-पीड़ाकें कम करबाक अद्भुत मनोवैज्ञानिक क्षमता अछि। मंगल-गीतमे विभिन्न वैवाहिक अनुष्ठान, प्रक्रियादिक भावात्मक ओ क्रियात्मक पक्षक नीक अभिव्यक्ति भेल अछि। सोहर ओ मंगल मध्यकालीन भाषा कविलोकनिकें बड़ प्रभावित कयलक। मंगल काव्यक परम्परामे जानकी-मंगल, नव परिजात-मंगल, पार्वती-मंगल आदिकें राखल जा सकैछ। मिथिलांचलक विवाह-संस्कारमे डेग-डेग पर 'विध' अछि ओ प्रत्येक 'विध' गीतबद्ध होइछ। एहि गीत सभमे एकदिस वरपक्षक आनंदोल्लास देखना जाइछ तँ दोसर दिस कन्या-पक्षक करुणाक मंदाकिनी 'डलवहि कांपय दुभि अछतवा, कलस कांपय जल नीर। धिया नेने कांपय अपन बाबा, कइसे करब धिया दान।' ... मुदा, सभठाम आचारक लक्ष्मण रेखा 'नोन-तेल, चाउर बेटी फेरलो जाय, सिन्दूर बदलनो ने जाय'। मोरंगक प्रस्तुत लोकगीतमे विवाहक नीक दृश्यांकन भेल अछि—

जाती बराती बैठल मड़आ घर
एकादिस बैठल गायक गीतहारनी,
अरु दिस बैठल लौआ बरहामन,
गाम केर सखी सब मंगल गावल,
चहु दिस नेसल दीप।

चारू दिस अरल चनन चनोवा,
माझे ठिन राखल सीरी घट जन।
देहो देहो ढोलिया ढोलक चोट
सुन्दर बाजा बाजे डिमिक डिमिक।'''

मनुष्य जीवनक अंतिम संस्कार मृत्युक संगे संपादित होइछ। एहि अवसरपर गाओल जायवाला समदाओन, निर्गुण, मरखी, मटौती, कीर्त्तन, मरसिया आदि गीत-प्रकारसभमे कायाक क्षणभंगुरता, संसारक मिथ्यापन (जगन्मिथ्या), मायाक झूठ व्यामोह (माया महा ठगिनी), मृत्युक अनिवार्यता, जीवक असाहायावस्था, दाहक्रिया, यमलोक आदिक प्रतीकांकन भेल अछि—

पांच तत्त के पिंजरा रे, ओमे दसो दुआर
टूटति बिलमो न लागइ रे, झूठे संसार
बिना पंख के सुगना रे उड़ि लागए अकास—''''

एहि तरहक लोकगीत सभ मिथिलांचलमे निर्गुणवादक प्रसारमे बड़ योग देलक आ मैथिली साहित्यकें साहेब रामदास, लक्ष्मीनाथ गोसाईं, रामरूपदास आदि सन संतकवि भेटल।

मिथिलांचल प्रकृतिक ओ क्रीड़ास्थली अछि जाहि ठामक ऋतु-सौन्दर्य ओ प्रेम-प्रणयक उत्तेजक भावाभिव्यक्ति बारहमासा, चैतावर, मलार, चांचर, संझा, पराती, बसन्त, पावस आदि लोकगीतसभमे भेल अछि। हिमालयक पादप्रदेशमे हरियर वन-प्रांतर, नदी, पोखरि, खेत-पथार, गामघर आदिसँ सुशोभित मिथिलाक प्राकृतिक सौन्दर्यक नीक अभिव्यक्ति निम्नांकित नेनागीतमे भेल अछि जाहिमे दार्शनिकताक स्पर्श सेहो द्रष्टव्य थिक—

अटकन-मटकन दहिया चटकन
केरा कूस महागर जागर
पुरैनिक पात हिल्ले डोल्ले
मांघ मास करैला फूले
ताहि करैला नाम की
आमुन गोटी जामुन गोटी
तेतरी सोहाग गोटी
बांस काटय ठांय ठांय
नदी गोंगियायल जाय
कमलक फूल सभ अलगल जाय
सिहो लेबें की मड़ुरी

मैथिली लोकसाहित्यमे पूर्वांचलक गाछ-बिरीछ, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदिक उल्लेख यत्र-तत्र पाओल जाइछ। चनन घन गछिया, आम-अमरइया, केदली-वन, अशोक-वन, कदम-वन, बीजूवन, बाँस,

बबूर, कास-पटेर, मोआ-खरही, कुसियार, भांगधतूर, पान-मखान नारियर-सुपारी, लौंग-मरीच, पलास-गम्हारि, जामुन, तेतरि, बेल, बड़-पीपर, आम-महु, अकोन, तुलसी, धान, काठु-मारु, हाथी-घोड़ा, गाइ-महीस, कुकुर-बिलाड़ि, काग-कबूतर, हंस-खंजन, शुक-सारिका, चकवा-चकइ, कोइली, पिहुआ, मोर, बगुला आदिक माध्यमे मिथिलाक प्राकृतिक सौन्दर्य अंकित भेल अछि।

आर्यत्वक प्रसारसँ पूर्व मिथिलामे आर्येतर संस्कृतिक प्रसार छल। मुदा आजुक मिथिलांचलमे विभिन्न संस्कृति सभक विराट समागम देखना जाइछ। द्रविड़, आग्नेय, आर्य, मंगोल आदि लोकनिक सांस्कृतिक परम्पराक अवशेष आइयो प्राप्त होइछ। मिथिलांचलमे एकदिस आर्यलोकनिक इन्द्र, सूर्य आदि वैदिक देवताक पूजा प्रचलित अछि तँ दोसर दिस आग्नेय ओ द्रविड़ लोकनिक नदी, नाग, वृक्ष ओ प्रेत पूजा प्रचलित अछि। एकर अतिरिक्त पौराणिक ओ आञ्चलिक देवी-देवता सभक पूजा-परम्परा जीवित अछि। जँ कोनो फरक छैक तँ ओकर स्वरूपक पद्धतिक एवं स्थानक। उदाहरणार्थ वैदिक, पौराणिक एवं आञ्चलिक देवी-देवताक निम्नलिखित रूपकेँ प्रस्तुत कयल जा सकैछ—

वैदिक देवता सूर्य—

पैर खरमुआ हो दिनानाथ, हाथ सटकुन।
देह जनेउआ हो दिनानाथ, तिलक लिलार॥

वैदिक देवता इन्द्र—

हाली हुली बरसू इन्नर देवता,
पानी बिनु पड़ैछ अकाले हो लाल।

पौराणिक देवता शिव—

हाथमे त्रिशूल सोभै ओढ़े मृगछलवा,
नगवा छोड़त फुफकरवा, गौरी के दुलहवा।...

आंचलिक देव बरहम—

चन्द्र बरन हमर माय हे सेवक, सूर्य बरन हमर बाप।
लील बरन हमर घोड़वा हे सेवक, अगिन बरन असवार॥..

सलहेस—

नील बरन केरी घोड़ा हे सलहेस देव,
सामू रे बरन असवार।....

देवी गांगो—

कोसी से पछिम हे गांगो, कमला से पूब,
गांगो सन तिरिया नाही कोय।

उद्धृत गीतांशमे वैदिक ओ पौराणिक देवी-देवता सभक स्वरूप तँ स्पष्ट अछि, मुदा हुनक पराक्रम-कथा लोक-जीवनक पृष्ठभूमिमे भेल अछि। उदाहरणार्थ, पौराणिक देवता शिव मिथिलांचल आबि कऽ भंगिया ओ कृष्ण रसिया भऽ गेल छथि। मुदा मिथिलांचलमे रामचरित्रक मर्यादा प्रायः अक्षुण्ण राखल गेल अछि। एहि भूभागक आंचलिक देवी-देवता ओ हुनक स्तुतिगानक परंपरा एकटा विशिष्ट उपलब्धि मानल जायत। कियेक तँ आं सभ प्रायः समाजक विस्मृत ओ ऐतिहासिक पात्र छथि, कालांतरमे 'लोक' जनिका अपन श्रद्धा ओ भक्ति समर्पित कयलक तकरा पाछाँ प्रायः वीरपूजा, अंध आस्था ओ भय-भावना निहित रहल अछि। एहि आंचलिक देवी-देवतादिमे तिरपुर, बामती, गांगो, गहिल, विषहरि, शीतला, जलेश्वरी, लुकेश्वरी (लोकेश्वरी), बघेश्वरी (वागेश्वरी), जुल्ली, सती, जालपा, कबूतरा, कमला, कोसी, रक्तमाला आदि तथा बरहम, सलहेस, लोरिक, मधुकर, श्यामसिंह, गनीनाथ, नरसिंहनाथ, मलंग, निरंजन, रनपाल धनपाल, भीमसेन, कारू भुइयां, बसावन भुइयां, डिहवार आदिक अतिरिक्त जोगी, पीर, फकीर, औलिया, धामि आदिक पूजागीत प्रचलित अछि। लोक हिनकालोकनिकेँ जाहि रूपमे स्वीकार कयलक तकर अंकन मैथिली लोकगीतमे भेल अछि।

मिथिलाक विभिन्न कुल-परिवार, जाति- उपजाति एवं क्षेत्र-विशेषक अपन देवी-देवता होइछ। हुनका पर एहि भूभागक सुख-दुःख, सर्दी-गर्मी, रौदी-दाही आदि आधारित अछि। अतः हुनक पूजा-वंदना लोक-जीवनक हेतु कल्याणकारी मानल जाइछ। मिथिलांचलमे प्रचलित एहि तरहक किछु देवी-देवतादि तँ पौराणिक छथि, मुदा अधिकांश आंचलिक छथि, जनिक स्वरूपक आधार अछि लोकपरंपरा एवं लोक-धारणा। मिथिलाचलमे पूजित एहि तरहक देवी-देवता समाजक जीवंत ओ आदर्श पात्र छलाह। तद्‌विषयक मैथिली लोकगीत सभमे हुनक स्वरूप, ध्यान, गुण-कथन, पराक्रम, चमत्कार, गहबरक शोभा, मनौती, निवेदन आदिक नीक अभिव्यक्ति भेल अछि। एहि प्रकारक देवी-देवताविषयक लोकगीतक आरंभमे प्रायः ध्यानक हेतु स्वरूप, मध्यमे पराक्रम वा करतबकथा ओ अन्तमे निवेदन पाओल जाइछ –

स्वरूप —

सन सन केस बमतिया कन कन दाँत,
मचिया बैठल बमतिया चोरे-लामी केस।

करतब—

चिल्हनी के रूप गे बामती उपरे मड़रावे,
सियाल के रूप गे बामती मासु बलु भाखे।

निवेदन —

जेसमही कोसिका मोआ खरही लगौलें,
तेसमही बमतिया हबुन सहाय।

एहि आंचलिक देवी-देवतासभक गीतसभमे पूर्वांचलक जीवन-व्यापारक क्रममे हरिण, बाघ, तितिर, मयूर, माछ आदिक शिकार, माछ-पान आदिक विक्रय, कलालीक औहिठाम मदपान, शव-साधना,

देवीक डोली, देवताक हाथी-घोड़ा, मानिनक भूमिका, पूजाविधान, आयुध, वाहन, इच्छा-आकांक्षा आदिक वर्णन भेल अछि। अतः सर्वेक्षण ओ अध्ययनक हेतु 'मिथिलांचलक देवी-देवता' एकटा स्वतंत्र विषय भऽ सकैछ, जे एहिठामक जन-जीवनकें बेसी प्रभावित कयने अछि।

मिथिलांचलक जीवन एकदिस धर्म, अध्यात्म ओ दर्शनसँ अनुप्रेरित अछि तँ दोसर दिस भूत-प्रेत, टोना-टोटका, तन्त्र-मंत्र, ओझा-गुनी, धामि-झांक्री आदिसँ अत्यधिक प्रभावित अछि। एहिठामक पिछड़ल ओ अशिक्षित जातिसभकें तंत्र-मंत्र, झाड़-फूक, नजरि-गुजरि, मोहन-मारण, वशीकरण-उच्चाटन आदि रहस्यात्मक शक्ति-सिद्धि-साधनासँ सम्पन्न ओझा-गुनी, डाइन-योगिन वा धामी-धमिनाइन आदिकें बौद्धतत्वक विकृत सामाजिक अवशेष कहल जा सकैछ जे एखनो एहिठामक लोक-जीवनकें मयपाशमे बान्हि रखने अछि। धामितंत्र मिथिलाक शाक्त कल्टेक एकटा अंश थिक जकर प्रसार नेपाल तराइक मैथिलीभाषी भूभाग धरि देखल जा सकैछ। मैथिली लोक गीतमे मिथिलांचलक माधो सिंह, कनकसिंह, बनठा चमार, नोना चमारिन, अली हुसैन, सरियो धामी, मुव्वइ धामी, भैरव धामी, महादेव धमदार, नैना-जोगिन आदि तंत्र-मंत्र-योगवेत्तालोकनिक चरितांश, पराक्रम, सिद्धिसाधना, चमत्कार आदिक वर्णन पाओल जाइछ।

मिथिलांचलक रहस्यात्मक तंत्र-मंत्र एक युगविशेषक उपलब्धि थिक जकर मूल अथर्ववेद, महायानतंत्र आदिमे निहित अछि। एकर प्रसार मोरंग, बंगाल, असम, उड़ीसा ओ नेपाल धरि छल। ओझा-धामिलोकनिमे मैथिली मंत्रक गुप्त साधनाक कारणें मंत्रगीतक साहित्यिकता दिस विद्वानलोकनिक ध्यान प्रायः नहि गेलनि। एहि भूभागसँ प्राप्त मैथिली मंत्रगीत साहित्यमे ज्ञात-अज्ञात देवी-देवता, साधक-साधिकाक परंपरा, साधना-केन्द्र, रोग-शोक, भूत-प्रेत-प्रकार आदिक विशेष सूचना सेहो प्राप्त होइछ। एहि मंत्रगीत सभपर प्रायः मोरंग ओ बंगालक भाषाक एवं सिद्धनाथलोकनिक अटपट बैन ओ बिचक प्रभाव पड़ल अछि। तंत्र-मंत्रक आदान-प्रदानक माध्यमसँ सम्पूर्ण पूर्वांचल परस्पर सम्बद्ध छल, जकर प्रमाण अछि निम्नलिखित मंत्र गीतांश—

१. बंगालिन बेटी, बंगालिन बेटी, कतऽ जाइछें ?
गून सीखइ लए। कौन देस ?—मोरंग।
गून सीखके की करबें ?—बान काटब।....

२. उनट काली उनटल देस। काली गेल कमरू देस।
कमरू देस की करऽ गेल ? मार सम्हार गून विद्या सीखे।....

(धा० लो०)

निम्नलिखित लोकगीतमे डाइन ओ ओझाक 'मारकाट'क चित्र बड़ स्पष्ट ओ प्रतिक्रियात्मक अछि—

हमहू त मारबौ गे जोगिन बनमा चढ़ाइ,
हमहू त मारबौ अगिनमा के बान।
तहू त छहिन गे जोगिन कमरू के सिखवा,
हमरो हवे जोगिन दीनानाथ के आसीस।
तोहू जे धरबे गे जोगिन परवा के रूपवा,
हम धरब जोगिन बजवा सरूप।....   (मै० लो० का अ०)

रूढ़िग्रस्त ओ अशिक्षित वर्गसभमे एखनो तंत्र-मंत्र-यंत्र ओ जादू-टोनाक प्रति अटूट श्रद्धा एवं विश्वास देखना जाइछ। मिथिलामे तंत्र-मंत्र साधनाक क्रम बड़ प्राचीन मानल जाइछ, जकरा मुक्तिक माध्यमक रूपमे स्वीकार कयल गेल छल। कालांतरमे शक्तिसिद्धांतक समावेशसँ तन्त्रवाद विकृत होमय लागल। परिणामस्वरूप तथाकथित सिद्धनाथ, तांत्रिक-मांत्रिक आदि लोकनि द्वारा विभिन्न 'मत' ओ 'आचार'क सृष्टि भेल जकर भग्नावशेष एखनो यत्र-तत्र लोकजीवनमे ओ लोकसाहित्यमे देखना जाइछ। सिद्ध ओ नाथलोकनिक साधना ओ विलास-भूमि पूर्वांचले रहल अछि। एहि भूभागक किछु लोकगीतमे योगीलोकनिक गुह्य साधनाक संकेत प्राप्त होइछ -

पनिया जे पीले जोगी हृदये जुरायेले,
पुछे लागल दिल केर बात
कि सामी तोरा कहां बसे हो?
पहीरी ओहोरी सामरी ठाढ़ आंगन बीच,
वोही औसर सामी मोरा आयले,
कि भागू जोगी जीव लाये हो……

(था० लो०)

पूर्वांचलक तंत्र-मंत्र ओ सिद्धि-साधनाकेँ कामाख्या (असम), काली (बंगाल), पशुपति, गुह्येश्वरी (नेपाल), जगन्नाथ (उत्कल), तारा (मिथिला), त्रिपुरा (मोरंग) आदि सर्वाधिक प्रभावित कयलक। अतः एहि कल्टक मैथिली लोकसाहित्यक अध्ययनक बिना सिद्ध ओ नाथसाहित्यक सर्वांगीण अध्ययन संभव नहि। एतबे नहि, पूर्वांचलक जनजीवनमे एहिसँ कतेक विकृति पसरल एकर अध्ययन कोनो समाजशास्त्रिये कऽ सकैत छथि। एहि संदर्भमे पूर्वांचलक सृष्टि मंत्र (काव्य) गराम चक्कर, आत्मकथा, राधाचक्कर, देवचक्कर, डैनीचक्कर, झिझिया, बन्होन, मुन्धुम (मूलधर्म), गोपालमंत्र, सांपक मन्त्र, त्रिपुर तन्त्र, योगिनी तन्त्र, डाकिनी तन्त्र, तारातन्त्र, चक्कर-साधन आदिक अध्ययन सेहो अपेक्षित मानल जायत। एवं प्रकारेँ मैथिली मन्त्रमे लोकमानसक ज्ञानमय तत्वक समुच्चय, साधनाक्रम आदिक इतिहास सन्निहित अछि।

हिमालयक पादप्रदेशमे रहबाक कारणे मिथिलांचल कल्लोलिनी नदी सभक क्रीड़ाभूमि बनल अछि, जकर पवित्र ओ निर्मल जलसँ एहि भूभागक खेत-खरिहान-वन समृद्ध भेलैक एवं भूभागक जन जीवनमे सांस्कृतिक उद्दीपन अयलैक। प्रायः प्रत्येक देशक सांस्कृतिक विकासमे नदीक भूमिका महत्वपूर्ण रहल अछि, चाहे ओ सिन्धु, गंगा, वोल्गा, नील, टेम्स, ब्रह्मपुत्र, कोसी, कमला, तिस्ता, बागमती, गंडकी आदि कियेक नहि हो! गंगा ओ जमुना जकाँ मिथिलांचलक कोसी, कमला, बलान, जीवछ, गण्डकी आदि नदी सभमे सेहो देवीत्व आरोपित छैक। अतः नदी-गीत सभक अध्ययन पौराणिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमिमे कयल जयबाक चाही। मोरंग (नेपाल) सँ प्राप्त जल-कुमरिक गीतमे पूर्वांचलक प्रसिद्ध बागमती, तिलयुगा, सुरसरि, सिंगिया, (शृंगवती), तिस्ता, केसलिया (कौशल्या), गण्डकी, ब्रह्मपुत्र, मेची, कोसी आदि नदीसभक बंदना कयल गेल अछि—

१. चैत वैसाख केरी धूपवा बरसि गेल,
गंडक नदी गेल अलसाय।
बहय कमला हिरिन झिरिन,
बहय कोसिका हिर्द जोरी।
२. कमला कोसिका पूरवे दुआर,
तिस्ता मइया जल जुग बहती।
गंगा मैया सबे दिन दरिसन,
सुमिरन किया सब मिलि के।....

मिथिलांचलक जन-जीवनकें सबसें बेसी प्रभावित कयलक कोसी-विभीषिका। गंगा, कमला बागमती आदिसँ एहि भूभागकेँ वरदान प्राप्त भेलैक तँ कोसीसँ अभिशापे प्राप्त भेलैक—'गहिरी सें लदिया, देखहु भेयाउन तहाँ देल झीआ लगाय।' किछु नदीक विशिष्ट सांस्कृतिक पृष्ठभूमि हिन्दी ओ मैथिली कथा साहित्यकें सेहो अनुप्राणित कयलक। उदाहरणार्थ, सर्वश्री देवेन्द्र सत्यार्थीक 'ब्रह्मपुत्र', ब्रजकिशोर वर्मा 'मणिपद्म'क 'कमलाक बेटी', शिव प्र० मिश्रक 'बहती गंगा', फणीश्वर नाथ रेणुक 'परती परिकथा' शोलोखोवक 'धीरे बहो दोन', प्रफुल्ल कुमार मौनक 'पागली खादम' आदिकें प्रस्तुत कयल जा सकैछ। नदी सभक अनुचरक रूपमे जलजीवी जातिक अपेक्षा आन-आन जातिक पात्रसभक अंकन सेहो भेल अछि, जाहिमे कोसीक प्रवाहकें रोकबाक जे अदम्य साहस रन्नू सन्दारमे छैक से बड़ ओजपूर्ण अछि—

जखन तो आहे कोसिका हमरो डुबइबे
आनब हम अस्सी मोन कोदारि।
अस्सी मन कोदरिया हे रानो बेरासी मन बेंट
आगू आगू धसना धसाय।....
(कोशी के गीत : मल्लिक)

जेना गंगाक मार्गदर्शन भगीरथ कयलनि, तहिना कोसीक मार्गदर्शन कोयला ओ भुतही बलानक माधोसिंह धामि कयलनि—

(१) आगू आगू कोयला बीर धसना गिरावे,
पाछू-पाछू कोसिका बहय सनमुख।
(२) जेम्हर जेम्हर माधो सिंह धामि
तेम्हर तेम्हर भुतही बलान।

मिथिलाक खुजल रंगभूमिमे जँ मोरक नृत्यकें कोइलीक काकली प्रदान कयल जाय तँ ओ होयत मैथिली नृत्यगीत। मिथिलाक प्रसिद्ध नृत्यगीतसभमे बिदापत, रास, झूमर, चाँचर, झिझिया, नारदी, मधुरा आदिकें राखल जा सकैछ जाहिमे झिझियाकें छोड़ि अन्यान्य नृत्यगीतसभक वर्ण्यविषय शृंगारमय, पदचाप मदपूर्ण ओ ध्वनि मोहक प्रमाणित भेल अछि। बिदापतमे ब्रजक रास-परम्पराक नृत्याविशेष एवं विद्यापतिक राधाकृष्ण विषयक शृंगारिक गीत-परम्पराक पद-चिह्न पाओल जाइछ।

रासमे नृत्य, अभिनय एवं संगीत द्वारा रसक सृष्टि कयल जाइछ। फलस्वरूप लीला-नृत्य हेतु विदापत ओ रास विशेष अनुकूल सिद्ध भेल अछि। तखन जेना गोचारण पारम्परिक प्रवृत्तिकें प्रस्तुत करैछ तहिना रास कृष्णक शृंगार-भावनाकें प्रस्तुत करैछ। चाचरी सेहो कृष्णलीला विषयक नृत्यगीत थिक। झूमर तँ शृंगारक ओ रसकलश थिक जकर रसभिजल स्वरलहरीक जादुइ प्रभाव पड़ैत अछि। ई तँ मुख्यतः स्त्रीगणक सामूहिक नृत्यगीत थिक, मुदा फागुनक रोमांटिक वातावरणमे पुरुषो द्वारा प्रस्तुत कयल जाइछ। मिथिलाक छोट-छोट बच्चा-बुच्चीसभ बाल्यावस्थेसँ आंगन पर खेल-खेलमे झूमरक व्यावहारिके शिक्षा प्राप्त कऽ लैछ, जकर माध्यमसँ दर्शनक ज्ञान सेहो कराओल जाइछ—करिया झुम्मरि खेलाइ छी···।

झूमरमे प्रेमक मधुर मनुहार, अतृप्त पिपासा एवं दीर्घ वेदनाक अभिव्यक्ति भेल अछि। एहिमे ठाम-ठाम राधाकृष्णक प्रेम-प्रसंग एवं गार्हस्थ्य प्रेम प्रस्फुटित भेल अछि। झूमर मिथिलाक प्राचीनतम नृत्यगीत थिक जे मध्ययुगीन भावात्मकलोकजनिक भावाभिव्यक्तिक माध्यम सेहो रहल। विद्यापतिक समयोमे ई प्रचलित छल— 'गावहु ए सखि झूमर लोरि'। एहिना चाचर सेहो प्राचीन नृत्यगीत थिक जकर उल्लेख प्राचीन साहित्यमे 'चर्चरीगान'क (हिन्दी साहित्य का आदिकाल : डा० द्विवेदी) रूपमे प्राप्त होइछ। चाचरो मे मूलतः शृंगारिक अभिव्यक्ति भेल अछि

ओहि पार रसिया बसिया बजावल,
अहि पार तारोनी नहावे लाला हो।
बसिया सबद सुनि हिया मोरा साले
चित नाहीं राहे मोर थीर लाला हो।— (था० लो० गी०)

झिझिया एक प्रकारक डैनी तन्त्र सँ सम्बद्ध स्त्रीगणक नृत्यगीत थिक जाहिमे झिझियाक निर्माणक प्रक्रिया, देवीक स्वरूप, आराधना एवं डैनीकें गारि गाओल जाइछ—'डनियाँ बेटा मरल-परल अन्हारी राती झिझिया।' एकटा गीतमे डैनीतंत्रसँ अबोध नेनाकें बचाकऽ रखबाक निदेश अंकित अछि—'झिझरी पर रहिहें खबरदार मइया गे,. अबोधवा बालक किछुओ ने जानिअ हे।' एहि नृत्यगीतक विशेष प्रचलन मिथिला-मोरंग ओ सप्तरी-महत्तरीमे अछि।

मैथिली प्रेमगीतक अन्तर्गत बटगमनी, विरहनि, पिहानी. उतरा चौरी. तिरहुति आदिमे प्रेमक दुनू पक्षक मार्मिक अभिव्यक्ति भेल अछि। ऋतुगीत ओ नृत्यगीत सेहो शृंगारक ... क होइछ, मुदा मोरंग सँ प्राप्त विरहनि गीतक विविधतामे विरहजन्य करुणाक विस्तार देखना जाइछ—सामान्य विरहनि, युगल विरहनि, राधा विरहनि, हेमती विरहनि, हरवाह विरहनि, महौत विरहनि आदि। लोकजीवनक एकपेरियापर चलैत नारी-कंठसँ जखन बटगवनीक रस निःसृत होइछ तखन मन-प्राण भीजि जाइछ। जनिक देहमे यौवनक प्रवेश भऽ गेल हो ओ मनमे प्रेमक पीड़ा जागि गेल हो, से बटगवनी अवश्य गौतीह। फलस्वरूप बटगवनीमे प्रेमक उत्तेजना व्यक्त भेल अछि—

की कहु पहु परदेस गेल सजनी गे, की कहु किछु न सोहाय।
फूजल केस नीर बहु सजनी गे, काजर गेल दहाय॥
कंगन वसन भार भेल सजनी गे, जीवन भेल अति भार।
आंगन मोरा लेखे बिजुवन सजनी गे, घर भेल दिवस अन्हार॥

मिथिलांचलक प्रणय-निवेदन, अभिसार, कुमारि कन्याक व्यथा, विरहक मार्मिकता, मिलनक आनन्द आदि प्रश्नोत्तर शैलीमे पिहानी ओ उत्तराचौरीमे जगमगा रहल अछि।

पूर्वांचलमे प्रेमकेँ 'योग'क प्रतिरूप मानल गेल अछि। दूटा मन-प्राणक योग, दूटा कायाक योग, समस्त लौकिक ओ पारलौकिक प्रेमक परिधिमे अबैछ। योगसाधनाक क्षेत्रमे पुरुष ओ स्त्री दुनूक प्रवृत्ति देखल जाइछ, मुदा नारीलोकनि प्राय: लौकिक प्रेमक प्राप्ति हेतु 'योग'-साधनाकेँ स्वीकारलनि जकर अभिव्यक्ति 'योग'-गीतमे भेल अछि—

हमराकें पहु तेजता गुन बुझता हो
बान्हि देबनि बनिसार अधीन भए रहता हो
नाथक डोरि जकाँ घुमता घुमि फिरि अओता हो
तेहन जोग लगैबनि सेज नहि छोड़ता हो
काग कोइली जकाँ उड़ता उड़ि अओता हो
देहरि देबनि मात छोटि कि बिछि-बिछि खयता हो

एहि योग कलाक अधिष्ठात्री देवी नैना-जोगिन (देखू पं० राजेश्वर झा कृत 'नैना-योगिन') बड़ प्रसिद्ध छैक। मिथिलांचलमे एकर भित्तिचित्र ओ गुणगान विवाहक अवसरपर अपेक्षित मानल जाइछ। एहि योग-गीतक लिखित परम्परा विद्यापति (१४ म शती)सँ प्राप्त होइछ। एहि तरहेँ योग लोकप्रचलित एवं लोकप्रसिद्ध अछि जे कविलोकनिकेँ सेहो प्रभावित कयलक।

मिथिलांचलक नेनागीत (देखू—लेखकक 'मैथिली नेनागीत') सब आकार-प्रकारमे छोट छीन होइतो लोकगीतक कोनो विधासँ कम महत्त्वपूर्ण नहि, किएक तँ एकर मनोवैज्ञानिके मात्र नहि, पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आदि महत्त्व सेहो छैक। पालन-गीतक आंगनमे जखन नेना पालनमे झूलऽ लगैछ, ओकरा संग ओकर परिवेश सेहो झुलैत लगैछ—

झूल रे झूल, बढ़ुआ झूल
आम झूल, पाकड़ि झूल
आमक ठैलो कोयली झूल
बाँसक फुनगी सुगना झूल
मानस करैत मनसिया झूल
कोठीक पाछू चिलरवा झूल (मैं०नेना गीत : मौन)

झूलब एवं झुलयबाक संतुलित ओ वेगवती क्रियाक संगे नेनाक परिवेशक तन्मयता जे व्यक्त भेल अछि, ओ अन्यत्र दुर्लभ अछि। नेनागीतक सभसँ पैघ विशेषता ई अछि जे कम-सँ-कम शब्दावलीमे अधिकाधिक भावक ध्वन्यात्मक अभिव्यक्ति भेल अछि। आश्चर्य अछि जे शब्द-ज्ञानसँ अपरिचित नेना पर लयात्मक शब्दावलीक जादूवत् असर होइछ। अर्थक दृष्टिसँ बेसी अटपट होइतो नेनागीतक स्वर-माधुर्य ओ नाद-सौंदर्य कनेको कम नहि।

मिथिलांचलक निर्गुण विषयक लोकगीत सभमे पंचतत्वसँ कायाक निर्माण, आत्मा-परमात्माक मिलन, कायाक क्षणभंगुरता, निराकार ब्रह्मक स्तुति, गुरु महिमा, मोक्ष कामना आदि वर्णित अछि।

एहि तरहक गीतसभमे अन्तर्निहित दार्शनिकता, प्रतीकत्व, रहस्यमयता आदिक विवेचन ओ विश्लेषण संतकाव्यक पृष्ठभूमिमे होयबाक चाही। प्रस्तुत गीतांशक प्रतीकत्व उल्लेखनीय अछि—

कुसुम तोड़िते तोड़िते कि गगन बरिस गेल
कि भिजि गेल पंच रंग चीर रे की।
भिजिते नहाइते जे कमल फुला गेल
जोगियाक सुरति हिया सालइ रे की।

एहि तरहक दार्शनिकता मरसी वा मटौती गीतमे सेहो अभिव्यक्त भेल अछि।

मैथिली लोकगीतक एकटा आर मार्मिक विधा अछि—बिदागीत, जकरा समदाउन (संवादवाणी ?) सेहो कहल जाइछ। एहिमे प्रेमपूर्ण ओ आत्मीय संबंधक विदाकालीन संवेदनशीलताक मार्मिक अभिव्यक्ति भेल अछि—चाहें बेटीक विदा हो, देवी दुर्गाक विदा हो (द०—'दुर्गा भेली समदन जोग'—दरभंगा समाचार, दरभंगा), चाहे एहि नश्वर देहक अंतिम विदा हो। समदाउनमे समक करुणा पुंजीभूत भऽ गेल अछि। मोरंगक एकटा चलन्ती गीतक अंश देखू—

कोइली बिनु सून भेले बाबा के बगीचवा।
धीया बिनु सून भेले आमा के मंदीलवा।
सातो घर हेरलो बेटी सातो त पुतोहुआ।
मंदोल घर हेरलो बेटी धीया बिनु सूनमा।…

अन्यान्य गीत सभमे जंतसार (लगनी), हरगवती, कहार, कोल्हु, धोबी, छतपिटौनी, नांची, मखवालाल, उत्तिमा, झरनी, मधुश्रावणी, कजरी, गुज्जरि, गादना, विहाग आदि अनंत गीतविधासभ छिड़िआयल अछि।

मैथिली लोकगीत मुख्यतः मध्यवर्गीय समाजक अभिव्यक्ति थिक, जाहिमे उच्चवर्गीय ओ निम्नवर्गीय सुख-दुख, सम्पन्नता-विपन्नता, हास्य-व्यंग्य एवं शृंगार-करुणाक विराट सामंजस्य देखना जाइछ। एहिमे तथाकथित सामंतवाद ओ पूंजीवादसँ शोषित-पीड़ित रहितो शोषणक विरुद्ध कनिको आक्रोश नहि देखना जाइछ—यद्यपि शोषित ओ पीड़ितलोकनिक हृदयगत विकलता ओ विवशता मार्मिकरूपें अंकित भेल अछि। निम्नलिखित गीतांशमे बेगार प्रथा द्वारा शोषित मानव हृदयक कारुणिक नैराश्य अभिव्यंजित भेल अछि—

अबरी बेगार सामरो तोहरोक पाला
साठी लेल दालि चाउर डिगा भोरी तेल
चलो भेल आहो सामरो सिंघली बेगार
चढ़ल परवत हेरल मधेस
आब न हेते तारोनी से भेंट…

[धा० लो० गी०]

मैथिली गद्य आ कथा कें संग-संग देखैत

श्री कुलानन्द मिश्र

भारतक पूर्वोत्तर क्षेत्रक प्राय: समस्त भाषा-साहित्यमे अपन काव्य-विधाक आरंभक गप्प करैत काल नाथ सम्प्रदायक सिद्धवाणीक चर्च करब लोकके आवश्यक बुझा पड़ैत छैक। खानदानी बनबाक एहि प्रकृति आ प्रवृत्तिमे किछु अर्थ निश्चित रूपसँ ताकल जा सकैछ। ओना, हम ई कहय चाहैत छी जे मैथिली काव्य-परम्परा व्यवस्थित रूपसँ चौदहम-पन्द्रहम शताब्दीमे महाकवि विद्यापति ठाकुरसँ आरंभ होइछ। संगहि विद्यापतिक काव्यक प्रौढ़ि देखैत हम ईहो कहय चाहैत छी जे विद्यापतिक देसिल वयनामे विद्यापतिसँ पूर्वहु काव्य-रचना होइत रहल अछि, मने ध्यान देबा जोगर मात्रामे अखन ओ उपलब्ध नहि अछि। विद्यापतिक बाद ई काव्य-धारा कहियो सुखायल नहि, पीन-क्षीण भऽ रहैत रहल आ आधुनिक युगमे आबि संतोषजनक रूपसँ पुष्ट भेल।

मैथिली गद्यक कथा किछु फराक लगैछ। १३-१४म शताब्दीमे ज्योतिरीश्वर ठाकुर मैथिलीमे गद्यमे साहित्य-लेखन कयलनि। हुनक गद्य-काव्य-ग्रन्थ 'वर्णरत्नाकर'क बाद ४-५ शताब्दी धरि मात्र किछु नाटकमे गद्यक प्रयोग भेटैछ। आन साहित्यिक विधा गद्यमे जेना नहि लिखल गेल हो, एना प्रतीत होइछ। संभव थिक, भविष्यमे अनुसंधान-क्रममे एहन सामग्री भेटय वा एहन तथ्य उद्घाटित हो जाहिसँ ओहि अवधियोमे गद्यक व्यवस्थित साहित्यिक लेखनक क्रम बैसाओल जा सकय। अखन तऽ तथ्य ई जे नाटक छोड़ि चंदा झा (१९ शताब्दी) धरि मैथिलीमे गद्यमे साहित्यिक लेखन नहि भेल।

मैथिलीमे आधुनिक साहित्यिक गद्यक आरंभ अनूदित कथा-पुस्तक सँ होइछ। विद्यापतिक 'पुरुष-परीक्षा'क चन्दा झा अनुवाद प्रस्तुत कयलनि। एकरा सङ्ग संस्कृतसँ आनो अनुवाद कथाक नाम पर आयल। किछु नीतिपरक कथा अनुकरणमे मौलिको रूपसँ लिखल गेल। १९२० धरि मैथिली कथाक नाम पर जे लिखल गेल से अनुवाद आ अनुकरणक कथा-साहित्य कहल जा सकैछ। ता धरि मैथिली कथाक वैयक्तिकता आ मौलिकताक प्रतिपादन नहि होइछ। काली कुमार दास आ कुमार गंगानंद सिंहसँ प्राय: मैथिली कथामे वास्तविक अर्थमे मौलिक कथा-लेखनक आरंभ होइछ।

मैथिलीमे जखन ज्योतिरीश्वर ठाकुर आ विद्यापति ठाकुर गद्य आ पद्यमे रचना कयलनि, दिल्लीमे बाहरसँ आयल बादशाह रहैक जे अपन प्रभुताक सुवास मिथिला धरि पहुँचयबाक यत्नमे छल। क्रमश: ओकरा सभक प्रभुताक विस्तार मिथिला धरि भेबो कयलैक, परन्च एतुका संस्कृत-जनमानस

(जन-मानसक नाम पर हम सभ अखन धरि संस्कृते जनमानससँ परिचित होइत अयलहुँ अछि) मिथिलाक पारम्परिके सामंती संस्कृतिसँ पूर्णतः सराबोर रहल। राजा-रानी वा नायक-नायिकाक शृङ्गार-प्रसाधन, नख-शिख वर्णन आ प्रेम व्यापारेटा साहित्यमे एहिकालमे रसज्ञता आ रसिकताक नाम पर सर्वाङ्गतः चित्रित भेटैछ। एहिसँ बाहर जे दुनिया रहैक ताहिमे शृङ्गारी मुद्रामे राधा-कृष्ण भक्तिक पाठ पढ़वैत छथि कि शिव-पार्वती ताण्डवक ओरिआओनमे लागल भेटैत छथि। कतौ-कतौ सीतो-राम प्रातः समीर हेतु टहलैत भेटताह।

प्रायः समस्त भारतीय भाषाक संदर्भमे भारतीय इतिहासक मध्यकाल धार्मिक पुनर्जागरणक काल रहल अछि। भिन्न-भिन्न देवी-देवता आ देवोपम चरित्रकेँ आधार वना समाजक आन्तरिक चेतनाक उन्मेषक यत्न कयल गेल। जनमानसक आलोड़न-विलोड़नमे ओहि समयमे प्रचुर मात्रामे भक्तिपरक काव्यक निर्माण भेल। साहित्यिक लेखनमे गद्यक प्रयोग अखनो धरि सामान्यतः नहि भेटैछ। विद्यापति सँ लऽ कऽ मनबोध धरि, कबीर सँ लऽ कऽ भूषण वा मतिराम वा जगन्नाथ दास रत्नाकर धरि भाषामे नाटकेतर साहित्य-लेखन काल गद्य लिखबाक व्यवस्थित परिपाटी नहि भेटैछ। एतय ई स्मरण करबाक वस्तु थिक जे मिथिलाक सङ्ग-सङ्ग एहि देशक आनो भू-भागमे संस्कृत-समाज अपन सामाजिक-न्यायिक धार्मिक व्यवस्थामे संस्कृत गद्यक प्रयोग करैत रहथि जे ओहि युगमे प्रतिष्ठापरक बात रहैक। 'भाखा'क प्रयोग कवितोमे करब श्लाघ्य नहि छल, गद्यमे तऽ ओ निट्ठाहे त्याज्य रहल। मुदा संस्कृतक शासकीय अवमूल्यन आब आरंभ भऽ गेल छल आ 'भाखा'मे पद्यक बाद गद्यक निर्माण क्रमशः संस्कृतो समाजमे आवश्यक भेल जा रहल छल।

भारतमे मुसलमानी शासनक आरंभसँ अन्त धरि एकर अर्थचक्रक गतिमे मूलभूत परिवर्तन नहि होइछ। पारम्परिक ढंगसँ अर्थक अर्जन आ तकर सामाजिक विनिमय चलैत रहल। १८५७मे भारतमे मुसलमानी शासनक परिच्छेद समाप्त भऽ जाइछ। औद्योगिक जागरणक देवदूत बनल अंग्रेजी शासक एहि देशक अर्थचक्रक गतिक दिशामे मौलिक परिवर्तन अनैछ। औद्योगिक ज्ञानक विकासक सङ्ग-सङ्ग अंग्रेजीक कृपासँ एतय बहुतो तरहक वैज्ञानिक ज्ञानक विकास सेहो क्रमशः आरंभ भेल।

भारतमे अंग्रेजी शासनक व्यवस्थित आरम्भसँ पूर्वहु पाश्चात्य प्रभाव पड़ब शुरू भऽ गेल छल। सब मिलाकऽ एकटा नवीन बौद्धिक आ धार्मिक वातावरण बनब आरंभ भऽ गेल छल। एहि बीच मुद्रणयंत्रक सुविधा सेहो एतय उपलब्ध भेल। एहि तरहेँ एहि नव वातावरणमे अभिव्यक्तिक औनाहटिक सङ्ग गद्यक विकासक लेल अनुकूल आ अभीष्ट वातावरण प्रस्तुत भेल। अंग्रेजी-शासन कालमे संस्कृतक शासकीय अवमूल्यन पूर्ण भऽ जाइछ आ तेँ ओकर शास्त्रीय-लेखन आ साहित्यिक-लेखनक क्षेत्रोमे अवहेलना आवश्यक रूपसँ आरंभ भऽ जाइछ। विदेशी अंग्रेजी भाषाक बढ़ैत प्रतापक छायामे एहने कालमे संस्कृतेतर भारतीय 'भाखा' सभमे आत्माभिव्यक्ति, राग-उपरागक प्रस्तुतीकरण आ वैचारिक स्थापना सभमे स्वतन्त्र रूपसँ गद्य-लेखनक आरंभ होइछ। विशिष्टसँ बाहर क्रमशः ओहनो सामान्य सामाजिक वर्गक सम्बोधन आवश्यक होमय लगैछ, जकरा पर अखन धरि ध्यान नहि देल गेल छलैक। स्पष्ट अछि जे एहनामे पूर्वक शासकीय भाषा संस्कृत (आ फारसी) आविर्भावी शासकीय भाषा अंग्रेजीक इतर सामान्य लोकक 'भाखा'केँ अङ्गीकार करब अनिवार्यता भऽ गेलैक। सामाजिक उद्बोधनक मात्रामे

वृद्धिक संग भिन्न-भिन्न भाषामे गद्यक विकास तेज भऽ जाइछ। मैथिलीमे आधुनिक गद्यक प्रसारक संग कथाक विकासक प्रक्रिया सेहो तीव्र होइछ। कालीकुमार दाससँ कुलानंद नंदन धरि सामाजिक उबड़-खाबड़कें सरिअयबाक काज गंभीरतासँ चलैत रहैत अछि। संस्कृत वजनिहार मुख-कमलसँ भाषाक पुरैन छिट्टाक छिट्टा बहराय लगैछ।

मैथिली कथाक आरम्भ संस्कृतसँ अनुवादसँ भेल। तखन किछु अनुकरणमूलक, नीतिपरक आ उपदेशात्मक कथा लिखल गेल। सामाजिक कुरीति आ दोषपूर्ण लौकिकता पर प्रहारक तखन एकटा पैघ अध्याय आरम्भ होइछ। डा० काञ्चीनाथ झा 'किरण' एहने समयमे 'वीर-बालक', 'वीर प्रसून' सन कथा लिखैत छथि। 'धर्मरत्नाकर' वा 'मधुरमनि' सन कथा ओ फेर बादमे लिखैत छथि, 'मधुरमनि' दाम्पत्यक कोमल आ संश्लिष्ट संवेदना पर एकटा समर्थ आलेख अछि जे अपन प्राणवत्तासँ मैथिलीक स्मरणीय कथा बनि गेल अछि। मुदा एहन कथा बादमे अयलै आ से उचिते छैक। आरंभमे सामाजिक सफाइ प्रमुख बात रहैक। सामाजिक सफाइक ई क्रम प्रो० हरिमोहन झाक झंझावाती कथा-लेखन धरि चलैत रहैछ। एहि बीच मैथिली नाना तरहक अभिव्यक्ति-क्षमता अर्जित करैछ। मैथिलीक एहि सामर्थ्य-वर्द्धनमे सर्वाधिक योग प्रो० झा करैत छथि। प्रो० झा विकट पाहुन, तिरहुतान, साझी आश्रम सन कथामे कतोक मध्यवर्गीय सामाजिक प्रवृत्तिकें आत्मीय परिवेशमे राखि ओकर यथार्थ रूप प्रस्तुत करैत छथि, जे कुरूप अछि, निंद्य अछि, त्याज्य अछि, स्वीकार्य अछि आ प्रिय अछि। प्रो० झाक कथा-दुनिया एकटा जानल-सुनल दुनिया छनि जकर सभ चहल-पहल हुनका जानल-बूझल-भोगल छनि। प्रो० झाक लेखन-दृष्टि मैथिलीक संदर्भमे किछु दूर धरि क्रांतिकारी बनल रहैछ, मुदा तकरा बाद हुनक प्रगतिशील दृष्टि लौकिक 'अनुशासन' (?)क नाम पर क्रमशः झलफल लगैछ। ओ क्रमशः अपने अन्तर्विरोधमे ओझराय लगैत छथि। जे बेटी-पुतहु सिनेमाहॉलमे नाव परसँ नुआ हटा सिनेमा देखय से सिनेमाहालसँ बहरा कऽ क्रमशः पाँश होटल वा बार वा क्लबमे जाय वा नहि, प्रो० झाकें एहन स्थितिमे निर्णायक रुखि अपनयबामे असौकर्य होमय लगैत छनि आ ओ करुण ओझराहटिमे पड़ि जाइत छथि। प्रो० झा अपन बिड़रो बहओलनि, हास्य-व्यंग्यक चासनी सङ्ग लोककें यथार्थक तीत-मीठ खोआओल। ओ यथार्थ क्रमशः एकपक्षीय होइत गेल आ तकरा बाद प्रो० झा 'ग्रेजुएट पुतहु' सन कथाक दल-दलमे पड़य लगलाह। हुनक समस्त कथा-लेखनमे 'पाँच पत्र' एकटा अनमोल कथा थिक ओ समस्त मैथिली कथाक संदर्भमे एकटा महत्वपूर्ण कथा थिक मुदा, संगहि ईहो सत्य जे 'पाँच पत्र'मे हुनक कथाकारक प्रकृत स्वर नहि छनि।

प्रो० झाक मुख्य लेखन धरि अबैत-अबैत मैथिली भाषाक स्वरूप स्थिर भऽ जाइछ आ एकर साहित्यिक रूप स्पष्ट होमय लगैछ। एक तरह सँ भारतक राजनीतिक स्वतंत्रता आ तकरा किछु बाद जमींदारी-प्रथाक उन्मूलनक सङ्ग-सङ्ग साहित्य मे उपदेशात्मक, नीतिपरक आ सामाजिक कुरीति सभ पर आधारित करुण आ व्यंग्य कथाक युग समाप्त होइछ, तकर प्रासंगिकता नष्ट भऽ जाइछ। विश्व स्तर पर अमरल फ्रायडीय मनोवैज्ञानिक दृष्टि आ मार्क्सवादी दृष्टिक सान्निध्यमे कथाक अंतरंग आ बहिरंग मे क्रांतिकारी परिवर्तन आबय लगलैक। स्वतंत्रता प्राप्तिक बाद जमींदारी-प्रथाक उन्मूलन आ सीमित अर्थमे लोकमे नव-चेतनाक विकास सँ लोकक मोनक गूड़क टभकब पर चिचिआयब छूटि गेलैक, मुदा तकर आंतरिक प्रभाव बहुत सांघातिक होमय लगलैक। तेँ रचना सभमे फराक सँ व्यंग्य द्योतित नहि

भऽ कऽ तकर समस्त संरचनामे आत्मसात् भऽ गेलैक। व्यंग्यक अलग सँ उपादेयता बनल नहि रहि सकलै, मनुक्खक प्रकृत स्वरे व्यंग्यपरक भऽ गेलैक।

एतय आरंभक मैथिली कथाक मूल संवेदनासभक मूल संरचनापर किछु विचार करबाक चाही। धर्म-चेतना सँ आक्रांत आ तेँ संस्कृत-अनुरागी शुद्ध सामंती परिवेशमे संस्कृत जनमानस नहु नहु पाश्चात्य मानसिकताक उदार परिवेशमे साँस लेमय लगैछ। लगले औद्योगिक विकासक साल पर थिरकैत तत्कालीन अंग्रेजी संप्रभुताक छायामे गोतल एतुका लोक मे धार्मिक उदारताक संङ्ग-सङ्ग समानताक, लोक-बन्धुत्वक, स्वतंत्रता आ जनतांत्रिक मूल्य-बोधक उदय होमय लगैछ। एतय ई उल्लेख करब चाहब जे भारतीय समाजमे एहि समयमे पूँजीवादी संस्कृति सँ परिचय होमय लगलैक आ सामंती मूल्यक समानांतर चलबाक चेष्टामे लागल पूँजीवादी संस्कृति सँ संघर्ष सेहो आरंभ भऽ गेलैक। देशक अर्थतंत्रक अदृष्टपूर्व संहारी गति लोक-जीवनकेँ नव दिशा प्रदान करय लागल। समाजमे नव-नव संस्थानक स्थापना आरंभ भेलैक, नव-सामाजिक वर्ग तैयार भेल आ शासन-सुविधा लेल नव शक्ति-संगठन ठाढ़ भेल। सामाजिक धरातल पर एहनामे उनट-पुनट स्वाभाविक छलैक। देशक अर्थ-व्यवस्थाक केन्द्रीयकरण भेल तऽ विदेशी शोषण सँ तकर तरलीकरण सेहो भेलैक। नव-नव आर्थिक सम्बन्ध बनबाक एहि युग मे नीतिपरक आ समाजोद्धारक कथा क्रमशः वात्सल्य, करुणा, व्यंग्य आ हास्यक मुद्रा सँ अनौपचारिक मुद्रा मे अबैत गेल। ओकर स्वर क्रमशः अधिक सटीक आ यथार्थ दीप्त होइत गेलैक। मैथिली गद्यक अभिव्यक्ति-क्षमता मे सेहो एहि बीच पर्याप्त वृद्धि भेलैक। काली कुमार दास आ कुमार गंगानन्द सिंहसँ प्रो० हरिमोहन झा धरिक कथा-यात्रामे एहि तथ्यकेँ रेखाङ्कित कयल जा सकैछ। एक अर्थ मे प्रो० झाक व्यवस्थित कथा-लेखनसँ पूर्व मैथिली कथा वास्तवमे अपन स्वरूपो स्थिर नहि कय सकल छल। तकर स्वरूप आ प्रकृति अपन पूर्णता मे प्रो० झाक कथा-साहित्य मे चिन्हार भऽ कऽ स्पष्ट होइछ।

इतिहासक दृष्टि सँ एतेक दूर धरिक यात्रा वास्तव मे मैथिली कथाक स्वरूप-अन्वेषण आ आत्म-अन्वेषणक यात्रा थिक। १९४७ मे एहि देश केँ राजनीतिक स्वाधीनता भेटलैक। जमींदारी उन्मूलन किछु वर्ष बाद भेलैक। एही आस-पास मे लोक एक दिस वास्तविक स्वतंत्र मानवक स्वरूप स अवगत होइछ आ दोसर दिस अपन उपलब्ध स्वतंत्रताक सही मूल्य सँ परिचित सेहो। आर्थिक स्तर पर मूलभूत परिवर्तन एहि लेल संभव नहि भेलैक जे मूलतः सम्प्रभुताक स्वरूप मे कोनो तात्विक अन्तर नहि अयलैक। एही स्थिति मे कथा-संवेदनाक बुनाओट क्रमशः संश्लिष्ट होमय लगैछ। प्रो० झाक कथाकारक निर्माण धरि कथा-संवेदना अधिक सोझ रहैक, कम चुनेटल रहैक। प्रो० झा वास्तविक आधुनिक मैथिली-कथाक पूर्व-पुरुष (प्रिकर्सर) छथि।

एतय कने बिलमि जाइ। मैथिली कथा मे किछु 'अनभुआर' स्वर सभ केँ अकानी। प्रो० झाक कथा मे जखन मैथिली-कथाक स्वरूपक निर्माण भऽ रहल छल, 'व्यास'जीक 'रूसल जमाय' सन कथा सँ जखन तकर चरित्र स्थिर भऽ रहल छल, मनमोहन झा शरदीय भावुकता मे पड़ल रहलाह आ प्रो० उमानाथ झा (स्मरण हो जे प्रो० झा अंग्रेजीक अध्यापक छथि) अंग्रेजी शिल्प मे अंग्रेजियाबोध मैथिली 'भाखा'केँ उपकृत करबाक मुद्रामे दऽ रहल छलाह। मनमोहन झाक कथा मे पसरल करुणा आ

पीड़ा काव्य-गुण सँ लैस अछि। प्रो० उमानाथ झा हमरा मैथिली कथाक संदर्भ मे आइ धरि एकटा प्रसंगवश लेल गेल नाम लगैत रहलाह अछि। एही कालखण्डमे मैथिली-कथाक मूलस्वरमे गोविन्द झा आ राधाकृष्ण 'बहेड' सन कथाकारक कथा अबैछ। गोविन्द झाक 'सामाक पौती' आ 'अन्तिम एकन्नी' एवं राधाकृष्ण 'बहेड़'क 'ढकर-ढगार' वास्तव मे वजनी कथा थिक। डा० ब्रजकिशोर वर्मा 'मणिपद्म'क (बुझले छल, दछिना) योगदान सेहो एहि संदर्भमे प्रशंसनीय मानल जायत।

छठम दशकक समाप्ति धरि मैथिली-भाषी क्षेत्रमे जमींदारी समाज-व्यवस्थाक मूल अवयव सभ छिन्न-भिन्न होमय लगलैक। ओना जमींदारी जीवन-संस्कार सँ एहि क्षेत्रकेँ बहुत बादो धरि इच्छित मुक्ति नहि भेटि सकलैक। विदेशी शासनक स्थानपर बहुत भिन्न शासन व्यवस्था नहि आयल। औद्योगिक संस्कृतिक विकासक सङ्ग-सङ्ग शासन आ संस्कृतिक मूल्यगत ह्रास सँ आत्मविश्वासक हानि सभ क्षेत्र मे नजरि आवय लगैछ। सही बात कहब आ सही काज करब क्रमशः अधिक कठिन होमय लागल। स्पष्ट अछि जे प्रो० झाक कथा-संवेदना सँ बाहर कथा-संवेदनाक विस्तार होयब आवश्यक भऽ गेलैक। पाश्चात्य ज्ञानक आ सहवर्ती अन्य भारतीय भाषाक साहित्यक सान्निध्यमे मैथिलीमे सेहो साहित्य-लेखनमे आर्थिक पक्षक गम्भीर चित्रणक सङ्ग-सङ्ग मनोवैज्ञानिक विश्लेषणक पद्धति जोर पकड़य लगलैक। एहना स्थिति मे कथा-भूमिक विस्तारक सङ्ग कथा-शिल्प आ कथा चेतनाक विस्तार सेहो आरंभ भऽ गेलैक। कथाक क्षेत्रीय प्रकृतिक बृहत्तर परिप्रेक्ष्यमे साधारणीकरण भिन्ने भेलैक।

वास्तविक अर्थ मे आधुनिक मैथिली-कथाक आरंभ आब होइछ। आब एकर गमला प्रशस्त उद्यानमे लगाओल जाइछ, एकर स्वर अधिक व्यापक क्षेत्रक मनोदशा केँ अभिव्यक्त करय लगैछ। ई आधुनिक कथा बहुलांशमे मध्यवर्गक वा निम्न मध्यवर्गक लिखऽ-पढ़ऽवाला लोकक आर्थिक पराभव, मोहभङ्ग, आलस्य, कटुता, निरीहता आ टूटैत रहबाक निरन्तरताक पीड़ाक कथा कहैछ। एहि नव रूपक आधुनिक मैथिली कथाक पहिल समर्थ कलाकार ललित छथि, जे मशीनी संस्कृतिक प्रभावकेँ चिन्हलनि आ लोकक निरीह आकृतियोकेँ देखलनि। 'रमजानी' आ 'ओवरलोड'सन कथाक लेखक ललितक कथामे मध्यवर्गीय मानवीय दृष्टि फरीछ रूप सँ देखल जा सकैछ।

मायानंद मिश्र (गाड़ीक पहिया, मिझाइल दीप) आन्तरिक ओझराक कथा कहय चाहैत छथि। कखनो मांसलो क्षणकेँ जीवंत छथि, मुदा सभ स्थितिमे एकटा एहन परिवेश सङ्ग रहैछ जाहिमे प्राणक ऊष्मा पड़ा गेल सन लगैछ।

मशीनी युगमे सुन्न पड़ैत रागवृत्तिक पीड़ा, आर्थिक कुचक्रमे पड़ल सभ नैतिक मूल्य आ अन्य अनेक निम्न-मध्यवर्गीय सामाजिक पीड़ाकेँ भोगैत मनुक्खक आंतरिक छटपटाहटि लऽकऽ राजकमल चौधरीक कथा (माछ, माहुर, घड़ी, सांझक गाछ, निरमोही बालम हम्मर....) प्रकाशमे आयल। वर्तमान अर्थ-चक्रक कुटिल गति राजकमलक दृष्टिमे अधिक स्पष्ट रहनि। अर्थ-चक्रक गतिसँ पंगु पड़ल मध्यवर्ग अपन समस्त सुरुचि आ कुरूपताक सङ्ग राजकमलक कथामे रूपायित भेल अछि। अपन मैथिली कवितामे ओ मैथिल राजकमलक अतिरिक्त आनो बहुत किछु छथि, मुदा अपन मैथिली-कथामे संवेदनात्मक व्यापकताक बादो राजकमल चौधरी भयानक आ भीषण रूपसँ मैथिल नजरि अबैत छथि। ई

पीड़ा काव्य-गुण सँ लैस अछि। प्रो० उमानाथ झा हमरा मैथिली कथाक संदर्भ मे आइ धरि एकटा प्रसंगवश लेल गेल नाम लगैत रहलाह अछि। एही कालखण्डमे मैथिली-कथाक मूलस्वरमे गोविन्द झा आ राधाकृष्ण 'बहेड़' सन कथाकारक कथा अबैछ। गोविन्द झाक 'सामाक पौती' आ 'अन्तिम एकन्नी' एवं राधाकृष्ण 'बहेड़'क 'ढकार-ढकार' सारगत मे सजाओ कथा थिक। डा० ब्रजकिशोर वर्मा 'मणिपद्म'क (बुढ़ले खल, दछिना) योगदान सेहो एहि संदर्भमे प्रशंसनीय मानल जायत।

छठम दशकक समाप्ति धरि मैथिली-भाषी क्षेत्रमे जमींदारी समाज-व्यवस्थाक मूल अवयव सब छिन्न-भिन्न होमय लगलैक। ओना जमींदारी जीवन-संस्कार सँ एहि क्षेत्रकेँ बहुत बादो धरि उचित मुक्ति नहि भेटि सकलैक। विदेशी शासनक स्थानपर बहुत भिन्न शासन व्यवस्था नहि आयल। औद्योगिक संस्कृतिक विकासक सङ्ग-सङ्ग शासन आ संस्कृतिक मूल्यगत ह्रास सँ आत्मविश्वासक हानि सभ क्षेत्र मे नजरि आवय लगैछ। सही बात कहब आ सही काज करब क्रमश: अधिक कठिन होमय लागल। स्पष्ट अछि जे प्रो० झाक कथा-संवेदना सँ बाहर कथा-संवेदनाक विस्तार होयब आवश्यक भऽ गेलैक। पाश्चात्य ज्ञानक आ सहवर्ती अन्य भारतीय भाषाक साहित्यक सान्निध्यमे मैथिलीमे सेहो साहित्य-लेखनमे आर्थिक पक्षक गम्भीर चित्रणक सङ्ग-सङ्ग मनोवैज्ञानिक विश्लेषणक पद्धति जोर पकड़य लगलैक। एहना स्थिति मे कथा-भूमिक विस्तारक सङ्ग कथा-शिल्प आ कथा चेतनाक विस्तार सेहो आरंभ भऽ गेलैक। कथाक क्षेत्रीय प्रकृतिक बृहत्तर परिप्रेक्ष्यमे साधारणीकरण भिन्ने भेलैक।

वास्तविक अर्थ मे आधुनिक मैथिली-कथाक आरंभ आब होइछ। आब एकर गमला प्रशस्त उद्यानमे लगाओल जाइछ, एकर स्वर अधिक व्यापक क्षेत्रक मनोदशा केँ अभिव्यक्त करय लगैछ। ई आधुनिक कथा बहुलांशमे मध्यवर्गक वा निम्न मध्यवर्गक लिखऽ-पढ़ऽवाला लोकक आर्थिक पराभव, मोहभङ्ग, आलस्य, कटुता, निरीहता आ टूटैत रहवाक निरन्तरताक पीड़ाक कथा कहैछ। एहि नव रूपक आधुनिक मैथिली कथाक पहिल समर्थ कलाकार ललित छथि, जे मशीनी संस्कृतिक प्रभावके चिन्हलनि आ लोकक निरीह आकृतियोकेँ देखलनि। 'रमजानी' आ 'ओवरलोड'सन कथाक लेखक ललितक कथामे मध्यवर्गीय मानवीय दृष्टि फरीछ रूप सँ देखल जा सकैछ।

मायानंद मिश्र (गाड़ीक पहिया, मिझाइत दीप) आन्तरिक ओझराक कथा कहय चाहैत छथि। कखनो मांसलो क्षणकेँ जीवैत छथि, मुदा सभ स्थितिमे एकटा एहन परिवेश सङ्ग रहैछ जाहिमे प्राणक ऊष्मा पड़ा गेल सन लगैछ।

मशीनी युगमे सुन्न पड़ैत रागवृत्तिक पीड़ा, आर्थिक कुचक्रमे पड़ल सभ नैतिक मूल्य आ अन्य अनेक निम्न-मध्यवर्गीय सामाजिक पीड़ाकेँ भोगैत मनुक्खक आंतरिक छटपटाहटि लऽकऽ राजकमल चौधरीक कथा (माछ, माहुर, घड़ी, सांझक गाछ, निरमोही बालम हम्मर·····) प्रकाशमे आयल। वर्तमान अर्थ-चक्रक कुटिल गति राजकमलक दृष्टिमे अधिक स्पष्ट रहनि। अर्थ-चक्रक गतिसँ पंगु पड़ल मध्यवर्ग अपन समस्त सुरुचि आ कुरूपताक सङ्ग राजकमलक कथामे रूपायित भेल अछि। अपन मैथिली कवितामे ओ मैथिल राजकमलक अतिरिक्त आनो बहुत किछु छथि, मुदा अपन मैथिली-कथामे संवेदनात्मक व्यापकताक बादो राजकमल चौधरी भयानक आ भीषण रूपसँ मैथिल नजरि अबैत छथि। ई

विशिष्टता हिनक भङ्गिमाक देन अछि। हिनक भाषाक अक्खड़पन आ अभिव्यक्तिक प्रखर धार हिनक कथाकेँ पर्याप्त वैयक्तिक चरित्र प्रदान करैछ।

एहि बीजी कथाकारसभक संग बलराम (दकचल देवाल), सोमदेव (भात) धीरेन्द्र (मामा) रामदेव झा (मनुक संतान), आ धूमकेतु (अगुरवान)क कथा 'फीलर' जकाँ उपादेय अछि। धूमकेतु 'अगुरवान'मे एकटा बड़ मानवीय आ संश्लिष्ट संवेदना केँ अतिशय आक्रामक स्थितिमे पकड़बाक यत्न करैत छथि।

एतय धरि आन बातक संग हमर ईहो कहबाक चेष्टा रहल अछि जे मैथिली-कथाक विषय-परिधि क्रमशः व्यापक होइत गेलैक, मुदा अखनो ओ जाहि वर्ग धरि सम्बोधित छल से बहुत निचला स्तर धरि नहि पहुँचैत छल। निचला स्तर पर कथा द्वारा समुचित सम्बोधन एखनो बाँकी छलैक। मध्य-वर्गक पीड़ासँ बाहर आ तकरा संग दलित वर्गक समधानल शोषण आ ओहिसँ लड़ैत लाख-लाख प्राणक अभिव्यक्ति एखनो समयक प्रतीक्षामे छल। मैथिली-कथाक एहने मनःस्थितिमे प्रभासकुमार चौधरी, राजमोहन झा, गंगेश गुंजन, रमानन्द रेणु आ जीवकांतक कथा-यात्राक बेर अबैछ। ई लोकनि ललित, मायानन्द, राजकमल, सोमदेव आदिक निकटवर्ती अनुवर्ती छथिन, मुदा हुनकालोकनि सँ कतोक अर्थमे तत्वतः व्यापक दुनियाक कथाकार छथि।

स्वतंत्रता संग्राममे सक्रिय आ समादृत राजनीतिक दलक हाथमे स्वाधीनताक बाद शासनक बागडोर अयलैक। ई पूँजी ओकर कमजोर शासन-व्यवस्थाक बादो ओकरा लगभग २० वर्ष धरि लगभग निश्चिन्त राज-पाटक सुख देलकैं। क्रमशः लोकक निराशा आ परवशताक बोध गहनतर होइत गेलैक। सातम दशकमे व्यवस्थाक प्रति पहिल गंभीर जन-प्रतिरोधक व्यापक प्रदर्शन भेलैक। एक-पर-एक फेल होइत योजना, दिन-पर-दिन विदेशमे बिकाइत देश आ रोज-रोज बढ़ल जाइत अकिञ्चनक पाँति तथा छोट-छोट लिप्सासँ ग्रस्त राजनीतिक दलक बीच बटल देशक अस्त-व्यस्त जनमानस आ पस्त पड़ल जन-चैतन्य सातम दशकक कथाक मुख्य स्वरक रूपमे गुञ्जित भेल। सामाजिक ऊहापोहक एहन स्थितिमे लौकिक विवादकेँ मानसिक स्तर पर मनोवैज्ञानिक व्याख्याक संग सेहो प्रस्तुत कयल गेल। मुदा संघर्षक सभ स्थिति रहितो वास्तविक संघर्षक स्वर एहि बीच कतौ बहुत मुखर नहि होइछ। लगैछ जेना सातम दशकक मैथिली-कथा अपन विचारमे प्रगतिशील तऽ भेल अछि, मुदा निश्चित राजनीतिक आ आर्थिक दृष्टिक अभावमे अपेक्षित ढंगसँ आक्रामक संघर्षकेँ अभिव्यक्त नहि करैछ। आर्थिक पस्ती रहितो एकटा हिचकिचाहटि छैक। लोकक आशा-विश्वास सर्वांशतः खण्डित नहि होइछ।

श्री प्रभास कुमार चौधरी ग्रामीण परिवेशमे मध्यवर्ग (निम्न मध्यवर्ग सहित) केँ चिन्हबाक यत्न करैत छथि। कतौ-कतौ छोटका सभक परिवेशोमे अबैत छथि। हुनक कथा-फलक मिथिलाक गामक सामन्ती स्खलनक सङ्ग-सङ्ग नव-नव उन्मेषक छटपटाहटियो केँ पकड़य चाहैत अछि। अपन विषयक आत्यन्तिक परिचय आ तकर संयत वर्णन लऽ कऽ हिनक 'अरगनी', 'बाबी', 'ढेप', 'मलाहक टोल' सन कथा स्मरणीय कथा बनि गेल अछि। प्रभास कुमार चौधरी अपन विषय-वस्तुकेँ रससिक्त विस्तार दैत छथि आ तार्किक ढंग सँ अपन कथ्य केँ स्पष्टता प्रदान करैत छथि।

सघन आ विरल मानवीय संवेगक अत्यन्त सुकुमार वृत्ति सभ पर आधारित राजमोहन झाक कथा-फलक बड़ छोट छनि, मुदा बड़ जीवंत छनि। मानसिक धरातल पर पड़ैत अर्थतंत्रक प्रभावमे बनैत-बिगड़ैत मध्यवर्गीय सम्बन्ध आ राग-उपराग आ अपन सीमित सामर्थ्य पर झखैत हुनक वर्ग-चेतना राजमोहन झाक कथा-संवेदनाकें मोहक आ रमणीय टिपकारी सञ्ज रूपायित करैछ। राजमोहन झाक धड़कैत भाषा-संवेदना हिनक कथाक आत्माकें सुकुमार प्राणवत्ता प्रदान करैत छनि। 'अनगंत', 'दंश', 'अप्पन लोक', 'बिचला समय', 'युद्ध-युद्ध'आ युद्ध' आ एकटा तेसर सन कथामे राजमोहन झाक विषयक प्रति उत्कट आत्मीयता, धड़कैत भाषा-संवेदना आ मोन सँ "फिनिश" कयल शिल्पक छटा देखल जा सकैछ।

गंगेश गुंजनक कथामे दाम्पत्य आ मांसल वृत्तिक कोमलता एवं ऊष्णता (आ ठंढापन) एकान्त मे आमने-सामने रससिक्त क्षणमे पड़ल दम्पतिक (वा कोनो मनुक्खक) बोध कें नियंत्रित करैत आर्थिक पराभव आ मशीनी रागवृत्ति मे अलग-अलग पड़ैत मनुक्खक नियति कें आंतरिक करुणाक पुटक सञ्ज प्रस्तुत देखल जा सकैछ। हिनक 'देह', 'बन्हेज' आ 'करुआरि' एहि संदर्भमे अनुरागपूर्वक देखल जा सकैत अछि। एही कालखंडमे निम्न मध्यवर्गीय आ निम्नवर्गीय जीवन एवं पात्र कें आधार बना रमानंद रेणु विषयक यथासंभव अनुरूप भाषाक सञ्ज 'सन्तुक' आ 'जोंक'सन कथा प्रस्तुत कयलनि। रेणु अपनाकें 'डी क्लास्ड' करबाक भ्रम पाठक कें दैत छथिन जे वास्तव मे एकटा शिक्षित मध्यवर्गीय व्यक्तिक करुणा-प्रदर्शन सँ अधिक किछु नहि मानल जा सकैछ।

जीवकांतक कथामे कथा-संवेदनाक आर वृहत्तर क्षेत्रमे प्रसार होइछ। जीवकांतक कथामे औद्योगीकरणक प्रभावसँ बढ़ल जाइत एकाकीपन आ असुरक्षाबोधकें समर्थ अभिव्यक्ति भेटैछ। ओ मध्यवर्गक सुख-दुःखमे रसल-बसल ग्राम-कथा सेहो कहलनि अछि। निम्न मध्यवर्ग वा मध्यवर्गक समस्त पीड़ा हुनक विषय नहि छनि। अपना लेल ओहि क्षेत्रमे ओ अपन प्रवृत्तिक अनुरूप विषयक चुनाव करैत छथि। जीवकांत कोनो संवेदना-विशेष पर रमल नहि रहि सकैत छथि। ओ बेगर्स कथा कहैत छथि आ ई तथ्य हुनक कथाकें आ अभिव्यक्तिकें समान रूपें 'काव्य-गरिमा' प्रदान करैत छनि। एहि दशकक आस-पास जीवकांतक 'इनकिलाब' सन कथा सेहो प्रकाशमे आयल। एहिमे मनुक्खकें अपन दुरवस्थामे वस्तुतः प्रतिरोधक मुद्रामे ठाढ़ देखल जा सकैछ। मुदा 'इनकिलाब' सन निर्णायक स्वरक कथा जीवकांत दोसर नहि लिखलनि आ एहिकालधरि आनो कथा-लेखक द्वारा एहि मनःस्थिति कें रागक संग नहि चित्रित कयल गेल। जीवकांतक 'सीरक', 'फँसरी' आ 'धरती' सन कथामे हुनक सामाजिक सजगता आ युगीन चेतनाक दर्शन होइछ। ओ स्वातन्त्र्योत्तर भारतक मिथिलासँ परिचित छथि, वर्त्तमान स्थितिमे प्रतिरोधक आवश्यकतो बुझैत छथि, मुदा तकर आगाँ हुनका गतिहीनताक स्थिति नजरि आबय लगैत छनि। ई बात हुनक सीमा बनैछ आ ई अपना-आपमे बहुत करुण थिक।

सातम दशक धरि अर्थतंत्रक एकतरफा वृत्ति आ एहिसँ बनैत-बिगड़ैत सामाजिक सम्बन्धक कुरूपता खूबे स्पष्ट भऽ गेल। टूटैत मध्यवर्ग निम्नवर्गमे मिझराय लगैछ। असुरक्षा-बोधसँ आत्म-विश्वासक अभाव बढ़ैछ। व्यवस्थाक प्रति लोकक विरोधक क्रमशः उग्रतर स्वर प्राप्त होमय लगैछ, मुदा स्पष्ट आर्थिक-राजनीतिक दृष्टिक अभाव तखनो बनल रहैछ। अनियोजित प्रतिरोधक व्यर्थतासँ भिन्न-भिन्न कुण्ठाक जन्म सेहो होइछ। नकाबपोश मनुक्खक शिखण्डी चरित्रो फरीछ होइत गेलैक।

एहिसँ कथा-संवेदनाकेँ पर्याप्त विस्तार भेटैत छैक। कथा-संरचनाक क्षेत्रमे क्रमशः कथा-तत्वक निर्धारित सीमाक अतिक्रमण होमय लगैछ आ आत्मोपहास, अतिरंजना आ फैन्टेसीक माध्यमसँ कतोक अपरिचित सत्यकेँ पकड़बाक चेष्टा कथामे देखबामे अबैछ। मुदा एहने समयमे औद्योगिक आ वैज्ञानिक विकाससँ त्रस्त मानसमे सोझ आ सहज जीवनक लग होबाक आकांक्षा सेहो पुनः जागय लगैछ। ओ नागरी चाक-चिक्यसँ ग्रामीण दैन्यक आँचरमे शांतिक कामना संग, सहगल जिजीविषा संग आवय चाहैछ। असुरक्षा, निराशा आ दैन्यक घड़ीमे शिल्प आ कथ्य दुहू स्तर पर कथामे परिवर्तनक गति आरंभ होइछ। एहने स्थितिबोधक संग सुभाषचन्द्र यादवक 'फँसरी', 'झालि', 'काठक बनल लोक' आ 'परदेखिया', सुकान्त सोमक 'धूरीसँ छिड़कल लोक', 'सहयात्री' एवं 'नेपथ्य संवाद' तथा प्रो० मनमोहन झाक 'कथामे फराक नायक', 'कोढ़िया' आ 'भूख' सन कथा प्रकाशमे आयल। मानसिक आ शिल्पगत धरातल पर ई कथासभ जीवकांतक बादक कथा कहैछ। मैथिली कथाक स्वर क्रमशः अधिक युगीन आ एकर औनाहटि बेसी अर्थवान भेलैक। ई स्थिति सन १९७४-७५ धरि देखबामे अबैछ। लोक-प्रतिरोधकेँ एखनो आक्रमणक संवेदना-शक्ति प्राप्त नहि होइ छैक। लोकक लड़ाइक सही व्याकरण एखनो धरि अनुच्चरित आ अनिरूपित रहैछ।

२५ वा २६ जून, १९७५ केँ एहि देशमे आपातकालक घोषणा कयल गेल। कतोक वरखसँ वास्तविक स्वतंत्रता लेल रकटैत जनमानसकेँ पहिने लकवा मारि दैत छैक, मुदा संघर्षक सही अर्थ सेहो फरीछ होमय लगैत छैक। आर्थिक क्षेत्रमे पस्त पड़ल एहि देशक व्यवस्था अपन गिरवी पड़ल चरित्रक संग एकाएक ततेक कुरूप भऽ जाइछ जे एतुका जनमानस अपन निरंतर होइत शोषणसँ व्याख्यासहित परिचित होमय लगैछ। जनतांत्रिक प्रणालीमे एकल शासन-व्यवस्थाक जकड़ क्रमशः असह्य होइत चलि जाइछ। एहनामे किछु सही राजनीतिक दृष्टिक विकास देखबामे अबैत अछि। अन्तरक एहि अतिशय उद्वेलित स्थितिमे कथा आओर व्यापक भूमि दिस बढ़बाक यत्न करैछ।

मैथिली-कथामे आयल एहि नव्यतम दृष्टि आ बोधकेँ एखन समर्थ अभिव्यक्ति प्राप्त नहि भेलैक अछि। तथापि जे प्रयास भऽ रहल छैक से इमानदार था विश्वासोत्पादक लागत। ग्रामीण आ शहरी क्षेत्रमे उग्रतर होइत असंतोष एहन बोधक लेल अनुकूल आ सामयिक तथ्यक ओरिआओन करैछ। वस्तुतः लोकक सही प्रतिरोधक लड़ाइ जाहि खेमासँ सर्वाधिक समर्थ रूपमे लड़ब संभव होयतैक, ताहि खेमाक उभड़-खाबड़ आ असंस्कृत योजना एम्हरे मैथिली कथामे प्रस्तुत होमय लगलैक अछि। सही लड़ाइक आरंभ प्रायः भऽ रहल छैक। एहि बोधक खूब फरीछ कथा अखन निर्माणक क्रममे अछि। एहि बीच विभूति आनन्द (जुलूस, दागल पन्ना आ मोगाक नाच) आ विनोद बिहारी लाल (जे इतिहास नहि बनत, खोहक अन्हार)क कथा दिस तत्काल ध्यान जाइछ। हिनका सभकेँ साफ राजनीतिक दृष्टि प्राप्त नहि छनि, परञ्च हिनका सभक सहज युगीन बोध इमानदार प्रतीत होइछ। एक-दू आओर नाम ताकल लेल जा सकैछ, मुदा संघर्षक कार्यक्रम अखनो अघोषित अछि। वास्तवमे राजनीतिक बोधक स्तरपर सामान्य जनमानस अखनो पिछड़ल अछि आ व्यवस्थित जन-शिक्षाक आवश्यकता छैक। अराजक स्थितिसभक बीच संघर्षक सही दिशाक अन्वेषण भऽ रहल छैक आ नकली आत्मीयताक स्थान पर सुच्चा आत्मीयताक

स्वर कथामे सुगंधि संग आबय लगलैक अछि। प्रत्यक्ष लड़ाइ आरंभ होयबाक प्रतीक्षा बहुतोकें छनि आ एहि प्रतीक्षाक विकलता नव्यतम मैथिली कथाक अविकृत स्वर बनि रहल अछि।

एहि आलेखक आरंभ मे मैथिली गद्यक सम्बन्धमे थोड़ेक चर्च भेल अछि। तकरा बाद मैथिली-कथाक यात्रा-विवरण हम प्रस्तुत कयल। आब संक्षेप मे हम मैथिली गद्यक सम्बन्ध मे किछु आर बात कहब।

पूर्व मे जेना कि हम कहि आयल छी, मैथिली गद्यक आरंभ ज्योतिरीश्वर ठाकुर सँ होइत अछि। ओना डा० काञ्चीनाथ झा 'किरण'क अनुसंधानी नजरि मे ज्योतिरीश्वर मूलतः पद्यक रचनाकार छथि। हुनक सर्वमान्य गद्य ग्रन्थो (वर्णरत्नाकर) पद्य मे छनि। ज्योतिरीश्वर ठाकुरक बाद मैथिली-साहित्य मे नाटक कें छोड़ि गद्य मे कोनो व्यवस्थित लेखन बहुतो समय धरि नहि भेल। मल्लीय नाटक मे प्रयुक्त गद्य ओहुना कोनो बहुत सचढ़ नहि लागत। विद्यापतिक 'पुरुष-परीक्षा'क चंदा झा १९म शताब्दी मे अनुवाद कयलनि। एहि बीच सामाजिक कार्य सभमे न्यूनाधिक रूपमे गद्यक प्रयोग होइत रहल आ बोलीक स्तर पर सेहो तकर स्वरूपक विकास भेलैक। एहि अवधि मे लोकभाषा देववाणी संस्कृत आ तकर सहज रूप प्राकृतसँ क्रमशः बहुत दूर आगाँ चलि आयल आ अपन स्वरूपक पर्याप्त विकास कयलक। ज्योतिरीश्वरक मैथिली गद्य एतेक 'क्रूड फॉर्म' मे भेटैछ कि तकरा बुझबा लेल सामान्यतः आधुनिक मैथिली मे तकर अनुवाद आवश्यक छैक। 'पुरुष-परीक्षा'क अनुवाद धरि मैथिली गद्यक मौलिक स्वरूप स्थिर होमय लगैछ। चन्दा झा १९०७मे दिवंगत भेलाह। एहीकालमे मैथिलीमे पत्र-पत्रिकाक प्रकाशन आरंभ होइछ। पत्रक माध्यमसँ मुरलीधर झा (मिथिलामोद) आ भुवनेश्वर सिंह 'भुवन' (विभूति) मैथिली गद्यक सहज विकास कयलनि। आरंभिक उपलब्धिक रूपमे म० म० परमेश्वर झाक 'मिथिला-तत्व-विमर्श'क स्मरण आदर-पूर्वक कयल जा सकैछ। सामाजिक आ भाषिक जन-जागरणक एहि कालखंडमे नव-नव बोधकें अभिव्यक्ति देबामे मैथिली गद्यक साहित्यिक रूप अपन संस्कृत संस्कारक क्रमशः त्याग करैत गेल आ सामान्य लोकक अभिव्यक्तिक समीप अबैत गेल। प्रो० हरिमोहन झाक गद्य-लेखनक संग मैथिली-गद्यक आरंभिक विकास अपन पूर्णता आ चरम पर आबि जाइछ। तखनो लोकभाषाक प्रकृतिकें आत्मसात् करितो प्रो० झाक भाषामे एकटा पारम्परिक आभिजात्यक दर्शन ठाम-ठाम होइते रहैछ। वास्तवमे प्रो० हरिमोहन झा आ हुनक निकटवर्ती समकालीन गद्यकार अपन संस्कारसँ जतबा दूर धरि दूर गेलाह, हुनक गद्यक रूपो ओही मात्रामे संस्कृत गद्यक प्रकृति आ प्रवृत्तिसँ फराक भऽ सकलनि। लोकोक्ति आ अलंकार सँ सज्जित प्रो० झाक भाषा सहज होइतहुँ विशिष्ट होइछ।

मैथिली गद्यक विकासक दोसर चरणक समर्थ शिल्पी यात्रीजी छथि। लोक-वाससँ सुवासित यात्रीजीक गद्यक आरंभ यात्रीजी सँ भऽ कऽ हुनकेमे अपन पूर्णतो पर अबैछ। 'पारो' सँ 'नवतुरिया' धरि यात्रीजी भाषाक अनेक प्रकाशमान स्तम्भ ठाढ़ करैत छथि। मैथिली गद्यक कतोक सामंती संस्कार यात्रीजीक गद्य मे टूटल, मुदा ओ निश्शेष नहि भेल। यात्रीजी बोधक स्तर पर प्रो० हरिमोहन झासँ आगाँक बात कहैत छथि आ हुनक मुद्रोमे बेशी आक्रोश होइत छनि। मैथिली गद्यक स्वरूपमे पुनः बहु नहुए-नहुए बदलाव होइछ। ललित सँ लऽ कऽ जीवकांत धरि मैथिली गद्यक ओ सामंती प्रकृति बनल रहैछ। यद्यपि एहि बीच पर्याप्त 'कुसंस्कारो' शामिल भऽ जाइछ। मैथिली गद्यक सामंती लचक पर सभसँ

समर्थ प्रहार सुभाषचन्द्र यादव करैत छथि। हिनका धरि अबैत-अबैत मिथिला क्षेत्रक सामान्य लौकिक संस्कार अपन सभ पुरना ढाठीकें त्यागि देबा लेल प्रस्तुत भऽ जाइछ। ओकरा स्वरमे रोचक स्थान पर अहर्निश धधकैत आक्रोश आ समर्थ प्रतिरोधक उष्णता आबि जाइछ। स्वतंत्रता-प्राप्तिक संग वास्तविक स्वतंत्रताक सपना देखैत जनमानस एतय आबि स्वतंत्रताक सही रूपकें आत्मसात् कऽ लैत अछि आ तकरा प्राप्तिक हेतु किछु 'पाजिटिव' ढंगसँ उद्यमशील होइछ। औपचारिक विरोधक स्थान पर एहनामे सक्रिय एवं सार्थक विरोधक भूमिका लिखायब आरंभ भऽ जाइछ। स्पष्ट थिक जे ई मनःस्थिति ज्योतिरीश्वर-कालीन किंवा चन्दा झाक समकालीन सामाजिक आ मानसिक वस्तुस्थितिसँ बहुत बादक स्थिति थिक। बीचक पड़ाव पर मुरलीधर झा, प्रो० हरिमोहन झा आ यात्रीजी पर नजरि पड़ैछ।

दरभंगा राजक योगदान मैथिलीक विकासमे प्रायः अनठयबा जोगर वस्तु अछि। एहि राजवंशक छत्रच्छायामे मैथिलीक गरजैत विकास संभव रहैक, मुदा से आश्रय एहि भाषाकें कहियो स्नेहसँ उपलब्ध नहि भेलैक। 'मिथिला-मिहिर'क हिन्दी आ मैथिलीमे एक संग प्रकाशन आ राजकाजक भाषाक रूपमे हिन्दीक प्रयोग एहि राजवंशक भाषा-प्रेमक कथा कहैछ। संस्कृतक टकसाली दबदबासँ सामान्य जन-मानसकें दाबने रहब एहि राजवंश कें प्रायः नीतिपरक लगलैक। जनताकें अपन भाषाक सुविधा उपलब्ध करयबा सँ ई समर्थ संस्थान त्रस्त लगैछ। तें मैथिली गद्यक विकासक चर्च करैत काल मैथिल शासन-पीठक भूमिका करुण प्रतीत होइछ। ई शासन-पीठ ओहि वर्गक अर्थतंत्रक नियामक तऽ रहल जे बौद्धिक वर्ग छल, मुदा तकरासँ बाहरक विशाल जनसागरक आर्थिक आ आत्मिक दुनियामे ओकर कोनो निर्णायक भूमिका नहि भेलैक। तकर मूलसूत्र दिल्लीक राजगद्दीक हाथें बनल रहलैक।

स्वतंत्रता प्राप्तिक संग एहि देशमे सामंती शासन-पद्धतिक अन्यतम भाषा संस्कृतक ह्रास अंतिम चरणमे पहुँचि जाइछ। नव शासन-केन्द्र स्थापनामे अंग्रेजी आ हिन्दीक जोरदार कटाउझ आरंभ भेल आ एकरे संग कतोक भारतीय भाषाक विकासक समर्थ व्यापार आरंभ भऽ जाइछ। मैथिलीमे आन अनेक क्षेत्रीय भाषा-भाषी जकाँ अपन अस्तित्वक लड़ाइ शुरू होइछ। अपन अभिव्यक्तिक निकटस्थ आ आत्मीय माध्यम कें अनेक प्रयाससँ पुष्ट करबाक प्रयास सभ क्षेत्रीय भाषामे तात्कालिक आ राजनीतिक कारणसँ आरंभ होइछ। अपन अस्मिताक अक्षुण्णता आ रक्षा हेतु अपन 'देसिल बयना'क उत्थान एकटा आवश्यक व्यापार भऽ जाइछ। लोक क्रमशः भाषाक राजनीतिकें चिन्हैत अछि आ चिन्हबाक क्रममे अपन 'स्ट्रेटेजी' ठीक करैत अछि।

अंतमे एक आओर तथ्य—हम सभ देखलहुँ जे शासकीय दुनियामे सामान्य लोकक साझेदारी में वृद्धिक संग जनभाषाक विकासक लेल अवसर उपलब्ध होइत छैक। एहनामे लोकक अभिव्यक्ति तरलसँ ठोस अधिक होइत जाइत छैक। मैथिलीक संदर्भमे हमसभ देखलहुँ जे आरंभमे जनमानसक अर्थ कतेक सीमित छल आ तकर कारण की छल। तखन संस्कृत गद्यक स्थानापन्न भऽ लोकभाषाक साहित्यिक विकास संभव नहि भेलैक। क्रमशः जनजीवनमे जागरण होइत गेलैक, ओ शक्ति-पीठकें लगसँ देखब आरंभ कयलक, शासन-व्यापारमे ओ शामिल होमय लागल। जनमानसक एहने जागृति-कालमे कोनो भाषाक गद्यक विकास सहज होइत छैक आ गद्यक प्रौढ़िक संगे गद्यमे भिन्न-भिन्न साहित्यिक विधाक सामर्थ्यक विकास आ तकर अन्तर्निहित स्वरक परिष्कारो होइत जाइत छैक। मैथिली-गद्य आ मैथिली-कथाक विकासक कथामे तें एतेक आत्मीय रूपसँ समकालिक आ समप्रावृत्तिक प्रस्थान-बिन्दु दृष्टिगत होइत अछि।

समालोचना आ मैथिली साहित्य

श्री रामकृष्ण झा 'किसुन'

कोनो भाषाक साहित्यक सम्यक् ज्ञान आ तकर सम्पूर्ण रसास्वादनक हेतु ओकर समालोचना नितान्त अपेक्षित होइत अछि। समालोचनाक अभावमे साहित्यक गुण अथवा दोषक परिचय नहि भऽ सकैत अछि आ गुण-दोषकें बिनु जनने कोनो साहित्यक आनन्दोपलब्धि संभव नहि। तें साहित्यक वैशिष्ट्यकें बुझबाक हेतु समालोचनाक बड़ आवश्यकता अछि। साहित्यकार साहित्यक जे निर्माण करैत छथि तकर उपादेयता आ महत्वक निर्धारण कऽ समालोचना साहित्य-निर्माणक दिशानिर्देश सेहो करैत अछि। एहि प्रकारें साहित्यक निर्माण आ असत् साहित्यक परिहारक अत्यावश्यक कार्य समालोचनें द्वारा होइत अछि।

साहित्यस्रष्टा आ समालोचकक परस्पर सम्बन्धक विषयमे अनेक मत अछि। सर्वाधिक मान्य मत अछि जे साहित्यकार तथा समालोचकमे गुणगत कतिपय साम्य रहितहु कार्य-दृष्टियें भेद अछि। साहित्यकारक कार्य थिक साहित्यसर्जन आ समालोचकक कार्य थिक कृतिक समीक्षण—जेना शालग्राम शिलासँ स्वर्णक उत्पत्ति होइत अछि आ कसौटीक पाथर ओकर परीक्षण करैत अछि। दुहू पाथरे थिक, दुहूक रंग कारी होइत अछि, परन्तु एकटा थिक उत्पादक आ एकटा थिक परीक्षक। समालोचक एहनो भावकें आ गुणकें कृतिमे ताकि कऽ बहार करैत छथि जकरा निर्माता अपने नहि बुझने-जनने रहैत छथि। तें तथ्य ई थिक जे समीक्षण वस्तुतः एक विलक्षण एवं स्वतंत्र शक्ति थिक।

उपर्युक्त रूपें ई जानल जा सकैत अछि जे समालोचना कोनो साहित्यक विकासक हेतु कतेक महत्वपूर्ण वस्तु थिक। तें भारतीय साहित्यमे समालोचनाकें एक अत्यन्त उपादेय विधा मानल गेल अछि। संस्कृतक एक मान्य प्राचीन आलोचक राजशेखर तँ आलोचना-शास्त्रकें वेदक सप्तम अंग धरि कहलनि अछि। संस्कृत साहित्यमे समालोचनाकें क्रियाकल्पसाहित्य विद्या, अलंकार-शास्त्र आदि नामें प्रयुक्त कयल गेल अछि आ एहि सम्बन्धमे वात्स्यायन, राजशेखर, वामन, भामह, दण्डी, रुद्रट, आनन्दवर्धन, अभिनव गुप्त, मम्मट, क्षेमेन्द्र, विश्वनाथ, पण्डितराज जगन्नाथ आदि अपन-अपन सिद्धांत प्रतिपादित कऽ भारतीय वाङ्मयक एहि विभागकें पुष्ट बनौलनि अछि। मैथिली साहित्यक सम्बन्धमे समालोचनाक आदि प्रवृत्ति संस्कृतहिक परम्परासँ प्रभावित अछि, तें संस्कृत साहित्यक समालोचना सिद्धांतक संक्षिप्त संकेत मात्र कऽ रहल छी।

गुण-दोषक विवेचना करब आलोचना थिक आ सम्यक् आलोचना समालोचना कहबैछ। अर्थात् समालोचनाक अर्थ भेल कोनहु विषयक गम्भीरतापूर्वक विशदरूपें गुण-दोषक विवेचना कऽ तकर मान-मूल्य स्थापित करब।

एहि लेल समालोचकक महनीय गुण सबमे अन्यतम गुण थिक साहित्यक अन्तस्तल तक पहुँचबाक क्षमता। से बिनु पूर्वग्रह छोड़ने आ निष्पक्ष बनने सत्यतः नहि भऽ सकैत अछि। जे व्यक्ति साहित्य-सरिताक केवल ऊपरी भागमे हेलैत रहत आ ओकरा भीतरमे प्रवेश करबाक क्षमता नहि राखत वा कोनो प्रकारक पूर्वग्रहसँ ग्रस्त रहत आ पक्षपातक पक्षाघातसँ पीड़ित रहत ओ व्यक्ति कथमपि समालोचकक उत्तरदायित्व नहि निमाहि सकैत अछि। क्षमताक अर्थ व्यापक थिक।

नो शक्य एव परिहृत्य दृढां परीक्षां
ज्ञातुं मितस्य महतश्च कवेर्विशेषः।

मितकवि (सामान्य कवि) तथा महाकवि अर्थात् सामान्य साहित्यक रचना कयनिहार आ महान् साहित्यक रचना कयनिहारक अन्तरकें स्पष्ट करबाक शक्ति साहित्यक मर्मज्ञ विद्वानकें भऽ सकैत छनि। एतदर्थ व्युत्पत्ति, सम्बद्ध भाषाक साहित्यक गम्भीर परिचय तथा किछु अंशमे समकालीन अन्यान्य साहित्यक न्यूनाधिक ज्ञान, एक नीक समालोचकक हेतु आवश्यक होइत छैक। कारण जे कोनो साहित्यक सृष्टिमे तत्कालीन अन्यान्य साहित्यहुक थोड़-बहुत प्रभाव प्रायशः रहिते छैक। साहित्यक मर्मकें जानक हेतु प्रतिभाक आवश्यकता छैक। प्रतिभा दू प्रकारक होइत अछि—कारयित्री तथा भावयित्री। कारयित्री प्रतिभा साहित्यस्रष्टाकें रचनाक शक्तिमे सहयोग दैत अछि आ भावयित्री प्रतिभा समालोचककें साहित्यक गुण-दोषक भावना करबाक साधन बनैत अछि। तें समालोचककें भावक सेहो कहल गेल अछि। एहि भावयित्री प्रतिभाक अभावमे समालोचना तलस्पर्शिणी नहि भऽ सकैत अछि। समालोचक जतेक अधिक मर्मज्ञ तथा प्रतिभा-सम्पन्न होयताह, हुनक गुण-दोषक विवेचना ततेक नीक, यथार्थ आ सर्वांगपूर्ण होयतनि। मत्सरहीनता समालोचकक हेतु अत्यावश्यक अछि। समालोचककें उदार होमक चाही। मत्सरता समालोचकक आँखिये बन्द कऽ दैत अछि। एहि सब दृष्टिएँ समालोचकक चारिटा कोटि मानल गेल अछि :

(१) अरोचकी—सूक्ष्म समालोचनाक भावनासँ मण्डित व्यक्ति जनिका छोट-छीन वस्तु नहि रुचैत छनि। हिनक दृष्टि बड़ तीक्ष्ण आ सूक्ष्म होइत छनि तथा जखन कोनो साहित्यिक कृति वास्तवमे गुणसम्पन्न नहि होइत अछि तें ओ ओकर शोभनताकें मानक हेतु प्रस्तुत नहि होइत छथि।

(२) सतृणाभ्यवहारी—स्थूल दृष्टिवाला समालोचक जे गुण तथा दोषमे वास्तविक अन्तर नहि बूझि सकैत छथि।

(३) मत्सरी—साहित्यक रचनाकार-विशेषसँ ईर्ष्या-द्वेष रखनिहार समालोचक जे साहित्यक गुण-दोष दिस नहि जा कऽ रचयिताक व्यक्तिगत गुण-दोष दिस जाइत छथि आ कृतिक अन्यायपूर्ण समालोचना करैत छथि।

(४) तत्वाभिनिवेशी —साहित्य-तत्वकेँ चिन्हनिहार समालोचक जे कृतिक अन्तस्तलमे प्रवेश करैत छथि तथा ओकर अन्तर्निहित समस्त गुण-दोषकेँ बीछि कऽ ओकरा उचित शब्देँ अभिव्यक्त करैत छथि।

एहि चारू प्रकारक समालोचकलोकनिमे प्रथम आ चतुर्थ कोटिक समालोचके विवेकी, श्लाघ्य आ साहित्यक वास्तविक मर्मक उद्घाटनमे वस्तुतः समर्थ होइत छथि आ एहने समालोचक द्वारा सत्साहित्यक निर्माणकेँ प्रेरणा भेटैत छैक तथा एहि तरहेँ साहित्यक श्रीसम्पन्नता बढ़ैत छैक।

आधुनिक समालोचनाक चारिटा प्रकार मानल जाइत अछि। सैद्धान्तिक, व्याख्यात्मक, निर्णयात्मक तथा स्वतन्त्र अथवा आत्मप्रधान।

एहि सबमे व्याख्यात्मक समालोचना सर्वाधिक महत्वपूर्ण थिक, जाहि पर अन्यान्य तीनूटा प्रकार सेहो अवलम्बित अछि। पद्धतिक दृष्टिसँ समालोचनाक किछु भेद आओरो अछि, यथा वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक आदि।

समालोचनाशास्त्रक अतिसंक्षिप्त परिचयक सङ मैथिली साहित्यमे समालोचनाक कार्य आ प्रगतिक सम्बन्धमे बूझब आवश्यक। एहि शताब्दीक आरम्भमे १९०५ ई०मे 'मैथिल हित साधन' नामक मासिक पत्रक प्रकाशन आरम्भ भेल। ताहिसँ पूर्व साहित्यिक वस्तुक समालोचना वा समालोचनात्मक निवन्ध आदिक सामग्री उपलब्ध नहि अछि। एहि पत्रक सम्पादकीय तथा किछु रचनासँ आलोचनाक आरम्भ मैथिलीमे भेल। १९०५ ई०मे काशीसँ 'मिथिलामोद'क प्रकाशन आरम्भ भेल। एहि दुहू पत्रमे सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा सामयिक प्रसंगपर आलोचनात्मक विचार सभक अभिव्यक्ति आरम्भ भेल। समय-समय पर आलोचना-प्रत्यालोचना द्वारा खंडन-मंडनक क्रममे आलोचनाक विकास-पथक निर्माण आरम्भ भेल।

उपरान्त आलोचनाक विकास दिनानुदिन 'मिथिला मिहिर', 'मैथिल-प्रभाकर', 'श्री मैथिली,' 'मिथिला,' 'मिथिला मित्र,' 'मैथिल बन्धु,' 'मैथिल-युवक', 'भारती', 'विभूति' 'मैथिली साहित्य पत्र', 'स्वदेश,' 'मिथिला ज्योति', 'वैदेही,' 'पल्लव,' 'किरण,' 'मिथिला दर्शन', 'मिथिला सेवक' 'चौपाड़ि' 'मिथिलादूत' 'निर्माण', 'प्रवासी मैथिल', 'अभिव्यंजना', 'मिथिला मिहिर' (नव क्रमांक) 'इजोत', 'अभियान' 'आखर', 'सोना-माटि' आदि पत्र-पत्रिकाक माध्यमे होइत गेल जाहिसँ क्रमशः मैथिली साहित्यक विविध विषयपर आलोचनाकार्य भऽ रहल अछि।

पत्र-पत्रिकाक अतिरिक्त उमापति विरचित 'पारिजातहरण'क भूमिकामे पं० चेतनाथ झा विवेचनात्मक रीतिसँ प्राचीन कवि एवं हुनकालोकनिक कृतिक परिचय देलनि। डाक्टर सर गंगानाथ झा, डा० अमरनाथ झा, डा० उमेश मिश्र, भोला लाल दास, लक्ष्मीपति सिंह, नरेन्द्रनाथ दास प्रभृति विद्वान् अनेक ग्रन्थक सम्पादन कयलनि आ ताहि सभमे जे भूमिका लिखलनि से आलोचनात्मक निवन्ध थिक। एहि परम्पराक समालोचकमे म० म० डा० उमेश मिश्र प्रथम समालोचक छथि जे निवन्धक अतिरिक्त पुस्तकक रूपमे समालोचनाक कृति मैथिली-साहित्यकेँ देलनि। हिनक पुस्तक

थिक 'मैथिली साहित्यक इतिहास' जे मैथिली भाषामे नहि प्रकाशित भऽ हिन्दीमे भाषान्तरित भऽ सिरीज रूपमे प्रकाशित भेल। एहिना दोसर प्रमुख समालोचक भेलाह श्री नरेन्द्र नाथ दास जे तुलनात्मक समालोचना पद्धतिसँ 'विद्यापति काव्यालोक' लिखलनि। मुदा इहो ग्रन्थ मैथिलीमे नहि, हिन्दीएमे प्रकाशित भेल। हिनक गोविन्ददास, कृष्णजन्म समीक्षा आदि श्रेष्ठ आलोचना छनि। एही तरहेँ पं० शिवनन्दन ठाकुर 'महाकवि विद्यापति' लिखलनि जे विद्यापति पर आधिकारिक शैलीमे लिखल गेल श्रेष्ठ आलोचनात्मक ग्रन्थ थिक, मुदा ईहो मैथिलीमे नहि, हिन्दीमे प्रकाशित भेल।

उपर्युक्त परम्पराक विद्वानमे सभसँ सशक्त आ प्रतिभाशाली समालोचक प्रो० श्री रमानाथ झा छथि जनिक गोविन्ददासक डीह, विसफी, विद्यापति, चन्दा झा, आलोचना साहित्य, किरतनिआ आदि विषयपर अनेक निबन्ध मैथिली साहित्यक निधि थिक। एकर अतिरिक्त हिनक अनेकानेक निबन्ध, सम्पादकीय आ टिप्पणी उल्लेखनीय अछि। हिनक आलोचनात्मक दृष्टि बड़ तीव्र छनि। एही परम्पराक समालोचक वर्गमे उल्लेखनीय छथि श्री शशिनाथ चौधरी (चन्दा झाक रामायण, विद्यापति : एक प्रतिनिधि कवि आदि), ज्योतिषी बलदेव मिश्र (चन्दा झा, रामायण शिक्षा आदि) बाबू लक्ष्मीपति सिंह (मैथिली-ग्राम्य-गीतावली, आधुनिक मैथिली कवि, मैथिलीक वर्त्तमान रूपरेखा आदि)। हिनका लोकनिक कृति मैथिली साहित्यमे महत्वपूर्ण बूझल जाइत अछि।

एही तरहेँ डाक्टर सुभद्र झा, प्रो० श्रीकृष्ण मिश्र, श्री जयदेव मिश्र, डाक्टर जयकान्त मिश्र, पण्डित वेणीमाधव मिश्र, प्रो० श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन', प्रो० श्री कृष्णकान्त मिश्र आदि मैथिली साहित्यक आलोचना केँ समृद्ध कयने छथि।

डाक्टर सुभद्र झाक विद्यापति-गीत-संग्रह (अंगरेजी भूमिकाक सङ्ग) एक प्रशंसनीय ग्रन्थ थिक। एकर भूमिकामे जे तत्वान्वेषण कयल गेल अछि से कोनो प्राचीन कविक तात्त्विक अनुसन्धानमे बड़ सहायक भऽ सकैत अछि।

प्रो० श्रीकृष्ण मिश्रक मनबोध, कन्यादान समीक्षा, मैथिलीमे उपन्यास आदि, श्री जयदेव मिश्रक मिथिलाक हास-साहित्य आदि निबन्ध तथा डाक्टर जयकान्त मिश्रक अनुसन्धानपरक आलोचनात्मक ग्रन्थ 'मैथिली साहित्यक इतिहास' (अंग्रेजीमे) तथा 'किरतनिआ नाटक' आदि अनेक महत्वपूर्ण निबंध, वेणीमाधव मिश्रक 'कविक मूड' आदि निबन्ध तथा प्रो० श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'क मिथिला मिहिर, स्वदेश आदि पत्रक सम्पादकीय एवं कविगोष्ठीक परम्परा ओ मैथिली आदि अनेकानेक निबन्ध, मैथिली साहित्यक एक बड़ पैघ अवदान थिक। प्रो० श्री कृष्णकान्त मिश्र 'मैथिली साहित्यक इतिहास' मैथिलीमे प्रकाशित कऽ एक बड़ पैघ काज कयने छथि। श्री सुधांशु शेखर चौधरी एही पीढ़ीक छथि जे 'विवेचना' नामक आलोचनात्मक निबन्ध-संग्रहक सम्पादन कयने छथि आ स्वयं आलोचना-शास्त्र पर एक निबन्ध ओहि संग्रहमे लिखने छथि।

श्री चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर' 'मैथिली आंदोलन : एक सर्वेक्षण' ग्रन्थ द्वारा आ' अपन 'एकांकी : वर्त्तमान दशक' आदि अनेक निबन्ध द्वारा आलोचना-विभागकेँ सम्पन्न बनौने छथि। हिनक आलोचना गवेषणात्मक होइत अछि।

हिनका लोकनिक सङ्गहि मैथिली साहित्यक आलोचना-क्षेत्रमे जाहि सशक्त समालोचक लोकनिक वर्ग काज कऽ रहल अछि ताहिमे प्रो० श्री शैलेन्द्र मोहन झा, प्रो० श्री दुर्गानाथ झा 'श्रीश', प्रो० श्री मायानन्द मिश्र, प्रो० श्री रामदेव झा, प्रभृति विशिष्ट स्थान रखैत छथि। प्रो० श्री शैलेन्द्र मोहन झाक 'परिचय निचय', 'मैथिली साहित्यक प्रमुख कवि' आदि ग्रन्थ, 'धूर्त समागम पर एक दृष्टि', 'धूर्त समागमक मैथिली पद' 'ब्रजबोली साहित्य: एक अध्ययन', 'ब्रजबोली साहित्य: उदभव एवं विकास', आदि निबन्ध, प्रो० श्री दुर्गानाथ झा 'श्रीश'क साहित्य-विमर्श'''' आलोचनात्मक निबन्ध संग्रह तथा 'यात्री जीक काव्य वैभव', 'आधुनिक काव्य-धारा : विचार ओ विश्लेषण', 'साहित्यक सत्य' आदि निबन्ध, प्रो० श्री मायानन्द मिश्रक 'आधुनिक मैथिली काव्यक वाद-परम्परा', 'मैथिलीक नवीन काव्यान्दोलन', 'आधुनिक मैथिली काव्यक किछु प्रेरक शक्ति तथा प्रवृत्ति' आदि निबन्ध एवं 'अभिव्यंजना'क माध्यमे प्रकाशित सम्पादकीय, प्रो० श्री रामदेव झाक 'मैथिली नाटकक विकास यात्रा' आदि निबन्ध बड़ महत्वपूर्ण आलोचनात्मक सामग्री थिक।

एही तरहेँ 'लोकगीतमे विरह' आदि निबन्धक लेखक प्रो० आनन्द मिश्र द्वारा सम्पादित 'विद्यापति' नामक पुस्तक विद्यापतिविषयक एक नीक आलोचनात्मक सामग्री थिक। प्रो० बाल गोविन्द झा 'व्यथित' द्वारा लिखित 'मैथिली साहित्यक इतिहास' नामक पुस्तक सेहो कतिपय दृष्टिएँ मैथिली साहित्यक नवीन आलोचनात्मक वस्तु थिक। एहिना वैदेही समिति, दरभंगाक तत्वावधानमे आयोजित अखिल भारतीय मैथिली साहित्य सम्मेलनक अवसर पर प्रकाशित दुनू रचना-संग्रह तथा अन्यान्य संकलन सब आन-आन वस्तुक सङ्ग आलोचनहुक संकलनक दिशामे स्तुत्य प्रयास थिक। पं० जयकान्त झा 'श्रुतधर'क सम्पादकत्वमे मिथिला सांस्कृतिक परिषद्, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित 'मैथिली भाषा आ साहित्य' नामक संग्रह आलोचना-साहित्यक मननीय पुस्तक थिक।

समसामयिक पत्र-पत्रिका द्वारा आलोचनामे प्रवृत्त नवीन पीढ़ीक आलोचकलोकनि आलोचना क्षेत्रमे नवीन आकांक्षा, नव विधान, नवीन दृष्टिबोध, नवीन अभिव्यञ्जना-पद्धति लऽ कऽ मैथिली साहित्य-गगनमे नक्षत्र जकाँ चमकि रहल छथि। हिनका सभक नामावली बड़ वृहत् अछि।

हमरा बुझने मैथिली साहित्यक विकासकार्यमे ई बड़ उत्साहवर्धक शुभलक्षण थिक जाहिसँ सत् साहित्यक रचनाक सङ्ग-सङ्ग समालोचनाक महत्वसँ मैथिलीक पाठक लाभान्वित भऽ रहल छथि आ आलोचनात्मक दृष्टि पावि साहित्यक यथार्थ रसास्वादनमे प्रगति कऽ रहल छथि। एहि तथ्यकेँ आब क्यो अस्वीकार नहि कऽ सकैत छथि जे मैथिली साहित्यमे समालोचनाक कार्य खूब मनोयोग आ वेगसँ आरम्भ भऽ गेल अछि। ई मैथिली साहित्यक हेतु वस्तुतः आशावर्द्धक विषय थिक।

मैथिली समालोचना : अन्हार घरमे सोङर-मारि

श्री जीवकान्त

मैथिली भाषामे सभसँ बेसी दुर्गति समालोचनाविधाक छैक। तकर अनेक कारणमे एक कारण छैक जे नीक जकाँ विचार करब एक कठिन काज थिक। जँ समालोचना शब्दक अर्थ नीक जकाँ विचार करब थिक, तँ मैथिलीमे एखन समालोचनाक स्थिति बड़ अधलाह अछि।

समालोचनाक दुर्गतिक दोसर कारण मैथिली साहित्यक अपरिपक्वता थिक। लेखन प्रौढ़ अथवा अप्रौढ़ होइते अछि, मुदा लेखनकेँ जाहि स्तरपर, जाहि उदारताक स्तरपर लेल जयबाक चाही, से स्तर एखन मैथिलीक लेखक आ आलोचक लोकनि नहि प्राप्त कऽ सकलाह अछि। लेखक लोकनि अपन-अपन कृतित्वक प्रति से आग्रहशील आ आत्ममुग्ध छथि जे ओ लोकनि अगबे प्रशंसामूलक चर्चा सुनऽ चाहैत छथि। ई बात सर्वांशमे जँ नहि, तँ अधिकांश लेखनक संबंधमे अवश्य सत्य थिक। एकरा सङहि आलोचको लोकनिमे उदारताक स्तर नहि प्राप्त भेल अछि। ओहो लोकनि एखन धरि अपनैती फड़िअबैत रहलाह अछि आ अनठीयाकेँ नहि मोजर देबा लेल खढ़-पात उपटाबऽ बाला कमठान कऽ रहलाह अछि।

समालोचनाक दुर्गतिक तेसर कारण थिक जे समालोचना द्वेष उत्पन्न करैत छैक। संस्कृत साहित्य दोसराक बात कटबाक एक पंथ परम्परा देलक अछि। संस्कृत समालोचनाक इतिहासमे कवि आ आलोचक महिषा-पाड़ाक कानि निमाहलनि आ एक दोसराक बात कटैत अपन जीवन बिता लेलनि। मैथिलीमे कतोक ठाम जँ ई कानि देखैत छी, तकर कारण समालोचना थिक।

बहुत लेखक छथि जे समालोचना करबाक पूर्ण क्षमता रखैत छथि, मुदा ओ एहेन काज नहि करैत छथि। ओना समालोचना मनुक्खक मूल प्रवृत्ति थिकैक, आदमी बिना समालोचना-आलोचना कयने जीवित नहि रहि सकैत अछि, तेँ मैथिली साहित्यक समालोचना बेसी काल पानक दोकानपर होइत अछि। समालोचना मौखिक आ व्यंग्यात्मक होइत अछि। लिखित सहानुभूतिशील समालोचनाक युगक आरंभ एखन प्रायः नहि भेल अछि।

बुधियार लोकमे जे कियो एहि प्रकारेँ फँसि गेल छथि, ओ लोकनि प्रशंसात्मक आ एकभगाह आ फूसि समालोचना कऽ रहल छथि। एहि प्रकारक प्रशंसामूलक चर्चासँ समालोचक अपनाकेँ प्रतिघात आ रोषसँ सुरक्षित कऽ लैत छथि। एखन एहि प्रकारक समीक्षाक बाहुल्य अछि। ई बात एखन चलत।

मैथिलीमे कहबी छैक जे बुड़िबकके एक टा पाइ दऽ दिऐक, ओकरा बुद्धि नहि दिऐक। मैथिलीक पोथी सभमे सम्मति आ भूमिकाक बाहुल्यमे सम्मतिकार आ भूमिका-लेखक लोकनि धुरपटाङ ढौआ दऽ कऽ ढौआ परतारबाक काज कऽ रहल छथि, बुद्धि देबाक कोनो खतरनाक काज ई लोकनि नहि कऽ रहलाह अछि।

मैथिली समीक्षाक चारिम संकट प्राध्यापकीय दृष्टिकोण थिक। प्राध्यापक लोकनि समीक्षाकें वृत्ति रूपें जीबैत छथि। ओ चाहथि अथवा नहि, ओ अपन जीवनक अधिकांश समय समालोचना करैत बितबैत छथि। समालोचना करैत जीयब हुनक नोकरी आ नियति थिकनि, ओ हुनक आत्मिक आ सहज वरण कयल इच्छा आ प्रवृत्ति नहि थिकनि। तें एहि प्रकारक आरोपित काजकें ओ आनन्दसँ नहि, निराशा आ तामसक सङ करैत छथि। वर्गमे बालक लोकनि सद्यः सुलभ (रेडिमेड) समीक्षा आ टिप्पणीक माङसँ हुनकालोकनिक टीक धयने रहैत छथिन, तें तत्काल किछु-ने-किछु कहि देब आवश्यक रहैत छैक। अधिकांश प्राध्यापक लोकनि नोकरी धरैत मातर पढ़ब छोड़ि दैत छथि। पुरान कवि-लेखकक मादे हुनक शिक्षकलोकनि जे 'नोट्स' देने रहैत छथिन, तकरा ओ भजबैत दिन काटि लैत छथि, मुदा जे लेखक अपेक्षाकृत नव रहैत छथि, तकरा विषयमे हुनका कोनो टिप्पणी उपलब्ध नहि रहैत छनि, तें एहना हालतिमे हुनका मोनमे एहेन सभ लोकपर अगबे तामस उठैत छनि जे नवमे लिखब शुरू करैत छथि आ सार्थक लिखब शुरू करैत छथि।

किछु प्राध्यापक जे पोथीमे आ पत्रिका सभमे अपन विचार छपबौलनि अछि, तकर भाषा द्व्यर्थक आ निरर्थक रहल अछि। ई लोकनि नव लेखकक प्रशंसा एहि डरें नहि करैत छथि जे लेखकक मान बढ़ि ने जाइनि, आ निन्दा नहि करैत छथि जे अपन माथ के फोड़ाबय। एहेन प्राध्यापकीय समीक्षा सभ बेसी काल पत्रिका सभमे बेस देखबामे अबैत रहैत अछि।

समीक्षाक पांचम संकट थिक समीक्षा-परम्पराक अभाव। मैथिली साहित्य भारतक अन्य भाषा-साहित्य जकाँ संस्कृतक परम्परासँ जोड़ल अछि, मुदा संस्कृतक आलोचना आब कोनहु अर्थमे प्रासंगिक नहि अछि। आब रसवादी, ध्वनिवादी अथवा रीतिवादी आलोचना-पद्धतिक आधारपर मैथिली साहित्य-पर गप करब संभव नहि अछि। दोसर दिस मैथिली साहित्य पाश्चात्य साहित्यसँ बहुत बेसी प्रभावित अछि। अंगरेजी आ अंगरेजीक बाटें फ्रांसीसी, जर्मन, जापानी, रूसी साहित्यक बहुत बेसी प्रभाव मैथिलीक आधुनिक लेखनपर अछि। तें पश्चिमी युरोपक समीक्षा-पद्धतिक विशेषताकें बिना बुझने आधुनिक मैथिली साहित्यक समालोचना नहि कयल जा सकैत अछि।

आजुक मैथिली समालोचना दुनू आँखि मुनने अछि। ओकर परम्परावादी भारतीय आँखि जाहिमे संस्कृतक दीर्घ परम्परा छैक, आब काज नहि कऽ रहल छैक। दोसर आँखिक काज करतैक पाश्चात्य समीक्षाक व्यापक आ नित्य परिवर्तनशील स्वरूप, तकरा अंगीकार करबाक लेल घाम चुअयबाक ओकरा एखन धरि पलखति नहि भेटलैक अछि। तें आजुक मैथिली समीक्षा बहुत दुर्बल आ निराधार अछि। आजुक समीक्षकके प्रत्येक लेखमे आधा भाग अपन मानदण्ड परिभाषित करबामे लागि जाइत छैक आ शेष आधा भागकें ओ समीक्ष्य कवि आ कृतिकें ओहि मानदण्डपर भजारबामे लगा दैत अछि। एना जँ

होइत रहल, तँ ने कहियो एक गोट समीक्षा-मानदण्डे बनि पाओत आ ने मैथिली समीक्षाक क्रमबद्ध सूत्रपातो संभव भऽ पाओत।

एखन धरि मैथिली साहित्यक समीक्षा-शास्त्र लिखल नहि गेल आ ने आइ ओकर आवश्यकते बूझल जा रहल अछि। आ ने, तेँ ओकरा लेल कोनो प्रयास आइयो भऽ रहल अछि।

आइ धरि समीक्षाक नामपर जे प्रयास भेल अछि, ओकरा कवि-परिचय कहल जा सकैत अछि। जँ पोथीक उल्लेख भेल अछि, तँ ओकर सूचीपत्र पर विचार भेल अछि अथवा कथानकक चर्चा कऽ देल गेल अछि। एकरा सभकेँ समीक्षा कहयामे सभकेँ संकोच होयत।

एखन धरि जे समालोचना उपलब्ध अछि, से संतोषजनक नहि अछि। पुरान कवि सभक मादे जे किछु मैथिलीक इतिहासकार कहैत छथि, से पिष्टपेषण थिक। प्रत्येक उत्तरवर्त्ती समीक्षक अपन पूर्ववर्ती समीक्षकक विचारकेँ अविकल ग्रहण करैत गेलाह अछि। ई लोकनि ओहि विचार सभक खण्डन, पुनर्विचार आ पुनर्मूल्यांकन करबाक श्रमसँ अपनाकेँ बचा लेलनि अछि। ओ लोकनि जेहो विचार कयलनि अछि, सेहो विचार बहुत उथर पल्लवग्राही अछि। आ मैथिली साहित्यक इतिहासकारलोकनि आधुनिक कालक लेखकलोकनिक नामो अशुद्ध लिखलनि अछि, तेहन-तेहन नाम गनौलनि अछि जे बसातेमे अछि, माटिपर नहि अछि। एहनो भेलैक अछि जे जायज लोककेँ दबाओल गेल अछि आ कतहु नाजायजो लोककेँ कान्हपर चढ़ाओल गेल अछि। इतिहासकारलोकनि जे एहि प्रकारक अनियमितता देखौलनि अछि, तकर कारण अछि जे ओ लोकनि बिना पढ़नहि अपन दायित्वसँ फुर्सति चाहलनि अछि, अथवा ओ लोकनि जँ थोड़-बेस पढ़बो कयलनि अछि, तँ ठीकसँ विचार नहि कयलनि कछि। तेसर कारण ई भऽ सकैत छैक जे ओ गोत्रवादी संकीर्णतामे डूबल छथि। अपना-अपनी कऽ ओ बैसिलाक धार अपना दिस करबामे एखन हरान छथि। कोनो साहित्य जहिया धरि अपरिपक्व रहैत छैक, तहिया धरि अपना गोतियाक अधलाहो वस्तुकेँ नीक कऽ बुझैत छैक। साहित्य परिपक्व होइत छैक, तखने उदारता अबैत छैक आ तखन नीक साहित्य कतत्रो अनचिन्हार कोनसँ आयल हो, तकरा महत्त्व देल जाइत छैक।

समालोचक लोकनिकेँ पढ़बाक श्रम करऽ पड़तनि। हुनका लोकनिकेँ अपन मौलिक विचारक संङ लेखकोक मौलिक विचारकेँ फरिछाबऽ पड़तनि आ तकर बाद उदार भऽ कऽ नीक वस्तुकेँ नीक कहऽ पड़तनि। ओ अधलाह वस्तुकेँ अधलाह कहताह, मुदा से हुनका सहानुभूतिक संङ कहऽ पड़तनि।



मैथिलीक निबन्ध साहित्य

डा० अमरनाथ झा

ई एकटा असाधारण विषय थिक जे मैथिली भाषामे उपलब्ध सर्वाधिक प्राचीन ओ प्रामाणिक रचना निबन्ध साहित्यहि थिक। भारतवर्षक अन्य कोनो भाषा साहित्यमे आदि रचनाक रूपमे निबन्ध नहि भेटैत अछि। चौदहम शताब्दक पूर्वार्द्ध हिमे कविशेखराचार्य ज्योतिरीश्वर ठाकुर जाहि 'वर्णरत्नाकर' नामक ग्रन्थक रचना कएने रहथि तकरा निबन्ध साहित्यक वस्तु मानबामे हमरा कनेको तारतम्य नहि अछि। पाश्चात्य साहित्यविद् जॉनसन निबन्धक परिभाषा करैत कहने छथि जे ई "मानसिक ऊहा-पोहक असम्बद्ध रूप" थिक। से एहि ग्रन्थमे उपलब्ध वर्णनमे नीक जकाँ परिलक्षित होइत अछि। जीवनमे अनुभूत विविध विषयवस्तुक प्रसङ्ग गद्यबद्ध ऊहापोह एहि रचनामे अभिव्यक्त भेल अछि जाहिमे लेखकक व्यक्तिगत रुचि ओ ज्ञान सर्वत्र परिलक्षित अछि, आओर तें एकरा सबकें निबन्ध (essays) संज्ञा नीक जेकाँ देल जाए सकैत अछि। ज्योतिरीश्वर जाहि-जाहि वस्तुक वर्णन कएने छथि ताहि-ताहि प्रसङ्ग जीवनमे जे-जे अनुभव लोकके सामान्यतः होइत छैक तकरा कतहु सरल एवं कतहु अलंकृत भाषामे अभिव्यक्त कएने छथि तथा वर्णनक केन्द्रविन्दु सतत ओएह एक पदार्थ थिकनि। देवस्थान, राजप्रासाद, नगर, पर्वत, सरोवर, ऋतु, भोजनबिन्यास आदि विविध पदार्थ पर अपन ज्ञानकें संक्षिप्त गद्यमे अभि-व्यक्त कएल गेल अछि। डा० सुनीति कुमार चटर्जी एकरा कोषग्रन्थक लक्षणसँ सम्पन्न जे मानने छथि से आंशिक रूपें यथार्थ रहितहु एहि रचनामे वर्णनात्मक वा परिचयात्मक निबन्धक भावहिक प्रमुखता अछि। एतवा सत्य थिक जे एकर भाषाशैली भिन्ने प्रकारक अछि, वाक्य सब पूर्णरूपमे नहि रहि अत्यन्त संक्षिप्त रूपमे, सूत्रात्मक रूपमे अछि, तथापि ई निबन्ध रचनहिक निकटतम अछि आओर तें एकरा ताही विधाक अन्तर्गत उल्लेख करब उचित थिक।

किन्तु वर्णरत्नाकरक पश्चात् दीर्घकाल धरि मैथिलीमे निबन्ध रचना अनुपलब्ध रहल, गीति-रचना सएह सर्वव्यापक भए गेल। निबन्ध रचनाक प्रवाह पुनः तखन प्रवाहित भेल जखन आधुनिक युगक सूत्रपात भेला पर पत्रपत्रिकाक प्रचार आरम्भ भेल। वर्त्तमान शताब्दक आरम्भिक चरणमे मैथिलीभाषामे पत्रकारिताक आरम्भ भेला पर ओहिमे प्रकाशनक हेतु गल्प ओ कविताक संग-संग निबन्ध रचनहुक आवश्यकता होअए लागल आओर अनेकानेक लेखक ताहि आवश्यकताक पूर्तिमे संलग्न भए गेलाह।

एहि आरम्भिक चरणमे 'मैथिल-हितसाधन', 'मिथिलामोद' तथा 'मिथिलामिहिर'—ई तीनि गोट पत्रिका प्रकाशित भेल छल, आओर एहि तीनूमे अनेकानेक निबन्ध प्रकाशमे अबैत रहल। मुदा एहि निबन्ध सबहिक रचनाशैली एवं उद्देश्य वर्णरत्नाकरमे संकलित निबन्धक शैली ओ उद्देश्यसँ नीकजेकाँ भिन्न भए गेल छल। वर्णरत्नाकरमे ज्योतिरीश्वर जीवनमे अनुभूत विषयवस्तु सबहिक परिचयात्मक टिप्पणी मात्र प्रस्तुत कएने रहथि, किन्तु एहि निबन्ध सबमे जीवनपरक विवेचन ओ प्रदर्शन करबाक प्रयासक प्रमुखता अछि। तात्कालिक जीवनमे की सब नीक-अधलाह छल, कोन मार्गक अनुसरण कएला सँ सुख समृद्धि प्राप्त भए सकैत छल, आदि विषय पर विभिन्न स्तर ओ विभिन्न दृष्टिकोणसँ विचार करैत एहि निबन्ध सबहिक रचना होइत छल।

जीवन-यात्राक समालोचना ओ पथनिर्देशनक उद्देश्यसँ लिखल गेल एहि निबन्ध सब पर सम-सामयिक चिन्तन प्रवाहक समुचित प्रभाव यदा-कदा परिलक्षित भए रहल अछि। जाहि समयमे ओ पत्रिका सब प्रकाशित भए रहल छल, से मिथिलाक संग संग समस्त भारतवर्षक हेतु बड़ पैघ संक्रमणक समय छल। एकदिशि तँ भारतक राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्तिक हेतु आन्दोलनक सूत्रपात भए गेल छल, दोसर दिशि अङ्गरेजी शिक्षा दीक्षा ओ पाश्चात्य रहन सहनक लोकप्रियता दिनानुदिन बढ़ि रहल छल। एक दिशि अपन प्राचीन गौरवक पुनरुद्धारक हेतु प्रयास भए रहल छल, तँ दोसर दिशि वैज्ञानिक प्रगतिक परिणामस्वरूप परम्परागत रीति नीतिकेँ रूढ़ि ओ अन्धविश्वास बूझि उपहासक भावसँ देखल जाए लागल छल। एहि प्रकारेँ विभिन्न विरोधी भावक संक्रमणक कारण एहि अवधिमे प्रकाशित निबन्ध सबहुमे परस्पर विरोधी स्वर ध्वनित होइत रहल। उदाहरणस्वरूप 'मिथिलामिहिर' ओ 'मिथिलामोद'मे प्रकाशित किछु निबन्ध देखल जाए। मैथिलमहासभाक स्थापनाक थोड़बे समय पश्चात ओकरा द्वारा ई प्रस्ताव पारित भेल छल जे मिथिलाक सर्वांगीण उन्नतिक हेतु अन्य प्रयासक संग-संग अङ्गरेजी शिक्षाक प्रचार सेहो कएल जाए तथा स्त्री शिक्षाकेँ प्रोत्साहित कएल जाए। एहि प्रस्तावक समर्थनमे 'मिथिलामिहिर'मे निबन्ध ओ भाषण सबहिक प्रकाशन भेल छल। किन्तु तकर प्रतिक्रियामे 'मिथिलामोद'मे (उद्गार ५९, शाके १८३३ मे) केदारनाथ झाक 'प्राचीन ओ नवीनक विवाद' शीर्षक निबन्ध प्रकाशित कएल गेल छल, जाहिमे मिथिलेश ओ मैथिल महासभा द्वारा संस्कृतक अपेक्षा अङ्गरेजीकेँ अधिक मान्यता देल गेलाक प्रवृत्ति पर व्यंग्य कएल गेल छल। तहिना जखन पं० वुद्धिनाथ झा 'उन्नतिसोपान' शीर्षक निबन्धमे (द्रष्टव्य : मिथिलामोद, उद्गार ८८, माघ शाके १८३५मे) प्राचीन मिथिलाक गौरवशालिनी नारी भारती ओ लखिमाक परम्पराक चर्चा करैत स्त्रीशिक्षाक समर्थन कएने रहथि तँ निबन्धक अन्तमे सम्पादकीय टिप्पणी द्वारा एहि विचारधाराक जे उपहास कएल गेल छल ताहिसँ सम्पादकक रूढ़िबद्धताक दिग्दर्शन होइत अछि। सम्पादकीय टिप्पणीमे अछि—

"वस्तुतः आइ काल्हि ई शब्द ओहूने जेहन आर्य समाज शब्द/शब्दार्थ तँ दूषित नहि किन्तु ओर विषय स्वबुद्ध्या बुझितहि छी, बकलेलि, छहलेलि ककरा अपेक्षित, से शिक्षा होओ, परन्तु औ पण्डितजी, काँखतर 'किताब' दाबि 'इसकूल' वा 'उसकूल' जाएब एखन पुरुषहिमे रहो, पश्चात अपनेहिक।"

स्पष्ट अछि जे सम्पादक महोदय कन्याक हेतु एतबे अपेक्षा रखैत रहथि जे ओ बकलेलि, छहलेलि नहि होथु, मुदा स्कूल-कालेज जाए शिक्षा प्राप्त करबाक विचार हुनका हेतु ओहूने असह्य रहनहि जेना

स्वैरिणी भए जाएब। 'इसकूल' वा 'उसकूल' जाएब एखन पुरुषहि मे रहौ, पश्चात अपनेहिक।"— ई कटु व्यंग्योक्ति ताही दिशि लक्ष्य कए रहल अछि। 'स्कूल' शब्दकें विकृत कएकें 'इसकूल वा उसकूल' प्रयोग करबामे सम्पादकके श्लेषमूलक व्यंग्य द्वारा स्वैराचार दिशि संकेत करब उद्देश्य छलनि। 'मिथिलामोद' सदृश पत्रक सम्पादक मुरलीधर झाक लेखनीसँ अभिव्यक्त एहि प्रकारक रूढ़िवादी विचार सँ ओहि मनोवृत्तिक परिचय भेटि रहल अछि जाहिसँ समाजक किछु वर्ग जकड़ल छल। ततबे नहि। आगाँ जाए उद्‌गार ९२मे शशिपाल झा द्वारा लिखित 'स्त्रीशिक्षा विमर्श' शीर्षक निबन्ध प्रकाशित कएल गेल रहए जाहिमे स्त्रीशिक्षासँ सम्भावित दोष सबहिक गणना विस्तारपूर्वक कएल गेल छल।

एतावता ई मानल जाए सकैत अछि जे एकदिशि नवीन विकासक समर्थनमे निबन्ध सब लिखल जाइत छल तँ दोसर दिशि 'मिथिलामोद'मे तकर प्रतिक्रियात्मक भावनायुक्त निबन्ध सब सेहो प्रकाशित कएल जाइत छल।

एहि शताब्दीक चारिम दशकमे मैथिलीभाषाक पत्रकारितामे नवीन प्रवाह आएल आओर अनेकानेक नवीन-नवीन पत्रिका सबहिक प्रकाशन आरम्भ भेल जाहिमे भारती, श्री मैथिली, विभूति, मैथिली साहित्यपत्र आदि विशेष महत्त्वपूर्ण अछि। तावत धरि मैथिल महासभा ओ मैथिली साहित्य परिषद्‌क प्रयासक परिणामस्वरूप मिथिला-मैथिल-मैथिली सम्बन्धी गौरव भावना जोर पकड़ि लेने छल। संगहि महात्मा गाँधीक नेतृत्व देशमे प्रसिद्धि प्राप्त कए गेल छल, राष्ट्रवाद ओ स्वातन्त्र्यक भावना सेहो जड़ि पकड़ि लेने छल तथा रूसक साम्यवादी क्रान्ति एवं प्रथम विश्व महायुद्ध घटित भए गेल छल। तेँ उपर्युक्त पत्रिका सबमे मिथिला मैथिल ओ मैथिलीक अभ्युत्थान विषयक निबन्ध सबहिक प्रकाशन प्रमुखतापूर्वक होइत रहल, संगहि यदाकदा राष्ट्रीय ओ अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधि पर सेहो रचना होइत रहल। १९३६ ई० मे मिथिला मिहिरक एकटा विशेषांक प्रकाशित भेल जकरा मैथिली साहित्यक इतिहासमे विशिष्ट गौरव छैक। मिथिला मिहिरमे तावत मैथिलीक संग संग हिन्दी भाषाक सेहो समावेश रहैत छल आओर एहि मिथिलाङ्कमे मैथिली ओ हिन्दी दुनू भाषामे मिथिला, मैथिल ओ मैथिली सम्बन्धी उच्चकोटिक रचना सब प्रकाशित भेल छल। मैथिली खंडमे प्रकाशित निबन्ध सबमे म० म० डा० सर गङ्गानाथ झा लिखित 'मिथिलाक गति', म० म० बालकृष्ण मिश्र लिखित 'दार्शनिक मिथिला', डा० अमर नाथ झा लिखित 'मैथिली एवं हिन्दी' 'म० म० डा० उमेश मिश्र लिखित 'मिथिला-मैथिल-मैथिली', म० म० मुकुन्द झा बख्शीक 'मिथिला आओर कर्मकाण्ड', पं० जीवनाथ रायक 'मैथिली लिपि', डा० भवनाथ झाक 'मिथिला और स्वास्थ्य रक्षा', हरिनन्दन ठाकुर 'सरोजक 'मैथिलीमे नाटक', धनुषधारी दासक 'जानकी महोत्सव', डा० सुधाकर झा 'शास्त्री'क 'मैथिलीक विषयमे दुइ शब्द', नरेन्द्र नाथ दासक 'मिथिलेश लोकनिक मैथिली कविता', भोलालाल दासक 'मैथिली भाषाक रूपमे', पं० त्रिलोचन झाक 'आचार ओ विचार' शीर्षक विशेष उल्लेखनीय अछि। ई निबन्ध सब तात्कालिक मिथिलाक प्रतिनिधि विद्वान लोकनिक द्वारा सारगर्भित ओ सुसम्बद्ध रूपमे अभिव्यक्त विचार छल। एहिमे किछु निबन्ध यथा म० म० डा० गङ्गानाथ झाक 'मिथिलाक गति', डा० अमर नाथ झाक 'मैथिली एवं हिन्दी' लेखकक स्वकीय विचार-प्रवाह छल आओर किछु लेख यथा म० म० डा० उमेशमिश्रक 'दार्शनिक मिथिला', नरेन्द्र नाथ दासक 'मिथिलेश लोकनिक मैथिली कविता' वस्तुनिष्ठ अध्ययन छल। एवं प्रकारें

आत्मानुभूति एवं वस्तुनिष्ठ अध्ययन—एहि दुनू प्रकारक विषय पर प्रौढ़ निबन्ध रचना मैथिलीमे प्रकाशित होअए लागल छल ।

मुदा ई बात निर्विवाद अछि जे उपर्युक्त निबन्ध सब अधिकांशतः सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा स्वास्थ्य विषये दिशि उन्मुख रहैत छल । राष्ट्रीय ओ अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमे जे राजनैतिक ओ आर्थिक क्रांति चलि रहल छल ताहि विषय दिशि कमे रुचि रहैत छल । 'मिथिला मोद'मे ताहि सब विषय पर जे लिखल जाइत छल ताहि सबमे अधिकाशतः प्रतिक्रियावादी स्वर सएह रहैत छल, निबन्ध जे कदाचित् प्रगतिवादी रहितहु छल तँ सम्पादकीय टिप्पणी द्वारा ताहि पर बड़ तीक्ष्ण प्रतिक्रियावादी व्यंग्य कएल जाइत छल; परिणाम स्वरूप प्रगतिबादी लेखक लोकनिकेँ दोसर निबन्ध प्रेषित करबाक उत्साह मन्द भए जाइत छलन्हि । मिथिलामोदक स्त्री शिक्षा विषयक निबन्ध पर सम्पादक द्वारा जाहि प्रकारक कटु व्यंग्य प्रकाशित कएल गेल छल से तकर अकाट्य प्रमाण थिक ।

तथापि जखन भुवनेश्वर सिंह 'भुवन' मुजफ्फरपुर सँ 'विभूति' नामक मासिक पत्रक सम्पादन करए लगलाह तँ ओहिमे राजनैतिक विषयहु पर निर्भीक ओ क्रान्तिकारी भावयुक्त निबन्ध सब प्रकाशित होइत रहल; यथा मइ १९३७क 'राज्याभिषेक' अङ्कमे 'विभूतिकण' शीर्षकक अन्तर्गत 'नवीन' नामक लेखकक जे लघुनिबन्ध सब प्रकाशित अछि ताहिमे तात्कालिक जनसमाजक नारकीय यन्त्रणा दिशि संकेत करैत नवाभिषिक्त सम्राट जार्ज पञ्चक ध्यान एहि देशक राजनैतिक सुधार करबा दिशि आकृष्ट कएल गेल अछि संगहि चन्द्रगुप्त ओ अशोकक चर्चा द्वारा बिहार प्रान्त निवासीमे स्वराज्यक महत्व दिशि ध्यानाकर्षण कएल गेल अछि । ई राज्याभिषेक अङ्क बृटिश सम्राट जॉर्ज पञ्चक राज्यारोहणक अवसर पर औपचारिकताक रक्षार्थ प्रकाशित भेल छल तथापि एहिमे तात्कालिक दुःस्थिति आ अतीतक गौरवक जेहन वर्णन कएल गेल अछि ताहिसँ समष्टि भावेँ क्रान्तिक ध्वनि प्रकाशित भेल अछि। एहि विभूतिक सम्पादकीय लेख सब सेहो निबन्ध रूपहिमे रहैत छल आओर ओहिमे अधिकांशतः क्रान्तिहिक स्वर मुखरित होइत रहैत छल । छद्मनाम सबहिक द्वारा सेहो ओहिमे अनेकानेक क्रान्तिकारी विचारक निबन्ध सब प्रकाशित होइत छल, जेना अप्रैल १९३७ ई० क अङ्कमे 'सुदूरदर्शी' द्वारा 'देशदर्शन' शीर्षकक अन्तर्गत तीनि गोट लघु निबन्ध यथा, (१) नवीन शासन विधान (२) स्त्री लोकनिक साम्पत्य अधिकार तथा (३) अबीसीनियाक बात ।) एहि निबन्ध सबमे तात्कालिक राष्ट्रीय ओ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति तथा अर्थनीति पर विचार मन्थन कएल गेल अछि ।

विभूतिमे राजनैतिक ओ क्रान्तिकारी विचारक निबन्ध सबहिक संग संग सांस्कृतिक ओ गवेषणात्मक निबन्ध सबहिक सेहो अभाव नहि रहैत छल । यथा प्रो० के० बी० पाठक लिखित 'कालिदासक समयमे हूण' (अप्रैल १९३७ ई०), म० म० मुकुन्द झा बख्शी लिखित 'धर्मभेद' (मार्च १९३७ ई०), प० मधु सूदन मिश्र लिखित 'सनातन धर्म' (जून १९३७ ई०), श्री वाणीविनायक झा लिखित 'लघुताक महत्व' (मार्च १९३७ ई०) शीर्षक निबन्ध सब एहि क्रममे उल्लेखनीय अछि । जे निबन्ध सम्पादकक मनोनुकूल नहि रहैत छल तकर अन्तमे भने सम्पादकीय टिप्पणी द्वारा लेखकक समीक्षा कए देल जाइत छल, किन्तु निबन्ध धरि अविकल रूपेँ मुद्रित कए देल जाइत छल ।

एही मध्य मैथिली साहित्य परिषद् (दड़िभङ्गा) सेहो मैथिली भाषाक अभ्युत्थान हेतु जे प्रयास करैत रहल ताहुसँ मैथिली निबन्ध साहित्यकेँ बड़ प्रोत्साहन भेटैत रहल। भोला लाल दासक सम्पादकत्वमे 'भारती' नामक जे मासिक पत्र प्रकाशित भेल छल से एही परिषद्‌क द्वारा संचालित छल। एहिमे साहित्यिक समीक्षा विषयक अनेकानेक निबन्ध प्रकाशित भेल छल।

मैथिली निबन्ध रचनामे एकटा प्रवाह तखन आएल जखन शिक्षापद्धतिमे एहि भाषाकेँ स्थान भेटब आरम्भ भेल। पाठ्य विषयक रूपमे एकर अध्यापन सर्वप्रथम कलकत्ता विश्वविद्यालयमे सन् १९२१ ई० मे आरम्भ भेल आओर तत्पश्चात् पाठ्यग्रन्थक रचना ओ प्रकाशनमे नवीन गति आबए लागल। १९२२ ई० मे तात्कालिक उपकुलपति सर आशुतोष मुखर्जी वर्णरत्नाकरक हस्तलेखक प्रतिलिपि करबाओल तथा डा० सुनीति कुमार चटर्जी, प० खुद्दी झा ओ गङ्गापति सिंह तकर प्रकाशनक हेतु सयत्न भेलाह। किन्तु होइत-होइत अन्तमे १९४० ई० मे सुनीति कुमार चटर्जी ओ बबुआजी मिश्रक सम्पादकत्वमे कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा एकर प्रकाशन सम्भव भए सकल। एमहर बिहार प्रान्तमे १९१७ ई० मे पटना विश्वविद्यालयक स्थापना भेल, किन्तु दुर्भाग्यवश बहुतो दिन धरि एहि नवीन स्थापित विश्वविद्यालयमे मैथिली भाषाकेँ स्थान नहि भेटि सकल। पश्चात् दड़िभङ्गाक महाराज डा० सर कामेश्वर सिंह जखन मैथिली चेयरक हेतु लाख टाकाक दान देल तखन १९३७ ई० सँ ओहि ठाम, मैथिलीक अध्यापन आरम्भ भेल। आरम्भमे तँ केवल मएट्रिकुलेशन परीक्षामे वैकल्पिक विषयक रूपमे एकर स्वीकृति भेल, किन्तु क्रमशः तकर विस्तार होइत-होइत विश्वविद्यालयक उच्चतम कक्षा धरि, मैथिलीक अध्यापन होअए लागल। शिक्षा पद्धतिमे मैथिलीकेँ स्थान भेटि गेलाक पश्चात् पाठ्य पुस्तकक रचनाक आवश्यकता पड़ए लागल।

पाठ्य पुस्तकक रूपमे अनेकानेक मैथिली पोथी सब जे प्रकाशित होइत रहल ताहिमे निबन्धक समावेश आवश्यक रूपेँ रहितहि छल। एहि क्रममे गङ्गापति सिंह, म० म० डा० उमेश मिश्र, प्रो० रमा नाथ झा, प्रो० हरि मोहन झा, लक्ष्मीपति सिंह, प्रो० सुरेन्द्र झा सुमन, भोला लाल दास प्रभृति विद्वान सब निबन्ध रचनामे प्रवृत्त भेलाह। प्रो० हरिमोहन झाक 'देशाचार' शीर्षक निबन्ध, जे हाइस्कूलक आठम-नवम वर्गक पाठ्य पुस्तक 'लघु मैथिली साहित्य'मे प्रकाशित भेल छल, आधुनिक सांस्कृतिक संक्रमणसँ विमूढ़ युवक लोकनिक हेतु बड़ प्रेरणादायक अछि। एहि निबन्धमे लेखक एहि तथ्यकेँ प्रमाणित करैत छथि जे लोकक आचार-विचार देशक प्राकृतिक स्थितिक अनुसार रहबाक चाही। उष्ण देश निवासी जँ शीत देश निवासीक वेषभूषा ओ आहार-विहारक देखाउस करैत छथि तँ हुनका परिणामतः शारीरिक पराभव होइत छैनि संगहि समय असमय हास्यास्पद सेहो बनैत रहैत छथि। खट्टर ककाक तरङ्ग प्रवाहित कएनिहार हास्यलेखक सामाजिक ओ सांस्कृतिक विषय पर जेहन गम्भीरतापूर्ण विचार व्यक्त कएलनि अछि से मनन करबाक योग्य अछि।

लघु मैथिली साहित्य, नवीन मैथिली साहित्य, मैथिली गद्य कुसुमांजलि, मैथिली साहित्य प्रसून ओ मैथिली गद्य संग्रह आदि पुस्तक पाठ्य ग्रन्थहिक रूपमे प्रकाशित भेल छल, आओर एहि सबमे बहुतो रास विविध रुचिक निबन्ध सब संकलित अछि जे मैथिली साहित्यक महत्वपूर्ण सम्पत्ति थिक।

एव प्रकारें मैथिलीक अन्य काव्य विधा जकाँ निबन्ध रचनहुक विकास एक दिशि पत्र पत्रिका एवं दोसर दिशि पाठ्य पुस्तकक विकासक संग-संग वर्द्धिष्णु भेल अछि। जहिना पत्रकारिताक क्षेत्रमे नवीन विकास भेलाक संग-संग नवीन शैलीक निबन्ध रचना सब प्रकाशमे आबए लागल, तहिना विद्यालयीय वा विश्वविद्यालयीय शिक्षाक्षेत्रमे मैथिली विषयक प्रचार प्रसार बढ़लासँ विविध ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी सामान्य एवं गवेषणात्मक निबन्ध सब प्रकाशित होइत रहल। भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्तिक पश्चात् दुनू क्षेत्रमे प्रगति आयल। पत्रकारिता क्षेत्रमे स्वतन्त्रता प्राप्तिक पश्चात् प्रथम दशकमे प्रो० सुरेन्द्र झा सुमन सम्पादित मिथिला मिहिर (साप्ताहिक), स्वदेश (मासिक), प्रो० कृष्ण कान्त मिश्र सम्पादित 'वैदेही' (मासिक), डा० लक्ष्मण झा द्वारा सम्पादित मिथिला (साप्ताहिक), लक्ष्मीपति सिंह सम्पादित चौपाड़ि (मासिक), बाबू साहेब चौधरी ओ प्रो० प्रबोध नारायण सिंहक मिथिला दर्शन (मासिक) विशेष उल्लेखनीय भेल। तावत धरि विश्वविद्यालयीय शिक्षा पद्धतिमे मैथिली भाषाक पठन-पाठन क्रमशः लोकप्रिय होअए लागल छल आओर तें छात्र एवं अध्यापक लोकनिक रुचि वा आवश्यकताकें ध्यानमे रखैत एहि पत्रिका सबमे साहित्यिक एवं गवेषणात्मक निबन्ध सब विशेष रूपें प्रकाशित होअए लागल। मुदा जें एहि अवधिमे राजनैतिक चेतना विशेष रूपें जाग्रत भए रहल छल, संविधानक अष्टम अनुसूचीमे मैथिलीकें स्थान नहि भेटबाक क्षोभक संग-संग भाषाधार मिथिलाराज्यक स्थापनाक आवश्यकता पर जनमत प्रबल भए रहल छल, तें एहि पत्रिका सबमे तकर प्रतिध्वनि निबन्धादिमे प्रकाशित होइत रहल। डा० लक्ष्मण झाक 'मिथिला' तँ मुख्यतः राजनैतिके पत्र छल। छात्र एवं अध्यापकक रुचिकें ध्यानमे राखि साहित्यिक ओ गवेषणात्मक निबन्ध रचयिता लोकनिमे म० म० डा० उमेश मिश्र, प्रो० रमानाथ झा, डा० सुभद्र झा, प्रो० जयदेव मिश्र, प्रो० बुद्धिधारी सिंह रमाकर, डा० शैलेन्द्र मोहन झा, डा० आनन्द मिश्र, डा० जयधारी सिंह, डा० दुर्गानाथ झा श्रीश प्रभृति विद्वान् उल्लेखनीय छथि। अधिकांश पाठ्य पुस्तक सबहिक सम्पादन प्रो० रमानाथ झाकें करए पड़ल रहन्हि। प्रो० रमानाथ झा स्वयं अनेकानेक गवेषणात्मक निबन्धक रचना करबे कएलन्हि, नगहि बहुतो रास अन्य-अन्य सुयोग्य विद्वान् लोकनिसँ आवश्यकतानुसार विविध रुचिक निबन्ध लिखबैत रहलाह। गद्यशैलीक प्रसंग सेहो हिनक मान्यता किछु विशेष महत्व रखैत अछि जाहि कारण किछु आलोचक हिनका 'मैथिली साहित्यक डाक्टर जॉनसन'क उपाधि देने छथि। अस्तु; प० गिरीन्द्र मोहन मिश्र, प्रो० डा० श्री श्रीकृष्ण मिश्र, प्रो० परमाकान्त चौधरी, प्रो० श्री उमानाथ झा, श्री उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास', प्रो० श्री उपेन्द्र झा, प्रो० डा० श्री दामोदर झा, प्रो० श्री हरिहर झा, प्रभृति कतिपय विद्वान्कें मैथिलीमे निबन्ध रचना हेतु प्रेरित करबाक श्रेय प्रो० रमानाथे झाकें अछि।

स्वातन्त्र्योत्तर कालमे मैथिली साहित्यक अन्य विधाक संग-संग निबन्ध विधामे विकासक जे अनेक चरण परिचालित भेल अछि ताहिमे इण्डियन नेशन प्रेस (पटना) सँ मिथिला मिहिर साप्ताहिक पत्रक नवीन क्रमबद्ध प्रकाशन (१९६० ई० सँ), १९६२ ई०मे दड़िभंगामे स्नातकोत्तर मैथिली विभागक अध्यापनक आरम्भ, १९६५ ई० सँ भारत सरकारक साहित्य अकादेमी नामक साहित्यिक संस्थामे मैथिलीक स्थान प्राप्ति, १९७६ ई०मे बिहार सरकार द्वारा 'मैथिली अकादमी' नामक साहित्यिक संस्थाक स्थापना तथा बिहार लोकसेवा आयोगक परीक्षामे मैथिली विषयक स्वीकृति आदि बड़ महत्व-पूर्ण अछि। पूर्व क्रमागत मिथिला मिहिर, जे दड़िभंगासँ प्रकाशित होइत छल, १९५५ ई० धरि अबैत-अबैत स्थगित भए गेल छल, मुदा १९६० ई० मे नवीन कलेवरक संग पुनः प्रकाशित होएब आरम्भ

भेल। एहि नव क्रममे लेखक लोकनिकेँ यथायोग्य पारिश्रमिक सेहो देल जाएब आरम्भ भेल, परिणाम स्वरूप लेखक लोकनि एहिमे अपन-अपन रचना प्रकाशनार्थ प्रेषित करबामे विशेष आकृष्ट होअए लगलाह। फलतः बहुतो रास नवीन-नवीन लेखक लोकनिक निबन्ध एहिमे प्रकाशित होअए लागल तथा साहित्यिक विषयक अतिरिक्त आर्थिक, राजनैतिक सामाजिक, सांस्कृतिक ओ वैज्ञानिक विषय सब पर सेहो नियमित रूपसँ निबन्ध सब प्रकाशमे आबए लागल।

दड़िभंगामे मैथिलीक स्नातकोत्तर शिक्षणक आरम्भ भेला पर मैथिली पढ़निहार छात्रक संख्यामे एकाएक वृद्धि आबि गेलासँ मैथिलीमे शास्त्रीय आलोचना सम्बन्धी साहित्यिक आवश्यकता सेहो बढ़ि गेल आओर तकर पूर्ति हेतु अध्यापक लोकनि बड़ उत्साहपूर्वक ग्रन्थ रचना करए लगलाह। प्रो० रमानाथ झा (अध्यक्ष, स्नातकोत्तर मैथिली विभाग) लिखित प्रबन्ध संग्रह, निबन्ध माला एवं विविध प्रबन्ध, तथा डा० शैलेन्द्र मोहन झा लिखित 'परिचय निचय' नामक आलोचनात्मक निबन्ध संग्रहक परिवर्द्धित संस्करण एही क्रममे प्रकाशित भेल अछि। एहि चारू ग्रन्थकेँ एकत्र रखला पर मैथिली साहित्यक करीब करीब सम्पूर्ण अध्याय पर बड़ गम्भीर शोधपूर्ण निबन्ध सब उपलब्ध भए जाइत अछि। प्रबन्ध संग्रहमे प्रकाशित 'मैथिली नाटक' शीर्षक निबन्धमे मैथिली नाटकक प्रसंग एक नवीन विचार उपस्थित कएल गेल अछि जाहिसँ मैथिली जगतमे नवीन उत्तेजना आबि गेल आओर एहि नवीन उद्भावनाक खंडन-मंडनमे बहुतो रास अन्य निबन्ध सब लिखल गेल, जाहिमे डा० जयकान्त मिश्र, एवं डा० जयमन्त मिश्रक निबन्ध सब विशेष उल्लेखनीय अछि। डा० जयकान्त मिश्र तँ पश्चात् 'कीर्त्तनियाँ नाटक' नामक एकटा पुस्तकहुक रचना प्रो० रमानाथ झाक मतक खंडनमे प्रकाशित कएल। तहिना विद्यापतिक धार्मिक सम्प्रदाय, गोविन्द दासक वंश परिचय एवं कालनिर्द्धारण, मैथिली भाषाक अस्तित्व, नवीन कविताक स्वरूप ओ उपादेयता प्रभृति विषय पर छात्रोपयोगी अनेकानेक निबन्ध सब विद्वान् लोकनिक द्वारा लिखल गेल।

बिहार सरकार द्वारा मैथिली अकादमीक स्थापना भेलाक पश्चात् मैथिली पोथीक प्रकाशनमे बड़ व्यापक क्रान्ति आएल। एहि संस्था द्वारा नियमित रूपेँ मैथिली पोथीक प्रकाशन होअए लागल जाहिमे निबन्ध संकलन सेहो छपल अछि।

एहि अवसर पर चेतना समिति (पटना)क उल्लेख जँ नहि कएल जाय तँ मैथिली निबन्धक विकास कथा अपूर्ण रहि जाएत। एहि साहित्यिक ओ सांस्कृतिक संस्था द्वारा विगत करीब पचीस वर्षसँ प्रतिवर्ष बड़ उत्साहपूर्वक विद्यापति-पर्व समारोहक आयोजन कएल जाइत अछि जाहि अवसर पर एमहर किछु वर्षसँ 'स्मारिका'क प्रकाशन तथा साहित्यिक परिचर्चाक सेहो आयोजन होइत अछि। स्मारिकामे मैथिलीक विभिन्न विद्वान् लोकनिक निबन्ध प्रकाशित होइत अछि तथा परिचर्चामे पठित निबन्ध सब सेहो पुस्तकाकार प्रकाशित होइत अछि। एहि प्रकारेँ चेतना समिति द्वारा मैथिलीक निबन्ध रचनामे गति आएल अछि।

वर्त्तमान कालमे जतेक निबन्ध सब पकाशित भेल अछि ताहिने प्रत्येकक नामोल्लेखपूर्वक समीक्षा करब बड़ विस्तृत भए जाएत, तेँ एहिठाम से नहि कएल गेल अछि, मुदा ताहिसँ ई नहि बुझबाक थिक जे जनिक नामोल्लेख एहिठाम नहि भेल अछि तनिक रचना महत्वपूर्ण नहि अछि।

□

एकला चलो रे

—रमानन्द झा 'रमण'

मनुष्य अन्वेषण प्रिय अछि। एकर अन्वेषण प्रियता एकठाम स्थिर नहि रहैत छै। ओ एकठाम सँ दोसर ठाम जाइत रहैछ। दोसर ठामसँ परिचय पावि लाभान्वित होइत रहैछ। अज्ञात अथवा अल्पज्ञात क्षेत्रक अनुभव सँ केवल एक व्यक्तिए नहि, अपितु सम्पूर्ण मानव जाति लाभ पबैत रहल अछि। ओकर ज्ञानक परिधि विस्तृत होइत रहलैक अछि। यात्रा अनेक प्रवृत्तिक व्यक्ति द्वारा कएल जाइछ। मुदा जखन सर्जनात्मक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति द्वारा यात्रा कएल जाइछ तथा यात्राक क्रममे प्राप्त अनुभवकेँ लिपिबद्ध कएल जाइछ तँ यात्रा साहित्यक निर्माण होइछ।

यात्राक हेतु प्रस्तुत होएबाक तीन कारण भए सकैछ। देश-दर्शन, उच्चतर शिक्षा आ जीविका खोज। आवागमनमे असुविधा रहलो पर लोक देश-दर्शन करैत रहल अछि। मुदा, देश दर्शनक सीमा विस्तृत नहि छलैक। ओ तीर्थाटन धरि सीमित छल। वैज्ञानिक विकास तथा आवागमनक साधनमे सुविधा देश दर्शनक सीमा बढ़ा देलक। ओ केवल तीर्थाटने धरि सीमित नहि रहल। औद्योगिक नगर, जंगल, पहाड़ तथा समुद्र यात्रा धरि व्याप्त भए गेल। ओ माउन्ट एवरेस्ट सँ एंटार्टिका धरि पसरि गेल।

अंग्रेजी शिक्षाक प्रचार-प्रसारसँ पूर्व लोक उच्चतर शिक्षा पएबा लेल काशी जाइत छल। मुदा, आब लोक देशक कोन कथा विदेशहु जाइत अछि। ओहिना मैथिल पण्डित बहुत पहिनहिसँ देशक पैघ-पैघ राजदरबारमे राजपण्डितक पद शोभित करैत अएलाह अछि। आ आब लोक देश विदेश सभ ठाम जाइत अछि। जीविका तकैत अछि। यात्रा तँ पहिनो बहुत गोटे करैत छलाह, किन्तु यात्राक क्रममे प्राप्त अनुभवकेँ लिपिबद्ध करब आवश्यक नहि बुझैत छलाह। एहि प्रसंग डा० दुर्गानाथ झा 'श्रीश' लिखल अछि—

'विदेश यात्रा पहिने अधार्मिक कृति बूझल जाइत छल। मुदा सम्पूर्ण भारतक यात्रा तीर्थाटनक व्याजेँ होइत रहैत छल। एकर अतिरिक्त मिथिलाक विद्वान लोकनि, काशी, बुन्देल खण्ड राजपुताना, नेपाल, बंगाल प्रभृति स्थानमे विद्यार्जन अथवा राज्याश्रय पएबाक निमित्त बराबरि यात्रा करैत छलाह। परन्तु अपन यात्राक अनुभव लिखबाक दिस बड कमगोटे प्रवृत्त भेलाह।' (मैथिली साहित्यक इतिहास पृ०—१८०)

यात्राक साधन अथवा मार्गक अनुसार मैथिली यात्रा साहित्यक विभाजन डा० दिनेश कुमार झा तीन कोटिमे कएल अछि—'जल यात्रा', 'आकाश यात्रा' तथा 'स्थल यात्रा' (मैथिली साहित्यक आलोचनात्मक इतिहास)। किन्तु, यात्राक साधन अथवा मार्गक अनुसार यात्रा साहित्यकें विभाजित कएला पर एकटा विसंगति आबि जाइछ। एक यात्री एकहि यात्राक क्रममे तीनू प्रकारक यात्राक साधनक उपयोग कए सकैछ तथा यात्रा वृतान्त लिखि सकैछ। एहना स्थितिमे तकर वर्गीकरण करब मुश्किल होएत। तें यात्रा साहित्यक विभाजन यात्राक साधन अथवा मार्गक अनुसार नहि कए, भौगोलिक अथवा शासन व्यवस्थाक अनुसार 'स्वदेश यात्रा' एवं 'विदेश यात्रा'मे विभाजन करब विशेष समीचीन होएत। एही प्रकारें स्वदेश यात्राक अनुभवकें लिखलासँ जाहि साहित्यक निर्माण होइछ ओ थिक **'स्वदेश यात्रा साहित्य'** आ विदेश यात्राक वृतान्त भेल **'विदेश यात्रा साहित्य'**।

स्वदेश यात्रा साहित्य :—यद्यपि लोक सभ दिनसँ यात्रा करैत आएल अछि, किन्तु अपन यात्राक वृतान्तकें लिखबाक प्रवृत्ति एही शताब्दीमे विकसित भेल अछि। आ' ई विकसित भेल अछि मैथिली पत्र-पत्रिकाक प्रकाशनक संग। मैथिली पत्र पत्रिकाक प्रकाशन आरम्भ भेलासँ लोक अपन यात्रा वृतान्तकें लिखब आरम्भ कएलक। डा० जयकान्त मिश्र मैथिलीमे प्रथम यात्रा साहित्यकार म० म० मुरलीधर झाकें मानल अछि। हिनक तीनटा यात्रा वर्णनक उल्लेख कएल अछि। प्रथम यात्रा वर्णन थिक—म० म० सुधाकर द्विवेदीक-**काशीसँ जनकपुर यात्रा** (१९१० ई०)। दोसर थिक **'मिथिला मातृभूमिक यात्रा'** (१९१६)। किन्तु, सबसँ महत्त्वपूर्ण मानल जाइछ **'पश्चिमोत्तर यात्रा वा काश्मीर यात्रा** (१९२२)। वस्तुतः ई यात्रा-वर्णन रोचक अछि। एहिमे कश्मीरक पौराणिक ऐतिहासिक सामाजिक वर्णन तँ अछिए संगहि ओहिठामक सांस्कृतिक आ प्राकृतिक शोभाक वर्णन पूर्ण सूक्ष्मताक संग कएल अछि—"राजमार्ग कैहन स्वच्छ, सतत मोटरगाड़ी, साइकिल, पदाति विचित्रे विचित्र छटा, लोक सुन्दर, गौर वर्ण, टहलैत घुमैत देखि पड़ै लागल। दोकान सब बहुत स्वच्छ तथा पश्चात् लोकक तोषामोदार्थ पदार्थ सब विस्तृत शाल दोशालाक कश्मीरमे कथे की ? अनेक जन्तुक सलोम चर्म लटकल। सर्वत्र राजहिक पुलिस प्रबन्धार्थ ठाढ़ जम्बू आ कश्मीरमे कतहु अंग्रेजी प्रबन्ध नहि। परन्तु अंग्रेज] बहुतो डेरा दै रहैत छथि। नाना बाग बगीचा रंग-विरंगक फूलसँ चकमकाइत बड़का बड़का गुलाब माधवीलतासँ छारल, अनेक स्थान अद्भुत सौरभसँ मनके मुग्ध कैं दैत छल। वस्त्राडम्बर पूर्ण, काश्मीरी लोक विचित्र खोल जकाँ पहिरने रहैछ, जे अन्यत्र पंडित नामधारी लोककें पाग पहिरने उक्त खोल के धारण कैने देखल। एतँ दरिद्र मुसलमानहुमे वैह खोल। परन्तु ताहिमे मलेच्छता स्पष्ट झलकैत छलैक। सिक्खो जाति किछु अछि, परन्तु ओ लोक अपन पंजाबी आकरहिमे बूझि पड़ैत छल, गौरवर्ण ओ सुन्दरतापूर्ण, परन्तु व्यापक तथा लावण्य नहि। भाषा की कहू हिन्दी कोनहुना बूझि जाइत छल।" (म० म० मुरलीधर झा—मैथिली अकादमी)। म० म० मुरलीधर झाक बाद यात्रा साहित्यकारक नाममे पं० चेतनाथ झाक नाम अबैछ। हिनक यात्रा वृतान्त—**'जगन्नाथ पुरीक यात्रा'** डा० जयकान्त मिश्र १९१० ई०मे प्रकाशित लिखल अछि। एही क्रममे अबैछ बाबा विद्यानन्द सरस्वतीक डायरीक आधार पर भुवनेश्वर झाक 'मानसरोवर

यात्रा (भारती, मई १९३७ ई०)। ई धरावाहिक रूपमे प्रकाशित भेल। प्रायः पहिले बेर यात्रा वृत्तान्त सचित्र छपल। तकर बाद यात्री जीक **'तिब्बत मे तेरह दिन'** सेहो प्रकाशित भेल।

मैथिलीमे यात्रा साहित्य विषयक पोथीक संख्या बड़ कम अछि। एखन धरि प्रायः तीनटा पोथी प्रकाशित भए सकल अछि श्रीमती जयन्ती देवीक **'गयायात्रा'**, पं० श्री जीवानन्द ठाकुरक **'श्री बदरीनाथ यात्रा'** तथा डा० सीताराक झा 'श्याम'क **'भारत भ्रमण'**।

'गया यात्रा' पोथीमे गया यात्राक वर्णनक संग गयाक महत्वक उल्लेख अछि। दोसर पोथी **श्री बदरीनाथ यात्रा**'मे अक्टूबर १९५२ ई०मे महाराज कामेश्वर सिंह द्वारा कएल गेल यात्राक विस्तृत वर्णन अछि। यात्रा सम्पन्न भेल १९५२ ई०मे, वृतान्त लिखायल १९६२ ई०मे आ पोथीक प्रकाशन भेल १९७९ ई० में। ई यात्रा आरामपूर्वक तेइस दिनमे सम्पन्न भेल। तें हरिद्वारसँ बदरीनाथ धरिक यात्राक पूर्ण विस्तारक संग वर्णन कएल गेल अछि। स्थान स्थानक ऐतिहासिक, धार्मिक महत्त्वोक प्रतिपादन विद्वान लेखक करैत गेलाह अछि। एहि क्रममे तेसर आ नवीनतम पोथी अछि—'भारत भ्रमण'। भारत भ्रमणमे डा० श्यामक २७ टा यात्राक वृत्तांत संगृहीत अछि। एहि वृत्तान्तमे शक्तिपीठ श्री वैष्णोदेवीसँ लऽ कऽ सांस्कृतिक तीर्थ सौराठ सभा धरिक वर्णन तँ अछिए संगहि नवनिर्मित भारतक आधुनिक तीर्थ महानगर-औद्योगिक नगर यात्राक अनुभव सेहो अछि।

एहि तीनू पोथीक अतिरिक्त अधिकांश यात्रा साहित्य विभिन्न पत्र-पत्रिकामे छिरिआएल अछि। 'सोनामाटि'मे यात्रा साहित्यक प्रकाशन हेतु एक पृथक स्तम्भ छल। जकर अन्तर्गत श्री यायावरक 'सहरसा सांस्कृ- आलिंगनमे' गंगेश गुंजनक 'सहरसा हमर प्रणाम' आदि महत्वपूर्ण प्रकाशन भेल। छिटफुट प्रकाशित यात्रा वृतान्तमे किछु प्रमुख अछि—डा० दामोदर झाक 'भाखरा नंगल ओ ज्वालामुखी, नैना देवीक दर्शन' एवं 'शक्तिपीठ चिन्त्यपूरणी ओ ज्वालामुखी दर्शन' (मि० मि० ३-६-७२) डा० उमारमण झाक दक्षिणक तीर्थ यात्रा (मि० मि०) तथा अमरनाथ यात्रा (मि० मि०) श्रीदेवक श्री वैष्णोदेवी (मि० मि० २५-६-७८) डा० गिरीश चन्द्रक—'किछु काल एलिफेन्टा पर' (मैथिली अकादमी पत्रिका फरबरी-मार्च १९८१) तथा रमानन्द झा रमणक 'एकला चलो रे" (मि० मि० जनवरी ७७) डा० गंगेश गुंजनक राजकमलक ग्राम—**'जानकीसँ जानकीधरि'** (मि० मि० ४ मई १९७५) मे महान साहित्यकार राजकमलक गामक यात्राक अनुभव अछि। कोनो साहित्यकारक ग्रामक यात्राक प्रायः ई प्रथमे यात्रा-साहित्य थिक।

विदेश यात्रा—एहि शताब्दीक तेसर दशकसँ पूर्व स्वदेश यात्रा तँ तीर्थाटन आदिक व्याजे लोक करितो छल। किन्तु, समुद्र पार कए विदेश यात्रा करब धर्म विरोधी छल। तेँ विदेश यात्राक साहित्य उपलब्ध होएबाक प्रश्ने नहि उठैछ। परन्तु, महाराज कामेश्वर सिंह द्वारा विलैत यात्रा कएला पर किछु वर्ष तेँ ई अधार्मिक काज मानल गेल, मुदा तकर बाद विदेश यात्रा लेल मैथिलक मार्ग सदाक लेल खूजि गेल। आ, आब तँ जेना पहिने लोक उच्च शिक्षा पएबा लेल काशी जाइत छल ओहिना विदेश जाय लागल अछि। एहि कारणेँ यात्रा साहित्यमे सेहो गुणात्मक परिमाणात्मक

परिवर्तन आबि गेल। विदेश यात्रा वृतान्तक क्रममे सर्वप्रथम कुमार गंगानन्द सिंह बिलेतसँ घुमला पर विदेश यात्राक अपन अनुभव लिखल। मुदा फेर किछु वर्ष धरि एहि कोटिक साहित्यक सृजन नहि भेल। आ एहि प्रतिरोध के तोड़ल डा० सुभद्र झा। डा० सुभद्र झाक 'हमर विदेश यात्रा' शीर्षक नामसँ १९४६-४७मे पेरिस, जर्मनी एवं स्वीटजरलैण्डक यात्रा वृतान्त प्रकाशित भेल। एकर धारावाहिक प्रकाशन 'मिथिला मिहिर'मे प्राय: २० सप्ताह धरि होइत रहल। तथा एहि यात्रा वर्णनक पुस्तकाकार प्रकाशन 'प्रवास जीवन'क नामसँ १९५० ई०मे भेल। एहि प्रकारसँ विदेश यात्रा साहित्यक 'प्रवास जीवन' प्रथम पोथी थिक। प्रवास जीवनक प्रसंग आचार्य रमानाथ झा लिखल अछि —'कोन रुपक ई उपदेशप्रद ओ मनोरंजक सिद्ध भेल से 'मिहिर'क पाठकके अविदित नहि अछि। दू वर्ष धरि, प्राय: ९० सप्ताह धरि ई मिहिरमे प्रकाशित होइत रहल ओ गोटेक हजार पृष्ठक अन्दाज समस्त भेल होएत'' (प्रवास जीवन-प्राक्कथन)। विदेश यात्रा वृत्तान्तक प्रकाशनक क्रममे डा० सुभद्र झाक दोसर पोथी थिक 'यात्रा प्रकरण शतक'। एहि पोथीमे एक सए यात्रा प्रकरणक रोचक, संगहि सूचनात्मक वर्णन अछि।

विदेश यात्राक दोसर पोथी थिक उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास'क '**विदेश भ्रमण**'। १९५८मे लेखक द्वारा कएल गेल अमेरिका यात्राक वर्णन अछि। एकर सर्वप्रथम प्रकाशन वैदेहीक फरवरी, मार्च आ मई तथा जुलाई १९५९क अंकमे भेल। आ पुस्तकाकार प्रकाशन १९७८ ई०मे भेल अछि। व्यासजी अभियंत्रणामे प्रशिक्षण प्राप्त करबा लेल गेल छलाह तेँ हिनक यात्रा वृतान्तमे अपन ओहि विषयक प्रति लेखक वर्णन सेहो करैत गेलाह अछि। एहि प्रसंग स्वयं ओ लिखल अछि—'अमेरिकामे हमर प्रशिक्षण छल अभियंत्रणा विषयक। तेँ यात्रा वृतान्तक क्रममे प्रशिक्षण कार्यक महत्त्वपूर्ण अभियंत्रणो विषय सभहिक वर्णन उचित स्थल पर देल गेलैक अछि।'

एहि क्रममे तेसर पोथी अछि डा० जगदीश चन्द्र झाक 'सात समुद्रक पार'। एकर प्रकाशन १९६९मे भेल। एहिमे डा० झाक इंगलैण्ड एवं अन्य यूरोपीय देशक यात्राक वर्णन अछि। लेखक अनेक वर्ष धरि वेस्टइण्डिजो मे छलाह। ओहुठामक यात्रा आ अनुभव वर्णन 'मिथिलामिहिर'मे प्रकाशित होइत रहल अछि। (वेस्ट इण्डिजक संस्मरण मि० मि० ३१-३-७४ डा० झा इतिहासक विद्वान छथि तेँ हिनक यात्रा वर्णनमे ऐतिहासिक दृष्टि विभिन्न स्थान ओ विभिन्न समस्याक वर्णन भेटैछ। हिनक वर्णन बेश कौशलपूर्ण सूचनात्मक एवं रोचक होइछ। विदेशी यात्रा साहित्यक पोथी प्रकाशनक क्रममे नवीनतम पोथी थिक कथा शिल्पी नगेन्द्र कुमारक 'श्यामली'। लेखक १९५१मे आयरलैण्डक यात्रा कएने छलाह। ओकर वर्णन एहिमे अछि। आ हिनक एहि यात्राक किछु अंश पथचारी नामे पूर्व प्रकाशित भए, बेस चर्चित भेल अछि। 'श्यामली'मे आयरलैण्डक ऐतिहासिक, भौगोलिक, राजनीतिक आ सांस्कृतिक स्थितिक वर्णन खूब बढ़ियाँ अछि। पोथी प्रकाशनक अतिरिक्त विदेश यात्रा वृतान्तक प्रकाशन विभिन्न पत्र-पत्रिकामे सेहो होइत रहल अछि। एहिमे प्रमुख अछि—चतुरानन मिश्रक 'रोम, जेनेवा, पेरिस, लन्दन (मि० मि० ६-७-७५)। एकर अतिरिक्त जाहि यात्रा वृत्तान्तक उल्लेख डा० श्रीश कएल अछि ओहिमे प्रमुख अछि डा० शचीनाथ झाक एडिनवाराक यात्रा (स्वदेश) सरोजकान्त झाक मातृभूमिसँ अमेरिका आदि।

पत्र-पत्रिकाक संख्यामे वृद्धि अथवा नियमित निश्चित प्रकाशन भेलाक बाद यात्रा साहित्यक लेखनमे सेहो वृद्धि होइत गेल अछि। पोथी प्रकाशन दिस सेहो लोक प्रवृत भेल अछि। तथापि यात्रा साहित्यक पोथीक संख्या अखन एक दर्जन नहि भए सकल अछि। मैथिलीक यात्रा साहित्यक अवलोकनसँ एक तथ्य स्पष्ट भए जाइछ जे, जे लेखक जाहि रुचिक छथि से ओही दृष्टिए यात्रा वृतान्त लिखल अछि। तेँ सभक यात्रा साहित्यमे स्पष्ट वैशिष्ट्य छनि।

मैथिली यात्रा साहित्यक वैशिष्ट्यक प्रसंग डा० श्रीशक मान्यता समीचीन प्रतीत होइछ जे १९५०क बाद यात्रा साहित्यक लेखनमे वृद्धि भेल तथा एहि मध्य इतिवृतात्मकता एवं वैयक्तिक अनुभूतिक एहन मणिकांचन संयोग भेल अछि जे मनकेँ मोहि लैछ।



आधुनिक मैथिली कविताक समस्या : सम्प्रेषणहीनता किन्नहु नहि

श्री गंगेश गुंजन

मैथिलीमे साधारणतः आइ काल्हि जे कविता लिखल आ प्रकाशित कएल जाइत अछि से समटा 'आधुनिक कविता' कहि बूझल आ मानल जाइत अछि आ तहिना कवितामे कहल गेल जे किछु पाठक वर्ग द्वारा नहि बूझल जा सकैत अछि, तकरहि आधार मानि कहल जाइत अछि 'आजुक कविता संप्रेषणीय नहि' अर्थात बुझबामे नहि अबैत अछि।

हमरा जनैत दुनू टा मान्यता भ्रामक थिक। एहि दुनूटा मान्यतामे सुव्यस्थित चिन्तन आ तज्जन्य सिद्धान्त निरूपणक प्रवृत्तिक अभाव अछि। एहिमे पूर्वाग्रह अछि आ तें ई अतिवादितासँ ग्रस्त विचार अछि।

वास्तविकता तँ ई अछि जे आइ मैथिलीमे कविताक नामपर जतेक-जे-किछु लिखल-छपाओल आ प्रसारित कएल जा रहल अछि से बहुलांश आधुनिक अछिये नहि। आधुनिकता तिथि वा ईस्वी सूचक शब्द नहि होइछ। बहुलांश आधुनिक अछिये नहि तकर कारण ई जे ओहि सब रचनाक प्रवृत्ति, आधुनिक भाव-बोधसँ, जीवनक यथार्थ तज्जन्य मानवीय संवेदनाक बौद्धिक मर्मसँ, व्यक्त नहि कएल गेल छैक।

तें आजुक कविताक जे वस्तु पाठक, समालोचक कें बुझबामे नहि अबैत छनि से मात्र रचनाकारक अभिव्यक्ति-दोष अर्थात् रचनाक सम्प्रेषणहीन होयब नहि थिक। मैथिलीमे आधुनिक कालमे लिखल अनेक कविता अपन ओहि सभ वैशिष्ट्यक कारणे कविताक कसौटी पर सही, श्रेष्ठ कविता अछि यद्यपि ओकरो पर सम्प्रेषणहीन होयबाक आरोप लगैत छैक।

एकरहि समानान्तर समकालीन पत्र-पत्रिकामे हमरा लोकनिकें बतोक तेहनो कविता भेटैत अछि जकर शब्द-शब्दक अर्थ मामूलियो साक्षर लोकके पढ़ैत कि सुनैत देरी अनेरे लागि जाइत छैक, मुदा ओ कविता अपना अभिव्यक्तिमे साफ सुथरा रहितहुँ अपन कथ्य-वस्तुक दृष्टियें रहैत अछि धरि अनाधुनिके-आधुनिक नहि। किऐक तँ काव्य-प्रवृत्ति आ दृष्टिकोणक धरातल पर ओ बासि-तेबासि, घसल भोथायल कथ्यक पुनर्वक्तव्य मात्र रहैत अछि—चिक्कन चुनमुन आ कलात्मक भने रहओ।

आधुनिकता मात्र कालें प्रवाहक अर्थमे गृहीत नहि होइछ, आ ने दिनांकक बोधक मात्र। आधुनिकता हमरा जनैत मानवीय-चिन्तन, संवेदना आ तकरासँ विकसित जीवन-दर्शनक अद्यतन जानकारी देनिहार

एकटा सामाजिक प्रवृत्ति होइत अछि जे अंशतः अपन काल, पात्र आ देशमे जीवैत तदनुसार अभिव्यक्ति पर्वत चलैत अछि, आ वैह कालान्तरमे संपूर्णतः मानव समाज मात्रमे घटित वैचारिक व्यावहारिक आंदोलनक अंग बनैत रहैल अछि। जन जीवनक साम्प्रतिक जीवन-पद्धतिक स्तर पर प्रचारित होइत अछि। तें हमरा जनैत अत्याधुनिक जीवन-सुविधा सभसँ सम्पन्न, विपुल वैभवसँ भरल पूँजीवादी अमरीकी जीवनक (समान्यतः) आधुनिकता निश्चिते कोनो मैथिल समाजक जीवनक आधुनिकतासँ भिन्न होयबे करतैक। एकरा पाछाँ स्वाभाविक छैक जे एहि युगक सभ क्षेत्रक, सभटा शिक्षाजन्य वैज्ञानिक वातावरणक प्रभाव छैक। आर्थिक, सामाजिक, तज्जन्य राजनीतिक प्रभाव कारणें मनुष्य समाजमे जे प्रवृत्ति जन्म लेलकैक आ विकसित भेलैक अछि से, तथा मात्र धार्मिक कारणें जे प्रवृत्ति कहियो प्रसारित भेल हेतैक ताहिमे स्वाभाविके छैक जे बहुत अन्तर हेतैक। कारण जे दूनू स्तरक अपना अपना विकास क्रमक अपन अपन निजता छैक।

तें हमरा बुझाइत रहैत अछि जे बड़ आसानीसँ, आधुनिकताक अभिप्राय होइछ—आइ काल्हि। मुदा से आइ काल्हि सामान्ये अर्थमे। विशेष अर्थमे आधुनिकता एकटा नव जीवन, परिस्थितिक बोधक शब्द थिक जे साम्प्रतिक सभ रचना-विधामे अपन किछु ने किछु अभिव्यक्ति पावि रहल अछि, संवेदनायुक्त दृष्टिक अभिव्यक्तिक रूपमे।

कवितामे आधुनिकता साधारणतः दू स्तर पर अभिव्यक्ति पवैत अछि—कथ्य आ' सोच, जाहि आकार-प्रकारके कविता बनैत अछि आ' दोसर—भाषा, मुहावराक तेवर आ प्रयोगमे। एहू दुनूक सीधा सीधी सम्बन्ध श्रोता तथा पाठक आ' समालोचकसँ होइत छैक। तें जहिना कवि-कर्मक स्तर पर दुनू समस्या अबैत छैक तहिना पाठक-समाज पर सेहो।

कविक कथ्य कविक हृदय-मस्तिष्क आ अपन अभिव्यक्तिमे ठीकठाक रहैत छैक मुदा पाठकके गम्य नहि होइत छैक तँ पाठक साधारणतः यैह मानि कऽ खौंझाइत अछि जे बुझबा योग्य नहि भेल। सम्प्रेषणीयताक अभाव छैक। दुरूह।

ई सम्प्रेषणीयता कोन प्रकारक ? कथ्य-भावक कि भाषा वा तकर भंगिमाक ?

हमरा जनैत मूल समस्या कविताक सम्प्रेषणीयताक नहि, सम्प्रेषणीयताक स्वरूप के ठीक ठीक नहि बुझि सकबाक छैक। तें स्वाभाविके छैक जे कए बेर, कवितामे व्यक्त अनुभव सँ अपरिचित आ अप्रस्तुत रहलाक कारणके पाठक वा समालोचक अपन सीमा नहि बूझि रचनाकारक वस्तुक दुरूहता मानि बैसैत छथि। किंचितो आयास कऽ कऽ, रुचि लऽ कऽ रचनाक ओहि तथाकथित अस्पष्टता कें बुझबाक कष्ट नहि उठबऽ चाहैत छथि। तें झंझटि ठाढ़ होइत छैक। हमर अपन मान्यता तँ अछि जे एतेक सय वर्षक पाठक श्रोता, सिद्ध कवि विद्यापतिक पर्यन्त सभटा रचना कें संपूर्ण मर्मसँ आइयो, हम त हम, कतोक पंडित विद्वान पर्यन्त बुझबामे अनभिज्ञ रहि जाइत छथि। एकर कारण की ? हमरा जनैत तँ वैह कविक सूक्ष्मातिसूक्ष्म संवेदनाक चेतना-लहरि तथा कविक भाव लोकसँ अनचिन्हार रहब। तें कविक भावलोकसँ परिचित होयबाक लेल ओहि प्रकारक पाठकीय सहृदयताक निर्माण करब अनिवार्य होइत छैक।

दोसर बात ई जे एक-एकटा शब्द स्पष्ट होइत वाक्य सोझ साझ तेहन जे एकटा नव साक्षर लोक पर्यन्त पढ़ि कऽ बूझि लिअय पंडित लोकक कोन कथा, मुदा कएटा कविता लऽकऽ ओहनहु स्थान पर सम्प्रेषणीयताक समस्या उठाओल जयबामे हमरा जनैत मात्र इएह मानसिकता कार्यकऽ रहल अछि अनायास, बाटे घाटे भेंट कऽ ली, नियारि कऽ नहि भेंट करी। तहिना कविता पढ़ि रहल छी आ दतमनि सेहो कऽ रहल छी। वा रेडियो पर संसदक सनसनीक समाचार सेहो सुनि रहल छी आ कवितो घयने की वा सिनेट सिंडिकेटक उठा पटकक 'मनकथो'मे पड़ल छी आ कविता रखने छी सोझांमे। एहना स्थितिमे एहि प्रकारक पाठक वर्ग अपेक्षा करऽ लागथि जे कविताक भाव सेहो आबि जाय, कल जोड़िकऽ सोझांमे ठाढ़ भऽ जाय आ कहऽ लागय जे —"हम कविताक अर्थ आबि गेलहु ।"

एकटा विनम्र निवेदन एहि टिप्पणीमे हम कहब जे आधुनिक मैथिली कवितामे वास्तविकता ई अछि जे बड़ थोड़ रचना आधुनिक अछि। आ' जे अछि ताहिमे सम्प्रेषणक समस्या उठयबामे एकटा पाठकीय सुविधा, मापरवाही आ पूर्वाग्रही मनक निषेधात्मक चरित्र आ तफर प्रवृत्ति काज करैत अछि जे सही रचनात्मकता ओर सहृदय, बुझनुक पाठक-समाजक निर्माणक प्रक्रियाके क्षति करैत अछि।

उदाहरण कवि यात्रीजी सँ लऽकऽ आइ धरिक किछु कदिक रचनाक लेल जा सकैत अछि। मुदा से टिप्पणीकेँ विस्तृत करत, तेँ छोड़ैत छी। हँ, एतबा अवश्ये जे, जेना पाठक-समीक्षककेँ बुझबा योग्य कविताक स्पृहा रहैत छैक तहिना कविकेँ सेहो बुझनुक सवेदनशील पाठक-समीक्षकक अपेक्षा आ प्रतीक्षा रहैत छैक।

तेँ हमरा जनैत एखन आधुनिक मैथिली कवितामे सम्प्रेषणक कोनो खास समस्या नहि छैक। समस्या छैक सम्प्रेषणीयताक स्वरूपसँ अनचिन्हार रहबाक आ आत्ममुग्ध मैथिल पाण्डित्यक, जे अनवधानतहिमे भने, मुदा नवीनतम जीवन तथ्यानुभवसँ एहन वर्गक लोकके अवगत नहि होअऽ दैत छनि। जीवन, विश्व आ समयक अद्यतन वैज्ञानिक विकास तथा चुनौतीसँ अबोध बनल ओ अपनहि सीमित कार्यकलापक दृष्टिबोधक संग, किछु नितांत मामूली मूल्यक सुविधाभोगी उपक्रममे व्यस्त रहैत छथि आ बीच-बीचमे एक बेर कऽ जेना कृपा करैत छथि आ मूड़ी उठाकऽ कवितासँ नाटक धरिक, बारेमे उत्तरदायित्वहीन आ सतही चर्चा कऽ जाइत छथि। आवश्यकता ई छैक जे एकरा कोनो व्यक्ति-स्वभाव नहि बुझबाक चाही एकरा एक प्रवृत्तिक प्रतीक बूझल जयबाक चाही जे वस्तुतः जड़िंयेसँ सर्जनाहीन दृष्टिक प्रतिनिधित्व करैत रहैत अछि आ समय-समयपर अनर्गल भ्रमजाली सेहो पसारैत रहैत अछि—रचनाकारक, समालोचकक आ पाठक-समाजक बीचमे।

थोना आधुनिक मैथिली कवितामे सम्प्रेषणक समस्या ओतबे भरि छैक जतबा कोनहु समयक नव प्रवृत्तिक अभिव्यक्ति माध्यमके कविताके रहैत आयल छैक।

हमर ई वक्तव्य निश्चिते कोनो विद्वान, काव्यशास्त्री मर्मज्ञक नहि, एकटा कविक। तेँ वैदुष्य तत्वक अभाव रहितहु कविक आत्मप्रकाशक एकटा सार्थक उपक्रम लागय से कवि-विश्वास अछि हमर।

कविता : आधुनिक संदर्भमे एकर सार्थकता

श्री कीर्त्ति नारायण मिश्र

आधुनिक सन्दर्भ साहित्यक आधुनिकताबोध कें प्रभावित करैत छैक। साम्प्रतिकता कें इतिहास, भूगोल, विज्ञान, राजनीति सभ अविराम भिजबैत रहैत छैक आ कविक हृदय मानवीय दुःख-दर्द आ निराशापराजय सँ आप्त होइत छैक। कवि बाध्य अछि ओहि भीजल वस्त्र कें धारण करऽक लेल जे कालान्तर मे ओकर आन्तरिक ऊष्मा सँ सुखि कें देशकालक आवरण बनैत छैक। वस्त्रक आर्द्रता आन्तरिक ऊष्मा—दूनूमे मात्र तात्कालिकता प्रतिभासित छैक अन्यथा वस्त्रक धर्म छैक ऊष्मा आ हृदयकेर आर्द्रता अथवा करुणा।

आधुनिकताबोध जातीय ऐतिह्य, युगसत्य आ कालबोध कें आत्मसात कए रचनाकालक निविड़ ऐकान्तिकता आ सृजनशीलता कें अनुप्राणित करैत छैक। ओ रचनाकारक आत्मसंस्कार कए ओकरा सँ नवमूल्यक निर्माण कराबैत छैक।

फैशन लोकक रुचि आ ग्रहणशीलतासँ प्रभावित भए बदलैत रहैत छैक। कोनो आवश्यक नहि जे ओ नव हो, स्वस्थ हो आ सुरुचिपूर्ण हो मुदा ओ प्रचलितसँ भिन्न अवश्य होइत छैक भले ओ पुरातनक पुनरावृत्ति कियैक नहि हो। आधुनिक बोध फैशन नहि थिकैक आ नहि फैशन कें आधुनिक बोधक गरिमा भेट सकैत छैक। व्यवसायमे फैशनकें ध्यानमे राखब आवश्यक छैक आ लेखनमे आधुनिक बोधक, किन्तु आइ वस्तु स्थिति एकर ठीक विपरीत छैक। व्यवसायकें रचनात्मक बनाओल जा रहल अछि आ लेखनकें व्यवसायिक। साहित्यक बहुतरास विधाकेर जेना व्यापक रूपसँ व्यवसायीकरण भऽ रहल छैक, तहिना की कालान्तरमे कवितो केर सेहो भऽ जयतैक ?

स्वयं कविता व्यवसाय पहिनो करैत छलि, मनोरंजन शुल्क ओसुलैत छलि, प्रियाक सूखल बाँहिकें उन्मादक बना दैत छलि, ओष्ठक शुष्कतामे अमृत (!) भरि दैत छलि आ परकीया केर प्रौढ़ शरीरकें कमनीय बना दैत छलि। कविता बेशी काल भ्रम आ उन्मादमे जीवैत रहलि अछि। तें ओकर "मां निषाद् प्रतिष्ठांत्वं ...." बला स्वतःस्फूर्ति शीघ्र समाप्त भऽ गेलैक आ ओ कविक आदेश एवं आवश्यकता अनुसार रूप धारण करऽ लागलि। कविक चरित्र ओकर स्वास्थ्य आ सौंदर्य के प्रभावित करैत रहलैक अछि। विश्व साहित्यमे थोड़बे एहन महान कवि भेटैत छथि जे कविताक जीवनक अन्तिम लक्ष्य बूझि ओकर पवित्रताक रक्षाक लेल आत्माहुति दैत रहलाह अछि।

मैथिली कविताक सङ्ग एकदम दोसर तरहक समस्या छैक। ओ वेसी भाग लिखल नहि जाइत अछि आ थोड़े बहुत लिखलो जाइत अछि तऽ पढ़ल नहि जाइत अछि, जे वर्ग रसास्वादन कऽ सकैत अछि ओ पढ़ि नहि पबैत अछि आ जे वर्ग पढ़ैत अछि ओ रसास्वादनक लेल नहि, चटियाकें पढ़यबाक लेल। रसास्वादन भऽ जयनाय संयोगक बात होइत छैक अन्यथा आजीविकाजन्य बाध्यता प्राय नीरस होइत अछि।

साहित्य अध्यापनक विषय रहलैक अछि तें कविता सेहो न्यूनाधिक पढ़ल जाइत अछि। कवि के लिखऽ काल मंचकें ध्यानमे राखऽ पड़ैत छनि। कविता कोनो कवि सम्मेलनमे सुनाओल जाइत आ कि रेडियोसँ प्रसारित हैत ? कोसंमे लगयबाक लेल आ कि पुरस्कार प्राप्तिक लेल ? एहि तरहक कविताक लेल अनुभव, विचार आ शिल्प गौण पड़ि जाइत छैक, मुख्य भऽ जाइत छैक अवसर। आवसरिक कविता अपन समयमे प्रभावी सेहो होइत अछि। समस्या भऽ जाइत छनि हुनका सभक लेल जे शुद्ध कविकर्ममे विश्वास राखि लिखैत छथि आ साहित्य एवं समाजकें नव दिशा देबाक लेल सर्जनात्मक प्रयोग करैत रहैत छथि। साहित्यकें भजाकें खाय-कमाय बला वर्ग द्वारा बनाओल मिथ्या आ स्वार्थपूर्ण कसौटी पर हुनक रचना जाँचल जाइत छनि किन्तु लेखकीय जिजीविषा एहि सभसँ आहत नहि होइत अछि।

संसारक कोनो भाषामे कविता केर पाठक कहियो वेसी नहि रहल छैक। आइ ज्ञानक दिशा बदलि गेल छैक। लोक बुद्धिसँ चमत्कारिक प्रयोग कए पहिलुक मान्यताकें व्यर्थ सिद्ध कऽ रहल अछि। कवितामे डूबऽक लेल लोककें अवकाश नहि छैक। शास्त्र (Classics) आ चित्रकथा (Comics)क प्रतिस्पर्धामे चित्रकथा मात्र विजयी नहि, ओ सर्वग्राह्य आ सर्वस्वीकृत सिद्ध भेल अछि। शास्त्रक प्रति भ्रामकता आ अविश्वसनीयता बढ़ल जाइत छैक। रोग बढ़ला पर जेना समयसाध्य आयुर्वेदिक चिकित्साक संयम-परहेजमे नहि पड़िकें लोक एण्टीबायोटिक्सक 'कैपशूल' खा लैत अछि, तहिना अपन व्यस्त जीवनमे साहित्यक कैप्सूल ओकरा चाही।

आन-आन भाषामे पाठकक रुचि आ फैशनकें ध्यानमे राखि व्यावसायिक लेखन होमऽ लगलैक तें पाठको केर संख्या अप्रत्याशित रूपसँ बढ़ि गेलैक। मुदा मौलिक साहित्य लेखन केर प्रायः सभ भाषामे एक्के रङ स्थिति छैक। मुट्ठी भरि सुरुचि सम्पन्न पाठक धरि ओ सीमित रहि जाइत अछि। लेखनकें व्यापक स्वीकृति पयबाक लेल मात्र जनमानस आ मानव मूल्यकेर बोधगम्य शिल्पोक अनुसन्धान करऽ पड़तैक। आजुक लेखन, खास कए कविता, अपन एहि सामाजिक दायित्व केर उपेक्षा करैत रहल अछि।

कविता केर सार्थकता ओकर भूमिका पर निर्भर करैत छैक। ओकरा वारांगना अथवा वीरांगना नहि, युगांगना बनयबाक आवश्यकता छैक।

सम्पूर्ण मानव अस्तित्व कवितासँ अभिप्रेरित अछि। ई सृष्टिक सभसँ बड़का सत्य अछि जे कल्पनाक माध्यमसँ हमर अस्तित्वक रक्षा करैत अछि, अन्धविश्वाससँ बहार कए आस्थाधरि पहुँचबैत अछि। आजुक वैज्ञानिक विकास आ भौतिक समृद्धिसँ जाहि जड़ता आ आत्मभीरुताक जन्म भऽ रहल छैक ओहिसँ त्राण दिआकें कविते मनुक्खकें आत्मोत्कर्ष पर पहुँचा सकैत छैक।

श्रेष्ठ कविता कालजयी होइत अछि। ओ चिर नवीन रहैत अछि। सन्दर्भ बदलैत रहैत छैक आ प्रत्येक परिवर्तित संदर्भमे कविता अपन सार्थकता सिद्ध करैत रहैत अछि। सहज लेखन अपन अनुभव अनुभूतिक युगानुकूल अभिव्यक्ति द्वारा लोकके संस्कृत बनबैत रहैत छैक। सार्थक कवितामे कवि स्वयं गौणातिगौण भए काव्य व्यक्तित्वके व्यापक बनबैत अछि कियेक तऽ पाठकके कविव्यक्तित्वसँ नहि काव्यव्यक्तित्वसँ आत्मलाभ होइत छैक।

काव्यव्यक्तित्वक निर्माण कविक आत्मत्यागसँ होइत छैक किन्तु आजुक अधिकांश कवितामे कविकेर साधनासँ बेशी 'अहं' मुखरित होइत छैक।

आधुनिक सन्दर्भमे कविताके आओर बेसी सार्थक सिद्ध कएल जा सकैत अछि जँ कवि कविताके निरर्थक बनाबऽबला तत्वक परित्याग कऽ सकथि। आइ कविताक नाम पर जकर प्रकाशन वाचन आ श्रवण भऽ रहल अछि, ओहिमे सभ कविता नहि थिक। कविकेर व्यक्तिगत आवसरिक विवशताकें कविताक संज्ञा नहि देल जा सकैत अछि। कविता अपन सामाजिक दायित्वक निर्वाह बोधगम्य संप्रेषणीयताक माध्यमसँ करैत अछि। कविकेर अपन आ शिल्पकेर युगानुकूल मशीनीकरण करबाक चाही।

मुद्रणक एही युगमे मिथिला एखनहु एतेक पछुआएल अछि जे नाम मात्रेक पोथी, पत्र-पत्रिका प्रकाशित होइत छैक। कविता लोक धरि गोष्ठी आ सम्मेलनक माध्यमसँ पहुँचैत अछि। ई मिथिलाक ग्राम-संस्कृतिक अनुकूलो पड़ैत छैक। कविके वस्तुस्थिति स्वीकार करैत कविता द्वारा सामाजिक दायित्वक निर्वाह करबाक चाही।

●

मैथिली उपन्यास : दशा आ दिशा

श्री रामानुग्रह झा

भारतीय साहित्यमे 'उपन्यास' नामक कोनो विधा पहिने नहि छल। एतय आख्यान आ आख्यायिका लिखल गेल। भारतीय साहित्यमे उपन्यासक प्रारम्भ अंग्रेजी साहित्यक प्रभावें भेल। जें कि बंगाल सर्वप्रथम अंग्रेजीक सम्पर्कमे आयल, तें सर्वप्रथम १८६२ ई०मे बंगलेमे उपन्यासक रचना भेल। मिथिला आ बंगालक सम्बन्ध बड़ पुरान, तें अंग्रेजी शिक्षाक प्रचार-प्रसार भेला पर बंगला साहित्यक प्रभावें मैथिलियहुमे उपन्यास लिखबाक सूर-सार भेल।

मैथिलीक सर्वप्रथम मौलिक उपन्यासकार के छलाह, ताहि सम्बन्धमे इतिहासकार लोकनिमे मत-भिन्नता छनि। केओ १९१४मे लिखित जनसीदन जीक 'निर्दयी सासु'कें, केओ १९१५मे रचित पं० जीवछ मिश्रक 'रामेश्वर'कें, केओ १९१८मे रासविहारी लाल दास रचित 'सुमति' कें आ केओ बाबू तुलापति सिंह-विरचित 'मदनराज-चरित'कें पहिल उपन्यास कहैत छथि। मुदा, एहि प्रसंग समुचित विवेचनक एखनो अभाव अछि।

मैथिलीक आरंभिक उपन्यासमे प्रमुख अछि—१९२६मे लिखल गेल जनसीदन जीक 'पुनर्विवाह', १९३२मे लिखित किरणजीक 'चन्द्रग्रहण' तथा १९३३मे बाबू लक्ष्मीपति सिंह रचित 'चामुण्डा'। मैथिली उपन्यासक आरम्भ मिथिलाक सांस्कृतिक विघटन कालमे भेल छल, जखन कि परम्परा-पोषित सामाजिक रूढ़ि, केवल मिथिले टामे नहि, समग्र भारतमे डहि ढनमना रहल छल आ नवीन आदर्शवादी विचारक प्रादुर्भाव भऽ रहल छल। एहि समयक उपन्यासमे कलात्मकताक अभाव तें छलैके, संगहि कथाक अनर्गल विस्तार आ दैवसंयोग पर आधारित घटनाक समावेश अधिक छल।

आरम्भिक कालक उपन्यासमे एकटा दिशान्तर आयल प्रो० हरिमोहन झाजीक 'कन्यादान'क प्रकाशनसँ। तत्कालीन मैथिल समाजक विशृंखलित स्वरूप, भग्न नैतिक मान्यता, मृगतृष्णा जेकाँ लोक-चेतनामे आविष्ट पाश्चात्य जीवन-बोध, आधुनिकताक स्वीकृतिमे साहसक अभाव आदि प्रवृत्तिकें अपन पैतृक संस्कारसँ प्रेरित भऽ प्रो० झा 'कन्यादान'क रचना समाजक ओहि महारथी सबहिक लेल कयल, जे कन्याकें जड़ पदार्थवत् दान कऽ दाम्पत्य जीवनक गाड़ीमे सरकसिया घोड़ाक संगे निरीह बाछी जकाँ जोतबामे कनेको ममता वा संकोच नहि करैत छल। पाश्चात्य शिक्षा-संस्कृतिमे

रँगल मैथिल युवक सी० सी० मिश्रा तथा ग्राम्य वातावरणमे पालित-पोषित बुच्ची दाइ, चुनमुन काकी, दुलारगनि पीसी, आवेश रानी, भारथवी माथ आदि पात्रक सरल सुबोध गमैया भाषामे स्वाभाविक चरित्र-चित्रणसँ एकदिस जँ मिथिलाक पतनोन्मुखी विकृति उजागर भेल, तँ दोसर दिस एहि लेल प्रो० झाक आलोचनो भेलनि, आ तेँ १२ वर्षक पश्चात् कन्यादानक बुच्चीदाइकेँ 'द्विरागमन' लिखि कऽ उपन्यासकार सासुर पठौलन्हि। ई भिन्न बात थिक जे 'कन्यादान' आ 'द्विरागमन'क लोकप्रियतासँ मैथिली अपनो भाषा-भाषीक मध्य विस्तार भऽ गेल।

कन्यादानक पश्चात १९३५मे परिमार्जित कथानक आ मैथिल बालिकाक एकटा मनोभावात्मक चरित्र प्रस्तुत भेल कुमार गंगानन्द सिंह विरचित 'अगिलही'मे जे पूर्ण भेल रहैत तँ, आचार्य रमानाथ बाबूक शब्दमे, "मैथिलीक श्रेष्ठ उपन्यास होइत, मुदा अपूर्ण रहला पर मनोविश्लेषण द्वारा चरित्र-चित्रणक कारणेँ आद्या चर्चित उपन्यास मानल जाइछ। यद्यपि हास्यक पुट अहूमे अछि, मुदा से विकृतिमूलक नहि भऽ कऽ प्रकृतिमूलक अछि।"

तत्पश्चात् तीनटा गौरवशाली उपन्यास पर दृष्टि जाइछ—श्री योगानन्द झाक 'भलमानुष', व्यासजीक 'कुमार' आ यात्रीजीक 'पारो'। सजीव चित्रणक अंकनमे विश्वस्त घटना-विन्यासक द्वारा बाह्य क्रिया-कलापक संगहि मानसिक अन्तर्द्वन्द्वक अभिव्यक्ति तथा कथामे भलमानुषी कुलीनताक घृणित धारणाक संगुम्फनसँ तत्कालीन मैथिल आभिजात्यक जाहि दयनीयताक संकेत 'भलमानुष'मे अछि, ताहिसँ एकदिस पाठकक सम्वेदना सिहरि उठल आ दोसर दिस एहि उपन्यासक प्रतिक्रिया स्वरूप शारदानन्द जी 'जयवार' आ अवध नारायण झाजी 'वनमानुष'क रचना कयलनि। एहिसँ भिन्न धरातल पर सुगठित कथानकमे जीवनक विविध पक्षक संतुलित चित्रण आ पात्रक मानसिकताकेँ औपन्यासिक रोचकता प्रदान करैछ व्यास जीक 'कुमार', जाहिमे असफल प्रेमक कारणेँ आजीवन कुमारे रहबाक 'भीष्म प्रतिज्ञा' तथा तज्जन्य पश्चात्तापक मनोदशाक चित्रणमे आधुनिकता आ प्राचीनताक समन्वय स्पष्ट अछि।

वस्तुतः एहि कालक उपन्यासक मूलमे लेखकक प्रतिष्ठित विचारकेँ पल्लवित करबामे कथा आ चरित्रक सार्थकता बुझना जाइत। सुधारवादी दृष्टियेँ लिखित एहि समयक उपन्यासमे युगीन परिवेशक अभिव्यक्ति केँ उपन्यासकारक घटाटोप आदर्श भावना दवा देने छल। अस्तु, मैथिली उपन्यासक क्षेत्रमे जे विलक्षण मानदण्ड यात्री जीक 'पारो' स्थिर कयलक, से 'कुमार' नहि कऽ सकल। मनोविज्ञानक आधार पर पात्रक आत्मामे प्रवेश करबाक जे प्रयोग सर्वप्रथम 'अगिलही'मे कयल गेल छल, तकर परिणति थिक 'पारो'। तेँ एहि उपन्यासमे कथा-प्रेमक आग्रह नहि, प्रेम कथाक आग्रह प्रबल अछि। स्त्री-पुरुषक अवचेतन मनक अवदमित कुंठा जे बिरजू आ ओकर पिसिऔत बहिनिक प्रेमपूर्ण आकर्षणमे झलकैत अछि, से जँ एक दिस सामाजिक प्रतिबन्धकेँ आधारहीन बनबैत अछि, तँ दोसर दिस लोकक अतृप्त काम-वासना जे कुलीनता-अकुलीनताक जर्जर खत्तामे मटिआयल छल, वैवाहिक प्रणय-सूत्रकेँ जोड़बाक हेतु नव धरातल तकैत अछि, तेँ कथा-प्रेमी आग्रही आलोचककेँ बिरजू आ पारोक प्रेम-कथा नहि अरघलनि।

मिथिलामे मध्यवर्गीय परिवारक सबसँ पैघ समस्या छल विवाह। कृषि आ चाकरी द्वारा पेट भरबाक चिन्तासँ अधिक भयंकर छल पेट पोसबाक लेल विवाह करबाक भलमानुषी प्रथा।

परिणामतः बाल-विवाह, बहु-विवाह, अनमेल विवाह आदिसँ लोक-जीवन संकटग्रस्त भऽ गेल छल। 'सोनछड़ी सन हमर बेटी आ तकरा गीउँथमे सिनूर के भरत आबि कए, तँ साठि बर्षक लोलहा? भरि सूप अङोर उझिलि देबैक मुड़हाक चानि पर।'—अनमेल विवाहक विरुद्ध एकटा माइक ई आक्रोश यात्रीजीक दोसर आ सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'नवतुरिया'मे अछि। समाजक छाती पर पटनाक गोलघर जेकाँ ओन्हल घटक-पंजियारक सहयोगेँ अपन छौ टा बेटीकेँ बेचि सातम प्रयासमे अपन दौहित्री बिसेसरीकेँ साठि बर्षक चतुरा चौधरीसँ बिआहि देबाक योजनाकेँ नवतुरिया वर्गक द्वारा विफल बनाकऽ वाचस्पतिसँ ओकर विवाह करायब आ एहि तरहेँ सम्पूर्ण उपन्यासमे समस्या आ समाधान दैत यात्री जी एकटा नव यथार्थक बोध करौलनि।

ओना विवाहक आदर्श पर आधारित प्रणय-व्यापारकेँ सभदिन शारीरिके बुझल गेल, मुदा एहि आदर्श प्रेमक घटाटोप नैतिकताक दिनानुदिन होइत पतनकेँ स्वीकार करबाक चेष्टा पूर्वक उपन्यासकारमे नहि छलन्हि। यात्रीजीक पारोसँ एहि प्रवृत्तिक केवल दिशा सूचित होइछ, मुदा तकर विकास देखैत छी राजकमलक 'आदिकथा'मे। वृद्ध विवाहक परिस्थिति पर आधारित मामी-भागिनक प्रणय-व्यापारक नग्न यथार्थ केँ मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान कऽ अतियथार्थवादी उपन्यास-कार मानव जीवनक असन्तुलन आ असंगतिक उद्घाटन कयलनि। एहि तरहेँ 'पारो' जँ मैथिली उपन्यासक 'माइल स्टोन' भेल तँ 'आदिकथा' स्ट्रीट लाइट। ई भिन्न बात थिक जे मैथिलीक पाठककेँ पारोसँ बेसी कुपच भेलन्हि आदिकथा।

एहिसँ पूर्वक प्रायः सब उपन्यासकार विवाह-वेदीक प्रदक्षिणमे लागल रहि गेलाह। भारतीय स्वतंत्रताक पश्चात सामन्ती प्रथाक उन्मूलनसँ समग्र मैथिल समाजमे जीवनक अन्तर्बाह्य परिस्थिति सँ संघर्ष करैत-करैत जाहि नवीन संस्कारक उदय भेल, जीवनक प्रति सामाजिक आ वैयक्तिक दृष्टिकोणमे जे आधारभूत परिवर्तन आयल, पूर्वक उपन्यासकार ताहि दिस साकांक्ष नहि भऽ कऽ अपन आर्थिक स्थिति आ सांस्कृतिक विघटन सँ अकच्छ रहलो पर पुरना पैघत्वक फाटल बानामे चेफड़ी लगयबामे अपस्याँत रहलाह। ओना यात्रीजी आ राजकमलक पश्चात परम्परा आ मर्यादाक घोघतर सिसकैत स्त्रीगणकेँ अमरजी अपन 'बीरकन्या' आ 'विदागरी'मे, योगानन्द झाजी 'पवित्रा'मे आ प्रो० शैलेन्द्र मोहन झा जी 'मधुश्रावणी'मे समुचित स्थान देलनि मुदा प्रेम आ रोमांसक शारीरिक भूखसँ जखन प्रबल भऽ उठल पेटक भूख आ ताहि लेल अर्थक संचय, तखन लोकक हाथ, पएर, बुद्धि आ हृदय पेटक अथाह समुद्रकेँ भरबाक ओरिआओनमे अपस्याँत भऽ गेल। किछु एहने परिस्थितिमे सोमदेव जी केँ 'चानोदाइ'क विधवाश्रममे वेश्याश्रम चलबऽ पड़लनि। 'ओ एकबेर माथकेँ झमारि कऽ पुनः मंत्र जपब प्रारम्भ करथि—ओम भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्—पाँच सौ टाका, तीन बिगहा खेत, धानक लहलहाइत शीश, एक जोड़ बड़द, जिलेबी साहुक आकृति, ओझाजी, जाया आ महाक वैधव्य वेश'—मायानन्द जीक 'बिहाड़ि, पात आ पाथर'क यैह कथन जीवनक सत्य भऽ गेल। सामाजिक कुरीतिकेँ उन्मूलित करबाक हेतु युवावर्गक संघर्षकेँ चानन ठोप बला टिकझल्ला कोना चकनाचूर कऽ दैत अछि से कहऽ पड़लनि 'शेखर' जीकेँ अपन 'तऽरपट्टा ऊपर पट्टा' उपन्यास मे।

वस्तुतः समसामयिक आर्थिक वैषम्यक स्थितिमे निम्न-मध्यवर्गीय जीवन सर्वाधिक संकटमे छल आ ताहूमे शिक्षित भेलाक कारणेँ सर्वाधिक प्रतिक्रिया मध्यवर्गहिमे व्याप्त छल। तेँ संस्कार, विश्वास

मर्यादा आ जीवन-मूल्यक भयंकर संक्रान्तिक कारणें पति-पत्नी, मामी-भागिन, देओर-भाउज आदिक पारिवारिक सम्बन्ध, स्वार्थ, भ्रष्टाचार, अनैतिकता आदिक नग्न चित्रण पूर्वोक्त उपन्यास सबमे तें भेल, मुदा निम्नवर्गीय जीवनकें आधार बनाकऽ ग्राम्य जीवनक यथार्थक चित्रणमे सर्वप्रथम मैथिली उपन्यासक आकाशमे प्रो॰ धीरेन्द्र जी द्वारा 'भोरुकवा'क उदय भेल। 'असलमे धरती जोतनिहारक थिक हरवाहक थिक, जे धरतीक असल बेटा थिक, जे अपन पसेनासँ धरतीकें पूजइ अछि।'—भारतीय स्वतंत्रताक पश्चात भूमि-सुधारक परिणामस्वरूप आयल नव-जागरणक ई स्वर ललित जी प्रदान कयल 'पृथ्वीपुत्र'मे आ तखन सर्वहारा वर्गक संघर्षक भूमिका प्रस्तुत कयलनि प्रो॰ मायानन्द मिश्र 'खोता आ चिड़ै'मे। यात्रीजीक 'बलचनमा' हिन्दी जगतमे मिथिलाक लोकजीवनकें उजागर कयने छल। आंचलिक उपन्यासक नामे प्रख्यात मैथिलीक ई तीनू कृति उपन्यास-लेखनमे अपन जीवन्तताक लेल महत्त्वपूर्ण मानल जाइछ।

तत्पश्चात् समाजक ज्वलन्त समस्याक वर्णन समकालीन विघटन, पीड़ा, रूढ़ि, जड़ताक प्रति अनास्था, रम्य आ जुगुप्सित मनोदशाक चित्रण, कुण्ठा, नैराश्य, दिशाहीनता आ विद्रोही मनःस्थिति आदिक सामयिक परिवेश आ भाव-बोध पर नव-नव शिल्प आ शैलीमे अनेक उपन्यासक रचना भेल। जीवनक विभिन्न परिस्थितिमे निम्नवर्गक मनोविश्लेषण कयलनि रमानन्द रेणु अपन 'दूध-फूल'मे, शिक्षित युवावर्गक बेकारी आ तज्जन्य दिशाहीनता, कुण्ठामे दबकल, मुदा सुनगैत विद्रोहक स्वर अछि जीवकान्त जीक 'पनिपत'मे, कोनो कुतर-ब्योंतसँ अपन गोटी लाल कयनिहार आधुनिक महापुरुषक चित्र बनौलनि प्रभासजी 'युगपुरुष'मे आ युगीन यथार्थक विषमताकें प्रकट कयलनि 'अभिशप्त'मे। 'बड़ झंझटि छैक एहि दुनियाँमे। सबठाम पैसा आ पसेनाक लड़ाइ। सबठाम मोंगी पर दौड़ैत संसार'—ई अनुभव दैत छथि प्रो॰ धीरेन्द्र 'कादो आ कोइला'मे। जीवकान्त जीक अन्य उपन्यास 'अगिनबान', 'पीयर गुलाब छल' आ 'नहि, कतहु नहि'मे समकालीन रग-रगक यथार्थकें, ग्राम्य जीवनक विविध पक्षक वास्तविकताकें कलात्मकता प्रदान कयल गेल। आदर्श आ स्वार्थक संघर्षमे नारीक शोषण आ विवशताक कथा थिक प्रभास जीक 'हमरा लग रहब?' तथा ढहल-ढनमनायल गौरवक समाधि पर विकसित घृणित सामाजिक जीवनमे नवचेतनाक परिचायक थिक हुनक 'नवारम्भ'। तहिना समाजमे व्याप्त कटुता, अभाव आ अन्तर्बाह्य संघर्षक धाहमे कुहरैत निम्न-मध्यवर्गक आत्मकथा थिक शेखर जीक 'दरिद्रछिम्मड़ि' तथा प्रेम आ वासनाकें युगीन परिवेशमे मनोविश्लेषणात्मक आधार दैत अछि हुनक 'ई बतहा संसार'। एहि क्रममे हेवनिमे प्रकाशित मार्कण्डेय प्रवासीक 'अभियान', लिली रे क 'पटाक्षेप' तथा विभूति आनन्दक 'गाम सुनगैत'क चर्चा कयल जा सकैछ।

यद्यपि यथार्थवादी उपन्यासक श्रीवृद्धि करबामे सर्वश्री प्रभास, जीवकान्त तथा शेखर जीक महत्त्वपूर्ण योगदान रेखांकित कयल जाइछ, मुदा मैथिलीक लोकगाथाक देदीप्यमान अपौरुषेय महा-पुरुष लोकनिक ऐतिहासिकताकें अपन उपन्यासक माध्यमसँ भारतीय साहित्यक समक्ष प्रस्तुत करबाक एकमात्र श्रेय छनि सुप्रसिद्ध उपन्यासकार मणिपद्म जीकें, जनिक 'विद्यापति', 'राजा सलहेस', 'लोरिक-विजय' तथा 'नैका बनिजारा' उपन्यासक गद्यात्मकताकें महाकाव्यत्व प्रदान करैत अछि।

सत्‌कें अस्तित्व, चित्‌कें चेतना आ दुनूक एकाकार अवस्थाकें आनन्द माननिहार मणिपद्मजी सच्चिदानन्दी स्थितिक प्राप्तिकामनासँ 'अर्द्धनारीश्वर'क कला-साधक छथि।

एहि सभ उपन्यासक अतिरिक्त दिनानुदिन बढ़ैत कानून आ वैज्ञानिक आविष्कारसँ उत्पन्न आधुनिक सामाजिक जीवनक जटिलताकें मनोरंजक दृष्टियें प्रस्तुत कयलनि श्री सोमदेवजी 'ब्रह्मपिशाच' आ 'होटल अनारकली' नामक जासूसी उपन्यासमे, जकर परम्परा पूर्वहि स्व० रूपकान्त ठाकुर रचित 'नहला पर दहला'मे पाओल जाइछ। मणिपद्म जीक 'कोत्रागर्ल' सेहो एही श्रेणीमे आओत।

विशुद्ध रोमांटिक भावना पर आधारित उपन्यासमे पूर्वोक्त 'मधुश्रावणी'क अतिरिक्त डा० बी० झाक 'जनम-जनम हम रूप निहारल' तथा विदित जीक 'ओ' महत्वपूर्ण अछि, जाहिमे तरुण-तरुणीक प्रणय भावनाक भावुकतापूर्ण चित्रण सफल भेल अछि।

समकालीन उपन्यासमे कथातत्वक ह्रास, सामाजिकसँ अधिक वैयक्तिक मनोदशाक चित्रण स्थिर चरित्रक अपेक्षा गतिशील चरित्र आ एहि तरहें जीवनक समग्र चित्रक अपेक्षा खंड चित्रहिसँ जीवन-रहस्यक उद्‌घाटन इत्यादि प्रवृति मुख्य भेल जा रहल अछि। नवीन शिल्प शैलीक प्रयोगक दृष्टियें पत्रात्मक शैलीमे लिखित व्यासजीक 'दू पत्र', आत्मकथात्मक शैलीमे रचित शेखर जीक 'दरिद्रछिम्मड़ि', विदित जीक 'ओ' तथा खंडचित्रात्मक शैलीमे जीवकान्त जीक 'अगिनबान' बहुचर्चित भेल छनि।

एहि तरहें मैथिलीक उपन्यासक दशाक विवेचनसँ ओकर दिशा संकेत सेहो भेटैत अछि। यद्यपि भारतीय उपन्यास-साहित्यमे मैथिली उपन्यास अपन स्वतंत्र अस्तित्व बना रहल अछि तथा उपन्यासकार लोकनि उपन्यास-लेखनमे नव नव शिल्प-शैलीक प्रयोग कऽ रहल छथि, तथापि एहि विधाकें एखनो पूर्ण विकसित नहि मानल जा सकैछ। आजुक व्यस्त युगमे ककरा पलखति छैक 'उपन्यास' पढ़बाक? जकरा अपन घरैया लोकक जीवन-रहस्य नहि बूझल छैक ताहि अनबूझ लोकक भोगैत जीवनकें मैथिलीक पाठकक समक्ष ओहि रूपें प्रस्तुत करबामे कदाचित किछु आओर समय लगतैक।

●

मैथिली उपन्यास : कन्यादानसँ पारो धरि

श्री अरुण कश्यप

'कन्यादान'सँ पूर्व प्रकाशित मैथिली उपन्यासक मात्र ऐतिहासिक महत्त्व छैक। 'कन्यादान'क प्रकाशन मैथिली उपन्यासक क्षेत्रमे एकटा क्रान्तिकारी घटना अछि। एकर प्रकाशन पहिने १९२९मे 'मिथिला' मासिक पत्रमे धारावाहिक रूपमे शुरू भेल आ १९३३ ई० मे एकर पुस्तकाकार प्रकाशन भेल। एकर महत्त्व अनेक प्रकारसँ अछि। अनमेल विवाहक समस्याकेँ ल' क' लिखल गेल ई उपन्यास मिथिलाक जीवनक स्वाभाविक (यत्र-तत्र अतिरंजित रहितो) चित्र उपस्थित करैत अछि, उपन्यासमे वर्णित पात्र आ परिवेशक वस्तुजगतसँ साम्य अछि आ उपस्थापन-कला सेहो विकसित अछि। एकरामे देल गेल मनोरंजन-सामग्री सोद्देश्य अछि। स्वयं लेखक कहैत छथि—"जे समाज कन्याकेँ जड़ पदार्थवत् दान क' देबामे कुण्ठित नहि होइत अछि, जाहि समाजकेँ दाम्पत्य जीवनमे सरकसिया घोड़ाक संग निरीह बाछीकेँ जोतैत कनेको ममता नहि लगैत छनि ताही महारथी लोकनिक करकुलिशमे ई पुस्तक सविनय, सानुरोध एवं सभय समर्पित।"

कन्यादानक माध्यमसँ प्रोफेसर हरिमोहन झा तत्कालीन मध्यवर्गीय मैथिल समाज आ अशिक्षित मैथिल ललनाक समस्या तेहन प्रवहमान भाषा आ मनोरंजक शैलीमे प्रस्तुत कयलनि जे मैथिली भाषाक लोकप्रियता बढ़ि गेलैक। पाश्चात्य शिक्षासँ युक्त मैथिल युवक आ ओकर अशिक्षिता परिणीताक समस्याकेँ मनोरंजन लेल कयल गेल अतिरंजनाक बावजूदो स्वाभाविक एवं विश्वसनीय धरातलपर प्रस्तुत कयलक 'कन्यादान'। एहि उपन्यासक नायक सी० सी० मिश्र (चण्डी चरण मिश्र) पाश्चात्य रंगमे एहन रंगल छथि जे हुनका अपन समाजक वास्तविकता बिसरि जाइत छनि। जखन हुनक विवाह अशिक्षिता बुच्ची दाइसँ होइत छनि ओ अपन पत्नीक परित्याग कऽ चतुर्थियेक रातिमे भागि पड़ाइत छथि।

कथानक एकर सबल नहि अछि, मुदा मैथिल समाजक बहुत रास टिपिकल पात्रक सर्जन द्वारा हरिमोहन बाबू एहि उपन्यासकेँ तेहन लोकप्रियता प्रदान कयल जे मैथिली साहित्यक लेल सर्वथा नव छल। झारखंडी नाथ, आवेश रानी, लाल काकी ढुनमुन काकी, दुलारमनि पीसी, घटक राज, टुन्नी झा, बुच्चीं दाइ आ सी० सी० मिश्र - सभ एहन टिपिकल मैथिल पात्र छथि जनिक परिचय मात्रसँ पाठककेँ हँसी लागि जाइत छैक। मुदा एकर उद्देश्य छलैक—"अनमेल विवाहक विरोध आ स्त्री शिक्षाक आवश्यकता पर जोर।" समाधान तेरह वर्ष बाद हरिमोहन बाबू अपन दोसर उपन्यास

द्विरागमन'मे देखनि। 'कन्यादान'मे मनोवैज्ञानिक विश्लेषणक अभाव अछि। किछु आलोचक आ इतिहास-कार कन्यादानक एहि कथानकके एकरंगी मानैत छथि आ कहैत छथि जे मात्र विद्रूप करबा लेल मैथिल समाजक विकृत रूप प्रस्तुत कयल गेल अछि। ई विद्रूपताक उद्देश्य छल मनोरंजन मात्र। मुदा, ई आलोचना न्यायपूर्ण नहि अछि। 'बुच्ची दाइ चुप' कोनो हास्य नहि, करुणाक सृजन करैत अछि। किछु सोचबाक लेल विवश करैत अछि। मैथिली उपन्यासक पहिल ज्योति-स्तम्भक रूपमे कन्यादानक ज्योति आइयो जगमगा रहल अछि।

कन्यादानक पुस्तकाकार प्रकाशनसँ पूर्वहि १९३३ ई० मे कांची नाथ झा 'किरण'क 'चन्द्रग्रहण' प्रकाशित भेल, मैथिली साहित्य समिति, काशी हिन्दू-विश्व-विद्यालय द्वारा। एहि उपन्यासमे गंगा स्नान लेल मेला-ठेला आ सिमरिया घाट जयबाक मैथिल ललनाक ललक आ ओकर दुष्परिणामक वर्णन अछि। चन्द्रग्रहणक आकार छोट अछि आ कथानक सरल; चरित्रक कोनो उचित विकास नहि देखाओल गेल अछि आ गंगास्नानक लोभमे सिमरिया जाइत काल विपत्तिमे पड़ल नायिका ओ ओकर संगी तथा पुनः हुनका लोकनिक गुंडाक चांगुरसँ उद्धारक संग कथा समाप्त होइत अछि। एकरा एकटा दीर्घ कथा कहब बेशी उपयुक्त होयत।

चन्द्रग्रहणक अतिरिक्त किछु आओरो उपन्यास एहि कालमे प्रकाशित भेल जकर सूची निम्न अछि—

(१) चामुण्डा—श्री लक्ष्मीपति सिंह (१९३३ ई०), (२) जय-पराजय—श्री गंगापति सिंह। (३) अगिलही—श्री कुमार गंगानन्द सिंह। (१९३५ ई०), (४) माधवी माधव—श्री हरिनन्दन ठाकुर 'सरोज' (१९३५ ई०), (५) सौन्दर्योपासनाक पुरस्कार—चौधरी केदार नाथ ठाकुर (१९३९ ई०), (६) सुशीला—श्री गंगापति सिंह (१९४३ ई०), (७) भलमानुस—श्री योगानन्द झा (१९४४ ई०), (८) द्विरागमन—श्री हरिमोहन झा (१९४४ ई०), (९) द्विरागम-रहस्य—श्री जनार्दन झा 'जनसीदन' (१९४५ ई०) (१०) असहाय जाया—श्री व्रजनन्दन (१९४५ ई०), (११) पारो—श्री वैद्यनाथ मिश्र 'यात्री' (१९४६), (१२) जयवार—श्री शारदानन्द झा (१९४६), (१३) कुमार—श्री उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास' (१९४६)।

एहि उपन्याससभमे चामुण्डा ओ जय पराजय ऐतिहासिक उपन्यास थिक। चामुण्डा अपेक्षाकृत अधिक सफल कृति अछि। सौन्दर्योपासनाक पुरस्कार सेहो एकटा ऐतिहासिके उपन्यास अछि। 'सरोज' लिखित 'माधवी माधव' मैथिलीक पहिल रोमांटिक उपन्यास कहल जाइत अछि जाहि मध्य माधव माधवीक प्रथम दर्शनमे प्रेम आ अनेकानेक बाधाक बाद मिलनक वर्णन अछि।

'सुशीला' आ 'असहाय जाया' बंगलाक प्रभावमे लिखल गेल भावुकतापूर्ण कृति थिक। 'जयवार' भलमानुसक प्रतिक्रियामे लिखल गेल रचना थिक। 'द्विरागम-रहस्य' जनसीदन जीक अन्तिम कृति थिक, मुदा हुनक अन्य रचनासँ आगूक वस्तु नहि थिक।

वस्तुतः एहि कालमे अर्थात् कन्यादानक उपरान्त आ पारोक प्रकाशन धरि चर्चा योग्य-रचना अछि—अगिलही, भलमानुस, द्विरागमन, पारो आ कुमार। एहिमे कुमार गंगानन्द सिंहक अगिलही एकटा रेखाचित्र थिक। एकरा जबर्दस्ती आलोचक एवं इतिहासकार लोकनि उपन्यासक कोटिमे रखैत

आयल छथि। वस्तुतः ई एकटा धारावाहिक रेखाचित्र सन छल जकरा उपन्यासक रूप देबाक संभवतः कुमारो साहेब कहियो कल्पना नहि कयलनि। उपन्यास मानि एकरा असम्पूर्ण कहल जाइत रहल अछि। ई जतबे प्रकाशित अछि, सम्पूर्ण अछि आ एकरा उपन्यासमे नहि गनबाक चाही। एकर कथोपकथन आ चरित्र-चित्रण अत्यन्त सफल अछि।

द्विरागमन कन्यादानक उत्तरार्द्ध रूपमे प्रकाशित भेल अछि। एहिमे बुच्ची दाइ उच्च शिक्षा प्राप्तकऽ पतिक अहम्‌कें ध्वस्त करैत छथि आ अन्तमे द्विरागमन होइत छनि। बुच्ची दाइक पितामह सी० सी० मिश्रकें ई उपदेश दैत छथिन जे पाश्चात्य रीतिएँ नहि, भारतीय रीतिसँ शिक्षा देब श्रेयस्कर थिक। द्विरागमनक कलातत्व बड़ गौण अछि। यद्यपि हरिमोहक बाबूक आन विशेषता एहू उपन्यासमे अक्षुण्ण अछि, तथापि एकरा कन्यादान सन सफलता नहि भेटलैक। एहिमे स्त्री शिक्षाक संदेश त' छलैक मुदा कथाक प्रवाह वास्तविकतासँ फराक छलैक।

भलमानुसक रचना मैथिली उपन्यासक इतिहासमे कन्यादानक बाद दोसर महत्वपूर्ण घटना थिक। योगानन्द झाक ई उपन्यास कुलीन वैवाहिक प्रथाक दोषक उद्‌घाटनक संग जगदीश आ निर्मलाक चरित्रक विकासक माध्यमसँ तत्कालीन कुलीन मैथिल परिवार आ समाजक तेहन यथार्थवादी चित्र उपस्थित करैत अछि जे आइयो ई उपन्यास ओहिना सार्थक अछि। यद्यपि ओ भलमानुसे वर्ग लुप्त भ' गेल, मुदा 'भलमानुस'क महत्त्व अक्षुण्ण अछि। निर्मलाक मृत्यु ओहि कुलीन वैवाहिक पद्धति पर एकटा वड़का प्रश्नचिह्न बनि क' ठाढ़ भ' जाइत अछि। कथानक, चरित्र-चित्रण आ यथार्थ वर्णन-प्रणालीक दृष्टिएँ ई कन्यादानोसँ वेशी सफल उपन्यास थिक।

एहि कालक दोसर उपन्यास थिक श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास' लिखित 'कुमार'। एहि उपन्यास मे नायक विमलक उथल-पुथलक मनोविश्लेषण सफलतापूर्वक भेल अछि। मानभूमिक प्रवासमे अंकुरित प्रेमक बीज, प्रेममे असफलता आ आजीवन कुमार रहबाक व्रत आ अंतमे मृत्यु शय्यापर पड़लि भाउजिकआदेशसँ विवाह करवा धरिक कथाक वर्णन खूब सफल ढंगे, मनोविश्लेषणात्मक पद्धतिसँ कयल गेल अछि। ई आदर्शवादी उपन्यास थिक, नायक प्रधान आदर्शवादी उपन्यास जाहिमे जीवनक विविध रूपक वर्णन नायकक चारूकात घुमैत घटनाक क्रममे कयल गेल अछि।

ओही वर्ष प्रकाशित यात्रीक 'पारो' तत्कालीन मैथिल समाजमे तीव्र प्रतिक्रियाकें आमन्त्रित कयलक। एहि उपन्यासमे, नायिका 'पारो'क अपन ममियौत भाइक प्रति परस्पर आकर्षणक संग ओकर दुखद वैवाहिक जीवनक यथार्थवादी चित्रण भेल अछि। बहुतरास आलोचक आ विद्वानकें एहिसँ आपत्ति भेल छलनि आ पारोक विरोधमे तीव्र आलोचना भेल छल। मुदा यात्रीजीक ई उपन्यास निश्चित रूपसँ एकटा नव मोड़ अछि मैथिली उपन्यासक इतिहासमे। एहि ठामसँ यथार्थवादी चित्रणक प्रवृत्ति एकटा ठोस आकार लैत अछि। पारो आ बिरजूक आकर्षणकें अमर्यादित—अनैतिक कहि—चिचिआयबला स्वरसभ आइ स्वतः मौन भ' गेल अछि। पारोमे छैक तत्कालीन मध्यवर्गीय मैथिल समाजक यथार्थ चित्रण आ किशोर हृदयक सहज निष्कलुष आकर्षणक सशक्त विवरण। अपन पतिक यौन-पिपासा आ कामुकताक शिकार पारोक दशाक वर्णनमे रचनाकारक संतुलित दृष्टि कतहु कोनो कामवासनाकें जन्म नहि दैत अछि, अपितु किछु सोचबाक लेल झकझोड़ि क' राखि दैत अछि।

जीवन-दर्शन आ साहित्य-रचना-प्रक्रिया

डॉ० सीताराम झा 'श्याम'

सर्जनात्मक विषय होमक कारण साहित्यक सम्यक् विश्लेषणक हेतु ओकर रचना-प्रक्रियासँ परिचित रहब अनिवार्य भ' जाइछ।

सामान्यतया साहित्य-विवेचनमे वस्तु ओ रूप पर विशेष ध्यान देल जाइत छैक। अर्थात् **कथ्य-पक्ष** आ **अभिव्यक्ति-पक्ष** साहित्यालोचनक प्रमुख आधार बनैछ। परञ्च, विचारणीय बात ई अछि जे साहित्य-विधा-विशेषमे संयोजित विषय ओ ओहि लेल प्रयुक्त अभिव्यञ्जना-पद्धति अपन विलक्षण स्वरूप कोना ग्रहण क' लैछ। प्रश्न उठैछ—

(१) की रचना-विशेषमे विषय-चयनक प्रश्न महत्वपूर्ण नहि रहैछ ?

(२) की प्रतिपाद्य विषयकेँ अभिव्यक्ति प्रदान करबा काल विशिष्ट विधाक प्रयोजन नहि पड़ैछ ?

—निश्चित रूपसँ उपरि अंकित दुनू बात रचनाकार केँ आकर्षित एवं प्रेरित करैछ। उपयुक्त विषय आ ओकर अनुकूल रूपांकनक अभावमे सारस्वत आ प्रभावकारी रचना कथमपि संभव नहि भ' सकैछ। तात्पर्य ई जे **विषय-चयन** ओ **रूप-विधान** मे रचनाकारक विशिष्ट दृष्टिक प्राधान्य रहैछ। अर्थात् 'आत्मा वै जायते पुत्रः' जेकाँ जखन रचनाकार अपन अनुभूतिकेँ अभिव्यंजित करबामे सफल भ' जाइत अछि, तखनहिँ ओ रचना विलक्षण बनि पबैत छैक।

अस्तु, **विषय-चयन** ओ **अभिव्यंजना-कौशल** दुनूक **मूलभूत आधारक अन्वेषण** करब साहित्यिक वैज्ञानिक विवेचनक लेल परम अपेक्षित भ' जाइछ।

जीवन-दर्शन आ साहित्य-सर्जना :

साहित्यकारक जीवन-दर्शनसँ तात्पर्य होइछ सर्जना-क्रममे ओकर चिन्तनधाराक क्रियाशीलता। कल्पना ओ विविध विचारणाक संयोग सँ रचनाकारक जीवन-दर्शनक निर्माण होइत छैक। एकरा आर फरिछा क' एना कहल जा सकैत छैक जे जीवन-दर्शनक निर्माणमे अधोलिखित तत्त्वक प्राधान्य रहैछ :

(क) रचनाकारक अपन मूल रुचि

(ख) जीवन-मूल्य-सम्बन्धी ओकर दृष्टिकोण

(ग) प्रेरणा ओ प्रभाव ग्रहणक स्थिति ओ दिशा

(घ) वर्तमान जीवनक आवश्यकता ओ संभावना

(ङ) सांस्कृतिक संवेदना —जाहिमे परम्परा, समाज विन्यास ओ लोकव्यवहारक समावेश अवश्य रहैत छैक। कारण परम्पराविहीन आधुनिकता आ सांस्कृतिक संवेदनासँ असम्पृक्त अव-धारणा जन-समाजमे असंग्राहीत रहैत छैक।

वस्तुतः जीवन-दर्शन एकटा व्यापक शब्द थिकैक आ एकरा लेल दृष्टि-समग्रता अपेक्षित भ' जाइछ। साहित्य-सर्जनामे व्यक्तिगत अनुभव आ विचारक संग सांस्कृतिक विश्व सेहो ओकर ठोस आकार ओ पहचानक हेतु आवश्यक छैक।

संस्कार-ग्रहण आ साहित्य-प्रणयन :

उत्कृष्ट प्रदानक पहिने उत्तम आदानक प्रयोजन पड़ैछ। वैह जीवन-दर्शन रचनाक स्तरकेँ ऊपर उठा सकैछ, जकर निर्माण संस्कार ग्रहणक पश्चात् होइक। संस्कार ओ मूल तत्त्व थिकैक, जाहिसँ जीवन आ साहित्यक स्तर उन्नत बनल रहैछ। संस्कारहीनताकेँ अधोगतिक प्रथम लक्षण बुझबाक चाही। अस्तु, साहित्य-प्रणयनमे साहित्यकारक संस्कारक प्रमुख भूमिका रहैछ। रुचि-परिष्कार रचनाक विशिष्ट गुण मानल जाइत छैक। ई तखनहिँ संभव भ' सकैछ, जखन रचना-प्रक्रियामे तन्मय साहित्यकार नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिसँ स्वयं परिष्कृत रहथि। संस्कार-निर्माणक लेल प्रज्ञा, विवेक, मति, स्मृति आदि सभक आधार ग्रहणक प्रयोजन पड़ैछ। कारण साहित्यकारकेँ त्रिकालदर्शी होमय पड़ैत छनि। ई सभ वस्तु ओ गुण केवल अपनहिँ सीमित बल-बुद्धिसँ प्राप्त नहि कयल जा सकैछ। एहि हेतु ज्ञान-विज्ञान ओ दर्शनक विभिन्न स्रोत एवं सोपानसँ अवगत होयब आ चिन्तनक आयामकेँ व्यापक बनायब आवश्यक भ' जाइत छैक। संस्कार-समन्वित रचना अधिक सार्थक, प्रभविष्णु ओ कालजयी बनैछ।

साहित्य-रचनामे प्रतिभा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रहैछ। तत्त्वतः साहित्यकारक उक्त संस्कारक दोसर संज्ञा काव्य-प्रतिभा छैक। कवित्व-शक्ति ओ काव्य-क्रिया दुनू अभिन्न वस्तु थिक। गृहीत संस्कार अर्थात् संचित-काव्य-प्रतिभाकेँ जखन व्यावहारिक रूप प्रदान कयल जाइछ, तखन ओ काव्य-क्रिया कहबैत छैक। तेँ **संस्कार-ग्रहण** आ **काव्य-प्रणयन** दुनूक सम्मलित रूपकेँ **साहित्य-रचना-प्रक्रिया** कहब समीचीन प्रतीत होइछ।

रचना आ रचना-प्रक्रिया : क्रम-निर्धारणक समस्या :

प्रस्तुत संदर्भमे एकटा आर स्थिति पर विचार करब आवश्यक भ' जाइछ। प्रश्न उठैछ :

(क) की रचना-प्रक्रिया 'रचना' सँ पूर्वक स्थिति होइछ ?

(ख) की रचनाक पश्चात् 'रचना-प्रक्रिया'क अन्वेषण कयल जाइछ ?

—ध्यातव्य अछि जे भावक, पाठक वा समीक्षक पहिने रचनाकेँ पढ़ैत अछि, फेर ओकर प्रक्रिया पर विचार करब आरम्भ करैत अछि। अर्थात् रचनाक अन्वेषण-विश्लेषणक क्रममे रचना प्रक्रिया पर

विचार कयल जाइछ। मुदा एहिसँ भिन्न स्थिति रचनाकारक होइछ। ओ रचना-प्रक्रियाक विभिन्न अवस्थाकेँ पार कयलाक पश्चात् रचनाकेँ अन्य पाठकक लेल अभिव्यक्ति प्रदान करैत छथि। अर्थात् अमूर्त भाव वा विचार मूर्त भेला पर पाठक वा समीक्षककेँ उपलब्ध भ' पबैत छनि। तात्पर्य ई जे पाठक रचनासँ परिचित होइत अछि, रचना-प्रक्रियासँ अवगत नहि भ' पबैछ। मुदा मूल विषय ई अछि जे रचना-प्रक्रिया-काल रचनाकार जाहि तन्मयताक अनुभव करैछ, किन्तु ओहि स्थितिमे प्रवेशनाकेँ ल' कें कोनो पाठक वा समीक्षक ओहि रचनाकेँ ठीक-ठीक जानि कोना सकैत अछि? दोसर शब्दें, सही अध्ययन-अनुशीलनक लेल अनुभूत अनुभवक साक्षात्कार आवश्यक भ' जाइछ। अस्तु, जकर जाहि अवस्थामे साहित्यिक रचना कयल जाइछ, अध्ययन-आलोचनाक समय ओहि अवस्थाक पुनरुत्पादन अपेक्षित छैक। एहि तरहें, रचना आ रचना प्रक्रिया एक-दोसरसँ पृथक् नहि रहि जाइछ—ने साहित्यकारक लेल आ ने पाठक वा समीक्षकक लेल। जँ साहित्यकार रचना-प्रक्रियाक एकात्मतासँ दूर रहताह, तँ हुनक रचनामे एकान्विति, सम्बद्धता ओ सम्प्रेषणता आदि जेतनि आ जँ पाठक ओहिसँ अपरिचित रहताह, तँ ओ रचनाक मर्मकेँ कोना बूझि सकताह?

तादात्म्य स्थापित करबाक क्षमता : रचना-प्रक्रिया-विवेचनक मूल विशेषता

एहि बातकेँ पूर्वहि स्पष्ट कयल जा चुकल अछि जे रचना-प्रक्रिया पर सम्पूर्ण जीवन-दृष्टिक प्रभाव पड़ैत छैक। किन्तु एकाग्रचित्त भेने रचनाकार उत्कृष्ट सर्जना क' नहि सकैत छथि। मुदा एकाग्रताक हेतु बड़ साधनाक अपेक्षा होइछ। आचार-विचार, खान-पान, चिन्तन-मनन, देखब-सोचब, परिवेश-परिस्थिति सभ किछुक स्वच्छता ओ अनुकूलतासँ एकाग्रता ओ तन्मयताक स्थितिमे रचनाकार रचनाकेँ ल' आ पबैत छथि। सारस्वत रचनाक लेल ओ परम अपेक्षित छैक। पाठक व समीक्षक रचना-विवेचनमे तखनहि तादात्म्य स्थापित क' सकैत छथि, जखन ओहो ओहि स्थितिकेँ प्राप्त करबाक क्षमतासँ युक्त भ' जयताह। समस्या अछि, ई हेतैक कोना? —एकरहि लेल रचना-प्रक्रियाक विवेचन कयल जाइछ।

जेना प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकारकेँ सेहो निपुणता प्राप्त करबाक हेतु, 'व्युत्पत्ति' ओ 'अभ्यास'क आवश्यकता होइत छनि, तहिना पाठक आ आलोचककेँ सेहो रचनाधर्मिताक स्वरूपसँ परिचित होमय पड़ैत छनि। तात्पर्य ई जे उत्कृष्ट साहित्यानुशीलन सेहो सर्जना होइछ आ समीक्षकक लेल ओकर प्रक्रियासँ अवगत रहब अनिवार्य भ' जाइछ। ध्यातव्य अछि जे रचना-प्रक्रिया धरि पहुँचब अर्थात् तादात्म्यबोध प्राप्त करब पाठकक एवं समीक्षकक कुशलताक परम निदर्शन थिकैक।

अभिव्यंजना-पद्धति आ रचना प्रक्रिया :

साहित्य-सर्जना ओ साहित्यानुशीलन दुनूक मुख्य उद्देश्य होइछ आनन्दानुभूतिकेँ प्राप्त करब। आनन्दानुभूतिक दोसर संज्ञा रसानुभूति छैक। मुदा प्रश्न उठैछ :

अनुभूतिक वस्तुकेँ अभिव्यक्त कोना कयल जाइछ? —ध्यातव्य अछि जे स्थायी भाव परक परिपाककेँ 'रस' नामसँ अभिहित कयल जाइछ। ई क्रिया पूर्णतया मानसिक स्तर पर होइछ। आब विचारणीय विषय ई अछि जे अमूर्तभावक साक्षात्कार कोना कयल जाय। तँ जेना आत्माक अभिव्यक्तिक हेतु शरीर माध्यम बनैछ, तहिना स्थायीभावक अभिव्यंजनाक लेल विभावक (आलम्बन-आश्रय) आधार,

अनुभावक (शारीरिक चेष्टा) संकेत ओ संचारीक सहाय्य लेल जाइछ। परञ्च नाटककेँ छोड़ि साहित्यक आन सभ विधामे भाषाक अतिरिक्त आर कोनो माध्यमक सहयोग लेब संभव नहि भ' सकैछ। अर्थात् साहित्यमे भाषा मात्र अभिव्यंजनाक आधार होइछ। फेर, 'भाषा' भाव अथवा विचारसँ असंपृक्त कोनो पृथक् माध्यम नहि होइत छैक। जकरा 'काव्य-भाषा' कहल जाइछ, ओ तत्वतः साहित्य-सर्जना-प्रक्रियाक अभिन्न अंग भ' जाइछ। जेना जल बर्फ-रूप (ठोस) धारण कयलाक पश्चात् सेहो अपन द्रवत्व नहि छोड़ैत अछि, तहिना भाषा भावाभिव्यक्ति-रूपमे सेहो भावानुभूतिक तरलतासँ सम्पृक्त रहैत अछि। दोसर शब्दमे काव्य भाषा सेहो रचना-प्रक्रियाक सहभागी रहैछ। बर्फ पिघललासँ पानि बनि जाइछ, काव्य भाषा विवेचनक समय तरल बनि जाइछ-ओहिना जेना रचना-प्रक्रिया-काल ओकर स्थिति छलैक।

जतय धरि भाषाक स्तर ओ भंगिमाक प्रश्न छैक, ओ रचनाकारक जीवन-दर्शन पर निर्भर रहैछ। भाषा अनुभूति ओ अभिव्यक्तिक अनुसार ढलैछ ओकर रूप रचनाक विषय ओ रचनाकारक क्षमताक अनुसार बनैत छैक।

निष्कर्ष रूपमे ई कहल जा सकैत अछि जे साहित्य संस्कारक अभिव्यक्त रूप होइछ आ समीक्षक रचना-प्रक्रियाक विवेचन द्वारा साहित्यकारक जीवन-दर्शन ओ सर्जना-सोपानसँ अवगत भ' मूल भावसँ तादात्म्य स्थापित करबाक सार्थक प्रयास करैत छथि। एहि प्रकारक विश्लेषणसँ सामान्य पाठककेँ सेहो साहित्यकारक मनःस्थितिसँ परिचित होमयमे पर्याप्त सहायता भेटैत छनि।



अमर सन्तति

डा० चन्द्रनारायण मिश्र

भारतीय दर्शनक एहन कोनो गम्भीर अध्येता नहि होयत जे स्वनामधन्य वाचस्पति मिश्रक नामसँ अपरिचित हो। सभ वैदिक दर्शन पर हुनक ग्रन्थ उपलब्ध अछि। ओहिमे सँ कोनो एहन नहि अछि जकर अपन क्षेत्रमे मूर्धन्य स्थान नहि होइ। टीकाक रूपमे ओ सभ वस्तुतः स्वतन्त्र ग्रन्थ अछि। सभक गाम्भीर्य एवं महत्त्व सर्वस्वीकृत अछि। तेँ दार्शनिक साहित्यक क्षेत्रमे एहि लेखकके जे आदर आओर सम्मान प्राप्त छनि ओ प्रायः अन्य ककरो नहि।

एहि प्रसंगमे उदयनाचार्यक चर्चा प्रस्तुत विषयक अनुकूल बुझना जाइत अछि। युगपुरुष होयबाक कारणे हुनका भविष्यपुराणमे विष्णुक अवतार मानल गेल छनि :

भगवानपि तत्रैव मिथिलायां जनार्दनः
श्रीमदुदयनाचार्य रूपेणावततार ह।

भारतवर्षमे ई परम्परा रहल अछि जे अलौकिक प्रतिभाक व्यक्तिकेँ अवतार मानि लेल जाइत अछि। ई सर्वविदित अछि जे उदयनाचार्य न्याय-वैशेषिक दर्शनक एहन स्तम्भ छलाह जे हुनका साक्षात् गौतम बूझल जाइत छल :

विशेषतो न्यायशास्त्रे साक्षाद्‌ गोतमो मुनिः :

हुनकहिँ तर्क प्रहारसँ विच्छिन्न भ'क बौद्ध दर्शन पराभवक अवस्थाकेँ प्राप्त कयलक। उदयनक दृप्त प्रतिमाक सिंहनाद एखन तक इतिहासक अध्यायमे प्रतिध्वनित भ' रहल अछि :

वयमिह पदविद्यां तर्क मान्वीक्षिकीं वा
यदि पथि विपथे वा वर्त्तयामः स पन्थाः।
उदयति दिशि यस्यांभानुमान सैव पूर्वा,
नहि तरणिरुदीते दिक्पराधीनवृत्तिः।

किन्तु ओएह उदयनाचार्य जखन वाचस्पति मिश्रक न्यायवार्त्तिक तात्पर्य पर टीका लिखबाक हेतु उद्यत भेलाह त' जेना हाथ कांपय लगलनि। विद्याक अधिष्ठात्री देवीसँ प्रार्थना करय लगलाह कि, हे देवि, हम वाचस्पतिक वाणी पर व्याख्या लिखबाक दुस्साहस क' रहल छी। आहाँ हमर वचन एवं चित्त पर कृपया एना सावधान रहू जे कतहु त्रुटि ने भ' जाय :

मातः सरस्वति मुहुर्मुहुरेव नत्वा
बद्धाञ्जलिः किमपि विज्ञपयाभ्यवेहि।
वाक्चेतसोर्मम तथा भव सावधाना
वाचस्पतेर्वचसि न स्खलतो यथैते।

उदयनक उपर्युक्त दुनू उक्तिक परिप्रेक्ष्यमे वाचस्पतिक महत्त्व तेना निखरि क' समक्ष आबि जाइत अछि जे ओहि सम्बन्धमे आओर किछु कथन पिष्टपेषण मात्र बूझल जायत। मिथिलेक टा नहि अपितु सम्पूर्ण भारतक पण्डित समाज एक स्वरसँ मानैत आयल अछि जे

शंकरवाचस्पत्योः शंकर वाचस्पती एव।

अर्थात् शंकर एवं वाचस्पति अपन समान केवल अपनहिँ छलाह।

वाचस्पति मिश्रक सम्बन्धमे विद्वत्समाजक ई धारणा हुनक अनवरत विद्यासाधनाक परिणाम छल। भारतवर्षमे व्यक्तिगत इतिवृत्तक लेखनकेँ प्राचीन भारतीय विद्वान लोकनि अपन गुणगान जानि ओकरा हेय बुझैत छलाह :

निजगुणगरिमा सुखाकरः स्यात् स्वयमनुवर्णयतां न तावत्
निजकरकमलेन कामिनीनां कुचकलशाकलनेन को विनोदः?

फलतः हुनका लोकनिक अपन लेखसँ हुनक कृतिक अतिरिक्त अन्य कोनो सूचना अत्यल्प भेटैत अछि। तखन हुनका समक जीवनक सम्बन्धमे जे किछु वार्त्ता उपलब्ध होइत अछि ओकर आधार अछि परम्परागत जनश्रुति अथवा बूढ़ पुरान विद्वान लोकनिसँ सुनल कथांश जकर महत्त्व एवं प्रामाणिकता ईतिहाससँ कम नहि बुझबाक चाही। कोनो विषय चिरस्थायी कथाक रूप धारण कए तखने जनमानसमे घर बना लैत छैक जखन ओहिमे तथ्यक वास्तविकता एवं गूढ़ता रहैत छैक। ताहूमे विशिष्ट प्रकारक विद्याक ई स्वभाव होइत छैक जे ओ कतबहु एकान्त स्थितिमे किएक ने हो ओकर तीक्ष्ण प्रकाश फूटि क' स्वयं दूर-दूर तक पहुँचि जाइत छैक। पानिपर खसल तेलक बून्द जकां ओ अपनहिँ चारूकात पसरि जाइत छैक :

वार्त्ताच कौतुकवती विपुला च विद्या
लोकोत्तरः परिमलश्च कुरङ्गनाभेः,
तैलस्य बिन्दुरिव वारिणि दुर्निवार
एतत्त्रयं प्रसरति स्वयमेव भूमौ।

यद्यपि स्वयं वाचस्पति मिश्र अपन विद्यावैभवक प्रचारक हेतु किछु नहि करैत छलाह तथापि हुनक विद्या-सुमनक परिमल एहन आकर्षक छल जे ओकर अपूर्व सौरभ गन्धवाहक पवन जकां गुणग्राही विद्याप्रेमी समक द्वारा चारू दिस विद्वत् समाजमे प्रचारित क' देल गेल। पण्डितराज जगन्नाथक निम्नलिखित सूक्ति एहने स्थितिमे चरितार्थ होइत अछि :

अयि हृलदरविन्दस्यन्दमानं मरन्दं
तव किमपि लिहन्तो मञ्जु गुञ्जन्तु भृंगाः।
दिशि दिशि निरपेक्षस्तावकीनं विवृण्वन्
परिमलमयमन्यो बान्धवो गन्धवाहः।

वाचस्पति मिश्रक एहि प्रसिद्धिक कारण भेलनि स्वयं हुनक सूक्ष्म पाण्डित्य। मुदा हुनका एहि प्रकारक पाण्डित्यक उपलब्धि ने त' ओहिना भ' गेलनि आओर ने कोनो देवी-देवता आदि क' हुनका सभ शास्त्रक वरदान द' देलथिन। एहि हेतु हुनका कठिन ज्ञान साधना करय पड़ल छलनि। वाह्य वस्तु सभसँ जखन दृष्टिकेँ हटाक' पूर्णतः अन्तर्मुखी मनायोग आदत छैक तखने हुनका मन उत्कृष्ट विद्यागुणक उपलब्धि होइत छैक। तेँ कहल गेल अछि जे

> नान्योद्योगगता न चा प्रगलता नात्मानमुत्कर्षता
> नालस्योपहतेन नामयगता नाचार्यसिद्धे विना।
> लज्जानम्र विलाससुन्दर मुखी सीमन्तिनीं नेच्छता
> लोकेव्यातिकरः सतामभिमतो विद्यागुणः प्राप्यते ॥

वाचस्पति मिश्र एहि सभ गुणक अर्जन क' चुकल छलाह। हुनक जीवनक आवश्यकता बड़ कम छलनि। वनवासी ऋषि जकाँ जीवनयापन करथि एवं सतत विद्याव्यवसायमे लागल रहथि। स्त्री सेहो तेहन सती-साध्वी रहथिन जे हुनक तपश्चर्यामे कहियो बाधक नहि होथिन। भूखक शान्तिक हेतु साधारण अन्न-जल एवं लज्जानिवारणक लेल एक खण्ड वस्त्र— बस एतवहिटा हुनक आवश्यकता छलनि। हुनक सभटा समय अपन पतिक परिचर्यामे बितैत छलनि। पतिसेवा हुनक धर्म आओर कर्म दुनू रहनि। ओ छाया जकाँ सतत हुनक जीवनक लेल कोनो स्वतन्त्र आवश्यकता नहि छलनि। एहन कहियो ने भेल होयतैक जे अपना हेतु तेलो-कूड़क आवश्यकताक प्रति अपन पतिक ध्यान सरस्वतीक दिससँ पराङ्मुख कयने होथि।

वाचस्पति मिश्र सँ जेठ एक बहिन रहथिन। ओ बहुतो दिनक बाद नैहर अयलीह त' घरक स्थितिकेँ देखि क्षुब्ध रहि गेलीह। तपस्वीक आश्रममे जलपात्र एवं आसनकेँ छोड़ि आर की भेटितनि ! हुनका सभसँ अधिक कष्ट भेलनि अपन भाउजिक स्थिति देखि क'। एना लगलनि जेना कैक वर्षसँ हुनक केशकेँ तेलक दर्शन नहि भेल होनि। केशपाश बगड़ाक खोता जकाँ भ' रहल छलनि। हुनका ई दृश्य नहि देखल गेलनि। वाचस्पति बाहरमे एक आमक गाछक निच्चामे बैसल अध्ययनलीन छलाह कि बहिन दाइकेँ सामनेमे ठाढ़ि देखलनि। हुनक मुखमण्डल दुःख एवं क्रोधसँ अभिभूत छलनि। कारण पुछबाक इच्छा करितहिँ छलाह कि बहिनदाइ कहय लगलथिन—

'बाउ, बूझल जे आहाँ बड़ पैघ पण्डित छी। चारूकात अहाँक प्रतिष्ठाक ढोल पिपही बजैत अछि। मुदा ई कोन प्रतिष्ठा जे भौजीक माथमे कहियो एक खड़िका तेल तक नहि पड़नि ? हमरा त' आश्चर्य लगैत अछि जे आहाँकेँ एकर लाज किएक नहि होइत अछि ? लोक की कहत ! —अहीँ ने हिनकर हाथ पकड़ने छिअनि ?'

ई कहि ओ अपन भाइकेँ घिचने-तिरने अङना ल' गेलथिन आओर भाउजिक माथपर सँ आँचर हटा क' हुनक माथ दिस इंगित करैत जुगुप्साक स्वरमे कहलथिन—

'देखिअउ त केहन भनसोहार्त' आ'र घिनाउनि लगैत छनि भौजीक केश !'

पहिने त' वाचस्पति गुम्म रहलाह किन्तु बहिन दाइक रोषक अर्थ अवगत लागि गेलनि त' हँसय लगलाह—

'बहिन दाइ, एही जए अहाँ एतेक तमसाएलि छी ? हम त' कोनो अनुचित अथवा अधर्मक कार्य नहि कयने छी जे लाज होयत। हिनक मेम देखबाक सख लगैत अछि त' कहवा दिअनु।'

ई सुनि बहिन दाईकें आ'र आगू किछु नहि फुरलनि जे हुनका बुझओथिन।

पत्नीक हेतु ई कोनो नवीन बात नहि छलनि यद्यपि भाइ-बहिनक ई वार्तालाप अपन आगूमे सुनि किछु सकपका गेलीह आ'र गुस्तेंसँ घर चलि गेलीह।

एक दिनक घटना छलैक जे वाचस्पति, शंकर भाष्यक मीमांसा लीखि रहल छलाह। मनन एवं लेखनमे तेहन लीन रहथि जे कालक बोध नहि रहलनि। सूर्यास्त भ' चुकल छल। पत्नीकें ई अन्दाज भेलनि जे मुखान्धक कारण क्षीण प्रकाशमे लीखल नहि होयतनि तें शीघ्रतासँ एक दिबारी लेसि क' आगूमे राखि देलथिन। मुदा जेना-जेना अन्धकार बढ़ैत गेलैक तेना-तेना दीपक प्रकाश सेहो कम होइत गेलैक। पत्नीक दृष्टि हठात् मिझाइत दीपपर पड़लनि। ल'गमे आबिक' देखलथिन त' बूझि पड़लनि जे टेमी समाप्त प्राय छैक। किछुए क्षणमे ओ मिझा जइतइ आ'र तखन पतिक विद्यानुष्ठानमे व्यवधान भ' जइतनि। एतवा अवसर नहि छलैक जे टेमीक हेतु कोनो आन कपड़ा ताकि क' अनितथि। तें ओ झट द' अपन आँचरसँ एक टुकड़ी फाड़िक' टेमी बनओलनि आ'र समाप्त प्राय टेमीक पाछूसँ लगा देलथिन। दीपक भुकभुकाइत टेमीक प्रकाश क्षणभरिक उपरान्त पूर्वरूपकें छोड़ि भक् द' प्रखर रूपमे आबि गेल। ओहि कालमे वाचस्पति शारीरक भाष्यक एक गोट महत्त्वपूर्ण अंशक विवेचना लीखि रहल छलाह जे निष्कर्षपर पहुँचि रहल छलनि, किन्तु जाहि लेल किछु काल आओर निरन्तर प्रकाशक आवश्यकता छलनि। मुदा प्रकाशक मलिनताक संग मनो मलीन भ' रहल छलनि जे एहन आवश्यक अवसरपर दीपे मिझा रहल छलनि। एहि स्थितिमे दीपकें हठात् प्रज्वलित होइत देखि प्रसन्नतासँ मन गदगद भ' गेलनि। आँखि उठाक' तकलनि त' कारण रूप मे एक स्त्री मूर्तिकें देखलनि। हुनक आनन्दातिरेक मुखरित भ' उठल—

'देवि, आहाँ के छी जे एहि रूपमे हमर सहायता कयने छी ? अहाँक एहि उपकारसँ हम बड़ प्रसन्न छी.......बाजू आहाँ के छी देवि ?.......'

वाचस्पतिक एहि लगातार प्रश्नसँ दीपशिखा कम्पित भ' रहल छल आओर ओकरे प्रकाशमे फने लग आबिक' ओ स्तब्ध नारी मूर्त्ति कम्पित स्वरमे उत्तर देलक

'हम छी।'

वाचस्पति विस्मित भेल पुनः पुछलथिन—

'आहाँ के छी से हम नहि चिन्हि रहल छी। नाम कहने ......।' आब ओ नारीमूर्त्ति अपन सहज भौतिक स्वरूपकें छोड़ि विचलित एवं विगलित होइत करुणाक अश्रुबनि पिघलि गेल। यद्यपि ओहि नारीक अव्यक्त क्रन्दन वाचस्पतिक प्रश्नक उत्तर द' रहल छल तथापि ओकर व्याख्या हुनक कोनो टा दार्शनिक सिद्धांत नहि क' सकैत छल। ओ दीप उठाक' चिन्हबाक हेतु आगू बढ़ओलनि।

ऐँ, आहाँ त' भामती छी !.......... कनैत छी किएक ? ऐँ, एना किएक.......... ? गोविन्द गोविन्द ! हमरा भ्रम भ' गेल छल..........। मनःस्थिति दोसर दिस छल तेँ ई भ्रम भेल। मुदा ताहि हेतु आहाँ कनैत किएक छी ?'

छाया जकाँ अहर्निश संग रहि जे अद्यावधि पुरुषक सेवा करैत रहल ओ नारी निरपेक्षता जन्य अपन एकान्त उपेक्षाक भावसँ विह्वल एवं विपण्ण भ' उठल। बारम्बार प्रश्न कयलापर जे विशृंखलित वाक्य सुनबामे अयलनि ओकर आशय छल,

'एहि संसारमे अहाँक अतिरिक्त हमर आओर किओ नहि अछि। एही चरणक सेवा करैत हम अपनाकेँ धन्य बुझैत रहलहुँ। मुदा आइ हम देखि आ' सुनि रहल छी जे आहाँ हमरा चिन्हितो टा नहि छी। हमर अतीतक एहने एकाकी वर्त्तमान आ'र अन्धकारमय भविष्य.........?' भामतीक हृदय विदीर्ण भ' गेलनि। हुनका बकोर लागि गेलनि।

वाचस्पति क्षणभरि मौन रहलाह। सावधान भ'क अपनाकेँ सम्हाररलनि आओर प्रेमसँ भामतीक माथकेँ अपन हाथसँ सोहरबैत कहलथिन—

'आहाँकेँ एकर सन्देह कोना भेल जे अहाँक प्रति हमरा कोनो उपेक्षाभाव अछि ? मनुष्य मात्रसँ भ्रम होइत छैक। ताहूमे हमरासँ त' एहन भ्रम अनेक बेर भ' जाइत अछि। अन्यमनस्कताक स्थितिमे एना भ' जाइत छैक। ताहिसँ हृदयक भावक अन्दाज नहि कारबाक चाही। आन जँ किछु कहय अथवा बूझय त' ई कहतैक जे ओकरा हमर गुणदोषक परिचय नहि छैक। मुदा आहाँ हमर सहधर्मिणी आओर जीवन सहचरी छी। आहाँ त' सभ बात जनैत छी जे कखनो-कखनो हमरासँ कैहन विचित्र प्रकारक त्रुटि भ' जाइत अछि। इएह परसूए किने ? —हम खड़ाम पहिरने चारूकात खड़ाम तकैत रही जे कतय छूटि गेल अथवा हेरा गेल। अहीँ जखन अपनहिँ पएर दिस देखबाक लेल कहलहुँ तखन ओ भ्रम हटल आ'र हँसीक संग आश्चर्य लागल जे एहन भ्रम किएक भ' जाइत अछि। ....एकरा लेल की हम क्षमाक पात्र नहि छी ?' भामतीकेँ अपन पतिक निरीहता एवं सरलताक पूर्ण परिचय छलनि तेँ आब एकर ग्लानि होबए लगलनि जे ओ विचलित भ'क हुनक हृदयकेँ किएक दुखओलथिन। परन्तु वाचस्पति हुनक हाथ पकड़िक' पश्चात्ताप एवं कृतज्ञताक मिलल-जुलल स्वरमे कहैत गेलथिन—

'भामती, हमर भ्रमकेँ वास्तविकता नहि बूझू। भ्रम असत्य होइत छैक मुदा आहाँ त' हमर जीवनमे सत्यदर्शनक प्रकाश छी। हम जे किछु छी तकर प्रेरकशक्ति अहीँक प्रसन्न साधना अछि। तेँ ओकर फल अहीँक सन्तति थीक। तखन फेर अहाँक मनमे ई किएक होइत अछि जे आहाँ पुत्रहीन छी ? जँ अहाँक कोनो साधारण सन्तान होइतए त' कतेक समय तक अहाँक प्रतिनिधित्व करितए ? अधिक सँ अधिक सए बर्ष तक—इएह ने ! मनुष्यक जीवन एहि सँ अधिक की भ' सकैत छैक ? किन्तु हमर माध्यमसँ आहाँकेँ जाहि सन्तानक उपलब्धि भ' रहल अछि ओ तावतकाल तक अहाँक नामकेँ उज्ज्वल करैत रहत जावत काल तक कोनो चिन्तनशील मनुष्य एहि भूमण्डलपर वर्त्तमान रहत। "कीर्त्तिरक्षरसम्बद्धा स्थिरा भवति भूतले"।'

भामतिक उएह सन्तति थिकनि अद्वैतवेदान्तक ओ अनुपम ग्रन्थ जकर नाम जानि-बूझिक' वाचस्पति मिश्र 'भावती' नहि अपितु 'भामती' रखने छथि।

आक्षेप ?

डा० सुखेश्वर झा

१९६२ ई० क बात अछि। जुलाइ मास। १९ तारीख कऽ चलि २१ कऽ पार्थिव चन्द्रमा पर अमेरिकाक रॉकेट पहुँचल। चन्द्र तल पर प्रथम मनुष्यावतरण भेल। संसारक मानव सागरमे आश्चर्यक लहरि उठल। सभकेँ तराटक लागि गेलैक। कवि तथा साहित्यकारक मनोहारी "चन्द्रमा" पर अनेक प्रकारक आक्षेप होमए लागल।

भारतक प्राचीन साहित्यमे लोक-लोकान्तर जयवाक बहुत चर्चा अछि। "पर्यटन विविधान् लोकान् मर्त्यलोकम् उपागतः" (अनेक लोकक परिभ्रमण करैत मर्त्यभुवन अयलाह)। परन्तु एहि पर विश्वास होअए कोना ? एहि ठामक विचार-शक्ति वा उपलब्धि-माला कतबो महान् रहल होअओ, महाभारतादि युद्ध, बाह्य आक्रमण, बाहरी शासन आदि विभूति-विनाश-लीला तऽ एहि ठाम चिरकालसँ होइते रहल अछि। चिन्तनधारा अविछिन्न रहल नहि। अपेक्षो ओकर नहिएँ कैल गेलैक। एहना स्थितिमे ओहि सभ कथन केर यथार्थता प्रमाणित होअए तऽ कोना ? आ, ओहिना अपना कि अनका विश्वास कराएब असम्भव।

तेहना स्थितिमे ओ सभ व्यक्ति आई अवश्य मान्य तथा श्रेष्ठ थिकाह जे अपन कार्यकलापसँ लोक लोकन्तर गमनात्मक विचारकेँ साकार कए बहुतोक मनमे तद् विषयक भारतीय विचारक प्रति कम-सँ-कम सन्देहो तऽ उत्पन्न कय रहल छथि जे ओ सभ कथन यथार्थे तँ ने छलैक ?

अस्तु, चन्द्रारोहणक बाद बहुत प्रतिक्रिया भेल। उधियाइत विचार सभ छपऽ लागल। तात्पर्य छल जे चन्द्रमा आब रमणीमुखक उपमान हैत कोना ? एकदम ऊभड़-खाभड़-खाधि सोन्हिसँ भरल अछि चन्द्रतल। पथराह माटि। गरदा उड़ैत। निर्जन। निर्जल। सर्वथा लावण्य विहीन ! तकरा सन कोना कहल जायत मनोहारि मुख प्रमदाक ? चन्द्रमाकेँ आब कोना लोक प्रणाम करत ! आ, जखन चन्द्रदेवेक कोनो ठेकान नहि तऽ आब कोना हैत चरुचन ! सब बात झूठ भय गेल।

ई सभ बात आपाततः अनुचितो नहि लगैत छैक। आशंका होएब अस्वाभाविक कोना कहल जायत ! परन्तु सहृदय प्रश्नकर्ता लोकनिक सामने ईहो प्रश्न अवश्य होयबाक चाही -जे केवल एतेक दूरवर्ती 'उपमान' चन्द्रमेक सम्बन्धमे ई आशंका राशि किएक ? लगक जे 'उपमेय' तकर यथार्थता की अछि ? दार्शनिक गहन विचार-चतुरेटा बूझि सकथि से बात नहि, केहनो प्राकृत जन "ऑपरेशन"

थियेटरमे शरीरक विदीर्ण रूप देखि यथार्थताक अनुभव अविलम्बे कय सकैत अछि। कनेयको ठेस लगने, नहो लगने, कटने, कँपने कि काँट-कुश गड़ने जे देहसँ हृहा खसैत अछि से ककरो लेल अलक्ष्य नहि। विवरण की कयल जाय, नाक, कान, आँखिक स्राव देखि, मुँहक कि पेटक, भितरिया स्थिति की अछि, चिक्कन-चुनमुन चामक भीतर की अछि, आ मांस-पुष्ट चर्मावृत शरीरक आधारशिला की थिक से कोनो 'हॉस्पिटल'मे आ कि जीव-विज्ञानक प्रयोग-कक्षमे साक्षात् वा चित्रगतो देखलासँ बूझब अत्यन्त आसान अछि। शरीरक विभिन्न अवयवसँ जखन-तखन बहुतो अशुद्ध पदार्थ बहार होइत रहैत अछि, जकरा केओ अयथार्थ नहि कहि सकैत छथि। प्रत्युत ओएह यथार्थ थिक से कोनो प्राणीक शव-शरीरकेँ मृतसात् होइत देखलासँ सुप्रकट अछि।

परन्तु ताहि शरीरकेँ झाड़ि-पोछि, काटि-छाँटि, धो-माँजि, तेल-फुलेल लगा, अस्थिपंजर रक्त मांसपूर्ण चर्माच्छन्न एहि शरीरकेँ लोक रंग-बिरंगक वस्त्रालंकारसँ सुसज्जित कए किछु-सँ-किछु बना दैत अछि।

आब, यथार्थ किछु होअओ। ओ आदर्श मिश्रित भए, रमणीय, कमनीय, दर्शनीय, रुचिर, आह्लादक, हृदयहारक, अनघ तथा सुमधुर प्रतीत होइत अछि।

ओकरा सँ अति प्रभावित भए ओहि सम्बन्धमे समर्थ अभिव्यक्ति देबाक लेल अनेक बाह्य पदार्थक आश्रय लेल जाइत अछि। अंग-प्रत्यंगमे अनेक वस्तुक छवि कविकेँ देखाइत छैक अथवा अनेक वस्तुमे कामिनीक अंग-प्रत्यंगक छवि प्रतीत होइत छैक। मेघदूतक एहि सम्बन्धमे ई पद्य विश्व-विश्रुत अछि—

श्यामास्वङ्गं चकित-हरिणी-प्रेक्षणे दृष्टिपातं
वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषु केशान्।
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भ्रूविलासान्
हन्तैकस्मिन्क्वचिदपि न ते चण्डि! सादृश्यमस्ति॥

(उत्तरमेघ ४१)

अङ्गनाङ्गलावण्य वर्णनपरक कविवक्तव्यसँ काव्य सभ भरल अछि। शाकुन्तलम्‌मे शकुन्तलाक लावण्य पर मुग्ध दुष्यन्तक अनेको उक्ति शरीरक मनोहारित्वक प्रबलतम प्रमाण अछि—

मानुषीषु कथं वा स्याद् अस्य रूपस्य सम्भवः।
न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्॥

(शाकुन्तल १।२५)

× ×

चित्रे निवेश्य परिकल्पित-सत्त्वयोगा
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।
स्त्रीरत्न-सृष्टिरपरा प्रतिभाति सा मे
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः॥ (शा० २।९)

× ×

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै-
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम् ।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः ॥ (श० २।१०)

कालिदासे जे यक्षिणीक शरीरक सौन्दर्यकेर वर्णन मेघदूतमे कयने छथि से कोनो भावक कें चिन्तनमात्रसँ स्तम्भित कऽ देबऽ बला अछि—

तन्वीश्यामा शिखरि दशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी
मध्येक्षामा चकितहरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः ।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः ॥

(उ० मे० १९)

कखनो काल कामिनीक ओएह शरीर व्यतिरेक तथा अनन्वयालंकारक विषय होइत अछि, तऽ कखनो अनिर्वचनीय सेहो कहि देल जाइछ। आ, ई सभ कच्छप पृष्ठ पर कि शेषनागक चानि पर धरती, पर्वतराजहिमालयक कन्या पार्वती, मुनि जह्नुक कन्या गंभीर सलिला गंगा केर शिव जटाजूटमे परिसर्पण तथा पार्वतीक सपत्नीत्व, कि ऋषिवर 'जरत्कारू' द्वारा वासुकि नागकेर बहिन 'जरत्कारू' सँ विप्रवर 'आस्ती'क केर उत्पत्ति आदि पुरानकथा; आ कि ललना चरण प्रहारसँ अशोकके कुसुमित होयब, शीधु गण्डूष सेकसँ बकुल केर मुकुलित होयब, ऐरावतक द्वारा आकाशगंगाक नीलकमलिनी केर उत्पादन करब आदि कवि प्रसिद्धि सन दुर्बोध हो से बात नहि। लोक प्रतीयमान रूप पर अत्यन्त लोभित मोहित होइत अछि से सहृदय हृदय संवेद्य थिक आ दशविध कामदशा[1] एकर परम पोषक प्रमाण अछि।

तें नखशिख-वर्णनकें कविजगतमे उटक्करे गढ़ल बात नहि कहल जा सकैत अछि। हँ, अतिशयोक्ति भए सकैत अछि जे अलंकारे थिक।

तात्पर्य ई जे तत्त्वतः यथार्थ जे हो, आदर्शक आवरणमे प्रतीयमानता केर आधार पर एक सबल अभिनव यथार्थता जन्म लैत अछि, ई बात कथमपि व्यवहारसँ असम्मत नहि।

आब कनेँ चन्द्र पर ध्यान देल जाय। चन्द्रमाक निर्णायक तत्त्व किछु होउ, चन्द्रतल पर खधिया हो कि खत्ता, आरि वा धूर, पोखरि वा इनार, बीयरि वा सोन्हि, उपत्यका वा अधित्यका, मृत्तिका मृदु वा कठोर, स्निग्ध वा रुक्ष, खनन रूप 'ऑपरेशन' सँ जेहन केहनो रूप ओकर समीपसँ प्रतीत होउ, एहि धरातल पर सँ देखला पर सहृदय-हृदय-हारित्वमे कि कनेक्को अन्तर भेल छैक ? शरत पूर्णिमा—मैथिलक कोजागरा—रातिक निरभ्र शुभ्र आकाशमे ठहाठही इजोरियामे कि कनेक्को अन्तर आयल छैक ? जों अमावस्याक तमस्विनी तथा पौर्णमासीक ज्योत्सनीक भेदमे एखनो कोनो भेद नहि आएल- होइक तऽ रूस वा अमेरिकाक संसारमे अपन-अपन बरीयस्त्व व्यापक चन्द्रारोहण (तथा मंगलयानक मांगलिक यात्राक) बादो पार्थिव जनसमूहक दृष्टिएँ प्रतीयमानताक आधार पर आह्लादकतासँ ओत-प्रोत

१. विश्वनाथ, साहित्यदर्पण, ३.१९०

चन्द्र सौन्दर्य आइये नहि तावत तक वस्तु सत्य थिक यावत् तक साम्यवादी वा पूँजीवादी लोकनिक प्रयासक परिणाम स्वरूप चारुचन्द्रक प्रभा तरल आलोक रूसे वा अमेरिके टा दिस नहि घूमि हमरो लोकनिकेँ अपरिवर्तित रूपेँ प्राप्त भय रहल अछि। जहिया चकोर कलाधरक रश्मिराशिसँ प्रभावित नहि हैत, चन्द्रकान्त मणि शीतांशुक किरण जालसँ द्रवित नहि हैत, कुमुदिनी कुमुद बान्धवक परम इप्सित उदयसँ विकास द्वारा अपन हर्ष प्रकाश नहि करत, विरहिणी प्रमदा शशि प्रभा सम्पर्कसँ मर्मस्पर्शिनी पीड़ाक अनुभव नहि करत, इन्दु किरण कामिमनोजक सम्वर्द्धन नहि करत, तहिया स्वभावतः लोक 'चन्द्र मुखी'क प्रयोग छोड़ि देत।

मान्यता वा पूजा पर एक दृष्टि देल जाय। एकरो आधार की? स्पष्ट उत्तर हैत 'गुण'। फलकामी आम, कटहर, केरा आदि लगबैत अछि, आक, धत्तूर आ कि खैर, बबूर नहि। तहिना दुग्धार्थी महिस-गाय-बकरी पोसैत अछि, सुग्गर, कुकुर नहि। परन्तु कोमल वस्तुकेँ वाह्याक्रमणसँ बचएबाक हेतु जखन कंटकवृति केर आवश्यकता होइछ तऽ दण्ड देबाक प्राकृतिक शक्तिसम्पन्न पदार्थ काँटक उपयोग कयल जाइत अछि। एहिना उद्देश्य भेदसँ भिन्न-भिन्न पदार्थ अपना-अपना उपयोगक सन्दर्भमे वांछनीय अथवा अवांछनीय होइत अछि।

तऽ एहिसँ ई सुव्यक्त भेल जे मानवक भिन्न-भिन्न आवश्यकताकेँ पूर्ण करबाक सामर्थ्य-रूप गुण जाहि-जाहि पदार्थमे छैक ताहि सबहक उपयोग मनुष्य करैत आएल अछि। ओकरासँ उपकृत भए अपनाकेँ अनुगृहीत अनुभव करैत अछि आ अनुग्रहक स्वीकृति ताहि ताहि-वस्तुक प्रति आदर-सत्कार वा पूजाक रूपमे प्रकट करैत अछि जे मानवतानुकूल परम स्वाभाविक थिक। ताहूमे उपकारक स्वभाव यदि वस्तुक प्राकृतिक गुण होइ, तऽ ओ अधिक मान्य बूझल जाइत अछि। ताहूमे गुणक मात्राक आधार पर मान्यताक मात्रामे तारतम्य होइत छैक।

बाड़िक पटुआ तीत, तेँ लग आ दूर रहनहुँ मान्यतामे कमी-बेसी देखल जाइत अछि। परन्तु उपकारीक प्रति सत्कार-प्रदर्शन नीक परम्पराक मनुष्यक सहज स्वभाव होइछ। मानवक उन्नतम विकास भारतमे भेल से सगर्व कहल जाइत अछि—

> एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
> स्वस्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥ (मनु० २।२०)

तेँ विशेषतः भारतमे मनुष्यक बाते कोन, गाछ—वृक्ष, पशु-पक्षी, इनार-पोखरि, नदी-समुद्र, चन्द्र-सूर्य-सबहक पूजा होइत रहल अछि। एहिमे ईश्वरक विश्वरूपता मानबाक भारतीय दार्शनिक पृष्ठ-भूमिएँ आधार हो से बात नहि। तत्तद् वस्तुसँ प्राप्त उपकारक प्रति कृतज्ञता स्वीकृतिक भावना एहिमे प्रमुख अछि। तेँ गृहस्थीक सहयोगी सकलवस्तुक प्रति कृषकमे पूजा भावनाक प्रचलन अछि। देवोत्थानक एकादशीक राति घरक सकल उपयोग सामग्री—सूप, चालनि, बाढ़नि, खरड़ातक—मे सिन्दूर-पिठार लगाओल जाइत अछि। वसन्तपंचमीक दिन हर-फार, नागनि, हरीस, पालो-चौकी सब पर जल-फूल देल जाइत अछि। बड़दक सिंघ तथा हरवाहक माथमे तेल देल जाइत अछि। एतेक तक जे

वर्षमे एक दिन गाय बड़दक गोबर तकक पूजा होइत अछि। विश्वकर्मा पूजा प्रसिद्ध अछि जाहिमे आयस यंत्र तथा काष्ठ यंत्र सबहक पूजा होइत अछि।

भिन्न-भिन्न प्रकारें सभ वस्तुसँ व्यक्ति उपकृत होइत अछि। एहिमे प्रत्यायक प्रमाण केर कोनो अपेक्षा नहि अछि।

चन्द्रक उपकारित्व सेहो अत्यन्त स्पष्ट अछि। क्षीण, वर्धमान वा पूर्ण चन्द्र अपन भिन्न-भिन्न छटा अनन्त कालसँ पार्थिव प्राणीकेँ देखबैत आएल अछि। ओकरामे जे शीतरश्मित्व छैक, अपन चमकैत चन्द्रिकासँ एहि पृथ्वीकेँ दुग्ध स्नात बनएबाक जे अद्भुत गुण छैक, तान कि मानव केर अवतरणसँ ताहिमे तऽ कोनो अन्तर नहि आएल अछि! तखन चन्द्रक प्रति मान्यतामे अन्तरक प्रश्न कोन?

केवल चाद्रारोहण भए गेल तऽ चन्द्र अमान्य—ई कोनो बात नहि। चिर परिचित तथा आस्वाद्यमान ई पृथ्वीओ तऽ ग्रहे थिक। दृष्टिवान सभ ई देखैत अछि जे ई निछक्के माटि-पानि मिश्रित थिक। तकरा लोक 'पृथिवी माता' कोना कहैत अछि? उत्तर स्पष्ट अछि जे मायसँ आत्मलाभ होइत छैक वा माये नहि, तत्सहित सकल जीवनाधायक तत्वक आधार इएह वसुन्धरा थिकीह। हिनका सँ जे प्राप्त होइत छैक किंवा पृथिवीक जे लोकधारक गुण छैक ताहि आधार पर उपकारसँ अनुगृहीत मानव श्रद्धा तथा स्नेहसँ अभिभूत भऽ नतमस्तक भए हिनका 'माय' कहि उठैत अछि। एहुसँ जँ कोनो पैघ शब्द होइतैक तऽ मनुष्य हिनका लेल तकरे प्रयोग करैत। आदर, सत्कार, श्रद्धा तथा स्नेहसँ भरल एहिसँ पैघ कोनो अभिव्यक्ति अछि कहाँ? सर्वातिशायी तथा सन्तुलित पोषक तत्वयुक्त दूध देबऽवाली जे छथि 'गो माता'। तकर मल-मूत्रतक (कीट रोग नाशक होएबाक कारणेँ) पवित्र होइत अछि।

किछु आओरो अकाट्य मान्यता पर ध्यान देल जाय। हमरालोकनि मानैत छी—'भारत माता' भारतक एक एक सन्तान बहुत गौरवसँ एकर उच्चारण करैत अछि। कतेक स्निग्ध थिक ई कल्पना। क्यो देखने अछि भारत माताकेँ? परन्तु रेखा द्वारा सर्वाधिक सौन्दर्यशाली मातृरूपक कल्पना-चित्र जेहन भऽ सकैत अछि सैह रूप थिक—'भारत माता'क। भारत माताक असंख्य सपूत परतंत्रताक सीकड़ि कें तोड़ि फेकबाक प्रसंगमे भारत माताकेर बलिवेदी पर अपन रक्तक अन्तिम बुन्द तकक सादर तथा साग्रह समर्पण कए अनित्य मनुष्य शरीर द्वारा देवत्व प्राप्त कएलनि। केहन स्पृहणीय प्राप्ति? ई थिक कल्पनाक यथार्थता! समान थिक पूजाक आधार। जे पृथ्वी माता होथि वा भारत माता, सूर्यदेव होथि वा चन्द्रदेव।

'पूजयेदशनं नित्यम्' (मनु० २/५४), 'पूजितंह्यशनंनित्यम्' (मनु० २/५५) आदि कथन द्वारा मनु भोजनोक पूजाक बात कहने छथि। वास्तवमे मनुष्य सकल उपभोग्य वस्तुक पूजक थिक। केवल वस्तु स्वभाव भेदसँ पूजा प्रकारमे भेद होइत अछि। माताक पूजा अछि ओकरा सत्कार पूर्वक कण्ठलम्बित करब, उष्णीषक थिक शिरोधार्य करब तऽ पनहीक थिक झाड़ि पोंछि, पालिश करबा पैर लगाएब। शीतल खाद्य पेय केर ठंडे ठंढ़ा कण्ठ समर्पित करब तऽ गरमा गरम के गर्मे गऽरमे देब। गुरु पूजा थिक शुश्रूषा (हुनका बातक प्रति दत्तचित्तता, सेवा) तऽ पुस्तकक वास्तविक पूजा थिक सोत्साह सादर, साग्रह, ओकर दिदृक्षा किंवा पिपठिषा। जेहने देवता तेहने पूजा। सुकोमल, सुगन्धित, पुष्प

हृदय चन्दन तथा सुस्वादु नैवेद्य प्रभृति जे सामान्यतः पूजा सामग्री उपकल्पित अछि से लऽ पूज्यक प्रति पूजकक मृदुभावनाक प्रतीक मात्र अछि।

एहि तरहें ई स्पष्ट अछि जे यथार्थ किछु आ आदर्श मिश्रित यथार्थ किछु पृथके होइत अछि। आदर्श मिश्रित यथार्थ वस्तुतः व्यावहारिक पक्ष सुप्रतीत अछि। एहि अभूतपूर्व घटनासँ एतबे टा भेल जे आधुनिक वैज्ञानिकके पृथिवीए जेकाँ चन्द्रमो विषयक ज्ञानमे पर्याप्त वृद्धि भेलनि आ हेतनि। चन्द्र सम्बन्धी अन्य मान्यतामे आरोहण कत्तौ दखल नहि देलक अछि। 'पृथिव्यादिसः जकाँ' चन्द्रोक मान्यताक आधार अक्षुण्णे अछि। आरोहणसँ भूलोकवासीक लेल चन्द्रमाक उपयोगितामे रंच मात्रो परिवर्त्तन नहि भेल अछि। से परिवर्तन जहिया कहियो हैत, स्वभावतः मान्यता बदलि जाएत। किन्तु एखन धरि एहन कोनो बात नहि भेल अछि जाहिसँ चन्द्रमा पर विविध आक्षेपक औचित्य मानल जा सकए।



क्या उपनिषद् अवैदिक हैं ?

डा० याकूब मसीह

मैं प्रोफेसर हरिमोहन झा का आभारी हूँ क्योंकि मुझे भारतीय दर्शन के अध्ययन के लिये उन्होंने ही प्रोत्साहित किया है। मेरी पुस्तक 'निरीश्वरवाद' को पढ़कर उन्होंने मुझसे आग्रह किया कि इस पुस्तक को आँग्ल भाषा में भी लिखना चाहिए। मेरा शोधक्रम जारी है और इस लेख को मैं प्रोफेसर झा को अर्पित करना चाहता हूँ।

मेरी मान्यता है कि बौद्ध, जैन तथा हिन्दू में विचार-परंपरा का कोई मौलिक अन्तर नहीं है। अतः जैसे शैव, वैष्णव आदि को हिंदू-संप्रदाय में गिना जाता है उसी प्रकार जैन और बौद्ध को भी 'हिंदू' ही कहना चाहिये। इससे विश्व सौहार्द्र तथा राष्ट्रीयता के साथ विश्व हिंदुत्व का भी प्रचार-प्रसार हो सकता है। द्वितीय, हिंदू और बौद्ध परंपरा अब एक ही है, क्योंकि सभी सगुण ब्रह्म की उपासना को निर्गुण-प्राप्ति का साधन स्वीकारा जा सकता है। तब अद्वैतवाद और बौद्ध शून्यतावाद में अंतर क्या है ? केवल शब्दों का। शून्यतावाद के अनुसार परम सत् केवल नकारात्मक रूप के द्वारा भी वर्णित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जो विचार बाह्य है उसे कैसे वर्णित किया जाय—'निर्वाणम् शान्तम्'। अद्वैत विचार के अनुसार परम सत् को किसी-न-किसी प्रकार, जानते हुए भी कि वह शब्द-कोटि से बाहर है तो भी भावात्मक रूप में माना जा सकता है। इसे भी कुछ अद्वैतवादियों ने बताया है कि ब्रह्म को 'सत्' न कहकर इतना ही कहना चाहिये कि वह 'असत्' नहीं है। इस स्थितिमें शून्यतावाद और अचिन्त्य निर्गुण अद्वैत ब्रह्मवाद में किस प्रकार का अंतर रहता है ?

शांकर अद्वैतवाद और शून्यतावाद में इतनी समता है कि साम्प्रदायिक भाव से प्रेरित होकर गौड़पाद तथा शंकर को हिंदू विचारकों ने 'प्रच्छन्न बौद्ध' की संज्ञा दी है। यदि इन दोनों प्रमुख विचारधारा में अंतर है तो इस बात में कि शांकर अद्वैतवाद में ईश्वर का स्थान सिद्धान्ततः और व्यावहारिक, दोनों रूपों में पाया जाता है, पर शून्यतावाद में सिद्धान्ततः ईश्वरोपासना का कोई स्थान नहीं है। दार्शनिक दृष्टि के अनुसार हिंदू और बौद्ध के बीच बस इतना ही अन्तर है और व्यावहारिक रूप में तो अनेक अन्य अंतर अवश्य हैं। अब यदि शांकर अद्वैतवाद में निहित ईश्वरोपासना के दार्शनिक स्थान को उछाला जाय तो हिन्दुत्व विश्वधर्म का दावा कर सकता है, पर यह विषयान्तर हुआ।

बौद्ध और शांकर अद्वैतवाद के बीच के भेद पर बल नहीं देने का एक कारण है। शांकर मत उपनिषदों पर विशेषतया आधारित है और उपनिषद् और बुद्ध भगवान की विचारधारा भी मेरी समझ

में उस काल की एक ही विचार-प्रवाह के विभिन्न परिणाम हैं। अतः, इन दोनों में भी मौलिक भेद नहीं माना जा सकता है। इन औपनिषद् और बौद्ध विचारों में और एक समता है, क्योंकि दोनों में कर्म-संसार-ज्ञान-मुक्ति के चतुर्व्यूही सिद्धान्तों के साथ योग, तपस्या और संन्यास पर विशेष बल दिया गया है। यह ठीक है कि बौद्धदर्शन में बुद्ध भगवान के युग में इन सिद्धान्तों पर जिस रूप में बल दिया गया है उतना उपनिषदों में नहीं है। तो भी ये सिद्धान्त दोनों में हैं, और ये सिद्धान्त ऋग्वेद में नहीं पाये जाते हैं। यह ठीक है कि इस हिन्दू युग में उपनिषदों को 'वेदान्त' कहा गया है, पर अब 'वेद' को व्यापक अर्थ में व्यवहृत किया जाता है। मैं 'वेद' को ऋग्वेद के प्राचीन अंशों में ही व्यवहृत कर रहा हूँ। 'वेद' के व्यापक अर्थ में अनेक अवैदिक विचारों को भी पचा लिया गया है। इसलिये मैं 'वैदिक' को संकीर्ण अर्थ में काम में ला रहा हूँ जिस रूप में 'ऋग्वेद' के उस अंश को समझा जाता है जिसे आर्य जाति साथ बाहर से भारत में लाये। इस बात को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि उपनिषदों में और प्राचीन ऋग्वेद में मौलिक अंतर है।

ऋग्वैदिक निःश्रेयस् है। स्वर्ग-प्राप्ति और यज्ञ इसका मुख्य साधन है। इसके विपरीत उपनिषदों में मानवों के अन्तिम निःश्रेयस् को 'मुक्ति' की संज्ञा दी गयी है और मुक्ति-प्राप्ति के मुख्य साधन को तपस्या, संन्यास तथा जितेन्द्रियता के साथ 'ज्ञान' बताया गया है। इस ज्ञान को तत्त्वज्योति, दिव्यदृष्टि, बोधि इत्यादि संज्ञा दी गयी है। अतः यह ज्ञान साधारण तथा वैज्ञानिक ज्ञान से भिन्न और परे है। यह मुक्ति एवं ज्ञान स्पष्टतया उपनिषदों में उल्लिखित किया गया है, पर कर्म-संसार का विचार बुद्बुदात्मक रूप में दिखता ही है। हाँ, उस काल में संभवतः जैन-दर्शन में इन चारों सिद्धान्तों को स्पष्ट किया होगा। कम से कम भगवान महावीर और भगवान गौतम बुद्ध की शिक्षा में कर्म-संसार-ज्ञान-मुक्ति उस रूप में स्पष्ट किये गये हैं। फिर 'योग' भी जैन-बौद्ध दर्शनों में मुक्ति-ज्ञान का साधन माना गया है। इसके विपरीत योग और मुक्ति की बात ऋग्वेद में नहीं है। फिर स्वर्ग-प्राप्ति कर लेने पर मानवों की सभी इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है। पर मुक्ति-स्थिति वह है जिसमें सभी इच्छाओं का विनाश हो जाता है। अतः ऋग्वैदिक और औपनिषद् विचारों में आमूल अंतर है। यही कारण है कि पाश्चात्य और भारतीय अनेक भारतीय दर्शन-अधिकारियों ने उपनिषदों को अवैदिक बताया है। इसकी पुष्टि के लिये निम्नलिखित निर्देश-ग्रन्थों की सूची दी जा सकती है :

Macdonell, *History of Sanskrit literature*, p. 215; w, winternitz, *History of Sanskrit literature*, p. 237; Max Muller, *Origin of Vedanta*, p. 16, Paul Denssen, *The Philosophy of the Upanishads* p. 396; Q. E. Hume, *The thirteen principal upanishads*, p. 53; M. Hiriyanna, *Outline of Indian Philosophy*, p. 48, *The Essentials of Indian Philosophy* p. 18; S. N. Dasgupta, *History of Indian Philosophy*, Vol. I. p. 29; Belvalkar/Ranade, *History of Indian Philosophy*, pp. 80, 137; R. D. Ranade, *Constructive survey of upanishadic Philosophy*, p. 6; S. Radhakrishnan, *Indian Philosophy*, Vol. I, pp. 71-72; Radha Kumud Mukherji, *Hindu Civilization*, p. 118.

इसके अतिरिक्त जैमिनि भी वैदिक कर्मकाण्ड को प्रधान तथा उपनिषदों को गौण मानते हैं। इसके विपरीत अद्वैत वेदान्ती वैदिक कर्मकाण्ड को गौण और औपनिषद् ज्ञानकाण्ड को प्रधान मानते हैं।

क्या उपनिषद् अवैदिक हैं ?

डा० याकूब मसीह

मैं प्रोफेसर हरिमोहन झा का आभारी हूँ क्योंकि मुझे भारतीय दर्शन के अध्ययन के लिये उन्होंने ही प्रोत्साहित किया है। मेरी पुस्तक 'निरीश्वरवाद' को पढ़कर उन्होंने मुझसे आग्रह किया कि इस पुस्तक को आँग्ल भाषा में भी लिखना चाहिए। मेरा शोधक्रम जारी है और इस लेख को मैं प्रोफेसर झा को अर्पित करना चाहता हूँ।

मेरी मान्यता है कि बौद्ध, जैन तथा हिन्दू में विचार-परंपरा का कोई मौलिक अन्तर नहीं है। अतः जैसे शैव, वैष्णव आदि को हिंदू-संप्रदाय में गिना जाता है उसी प्रकार जैन और बौद्ध को भी 'हिंदू' ही कहना चाहिये। इससे विश्व सौहार्द्र तथा राष्ट्रीयता के साथ विश्व हिंदुत्व का भी प्रचार-प्रसार हो सकता है। द्वितीय, हिंदू और बौद्ध परंपरा अब एक ही है, क्योंकि सभी सगुण ब्रह्म की उपासना को निर्गुण-प्राप्ति का साधन स्वीकारा जा सकता है। तब अद्वैतवाद और बौद्ध शून्यतावाद में अंतर क्या है ? केवल शब्दों का। शून्यतावाद के अनुसार परम सत् केवल नकारात्मक रूप के द्वारा भी वर्णित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जो विचार बाह्य है उसे कैसे वर्णित किया जाय—'निर्वाणम् शान्तम्'। अद्वैत विचार के अनुसार परम सत् को किसी-न-किसी प्रकार, जानते हुए भी कि वह शब्द-कोटि से बाहर है तो भी भावात्मक रूप में माना जा सकता है। इसे भी कुछ अद्वैतवादियों ने बताया है कि ब्रह्म को 'सत्' न कहकर इतना ही कहना चाहिये कि वह 'असत्' नहीं है। इस स्थितिमें शून्यतावाद और अचिन्त्य निर्गुण अद्वैत ब्रह्मवाद में किस प्रकार का अंतर रहता है ?

शांकर अद्वैतवाद और शून्यतावाद में इतनी समता है कि साम्प्रदायिक भाव से प्रेरित होकर गौड़पाद तथा शंकर को हिंदू विचारकों ने 'प्रच्छन्न बौद्ध' की संज्ञा दी है। यदि इन दोनों प्रमुख विचारधारा में अंतर है तो इस बात में कि शांकर अद्वैतवाद में ईश्वर का स्थान सिद्धान्ततः और व्यावहारिक, दोनों रूपों में पाया जाता है, पर शून्यतावाद में सिद्धान्ततः ईश्वरोपासना का कोई स्थान नहीं है। दार्शनिक दृष्टि के अनुसार हिंदू और बौद्ध के बीच बस इतना ही अन्तर है और व्यावहारिक रूप में तो अनेक अन्य अंतर अवश्य हैं। अब यदि शांकर अद्वैतवाद में निहित ईश्वरोपासना के दार्शनिक स्थान को उछाला जाय तो हिन्दूत्व विश्वधर्म का दावा कर सकता है, पर यह विषयान्तर हुआ।

बौद्ध और शांकर अद्वैतवाद के बीच के भेद पर बल नहीं देने का एक कारण है। शांकर मत उपनिषदों पर विशेषतया आधारित है और उपनिषद् और बुद्ध भगवान की विचारधारा भी मेरी समझ

में उस काल की एक ही विचार-उफान के विभिन्न परिणाम हैं। अतः, इन दोनों में भी मौलिक भेद नहीं माना जा सकता है। इन औपनिषद् और बौद्ध विचारों में मौलिक समता है, क्योंकि दोनों में कर्म-संसार-ज्ञान-मुक्ति के चतुष्पदी-सिद्धान्तों के साथ योग, तपस्या और संन्यास पर विशेष बल दिया गया है। यह ठीक है कि बौद्धदर्शन में बुद्ध भगवान के युग में इन सिद्धान्तों पर उग्र रूप में बल दिया गया है जितना उपनिषदों में नहीं है। तो भी ये सिद्धान्त दोनों में हैं, और ये सिद्धान्त ऋग्वेद में नहीं पाये जाते हैं। यह ठीक है कि इस हिन्दू युग में उपनिषदों को 'वेदान्त' कहा गया है, पर अब 'वेद' को व्यापक अर्थ में व्यवहृत किया जाता है। मैं 'वेद' को ऋग्वेद के प्राचीन अंशों में ही व्यवहृत कर रहा हूँ। 'वेद' के व्यापक अर्थ में अनेक अवैदिक विचारों को भी पचा लिया गया है। इसलिये मैं 'वैदिक' को संकीर्ण अर्थ में काम में ला रहा हूँ जिस रूप में 'ऋग्वेद' के उस अंश को समझा जाता है जिसे आर्य अपने साथ बाहर से भारत में लाये। इस बात को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि उपनिषदों में और प्राचीन ऋग्वेद में मौलिक अंतर है।

ऋग्वैदिक निःश्रेयस् है। स्वर्ग-प्राप्ति और यज्ञ इसका मुख्य साधन है। इसके विपरीत उपनिषदों में मानवों के अन्तिम निःश्रेयस् को 'मुक्ति' की संज्ञा दी गयी है और मुक्ति-प्राप्ति के मुख्य साधन को तपस्या, संन्यास तथा जितेन्द्रियता के साथ 'ज्ञान' बताया गया है। इस ज्ञान को नव्यज्योति, त्रिनेत्रीपन, बोधि इत्यादि संज्ञा दी गयी है। अतः यह ज्ञान साधारण तथा वैज्ञानिक ज्ञान से भिन्न और परे है। यह मुक्ति एवं ज्ञान स्पष्टतया उपनिषदों में उल्लिखित किया गया है, पर कर्म-संसार का विचार बृहदारण्यक तक में छिछला ही है। हाँ, उस काल में संभवतः जैन-दर्शन में इन चारों सिद्धान्तों को स्पष्ट किया होगा। कम से कम भगवान महावीर और भगवान गौतम बुद्ध की शिक्षा में कर्म-संसार-ज्ञान-मुक्ति उग्र रूप में स्पष्ट किये गये हैं। फिर 'योग' भी जैन-बौद्ध दर्शनों में मुक्ति-ज्ञान का साधन माना गया है। इसके विपरीत योग और मुक्ति की बात ऋग्वेद में नहीं है। फिर स्वर्ग-प्राप्ति कर लेने पर मानवों की सभी इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है। पर मुक्ति-स्थिति वह है जिसमें सभी इच्छाओं का विनाश हो जाता है। अतः ऋग्वैदिक और औपनिषद् विचारों में आमूल अंतर है। यही कारण है कि पाश्चात्य और भारतीय अनेक भारतीय दर्शन-अधिकारियों ने उपनिषदों को अवैदिक बताया है। इसकी पुष्टि के लिये निम्नलिखित निर्देश-ग्रन्थों की सूची दी जा सकती है :

Macdonell, *History of Sanskrit literature*, p. 215; w, winternitz, *History of Sanskrit literature*, p. 237; Max Muller, *Origin of Vedanta*, p. 16, Paul Denssen, *The Philosophy of the Upanishads* p. 396; Q. E. Hume, *The thirteen principal upanishads*, p. 53; M. Hiriyanna, *Outline of Indian Philosophy*, p. 48, *The Essentials of Indian Philosophy* p. 18; S. N. Dasgupta. *History of Indian Philosophy*, Vol. I. p. 29; Belvalkar/Ranade, *Hisiory of Indian Philosophy*, pp. 80, 137; R. D. Ranade, *Constructive survey of upanishadic Philosophy*, p. 6; S. Radhakrishnan, *Indian Philosophy*, Vol. I, pp. 71-72; Radha Kumud Mukherji, *Hindu Civilization*, p. 118.

इसके अतिरिक्त जैमिनि भी वैदिक कर्मकाण्ड को प्रधान तथा उपनिषदों को गौण मानते हैं। इसके विपरीत अद्वैत वेदान्ती वैदिक कर्मकाण्ड को गौण और औपनिषद् ज्ञानकाण्ड को प्रधान मानते हैं।

उपर्युक्त मत केवल अधिकारियों के मत से नहीं, वरन् स्वयं उपनिषदों से ही स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में और वैदिक कर्मकाण्ड एवं मंत्रों की महत्ता में इतना विरोध देखने में आता है कि इससे आभासित होता है कि उपनिषद और वैदिक विचार एक-दूसरे से स्वतंत्र और समानान्तर धारायें हैं।

१. सर्वप्रथम, उपनिषदों को क्षत्रिय-ज्ञान कहा गया है जिसे वैदिक ज्ञान की तुलना में उच्चतर माना गया है (देखें छा० उ० १:८, ५:३-७; छा० उ० ६; कौशी० उ० १४:१९; बृ० उ० २:१.१५; ६:२.८ इत्यादि। क्षत्रिय गुरुओं में अश्वपति कैकेय, काशीनरेश अजातशत्रु, प्रवाहन जैवलि, सनत-कुमार इत्यादि का उल्लेख किया जा सकता है। संभवत: ये उसी प्रकार के क्षत्रिय थे जिस प्रकार के भगवान महावीर और बुद्ध भगवान की गणना की जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि उपनिषदों की विचारधारा उसी गर्भस्थल से निकली है जहाँ से जैन-बौद्ध धर्मदर्शन प्राप्त किये गये हैं। यदि जैन-बौद्ध धर्मदर्शन को अवैदिक कहा जाय, तो उपनिषदों को भी अवैदिक ही कहा जायगा।

२. द्वितीय, केनोपनिषद् (III. ३-११) में बताया गया है कि सर्वज्ञ, वेदज्ञाता वैदिक देवता भी ब्रह्मज्ञान से वंचित थे। जब अग्नि, वायु तथा अंत में इन्द्र देवता भी ब्रह्म-विद्या से अनभिज्ञ रहने के कारण निष्प्रतिभ हो गये तब अंत में दिव्य यक्ष अर्थात् ब्रह्म ने उमा (प्रज्ञा) का रूप धारण कर इन्द्र को ब्रह्मज्ञान दिया। इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्मज्ञान को वैदिक ज्ञान से भिन्न तथा श्रेष्ठतर बताया गया है।

३. वैदिक निःश्रेयस् अर्थात् स्वर्ग-प्राप्ति की तुलना में मोक्ष-ज्ञान को उच्चतर बताया गया है। बृ० उ० IV:४:२२ में बताया गया है कि इच्छा-पूर्त्ति पर आधारित यज्ञादि से क्या लाभ, क्योंकि इच्छा रखनेवाले संसार-चक्र से सर्वदा के लिये मुक्त नहीं हो सकते हैं। अतः, पुत्र, संसार-सुख इत्यादि सभी कामनाओं का त्यागकर संन्यासी बनकर ब्रह्मज्ञान प्राप्त करना चाहिये।

४. फिर ऋग्वैदिक पुजारियों की निंदा की गयी है क्योंकि वे दक्षिणा के लोभ से ही यज्ञ किया करते हैं (बृ० उ० III:९-२१), फिर पुजारियों के मंत्रोच्चारण आदि स्तुतियों को श्वान-स्तुति के रूप में व्यंग किया गया है (छा० उ० १:१२-५)। इसी प्रकार मुण्डकोपनिषद् I:१-५ में बताया गया है कि अक्षर अर्थात् ब्रह्म-ज्ञान की तुलना में सभी वेद निम्नतर कोटि के हैं। इसी प्रकार मुण्डकोपनिषद् I:२-७-१० में बताया गया है कि यज्ञरूपी नौका से संसार-समुद्र को पार करना तो दुर्लभ ही है। इस वर्तमान संसार की छोटी नदी भी पार नहीं की जा सकती है। यज्ञों पर भरोसा रखनेवाले को मूर्ख और 'अंधे' की संज्ञा दी गयी है। इस स्थिति में उपनिषदों को कैसे अवैदिक नहीं माना जाय?

५. अंत में बताया गया है कि जो कभी अग्नि की, कभी इंद्र की पूजा करते हैं, वे नहीं समझते कि सभी देवता वास्तव में ब्रह्म-द्वारा सृष्ट हुए हैं (बृ० उ० I : ४ : ६)। यही बात बृ० उ० I:४:११ में कही गयी है। इसी प्रकार केनोपनिषद् :८ में बताया गया है कि ब्रह्म वह देवता नहीं है जिसकी लोग उपासना करते हैं, पर जो सभी ज्ञात और अज्ञात सत्ताओं से परे हैं।

मेरा तात्पर्य इतना ही भर है कि जैन-बौद्ध भी उपनिषदों के समान हैं। अवैदिक रहते हुए भी उन सबों को 'हिन्दू' संज्ञा दी जा सकती है। जिस प्रकार बौद्ध दर्शनों के साथ ही साथ शांकर अद्वैत-वाद का विकास हुआ है, उस पर विचार करने से मुझे ज्ञात होता है कि हिन्दुत्व को विश्वधर्म गिना जा सकता है। यह दूसरा प्रसंग है जिसे मैं अतिशीघ्र प्रकाशित करूँगा।

तीरभुक्ति की राजधानी श्वेतपुर की खोज

डा० योगेन्द्र मिश्र

पहले उत्तर विहार (पुराना सारण जिला छोड़कर, जो गण्डक नदी के पश्चिम है) में दो राज्य थे—वैशाली (जिसकी राजधानी वैशाली अथवा विशाला नामक नगरी में थी) और विदेह (जिसकी राजधानी मिथिला नामक नगरी में थी)। चौथी सदी ईसवी में हम तीरभुक्ति का नाम पहली बार सुनते हैं। बसाढ़ (वैशाली, जिला वैशाली) में पायी गयी मिट्टी की मुहरों पर तीर और तीरभुक्ति शब्द पाये गये हैं। लगता है, इस समय तक वैशाली और विदेह दोनों मिलकर एक प्रशासनिक इकाई बन चुके थे। गुप्त वंश को यह प्रान्त वैशाली के लिच्छवियों से प्राप्त हुआ। मालूम पड़ता है कि गुप्तों ने नदियों के तीरों पर बसे इस प्रान्त का तीरभुक्ति नाम रखा और इसे गुप्त साम्राज्य का एक प्रान्त बना दिया। प्रान्त या प्रदेश को भुक्ति कहते थे। यह गण्डक, गंगा और कोशी नदियों से घिरा था। इसके पश्चिम श्रावस्तीभुक्ति और पूर्व पुण्ड्रवर्धनभुक्ति थी। तीरभुक्ति की राजधानी वैशाली में हुई, जैसा कि हमें वहाँ मिली मिट्टी की मुहरों (क्ले सील्स) से पता चलता है। पाँचवीं सदी की पहली दशाब्दी में चीनी यात्री फाहियान वैशाली आया। २३१ वर्षों तक राज करने के बाद ५५० ई० में गुप्त वंश का साम्राज्य जाता रहा। छठी सदी के मध्य में अथवा उत्तरार्ध में वैशाली नगरी भी उजाड़ हो गयी और यहाँ के निवासियों ने इसे—'राजा विशाल का गढ़' नामक टीले को—छोड़ दिया, जैसा कि हमें हाल की खुदाई-रिपोर्टों से ज्ञात होता है।

गुप्तों के बाद तीरभुक्ति में मौखरि वंश आया। मौखरियों का राज्य उस वंश की विधवा राज्यश्री के हाथों में आया जिससे उसके भाई हर्षवर्धन शीलादित्य (६०६-६४७ ई०) ने ले लिया। पुष्यभूतिवंशीय हर्षवर्धन की राजधानी अब थानेश्वर से हटकर कन्नौज चली आयी जहाँ पहले मौखरि अपनी राजधानी रखते थे। फलस्वरूप तीरभुक्ति अब हर्षवर्धन के शासन में आयी और उसके अनेक प्रांतों में एक प्रांत बनी। उसकी मृत्यु के बाद उसके 'मन्त्री' (minister) अरुणाश्व अथवा अर्जुन ने तीरभुक्ति पर कब्जा कर लिया; पर वह तिब्बतियों से हार गया (६४८ ई०)। तिब्बतियों का शासन ७०३ ई० तक रहा। उनसे मुक्त होने पर यहाँ गुप्त वंश का शासन पुनः स्थापित हुआ, क्योंकि कटरा (मुजफ्फरपुर जिला) ताम्रपत्र अभिलेख में एक गुप्त शासक का नाम आता है और वह

आठवीं सदी का माना गया है। इसके बाद सम्भवतः चन्द्रवंश के राजा आते हैं। अन्त में करीब ७९० ई० में तीरभुक्ति (तिरहुत) पर पालवंश का राज होता है, जो तीन सौ वर्षों तक कायम रहता है।

१०९७ ई० में कर्णाट वंश के नान्यदेव ने तीरभुक्ति को जीतकर एक नया राज्य स्थापित किया और सीमारामपट्टन (आधुनिक सिमरांवगढ़, नेपाल की तराई) में अपनी राजधानी बनायी। इस वंश ने २२७ वर्षों तक राज किया। सन् १३२४ ई० में इस वंश का अन्तिम राजा हरिसिंहदेव दिल्ली के तुगलकवंशी सुलतान गयासुद्दीन तुगलक (१३२०-१३२५ ई०) द्वारा पराजित हुआ और तीरभुक्ति का कर्णाट राजवंश समाप्त हो गया। तीरभुक्ति दिल्ली के तुर्कों के अधीन हो गयी।

गंडक के समीप बसी वैशाली तीरभुक्ति की प्रांतीय राजधानी के रूप में ३१९ ई० से ५५० ई० तक प्रतिष्ठित रही। छठी सदी के मध्य अथवा उतरार्ध में यह वीरान हो गयी। सन् १०९७ से १३२४ ई० के बीच तीरभुक्ति की राजधानी सीमारामपट्टन में रही, जो इन दिनों नेपाल की तराई में है। लेकिन हमें यह नहीं मालूम है कि करीब ५५० ई० से १०९७ ई० तक तीरभुक्ति की राजधानी कहाँ थी। दो बातें निश्चित हैं। पहली यह है कि इस युग में वैशाली तीरभुक्ति की राजधानी नहीं थी। हाँ, यह अगर किसी 'विषय' (जिला) की राजधानी रही हो, तो यह असंभव नहीं है। दूसरी निश्चित बात यह है कि कोई महत्त्वपूर्ण नगरी ही तीरभुक्ति की राधानी बनायी गयी होगी जहाँ मौखरियों से लेकर पाल तक राज करते रहे।

तीरभुक्ति की इस विस्तृत राजधानी को ढूंढने में हम अब समर्थ हो गये हैं। इसका नाम श्वेतपुर था। यह स्थान अभी हाजीपुर (वैशाली जिला) से पूर्व मील ७ से मील १३ तक छह मीलों की लम्बाइ में स्थित है और कटहरिया से लेकर मनियारपुर तक सोलह गाँवों में फैला हुआ है। इस ग्रामसमूह के सटे दक्षिण जो नदी बहती है वह गण्डक है जो बिदुपुर थानास्थित इस ग्राम-समूह और राघोपुर दियारा के बीच चलती हुई आगे गंगा से पुनः मिल जाती है। इन सोलह गाँवों के नाम पश्चिम से पूर्व की ओर बढ़ते हुए इस प्रकार हैं :—कटहरिया, बिदुपुर, रामदौली, कर्मोपुर, अमेर, नावानगर, मधुरापुर, गोपालपुर, मजलिसपुर, बाग सैयद खाँ, चेचर, कुतुबपुर, सैदपुर, खालसा, वाजिदपुर और मनियारपुर। इन गाँवों में प्रचुर ऐतिहासिक अवशेष मिलते हैं। हमने व्यक्तिगत रूप से इन स्थानों को देखा है और साहित्यिक स्रोतों से यहाँ प्राप्त अवशेषों का मिलान किया है। इन दोनों में पूरी संगति बैठ गयी है और सन्देह के लिए कोई स्थान नहीं रह गया है।

श्वेतपुर नाम हमें ह्वेनसांग (६२९-६४५ ई०) के यात्रावृतांत और उसकी जीवनी में मिलता है। यात्रा वृत्तांत में Shi-fei-to-po-lo नाम आया है। उपयुक्त अवतरण इस प्रकार है :—

Going south 80 or 90 li from this place [the site of the convocation of the seven hundred sages and saints held at Vaisali], we come to the sangharama called Sveta-pura (Shi-fei-to-po-lo); its massive towers, with their rounded shapes and double storeys, rise in the air. The priests are calm and respectful, and all study the great vehicle.

By the side of this building are traces where the four past Buddhas sat and walked.

By the side of these is a stupa built by Asokaraja. It was here, when Buddha was alive, that, on going southwards to the Magadha country, he turned northwards to look at Vaisali, and left there, on the road where he stopped to breathe, traces of his visit.

Going south-east from the Svetapura Sangharama 30 li or so, on either (south or north) side of the Ganges river there is a stupa; this is the spot where the venerable Ananda divided his body between the two kingdoms. Ananda was on his father's side cousin of Tathagata. He was a disciple (saiksha) well acquainted with the doctrine (collectanea), thoroughly instructed in ordinary matters (men and things), and of masculine understanding. After Buddha's departure from the world he succeeded the great Kasyapa in the guardianship of the true law, and became the guide and teacher of men devoted to religion (men not yet Arhats). He was dwelling in the Magadha country in a wood; as he was walking to and fro he saw a Sramanera (novice) repeating in a bungling way a sutra of Buddha, perverting and mistaking the sentences and words. Ananda having heard him, his feelings were moved towards him, and, full of pity, he approached the place where he was; he desired to point out his mistakes and direct him in the right way. The Sramanera, smiling, said, "Your reverence is of great age; your interpretation of the words is a mistaken one. My teacher is a man of much enlightenment; his years (springs and autumns) are in their full maturity. I have received from him personally the true method of interpreting (the work in question); there can be no mistake." Ananda remained silent, and then went away, and with a sigh he said, "Although my years are many, yet for men's sake I was wishful to remain longer in the world, to hand down and defend the true law. But now men (all creatures) are stained with sin, and it is exceedingly difficult to instruct them. To stay longer would be useless : I will die soon". On this, going from Magadha, he went towards the city of Vaisali, and was now in the middle of the Ganges in a boat, crossing the river. At this time the king of Magadha hearing of Ananda's departure, his feelings were deeply affected towards him, and so, preparing his chariot, he hastned after him with his followers (soldiers) to ask him to return. And now his host of warriors, myriads in number, were on the southern bank of the river, when the king of Vaisali, hearing of Ananda's approach, was moved by a sorrowful affection, and, equipping his host, he also went with all speed to meet him. His myriads of soldiers were assembled on the opposite bank of the river (the north side), and the two armies faced each other, with their banners and accoutrements shining in the sun. Ananda, fearing lest there should be a conflict and a mutual slaughter, raised himself from the boat into mid-air, and there displayed

his spiritual capabilities, and forthwith attained Nirvana. He seemed as though encompassed by fire, and his bones fell in two parts, one od the south side, the other on the north side of the river. Thus the two kings each took a part, and, whilst the soldiers raised their piteous cry, they all returned home and built stupas over the relics and paid them religious worship.

Going north-east from this 500 li or so, we arrive at the country of Fo-li-shi (Vriji).

ह्वेनसांग की जीवनी (अंग्रेजी अनुवाद, पृष्ठ १०१) में लिखा है :—Leaving the southern borders of Vaisali and following the Ganges river for hundred li or so, we come to the town of Svetapura, where the Master obtained the Sutra called Bodhisattvapitaka.

Again, going south and crossing the Ganges river, we come to the kingdom of Magadha. This kingdom is...

बाद के चीनी लेखकों ने, जिनका समय ८१२ ई० से लेकर १२५४ ई० तक है, तीरभुक्ति (Ti-na-fu-ti) की राजधानी के नाम इस प्रकार दिये हैं :—Ch'a-po-ho-lo, Cha-po-ho-lo तथा T'u-po-ho-lo, चीनी भाषा में संस्कृत नामों के रखने की जो पद्धति है उसके अनुसार यह आसानी से देखा जा सकता है कि Cha-po-ho-lo और T'u-do-ho-lo दोनों श्वेतपुर के लिए आये हैं, क्योंकि प्रथम में 'वेत' का लोप हुआ है और द्वितीय में 'श्वे' का लोप हुआ है। इतिहास के पाठक इस प्रकार के वर्ण-लोप से अपरिचित नहीं हैं, क्योंकि इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।

ह्वेनसांग ने श्वेतपुर की विशाल मीनारों एवं बुर्जदार किलों (Massive towers) का उल्लेख किया है तथा उसके जीवनी-लेखक हुइली ने उस स्थान को 'श्वेतपुर का नगर' (the town of Svetapura) बताया है। कैसा था यह श्वेतपुर जिसका सातवीं शताब्दी के चीनी साहित्य में इस प्रकार का वर्णन आया है ? वैशाली इस समय उजाड़ थी, किन्तु श्वेतपुर नागरिक वैभव से सम्पन्न था। नगर की सुरक्षा के लिए यहाँ विशाल मीनारें बनी हुई थीं। बौद्ध संघारामों की भी बहुतायत थी। हर्षवर्धन के उत्तराधिकारी अरुणाश्व का जो वर्णन चीनी ग्रन्थों में उपलब्ध है उसमें स्पष्ट लिखा है कि तीरभुक्ति (Ti-na-fu-ti) के राजा अरुणाश्व (A-lo-na-shun) की राजधानी Cha-po-ho-lo अथवा T'u-po-ho-lo में थी, जो गण्डवती (Ch'ien-t'o-wei) अथवा गण्डकी (गण्डक) के उत्तरी तट पर अवस्थित थी। नीचे दो प्राचीन चीनी ग्रन्थों से अवतरण दिये जाते हैं, जो क्रमशः १०६१ और १०८४ ई० में लिखे गये थे। ये अवतरण हमने डाक्टर डी० देवहूति की Harsha : A Political Study (Oxford, 1970) नामक पुस्तक से लिये हैं (पृष्ठ २१५-२१६)। अवतरणों के ऊपर चीनी ग्रन्थों के नाम भी दिये हैं।

1. Hsin Tang Shu (from A. D. 1061)

In the twenty-second year (of Chen-kuan) (A. D. 648) the Emperor sent Wang Hsuan-t'se, who was **Yu-wei-shuai-fu-chang-shih**, on a mission*, to the country (India) with Chiang Shih-jen as second in command. Before their arrival

Shih-lo-i-to (Siladitya) died, and the kingdom fell into disorder. His minister, the King of Na-fu, A-lo-na-shun, set himself up and sent troops to resist Wang Hsuan-t'se. Wang then had an escort of only a few tens of men, so they were overcome and all perished. The objects offered in tribute by the various kingdoms were pillaged. Wang Hsuan-t'se escaped and fled to the western frontier of Tibet and summoned armed help from the neighbouring countries. Tibet came with a 1000 soldiers, while Nepal came with a 7,000 horsemen. Wang Hsuan-t'se disposed with his army into groups and advanced as far as the town of Cha (T'u)-po-ho-lo. At the end of three days he took it. 3,000 heads were cut off and 10,000 who jumped into the water were drawned. A-lo-na-shun left the kingdom, fled, and gathered together his dispersed troops into battle formation again. Shih-jen took him prisoner and captured and decapitated (his followers) in thousands. The remnant of his people rallied round the king's wife and child and barred the passage to the river, Ch'ien-t'o-wei. Shih-jen attacked and routed them. He took prisoner the wife and son of the king, and captured 12,000 men and women and 30,000 various domestic animals. He received the submission of 580 cities and villages. The king of eastern India, Shih-chiu-ma (Sri Kumara), sent as a gift 30,000 oxen and horses as provisions for the army and also bows, swords, and spears. The kingdom of Chia-mo-lu (Kama-rupa) offered curiosities to the Emperor, and a map of the country, and asked for a picture (or statue) of Lao-tzu. Wang Hsuan-t'se took prisoner A-lo-na-shun and humbly offered him to the Emperor. The officials reported this to the ancestral temples... Wang Hsuan-t'se was promoted to the rank of **Ch'ao-san-ta-fu.**

2. Tzu Chih T'ung Chien (A. D. 1084)

Twenty-second year (of Chen-Kuan) (A. D. 648), fifth moon. Wang Hsuan-t'se, the **Yu-wei-shuai-chang-shi**, attacked the king of Ti-no-fu-ti, A-lo-na-shun, and greatly defeated him. Previously Shih-lo-i-to (Siladitya), the king of Central India, had the strongest army. All the 'four Indias' were subject to him. Wang Hsuan-t'se went as imperial envoy to India. All the different countries sent envoys to pay tribute to China. It happened that Siladitya died and there was great disorder in the country. His minister, A-lo-no-shun, set himself up and sent his barbarian troops to attack Hsuan t'se. Hsuan-t'se let his thirty followers fight against them but they were no match for the troops. They were all captured. A-lo-na-shun robbed them of all the tributes from the various countries. Wang Hsuan-tse got away and fled by night. He reached the western borders of Tu-Fan (Tibet) and sent out letters asking for troops from various neighbouring countries. Tu-fan sent 1,200 crack troop. Nepal sent over 7,000 cavalry to go to him. Hsuan-t'se and his second in command, Chiang Shih-jen, led the troops of the two countries and advanced to the city of Cha-po-no-lo, where Central India is. After three days of continuous fighting he greatly defeated them. They cut off more than 3,000 heads, those who

were drowed when they jumped into the water were almost 10,000. A-lo-na-shun abandoned the city and fled. Then he collected the remnants of his army and returned to fight with Shih-jen, who again defeated him and captured A-lo-na-shun. The remaining soldiers rallied round the wife and prince and barred the way at the Ch'ien-t'o-wei river. Shih-jen advanced and attacked them. He dispersed the troops and captured the wife and the prince and took men and women captives to the number of 12.000. Thereupon India was overawed and 580 cities and villages surrendred. Wang Hsuan t se came back to (the capital) with A-lo na-shun and was made **Ch'o-san-ta-fu**

अब आइए, बिदुपुर थाने के गण्डकतीर पर बसे इन ग्रामों के ऐतिहासिक अवशेषों पर विचार करें। आश्चर्यजनक समानता पायी जाती है। हमलोग पश्चिम से प्रारम्भ करें और नदी के किनारे-किनारे पूर्व की ओर बढ़ते चलें।

सबसे पहले जो गाँव आता है उसका नाम है कटहरिया। ऐतिहासिक अवशेष यहीं से प्रारम्भ होते हैं। यहाँ प्राचीन मन्दिर में एक भव्य सहस्रलिंग (शिवलिंग) है, कोने में हनुमान की मूर्त्ति है। बिदुपुर में पीपलवृक्ष के नीचे पक्के चबूतरे पर नवग्रह की प्राचीन मूर्त्ति है। थोड़ा पूर्व एक कुएँ के सटे हुए ही सिंचाई के दौरान खोदे गये एक दूसरे कुएँ में दो समानान्तर भव्य दीवारें उभर आयी हैं। कुछ गज पूर्व बढ़ने पर बिदुपुर का डीह मिलता है। अमेर में एक विशाल कूप है जिसकी तुलना पटना के अगम कुएँ से की जा सकती है। कुएँ से दक्षिण-पूर्व दिशा में थोड़ा ही बढ़ने पर पीर उत्ताल का मजार मिलता है जिसके चौखटे का निचला भाग दो पालकालीन कलात्मक स्तम्भों से बना है। नावानगर में ऊँचा भिंडा है। मथुरापुर का भिंडा सबसे ऊँचा है जिसकी ऊँचाई तक पहुँचने के लिए आज भी करीब ६६ सीढ़ियाँ पार करनी पड़ती हैं, यद्यपि इसका शीर्ष भाग प्राकृतिक एवं मानवीय हस्तक्षेपों के कारण नीचा होता गया है। इसपर चढ़कर दक्षिण-पश्चिम दिशा में पटना शहर साफ देखा जा सकता है। रात में पटना की रोशनी भी दीख पड़ती है। यह एक महत्त्वपूर्ण स्तूप या स्मारक मालूम पड़ता है। गोपालपुर तथा मजलिसपुर में कुएं और स्तूपबोधक भिंड़े पाये जाते हैं। बाग सैयद खाँ- चेचर, कुतुबपुर, सैदपुर और खालसा में गण्डक के किनारे-किनारे स्पष्ट रूप से नगर-जीवन के अवशेष पाये जाते हैं। इनमें उल्लेखनीय हैं—पक्की ईंटों से बनी दीवारें (जिनसे भवनांशों का बोध होता है), बड़े कुएँ, नगर से पानी निकलने के नाले, विशाल संडास, अन्न से भरेमृदभाण्ड और कई प्रकार के बर्तनों के टुकड़े। देखने से साफ पता चल जाता है कि पुराने नगर का एक महत्त्वपूर्ण भाग गण्डक के कटाव से नष्ट हो चुका है। वर्त्तमान हाजीपुर-महनार रोड (पक्की सड़क) से लेकर नदीतट तक करीब छः या आठ वर्गमीलों के क्षेत्र में अवशेष हैं। मालूम पड़ता है जैसे हम किसी प्राचीन नगर में आ गये हों। खालसा के पूर्व बाजिदपुर और मनियारपुर हैं जहाँ कुएँ और भिंडे पाये जाते हैं।

इस ग्रामसमूह में बाग सैयद खाँ, चेचर, कुतुबपुर, सैदपुर, खालसा और बाजिदपुर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यहाँ नदीतटवर्ती इलाकों में अनेक विशाल वृक्ष—खासकर पीपल और बरगद के—हैं, जिनके नीचे लोगों ने पाये गये मूर्तिखंड और प्रस्तरखंड रख दिये हैं (कहीं-कहीं उनकी पूजा

भी हो लेती है)। बाग सैयद खाँ और चेचर में कुछ कुएँ ऐसे हैं जहाँ से प्रचुर परिमाण में नरकंकाल निकले हैं। इन कंकाली कुओं से अरुणाश्व और वाङ् हुएन-सी के बीच हुए युद्ध एवं भीषण नरहत्याकांड (६४८ ई०) की पुष्टि होती है। चेचर के एक पण्डितजी के मकान पर अष्टभुजी की प्रतिमा रखी हुई है जो एक ही आयताकार प्रस्तरखण्ड में खोदकर बनायी गयी है। प्रतिमा अभग्न, भव्य और आकर्षक है। इसमें आठ मूर्तियाँ बनी हुई हैं। चेचर में नदी तट पर कई आधुनिक मन्दिर हैं, जहाँ पुरानी मूर्तियाँ रखी हुई हैं। सबसे पश्चिम जो मन्दिर है उसमें काले पत्थर का विशाल शिवलिंग स्थापित है। शिवलिंग के सटे उत्तरपूर्व दो नंदी हैं—एक बड़ा, दूसरा छोटा। दीवार की ताखों में बौद्ध तांत्रिक देवी एवं गणेश की मूर्तियाँ जड़ी हुई हैं। इस मन्दिर से सटे बाहर एक शिवलिंग स्थापित है जिसका रंग भूरा है और ऊँचाई सात फीट है। यह दो टुकड़ों का जोड़ है। इस मन्दिर के पूर्व पीपल वृक्ष के नीचे एक दूसरा मन्दिर है जिसमें बुद्ध की भूमि-स्पर्शमुद्रावाली दो विशाल मूर्तियाँ हैं। दीवारों की ताखों पर जड़े हैं गणेश, घोड़ा तथा कुछ सजावटपूर्ण ब्रैकेट (brackets)। फर्श पर अनेक शिवलिंगखंड हैं जो गाड़ दिये गये हैं। एक बुद्धमूर्ति के आभामंडल में पालकालीन अभिलेख है। इस मन्दिर के बायें पीपल वृक्ष के नीचे रखे मूर्तिखंडों में सरस्वती की छोटी मूर्ति भी है। चेचर के इस मंदिरसमूह के पूर्व कुतुबपुर में एक ऊँचे भिंडे पर बनी मस्जिद है। चेचर में रखी मूर्तियाँ इसी के आसपास से निकली थीं। सटे पश्चिम ऊँचे खेत में कुतुबशाह का मजार है। कहा जाता है कि इसी खेत से एक पालकालीन सुन्दर विष्णुमूर्ति निकली थी जिसकी चोरी हो गयी। बताते हैं कि इस मूर्ति का पदस्थल सुरक्षित है और बाग सैयद खाँ के एक निवासी के पास है। सैदपुर में सड़क के दक्षिण प्राचीन स्तूप पर एक मजार बना हुआ है। इन ऐतिहासिक अवशेषों के अतिरिक्त हम कुछ पोखरों और प्राचीन आवागमन के मार्गों को नहीं भूल सकते। चेचर में एक पोखर है जिसे वहाँ वाले पुरनी पोखर कहते हैं। इसके चारों ओर सड़कें आकर मिली हैं। आवागमन के मार्गों में सबसे महत्त्वपूर्ण वह सड़क है जो गंडक के किनारे-किनारे चलती है। कई जगहों पर यह नदी द्वारा कट चुकी है। संभवतः यह वही सड़क है, जिसपर फाहियान (४०६ ई०, ह्वेनसांग (६३७ ई०) और धर्मस्वामी (१२३४ ई०) ने यात्रा की थी।

जहाँ तक भौगोलिक और व्यक्तिवाचक नामों की शिनाख्त का प्रश्न है, Ti-na-fu-ti और A-lo-na-shun के तीरभुक्ति और अरुणाश्व होने में कोई सन्देह नहीं है। अब नदी और उसपर स्थित इस राजा की राजधानी पर आइए। ऊपर के द्वितीय चीनी ग्रन्थ (१०८४ ई० में लिखित) के भाष्यकार के अनुसार River Ch'ien-t'owei गंगा नदी के 'पहले पश्चिम और इसके बाद उत्तर में' थी। प्रथम चीनी ग्रन्थ (१०६१ ई० में लिखित) का भाष्यकार Cha-po-ho-lo को River Chieh-p-u के तट पर बताता है जिसकी शिनाख्त मा तुआन-लिन (चीनी ग्रन्थकार, १२५४ ई०) गंगा से करता है। ऊपर का हमारा प्रथम चीनी ग्रन्थ यह भी कहता है कि River Ch'ien-t'o-wei T-wai नामक भूखंड या प्रदेश के उत्तर थी। सिलवाँ लेवी ने Ch'ien-t'o-wei की शिनाख्त गंडकी अथवा गण्डवती से की है जो सर्वथा मान्य है। सबसे बड़ी समस्या चपोहोलो ने उपस्थित की है। इसकी स्थिति ऐसी है कि कुछ लोग इसे गंडकी के तट पर और कुछ दूसरे लोग गंगा के तट पर समझते हैं। यही सिद्ध करता है कि इसकी स्थिति संगम के कहीं समीप है जहाँ नदी की पहचान में गड़बड़ी पैदा हो जाती है।

डाक्टर (श्रीमती) डी० देवहूति ने चपोहोलो को चम्पारण माना है। चम्पारण किसी नगर का नाम नहीं है। हाल तक यह बिहार के एक जिले का नाम था, अब यह जिला पूर्व चम्पारण एवं पश्चिम चम्पारण नामक दो नये जिलों में बँट गया है। हमारे विचार से चपोहोलो (तुपोहोलो) प्राचीन श्वेतपुर है, जो इस समय गंडक नदी के उत्तरी तट पर स्थित है और जिसके अवशेष ऊपर कहे गये सोलह गाँवों में फैले हुए हैं।

वैशाली के वीरान होने के बाद जिस श्वेतपुर में तीरभुक्ति की राजधानी आयी, जहाँ हर्षवर्धन के समय में प्रादेशिक राजधानी रही और जहाँ तीरभुक्ति के राजा अरुणाश्व, उसकी रानी और राजकुमार ने चीनी राजदूत एवं उसके द्वारा संगृहीत सेना का सामना किया तथा जहाँ अनेक सैनिक नदी एवं कुओं में डूब मरे, वह बिलकुल नया स्थान न था। इसकी भौगोलिक स्थिति कुछ इस प्रकार की थी कि इसे स्वाभाविक रूप से महत्त्व प्राप्त हो गया। भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर इसी मार्ग से वैशाली से मगध जाया करते थे तथा मगध से वैशाली आया करते थे। इसी श्वेतपुर के सामने गण्डक और गंगा के बीच स्थित दियारे के लिए (जिसे आजकल राघोपुर दियारा कहते हैं) वैशाली के लिच्छवियों एवं मगधराज अजातशत्रु के बीच घोर संग्राम हुआ था। राघोपुर दियारा ही बौद्ध साहित्य में विख्यात कोटिगाम है जहाँ महापरिनिर्वाण के लिए राजगृह से कुशीनगर जाते हुए गौतम बुद्ध गंगा पार कर कुछ समय के लिए ठहरे थे। हवाई विश्वविद्यालय के डाक्टर जे० पी शर्मा का यह कथन कि आधुनिक राघोपुर दियारा ही कोटिगाम था मेरे विचार से अक्षरशः ठीक है (देखिए उनका Republics in Ancient India, circa 1500 B. C.—500 B. C. Leiden, 1968, पृष्ठ १२९—१३१)। कोटिगाम, नादिकागाम आदि में बौद्धधर्म का प्रचार होने तथा श्वेतपुर के स्वाभाविक मगध-वैशाली यात्रा-मार्ग पर होने के कारण श्वेतपुर में बौद्धधर्म और व्यापार की अभिवृद्धि होने लगी। संभव है, श्वेतपुर के नामकरण में बुद्ध के प्रतीक श्वेत हस्ती, बुद्धचरित की सादगी और बौद्धधर्म की पवित्रता का हाथ रहा हो। हमें यह बराबर स्मरण रखना चाहिए कि चाहे बुद्ध महावीर जैसे धर्मप्रचारक हों या चीनी-तिब्बती यात्री हों या भारत से नेपाल-तिब्बत जानेवाले बौद्ध प्रचारक हों, सबको इसी रास्ते से गुजरना पड़ता था। हमारे सौभाग्य से चीनी यात्री फाहियान (३९९—४१४ ई०) ने एक अपूर्व विवरण रख छोड़ा है। वैशाली से मगध जाने का विवरण वह इस प्रकार देता है :—

"From this point [Vaisali] travelling four yojanas to the east, the pilgrims arrived at the confluence of five rivers. When Ananda was on his way from Magadha to Vaisali, hoping that there he would pass away, the devas informed king Ajatasatru, who immediately followed him in a state chariot, and with a troop of soldiers to the river. The chiefs of the Vaisalis, hearing that Ananda was comming, also wen out to meet him, and both parties reached the river-banks Then Ananda, reflectint that if he advanced he would incur the hatred of king Ajatasatru, and if he retired the chiefs of the Vaisalis would feel aggrieved, there, in the middle of the river, he entered into the fiery state of samadhi, his body was cremated, and thus he passed away. His remains were divided into two portions, one for each side of the river; each king got one-half of the remains as relic, and returning home, built a pagoda for its reception.

"Having crossed the river and journeyed one yojana towards the south the pilgrims arrived at the country of Magadha and the city of Pataliputra (Patna), formerly ruled by king Ashoka."

कई दृष्टियों से फाहियान का उपर्युक्त विवरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। बुद्ध के प्रसिद्ध शिष्य आनन्द का शरीरत्याग श्वेतपुर के सामने ही हुआ था। इसीके सामने उसने 'पाँच नदियों का संगम' पाया जिनके नाम वह नहीं देता। ये पाँच नदियाँ हमारे विचार से निश्चय ही गण्डक, मही, गंगा, सोन और पुनपुन थीं। यह 'पंचनदीसंगम' सचमुच एक सागर का रूप प्रस्तुत करता है जिससे फाहियान अभिभूत हुआ होगा। 'पंचनदीसंगम' का कोई दूसरा अर्थ (यथा 'अनेक नदियों का संगम या समूह') भी सम्भव है। फाहियान का नदी पारकर एक योजन चलने के बाद मगध और पाटलिपुत्र पहुँचना सिद्ध करता है कि यह योजन राघोपुर दियारा में पड़ा होगा।

वैशाली के उजाड़ होने के बाद प्रांतीय राजधानी श्वेतपुर में आ गयी। अरुणाश्व अवश्य ही तीरभुक्ति का प्रांतीय शासक था क्योंकि यदि यह हर्षवर्धन का मंत्री (minister) होता तो कन्नौज में राज्यापहरण करता, न कि तीरभुक्ति जैसी छोटी प्रशासकीय ईकाई का स्वामी बनकर श्वेतपुर (Cha-po- o-lo) से राज करता। चीनी आक्रमण के इतिवृत से सिद्ध है कि अरुणाश्व ने तीरभुक्ति की राजधानी श्वेतपुर (Cha-po-ho-lo) को सुरक्षात्मक दृष्टि से सुदृढ़ बनाया था। यह सोचना अनुचित होगा कि अरुणाश्व की पराजय के बाद श्वेतपुर में तीरभुक्ति की राजधानी न रही, क्योंकि यदि ऐसा होता तो यहाँ इतने अधिक अवशेष न पाये जाते। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि १०९७ ई० (सिमराँवगढ़ में कर्णाट राजवंश की स्थापना) तक श्वेतपुर तीरभुक्ति की प्रादेशिक राजधानी बना रहा। पालवंश के राजा नदियों के किनारे अपने जयस्कंधावार रखा करते थे। धर्मपाल (७८५-८२५ ई०) की राजधानी पाटलिपुत्र में थी। उसके पुत्र देवपाल (८२५-८६५ ई०) की राजधानी मुंगेर में थी। अतः उनके लिए यह सुविधाजनक ही था कि तीरभुक्ति की राजधानी श्वेतपुर में रहे जहाँ से गण्डक-गंगा के मार्गों पर नियंत्रण रखा जा सकता था। श्वेतपुर में पालकालीन काले पत्थर की बनी बुद्धमूर्तियों का पाया जाना उसके राजधानी होने का अन्य प्रमाण उपस्थित करता है।

जब नान्यदेव (१०९७-११४७ ई० ने तीरभुक्ति को पाल राजा रामपाल (१०७८-११२० ई०) से छीन लिया, तब उसने श्वेतपुर में राजधानी रखना उचित नहीं समझा। श्वेतपुर पालों की दृष्टि के सम्मुख था। इसे अपने को उसने बचाना था। कर्णाट दक्षिण से आये थे और सुरक्षित स्थान चाहते थे। हिमालय की तलहटी में सिमराँवगढ़ में वह स्थान मिल गया। सिमराँवगढ़ नेपाल की तराई में भारत-नेपाल सीमा से दो मील उत्तर है। यहाँ घोड़ासहन रेलवे स्टेशन (पूर्व चम्पारण जिला) से सात मील उत्तर चलकर पहुँचते हैं। हिमालय की प्राकृतिक सम्पदा ने कर्णाटों का मन मोह लिया। फिर भी हमारा अनुमान है कि श्वेतपुर के पूर्णतया नष्ट होने में दो या तीन सदियाँ लग गयी होंगी।

काव्य-भाषा और नाद-योजना

डा० शोभाकान्त मिश्र

काव्य कवि की वाणी की वह रमणीय सृष्टि है, जिसमें भाषा के सौंदर्य का पूर्ण उन्मेष होता है। उसमें लोकोत्तर चमत्कारपूर्ण उक्ति-भङ्गियाँ नवीन-नवीन अर्थच्छटाओं को व्यक्त करती हुई नव-नव रूप विधान करती हैं और कवि की अनुभूति तथा चिन्तना को सहृदय-संवेद्य बनाती हैं।

काव्य-भाषा और लोक-व्यवहार की भाषा में तात्त्विक भेद नहीं। लोक-व्यवहार में जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है उसी भाषा में काव्य का सर्जन होता है। कवि काव्य-रचना के लिए नवीन शब्द-अर्थ की कल्पना करे, यह आवश्यक नहीं। यथार्थवादी साहित्य में तो कवि का आग्रह लोक-सिद्ध अर्थ की यथार्थ व्यञ्जना और व्यावहारिक भाषा के प्रयोग के प्रति ही रहता है। नाटक, उपन्यास, कहानी आदि में पात्र, देश-काल, विषय आदि के अनुरूप व्यावहारिक भाषा का प्रयोग ही सुन्दर माना जाता है। लोक-भाषा में रचित लोक-साहित्य में भाव और विचार की सहज अभिव्यञ्जना मिलती है।

काव्य-भाषा का लोक-व्यवहार की भाषा के साथ तात्त्विक अभेद होने पर भी उसका भेद विन्यास-जनित होता है। विन्यासगत वैशिष्ट्य काव्य-भाषा का व्यावर्तक तत्त्व है, जो काव्योक्ति को लोक की उक्ति से - वार्ता से —स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान करता है। नीलकंठ दीक्षित ने शिवलीलार्णव में काव्य-भाषा और दैनंदिन के व्यवहार में प्रयुक्त होनेवाली भाषा के भेद-अभेद का निर्देश करते हुए कहा था—

यानेव शब्दान् वयमालपामो यानेव चार्थान् वयमुल्लिखामः ।
तैरेव विन्यासविशेषभव्यैः सम्मोहयन्ते कवयो जगन्ति ॥

तात्पर्य यह कि लोक-व्यवहार के शब्द और अर्थ को लेकर कवि उन्हें रचना की विशिष्ट-भङ्गी से भव्य बना कर काव्य में प्रस्तुत करता है और इस प्रकार लोकोत्तर चमत्कार की सृष्टि करता है।

आचार्य भामह ने काव्य-भाषा के इस व्यावर्तक तत्त्व को वक्रता अर्थात् लोकोत्तर चमत्कार-जनकता कहा था। उनकी मान्यता थी कि लोक-जीवन से सम्बद्ध सभी अर्थ—अनुभूति और विचार—लोकभाषा के सभी शब्द, समग्र शास्त्र के प्रतिपाद्य विषय और निश्शेष कलाएँ काव्य के अङ्ग बन सकते हैं—

न स शब्दो न तद्वाच्यं न स न्यायो न सा कला ।
जायते यन्न काव्याङ्गमहो भारो महान् कवेः ॥

इससे स्पष्ट है कि प्रतिपाद्य की दृष्टि से लौकिक अथवा शास्त्रीय विषय और काव्य के विषय का भेद नहीं किया जा सकता। भामह की दृष्टि में उक्तिगत वक्रता काव्य की उक्ति को लोक-व्यवहार की उक्ति से तथा शास्त्र आदि की उक्ति से स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान करती है। उक्ति की वक्रता अर्थात् लोकोत्तर चमत्कारजनकता उसे काव्योक्ति बनाती है। इस प्रकार भाषा के विन्यास की लोकोत्तरता या वक्रता को काव्य-भाषा का व्यावर्तक तत्त्व माना जा सकता है।

काव्य-भाषा में भाषा की सामान्य व्याकरणिक व्यवस्था से विचलन पाया जाता है। कवि अपेक्षित प्रभाव की सृष्टि के लिए व्याकरणिक व्यवस्था की उपेक्षा कर भाषा का ऐसा प्रयोग करता है जो संश्लिष्ट प्रभाव का सृजन करने में समर्थ हो सके। काव्य-सृजन की प्रक्रिया में कवि अपनी सौन्दर्यानुभूति को व्यक्त करने के लिए शब्दों का चयन करता है और अपेक्षित प्रभाव की सृष्टि करता है। इसी प्रक्रिया में काव्य की भाषा लोक-व्यवहार की भाषा से विलक्षण सौन्दर्य प्राप्त कर लेती है।

लोक-व्यवहार में भाषिक प्रयोग का मुख्य उद्देश्य होता है वस्तु का बोध कराना, पर काव्य में भाषा-प्रयोग का उद्देश्य है संश्लिष्ट अर्थ का संप्रेषण करना। लौकिक अर्थ-बोध और काव्यार्थ-भावन का भेद भाषा के लौकिक एवं साहित्यिक रूपों के भेद का एक प्रधान कारण है। काव्य में कवि की सौन्दर्यानुभूति संश्लिष्ट रूप में भाषिक संकेत-चिह्न बन कर व्यक्त होती है। फलतः काव्य की भाषा संश्लिष्ट होती है, जिसमें कवि की अनुभूति अनेक संकेतों, बिम्बों और प्रतीकों का रूप ग्रहण कर व्यक्त होती है। इसीलिए आधुनिक शैली-विज्ञानी काव्य-समीक्षक काव्य को एक स्वतःपूर्ण महावाक्य मान कर उसका भाषिक विश्लेषण आलोचक का दायित्व मानते हैं।

भारतीय साहित्य शास्त्र में समग्र रसवादी चिन्तन का सार यह है कि काव्य कवि की अनुभूति की अखण्ड व्यञ्जना है और इसलिए सहृदय पाठक उसके अर्थ का अखण्ड रूप में ही भावन करता है। विभाव-अनुभाव आदि के अलग-अलग बोध का उस काव्यार्थभावन रूप में उतना महत्त्व नहीं जितना महत्त्व है उन सब के अखण्ड या संश्लिष्ट रूप में भावन का।

लौकिक अर्थ-बोध और काव्यार्थ-भावन की प्रक्रियाओं में एक भेद यह भी है कि लौकिक वस्तु-बोध में ज्ञाता और ज्ञेय का भेद बना रहता है, जबकि काव्यार्थ-भावन में प्रमाता आत्मसत्ता का काव्यार्थ में विलयन कर उसका भावन करता है। काव्य के अर्थ में तन्मय होने की सहृदयता जिनमें नहीं होती वे काव्य की भाषा का सतही अर्थ समझ कर भी, काव्य के मर्म को ग्रहण नहीं कर पाते। काव्यार्थ-भावन या काव्यानुभूति के स्वरूप के सम्बन्ध में कहा गया है —"स्वाकारवदभिन्नत्वेनाऽयमास्वाद्यते रसः।" वाग्-भङ्गी आदि कवि-व्यापार से ही काव्य में वर्णित भाव की सहानुभूति सम्भव होती है।

लोक-व्यवहार की भाषा का उद्देश्य सहज बौद्धिक क्रिया के रूप में अर्थ का बोध कराना मात्र होता है पर काव्य-भाषा का उद्देश्य संवेदना के रूप में अर्थ-ग्रहण कराना होता है। काव्य-भाषा के व्यापार के फलस्वरूप ही लोक का सुख-दुःख-मोहात्मक अर्थ काव्य में आनन्दात्मक रूप में व्यक्त होता है।

काव्यार्थ-भावन में सहृदय भावक की मानसिक भूमिका भी महत्त्व-पूर्ण होती है। काव्य-भाषागत

नाद, स्वर, लय, गति आदि भावक के मन में काव्यार्थ के भावन के उपयुक्त भाव-भूमि तैयार करते हैं। उस भाव-भूमि पर पहुँच कर ही भावक काव्य में व्यक्त कवि की अनुभूति के साथ हृदय-संवाद स्थापित कर पाता है और संवेदना के रूप में अखण्ड काव्यार्थ का भावन कर सकता है।

प्रस्तुत प्रसङ्ग में काव्य-भाषा में नाद-योजना के स्वरूप और महत्त्व का विवेचन अपेक्षित है। ध्यातव्य है कि नाद भाषा का मूलाधार और उपादान कारण है। उस अव्यक्त नाद की ही अभिव्यक्ति स्फुट वर्ण-पद-वाक्यात्मक भाषा के रूप में होती है। अतः लोक-व्यवहार की भाषा हो, शास्त्र की भाषा हो या काव्य की भाषा हो, वह नाद-हीन नहीं हो सकती। इसलिए काव्य-भाषा में नाद-योजना का तात्पर्य है ऐसी ध्वनि-व्यवस्था से जो भावक के चित्त पर अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न कर सके। नाद से उत्पन्न वैखरी भाषा में शब्द अर्थविशेष के बोध का सङ्केत ग्रहण करते हैं और इसके फलस्वरूप शब्द-विशेष से अर्थ-विशेष का बोध होता है। नाद का वस्तु-बोध से सम्बन्ध नहीं होता, फिर भी भावक के चित्त को प्रभावित करने की शक्ति उसमें रहती है और इसी में उसकी सार्थकता होती है। संगीत में नाद स्वर आदि के सहारे सौन्दर्य-बोध उत्पन्न करता है। उस प्रभाव-सृजन में ही नाद की सार्थकता होती है। सङ्केत रहित अर्थहीन नाद और स्वर से सौन्दर्य बोध की सार्थक सृष्टि करने में ही संगीत की कलात्मकता है। स्पष्टतः, नाद का बाह्य-वस्तु की बोधकता से सम्बन्ध नहीं, भावक के मन में सौन्दर्य-बोध की सृष्टि से उसका सम्बन्ध है। चित्त को आर्द्र, भावविगलित, द्रवित या दीप्त करने में नाद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

नाद के स्वरूप और कार्य का विवेचन, भारतीय वाङ्मय में, मुख्य रूप से तन्त्र शास्त्र और संगीत शास्त्र का विषय रहा है। तन्त्र में बिन्दुरूप स्पन्दशून्य नाद की साधना की जाती है, जिसकी अवस्थिति मूलाधार चक्र में मानी गयी है। उस निस्पन्द अखण्ड और व्यापक नाद का साक्षात्कार ध्यान से ही सम्भव है। व्याकरण-दर्शन में इस नादरूप स्पन्दशून्य शब्दब्रह्म को परा वाक् कहा गया है—

"तत्र मूलाधारस्थपवनसंस्कारीभूता मूलाधारस्था शब्दब्रह्मरूपा स्पन्दशून्या बिन्दुरूपिणी परा वागुच्यते।"

(नागेश, परमलघुमंजूषा—पृ० २३)

योगियों का स्पन्दशून्य अव्यक्त नाद तथा वैयाकरणों का शब्दब्रह्म या परा वाक् अव्याख्येय और अगोचर हैं। अतः भाषा में अपरा वाणी के तीन रूप—पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी—का ही विवेचन होता है। संगीत में आहत नाद की ही अभिव्यक्ति होती है। भाषा का समग्र रूप नाद का ही व्यक्त रूप माना गया है—

नादेन व्यज्यते वर्णः पदं वर्णात् पदाद्वचः।
वचसो व्यवहारोऽयं नादाधीनमतो जगत्॥ —संगीत र०-१।२।२

नाद की व्युत्पत्ति और उसके उत्पत्ति-स्थान की चर्चा के क्रम में राग-तरङ्गिणीकार ने कहा है कि नाभि से ऊपर हृदय देश से उठकर प्राण वायु ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश करती हुई जो अव्यक्त ध्वनि उत्पन्न करती है, उसे नाद कहा जाता है। वही नाद नाभि से समुद्भूत होकर मुख से बाहर व्यक्त होता है—

नाभेरूर्ध्वं हृदिस्थानान्मारुतः प्राणसंज्ञकः।
नदति ब्रह्मरन्ध्रान्ते तेन नादः प्रकीर्तितः॥

आकाशाग्निमरुज्जातो नाभेरूर्ध्वं समुच्चरन् ।
मुखेऽभिव्यक्तिमायाति यस्तु नादस्स ईरितः ॥

संगीतशास्त्र में नाद के प्राणिभव, अप्राणिभव और उभयसम्भव; ये तीन प्रकार माने गये हैं। मनुष्य की नाभि से ऊपर हृदय देश से उठ कर मुख से उच्चरित होने वाला नाद प्राणिभव, वीणा आदि के तार से उद्भूत होने वाला नाद अप्राणिभव और मनुष्य के मुख-मारुत से पूर्ण वंशी आदि के छिद्र से ध्वनित नाद उभय-सम्भव माना गया है।

संगीत में आहत नाद को मनोरञ्जक माना गया है। ध्यातव्य है कि मनोरंजन शब्द का प्रयोग आज मनोविनोद या मनबहलाव के जिस हल्के अर्थ में होता है, उस अर्थ में नाद की मनोरंजकता का उल्लेख नहीं किया गया है। आनन्दात्मक अनुभूति उत्पन्न करना या सौन्दर्य बोध उत्पन्न कर प्रमाता के मन को प्रभावित करना नाद का गुण माना गया है।

भाषा के रूप में नाद की अभिव्यक्ति की प्रक्रिया यह है कि वह स्फुट वर्णों के रूप में उच्चरित होता है जिनकी नियत क्रम में सार्थक व्यवस्था से पद और पद-समूह की परस्पर अन्वित योजना से वाक्यरूपात्मक भाषा का निर्माण होता है। व्याकरण-दर्शन में इसके विपरीत शब्दब्रह्म के अखण्ड रूप की वाक्य, पद, वर्ण आदि के रूप में क्रमिक अभिव्यक्ति मानी गयी है। इस प्रकार समग्र भाषा नाद की ही अभिव्यक्ति है, फिर भी विश्लेषण की व्यावहारिक सुविधा के लिए भाषा की अर्थबोधक शक्ति से स्वतंत्र रूप में मन पर ध्वनि-प्रभाव की सृष्टि करने वाली उसकी शक्ति पर विचार किया जाता है। शब्द-विशेष से अर्थ-विशेष का बोध कराना ही काव्य-भाषा का लक्ष्य नहीं, शब्दों में व्यक्त नाद के सौन्दर्य से प्रमाता के मन पर अपेक्षित प्रभाव का सृजन करना भी उसका ध्येय होता है। कल-कल, छल-छल, झर-झर जैसे ध्वनिअनुकरणात्मक शब्दों के प्रयोग में वस्तु-बोध की अपेक्षा वस्तु के रूप-गुण के प्रभाव की सृष्टि तथा तदनुरूप ध्वनि-प्रभाव की सृष्टि का महत्व अधिक है। शब्द से सङ्केतित अर्थ का ग्रहण तथा शब्दनिष्ठ नाद के मानस प्रभाव का ग्रहण साथ-साथ चलता है।

काव्य-भाषा में नाद-सौन्दर्य की व्यञ्जना वर्ण, पद तथा पदों की विशिष्ट संघटना से होती है। अनुप्रास, यमक आदि शब्दालङ्कारों की योजना में वर्ण, पद आदि की आवृत्ति नाद-सौन्दर्य से भावक के
चित्त को प्रभावित करती है। शब्दार्थगत गुणों के स्वरूप-निरूपण के सन्दर्भ में भी भारतीय साहित्यशास्त्र
के आचार्यों ने भाषा के नादगत सौन्दर्य के महत्व को स्वीकार किया है। श्लेष गुण में पदों का ऐसा
संग्रथन अपेक्षित माना गया है, जिससे शब्द परस्पर मिल कर नृत्य करते-से जान पड़ें। शब्दों का
नृत्यत्प्रायत्व श्रोता के मन पर पड़ने वाले उस प्रभाव का निर्देश करता है जो शब्दों के विशिष्ट ग्रथन से
उत्पन्न होने वाली झंकार का फल होता है। पदगत माधुर्य गुण में मधुर नाद की योजना तथा ओज गुण
में संयुक्ताक्षरप्रधान गाढ़ बन्ध से व्यक्त दीप्त नाद की योजना होती है जिससे श्रोता के मन पर मधुर
और दीप्त प्रभाव उत्पन्न होता है। कोमल पदावली की योजना, पद की आवृत्ति आदि सुकुमारता गुण
का लक्षण है जिससे कोमल ध्वनि-प्रभाव की सृष्टि होती है। इस प्रकार वर्ण, पद, पदबन्ध तथा वाक्य
के श्रुतिमधुर, सुकुमार, ओजस्वी आदि रूपों की योजना पर विचार करने के क्रम में भारतीय साहित्य-
शास्त्र के आचार्यों ने काव्य-भाषा में नाद-योजना के स्वरूप और महत्व पर प्रकारान्तर से विचार किया
है। रसगत माधुर्य और ओज गुणों के स्वरूप को परिभाषित करने के क्रम में वर्ण-पद के नाद-गत

सौन्दर्य से मन पर उत्पन्न होने वाले प्रभाव का मनोवैज्ञानिक विवेचन किया है। माधुर्य-व्यंजक कोमल वर्ण श्रुति-मधुर संवेदना की सृष्टि करते हुए चित्त को आर्द्र या भावविगलित करते हैं। इसके विपरीत ओज के व्यञ्जक कठोर वर्ण श्रुति की संवेदना से चित्त को दीप्त करते हैं। इस प्रकार हम यह पाते हैं कि भारतीय काव्यशास्त्र में नाद के स्वरूप पर प्रत्यक्ष रूप से विचार नहीं होने पर भी तत्तत् प्रसङ्गों में उसके स्वरूप और काव्य-भाषा में उसके सौन्दर्य के महत्त्व का प्रकारान्तर से सूक्ष्म विवेचन होता रहा है।

रस-सिद्ध कवियों की भाषा में नाद-सौन्दर्य और उसके सहारे मनोभाव की अभिव्यञ्जना के असंख्य उदाहरण पाये जाते हैं। यहाँ काव्य-भाषा के नाद-सौन्दर्य के कुछ उदाहरण ही उक्त स्थापना की पुष्टि के लिए पर्याप्त होंगे।

विद्यापति ने प्रेयसी की प्रतीक्षा में निरत नायक के, आशा-निराशा के बीच आन्दोलित मनोभाव की व्यञ्जना इन शब्दों में करायी है—

नन्दक नन्दन कदम्बक तरु तर धिरे-धिरे मुरलि बजाव।

इस वाक्य की नाद-योजना और नाद-समुत्थित स्वर के आरोह-अवरोह से नायक की आन्दोलित मनोदशा का एक भाव-चित्र भावक के मन पर उभर आता है। इस वाक्य में प्रयुक्त शब्द और उसके सङ्केतित अर्थों का उतना महत्त्व नहीं, जितना महत्त्व इसके नाद से उत्पन्न प्रभाव का है।

'देवी वन्दना' में काली के कराल रूप का जो ध्वनिचित्र विद्यापति ने अङ्कित किया है, वह उनके नाद-योजना-कौशल का एक उत्कृष्ट उदाहरण है—

सामर बरन, नयन अनुरंजित
जलद जोग फुल कोका।
कट - कट विकट ओठ-पुट पाँडरि
लिधुर फेन उठ फोका॥
घन-घन घनन घुघुरु कत बाजए
हन हन कर तुअ काता॥

ब्रजभाषा-काव्य में नाद-गत सौन्दर्य के असंख्य उदाहरण मिलते हैं। पद्माकर की गंगालहरी का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

विधि के कमंडलु की सिद्धि है प्रसिद्ध यही,
हरि - पद - पंकज - प्रताप की लहर है।
कहै 'पदमाकर' गिरीस - सीस - मंडल के,
मुंडन की माल ततकाल अघहर है॥
भूपति - भगीरथ के रथ को सुपुन्य पथ,
जह्नु-जप-जोग - फल - फैल को फहर है।
छम को छहर गंगा रावरी लहर,
कलि-काल को कहर, जमजाल को जहर है॥

इस पद में पदों के विन्यास से व्यञ्जित नाद गंगा के तरङ्गाकुल प्रवाह का एक स्पष्ट ध्वनि-चित्र पाठक की कल्पना-दृष्टि के सामने अंकित कर देता है। इस पद के नाद में गंगा-सी ही तरङ्ग-संकुलता का बोध होता है।

हिन्दी की छायावादी कविता में भाषा के नाद-सौन्दर्य का पूर्ण प्रस्फुटन हुआ है। वर्ण्य वस्तु के रूप-गुण आदि को चित्रात्मक स्पष्टता से प्रस्तुत करने तथा वस्तु के प्रभाव की वृद्धि करने में छायावादी काव्य की नाद-योजना सहायक सिद्ध हुई है। हिन्दी कविता की छन्द-मुक्ति-क्रान्ति के नायक निराला के काव्य में नाद-प्रभाव के उत्कृष्ट निदर्शन मिलते हैं। 'राम की शक्ति-पूजा' कविता में दीप्त नाद युद्ध के प्रभाव की अभिवृद्धि में सहायक है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

प्रतिपल परिवर्तित व्यूह-क्रुद्ध कपि विषम हूह,
विच्छुरित-वह्नि - राजीवनयन - हत लक्ष्य बाण,
लोहित - लोचन - रावण - मदमोचन - महीयान,
राघव-लाघव - रावण - वारण—गत युग्म प्रहर,
उद्धत लंकापति - मर्दित - कपि-दल-बल-विस्तर,
अनिमेष राम विश्वजिद्दिव्य - शर - भंग-भाव—
विद्धांग—बद्ध कोदण्डमुष्टि खर रुधिर स्राव,
रावण - प्रहार - दुर्वार-विकल-वानर-दल-बल—
मूर्च्छित - सुग्रीवांगद - भीषण - गवाक्ष-गय-नल,
वारित सौमित्रि भल्लपति—अगणित मल्ल-रोध,
गर्जित प्रलयाब्धि - क्षुब्ध - हनुमत् - केवल प्रबोध,
उद्गीरित-वह्नि-भीम-पर्वत-कपि - चतुः प्रहर—
जानकी - भीरु-उर-आशा-भर—रावण - सम्वर।

'गर्जन से भर दो वन' शीर्षक कविता में भी निराला ने विषयानुरूप नाद-योजना से मेघ का प्रभावोत्पादक चित्र अंकित किया है—

गरजो, हे मन्द्र, वज्र-स्वर,
थर्राये भूधर - भूधर
झर-झर झर-झर धारा झर
पल्लव-पल्लव पर जीवन।

निष्कर्ष यह कि नाद-योजना में निपुण कवि की भाषा वर्ण्य विषय का स्पष्ट भाव-चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ होती है और साथ ही ध्वनि-प्रभाव से काव्य के पाठक के चित्त को मधुर या दीप्त भावानुभूति में मग्न कराने में भी समर्थ होती है। नाद की सफल योजना से भाषा के सौन्दर्य और उसकी अभिव्यञ्जना-शक्ति की वृद्धि होती है।

□

मैथिली पत्रकारिता को मनाया जा सकता है

श्री विभूति आनन्द

प्रथम पृष्ठ

मैं मैथिली पत्र-पत्रिका पर लिखना चाहता हूँ। किन्तु लिखने के लिए जब वर्त्तमान को देखते हुए भूत की ओर दृष्टि-निक्षेप करता हूँ तो लेखनी और मस्तिष्क दोनों ही क्षण भर के लिए स्थिर से हो जाते हैं।

सबसे पहले तो मैथिलीमें पत्र-पत्रिका का प्रकाशन अर्थात् पत्रकारिता का श्रीगणेश भारतीय परिप्रेक्ष्य में बहुत पीछे आ कर होता है। जब मैथिली के पहले पत्र का प्रकाशन हुआ, उससे लगभग सवा सौ वर्ष पूर्व ही भारत में प्रथम पत्र का प्रकाशन हो चुका था। आखिर इसका कारण क्या हो सकता है?

भारतीय पत्रकारिता की प्रारम्भिक स्थिति की चर्चा करते हुए डा० कृष्ण बिहारी मिश्र लिखते हैं कि—"**अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से जिस प्रकार अंग्रेजी सरकार आशंकित थी वैसे ही मुद्रणकला और पत्रकला के विकास को वह एक प्रतिकूल शक्ति का अशुभ विकास समझती थी। इसलिए उसके विकास-मार्ग में नाना प्रकार के अवरोध उपस्थित करती रहती थी, किन्तु अधिक समय तक उसे दबा रखना सम्भव न था। स्वार्थ का भी आग्रह था जिसके चलते उसे कलकत्ता और मद्रास में प्रेस खोलना पड़ा। पहला प्रेस सीरामपुर (बंगाल) में बापटिस्ट मिशनरी द्वारा खोला गया और पहला भारतीय पत्र एक अंग्रेज के सम्पादकत्व में २९ जनवरी १७८० में प्रकाशित हुआ..........इस पत्र का नाम था 'हिकीज बंगाल गजट' अथवा कलकत्ता जेनरल अडवरटाइजर** (हिन्दी पत्रकारिता, पृष्ठ १८)

१८२१ के आसपास **समाचार दर्पण, दिग्दर्शन, संवाद कौमुदी** आदि बंगला पत्रों का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया था।

३० मई १८२६ ई० को हिन्दी का प्रथम पत्र **उदन्त मार्त्तण्ड** का प्रकाशन हुआ।

तात्पर्य यह कि तवतक भारत में पत्रकारिता भली भाँति अपना पाँव जमा चुकी थी जब मैथिली का प्रथम पत्र मैथिल हित साधन मिथिला से दूर राजस्थान के जयपुर नामक शहर से १९०५ ई० (सन् १३१४ साल) में प्रकाशित हुआ।

यह अन्तर, जैसा कि आरम्भ में ही लिख चुका हूँ, लगभग सवा सौ वर्षों का है। आदिकाल से ही मिथिला विद्या की खान रही है। यहाँ की विद्वत्ता सर्वविदित थी। यहाँ की भाषा मैथिली को हम चर्यापद प्रभृति सामग्रियों के आधार पर करीब ८०० ईसवी से ही मानते हैं। किसी भी जीवित भाषा का लक्षण यही माना जाता है कि वह क्रमशः विकसित होता रहे। हम इसे भी मुक्तकंठ से स्वीकार करते हैं कि मैथिली एक जीवन्त एवं सतत विकसित होती रहने वाली भाषा है।

किन्तु किसी भाषा को समय-काल से जोड़ रखनेवाला जो सबसे बड़ा अस्त्र होता है, उस भाषा की पत्र-पत्रिका, उस दिशा में मैथिली क्यों पिछड़ी रह गई ?

डा० कृष्ण बिहारी मिश्र ने अपनी उक्त पुस्तक में एक जगह लिखा है कि—भारतीय पत्रकारिता की कहानी भारतीय राष्ट्रीयता की कहानी है। दोनों की विकास भूमियां एक दूसरे की सहायक रही हैं। यदि पत्रकारिता ने राष्ट्रीयता को प्रवर्द्धन दिया तो पत्रकारिता ने भी राष्ट्रीयता के विकास की अनुकूल भूमि तैयार की। इस प्रकार राष्ट्रीयता के विकास से पत्रकारिता का अपेक्षित विकास हुआ। (पृष्ठ-५७)।

लेकिन क्या मैथिलीभाषी क्षेत्र, उसके भाषाभाषी उक्त राष्ट्रीयता की कहानी से सर्वथा असंपृक्त रहे ? उनका हृदय आलोड़ित नहीं हुआ ? लेखनी नहीं उठी ? और इसके लिए अपने भाषा के पत्र की उपयोगिता का बोध नहीं हुआ ? आखिर क्यों ? इसका आखिर क्या कारण हो सकता है ?

मैथिली पत्र-पत्रिका पर लिखने से पूर्व इस तरह के बहुत से प्रश्न-प्रतिप्रश्न मन में उठते रहे। पर समाधान न हो सका।

लेकिन संतोष के लिए कोई कारण ढूँढ़ना है इसलिए जो भी दो चार बातें उद्धरण के परिसर में उपस्थित हुईं, उन पर अंततः विश्वास करना ही पड़ा।

बाबू लक्ष्मीपति सिंह लिखते हैं कि—पारस्परिक कटु-आलोचना, ध्वंसात्मक उपेक्षा, संकीर्ण-नीति, दलीय प्रशस्ति, दलगत संघर्ष, साम्प्रदायिक वैषम्य, संकुचित दुराग्रह, व्यावसायिक दृष्टिक अभाव, व्यापक संघटनक अभाव, प्रचार-प्रसारक अस्त-व्यस्त प्रक्रिया, समुदाय विशेषक प्रति विशेष आसक्ति आइ धरि मैथिली पत्रकारिता हेतु अनिवार्य व्यवधान बनल रहल अछि (मैथिली साहित्यक रूप-रेखा, भाग-२ पृष्ठ ७७)

N. Kumar लिखते हैं कि "In contrast to Bengali language Maithili cou'd not develop itself mainly because of neglect by its Sanskrit scholars (JOURNALISM IN BIHAR, P—X)

डा० दिनेश कुमार झा का कहना है कि—पत्रकारिताक उदय एवं अवसानक एकटा मुख्य कारण अछि समाचार-पत्रकारिताक उपेक्षा एवं साहित्यिक पत्रकारिता धरि ओकर सीमा। भारतीय पत्रकारिताक इतिहास ई स्पष्ट करैत अछि जे वएह पत्रिका, ओही भाषाक पत्रिका दीर्घजीवी भ' सकल अछि जे लोकक सामयिक जीवन एवं ओकर साहित्यिक रुचिकें एक संग तृप्त कयलक अछि (मैथिली साहित्यक आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ—१६०)

कहीं पढ़ा था कि मैथिलीक कोनो पत्र पत्रिकाके जनता किम्वा धनिकक स्नेहांजलि प्राप्त करवाक सौभाग्य कहिओ नञि भेटलै। एकर भाग्यमे सभदिन इन्होरोसें गरम अर्थाभाव रहैत आयल छै जकर फलस्वरूप पत्र पत्रिका सभ के वनजात लतिकाक समान कहियो लहलहएवाक तथा पुष्पित होएवाक अवसर नञि भेटलै।"

डा० दुर्गानाथ झा 'श्रीश' कुछ अधिक सुलझा कर कारण स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि—"प्रधान कारण अछि मैथिली भाषा भाषीक अपन साहित्यिक अभ्युन्नतिक प्रसंग उदासीनता। परन्तु एहि उदासीनताक हेतु मैथिली पत्रिकाक प्रकाशक ओ सम्पादक कम दोषी नहि छथि। प्रकाशक कें एहि प्रकाशनक प्रसंग उत्साह आ धैर्य नहि रहैत छनि आ सम्पादक पत्रक उचित स्तर दिशि ध्यान नहि दैत छथि ... .ओहि स्तरक निर्वाह नहि कए पबैत छथि। (मैथिली साहित्यक इतिहास, पृष्ठ—१३४)

द्वितीय पृष्ठ

उपर्युक्त विवेचन के साथ उद्धरण प्रस्तुत करने के पीछे मेरा एकमात्र उद्देश्य यह रहा है कि मैथिली पत्रकारिता निचोड़ रूप में हमें हताश ही करती रही है लेकिन इस निराशा के बाद भी इस पर विचार करने की आवश्यकता है और साथ ही इसके सुधार की दिशा में बुद्धि लगाने की भी। अपने इस आत्ममंथन के क्रम में मैं यह भी नहीं कहना चाहता कि मैथिली में पत्रकारिता हुई ही नहीं अथवा मैथिली पत्र-पत्रिका अपने-अपने अल्प जीवन में साहित्य को कुछ न दे पायी।

मैथिली पत्र-पत्रिकाओं की आदि काल से ही असामयिक मृत्यु होती आ रही है। और यह हमारे स्वभाव में रच-बस गया है। इसलिए इस विषयपर बात करने से पूर्व उक्त हादसा की स्थिति को अलग ही रखकर बातें करना अब युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

मैथिली पत्र-पत्रिका के साथ यह दुर्भाग्य रहा है कि यह कभी भी पूर्णरूपेण युवा-रूप को नहीं पा सकी। कभी छः महीने के अन्दर तो कभी साल भर के भीतर अपनी आन्तरिक बीमारी के कारण जान से हाथ धोती रही।

लेकिन इसका जन्म-पुर्नजन्म होता रहा है, मैथिली भाषी बंधु इसके अंत को आरम्भ से पूर्व देखते हुए भी जन्म देते रहे हैं, निराश नहीं हुए हैं। और इस इतिहास की भूतकाल से लेकर वर्त्तमान काल तक पुनरावृत्ति होती रही है। मैं आशा करता हूं कि भविष्यत्‌काल में भी बहुत दिनों तक यही स्थिति रहेगी।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैथिली का प्रथम पत्र है **मैथिल हित साधन** जो मैथिली के शुष्क-विदीर्ण बगीचे में अंकुरित हुआ, पल्लवित-पुष्पित हुआ और प्रायः अपने जीवन के तीन वर्षों में ही सूख गया। कारण चाहे जो भी रहा हो मगर अपने अल्पकाल में ही इसने मैथिली जगत को आलोड़ित-विलोड़ित कर डाला। उच्च स्तर की साहित्यिक सामग्री, अपने व्यापक दृष्टिकोण तथा भाषा-स्नेह के आवेग में इस पत्र ने दर्शन, व्याकरण, भूगोल, स्वास्थ्य आदि विषयों पर भी यथेष्ट सामग्री प्रकाशित की। यह श्रेय इसी पत्र को है कि **कवीश्वर चन्दा झा, जीवन झा, यदुवर** आदि लेखकों को प्रकाश में लाया।

मैथिल हित साधन के प्रकाशन से प्रोत्साहित होकर अथवा प्रतिक्रिया स्वरूप, यह नहीं कहा जा सकता, दूसरा पत्र काशी से प्रारम्भ हुआ, जिसका नाम था **मिथिला मोद**। इस पत्र के सम्पादक हुए **म० म० पं० मुरलीधर झा**। मगर उनका नाम इसमें छपता नहीं था। इसके प्रकाशन वर्ष पर भी मतैक्य नहीं है। कोई १९०५ तो कोई १९०६ ई० मानते हैं। प्रारम्भ में हिन्दी मैथिली दोनों माध्यमों से यह निकलता था। बाद में विशुद्ध मैथिली हो गया।

मैथिली पत्र-पत्रिका के इतिहास में यह सभी पत्रों की अपेक्षा अधिक दिनों तक जीवन्त बना रहा, विभिन्न अवरोधों के बावजूद लगभग २७ वर्षों तक। इसका मूल स्वर था—मैथिल समाज में नवजागरण लाना। वैसे मैथिली गद्य के विकास में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

किन्तु तबतक भारतवर्ष में बंगला हिन्दी आदि की पत्र-पत्रिकाएँ प्रौढ़ हो चुकी थीं। मैथिली में छिटफुट रूप में निकल रही पत्रिका शिक्षित नव युवकों को सन्तुष्टि देने में अक्षम थी (वैसे आज भी सन्तुष्टि नहीं दे रही है)। संस्कृत के पंडितों का समाज में ऐसा बोलबाला था कि किसी नई बात का श्रीगणेश हो ही नहीं सकता था। मैं यह बात यहाँ खुलकर कह सकता हूँ कि संस्कृत के पंडितों ने मैथिली को सबसे अधिक हानि पहुँचायी। उन्होंने उसे एक वर्ग विशेष, जाति विशेष की भाषा बना दिया, भाषा के स्वरूप को संस्कृत की चाशनी में डूबोकर इस भाँति विकृत कर दिया कि वह अन्य वर्गों की भाषा बनने से प्रारम्भ ही में च्युत हो गई।

और वही चाशनी का विष मैथिली के विकास को आज भी अवरुद्ध कर रहा है। मैथिली मतवाली सी दर-दर की ठोकरें खा रही है। बहुसंख्यक उसे अपना मानते हुए भी अंगीकार करने से पीछे हट रहे हैं, इसलिए दुत्कार रहे हैं।

और इसी वातावरण में इसका विकास कच्छप-गति से होता रहा, हो रहा है। कोई प्रतिक्रिया स्वरूप, तो कोई मातृभाषा के अनुराग से, पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित करते रहे। ऐसे वातावरण में ही बहुत सारे लेखकों का जन्म होता रहा। **मिथिला** को तो यह श्रेय स्पष्ट रूप से मिलता है। कि **प्रो० हरिमोहन झा** जैसे लेखक को जन्म दिया। यह पत्र १९२९ में आरम्भ हुआ **बाबू भोला लाल दास** एवं **कुशेश्वर कुमर** के सम्पादकत्व में। मैथिली में प्रथमतः कार्टून इसी में प्रकाशित हुआ इस सम्बन्ध में N. Kumar लिखते हैं—It was the first Maithili paper which had Introduced Cartoons in Maithili Journalism directed towrards social reforms

और यहां यह कहना भी अप्रासंगिक नहीं होगा, कारण मेरा लक्ष्य यह भी है कि आखिर पत्र-पत्रिका के विकास में बाधक तत्व कौन-कौन से रहे हैं, कि पत्रिका के प्रकाशन में प्रारम्भ से ही आंतरिक कलह का बीजारोपण भी हो गया। और जिसका खुला स्पष्ट स्वरूप आया **विभूति** और **भारती** में, जिसके सम्पादक थे—क्रमशः **भुवनेश्वर सिंह 'भुवन'** और **बाबू भोला लाल दास**।

यह सत्य है कि साहित्यिक भंडार को भरने में प्रगतिशील लेखक **भुवन** जी ने अपनी पत्रिका **विभूति** को अविस्मरणीय रखा। उस समय के अधिकांश उच्च श्रेणी का साहित्य **विभूति** के माध्यम से ही प्रकाश में आया। मगर 'भारती' के साथ आरोप-प्रत्यारोप की जो आँधी चली उसे भी मैथिली साहित्य के विकास के अवरोधक के रूप में भुलाया नहीं जा सकता। तत्कालीन मैथिली विकास के वातावरण को विषाक्त करने में इन दोनों पत्रों का योगदान विशेष रहा, और इसके बाद का प्रभाव अत्यन्त बुरा पड़ा, जिसे हम अभी तक भोग रहे हैं।

मैथिली पत्र-पत्रिकाएँ आरम्भ से ही मूलतः साहित्य-सर्जन में अधिक रुचि लेती रहीं, उसी साहित्य-सर्जन रूपी कील में चतुर्दिक चक्कर लगाती रहीं। और इसी क्रम में **मैथिली साहित्य पत्र, वैदेही, पल्लव, अभिव्यंजना, सोनामाटि** आदि का विशेष योगदान रहा। **मैथिली साहित्य पत्र** में कुछ पुरानी पाण्डुलिपियों को पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया। **अभिव्यंजना** और **सोनामाटि** ने मध्य प्रगतिशील संरचना को प्रोत्साहित किया। **वैदेही** और **पल्लव** ने इन सबसे थोड़ा ऊपर उठ कर उच्चस्तरीय साहित्य, खासकर मैथिली कथा साहित्य को समृद्ध करने में विशेष भूमिका रखी। खासकर **वैदेही** द्वारा मैथिली कथा और कथाकार का जो रूप प्रकाश में आया, उसने मैथिली कथा की नींव का काम किया और उसी पर आज का मैथिली कथा-महल खड़ा हुआ है।

और इस क्रम में यह कह देना भी आवश्यक समझता हूँ कि जैसे-जैसे नई-नई पत्र-पत्रिकाओं का जन्म होता गया, पुराना मरता हुआ इतिहास बनता गया, इन सब के स्वर में भी बदलाव आता गया। नवीन शिक्षा से मंडित विद्वानों के छोटे किन्तु समर्पित लोग मातृभाषा के महत्व को समझने लगे और मैथिली संस्कृत पंडितों की दीवार से बाहर आने लगी। मैथिली साहित्य ने अपनी संकीर्ण परिधि से निकल मुक्त आकाश के नीचे निश्वास छोड़ा और श्वास लिया तो उसे अपनी वर्तमान स्थिति पर कचोट हुआ।

और क्रमशः मैथिली साहित्य युग की आह और धाह से परिचित होता गया। इसकी परिधि व्यापक होती गयी। मैथिल समाज को संकीर्णता के चिह्न पर नचानेवाली **मैथिल महासभा** जैसी संस्थाओं का अस्तित्व मिटने लगा। लोगों को इसकी निरर्थकता का बोध होने लगा। देश को परतंत्रता की बेड़ी से मुक्त कराने का आंदोलन चला। देश आजाद हुआ। प्रजातंत्रीय शासन व्यवस्था कायम हुई। एक देश से दूसरे देश के सम्बन्ध और परिचय बढ़ने लगे। मार्क्सवाद और पूँजीवाद के टकराव से जन-मानस में चेतना की नई लहर जगी।

और इन सारी स्थितियों से साहित्य प्रभावित होता रहा। कुछ विलम्ब से ही सही, मैथिली साहित्य भी इस से प्रभावित हुआ। पंडित वर्ग की सड़ी मानसिकता धीरे-धीरे छँटती गई और लोक-जीवन की आह और धाह ने साहित्य को नव जीवन प्रदान किया।

ऐसी ही स्थिति में **आखर, अग्निपत्र, सन्निपात, फराक** आदि का प्रकाशन हुआ। इन सारी पत्र-पत्रिकाओं में युग के स्वर को देखा-परखा जा सकता है। यन्त्रवत् हुए जनजीवन की तड़प को और उसके मध्य नए-नए जन्मे, जन्म लेते हुए शोषकों द्वारा शोषित होते लोगों के चीत्कार और आक्रोश को पढ़ा जा सकता है।

मगर जनजीवन से जुड़ कर, उसी की बातों को लिख कर भी मैथिली पत्र-पत्रिकायें दीर्घायु न हो सकी। इनकी वही गति हुई, जो पूर्व के पत्रों की होती रही।

इधर कथा विधा को समर्पित पत्रिका **कथा दिशा** का प्रकाशन हुआ, तो कुछ वर्ष पूर्व काव्य-पत्रिका निकली **मैथिली कविता**। इसी कालखंड में समाचार-विचार का मासिक पत्र निकला **देसकोस** अथवा इसी तरह के दवे स्वरूप में **स्वदेश, मिथिला टाइम्स, भूमि** को भी लिया जा सकता है। बच्चों को समर्पित पत्रिका **धीयापूता** और **बटुक** को भी इसी श्रेणी में रखा जा सकता है। मैथिली आन्दोलन को मुखरित करने वाली मासिक पत्रिका **मिथिला दर्शन, मैथिली दर्शन** हो या आन्दोलन समाचार-विचार साप्ताहिक **समाद** और **विकल्प** हो, रही सबकी गति एक ही। किसी भी दृष्टि से ये अपने को दीर्घायु न रख सकीं।

इधर हाल के वर्षों में **शिखा, लालधूआँ, आहुति** आदि की चर्चा भी खूब रही। ये पत्रिकायें विशुद्ध युवावर्ग के द्वारा युवावर्ग के प्रगतिशील विद्रोही स्वर को मुखरित करती रहीं। नव प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका **आरंभ** पर तत्काल कुछ कहना युक्तिसंगत नहीं लग रहा है। फिर भी इसका प्रथम अंक देखने से यह प्रतीत होता है कि यह विशुद्ध वामपंथी पत्र नहीं है। इसने **कथा-दिशा** की तरह किसी एक विधा को समर्पित न होकर, सभी सामग्रियों को अंगीकार करने का प्रयास किया है।

मैं यहाँ यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा यह दृष्टिकोण कथमपि नहीं रहा कि मैथिली की सभी पत्र-पत्रिकाओं के नाम गिनाऊँ जो प्रकाशित हुईं, कुछ कार्य किया और समाप्त हो गईं। यदि वैसा करूँ, तब तो १९०५ ई० से लेकर आज १९८३ ई० तक में सौ नहीं तो नब्बे से ऊपर ही पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। सभी अपने अलग-अलग उद्देश्य लेकर निकलीं। मैंने मूल प्रवृत्ति को लेकर थोड़ी चर्चा की है। और इस छोटे से आलेख में यही संभव भी था।

मैं **मिथिला मिहिर** की चर्चा जान बूझकर सबसे अंत में कर रहा हूँ। मैथिली साहित्य के विकास में इसका अप्रतिम योगदान है। और यह सायास अथवा अनायास, विचारणीय है। **मिहिर** का प्रथम प्रकाशन प्रारम्भ हुआ १९०९ ई० में दरभंगा से। इसका आरम्भिक स्वरूप हिन्दी-मैथिली मिश्रित था। जो इसका मासिक रूप था, बाद में यह साप्ताहिक हो गया। दरभंगा-राज के संरक्षण में निकली इस पत्रिका के अनेक सम्पादक हुए जिनमें **सुरेन्द्र झा सुमन** का नाम विशेष उल्लेखनीय कहा जा सकता है, मगर यह भी मूलतः पंडितों के तर्ज पर ही निकलती रही। और यही कारण है कि यह व्यापक रूप नहीं ले सकी। इसमें प्रमुखता हिन्दी की ही थी, मैथिली खानापूरी के लिए नाममात्र रहती थी। १९५४ में इसका प्रकाशन स्थगित हो गया।

यह पत्र पुनः १९६० ई० से साप्ताहिक रूप में पटना से 'शेखर' जी के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने लगा। जो अभी तक प्रकाशित हो रहा है। इसके दीर्घायु होने का एकमात्र कारण है कि यह एक बड़े प्रेस के साथ सम्बद्ध है।

हाँ मैथिली के वर्त्तमान साहित्य के निर्माण में इसकी भूमिका सर्वोपरि है। युग की माँग के अनुकूल जैसे-जैसे साहित्य सर्जन होता गया, मिहिर उसे आदरपूर्वक स्थान देता आ रहा है। लेकिन मुख्यतः इसका उद्देश्य यह नहीं है। यह मातृभाषा को समर्पित एक पत्र है जिसे देखने वाला कोई नहीं है। इसलिए इसमें कुछ भी छप सकता है, छपता रहा है। किसी खास वाद, दल या उद्देश्य का प्रचार इसका कार्य नहीं है। यह एक पारिवारिक पत्रिका रहते हुए भी साहित्य के सर्वांगीण विकास को सतत ध्यान में रखे हुए है।

अन्तिम पृष्ठ

इतनी तरह के विवेचनों के पश्चात् इस अंतिम प्रकरण में मैं इस विषय पर विचार करना चाहूँगा कि मैथिली पत्रकारिता को मनाया जा सकता है या नहीं। क्योंकि इसका अब तक का इतिहास मानिनी का इतिहास रहा है जिसे मातृभाषा के अनुरागी जन बार-बार समझा-बुझाकर लाते रहे हैं, स्थिर करते रहे हैं और यह बार-बार अपनी आदत के मुताबिक वही पुराना रवैया अपनाती रही है।

मेरे विचार से पत्र-पत्रिका के प्रकाशन के पीछे एक दृष्टि मुख्य रहनी चाहिए और वह दृष्टि है व्यावसायिक दृष्टि। मैथिली में इसका सर्वथा अभाव रहा है। इसके पास अभी एक भी व्यावसायिक पत्र नहीं हैं। मिथिला मिहिर को व्यावसायिक पत्र नहीं कहा जा सकता। यदि इसके पीछे व्यावसायिक दृष्टि होती तो इसे आज यह दिन न देखने को मिलता। स्वदेश इस दृष्टि की हामी मात्र भरता है। इसके लिए कुछ आवश्यक तत्व होते हैं, जिनका इसमें अभाव है। चन्दा-बेहरी लेकर व्यवसाय नहीं किया जा सकता। दूसरे इसे हिन्दी की बाजार के साथ चलना है, अतः उसी दृष्टि के साथ चलना होगा। देसकोस कुछ अंश में इस दिशा की ओर क्रियाशील हुआ था किन्तु वितरण की अव्यवस्था, आंतरिक कलह और विषय-वस्तु की क्रमशः स्तरहीनता उसे ले डूबी। मैथिली पत्रकारिता का यथार्थतः आरम्भ इसी पत्र ने किया, लेकिन मैथिली के दुर्भाग्य के साथ इसका दुर्भाग्य भी आ जुड़ा और एक-डेढ़ वर्षों के अभ्यन्तर यह बन्द हो गया।

मैथिली पत्रकारिता के विकसित न होने के पीछे एक तर्क यह भी लिया जा सकता है कि किसी मैथिल अथवा गैर-मैथिल व्यवसायी ने इसे व्यवसाय के तौर पर नहीं लिया। यह भी एक अच्छा व्यवसाय हो सकता है, यह उनकी समझ से परे रहा है। और चूँकि कोई व्यावसायिक पत्र इसे प्राप्त नहीं हो सका है इसलिए एक भी कुशल पत्रकार अथवा सम्पादक जन्म नहीं ले सका।

यह एक भयानक स्थिति है। कारण कोई योग्य सम्पादक नहीं है, अतः बहुत सारा फेक साहित्य, साहित्य में स्थान पा रहा है और क्रमशः मैथिली भाषी अपने साहित्य को पढ़ने-गुनने से दूर

होते जा रहे हैं। योग्य पत्रकार के अभाव में हम समसामयिक गतिविधियों को अपनी भाषा के माध्यम से पढ़ने से वंचित रह जाते हैं।

आज के मशीनी युग में व्यस्त मनुष्य को खाली समय में कुछ मानसिक खुराक चाहिए। यदि उसे अपनी भाषा में यह नहीं मिलेगा तो अन्यत्र अपनी क्षुधा तृप्ति का प्रयास करेगा। मैथिल अभी यही कर रहे हैं। और यह चिन्ता का विषय है। कारण इसके बाद का प्रभाव बहुत खराब पड़ रहा है। मैथिली मैथिलीभाषियों से दूर होती जा रही है।

अब इस स्थिति को तोड़ने का वक्त आ चुका है। इसमें मैथिली को समर्पित-समर्थ कुछ संस्थाओं का महत्त्व बहुत अधिक हो गया है। सबको एक सूत्र मे पिरोने मात्र की आवश्यकता है। लेकिन यहां भी एक प्रश्न उपस्थित हो जाता है कि बिल्ली के गले में घंटी बांधे कौन ?

वैसे मैथिली पत्रकारिता को मनाया जा सकता है। और इसके लिए पहल करना आवश्यक है। इसके लिए समग्र रूप से, गंभीर ढंग से सोचने का समय आ चुका है। वातावरण का निर्माण किया जाता है, स्वयं नहीं हो जाता। इसे करना सबों का दायित्व है। और इसके लिए सर्वप्रथम, सभी राग-द्वेष को मिटाना होगा और अपने इतिहास से सीख लेने की बजाय नया इतिहास बनाना होगा।



बांला ओ मैथिली साहित्ये बारमास्या

डा० : अरुणा माधव

मानवजीवनेर हासिकान्ना, अनुराग-विराग, आशा-आकांक्षा, प्रकृतिर संगे निविड़ एकात्मता साहित्यस्रष्टार काछे विशेष रूपे धरा देय। बांला ओ मैथिली साहित्ये बारमास्या एमनि एकटि विशिष्ट रूप परिग्रह करे आमादेर चित्ते आनन्द, विषाद ओ विस्मय सञ्चार करे। प्रकृतिर नव-नव रूपसम्भार ऋतुते ऋतुते मासे मासे मानव हृदयके नाना भावे सम्पृक्त क'रे विविध वर्ण गन्धे शब्दे विच्छुरित हय। ग्रीष्मे वर्षाय शरते हेमन्ते शीते वसन्ते प्रकृतिर नित्य नवीन शोभा मानवमने युगपत् आनन्द ओ वेदना जागाय। प्रकृति बारो मासे भिन्न रूपे प्रकटित हय एवं वैचित्र्यमय प्रकृति नायिकार मने कत विचित्र भाव संचारित करे तार परिचय मध्ययुगेर बारोमासिया गीतगुलिते पाओया जाय।

वैशाखेर प्रचण्ड दावदाह, श्रावणेर घनघटा, आश्विनेर आनन्दमय कोलाहल, वसन्तेर मादकता, एइ सब असीम वैचित्र्येर सौन्दर्य छवि एवं मानव हृदयेर स्तरे-स्तरे संचित आनन्द वेदनार प्रकाश बारमास्या गीतगुलिते अति सहज सरल काव्यरस सृष्टि क'रे, गानगुलिके चिरदिनेर मतो आदरणीय करे तुलेछे।

बाङ्गाली ओ मैथिल कविगण बारमास्यार मध्ये कत विचित्र ध्वनि, कत मोहन दृश्य, कत करुण आर्ति, अकपट अनाडम्बर भाषाय प्रकाश करेछेन। बांला बारमासिया वा बारमास्याते प्राचीन ओ मध्ययुगेर मंगलकाव्येर कविगण नायिकार बारमासेर सुख-दुःखेर वर्णना करेछेन।

देवीमाहात्म्यज्ञापक देवीपूजा प्रचारेर काहिनीते देवीकथार संगे-संगे मानव कथाओ कविगणेर काछे स्पृहणीय रयेछे।

मंगलकाव्य प्रधानत गेय काव्य। मानव कथार सहज सरल सुख-दुःखेर काहिनी श्रोतादेर करे तोले नायक-नायिकार वेदनाय समव्यथी। चण्डीमंगल काव्य थेके कालकेतु फुल्लरा काहिनीर अन्तर्गत फुल्लरा बारमास्या एवं धनपति सदागरेर काहिनीर अन्तर्गत खुल्लनार दुःखेर बारमास्या, ओ सिंहल राजकन्या सुशीलार सुखेर बारमास्या, वर्तमान प्रबन्धे आलोचित हबे।

मनसामंगल काव्ये पाओया जाय कोथाओ बेहुलार अष्टमासी, कोथाओ छयमासीर विवरण वा अष्टमासी वा छयमासेर संवाद नामे परिचित। मनसार पूजा प्रचारेर बारमासेर विवरण हल मनसा मंगल काव्येर मनसार बारमास्या।

मैथिली साहित्ये बारहमासा, नोमासा, छोमासा, चोमासा नायिकार सुख-दुःखेर कथा तुले धरेछे। वर्तमान प्रबन्धे आलोचित मैथिली गीतगुलि संगृहीत हयेछे मिथिला गीत-संग्रह, द्वितीय ओ चतुर्थ भाग, एवं मैथिली व्यवहारक गीत, द्वितीय भाग थेके। एछाड़ा कयेकटि लोक प्रचलित बारह मासा गीत श्रीमती इन्दिरा झार सौजन्ये प्राप्त हयेछे।

बांला साहित्ये बारमास्याय वर्णित हयेछे प्रतिमासेर प्राकृतिक विपर्यये नायिकार सुख-दुःखेर कथा। मैथिली गीत गुलिते प्रधानतः नायिकार बारह मासेर विरह-वेदनार प्रकाश। कृष्णविरह एइ मैथिली गीत गुलिर मुख्य घटना। गोयालिनी गणेर बारह मासाय आछे दामी कृष्णेर विरुद्धे गोपीगणेर नाना प्रेममय अभियोग। प्राचीन बांला साहित्येर श्रीकृष्णकीर्तन संग्रहेर राधाविरह खण्ड ओ दान खंडेर संगे एइ मैथिलो ग्वालरी बारहमासार भाव ओ भाषार अनेक सादृश्य लक्ष्य करा याय। बांलाय बला हय, कानु विने गीत नाइ'। मैथिली बारहमासा गानगुलितेओ मने हय 'कानु विने गीत नाइ।'

श्रीमद्भागवतपुराणेर प्रभाव समग्र भारतीय प्रेमभक्ति-प्रधान साहित्यके प्रभावित करेछे। श्रीकृष्णकीर्तन ओ मैथिली सामयिक गीते भागवत पुराणेर दशम स्कन्देर सप्तचत्वारिंश अध्यायेर प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट। उद्धवेर काछे गोपीगणेर कृष्णविरहे वेदनार प्रकाश ओ भ्रमरगीते भ्रमर-गंजन मैथिली बारहमासा गीतगुलिर अन्यतम प्रधान विषयवस्तु। विरह-वेदनार निविड़ता ओ प्रकृति वर्णनार मधुरता मैथिली गीत गुलिर साहित्य गुण वर्धित करेछे।

गोपीगण बारहमासियाते विलाप करछेन—

"आयल मास अषाढ़ वर्षा ऋतु आये,
शोच करत ब्रज नागरि रे प्रीतम नहि आये।"

अविश्राम वारि-धाराय व्याकुल हये बलछेन—

"सावन शरद सोहावन रे बरखै दिन राति
झिंगुर देत झकोर रे फाटय मोर छाती।"

अन्यत्र एइ आषाढ़ श्रावणेर वर्णनाय पाओया याय—

'प्रथम मास अषाढ़ हे सखि साजि चलल जलधार यो
वारि वयस विदेस बालम करब कोन परकार यो।
सावन रिमिझिमि बुन्द बरिसत पिया बसथि बरि दूर यो
पिया पिया कै रटत पपीहा जंगल बोलत मोर यो॥"

बांलाय श्रीकृष्णकीर्तने राधा विरहे श्रीराधाओ एइ वर्षाय व्याकुल हये बलेछेन—

मेघ आन्धारी अति भयंकर निशि।
एकसरि झूरौं मो कदम्बतले बशि।
चतुर्दिश चाचों देखिते ना पाउं ?
मेदिनी विदार देउ पशियाँ लुकाउं॥"

मैथिली नायिका श्याम विरहे आषाढ़ श्रावणे बलछे—

प्रथम मास अषाढ़ सुन्दरि श्याम गेल मोहि तेजि यो
कोन विधि हम मास खेपब हरत दुख मोर कोन यो ।
साओन चमकय विजुली छिटकय हृदय फड़कय मोर यो
आज नहि नन्दलाल आओत जीवन आव कोन काज यो ।।

चौमासाय आर एकटि पदेओ एइ वर्षाऋतुर सुन्दर वर्णनार मध्ये नायिकार प्रेम-भावना प्रकाश पेयेछे—

दादुल घनघोर बाजै शोर कर पिक मोर यो
प्रथम मास अषाढ़ अनुगत मदन दोगुन जोर यो
आरे जोर जीवन भेल अतिशय घर ने आयल सखि निर्दय ।
दय गेल अवधि दुरन्त आगुन समय भाओन कन्त यो ।

श्रीकृष्णकीर्तने राधा-विरहे देखि—

जेठ मास गेल आसाढ़ परवेश
शामल मेघे छाइल दक्षिण प्रदेश
एड़ों नाइल निठुर से नान्देर नन्दन

भाद्रमासे एकाकिनी नायिका विलाप करेन—

भादर भवन डरावन रे बिरहिनि दुख भारी ।
दामिनि दमसि डेराय रे बिनु पुरुषक नारी ।।
भादर जलथल नदी उमड़ि गेल चहु दिशि श्याम श्याम यो ।

चारिदिके भाद्रेर चतुर्दिक्प्लावी श्यामेर मत श्याम वर्ण नायिकाचित्ते सृष्टि करे भय विह्वलता।

भादर घन घहराय दामिनि गर्जि-गर्जि शुनाब यो
बरसु घरे बुन्द रिमिझिमि किछु नहि भाव यो ।

श्रीकृष्णकीर्तने राधारओ एइ भाव—

"भादर मासे अहोनिशि आन्धकारे
शिखि भेख डाहुक करे कोलाहले ।।
गीत ना देखिबों यवें कान्हाञिर मुख
चिन्तिते चिन्तिते मोर फुटे जायिबे बुक ।।"

आश्विन मासे चारि दिके यखन जागे आनन्देर साड़ा, तखन विरह वेदना अधिकतर ज्वालामय हये ओठे । नायिका बलेन—

"मास आसिन अधिक ज्वाला विरह दुःख अपार यो
लहरि उठु मोर दोगुन शब्द शीत करे पर्श यो ।
विफल भेल मोहि मास आसिन भेल नहि पहु दर्श यो ।।"

कार्तिक मासे—"दारुण कातिक धसिय धायब जतव लुबुधल कन्त यो।

अग्रहायणे—"सारि लुबुधल..........लबल यौवन मार यो।"

नायिका योगिनी हये युगल किशोरेर काछे याओयार जन्य व्याकुलता प्रकाश करछेन।

पौषमासे धैर्य धरार कथा; कारण भ्रमर-दूतेर आगमने प्रिय संवाद पाओयार आशा आछे; बलछेन नायिका—

"पूस धैरज धरय चाहिय भ्रमर रटल विदेश यो
हुनि विदेशी सुखहि खेपताह बारि वयस हमार यो।"

एइखानेइ भागवतेर भ्रमर-गीतेर अनुरूप भावेर प्रकाश हयेछे। भागवते कोन गोपी मधुकरके देखे प्रिय जेन ताके दूत प्रेरण करेछेन एइ भेबे बलछेन 'अरे भृंग, तुमि त यदुपतिर दूत? तबे तुमि एखाने केन? हे षट्पद, आमरा यदुपतिके अनेक बार अनुभव करेछि, सुतरां तिनि एखन पुरातन, तबे तुमि ताँर गान आमादेर निकट केन बार-बार गाओ?

किमिह बहु षडङ्घ्रे गायसि त्वं यदूना
मधिपतिमगृहाणामग्रतो नः पुराणम्।
—भागवत, १०।४७।१४

विरहेर नव-नव पर्याय बारम्बार मध्ये प्रकाश पेयेछे। माघ मासेर वर्णनाय बला हयेछे—

"माघ झिहिर पवन डोलय देह झामर मोर यो।
माब कामिनि बाघ यामिनि यौवन भेल जिवकाल यो।"

फाल्गुने प्रेमेर अन्य रूप—

"अंक अंकित देह मंजित विरह कम्पित गात यो।
आबि पहुँचल मास फागुन आब करब जिव घात यो।
आरे राखब प्राण विषम सम, सखि यौवन मोर विफलतम।"

श्रीकृष्णकीर्तने राधार कण्ठे एइ कथाइ ध्वनित हयेछे—

"सरस बसन्त काले कोकिलेर कोलाहले
ए नआ यौवन कन्हाञि प्राण रे"

चैत्रमासे—

"यौवन मोर चकोर प्रभु बिनु चैत चंचल अति घना
कोइलि कुहकय मधुर शब्दय करय कुतुहल उपवना।"

ग्रीष्मेर दावदाह कृष्णविरहे असहनीय—

"आयल मास बैशाख हे सखि उषम सहल न जाय यो
जेठ हे सखि अधिक ऊषम पिय बिन आर नहि जीव यो।"

सम्पूर्ण भिन्न सुरेर ओ भिन्न विषयवस्तुर आर एकटि मैथिली बारहमासिया उल्लेख योग्य मने हय। राजा जनक सीतार विवाहेर वयस पार हये येते देखे चिन्तित। प्रति मासे विवाहेर आयोजन

धीरे-धीरे अग्रसर हयेछे। हर-धनु भंगे अपारग क्रुद्ध राजगणेर वर्णना, रुष्ट लक्ष्मणेर आस्फालन, सीतार विवाह ओ रामेर संगे विदाय ग्रहण एइ बारह मासार वर्णनीय विषय :

"चैत मास सिया रूप अनूप। देखि जनक मोनहि मोन भूप।
कि आव सीया बारि बयेस। सर्वगुण वर पाओब कोन देस।
पुरओ अभिलाष।"

सीतार जन्य सर्वगुण सम्पन्न वर कोन देशे कोथाय पाबेन एइ चिन्ताय राजा चिन्तित। मिथिला पुर सोरगोल पड़े गेल।

वैसाख मास नृप सगुन बनाय। नग्र हकारिए चाप धराय।

राजा कठिन प्रण करलेन ये—

जो बर हाथे धनुष तोड़े बलजोर सिया लेके जैहों

ज्येष्ठ मासे समस्त नृपतिर काछे पत्र गेल—

"जेठहि पत्र भ्रमय सओ देश राम ओ लछुमन संग
हाथ धनुष आ कोमल अंग जनकपुर जैहों।"

तारपर एल आषाढ़—

आएल पावन मास आषाढ़। सुनि प्रण कठिन क्रोध मन बाढ़।
नृपतिगण विकल शरीर हारि सभ बैठे।

सकलके पराजित ह'ते देखे —

साओन जनक नृपति अकुलानि
को भेल जग इहो प्रण ठानि

सीता कि एखन कुमारी थाकबेन एइ चिन्ताय राजा जनक—

"रहल मन मारि लाज बड़ भारी"

भाद्रमासे राजा जनक कर जोर क'रे बललेन—

"भादब नृपति कहहिं कर जोड़ि
जो नहि सकय धनुष के तोड़ि।"

केउ यदि एकटा छोट धनुकओ भाङते पारे, ता ह'ले सीतार संगे तार विवाह देबेन।

"आसिन लछुमन कुदय मैदान
चुटकीसें तोड़ब चाप पुरान।"

लक्ष्मणेर क्रोधे 'लोचन भयो लाल'। कार्तिक मासे रघुनाथ धनुर्भंग करलेन, पुष्पवृष्टि ह'ल आकाश थेके। 'बाजि गयो डंका'।

'अगहन अवध से चलल बरात।' दशरथ ओ जनकेर राम-सीतार विवाहे 'पुरत अभिलाष'। 'पुष्पहिं हर्ष भये रनवास' कीजय आरती कपूर सुवास।' राम के वर रूपे लाभ करे 'मंगलवानीं कोकिल गान, जास मनक पुर को वड़ मान।'

माघ मास 'सिया जनक भुलान, धियाक गमनमें भेल मलान।'
बिदाय वेलाय 'हयंक नोर बहय जलधार।'

'फागुन पूरल बारहमास। धन्य भेल मिथिलापुर धाम।

बारहमासार मतइ मैथिली साहित्ये 'चौमासा' ते नय मासेर प्राकृतिक वर्णना मध्य दिये नायिकार मनोभावेर वर्णना करा हयेछे। गोयालिनिदेर बारहमासाते दानी कृष्ण कंसेर दोहाइ दिये केमन क'रे गोपिनी देर काछे थेके दान आदायेर छले नाना भावे छलना करेन तार वर्णना :

"सावन साखा कुंजवनमे ग्वालिनी दहि बेचु री।
करत बाद-विवाद हमसों देयि कंस दोहाइ री।
भादव भरम गँवाय ग्वालिनि घुरि गृही तुम जाहु री।
घाट जमुना दान लागे देहु दान चुकाय री।

दान चुकिए देवार पर आश्विन मासे दान नेओयार कोनो कथाइ नेइ।

आसिन राधा हरिसें विनती दान कतहु न लाग री।
जौं हम जनितहुं दान लागत दितहुं दान चुकाय री।

एरपर पीताम्बरेर रूप वर्णना क'रे बला ह'येछे—

कातिक कंचन मुकुट सोहे ओ पिताम्बर रूप काछनी।
देखु रन वन रूप मोहन नयन पट तन छाय री।

अग्रहायणे पथ छेड़े देओयार जन्य राधार मिनति—

अगहनमे बिहुँसि राधा ठाढ़ि भै विनती करी।
छाड़ि देहु अराड़ि मोहन जाइ गोकुला भाग री।
बसहिं नेह सनेह ग्वालिनि काहेके बन जाइ री।
सदा ए लोचन रहत नाहीं देहु दान चुकाय री।

एर पर माघ मासे—

चढ़ल माघ वसन्त गहि-गहि मास ओ चतुरवरी।
जात अहिरा बाट गहि गहि सुनहु जसुदा माइरी।

फागुन मास आवीर गुलालेर फाँद पेतेछे—

फाल्गुन फन्द पसारि ग्वालिनि धूम मचाव री।

चैत्रमासे कृष्ण-राधार मिलन—

चैत चिन्ता कियो है ग्वालिनि कृष्ण राधा साथ री
लेहु दान प्रभु अधिक गोरस करहु यमुना पार री
वैशाख राधा गेलि मधुपुर हरिसों कहल बुझाय री
जेठ प्रभुजीसें भेंट भय गेल ओहि कदम जुड़ छांह री।

कदमतलाय कृष्ण कर्तृक वस्त्रहरण गोयालिनि कलकल्लोले पूर्ण ह'ल।

छीनि लियो प्रभु चीर चोली ग्वालिनि करत कलोल री

आषाढ़ मासे रास—

आषाढ़ राधा रास ठानल कृष्ण राधा साथ री।

मैथिली बारहमासाते गोपीगणेर कथाइ मुख्य ह'येछे।

बांला मंगल-काव्येर बारमास्याते फुल्लरार दारिद्र्येर चित्र वर्णना करेछेन कविकंकण मुकुन्द राम चक्रवर्ती ताँह चण्डीमंगल काव्ये। देवी चण्डी गोधिकारूपे कालकेतुकर्तृक धृत हयेछिलेन। कालकेतुर अनुपस्थितिते परे मोहिनी रूपे प्रकाशिता हलेन देवी चण्डी। देवी बलेन—

शुन मोर वाक्य फुल्लरा सुन्दरी। आइलङ वीरेर दुःख देखिते ना पारि।

देवी आपनार धन दिये कालकेतुर दुःख निवारण करार आश्वास दिलेओ फुल्लरार मन माने ना। 'बारमासी दुःख रामा करे निवेदन।' एइ बारमासेर दुःख वर्णनाइ फुल्लरार बारमास्या नामे परिचित।

वैशाखे वसन्त ऋतु खरतर खरा।
तरुतल नाहि मोर करिते पसरा।

रविर खरतर किरणे तार पा पोड़े, माथाय आच्छादनेर जन्य सामान्य चन्द्र नेइ। काजेइ

वैशाख हइल मोर विष, मांस ना विकाय, सभे करे निरामीष।"

प्रचण्ड तपन तापे तापित हये फुल्लरा बले—

पापिष्ठ ज्यैष्ठ मास, पापिष्ठ ज्यैष्ठ मास।
वेङच्चेर फल खाइया करि उपवास।
आषाढ़े पुरिल आसि नव मेघ जल।

किन्तु गृहस्थेर संबल नाइ मांस केनार। आषाढ़ मासे 'बड़ अभाग्य मने गुनि' कत कत खाया जोंक नाहि खाय फणी।" श्रावणमासेर घन अन्धकार आकाशे कृष्णपक्ष शुक्ल पक्ष किछुइ बोझा याय ना।

श्रावणे बारिसे घन दिवस रजनी।
सितासित दुइ पक्ष एकोइ ना जानि॥

सारा भुवन जले जलमय, एमन समय मृगवधओ पापकर्म।

भाद्रपद मासे रामा दुरन्त बादल।
नद नदी एकाकार आट दिके जल।

आश्विनेर दुर्गोत्सवे उत्तमवेशे सुसज्जिता हय अन्य वनितागण, तखन ओ फुल्लरार अन्तश्चिन्ता

आश्विने अम्बिका पूजा प्रति घरे घरे।
महिष छागल मेष दिया उपचारे॥

उत्तम वसन वेश करये वनिता।
अभागि फुल्लरा करे संयलेर चिन्ता ॥

कारण,

देवीर प्रसाद मास सभकार घरे।

'कार्तिक मासेते हैल हिमेर जनम। शीत निवारणेर वस्त्रेर अभावे 'अभागि फुल्लरा परे हरिणेर चूड़।'

द्विजमाधवेर मंगलचंडीर गीतेओ फुल्लरार बारमास्यार अनुरूप वर्णना आछे।

एइ काव्येर खुल्लनार बारमासिया ते सतिनी लहनार हाते बारमासे ये दुख खुल्लनाके भोग करते हयेछे तार विवरण पावा याय।

एइ बारमासियार मध्ये ऋतु वर्णनार संगे-संगे खुल्लनार मनोवेदनार ओ सतिनीर काछ थेके निर्यातनेर इतिवृत्त द्विज माधवेर सहानुभूतिपूर्ण समवेदनार प्रकाश हये छे। एइ काव्ये आर एकटि बारमासिया नामे परिचित।

बांला साहित्ये चण्डीमंगल काव्ये उपरोक्त तिनटि बारमास्या मध्य युगेर साहित्येर वैशिष्ट्य प्रकाश करे।

भारत चन्द्रेर अन्नदामंगलेओ अनुरूप बारमास्यार सन्धान मेले। सेइ जन्य तार आलोचनाय विरत थाका गेल।

विजयगुप्तेर पद्मपुराण वा मनसामंगलेर बारमास्याय आछे बेहुलार कथा, तार दुःखव्यथा ओ देवीर प्रसादे दुःखेर अन्त।

मैथिली-साहित्ये शिवशंकरेर उद्देश्ये मासेर गानओ पावा जाय। रुष्ट शंकरेर विवाहे उमार वेदनार प्रकाश एइ चौमासेर विषयवस्तु :—

कोइ न बुझाए कहए शिवशंकर हँसि रहला अपने मन मे। इत्यादि।

[सारांशतः] बांला ओ मैथिली भाषाय बारमासी गीत गुलिर केन्द्रगत भाव विरहिणीर विरह।

ELITE—MASS CONTRADICTION IN MITHILA IN HISTORICAL PERSPECTIVE*

Dr. HETUKAR JHA

THE REGION of Mithila covers most of the North Bihar districts and parts of the area South of the Ganga. On the basis of the census of 1891 Dr. Grierson[1] "estimated that the total number of persons speaking Bihari dialects in this Province is about 23½ millions, of whom rather more than 9 millions speak Maithili... Maithili includes persons born in (1) all Darbhanga and Bhagalpur, (2) 6/7 Muzaffarpur, (3) 1/2 Monghyr and 2/3 Purnea; and 4/5 of the speakers enumerated in the Santhal Parganas".

Using Grierson's technique on the data of the 1961 census, the number of Maithili speaking population in Bihar was estimated to be about 16.5 million[2]. Mithila has a rich cultural heritage and its place in history rests chiefly on the contribution made to various systems of Indian philosophy viz. Nyaya, Sankhya, etc. and its influence on the development of Assamese, Bengali and Oriya literature during the medieval period. Maithili has had a vast stock of contribution in different forms and its status as one of the living languages of India is well recognised. Yet, the subjective regional consciousness, or the we-feeling on the basis of common language or common territory etc., which is a necessary factor in nation-building, is absent among the masses in Mithilia[3]. Absence of consciousness among the masses has been attributed to "elite castes' ineffectiveness in transmitting their sense of regional identity" to the former[4]. This ineffectiveness seems to be the resnlt of the contradictions between the elite and the masses in Mithila[5]. The "elite castes" are Brahman and Kayasth and masses are composed mostly of the lower castes and the Harijans. It is from these two elite castes that leaders are generally drawn and are found working for Mithila and Maithili through some social and cultural organizations, a few journals and other publications[6]. Following characteristics of such elites have been observed[7]: (1) very weak action orientation; (2) a marked tendency of making strongly-worded promises; (3) lack of team orientation;

* Courtesy : **Elite and Develovment,** (eds.) Dr. Sachchidananda and Dr. A. K. Lal, Concept Publishing thouse, New Delhi, 1980.

(4) a high tendency of monopolising power and credit and holding others such as the State Government responsible for the wretched conditions of Mithila; and (5) failure in mobilizing the masses. Such elites were found to have the following points of contradiction with the masses[8] : (a) elites belong only to the upper caste groups particularly Brahman and Kayasth, whereas the masses belong to the lower caste groups and the Harijans; (b) the masses are generally isolated; (c) among the demands raised by the elite for Mithila and the activities done by them for the fulfilment of these demands the needs of the masses are almost completely ignored; (d) the masses are generally poor, oppressed and economically and socially exploited by the village level elites, who are generally the Brahmans and Kayasthas or some other upper castemen; and (e) thinking or doing anything for Mithila or Maithili is, in the opinion of the masses, the sole concern of elite castes only.

In the present paper, an attempt has been made to understand the abovementioned contradictions in terms of social and economic situations that characterized Maithil society in the past. The elites working for the cause of Mithila and Maithili come from a social set (the set of Brahmans and Kayasthas) that has been opposed to the interests of the masses for at least the last few centuries. It appears that the contemporary elites, though claiming to be working for the whole of Mithila, are in fact pursuing their own old, historical, group interests (i.e., common interests of Braymans and Kayasthas). The nature and extent of this opposition between the two can be understood only by analysing some historical institutions and practices. A few such historical practices and institutions are mentioned below : (1) the practice of rent-free grant of lands; (2) Zamindari interests of Brahmans and Kayasthas; (3) the practice of illegal enhancement of rent and harsh methods of realization of rent; (4) the custom of slavery; (5) educational practices; (6) Panji system; and (7) Maithil Mahasabha activities.

Of the seven mentioned above, the first two i. e. practice of rent-free grant of lands and Zamindari interests of Brahmans and Kayasthas may explain how the elite status was acquired by the men of these two castes. The third and fourth will show the nature and extent of socio-economic exploitation to which the masses used to be subjected by the elites. The fifth, sixth and seventh would reflect the process by which elite castes consolidated and institutionalized their elite status and created a gulf between themselves and the masses. Each of these seven historical institutions is discussed below serially.

Mithila has been well-known for its Hindu orthodoxy. The traditional beliefs and attitudes as prescribed by Dharma Shastras were very strong here. One such belief was concerning the grant of absolutely rent-free or nominal rent

paying lands to Brahmans, other high castes and religious bodies which made them the landed class. Buchanan, who surveyed Purnea and Bhagalpur, both being parts of Mithila, during 1809-10 and 1810-11, records that "the high castes, that is the most indolent, are encouraged by paying a very low rent, while those who are industrious are reduced to beggary by enormous exactions"[9]. He further writes about this privilege of paying low rent by high castes that "I am told that some estates are now so much impoverished by the lands let at a low rent to the high castes, as scarcely any longer to be worth the the holding"[10]. Some details regarding revenue free lands in Mithila, since the Mughal period have been discussed in the **Final Report on the Survey and Settlement operations in the Muzaffarpur Districts (1892-1899)** prepared by C. J. Stevenson-Moore. According to him[11], "The free grant of lands to Brahmans for their maintenance, for the encouragement of learning, or for the worship of the Gods has always been recognized as a becoming act of piety, and Sanskrit works are replete with commendations bestowed on kings and noblemen who attained fame by their charity and gifts . . . Small wonder, then that in Mithila, whose chief claim to a place in history rests on its former influence as a centre of Hindu religion and learning, rent free grants to the learned and priestly caste were exceptionally abundent ... charitable endowments... continue to the present day. Thus not infrequently a raiyat consigns a portion of his share of the grain he derived from land held on produce rents to a Brahman as an act of charity, and.... an isolated tree is sometimes found in the middle of a cultivator's mango grove in the possession of the priest who performed its marriage ceremony..There is necessarily a strong and blind popular prejudice against the resumption of charitable gifts, and the deeds conferring them are often full of strange threats against any who would desecrate them... Added to these were lands granted rent-free under the name of **Altamgha, Aima, Madadmash, Fakirana** etc., which served to swell the list very considerably. In Akbar's time even, so says the **Ain-i-Akbari**, only 703,416 bighas daltony, equivalent to 817,369 acres, or 1,277 square miles were assessed to revenue out of 6,114 square miles, the total area of the district as ascertained during the revenue survey. Supposing that one third of the district was uncultivated, and hence unassessed, it follows that about three fifths (i. e. 60%) of the cultivated land were held free of rent or revenue. Coming on to Aurangzeb's assessment in 1685 almost the whole of the land of Tirhut, had been appropriated as Jagir". In the **minai**[12] register, prepared in 1795 Sarkar Tirhut had as many as seven hundred and twelve villages as rent free.[13] The value attached to such grants was so strong that there were as many as eighteen kinds of rent-free grant in practice among hindus. The table below gives the details about each as observed by Stevenson-Moore.[14]

Sl. No.	Name of the Minhai land.	Nature.
1.	Brit	Derived from britti, which means allowance : generally means rent-free grants made in favour of Brahmans.
2.	Surya-prit	Land dedicated to the worship of Surya (sun), Vishnu, Shiv, Durga, Janaki (known also as Sita), Hanuman (The monkey general of Rama), Ayodhya (The kingdom of Rama) Jagarnath (The God whose temple at Puri is well known), Ganga (River Ganges) and Kush (a son of Rama)
3.	Bishnu-prit	
4.	Sheo-prit	
5.	Durga-prit	
6.	Janki-prit	
7.	Hanuman-prit	
8.	Ayodhya-prit	
9:	Jagarnath-prit	
10.	Ganga-prit	
11.	Kush-prit	
12.	Guru-Dakshina	A gift made to the guru (tuitor or spiritual guide) generally on completion of studies or initiation into a religious creed.
13.	Sangat-attar	A grant made in favour of a Sangat or assembly of Sadhus. This is of Budhist origin.
14.	Nanak-bari and Sangat-bari	Similar to the above.
15.	Sradh-dan	Grants made in memory of departed people during the ceremony.
16.	Suman-Dan	A sort of dowry.
17.	A Math	Land dedicated to Sadhu (saint) who keeps up math or rest house, where sadhus and fakirs find shelter.
18.	Brahmottar	(Literally) lands dedicated to the worship of Brahma : generally applied to grants made in favour of Brahmans.

The variety of rent-free grant of lands mentioned above in the table indicates the power of religious values that had affected the agrarian structure.

In 1802 again, with the help of the report from Kanungos, another minhai register was prepared. In this register, 236,054 bighas or 206,167 acres, comprised in 2061 villages were entered as **lakhiraj**,[15] Sirkar Hajipur accounting for 15 percent only. Sirkar Hajipur comprised 42 percent of the total area of the two Sirkars[16] at that period".[17] Even the efforts of the British administration could not put an end to this custom of rent-free grant of lands. O'Malley, who found this custom very much in vogue in early twentieth century, wrote,[18] "Rent-free tenures are much more important in Darbhanga than in any other district in North Bihar ... The most numerous are those granted for religious purposes, which account for more than three quarters of the whole number, but cover little more then a quarter of the total area under rent-free tenures. Nearly three-fifths of the total area is found in the three thanas of Madhubani, Phulparas and Khajauli, where the large proportion is due to the maintenance grants given by the Maharajas of Darbhanga to their relations in accordance with the custom of the family. The holders of such grants are allowed to hold the land rent-free subject to the payment of the Government revenue to the Maharaja. About Muzaffarpur district O'Malley wrote,[19] "Rent-free tenures ... include religious tenures such as **berit**, **Brahmotar**, **Shiottar** and **Bishnu prit** or grants to Brahmans..." In other districts also within the territory of Mithila, O'Malley found more or less a similar situation in this regard.[20] All these observations mentioned above indicate in clear terms that the custom of granting rent-free lands in Mithila till the British period was always to the advantage of Brahmans in particular and other high castes in general at the cost of the tillers of soil. Since the elites at the local level were thus favoured by gifts from above, they, perhaps, also developed a tendency to look upward (i. e. towards the **darbar** from where they expected rent-free grant of lands) and neglect the lower stratum of their social structure. This tendency possibly, contributed much to the alienation of one group from the other and at the same time made the elite group passive, always expecting something from above, some superior authority external to their social milieu to do everything for them. This passive character of the elite is probably responsible for the absence of any critical attitude on the part of intellectuals (who also form a section of elites) towards society. Intellectuals who were socially a part of the elite, either ignored their society and their rulers as subjects for their examination or produced occasionally **Virudavali**, a kind of **darbari** or court literature, a manifestation of passive and upward looking tendencies.

Brahmans not only had the privilege of holding rent-free lands, but, also of holding Zamindari rights. In Mithila, the largest Zamindari was owned by

the khandavalas-a leading Brahman family. Before the khandavalas, the entire Sarkar Tirhut was owned by another Brahman family—i. e., the Oinwaras, khandavalas came to be known as Rajas from the time of Ali Vardi, after the death of Aurangzeb.[31] By the end of the 19th century and during the early decades of this century, the khandavala House, known as the Darbhanga House, was quite a substantial power. The branches of this house and some other Brahman families such as Banaili, Sauriya etc. also held large zamindaris. So, the Brahmans' zamindaris were quite extensive in this region. Even otherwise, according to E. A. Gait, the supremacy of the Brahmans was acknowledged by eight-tenths of the population in Bihar.[32] Being land owners, Zamindars, and top rank holders in the caste-hierarchy, Brahmans were easily recognized as the elite. Kayasthas were their strong allies in the sense that they used to keep the accounts for their lands and zamindaris and therefore the Brahmans as landowners and zamindars had to depend upon them. They (the Kayasthas) were thus identified with the zamindars and landowners. Locally, the term **"babu-bhaiya"** was used for them; **babu** for zamindars and landownere and **bhaiya** for accountants i. e. Kayasthas.

These zamindars exploited their lower caste raiyats by enhancing rents, perhaps to compensate the loss in revenue due to rent-free grants. The lower caste **raiyats** had to pay even for those who neither worked on the land themselves, nor did they pay anything for their lands. Rent enhancement and rent realization by illegal and harsh methods were observed in detail by J. H. Kerr. He has noted,[33] "In the areas under Darbhanga Raj", which comprised lands situated in the district of Darbhanga, Muzaffarpur, Gaya, Monghyr, Purnea and Bhagalpur amounting to over 2400 square miles,[34] "we found many instances where readjustment had resulted in illegal enhancement". He further writes,[35] "Now there can be no doubt that in Darbhanga (Raj) the provisions of the Tenancy Act, limiting the enhancement of rent by contract have hitherto been flagrantly disregarded or rather ignored". In Darbhanga Raj during the ward's administration from 1860 to 1879, many raiyats left the territory and took shelter in Nepal due to rack renting.[36] J. H. Kerr has recorded the following about another Brahman landlord of Darbhanga,[37] "There can be no doubt that Babu Guneshwar Singh is the harshest and most oppressive landlord with whom we have yet had to deal in North Bihar. Instead of collecting in four instalments like most landlords, it was his custom to collect 14 annas of the demand at the beginning of the agriculture year and 2 annas at the end. As few of the raiyats could pay the first instalment in cash, the practice was for the Mahajan in each village to advance the money for them. The Mahajan got all the receipts and kept them until the harvest, when he went to the raiyats'

threshing floors accompanied by several of the Babu's peons, and forcibly took away grain to recoup himself for his advance, 20 to 25 percent being deducted from the fair market price in lieu of interest. That the raiyats should have stood this scandalaous and disgraceful oppression so long without open revolt is striking evidence of their patience ... " Kerr further observes,"[28] The most important landlords in the Madhubani sub-division other than the Darbhanga Raj, are the Madhubani Babus. The estates are not in a satifactory condition. There is a European manager, but sufficient control is not exercised over the local agents, and abuses are allowed to pass unchecked. The village papers are often untrustworthy, and most of them show constant tampering with an enhancement of rents". Rent enhancement and using harsh method iu rent realization were, thus, the common practice of zamindars. As most of the zamindaris were managed by Kayasths who had traditionally a monopoly in accounts keeping, it seems that Brahmans and Kayasthas together (i. e. the elite group of the **babu-bhaiya**) were in collusion against the raiyats. Zamindari relations, thus, nurtured the conflict between Brahmans and Kayasths on the one side and the lower caste raiyats on the other.

The practice of slavery in Mithila is also an indicator of the exploitation of lower caste men by the elite group. Slavery continued until late into the British regime in Mithila. It was a very old institutionalized practice carried on through regular formal deeds having a religious sanction. Vidyapati, the famous poet of the fifteenth century has also mentioned the form of **bahikhat** i. e. the slave-sale-deed, that was prevalent in those days.[29] Deeds of slavery and related practices of subsequent periods reveal some important points about the relationship again between Brahmans and Kayasths on the one side and the lower castes on the other. Such deeds were of the following categories : (1) **bahikhat** (slave-sale-deed); (2) **gauriya-chatika** (deed of emancipation of slave children from slavery); (3) **ajatpatra** (deed of emancipation from slavery); (4) **akarara-patra** (agreement for particular service) and (5) **janaudhi** (agreement of service by labourer). **Bahikhat** was a slave sale deed that recorded the following : (a) name, age, caste, village and pargana of the person sold; (b) name, ceste, village and pargana of the master; (c) the amount paid by the master; (d) name, village and pargana of each witness; (e) name, village and pargana of scribe; and (f) the amount paid to the scribe. The earliest exis **bahikhat** that is available now, is dated as far back as A. D. 1627-28.[30] Some such deeds of 1746, 1755, 1812-13, 1820, 1836 and 1838 are available in the library of Kameshwar Singh Darbhanga Sanskrit University.[31] A. Benerji-Sastri also brought to light three **bahikhat** documents belonging to the eighteenth century.[32] In all such documents belonging to the seventeeth, eighteenth and

early nineteenth centuries, the style of writing is the same. The purchaser is always a Brahman and the **bahiya** i. e. the slave, belongs to either Dhanuk, or Kyot, or Amat caste. The scribe is generally a Kayastha.

Gaurivachatika documents are available for only seventeenth and eighteenth centuries.[33] Documents pertaining to the categories of **Ajatpatra** are also available.[34] But they are few in number and all of them belong only to the early 19th century. Documents regarding **Janaudhi** are available from 1819-1859.[35] The variety of such documents shows how deep rooted this practice of slavery was.

Besides these documentary proofs, some eye-witness accounts of the early nineteenth century also contain details about this practice.[36] Latter, according to H. R. Ghosal,[37] "by an Act of parliament passed in the year 1833, slavery was abolished in the British Empire. But in India it continued even after that date. We learn from **Jnananvesan** (a Bengali news-paper of the early 19th century) of the 11th January 1840, that a Calcutta Zamindar bought a slave at the Bhagalpur bazar at 40 rupees, and that many other persons were there sold as slaves in the market. In 1843 slavery was finally declared illegal in India. But it continued to exist in some form or other down to 1860 and even afterwards". Ghosal's comment about the continuity of slavery in Bihar "down to 1860 and afterwards" is based chiefly on a description of agricultural labour in the first half of the 19th century by Biman Bihari Majumdar. According to him,[38] "Slavery was a recognised institution all parts of Bihar in the first quarter of the 19th century and in the Santal Parganas it continued to exist as late as 1860". Majumdar further writes,[39] "The statement exhibiting the moral and material progress and condition of India during the years 1858-60 informs that a system of bondage had long been in the Santal Parganas. There were two kinds of bondsmen—**Kameotee** and **Harwahee**. A **kameotee** bondsman was one who in consideration of a loan bound himself and his heirs to work for the moneylender until money was repaid with interest ... As the entire service of the **kameotee** bondsman was to the bondholder it was impossible for him to earn sufficient to liberate himself from the engagement he had made. The **Harwahee** bondsman did not live in the house of the bondholder but bound himself to work for the giver of the loan ... The existence of this system of bondage was not fully known untill 1858. In that year several cases were brought to the notice of the authorities and the bondsmen were at once released from their servitude". It was, thus, the prevalence of the bondage of labour, not the evidence of the old slavery, that led Majumdar to conclude that slavery continued till 1860 in the Santal Parganas. It was again on the basis of some

report of the Chanakya Society, Patna College, about the bondage of labour in Bihar during the early decades of the present century, that he remarked about the continuity of slavery in some form in this century also.[40] Thus, the idea of the continuity of slavery after 1843, when it was declared illegal, as held by the scholars mentioned above is derived from the prevalence of bonded labour till today. But, in the case of Mithila, the old style slavery that depended upon the formal contract deed between the two parties continued even after 1843 and till at least 1880. Recently, one **bahikhat** was available to the present author from Pandit Leelanath Jha, village Bhattapura, district Madhubani, which was written in 1880. There is little change in the style of writing of the document in this period. In addition to all that used to be written earlier, the scribe now mentions in this **bahikhat** shat though the purchase of slaves is prohibited by the order of the British ruler of Calcutta, yet, as approved by the Dharma Sastras, the deed is excuted.[41] In this document also, the master is a Brahman and the **dasa** or slave is of the Dhanuk caste. It is thus clear that the elite group tried to counteract the legal pressure against their vested interests by taking resort to religion that has long since been the scurce of sanction. The very fact that the document mentioned above is available shows that they carried on this ancient practice of slavery which was to their advantage, right up to the end of the last century. Since no **bahikhat** of the present century has been available as yet, it can be said that the old form of slavery is not practised any more. But **Janouri** or **Janandhi** which was also practised through formal contract deeds in the nineteenth century as mentioned earlier, is still practised on a very large scale in the villages of Mithila without any deed of contract between the **Jan**, i.e. the labourer and the **malik**, the master, depending solely on the exploitative character of the latter.[42] The master, who is generally a big landowner of some high caste, keeps exploting the labourers simply on the strength of a meagre amount that he had to invest by way of a loan given to the labourers. He thus has to invest very little in comparison with the return that he gets in the form of labour from his **Jan** without even the formality of a contract like the **bahikhat** of old days. The anti-slavery law that was intended to bring about some measure of social change, in fact could only abolish the formality involved in the practice of slavery. The vested interests of the Brahmans and Kayasths were so strong that the anti-slavery law was by-passed and the essence of slavery remained in practice. This shows that a legal ban on any social practice remains confined only to words if the social-economic roots of that practice are not suitably changed. Slavery was a product of a certain socio-economic structure that prevailed during the Mughal and British periods at the village level. That socio-economic structure has practically

remained intact until today and, therefore, the exploitation of the masses belonging to lower caste groups by the upper caste elite groups continues in one way or the other.

The attitude and policies towards education also reflect the contradiction between the elite group and the masses in Mithila. Sanskrit scholarship has a long and distinguished tradition here. This was again the monopoly of Brahmans and to some extent of the Kayasths also. In the 19th century, however, efforts for the spread of education even among the lower caste people were made, the Raj (Darbhanga) devised a scheme of spreading elementary instruction amongst its tenantry. "The General Manager, J. Ferlong (1861-1866), began correspondence with the government for its approval ... and also with the proprietors of ths several indigo factories ... or the estate for contributing their respective shares to the establishment of such schools. Very encouraging letters were received from all the proprietors in reply ... twenty-six vernacular schools were opened in the villages under jurisdication of the Raj ... But for various reasons a number of these Raj vernacular schools were abolished by the close of the last century. In some localities the ryots for whose benefit these schools had been established were averse to education preferred their children helping them in the field to receiving instruction in the school. In some cases the ryots of villages behaved very badly and stopped paying rents to the Raj and consequently the Raj either shifted the school to some other villages or abolished it. In all these schools the students belonged mostly to tha low caste and did not pay much attention to education".[43] It seems that the lower caste groups' lack of interest in education was mainly because of their feeling that eduction was a luxury that they could not afford. This also implied their attitude about education as being the exclusive concern of Brahmans and othet upper caste men. Moreover, as it is clear from above, education and rent collection were tagged together by the Darbhanga Raj and perhaps as a result of this policy of tagging education with the unpleasant activity like rent collection the raiyats' response towards education got affected. So far as English education is concerned Lantour observed;[44] "The Natives of the LaLa (Kayastha) caste are against education to a man, as that class are employed entirely in keeping village and Zamindari accounts and they object to competition. The Rajputs and Brahmans are also against it. They are arrogant and superstitious. Whenever education is mentioned christianity is their election cry". Thus both religious and economic interests together of the upper caste men stood in the way of the spread of English and vernacular education in the society. The Census Report of 1931 for Bihar also indicates the bias of education for upser caste men. The Kayasths were the most literate caste group in the whole province of Bihar and next were the Brahmans as shown in the table below :[45]

CASTE		Percentage of literate	Percentage literate in English (aged 7 and above)
Chamar	Norrh Bihar	·42	·01
	South Bihar	·57	·01
Dhobi	North Bihar	·87	·03
	South Bihar	1·18	·02
Dom	North Bihar	·37	·03
	South Bihar	·37	·02
Dosadh	North Bihar	·52	·01
	South Bihar	·76	·02
Halkhor	North Bihar	·92	·03
	South Bihar	1·88	
	Muslim	2·75	
Pasi	North Bihar	1·67	·06
	South Bihar	1.30	·05
Bhumihar Brahman	North Bihar and South Bihar both	13·56	·78
Brahman	North Bihar	15·31	1·20
	South Bihar	16·46	1·52
Goala	North Bihar	2·02	·09
	South Bihar	2.03	·09
Kayasth	North Bihar	34·84	7·64
	South Bihar	40·36	13·10
Kurmi	North Bihar	3·12	·17
	South Bihar	11·76	·40
Mallah	North Bihar	·69	·01
	South Bihar	2·14	·03
Rajput	North Bihar	12·03	
	South Bihar		
Teli	North Bihar	4·32	·11
	South Bihar		

It is cloar from the tablo montioned abovo that literacy was depressingly low among all the lower castes in comparison with that among Brahmans and Kayasths. Moreover, especially for Mithila, it seems that higher education as such was perhaps the sole concern of Brahmans and Kayasths. In any list of educated Maithilis prepared before Independence there are names of only Brahmans and Kayasths.[46]

The **Panji** system like education was also biased in favour of Brahmans and Kayasths. It was created in the early fourteenth century during the regime of Har Singh Den, the last king of the Karnata dynasty in Mithila. Panji books are available on palm leaves and on **bhoj patras**. They are still sealed to scholars. However, a few of the Panji books have been studied so far. The considerations that led Hari Singh Deo to organize the compilation of genealogical records of only the Brahmans and Kayasths that has come to be known as the panji system. are not clearly known. It is claimed that the Panji was compiled to regulate the system of marriage according to the principles of Dharmashastras.[47] If this was so, why, then, were other castes left out particularly when the king responsible for the compilation was himself a Kshatriya ? It is difficult to descern any definite reason behind this great compilation work unless the whole panji literature is scientifically analysed. The consequences of this panji system are, however, many including the one that this became in course of time more or less a cammon status symbol for Brahmans and Kayasths by which they distinguished themselves as culturally superior to rest of the people.

This attitude of being superior or exclusive held by Brahmans and Kayasths manifested itself in the organization of the Maithil Mahasabha in 1910[48]. This was a fairly big organization that remained quite active for abcut half a century. This was the organization of the orthodox group that formedthe elite under the leadership of the Maharaja of Darbhanga, who was its Exofficio President. The organization did not recognize anybody other than Brahman and Kayasth as Maithil. Caste alone was considered as the sole criterion for being a Maithil. The Maithil Mahasabha held a conference each year at different places in India where Maithil Brahmans and Kayasths stayed in large numbers. Each conference used to be a big show of glorification of the cultural and intellectual achievements of Brahmans and Kayasths. This orthodox group having the Maharaja of Darbhanga as its patron became so overwhelmingly powerful, both economically and politically, that it became almost impossible for anyone to rise against its narrow policies unlike Bengal, where opposition to orthodoxy had degun by the end of the last century.[49] This caste consideration was so strong in the camp of the Darbhanga House that the importance of a

a common language or common territory etc. was ignored. They took pride in the past achievements of their castemen in the fields of traditional classical S/c backgrouud was not valued and was treated lightly by them. Maithil's classical base was not much known at that time and therefore it was ignored. In the edministration of the Darbhanga Raj also, which was the largest Zamindari of Mithila (and also of Bihar during late nineteenth and early twentieth century) it was not adopted as a medium of formal communication. A scholar of Maithili was supposed to be of sub-standard merit. Nyaya, and other classical disciplines were considered as deserving serious attention and those who were masters of these subjects were called real Pandits. Maithili's position was so low that in **"Dhout Pariksha".** a system of examination that used to be conducted in Mithila on some occasions for testing the merit of pandits till the time of Maharaja Rameshwar Singh (1930), it (Maithili) was not considered as a subject for an examination at all. This orthodox group, thus, fired by the zeal for traditionalism undermined the importance of the dialect and other common denominations and through the conferences and other activities of their Mahasabha, made it explicitly known to the other castes that only Brahmans and Kayasths qualified for Maithil identity : others, even though belonging to the territory of Mithila and speaking the same dialect, had no place. Later, within this group of Kayasths and Brahmans there emerged a set of enlightened men influenced by English education during the 1920s. This group, having a liberal outlook, started working for the spread of Maithili by writing scholarly and literary works in their mother tongue. The controversy regarding Vidyapti's identity had already been settled and his status outside Mithila as a poet of Maithili, not as a scholar of Sanskrit, worked as a great source of inspiration to all those who were gradually becoming interested in Maithili. Sometime after that, **"Varna-Ratnakara"**[50] by Jyotirishwar of the early 14th century, a Maithili prose work, perhaps the oldest in the languages of eastern India and therefore a matter of pride, came to light through the efforts of the late Suniti Kumar Chatterji, a leading authority in the field of linguistics. Besides Vidyapati and the poets of the modern period such as Chanda Jha, Manbodh, Munshi Raghunandan Das etc. another important poet, Govind Das, was brought to light who had also influenced the literary tradition in Bengal. Like Vidyapati, this poet was also acclaimed and glorified in Bengal. Nagendranath Gupta was the first man who pointed out that he was a Maithil and that his works belonged to Maithili literature.[51] Simultaneously, researches were being done for exploring the heritage of Maithili literature and soon Maithli intellectuals found themselves convinced of Maithili's rich tradition. They then began a demand for the teaching of Maithili at Patna University, the only university at

that time in Bihar. Calcutta University, during the time of Sir Ashutosh Mukherjee, had already granted recognition to it. Bengali intellectuals were prepossessed in favour of Maithili, hence recognition at Calcutta University was no problem. At Patna, however, there were some difficulties initially, but through the efforts of the late Maharaja of Darbhanga, who unlike his predecessor was quite modern in his outlook, the teaching of Maithili began.[52] Maithili, thus by the 1950s, was no more an ignored discipline in Bihar and more and more people from the caste groups of Brahmans and Kayasths started working for Maithili through literary and cultural organizations and different publications. Yet, it has not been able to create any significant reading public. The high mortality (80·/.) and miserable circulation of its journals and other publications[53] indicate that the masses, perhaps, due to the contradictions discussed above, have not accepted Maithili as their own, nor have the vast majority of the upper castes. The latter perhaps due to the legacy of traditionalism mentioned earlier, have not recognised its worth for social, intellectual and political purdoses.

Notes and References :

1. E. A. Gait, **Census of India, Bengal, 1901, Vol. vi, Part 1,** (Calcutta, Bengal Secretariat Press, 1803) , p. 320.
2. Paul R. Brass **Language, Religion and Politics in North India,** (New Delhi, Vikas Publishing House, 1975), p. 64.
3. Ibid., p.52
4. Ibid., p.114
5. Hetukar Jha, **Nation-building in a North Indian Region, The Case of Mithila, Memeographed,** (Patna : A.N.S. Institute of Social Studies, 1976), p.93.
6. Ibid., p.68
7. Ibid., p.98
8. Ibid., p.98
9. Francis Buchanan, **An Account of the District of Purnea in 1809-19** (Patna: Bihar and Orissa Research Society, 1928), 439.
10. Ibid., p.446
11. C.J. Stevenson-Moore, **Final Reporton the Survey and Settlement Operation in the Muzaffarpur District (1892-99),** (Patna: Government Printing Press 1922), p. 80.
12. Register of rent free India.

13. Ibid., p. 83.
14. Ibid., p.14.
15. The term "lakiraj" was used for absolutely rent free land.
16. The two Sirkars were the Sirkar of Hajipur and Sirkar of Tirhut.
17. Ibid., p. 85.
18. L.S.S. O'Malley, **Bengal District Gazetteers, Darbhanga,** (Calcutta, Bengal Secretariat Book Depot, 1907), p. 122.
19. L.S.S.O' Malley, **Bengal District Gazetteers, Muzaffarpur,** (Calcutta, Bengal Secretariat Book Depot, 1907), p. 119.
20. L.S.S.O' Malley, **Bengal District Gazetteers, Purnea,** (Calcutta. Bengal Secretariat Book Depot, 1911), p. 160; **Bengal District Gazetteers, Bhagalpur,** (Calcutta, Bengal Secretariat Book Depot, 1911), p. 142.
21. Hetukar Jha, "The Oinwaras in the Mughal Period", **Journal of Bihar Research Society,** Voll LV: Part I & IV. Jan-Dec. 1969, p. 148.
22. E. A. Gait, op. cit., p.155
23. J. H. Kerr, **Final Report on the Survey and Settlement Operation in the Darbhanga District 1896-1903,** (Patna: Government Printing Press 1926), p. 53.
24. L.S.S.O' Malley, **Bengal District Gazetteers, Darbhanga,** p.145.
25: J. H. Kerr, op. cit., p.56.
26. J. S. Jha, **Biography of an Indian Patriot Maharaja Lakshmishwar Singh,** (Patna: Maharaja Lakshmishwar Singh Smarak Samiti, 1972), p. 190.
27. J. A. Kerr, op. cit., p. 49.
28: Ibid., pp. 49-50.
29: Indrakant Jha (ed:), **Likhanavali of Vidyapati,** Patna : Indralaya Prakashan, 1969), pp. 42-47.
30. Jayakanta Mishra, **A History of Maithili Literature,** Vol. I, (Allahabad, Tirabhukti Publication, 1949), p. 385.
31. Ibid., p. 385.
32. A. Banerjee Shastri, "Eighteenth Century Sale of Serfs in Mithila", **Journal of Bihar Research Society,** Vol. XXVII. 1941, pp. 292-295.
33. Jayakanta Mishra, op. cit.
34. Jayakanta Mishta, op. cit., pp. 387-388.

35. Ibid., p. 389

36. Francis Buchanan, **An Account of the District of Purnea in 1809-10.** pp. 162-163.

37. Hari Ranjan Ghoshal, "Labour in Early Nineteenth Century Bihar", **Journal of Bihar Research Society,** Vol. XXXII, March, 1946, pp. 93-105.

38. Bimanbihari Majumdar, "Agricultural Labour in Bihar in the First Half of the Nineteenth Century", **Indian Journal of Economics,** Vol· XV, 1934-35, p. 669.

39. Ibid·, pp. 669-679.

40. Ibid., p. 571.

41. A translation of this **bahikhat** is given here, ',Be it well with thee, the most reverend etc. Though, by the order of the omnipotent English lord of Calcutta Purchase of slave is prohibited, yet, as permitted by Dharmashastra, the slave sale deed is being axecuted by me. Now, in this connection, Mohan Lal Sharma of village Malangia under parganna Jarail in Mithila used his own resources for acquiring a slave. Thus by this deed, Darshan Das, a Dhanuk Shudra, aged twenty, son of Hirshul Das of village Malangia was purchased (by Mohan Lal Sharma) for rupees fourteen.

Wednesday, the 13th day of the bright half of Paush, **Sal** 1288, **Sake** 1184" (1880 A: D.)

Witness :
Nore Singh
Hirshul Mandal
Phakir Jha

Sd/-
Darshanama
I consent to the deed.
Phakir Jha, Vill. Bhattapura

42. Hetukar Jha, **Nation-building in a North Indian Region : The Case of Mithila,** p.p. 83-95

43. J. S. Jha, **Beginnings of Modern Education in Bihar,** (Patna : K.P. Javaswal Research Institute, 1972), ppXII-XV.

44. Ibid., p. XVI

45. W.G. Lacey **Census of India,** 1931, Vol.VII,Bihar and Orisa, Part II Tables, (Patna : Government Printing Press) pp.110-111.

46. Janardan Jha, "Jansidan", "Mithila Ke Pandit", in **Ramlochan Sharan Jayanti Smarak Granth,** Harimohan Jha and Achyutanand Dutt (eds) Laheriasarai, 1942, pp.1-46; Badrinath Jha Kavishekhar, "Mithila Ke Sanskrit Sahitya

Maharathi", **Mithilo Mihir, Mithilnk,** Darbhanga, 1936, pp.50-62; Triloknath Mishra," Mithila Ke Vidvan", **Mithilo Mihir, Mithilonk,** pp.89-96.

47. Ramanath Jha, **Aloyee Kula Prakash.** (Patna: Indian Nation Press, 1951), p. 6.

48. Debanarain Choudhary, "Mithila Ki Kuch Sansthayen", **Mithila Mihir, Mithilank,** p. 175.

49. J.H. Broomfieid, **Elite Conflict in a Plural Society : Twentieth Century Bengol,** (Bombay : University of California Press, 1968), p. 13.

50: Suniti Kr. Chatterji and Babua Mishra **Vornorotnokoro of Jyotirishworo Kovishekhor-ochoryo** (Calcutta; Royal Asiatic Society of Bengal, 1940)

51. Jayakanta Mishra, op. cit., p.234

52. Anand Mishra, "Maithili Sahitya Parishadak Sankshipta Itihasa", **Smoriko,** Maithili Sahitya Parishad, Patna College, 1973, p. 3.

53. Hetukar Jha, **Notion-building in o North Indion Region : The cose of Mithilo,** p. 8.

THE CONCEPT OF GOODNESS

Dr. I. N. SINHA

Contemporary western ethics is certainly very conspicuosly distinct from Traditional ethics. Firstly, Tradational ethicists are preoccupied with the baffling problems of value and obligation. A theory of ethical value deals with the highest end of human aspiration whereas the theory of obligation deals with the binding obligation. The traditional ethicists are preoccupied with the task of determining the highest good, tha supreme ideal, the Sumum Bonum of Life and finding out duties which are obligatory whereas contemporary ethicists are concerned with ethical concepts like 'good', 'bad', 'right', 'wrong', 'obligation' etc. Secondly, traditional ethicists are concerned with the task of formulating first hand ethical principles whereas contemporary ethicists are concerned with the analysis of ethical principles. They have realized that the formulation of ethical principle is not a simple job. The distinction between ethics and metaethics was not realised by the traditional ethicists. The modern ethicists are more concerned with metaethics than normative ethics. They are concerned with the logical, epistemological, or semantical questions like the determination of the meaning of ethical concepts like 'good', 'bad', 'right', 'wrong', 'duty', 'obligation' etc., the distinction between moral and non-moral use of ethical concepts, the problem of justification of moral judgment etc.

The notion of indefinability of goodness has been one of the most important problems of metaethical enquiry. This problem is the pivot around which the non-naturalism of Moore and non-cognitivism of Stevenson revolve. G. E. Moore and C. L. Stevenson are considered as the champions of the metaethical theories. The objective of present study is two-fold : first : to elucidate the views of Moore and Stevenson with respect to the indefinability of goodness; second : to present a critical and comparative account of their views.

In the scheme of Moore 'what is good ?' constitutes the subject matter of ethical enquiry. Unlike traditional ethicists, he presents a three-fold analysis of the problem 'what is good ?.' First, it may mean what particular things are good. Secondly, it may mean what classes of things are good. Thirdly, it may mean what does good mean. Moore rejects the first two interpretations. To

him, 'How good is to be defined ?' is the central problem of ethics. The metaethicists also are preoccupied with this problem raised by Moore in his **Principia Ethica** (1903).

The term, definition has been used in various and varied senses in philosophical literature. But Moore has been preoccupied with real definition. Nowadays philosophers donot employ real definition in their analysis. To them, defining is an operation which is done on linguistic entities. But Moore is carrying over the heritage of the part in logic and semantics. Moore says :

"If I am asked 'what is good'? my answer is that good is good and that is end of the matter, or if I am asked, 'How is good to be defined ?' my answer is that cannot be defined, and that is all I have to say about it. But disappointing as these answers may appear, they are of the very last imeortance".[1]

By definition Moore means analysis. To define a term is to analyse a complex whole into its constituent elements. If definition means analysis of a complex whole, then only those things are definable which are complex and composite.

Moore also presupposes that the quality of goodness is simple. It can enter into the composition of complexes, but by itself is simple. He compares goodness with yellowness in this respect. According to him 'yellow' and 'good' are not complex. They are notions of that simple kind out of which definitions are composed and with which the power of further difinition ceases. Thus, in his scheme the indefinability of 'good' is one of the most important facts, if not the important fact, with which ethics has to deal.

Moore draws an analogy between 'good' and 'yellow' to establish two far reaching conclusions. The first point is that though it is impossible to define colour words, yet it is possible to state the physical concomitants of the colours. Similarly it may be possible to state what else besides being good all good things are. For example, it might be a case that if ever anything was good it was pleasant or the object of approval. But to identify the light waves with the colour or the pleasantness with the goodness is to commit the fallacy of trying to define what is simple and indefinable. This argument is based entirely on the presupposition that 'good' is indeed like 'yellow', the name of the discernible property of things.

The second point is that nobody thinks that because 'yellow' is indefinable, therefore it is impossible to say what things have the property of being yellow. And also nobody thinks that all other properties which the yellow thing has are

identical with the singular property of yellowness. Similarly Moore further argues, when we say that 'good' is indefinable, it does not prevent one from saying that pleasure is good and that other things besides pleasure are good, and that pleasure may have other properties, such as being the object of desire, which are distinct from goodness. To quote Moore :

"In fact, if it is not the case that 'good' denotes something simple and indefinable, only two alternatives are possible : either it is a complex, a given whole, about the correct analysis of which there may be disagreement; or else it means nothing at all, and there is no subject as Ethics."[2]

What Moore wants to say is this : we must accept that the word 'good' either denotes a simple unanalysable property or a complex analysable property or nothing at all. To Moore, this exhausts all the possibilities. All the disjuncts are mutually exclusive. And by his acumen of argument he demonstrates that 'good' is a simple notion. It designates something simple. So 'good' is indefinable. It is indefinable as it is unanalysable. And it is unanalysable as it is simple. Hence it stands for a simple, unanalysable, indefinable and unique object.

If 'good' cannot be defined then all propositions which attribute goodness to anything are synthetic. There is no equivalent expression to the word 'good'. No proposition of the form 'X is good' is analytic. The meaning of 'x' will not contain the meaning of 'good'. Apart from that it has another implication : all those theories which define 'good' in terms of some other notions are fallacious.

II

In the scheme of Stevenson ethical language is very vague and ambiguous. It performs a variety of functions. We canot say that this is the analysis of ethical language. Stevenson is very much conscious of the 'multifunctionalism'[3] of ethical language as conceivd by Nowell-Smith.

Stevenson begins by making a distinction between a disagreement in beliof and a disagreement in attitude. A disagreement in belief is a disagreement about a matter of fact and a disagreement in attitude is a dispute which involves a difference of opinion not about how things are but how they should be—it is "an opposition of purposes, aspirations, wants, preferences, desires and so on."[4] Stevenson further maintains that ethical nisagreement is of dual nature. But moral disputes are ones which involve, in an essential way, disagreement in attitude. To Stevenson 'this is good' means 'I approve of this, do so as well'[5]

He claims that moral judgments are expressions of attitudes, and are designed make others share those attitudes. The working models[6] as conceived by him do not adequately show the expressive nature of moral judgments. But according to A. J. Ayer, "ethical statements are simply expressions which can be neither true nor false."[7] Ayer further says that "In saying that a certain type of action is right or wrong, I am not making any factual statement, not even a statement about my own state of mind. I am merely expressing certain moral sentiments."[8] Similar approaches were being made as early as 1934 when W.H.F. Barnes suggested that "value judgments in their origin are not strictly judgments at all...they are exclamations expressive of approval."[9]

Now it becomes obvious that whereas Ayer speaks of the expression of feelings or emotions, Stevenson speaks of the expression of attitudes, and whereas Ayer sees moral judgments as an attempt to get someone to act in a certain way. Stevenson sees then as an attempt to redirect the attitudes of others.

Stevenson also introduced a distinction between descriptive meaning and emotive meaning. This distinction allows the possibility that a moral judgment may be an expression of an attitude or emotion and may communicate factual information as well. So Stevenson says that some philosophers do not like to include an explicit imperative in the body of moral judgment. They analyse the moral judgment as an expression of wish or emotion as discussed above.

In his scheme the word 'good' possesses descriptive as well as emotive meaning. So the word 'good' is indefinable because it possesses emotive meaning and the emotive meaning of a word is normally indefinable. We cannot find emotive equivalent terms in language. Emotively the word 'good' expresses an attitude of approval. Stevenson says that word 'good' is as indefinable as 'hurrah' is. We are at pains to find the equivalent emotive term for 'hurrah'. According to him two terms can be equivalent in their descriptive meaning but they cannot have equivalent emotive meaning.

The word 'good' is indefinable because it has no exact emotive equivalent. This simple fact should cause neither surprise nor perplexity. While our language affords words that have several descriptive equivalents it is very scarce with respect to emotive equivalents. But we should not assume on this account that the emotive meaning of 'good' cannot be subject of further study, we can characterise its meaning as distinct from defining it. The descriptive meaning of 'mother' and 'farther's wife' is taken as identical and synonyms. But certainly

it is not the case with emotive meaning. The word 'father's wife' is usualiy taken as contemptuous by a woman to whom it is addressed. But the word 'mother' expresses a sense of love and respect for the woman addressed to. The emotive meaning of the word 'father's wife' is simply characterised as being contemptuous, and thus distinguished from that of mother, which is by no means contemptuous. Now 'good' can also be studied in a similar way. Its descriptive meaning may be defined; but its emotive connot accurately be presented in this way, and so has to be characerised for its explanations. Let me consider the following observaion made by stevenson :

"A definiendum and its definiens have the same meaning; a sign whose meaning is characterised and the characterizing sign do not have the same meaning. When sign Y characterizes the meaning of sign X, the meaning of X is the referent of Y, not the (Psychological) meaning of X. Thus the emotive meaning of 'good' is not defined when it is characterized; but that is on obstacle to the analysis of ethics, just as it is no obstacle to lexicography".[10]

III

From the above, we find that both Moore and Stevenson held that 'good' is indefinable. But they substantiate their contentions on different grounds. To Moore it is a simple notion while to Stevenson it is so because it has emotive implications. To my mind it seems that Moore arrives at his conclusion on the basis of certain presuppositions. He believes that this basic property of 'good' is not definable because it is simple. The difficulty with this argument is that one must first prove that good is a simple property, and the only method that Moore provides for doing that is the open-question technique. But this technique is of doubtful value in establishing that contention. As far as Stevanson is concerned, his argument seems to be more cogent and convincing in that he has rightly pointed out that emotive meaning cannot be defined because of linguistic limitations.

Notes and References :

1. G. E. Moore, **Principia Ethica** (The Cambridge University Press) p. 6.
2. Ibid., p. 15.
3. See P. H. Nowell-Smith, **Ethics** (Baltimore : Penguin Books, 1954).
4. C. L. Stevenson, **Ethics and Language** (New Haven : Yale University Press, 1944), p. 3.
5. Ibid., p. 21.
6. Ibid., Chapt. II.
7. A. J. Ayer, **Language, Truth and Logic** (New York : Dover Publication, 1936) pp. 102-3.
8. Ibid., pp. 103, 107.
9. W. H. F. Barnes, "A suggestion about value," Analysis, I (1934), p.45.
10. Stevenson, op. cit., p. 82.

परिशिष्ट—एक

प्रो० हरिमोहन झा : साहित्यिक रचना

पुस्तक

१. कन्यादान (१९३३)	—	उपन्यास
२. द्विरागमन (१९४३)	—	उपन्यास
३. प्रणम्य देवता (१९४५)	—	कथा-संग्रह
४. रंगशाला (१९४९)	—	कथा-संग्रह
५. खट्टर ककाक तरंग (१९६८)	—	व्यंग्य
६. तीर्थ यात्रा(१९५०)	—	कथा-संग्रह
७. चर्चरी (१९६०)	—	विविध
८. एकादशी (नवीनतम संस्करण १९८१)	—	कथा-संग्रह

[जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ (पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, १९४२)क आचार्य शिवपूजन सहाय ओ अच्युतानन्द दत्तक संग संपादन। 'रेल की बात' (रामलोचन पाकेट बुक सीरीज, पुस्तक भंडार, पटना) —मैथिलीक किछु कथाक हिन्दी रूपान्तरण एहि पुस्तकमे संकलित, 'खट्टर ककाक तरंग'क हिन्दी अनुवाद 'खट्टर काका' (राजकमल प्रकाशन दिल्ली-पटना) नामसँ प्रकाशित।]

कथा (जे कोनो पोथीमे संकलित नहि अछि)

१. निरसन मामाक सिनेमा	—	मिथिला मिहिर	:	१५-१-६१
२. प्रगतिक पथ पर	—	,,	:	२३-७-६१
३. शास्त्रार्थक जोश	—	,,	:	१८-३-६२
४. सहस्त्रयाचिभ्यो नमः	—	,,	:	९-९-६२
५. सहधात्रिणी	—	,,	:	८-९-६३
६. आब मोक्ष चाही	—	,,	:	२८-४-७४
७. भोल बाबाक गप्प	—	,,	:	१४-३-७४
८. कालाजारक उपचार	—	,,	:	११-९-७७
९. महाभारतक एक क्षेपक	—	,,	:	९-९-७९

कविता

१. सनातनी बाबा ओ कलियुगी सुधारक—मिथिला, वर्ष १, अंक १, (अप्रील, १९२९)
२. कन्याक निलामी डाक —मिथिला, वर्ष १, अंक २, (मइ, १९२९)
३. मिथिलाक मिहिर सँ —मिथिला मिहिर, मिथिलांक, १९३५
४. डाला झा —स्वदेश, वर्ष-१, अंक ३, (मार्च, १९४८)
५ टी पार्टी —स्वदेश, वर्ष १, अंक ४ (अप्रील, १९४८)
६. चुनमुन बाबा —वैदेही, १९५१
७. पंडित लोकनिसँ — ,, फरवरी, ५३
८. निरसन मामा — ,, जून, ५३
९. घूटर काका — (?)
१०. आगि — ,, अक्टूबर, ५३
११. अंगरेजिया लड़कीक समदाउन —वैदेही, नवम्बर, ५३
१२. गरीबिनीक बारहमासा —वैदेही
१३. पटनास्तोत्र —मैथिली कुसुमाञ्जलि
१४. मैथिलीक उक्ति यात्रीजीक प्रति —वैदेही, फरवरी, ५४
१५. सौराठ —मिथिला दर्शन, मइ, ५४
१६. हिन्दी ओ मैथिली —पल्लव
१७. जगमग-जगमग दीप जराउ —मिथिला-दर्शन, विद्यापति विशेषांक, ५७
१८. अकाल —वैदेही, जून, ५८
१९. बूढ़ा नाथ —मिथिला दर्शन, फरवरी, ६०
२०. पंडित ओ मेम —वैदेही, मार्च, ६०
२१. पंडित विलाप —मिथिला दर्शन, मार्च, ६०
२२. गंगाक घाट पर —वैदेही, अप्रील, ६०
२३. नवकी पीढ़ी सँ —इजोत, होलिकांक, ६०
२४. समयक चक्र —मिथिला मिहिर, २-७-६१
२५. अनागत प्रेयसी सँ —अभिव्यंजना, सितम्बर—अक्टूबर, १९६२
२६. जर्का —वैदेही
२७. चन्द्रमाक मृत्युपर —मैथिली कविता
२८. अकविताक प्रति कविताक उक्ति —मैथिली कविता
२९ महगी —मिथिला मिहिर, २७-१-७४
३०. नव पराती — ,, ३-३-७४
३१. चालीस और चौहत्तरि — ,, २-६-७४
३२. पाहुन
३३. अलगी
३४. मानिनि सँ

३५. कवि हे आब कोदारि धरू
३६. रस-निमन्त्रण
३७. मातृभूमि वन्दना
३८. मैथिली वन्दना
३९. मिथिलाक माटि
४०. नारी वन्दना
४१. किछु नै फुरैए (छगुन्ता)
४२ वनगाम महिषी स्मृति —मिथिला मिहिर, ९-७-७८
४३. महगी-महात्म्य
४४. पाहुन सौं
४५. घटक सौं
४६. पंडित सौं
४७. मत्स्य-तीर्थ
४८. कनियाक समस्या
४९. परिचारिका-स्तोत्र
५०. परतारू जुनि
५१. डा० अमरनाथ झा —स्मारिका, चेतना समिति, पटना
५२. हे राजकमल ! —आखर, राजकमल-स्मृति-अंक, मइ-अगस्त, ६८
५३. शुभाशंसा —तंत्रनाथ झा अभिनन्दन ग्रन्थ



परिशिष्ट—दू

प्रो० हरिमोहन झा : मैथिली कथाक भाषान्तरण

१. महाभारत	राष्ट्रभाषा (वर्धा)	अप्रील, १९५३
२. रेशमी दुलाइ	कहानी	नवम्बर, १९५४
३. गीता	,,	१९५३ वा १९५४
४. आयुर्वेद	,,	१९५५
५. परिचय	,,	नवम्बर, १९५३
६. बीमा का एजेन्ट	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	जनवरी, १९५६
७. ब्रह्मा का शाप	कहानी	....
८. ग्रामसेविका	धर्मयुग	१९५६
९. सरस्वती का अभिमान	,,	मइ, १९५७
१०. पंडितजी की बातें	आजकल	जनवरी, १९५७
११. भूत का मंत्र	बिहार समाचार	अगस्त, १९५७
१२. चिकित्सा का चक्कर	सा० हिन्दुस्तान	....
१३. दही-चिउड़ा-चीनी	आजकल	....
१४. दरोगा की मूँछ	कहानी	नवम्बर, १९५८
१५. मोक्ष का मार्ग	धर्मयुग	मार्च, १९५८
१६. कविजी	,,	जुलाइ, १९५८
१७. घर जमाई	,,	सितम्बर, १९५८
१८. अद्भुत अभ्यागत	नवकथा	अक्तूबर, १९५८
१९. देवीजी का संस्कार	सनातन धर्म (काशी)	....
२०. अलंकार शिक्षा	छात्रबन्धु (पटना)	१९५८
२१. महारानी का रहस्य	कहानी	नवम्बर, १९५८
२२. विनिमय	,,	१९५८
२३. दर्शनशास्त्र का रहस्य	,,	सितम्बर, १९५९
२४. प्रेस की लीला	धर्मयुग	अगस्त, १९५९
२५. फलित ज्योतिष	,,	जनवरी-फरवरी, १९५९

२६. आदर्श भोजन	धर्मयुग	जुलाई, १९५९
२७. अंग्रेजिया बाबू	,,	मार्च, १९५९
२८. रसमयी के ग्राहक	नई कहानियाँ	दीपावली विशेषांक, १९५९
२९. मुछानो दोष	नवनीत (गुजराती)	दिसम्बर, १९५९
३०. प्राचीन सभ्यता	कहानी	जनवरी, १९६०
३१. मिथिला की संस्कृति	धर्मयुग	फरवरी, १९६०
३२. पाँच पत्र	धर्मयुग	मार्च, १९६०
३३. रस की चाशनी	नई धारा	सित०-नव०, १९६०
३४. नौ लाख के गप्प	उत्तर बिहार	१९६०
३५. ससुराल का भित्त	नोक-झोंक	....
३६. धर्म का सत्य	कहानी	....
३७. पौराणिक आदर्श	,,	....
३८. देवता का चरित्र	,,	....
३९. मछली का महत्त्व	,,	....
४०. चन्द्रग्रहण	,,	....
४१. सत्यदेव की कथा	,,	....
४२. प्रगति के पथ पर	धोखा	....
	कलिंग (तमिल अनु०)	१९७०
४३. ले गये सब अंग्रेज ले गये	धर्मयुग	मार्च, १९६१
४४. ठाकुर साहब का सिनेमा	नई कहानियाँ	फरवरी, १९६१
४५. ब्रह्मानन्द	रंग	जनवरी, १९६३
४६. शास्त्रार्थ	धर्मयुग	१९६४
	नवनीत (गुजराती)	मार्च, १९६४
४७. रामायण जूं रामायण	नवनीत (गुजराती)	जनवरी, १९७४
४८. गुलाबी गप्प	सारिका	अप्रील, १९७७



परिशिष्ट—तीन

प्रो० हरिमोहन झा : दार्शनिक कृति

(क) प्रो० हरिमोहन झाक दर्शन विषयक ग्रन्थ तथा निवन्ध

हिन्दीमे

१. भारतीय दर्शन परिचय : न्याय दर्शन—पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, १९४० ।

२. भारतीय दर्शन : परिचय—वैशेषिक दर्शन-पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, १९४३ ।

३. निगमन तर्कशास्त्र (Deductive Logic), पटना विश्वविद्यालय, १९५२ ।

४. भारतीय दर्शन (Introduction to Indian Philosophy—S. C. Chatterjee & Dr. D. M. Dutta) क अनुवाद, पुस्तक भंडार, १९५२ ।

५. यूरोपीय दर्शन (म० म० रामावतारशर्मा कृत), समकालीन पाश्चात्य दर्शनक परिचय सहित, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, १९५५ ।

६. दर्शनशास्त्र का रस (विहार प्रादेशिक हिन्दी साहित्य समिति, गया अधिवेशन १९५०मे अध्यक्षीय भाषण)—साहित्य, पटना ।

७. चार्वाक दर्शन —अवन्तिका, १९५८ ।

८. भारतीय तर्कशास्त्र की विशेषता (अखिल भारतीय दर्शन परिषद्क तर्क-तत्वमीमांसा शाखाक अध्यक्षीय भाषण, बीकानेर १९५८)—दार्शनिक, १९५८ ।

९. परमार्थ दर्शन—बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्सँ प्रकाश्य ।

१०. भारतीय दर्शन का महत्त्व (अखिल भारतीय दर्शन परिषद्क अध्यक्षीय भाषण, दिल्ली, १९६८)—दार्शनिक, अक्टूबर, १९६८ ।

११. नव्य न्याय का विश्लेषण (मगध विश्वविद्यालय, बोधगयामे आयोजित दार्शनिक संगोष्ठीमे अध्यक्षीय भाषण), बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना द्वारा 'दार्शनिक विवेचनाएँ'मे प्रकाशित ।

१२. पारिभाषिक शब्दावली—दर्शन विषयक (तर्कशास्त्र, तत्वमीमांसा, नीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, शब्दावली निर्माण आयोग, केन्द्रीय सरकार द्वारा अनेक खण्डमे प्रकाशित)—सदस्य लेखक ।

अंग्रेजीमे

1. The concept of Avacchedakata in Indian Logic—Patna University Journal, 1952.
2. Should States be Secular (Symposium paper)—Proceedings of the Indian Philosophical Congress, Nagpur, 1955.
3. The Path of Peace (presidential address in Ethics cum Special philosophy section of the Indian Philosophical Congress, Srinagar, 1958)—published in the proceedings.
4. The Analysis of Negation (read in the Cuttak session of the I. P. C., 1959)—Philosophical Quarterly.
5. Paramartha—Published in Dr. S. Radhakrishnan Souvenir Volume, Darshan International, Moradabad, 1968.
6. The Gandhian philosophy of Ahinsa—(read in the symposium conference at Madras University 1970 and published in the proceedings.)
7. Anvitabhidhana Vada and Abhihitanvaya Vada (read in the Kanpur session of I. P. C. 1972 and published in the proceedings.)
8. Navya Nyaya Analysis (Presidentiai Address of the I. P. C., Allahabad, 1974 and published in the proceedings.)
9. Trends of Linguistic Analysis in Indian philosophy (work prepared under U. G. C. Research Project). published by Chowkhambha Orientalia, Varanasi.

(ख) सम्पादित एवं पुनरीक्षित ग्रन्थ

१. दार्शनिक विवेचनाएँ—संकलित।

२. दार्शनिक विश्लेषण परिचय—Hospers कृत Introduction to Philosophical Analysis क हिन्दी अनुवाद। अनुवादक—डा० गोवर्द्धन भट्ट, केन्द्रीय निदेशालय, दिल्ली।

३. वूजले की ज्ञान मीमांसा—डा० गोवर्द्धन भट्ट द्वारा अनूदित।

४. नीतिशास्त्र मीमांसा—Moore'क Prnicipia Ethicaक हिन्दी अनुवाद। अनुवादक—डा० अशोक कुमार वर्मा।

५. महात्मा गांधी का दर्शन – डा० डी० एम० दत्तक अंग्रेजी पुस्तकक अनुवाद। अनुवादक—डा० रामजी सिंह।

६. गांधी दर्शन मीमांसा—लेखक डा० रामजी सिंह।

७. भारतीय नीतिशास्त्र—लेखक-डा० दिवाकर पाठक।
८. मैथिली भाषाका विकास—लेखक-पं० गोविन्द झा।
९. गांधीवाद को विनोबा की देन—लेखक डा० दशरथ सिंह।

(ग) निर्देशित वा परीक्षित शोध-विषय

पटना विश्वविद्यालय

1. Vedic Materialism :
प्रो० सुश्री उमा गुप्ता, दर्शन विभाग, पटना विश्वविद्यालय, १९६६।
2. The Philosophy of Ram Mohan Ray :
प्रो० मधुसूदन प्रसाद, दर्शन विभाग, पटना विश्वविद्यालय, १९६६।
3. भागवत पुराणमे भक्तिमार्ग :
प्रो० श्रीमती इन्दिराशरण, मगध महिला कालेज, पटना, १९६७।
4. The Social Philosophy of the Ramayan :
प्रो० श्रीमती चिरंजीविनी कुमारी, प्राचार्या, कोनोनाडा महिला कालेज, कोकोनाडा, आन्ध्र प्रदेश, १९६८।
5. Ethical Elements of the Mahabharata :
श्री वीरेन्द्र प्रसाद सिंह, नेपाल, १९६८।
6. The Concept of Non-Violance :
प्रो० सुश्री रेवा ऐकट, गुरु गोविन्द सिंह कालेज, पटना सिटी, १९६९।
7. The Philosophy of Mahatma Gandhi :
प्रो० सुश्री रमा सेन, अरविन्द महिला कालेज, पटना, १९७४।

अन्यान्य विश्वविद्यालयमे परीक्षित

1. The Concept of Personality in Parapsychology :
श्रीमती प्रकाश आत्रेय, प्रिंसिपल, मोरादाबाद महिला कालेज, आगरा विश्वविद्यालय, १९६४।
2. The Concept of Liberation :
श्री अशोक कुमार लाड, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९६४।
3. A Critical Study of Gandhism :
श्री यादव, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९६४।
4. संस्कृत चंपू :
श्रीमती गायत्री देवी, वाराणसी विश्वविद्यालय, १९६५।
5. The Concept of Soul in st. Anuinue :
प्रो० सेमुएल, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९६५।

6. Mysticism in Indian Philosophy :
प्रो० कामाख्या प्रसाद चौधरी, काशी विश्वविद्यालय, १९६५ ।

7. Christianity and Vaishnavism :
श्री शिवाजी, उज्जैन विश्वविद्यालय, १९६६ ।

8. द्वैतवाद :
श्री कृष्णदास चतुर्वेदी, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९६० ।

9. काश्मीर शैवदर्शन :
श्रीमती शिशिर कुमारी झा, बिहार विश्वविद्यालय, १९६८ ।

10. The Concept of Nature in Indian Philosophy :
श्री आर० के० पाण्डेय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९६९ ।

11. The Institution of Marriage :
श्री कृष्ण कुमार झा, बिहार विश्वद्यिालय, १९६९ ।

12. Influence of Buddhism on Hindu Philosophy and Culture :
श्री राजेन्द्र झा, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९६९ ।

13. कविवर चन्दा झा :
प्रो० अमरनाथ झा, बिहार विश्वविद्यालय, १९६९ ।

14. वर्णरत्नाकर :
प्रो० कांचीनाथ झा 'किरण', बिहार विश्वविद्यालय, १९६९ ।

15. Analysis of Bondage :
श्री वशिष्ठ नारायण तिवारी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९७० ।

16. जैन दर्शन :
श्री सागरमल, जैन ग्वालियर, १९७० ।

17. बृहदारण्यकोपनिषद् :
प्रो० रघुवंश झा, बिहार विश्वविद्यालय, १९७१ ।

18. Man and Value :
प्रो० श्रीमती उषा तिवारी, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९७१

19. पुनर्जन्म और कर्मवाद :
प्रो० श्रीमती शशिलेखा मिश्र, बिहार विश्वविद्यालय, १९७१ ।

20. श्री अरविन्द का समाजदर्शन :
श्री रामेश्वर सिंह, बिहार विश्वविद्यालय, १९७२ ।

21. Human Value in Indian Philosophy :
प्रो० श्रीमती लक्ष्मी कुमारी सिंह, बिहार विश्वविद्यालय, १९७२ ।

22. मैथिली लोकगीत :
श्रीमती इलारानी सिंह, कलकत्ता, विश्वविद्यालय, १९७२ ।

23. Intellect and Intution :
श्री रामाशीष प्रसाद, रांची विश्वविद्यालय, १९७३ ।
24. The Philosophy of Kant :
श्रीमती मीरा मालवीय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९७४ ।
25. अरविन्द दर्शन :
श्री देवेन्द्र प्रसाद, गोरखपुर विश्वविद्यालय, १९७५ ।
26. Pragmatic Elements in Indian Philosophy :
प्रो० श्रीमती उषा सिंह, बिहार विश्वविद्यालय, १९७६ ।
27. The Concept of Non-Being :
प्रो० चन्द्रमोहन झा, बिहार विश्वविद्यालय, १९७६ ।
28. सांख्य दर्शन :
श्री श्रीकृष्ण झा, दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, १९७७ ।
29. गीता में कर्मदर्शन :
प्रो० जगन्नाथ पाण्डेय, बिहार विश्वविद्यालय, १९७७ ।
30. चन्दा झाक भक्तिकाव्य :
प्रो० महेश झा, बिहार विश्वविद्यालय, १९७८ ।
31. आर्य समाज और ब्रह्म समाज :
प्रो० राम सरोज सिंह, बिहार विश्वविद्यालय, १९७९ ।
32. Sankara and Karl Jaspers :
प्रो० नगेन्द्र प्रसाद त्रिपाठी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९७९ ।
33. Pre-Sankarite Advaita Philosophy :
डा० संगम लाल पाण्डेय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, १९८० ।



परिशिष्ट—चारि

दार्शनिक प्रो० हरिमोहन झा : विभिन्न संस्था-सभामे

१९५२—इंडियन फिलोसोफिकल कांग्रेसक मैसूर अधिवेशनक सदस्य और अखिल भारतीय दर्शन परिषदक जन्म (१९५६) सँ लय आजीवन सदस्य।

१९५३—इं० फि० कांग्रेसक बड़ौदा अधिवेशनमे भारतीय दर्शन विषयक परिचर्चामे सम्मिलित।

१९५४—इं० फि० कांग्रेसक लंका (पेरिडिनिया युनिवर्सीटी) अधिवेशनमे बौद्ध दर्शन आ वेदान्त दर्शनक तुलनात्मक समीक्षा कयलनि।

१९५५—नागपुर अधिवेशनक परिचर्चाक विषय छल—Should States be Secular ? (की राज्य सभकेँ धर्मनिरपेक्ष होमक चाही ?) उक्त चर्चासँ सम्बद्ध निबन्ध इं० फि० कांग्रेसक मुखपत्रमे प्रकाशित।

१९५६—इं० फि० कांग्रेसक चिदम्बरम (अन्नमलाइ विश्वविद्यालय) अधिवेशनमे पं० रामावतार शर्माक परमार्थ दर्शन पर परिचयात्मक भाषण।

१९५७—इं० फि० कांग्रेसक श्रीनगर (कश्मीर) अधिवेशनमे नीतिशास्त्र ओ समाजदर्शन विभागक अध्यक्षता। अध्यक्षीय भाषणक विषय—शांतिक मार्ग 'Path of Peace' शक्ति मार्ग कांग्रेसक मुख पत्रमे प्रकाशित।

१९५८—अ० भा० द० परिषद्क बीकानेर अधिवेशनमे तर्कशास्त्र सह तत्वमीमांसा विभागक अध्यक्षता। भाषणक विषय—भारतीय तर्कशास्त्रक विशेषता।

— —इं० फि० कांग्रेसक अहमदाबाद अधिवेशनमे परमार्थ दर्शनपर व्याख्यान।

१९५९—इं फि० कांग्रेसक कटक अधिवेशनमे निषेध प्रत्यय (Concept of Negation) पर निबन्ध पाठ।

१९६०—अ० भा० दर्शन परिषद्क उदयपुर अधिवेशनमे विचार-गोष्ठीमे सम्मिलित भेलाह।

१९६१—भारत सरकारक वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली-निर्माण आयोगक दर्शन-समितिक सदस्य मनोनीत।

१९६३—अ० भा० द० प०क लखनऊ अधिवेशनमे अर्थापत्ति-विषयक परिचर्चामे भाग लेलनि। दर्शन शास्त्र पर लोकप्रिय सार्वजनिक भाषण।

१९६४—इं० फि० कांग्रेसक मद्रास अधिवेशनमे उच्चतर दर्शन केन्द्रक तत्वावधानमे परम्परा आ प्रगति (Tradition and Progress) पर आयोजित परिचर्चामे भाग लेलनि।

१९६४-६६—त्रिभुवन वि० वि०क आमंत्रणपर काठमांडूमे दर्शन-विषयक परिशोधन-कार्य।

१९६५—विश्वभारतीक आमंत्रणपर शान्तिनिकेतनमे मिथिलाक नव्यन्याय (विशेषतः अवच्छेदकता) पर भाषण।

शब्दावली-निर्माण-आयोगक दर्शन-मनोविज्ञानक सम्मिलित संगोष्ठी (मसूरीमे) भाग लेलनि।

१९६६—दर्शन समितिक अन्नमलाइ विश्वविद्यालय (९ चिदम्बरम्)मे भाग लेलनि।

१९६७—दर्शन समितिक अहमदाबाद अधिवेशन मे सम्मिलित भेलाह।

१९६७—विश्वभारतीक तत्त्वावधानमे शान्ति निकेतनमे आयोजित क्रिश्चन-धर्म-विषयक गोष्ठीक अध्यक्षता कैलनि।

१९६८—अ० भा० द० प०क दिल्ली अधिवेशनक अध्यक्षता। भाषणक विषय—आधुनिक परिप्रेक्ष्यमे भारतीय दर्शनक महत्त्व। मुख पत्र 'दार्शनिक'मे प्रकाशित।

ई० फि० कांग्रेसक पटना अधिवेशनक लोकल सेक्रेटरी।

१९६९—इं० फि० कांग्रेसक कर्नाटक (धारवाड़) अधिवेशनमे नीतिशास्त्र विभागक तदर्थ अध्यक्षता कैलनि।

१९७०—मद्रास वि० वि०मे आयोजित गाँधी दर्शन विषयक विचार संगोष्ठीमे गाँधी मार्ग अहिंसा दर्शन पर व्याख्यान। ओकर स्मारिकामे प्रकाशन।

अंगरेजीक मानक दर्शन विषयक ग्रन्थक हिन्दी-अनुवादक हेतु चयन।

केन्द्रीय आ राज्य सरकारी अकादमी द्वारा प्रकाशनक हेतु समन्वयात्मक सूची निर्माण समितिक सदस्य

भारत सरकारक साहित्य अकादेमीक सदस्य मनोनीत (पहिने मैथिली समिति और बादमे जेनरल कौंसिलमे)

यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशनक अँगरेजी-हिन्दी समीकरण-समिति तथा अन्त-विश्वविद्यालय अनुदान आयोगक रिसर्च ग्रांट कमीटीक मेम्बर।

१९७१—विहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी तथा मगध विश्वविद्यालयक संयुक्त तत्त्वावधानमे बोधगयामे आयोजित भारतीय दर्शन संगोष्ठीक अध्यक्षता। अध्यक्षीय भाषण एवं अन्यान्य निबन्ध विहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित 'दार्शनिक विवेचनाएँ'मे प्रकाशित अनेको पुस्तकक सम्पादन सेहो (जकर सूची अत्यन्त्र देल अछि।)

१९७२—इं० फि० कां०क कानपुर अधिवेशनमे 'अन्विताभिधानवाद आ अभिहितान्वयवाद' पर निबन्धपाठ।

१९७३—दिल्लीमे आयोजित दर्शन विषयक मानक ग्रन्थक अनुवाद-समितिक अध्यक्षता।

१९७४—इं० फि० कांग्रेसक प्रयाग अधिवेशनक अध्यक्षता। भाषणक विषय—नव्यन्यायक भाषा विश्लेषण।

१९७५—अ० भा० द० प०क राँची (मेसरा) अधिवेशनमे विशेष आमंत्रण पर उद्घाटन दिवसमे भारतीय दर्शन पर व्याख्यान।

परिशिष्ट—पाँच

सहयोगी रचनाकार

१. डा० जयमंत मिश्र—कुलपति, कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर, दरभंगा
२. पं० मदन मोहन झा—प्रधानाचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, पटना।
३. श्री उपेन्द्र नाथ झा 'व्यास'—श्री भवन, बोरिंग रोड, पटना।
४. पं० गोविन्द झा—उपनिदेशक, मैथिली अकादमी, पटना।
५. श्री काशीकान्त मिश्र 'मधुप'—कोथु, दरभंगा।
६. श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'—राजकुमार गंज, दरभंगा।
७. डा० कांचीनाथ झा 'किरण'—धर्मपुर, लोहना, मधुबनी।
८. श्री आरसी प्रसाद सिंह—ग्रा० + पो०-एरौत, जिला-समस्तीपुर।
९. श्री बुद्धिधारी सिंह 'रमाकर'—मधुबनी ड्योढ़ी, मधुबनी।
१०. श्री चन्द्रनाथ मिश्र 'अमर'—मिश्र टोला, दरभंगा।
११. श्री मार्कण्डेय प्रवासी—उपसम्पादक, आर्यावर्त, पटना।
१२. डा० भीम नाथ झा—प्राध्यापक, मैथिली विभाग, चन्द्रधारी मिथिला महाविद्यालय, दरभंगा।
१३. श्री रवीन्द्र नाथ ठाकुर—आनन्दपुरी, बोरिंग रोड, पटना।
१४. श्री मंत्रेश्वर झा—भारतीय प्रशासनिक सेवा, पटना।
१५. प्रो० शेफालिका वर्मा—गंगजला, सहरसा।
१६. श्री फजलुर रहमान हाशमी—फातमी लाइब्रेरी, पानापुर, बेगूसराय।
१७. श्री श्रीकान्त ठाकुर 'विद्यालंकार'—पत्रकार सदन, बोरिंग रोड, पटना।
१८. श्री जयनारायण झा 'विनीत'—नवादा, दरभंगा।
१९. श्री जयदेव मिश्र—बोरिंग रोड, पटना।
२०. प्रो० दिवाकर झा—अन्हरा-ठाढ़ी, मधुबनी।
२१. श्री मनमोहन झा—सरिसब-पाही, मधुबनी।
२२. कुमार तारानन्द सिंह—बनैली कोठी, श्रीकृष्णनगर, पटना।
२३. डा० मदनेश्वर मिश्र—अध्यक्ष, मैथिली अकादमी, पटना।
२४. डा० आनन्द मिश्र—मैथिली विभागाध्यक्ष, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
२५. श्री मणिपद्म—बहेड़ा, दरभंगा।

२६. श्री वाबूसाहेब चौधरी—९/१, खिलात घोष लेन, कलकत्ता—६
२७. श्री उमाशंकर वर्मा—राज्य शिक्षा संस्थान परिसर, महेन्द्रू, पटना।
२८. प्रो० मायानन्द मिश्र—प्राध्यापक, मैथिली विभाग, सहरसा कालेज, सहरसा।
२९. डा० चन्द्र नारायण मिश्र—भूतपूर्व रीडर, दर्शन विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।
३०. श्री गोपालजी झा 'गोपेश'—उप निदेशक, राजभाषा विभाग, पटना।
३१. डा० धीरेन्द्र—रीडर एवं अध्यक्ष, मैथिली विभाग, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, जनकपुरधाम, नेपाल।
३२. श्री गौरीकान्त चौधरी 'कान्त'—आकाशवाणी, पटना।
३३. श्री महेश्वर मिश्र 'अरुण'—विहार राज्य पथ परिवहन निगम, पटना।
३४. श्रीमती प्रेमलता मिश्र 'प्रेम'—शिक्षिका, वीरचन्द पटेल विद्यालय, कंकड़बाग, पटना।
३५. श्री मदन मिश्र—कालेज सेवा आयोग, पटना।
३६. श्री पूर्णेन्दु चौधरी—नलकूप प्रमण्डल, पटना।
३७. श्री विभूति आनन्द—शिवनगर, मधुबनी।
३८. डा० सीता शरण—पुस्तक भंडार, पटना।
३९. डा० रामजी सिंह—भागलपुर विश्वविद्यालय।
४०. डा० इन्दिरा शरण—रीडर, दर्शन विभाग, मगध महिला कालेज, पटना।
४१. श्री संतोष नारायण लाल—पटना साइकिल स्टोर्स, अशोक राजपथ, पटना।
४२. श्री नगेन्द्र कुमार—बैरिस्टर, उच्चतम न्यायालय, दिल्ली।
४३ प्रो० अशोक कुमार वर्मा—अध्यक्ष, दर्शन विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
४४. डा० श्रीकृष्ण मिश्र—भूतपूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।
४५. डा० कपिलेश्वर झा—अध्यक्ष, मैथिली विभाग, कॉलेज ऑफ कॉमर्स, पटना।
४६. श्री राज मोहन झा—नियोजन पदाधिकारी, श्रम एवं नियोजन विभाग, बिहार, पटना।
४७. श्री जीवकान्त—ड्योढ़, घोघरडीहा, मधुबनी।
४८. डा० जयकान्त मिश्र—१, सर पी० सी० बनर्जी रोड, इलाहाबाद-२
४९. श्री कुलानन्द मिश्र—वित्त (अंकेक्षण) विभाग, नया सचिवालय, पटना।
५०. श्री रमानन्द झा 'रमण'—रिजर्व बैंक, पटना।
५१. डा० विश्वेश्वर मिश्र—अध्यक्ष, मैथिली विभाग, पूर्णियाँ कालेज, पूर्णियाँ।
५२. श्री मोहन भारद्वाज—शास्त्री भवन, घघाघाट, महेन्द्रू, पटना।
५३. डा० वासुकी नाथ झा—रीडर, मैथिली विभाग, कॉलेज ऑफ कॉमर्स, पटना।
५४ श्री सुधांशु 'शेखर' चौधरी—भूतपूर्व संपादक, मिथिला मिहिर, पटना।
५५. डा० हेतुकर झा—प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
५६. डा० श्रीमती प्रभावती झा—प्राध्यापिका, मैथिली विभाग, बी० डी० इवनिंग कॉलेज, पटना।
५७. श्री राम चैतन्य धीरज—वीणा-बभनगामा, सहरसा।
५८. प्रो० राधाकृष्ण चौधरी—इतिहास विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।
५९. श्री हीरानन्द झा 'शास्त्री'—संपादक, आर्यावर्त तथा कार्यवाह संपादक, मिथिला मिहिर, पटना।
६०. श्री चतुरानन मिश्र—अध्यक्ष, अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस, बिहार, पटना।

६१. प्रो० कार्तिक नाथ मिश्र—रीडर, भौतिकी विभाग, पटना साइन्स कालेज, पटना।
६२. श्री भाग्य नारायण झा—मुख्य संवाददाता, आर्यावर्त, पटना।
६३. श्री गोकुल नाथ झा—सहायक संपादक, मिथिला मिहिर, पटना।
६४. श्री उदय चन्द्र झा 'विनोद'—रहिका, मधुबनी।
६५ श्री छत्रानन्द—आकाशवाणी, पटना।
६६. डा० हरिमोहन मिश्र—भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।
६७ डा० फुलेश्वर मिश्र—प्राध्यापक, मैथिली विभाग, बी० एन० कालेज, पटना।
६८. डा० गिरीश चन्द्र—शिवनगर, मधुबनी।
६९. श्री पशुपति नाथ 'विप्लवी'—शिवनगर, मधुबनी।
७०. डा० प्रेम शंकर सिंह—अध्यक्ष, मैथिली विभाग, टी० एन० बी० कालेज, भागलपुर
७१. डा० नरेन्द्र झा—रीडर, हिन्दी विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर
७२. प्रो० पूर्णेन्दु मुखोपाध्याय—प्राध्यापक, बंगला विभाग, बी० एन० कालेज, पटना।
७३. प्रो० प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन'—प्राचार्य, आर० पी० एस० कालेज, महनार, वैशाली।
७४. स्व० रामकृष्ण झा 'किसुन'—सुपौल, सहरसा।
७५. डा० अमर नाथ झा—रीडर, मैथिली विभाग, ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।
७६. डा० गंगेश गुंजन—आकाशवाणी, पटना।
७७. श्री कीर्ति नारायण मिश्र—चितावालसा जूट मिल्स, चितावालसा, विशाखापतनम, आन्ध्र।
७८. श्री रामानुग्रह झा—सुपौल, सहरसा।
७९. श्री अरुण कश्यप—चौधरी टोला, पटना।
८०. डा० सीताराम झा 'श्याम'—रीडर, हिन्दी विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
८१. डा० सुखेश्वर झा—रीडर, संस्कृत विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।
८२. डा० याकूब मसीह—भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, दर्शन विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
८३. डा० योगेन्द्र मिश्र—भूतपूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
८४ डा० शोभा कान्त मिश्र—रीडर, हिन्दी विभाग, पटना कालेज, पटना।
८५. डा० अरुणा माधव—अध्यक्षा, बंगला विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
८६. डा० इन्द्र नारायण सिंह—प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
८७. श्री केदार कानन—किसुन कुटीर, सुपौल, सहरसा।
८८. श्री रामचन्द्र लाल दास—शिवनगर, मधुबनी।
८९. डा० देवनारायण राय—रीडर, बंगला विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।
९०. डा० बसंत कुमार लाल—प्रोफेसर, दर्शन विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया।
९१. प्रो० मन मोहन झा—प्राध्यापक, मनोविज्ञान विभाग, सी० एम० कालेज, दरभंगा।

